जय श्रीराधे । जय निताई

श्रील श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीपाद के शिष्य श्रीजगन्नाथ चक्रवर्ती के सुपुत्र

श्रीनरहरि चक्रवर्ती ठाकुर विरचित

श्रीश्रीभक्तिरत्नाकर



ब्रजविभूति

श्रीश्यामदास

[illegible]

[illegible]

श्रीश्री
भक्तिरत्नाकर

[illegible]

[illegible]

[illegible] • वृन्दावन

जय श्रीराधे। जय निताई

• श्रीश्रीकृष्णचैतन्यनित्यानन्दौ जयतः •

श्रील श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तीपाद के शिष्य
श्रीजगन्नाथ चक्रवर्ती के सुपुत्र
श्रीनरहरि चक्रवर्ती ठाकुर विरचित

श्रीश्री
भक्तिरत्नाकर

श्रीगौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय का चिर–प्रतीक्षित
प्रामाणिक सन्दर्भ ग्रन्थ रत्न

एक सौ से अधिक वैष्णव ग्रन्थों के
लेखक : सम्पादक : प्रकाशक

व्रजविभूति श्रीश्यामदास

कृपानुभूतिपूर्वक

दासाभास डॉ गिरिराज • डॉ भागवत कृष्ण

भ्रातृद्वय द्वारा सम्पादित एवं प्रस्तुत

सन् 1936 से वैष्णव साहित्य प्रचार–प्रसार में संलग्न अव्यावसायिक संस्थान

श्रीहरिनाम संकीर्तन मण्डल • वृन्दावन

CODE : M094
ISBN : 978-81-941241-0-8

श्रीचैतन्य टाटीवाला परिवार
तथा
श्रीजौहर साहब परिवार
का
समस्त वैष्णवजन
को सादर प्रणाम

अवश्य देखें
Website - www.shriharinam.com
Facebook - Shri Harinam Press
Youtube - Shri Harinam Press
www.shriharinam.blogspot.com
http://yourlisten.com/dasabhas

दासाभास-सम्पर्क
9837021415

प्रकाशक :
श्रीहरिनाम संकीर्तन मण्डल
बाग बुन्देला, हरिनाम पथ
वृन्दावन-281121 (उ.प्र.) भारत

संस्करण :
प्रथम- श्रीकृष्णजन्माष्टमी, 23 अगस्त 2019

न्योछावर : 500 रुपये

मुद्रण संयोजन : श्रीहरिनाम प्रेस
बाग बुन्देला, लोई बाजार, वृन्दावन-281121
© 7500987654, 0565-2442415
email: harinampress@gmail.com
www.harinampress.com

एक अद्भुत ग्रन्थ

इस ग्रन्थ के बंगला भाषा के मूल प्रणेता श्री नरहरि चक्रवर्ती ठाकुर जिनका एक और नाम घनश्यामदास भी है। इनका जन्म सत्रहवीं ईसवी शताब्दी के प्रांरभ में ही मुर्शिदाबाद जिले के रेडागग्राम में हुआ।

इनके पूज्य पिता श्री जगन्नाथ चक्रवर्ती हैं जो कि विश्वनाथ चक्रवर्ती के विख्यात शिष्य है। श्री नरहरि चक्रवर्ती के श्री गुरुदेव श्री नृसिंह चक्रवर्ती हैं।

श्री गोविन्द देव के स्वप्नादेश से ये व्रज में आये और श्रीगोविन्ददेव के रसोइया-पुजारी के नाम से विख्यात हुए। इनके द्वारा रचित निम्नलिखित ग्रन्थ प्राप्त होते हैं-

1. भक्तिरत्नाकर, 2. नरोत्तम विलास, 3. श्रीनिवास चरित्र, 4. गीत चन्द्रोदय, 5. छन्दसमुद्र, 6. गौरचरित चिन्तामणि, 7. नामामृत समुद्र, 8. पद्धति प्रदीप, 9. संगीतसार प्रभृति।

ये अनेक गुणों से युक्त कुशल रसोइया, कुशल गायक, कुशल वादक, कुशल संगीतज्ञ एवम् अति दैन्य युक्त परम भक्त कोटि के वैष्णव हैं।

महाप्रभु एवं उनके परिकर वैष्णवजन के तीन प्रमुख ग्रन्थ हैं- चैतन्य चरितामृत (प्रकाशित एवं उपलब्ध), श्रीचैतन्यभागवत (प्रकाशित एवं उपलब्ध) एवं श्रीचैतन्य मंगल। इन तीनों ग्रन्थों में बाद के एवं तत्कालीन कुछ वैष्णव परिकर के चरित्र इन तीन ग्रन्थों में अनुपलब्ध हैं। तत्कालीन श्रीलोकनाथ, श्री प्रबोधानंद, श्रीगोपालभट्ट एवं परवर्ती श्रीनिवास, नरोत्तम ठाकुर, श्यामानन्द प्रभु आदि के चरित्र श्रीनरहरि सरकार ठाकुर ने भक्ति रत्नाकर एवं नरोत्तम विलास आदि में लिपिबद्ध किये हैं।

इस ग्रन्थ में सबसे महत्वपूर्ण दो अध्याय हैं, **पंचम प्रवाह** में जो ब्रजयात्रा के अन्तर्गत, ब्रज के विभिन्न स्थानों का वर्णन है, वह वास्तविकता एवम् पूर्ण विवरण के साथ प्रस्तुत किया है। शायद ही 84 कोस का कोई पड़ाव छूटा हो। साथ ही गाँवों के नाम आदि का भी पूरा खुलासा किया है कि इस गाँव का नाम यह क्यों पड़ा और समय के चक्र में वह नाम बिगड़कर यह हो गया।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रवाह है- **बारहवां प्रवाह**। जिसमें नवद्वीप परिक्रमा के स्थानों का लीला सहित विस्तार से वर्णन किया है, जो कि शायद अन्यत्र उपलब्ध नहीं है।

कुछ ऐतिहासिक तथ्य वास्तविकता से शायद मेल नहीं खाते हैं, लेकिन भावपूर्ण प्रस्तुति पाठक को बांधे रखती है। रचनाकार अति भावुक हैं। विभिन्न

वैष्णव जन के चरित्र में जब-जब महाप्रभु या नित्यानंद प्रभु या श्रीनिवास या नरोत्तम का जिक्र आया तो भावावेश में आपने अनेक बार इनके चरित्र को बार-बार, टुकड़ों-टुकड़ों में प्रस्तुत किया है। साहित्य की दृष्टि से भले ही प्रशस्त न हो, लेकिन इनके भावमय हृदय का यहाँ स्पष्ट दर्शन होता है।

अपने बंगला पयारों के साथ-साथ संस्कृत श्लोक एवं महाजनों के भजनों को भी भरपूर उद्धृत किया है, ग्रन्थ विस्तार भय से संक्षेप में ही लिया गया है। नायक-नायिका भेद आदि का वर्णन करते समय अनेकानेक पृष्ठ उज्ज्वल नीलमणि के उद्धृत किये हैं, जिन्हें प्रकाशित ग्रन्थ उज्ज्वल नीलमणि में ही देखना चाहिये।

इस ग्रन्थ का अनुवाद मेरे परम प्रिय शिष्य श्री अनन्त हरिदास ने अति परिश्रम से किया है। बाद में इसका संशोधन श्री कौशल किशोर जी भट्ट एवं स्वयं मैंने किया है। यह अनन्त हरिदास का प्रथम प्रयास है- अत: स्वीकार्य है। कहीं कहीं लालित्य या भाव का अभाव लगता है, लेकिन भावग्राही पाठक हमें उत्साहित करेंगे।

महाप्रभु के भक्त या पार्षद के स्थान पर 'शिष्य' शब्द का प्रयोग हुआ है- यहां दीक्षित शिष्य न मानकर परिकर, पार्षद भक्त ही समझना चाहिये। आगामी संस्करण में यह सब परिमार्जित कर दिया जाना है। अभी इस ग्रन्थ में पांच-छ: वर्ष लग चुके हैं, अब धैर्य जवाब दे रहा है और व्यग्रता है कि यह एक बार जैसा-तैसा प्रकाशित होकर वैष्णवजन के करकमलों की शोभा बने।

पूज्य पिताजी द्वारा तो हजार-दो हजार पृष्ठों के अनेकानेक बड़े-बड़े ग्रन्थ अनुवादित और सम्पादित हुए हैं। उनकी कृपानुभूति से 200/300 पृष्ठों के 30-40 छोटे-छोटे ग्रन्थ तो इस दासाभास द्वारा प्रभु ने कराये हैं- यह पहला एक विशाल 600 पृष्ठ का ग्रन्थ है- जो प्रभु कृपा से जैसा बन पाया प्रस्तुत है।

भक्ति रत्नाकर एक प्रामाणिक ग्रन्थ है। प्राय: ग्रन्थों में भक्तिरत्नाकर का रेफरेन्स प्राप्त होता है। छोटे-छोटे तथ्यों को प्रकाशित करता हुआ यह ग्रन्थ गौड़ीय-साहित्य का एक मिनी एन्साइक्लोपीडिया जैसा है।

जब इसके सम्पादन पर अन्तिम दृष्टि प्रारंभ हुयी तो शास्त्र कृपा से श्रीकृष्णा ग्रीन की ही निवासी मेरी परम श्रद्धेय श्री प्रेमधारा माता जी से एक दिन भेंट होने पर भक्ति रत्नाकर की चर्चा चली तो उन्होंने मुझे अपनी लाइब्रेरी की भक्ति रत्नाकर की बंगला प्रति सहर्ष प्रदान की। निश्चित मानिये कि उस बंगला प्रति की सहायता से मैं अत्यधिक सहजता से इस ग्रन्थ को फाइनल कर

पाया। श्री प्रेम धारा माता जी परम सन्त बाबा श्री अनन्तदास जी महाराज से आश्रित हैं एवम् ऐकान्तिक भक्ति में रात्रि-दिन व्यस्त हैं, मस्त हैं।

ग्रन्थ-सम्पादन, अनुवाद, प्रकाशन, निश्चित ही बहुत ही धैर्य का कार्य है। साथ ही शास्त्र कृपा, सन्त-गुरुजन कृपा के बिना लेखनी का चल पाना अत्यधिक कठिन है। इन्हीं कृपा कणों का सम्बल लेकर ही यह कब, कैसे प्रारंभ होते हैं, अनेक बाधाओं को पार करते हुए जब प्रकाशित होते हैं तो प्रमाणित हो जाता है कि समस्त भगवद् कार्य भगवद्कृपा से ही सम्पन्न होते हैं। शास्त्र कृपा का अनेक बार अनुभव हुआ, इस ग्रन्थ के सन्दर्भ में एक दम अन्तिम चरण में अप्रयास बंगला प्रति का श्री प्रेमधारा जी द्वारा प्राप्त होना रोमांचक उदाहरण है।

बाधायें सभी कार्यों में आती हैं। इस ग्रन्थ में भी आयीं। एक समय आया कि 'प्रभु इच्छा' मानकर मैं शान्त हो गया, लेकिन प्रिय अनुज डा. भागवत कृष्ण ने हिम्मत नहीं हारी और एक दिन अचानक ग्रन्थ के प्रूफ मेरे सामने रख दिये। मेरे आश्चर्य और उत्साह का ठिकाना न रहा। यह मुहावरा जीवन्त हो गया कि 'एक और एक दो नहीं ग्यारह होते हैं।'

रोचकता बनी रहे- इस दृष्टि से बीच-बीच में सबहैडिंग दिये गये हैं। बंगला ग्रन्थ में भी सबहैडिंग्स हैं, लेकिन उनका आधार न लेते हुए स्वमति अनुसार सबहैडिंग्स दिये गये हैं, जिससे पाठक कभी भी कहीं से पढ़ना प्रारंभ कर सके।

ग्रन्थ में कुल पंचदश प्रवाह हैं, जिनकी विषय वस्तु 16 वें अध्याय 'उपसंहार' में स्वयं लेखक ने प्रस्तुत की है। अन्त में अति दैन्य पूर्वक 10-5 पंक्तियों में श्री नरहरि सरकार ठाकुर ने अपना, गुरुदेव का एवं पिता के नाम का उल्लेख कर परिचय दिया है।

सभी गुरु वैष्णव जन की महती कृपा एवं स्वयं मूलग्रन्थ प्रणेता की अहैतुकी कृपा से अनेक बाधाओं को पार करता हुआ यह ग्रन्थ अन्ततः आपके कर कमलों में है- आस्वादन करें एवं हम भाइयों को आशीष-शुभकामना प्रदान करें कि इसी प्रकार गौड़ीय ग्रन्थावली की सेवा में शेष जीवन व्यतीत कर पायें।

ग्रन्थ सेवारत सदैव आपका

दासाभास डॉ गिरिराज

एमए, पी-एचडी, साहित्यरत्न, सम्पादक शिरोमणि
प्रधान सम्पादक : श्रीहरिनाम मासिक

04.10.2018
रात्रि 1.40

श्रीभक्ति रत्नाकर 12वां प्रवाह में वर्णित श्रीनवद्वीप परिक्रमा के दर्शनीय स्थल

1. श्रीमायापुर या अन्तर्द्वीप, 2. सुवर्ण विहार, 3. सीमन्तद्वीप या सिमुलिया, 4. गोद्रुमद्वीप या गादिगाछा, 5. मध्यद्वीप या माजिता, 6. सप्तऋषि-घाट, 7. वामनपौखरा या ब्राह्मणपुष्कर, 8. श्रीपुष्करतीर्थ, 9. हाटडाङ्गा या उच्चहट्ट, 10. कोलद्वीप या कुलिया, 11. समुद्रगड़ि या समुद्रगति, 12. चम्पकहट्ट या चाँपाहाटि, 13. रातुपुर या ऋतुद्वीप, 14. विद्यानगर, 15. जह्नुद्वीप, 16. माउगाछि ग्राम या मोदद्रुमद्वीप, 17. वैकुण्ठपुर, 18.नारायणपीठ, 19. मातापुर या महत्पुर, 20. रुद्रपुर या रादुपुर-ग्राम, 21. बेलपौखेरा या विल्बपक्ष, 22. भारुईडाङ्गा या भारद्वाजटीला, 23. सुवर्णविहार एवं महायोगपीठ।

पंचम प्रवाह में वर्णित श्रीब्रजमण्डल परिक्रमा के दर्शनीय स्थल

1. मथुरा, 2. श्रीविश्रान्ति, 3. अविमुक्ततीर्थ, 4. गुह्यतीर्थ, 5. प्रयागतीर्थ, 6. कनखलतीर्थ, 7. तिन्दुकतीर्थ, 8. सूर्यतीर्थ, 9. वटस्वामीतीर्थ, 10. ध्रुवतीर्थ, 11. ऋषितीर्थ, 12. मोक्षतीर्थ, 13. कोटितीर्थ, 14. बोधितीर्थ, 15. नवतीर्थ, 16. असिकुण्ड, 17. संयमनतीर्थ, 18. धारापतनतीर्थ, 19. नागतीर्थ, 20. घन्टाभरण, 21. ब्रह्मतीर्थ, 22. सोमतीर्थ, 23. सरस्वतीपतन, 24. चक्रतीर्थ, 25. दशाश्वमेध तीर्थ, 26. विघ्नराजतीर्थ, 27. गोकर्णाख्यतीर्थ, 28. कृष्णगङ्गा, 29. वैकुण्ठतीर्थ, 30. असिकुण्डतीर्थ, 31. चतुःसामुद्रिक, 32. यमुना, 33.कंसखालि, 34. कुब्जाकूप, 35. बलदेवकुण्ड, 36. कृष्णकूप, 37. मधुवन, 38. तालवन, 39. कुमुदवन, 40. दतिहा, 41. आयोरे, 42. गौरवाई या गौराइ, 43. टानाग्राम, 44. षष्ठीकराटवी, 45. शकटारोहण, 46. शकटाग्राम, 47. गरुड़गोविन्द, 48. गंधेश्वरस्थान, 49. सतोहा, 50. बहुलावन, 51. सङ्कर्षणकुण्ड, 52. मानसरसी, 53. मयूरग्राम, 54. दक्षिणग्राम, 55. वसतिग्राम, 56. राओल या रालग्राम, 57. आरिट्ग्राम, 58. मानसीगङ्गा, 59. श्रीराधाकुण्ड, 60. श्रीश्यामकुण्ड, 61. काली-गौरी (धान्य क्षेत्र), 62. मानसपावनघाट, 63. सखीस्थली, 64. माल्यहारिकुण्ड, 65. शिवखोरकुण्ड, 66. भानुखोरकुण्ड, 67. सुबल कुञ्ज, 68. मुखराईग्राम, 69. कुसुमसरोवर, 70. नारदकुण्ड, 71. रत्नसिंहासन, 72. पालिग्राम, 73. अतग्राम, 74. इन्द्रध्वजवेदी, 75. ऋणमोचन-पापमोचनकुण्ड, 76. सङ्कर्षणकुण्ड,

77. परासौलिग्राम, 78. चन्द्रसरोवर, 79. गन्धर्वकुण्ड, 80. पैठग्राम, 81. गौरीतीर्थ, 82. नीपकुण्ड, 83. आन्यौर, 84. अन्नकूटस्थान, 85. श्रीगोविन्दकुण्ड, 86. दाननिवर्तनकुण्ड, 87. गाँठौलि, 88. अप्सराकुण्ड, 89. गोवर्धनकुण्ड, 90. सुरभिकुण्ड-रुद्रकुण्ड, 91. कदम्बखण्डि, 92. दानघाटि, 93. कृष्णवेदी, 94. ब्रह्मकुण्ड, 95. मानसगङ्गा, 96. गोवर्धनक्षेत्र, 97. चक्रतीर्थ, 98. सौंकराई, 99. सखीखरा, 100. श्रीगोविन्दघाट, 101. नीमग्राम, 102. पाटलग्राम, 103. डेराबलि-ग्राम, 104. नवग्राम, 105. कुञ्जेराग्राम, 106. सूर्यकुण्डग्राम, 107. मोरनाख्या, 108. केउनाइ या कोनाइ, 109. भदायर, 110. मगहेरा या मघेरा, 111.गुलालकुण्ड, 112. रेहेज़, 113. देवशीर्षस्थानकुण्ड, 114. प्रमोदना या परमादना-ग्राम, 115. सेतुकन्दरा, 116. कदम्बकानन, 117. इन्द्रोलि, 118. कनोयारो, काम्यवन, 119. विष्णुसिंहासन, 120. श्रीचरणकुण्ड, 121. शिवकामेश्वर, 122. धर्मकुण्ड, 123. विशोका, मणिकर्णिका, 124. विमलकुण्ड, 125. यशोदाकुण्ड, 126. नारदकुण्ड, 127. कामनाकुण्ड, 128. सेतुबन्धकुण्ड, 129. लुकलुकानी-मिचलि, 130. काशीकुण्ड, 131. गया-प्रयागपुष्कर, 132. गोमतीद्वारकाकुण्ड, 133. तपकुण्ड, 134. ध्यानकुण्ड, 135. श्रीचरणचिह्न, क्रीड़ाकुण्ड, 136. गोपकुण्ड, 137. घोषरानीकुण्ड, 138. विह्वलकुण्ड, 139. श्यामकुण्ड, 140. ललिताकुण्ड, 141. विशाखाकुण्ड, 142. मानकुण्ड, 143. मोहिनीकुण्ड, 144. बलभद्रकुण्ड, 145. चन्द्रसेनपर्वत, 146. फिसलनी-शिला, 147. गोपीकारमण, 148. कामसरोवर या कामसागर, 149. सुरभिकुण्ड, 150. चतुर्भुजकुण्ड, भोजन थाली, 151. बाजनीशिला, 152. परशुराम-स्थितिस्थान, 153. शान्तनुकुण्ड, 154. वेदकुण्ड, 155. दामोदर-कुण्ड, 156. पृथूदककुण्ड, 157. नृसिंहकुण्ड, 158. अर्घ्यकुण्ड, 159. मधुसूदनकुण्ड, 160. रोहिणीकुण्ड, 161. गोपालकुण्ड, 162. गोदावरी-कुण्ड, 163. देवकीकुण्ड, 164. चोर्यखेला, 165. प्रह्लादकुण्ड, 166. धूलाउड़ा, 167. उधाग्राम, 168. आटोरग्राम, 169. कदम्बखण्डी, 170. स्वर्णहार-ग्राम या सोनहेरा, 171. रत्नकुण्ड, 172. चतुर्मुख, 173. वृषभानुपुर या बरसाना, 174. साँकरिखोर, 175. दानमानविलास-पर्वत, 176. तमालकुञ्ज, 177. चिक्सौली, 178. गह्वरवन, 179. शीतलाकुण्ड, 180. रोहिणीकुण्ड, 181. डभरारो या डाभारो, 182. मुक्ताकुण्ड, 183. भानुखोर, 184. पियाल-सरोवर, 185. पीलूखोर, 186. भानुपीलूसरोवर, 187. त्रिवेणीनदी, 188. प्रेमसरोवर, 189. विह्वलकुण्ड, 190. सङ्केतकुण्ड, 191. कृष्णकुण्ड, नंदीश्वर, 192.पावनसरोवर, 193. कुण्डवन, 194. तड़ागतीर्थ, 195. क्षुण्णाहार-सरोवर, 196. धोयानिकुण्ड, 197. पौर्णमासी-कुण्ड, 198. नान्दीमुखी आलय, 199. यशोदाकुण्ड, 200. करेलकुण्ड, 201. मधुसूदनकुण्ड, 202. पानीहारिकुण्ड, 203. साहसीकुण्ड

अक्रूर का स्थान, 204· योगिया, 205· उधोक्रिया, 206· गोशाला, 207· नन्दग्राम, 208· गेदुखोर, 209· कदम्बकानन, 210· गुप्तकुण्ड, 211· मेहेरान, 212· आवट्, 213· पीवनकुण्ड, 214· लाड़िलीकुण्ड, 215· नारदकुण्ड, 216· कोकिलावन, 217· आँजनक ग्राम, 218· विद्युद्वारिग्राम या विजोआरि, 219· परशो, शीग्राम, 220· कमइग्राम, 221· करहला ग्राम, 222· लुधौनी-ग्राम, 223· पियासो, 224· साहार-ग्राम, 225· साँखि-ग्राम, 226· रामकुण्ड, 227· रामतलाब, छत्रवन या उमराव ग्राम, 228· किशोरीकुण्ड, 229· नरीसेमरी, 230· खदिरवन, 231· सङ्गमकुण्ड, 232· कदम्बखण्डि, 233· वकथरा, 234· नेओछाक, 235· भाण्डागोर या भादालि, 236· बठैन-ग्राम, 237· नीपवन, 238· कृष्णकुण्ड, 239· कुण्डलतुण्ड, 240· वेड़ोखोर, 241· चरणपाहाड़ि, 242· हारोयाल, 243· साँतोआ, 244· सूर्यकुण्ड, 245· नन्दनकूप, 246· बाजनीशिला, 247· पाइग्राम, 248· चलनसिला, 249· कामरि-ग्राम, 250· विछोर-ग्राम, 251· कदम्बखण्डि, 252· तिलोयार, 253· शृङ्गारवट, 254· ललापुर, 255· वासोसी, 256· पयःग्राम, 257· कोटरवन, 258· दधि-ग्राम, 259· खानी-ग्राम, 260· वनचारी, 261· खररो, 262· उजानि, 263· खेलनवन या श्रीखेलातीर्थ, 264· रामघाट, 265· कच्छवन, 266· भूषणवन, 267· अक्षयवट, 268· भाण्डीरवट, 269· आरा-ग्राम, 270· मुञ्जाटवी या ईषिकाटवी, 271· भाण्डारी-ग्राम, 272· गोपीघाट, 273· चीरघाट, 274· नन्दघाट, 275· भय-ग्राम, 276· वत्सवन-उनाइ-ग्राम, 277· बालहारा, 278· सेइ-ग्राम, 279· चौमुहा-ग्राम, 280· अघवन या सपौली, 281· जैंत-ग्राम, 282· स्यानो या सेहोना, 283· तरोली-ग्राम, 284· वरोली- ग्राम, 285· कृष्णकुण्डटीला, 286· मघेरा या मघहेरा, 287· तमालकानन, 288· आटसूग्राम, 289· शक्रुस्थान या सकराया, 290· वराहर, 291· हरासली, 292· नन्दघाट, 293· सुरुखुरु, 294· भद्रवन, 295· भाण्डीरवन, छाहेरी, 296· माटग्राम, 297· विल्ववन, 298· लौहवन, 299· नौकाकेलि, 300· लोहजङ्घवन, 301· महावन, 302· ब्रह्माण्डघाट, 303· यमलार्जुन- भञ्जनतीर्थ, 304· रमणक, 305· गोपकूप, 306· अग्रवन, 307· रेणुका-ग्राम, 308· राजग्राम, 309· सकरौली, 310· रावस-ग्राम, 311· रावल, 312· अम्बिकाकानन, 313· विश्रामतीर्थ, अक्रूरतीर्थ, 314· भोजनस्थल, 315· श्रीवृन्दावन, 316· सुनरख-ग्राम, 317· कालीय ह्रद, 318· रमणक-द्वीप, 319· द्वादशादित्य, 320· प्रस्कन्दनक्षेत्र, 321· अद्वैतवट, 322· शृङ्गारवट, 323· चयनघाट, 324· केशीतीर्थ, 325· वंसीवट, 326· ब्रह्मकुण्ड, 327· वेणुकूप एवं दावानल-स्थान।

विषय सूची

प्रथम प्रवाह **25**
वैष्णव स्तुति 25
श्री गौरसुन्दर एवं उनके पार्षदों की स्तुति 25
श्रीगोपालभट्ट गोस्वामिपाद के पूर्वज 29
श्रीगोपालभट्ट चरित्र 30
श्रीरामचन्द्र कविराज 38
श्री नरोत्तम ठाकुर 39
श्रीलोकनाथ 40
श्रीलोकनाथ की श्रीनरोत्तम पर कृपा 42
श्रीश्यामानन्द 42
श्रीश्यामानन्द प्रभु के अभिन्न विग्रह श्रीनरोत्तम 45
श्रीगोविन्ददास 47
श्रीसन्तोष दत्त 49
श्रीगोकुलानन्द 50
श्रीजीव गोस्वामी की सात पीढ़ियां 53
श्रीसनातन-श्रीरूप-श्रीवल्लभ 54
श्रीसनातन के गुरु 55
श्री सनातन द्वारा भागवत आलोचना 57
श्रीवृन्दावन से नीलाद्रि गमन 58
श्रीजीव गोस्वामी चरित्र 58
श्रीरघुनाथदास 62
श्रीसनातन कृत ग्रन्थ 63
श्रीरूप कृत ग्रन्थावली 63
श्रीरघुनाथदास ग्रन्थावली 64
श्रीजीव गोस्वामी ग्रन्थावली 64
श्रीनिवास आचार्य 65
द्वितीय प्रवाह **67**
श्रीगौरसुन्दर और उनके पार्षदों की स्तुति 67
श्रीचैतन्यदास ब्राह्मण 67
श्रीनिवास के पिता : श्रीचैतन्यदास 68
गदाधर भट्टाचार्य का नाम हुआ चैतन्यदास 69
क्या स्वप्न देखा 70
श्रीमहाप्रभु-दर्शन 70
भक्तगणों के निर्देशन में दर्शन 71
पुत्र श्रीनिवास होगा 72
श्रीनिवास का जन्म 73
पुत्र को नाम-उपदेश 74
उपनयन 74
श्री गोविन्द घोष 75
श्रीनरहरि-मिलन एवं कृपा 75
मधुमती सखी हैं नरहरि सरकार ठाकुर 76
पिता से श्रीनिवास द्वारा श्रीचैतन्यचरित श्रवण 76
केशव काश्मीरि मिलन 76
गया गमन 77
जगाई-माधाई 77
काजी उद्धार 78
श्रीचैतन्यदास को गौर दर्शन 79
श्रीरूप सनातन चरित्र भी सुनाया 81
श्रीगोविन्द देव का प्राकट्य 82
श्रीकाशीश्वर एवं श्रीगौरगोविन्द विग्रह 83
वृन्दादेवी प्राकट्य 83
श्रीमदनगोपाल 84
श्रीमदनमोहन मन्दिर 84
श्रीगोपीनाथ मन्दिर 84
तृतीय प्रवाह **85**
श्रीनिवास चरित्र 85
श्रीखण्ड के लिये प्रस्थान 86
श्रीअद्वैत की तर्जा 87
नीलाचल गमन 88
स्वप्न में दर्शन 88
सिंहद्वार पर संकीर्तन 89
स्वप्न में महाप्रभु दर्शन 89
श्रीगदाधर पण्डित से मिलन 90
श्रीराय रामानंद मिलन 91
श्रीवक्रेश्वर पण्डित 91
श्रीरघुनाथदास 92
श्रीप्रतापरुद्र 93
श्रीहरिदास समाधि दर्शन 93
श्रीजगन्नाथ दर्शन 93
श्रीबलराम दर्शन 94
पुनः गदाधर पण्डित के पास 95
श्रीखण्ड प्रस्थान 95
पण्डित का अप्रकट समाचार 96
पण्डित गोस्वामी अप्रकट 96
स्वप्न में श्रीगौर गदाधर दर्शन 97
श्रीनित्यानंद-अद्वैत अदर्शन 97
स्वप्न में दर्शन 98
चतुर्थ प्रवाह **98**
श्रीनिवास का भ्रमण एवं दीक्षा 98
श्रीनवद्वीप दर्शन 99
अपूर्व विरह विलाप 99
श्रीवंशीवदन से मिलन 99
विष्णुप्रिया दर्शन 100
शान्तिपुर गमन 101

खरदह दर्शन 103
अभिराम ठाकुर दर्शन 103
जयमंगल चाबुक 105
श्रीवृन्दावन यात्रा 106
मार्ग में एकचक्रादि स्थान दर्शन 107
स्वप्न में श्रीनित्यानंद प्रभु दर्शन 107
काशी दर्शन 108
श्रीमहाप्रभु-अप्रकट समाचार 108
वापिस जाने लगे 109
स्वप्न में श्रीरूप-सनातन दर्शन 109
श्रीगोपाल भट्ट से दीक्षा का आदेश 110
श्रीगोपालभट्ट-दर्शन 111
श्रीधाम शोभा वर्णन 111
श्रीराधादामोदर दर्शन 112
श्रीदामोदर विग्रह 113
श्रीराधारमण प्राकट्य 114
श्रीराधारमण भये गौर 116
श्रीलोकनाथ-भूगर्भ मिलन 116
श्रीगोपीनाथ दर्शन 117
श्रीमदनमोहन दर्शन 117
सनातन-समाधि दर्शन 117
दीक्षा-क्रम 117
श्रीरघुनाथदास मिलन 118
आचार्य उपाधि 119
श्री नरोत्तम ठाकुर 119
श्रीलोकनाथ द्वारा श्रीनरोत्तम दीक्षा 120
पंचम प्रवाह 121
मथुरा मण्डल परिक्रमा-विवरण 121
श्रीराघव पण्डित 122
मथुरा मण्डल माहात्म्य 123
विष्णुलोक प्राप्ति 126
मथुरा की सीमा 127
अयोग्य ब्राह्मण पर कृपा 129
श्रीकृष्णजन्मस्थान 131
दीर्घ विष्णु 131
विश्रामघाट 132
सुदामा माली 137
द्वादशवन 139
दन्तवक्र-वध 139
श्रीराधा-श्याम कुण्ड 142
श्रीराधाकुण्ड पर महाप्रभु 145
श्रील दासगोस्वामी वांछा पूर्ति 145
श्यामकुण्ड पर पाण्डव 146
श्री दासगोस्वामि कुटिया 147
चन्द्रावली का स्थान 147
श्रीराधाकुण्डवास-योग्यता 148
मुखरा नानी 149
गोवर्धन गिरिराज दर्शन 149
आन्यौर 150
गोविन्द कुण्ड 151
दान घाटी 152
मानसी गंगा 153
गिरि गोवर्धन 153
बलदेव भक्त ब्राह्मण 154
श्रीनित्यानन्द का गिरिराज दर्शन 154
श्रीनित्यानन्द ही श्रीबलराम 155
चक्रतीर्थ 156
चक्रतीर्थ पर श्री सनातन 156
श्रीजी की वेणी सर्प जैसी 157
पाटल आदि ग्राम 159
गांठौली 160
गोपाल पर्वत से नीचे पधारे 160
अनेकानेक ब्रज गाँव 161
काम्यवन-कामां 162
विमलकुण्ड 162
फिसलनी शिला 163
बरसाना 164
त्रिवेणी नदी 165
संकेत 166
नन्दगाँव 166
पौर्णमासी 168
पनिहारी कुण्ड 169
मुक्ता की खेती 170
उद्धव कुण्ड 170
गुप्त कुण्ड 171
नारद कुण्ड 172
कोकिलावन 173
आंजनक 173
विजौली 174
चन्द्रावली परिचय 175
कुन्दलता-सुभद्र 175
छत्र वन की रस-लीला 176
किशोरी कुण्ड 178
श्यामसुन्दर बने किन्नरी 178
भादालि 179
पावन सरोवर पर श्रीसनातन 180
खीर का प्रसंग 180
श्रीरूप-विरह 181
बठैन गाँव 182
पुत्र स्नेह 182

अद्‌भुत-स्नेह ब्रजवासियों का	183
श्री बलराम लीला स्थल रामघाट	186
श्रीबलराम का रासस्थल	188
(बल) राम-घाट	189
भाण्डीरवन में कुश्ती	190
वत्स-हरण स्थल	191
नन्दघाट पर श्रीजीव	193
वल्लभाचार्य-जीव-चर्चा	193
मिल गये जीव	194
विजय पत्र से पराजय	195
भद्रवन	195
भाण्डीरवन	195
बिल्ववन	196
लौहवन	196
महावन	197
विभिन्न कृष्ण लीला स्थलियां	198
महावन में महाप्रभु	200
श्रीसनातन के श्रीमदनगोपाल	201
गोपकूप	201
श्रीराधारानी प्राकट्य	202
सुदर्शन-सर्प रूप में	205
श्रीवृन्दावन	206
श्रीयोगपीठ	208
ब्रह्मकुण्ड	210
द्वादशाक्षर मन्त्र	211
नाम कितना?	211
योगपीठ के आठ नाम	212
सुनरख	213
द्वादश आदित्य टीला	213
श्रीसनातन के स्वप्न में महाप्रभु	214
प्रस्कन्दन तीर्थ	214
श्रीअद्वैत प्रभु	215
श्रीअद्वैत-गर्भ में पधारे	216
अद्‌भुत व्यक्तित्व-अद्वैत	217
श्रीमाधवेन्द्र पुरी से दीक्षा	217
इमलीतला	218
ईश्वर पुरी को मन्त्रदान	218
श्रृंगार वट	219
धीर समीर	223
वंशीवट	223
यमुना-पुलिन	224
रासलीला-आयोजन	225
अनन्त सखी-गोपीजन	226
अनन्त सखी गण	227
सखियों की लीला सेवा	228
गोपेश्वर महादेव	229
वेणुकूप	330
दावानल कुण्ड	330
व्रजवास निष्ठा	330
श्रीगोविन्द देव	331
ब्रज महिमा	232
एक वैष्णव द्वारा श्री रूप के प्रति भ्रम	232
षष्ठ प्रवाह	**234**
श्रीश्यामानन्द चरित्र	234
श्रीहृदय चैतन्य के शिष्य	236
श्रीराधा विग्रह आगमन	237
साक्षी गोपाल	238
श्रीगोविन्द गोपीनाथ मदनमोहन	240
श्रीनिवासाचार्य द्वारा महाप्रभु लीला स्मरण	240
होली लीला आत्मसात्	241
तन गुलाल से रंग गया	242
झुलस गये हाथ	243
श्रीराधाकुण्ड वास	244
ग्रन्थ बंगाल ले जाना	245
श्रीरघुनाथ दास से विदा	245
नरोत्तम : श्यामानन्द : श्रीनिवास	246
यात्रा की योजना	247
श्रील रूप गोस्वामी	248
श्रीरूप न होते तो?	249
द्विज हरिदास	250
स्वप्न में श्री चैतन्य	251
पुत्र भी भाग्यशाली	252
कनाई ब्रजवासी	253
श्रीभूगर्भ गोस्वामी	254
श्रीगोपाल भट्ट	255
श्रीलोकनाथ गोस्वामी	256
श्रीमधु पंडित	256
श्रीगोपेश्वर मंदिर	257
श्रीकाशीश्वर	257
श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी	258
श्रीगोविन्द शोभा	258
वृन्दावन-विरह	259
श्रीगोविन्द जू द्वारा स्वप्नादेश	259
श्रीगोविन्द भये श्रीचैतन्य	260
चल पड़ीं छकड़ा गाड़ियां	261
सप्तम प्रवाह	**262**
ग्रन्थों की चोरी एवं पुनः प्राप्ति	262
चोरों ने लगाई सेंध	263
राजा ही चोर है	264
लुट गये ग्रन्थ	265

राजा चोर प्रजा ईमानदार 265
राजा के कल्याण की कामना 266
चोरी में ज्योतिषी भी शामिल 267
राजा का हृदय परिवर्तन 267
ग्रन्थों का प्रभाव महल में 267
अब नींद खुली 268
पहुंच गये चोर राजा के पास 270
महल में भागवत पाठ हुआ प्रारंभ 270
वो लुटेरा मैं ही हूँ 272
वापिस मिल गये समस्त ग्रन्थ 272
महाप्रभु द्वारा प्रचारित महामन्त्र 273
धाम में सूचित करो 274
राजा बन गया परम भक्त 274
श्रीनरोत्तम एवं श्रीश्यामानन्द को-
सूचित किया 274
सन्तोष ने किया उत्सव 275
दौड़ गयी खुशी की लहर 276
राजा की ग्लानि एवं सन्तुष्टि 277
अम्बिका दर्शन 278
पण्डित गौरीदास के साक्षात् विग्रह 278
गौरीदास पंडित ही सुबल हैं 279
विग्रह और साक्षात् गौर निताई 280
विग्रह बने श्रीकृष्ण-बलराम 281
विग्रह रूप में किया भोजन 282
श्रीहृदय चैतन्य दास 282
दीक्षा 283
विशाल उत्सव 284
उत्सव में पधारे श्रीविग्रह 284
बनावटी क्रोध 285
श्यामानन्द को भेजा उत्कल 286
विष्णुपुर से प्रस्थान 286
याजिग्राम पहुँचे 288
एक एक करके अन्तर्धान 289
श्रीअद्वैत द्वारा स्वप्नादेश 290
श्रीखण्ड आगमन 290
श्रीनरोत्तम ठाकुर कहां हैं 291
श्रीगदाधर दास 292
विवाह की भूमिका 293
अष्टम प्रवाह **294**
श्रीनिवास का गृहस्थाश्रम-प्रवेश 294
नदिया के एक ब्राह्मण 295
लोग पहचान नहीं पाये 296
मायापुर-प्रस्थान 297
श्रीईशान से मिलन 298
नीलाचल की ओर श्री नरोत्तम 299
शान्तिपुर 299
अच्युतानन्द प्रतीक्षा में हैं 299
अम्बिका में श्रीनरोत्तम 300
सप्तग्राम 301
नित्यानन्द-लीला 301
श्रीउद्धारण दत्त 302
खरदह में श्री नरोत्तम 304
श्रीवसुधा-जाह्नवी की कृपा 304
श्री अभिराम ठाकुर 305
श्रीगोपीनाथ आचार्य 305
जगन्नाथ जी पहुंचे श्रीनरोत्तम 306
जय जगन्नाथ 306
श्रीगदाधर पण्डित : तोटा गोपीनाथ 307
श्रीगोपीनाथ में श्रीगौरचन्द्र 308
श्रीगदाधर पण्डित का क्षेत्र संन्यास 309
सक्रोध सेवा आदेश 309
श्रीराधा-श्रीगदाधर 310
श्रीगदाधर एवं श्रीनित्यानन्द 311
श्रीगोपीनाथ जू का भोग 311
श्रीमन्महाप्रभु का गोपीनाथ मन्दिर में-
अन्तर्ध्यान 312
नरोत्तम को उपदेश आज्ञा 313
श्रीकाशीमिश्र-श्रीगोपाल गुरु 314
गुण्डिचा मन्दिर 314
श्रीश्यामानन्द प्रभु 315
रघुनन्दन-आश्रय 317
श्रीगदाधर दास से मिलन 318
खेतुड़ी प्रस्थान 318
ब्राह्मण रूप में श्रीनित्यानन्द 318
खेतुड़ी 319
क्या सोचा लोगों ने 319
विवाह-उपक्रम 320
द्विज हरिदास के दो सुपुत्रों को दीक्षा 321
श्रीरामचन्द्र कविराज को दीक्षा 322
नवम प्रवाह **324**
राजा वीरहम्वीर का अनुताप 324
श्रीजीव गोस्वामी का पत्र आया है 325
करुण क्रन्दन 326
श्रीवृन्दावन प्रस्थान 327
श्रीश्यामानन्द का वृन्दावन प्रस्थान 328
श्रीरामचन्द्र कविराज का वृन्दावन-गमन 329
श्रीरामचन्द्र के भाई गोविन्द 330
गोविन्द का पश्चाताप 330
श्रीवृन्दावन पहुंचे श्रीरामचन्द्र कविराज 331
श्रीनिवास वापिस गौड़ देश जायें 332

श्रीराधाकुण्ड में 332
वापिस जाने की घोषणा 333
श्रीनिवास का पुनरागमन 333
श्रीश्यामानन्द प्रभु का उत्कल प्रस्थान 334
राजा को दीक्षा 334
रानी एवं राजकुमार 335
राजा हरिनारायण 335
याजिग्राम प्रस्थान 336
श्रीनिवास काटोया में 337
श्रीगदाधर दास का अन्तर्धान 338
काटोया में स्वागत 338
श्री वीरभद्र प्रभु 339
दासगदाधर तिरोभाव महोत्सव 340
श्रीखण्ड आगमन 341
अद्भुत कोकिल-स्वर 342
श्रीनिवास की कृपा 343
सन्ध्या आरती 343
मंगल ध्वनि गूँज उठी 344
दिव्य चक्षु-ब्राह्मण 344
अद्भुत कीर्तन उत्सव 345
ऐसा संकीर्तन गौड़ीयों द्वारा ही सम्भव 345
श्रीरघुनंदन की प्रशंसा 346
महाप्रसाद सेवा 347
श्रीनरहरि ठाकुर ने दर्शन दिये 347
याजिग्राम प्रस्थान 349
दशम प्रवाह 350
द्विज हरिदास तिरोभाव तिथि पूजा, श्रीनरोत्तम ठाकुर के द्वारा श्रीविग्रह-प्रतिष्ठा 350
कांचनगढ़िया में उत्सव 350
उत्सव की तैयारी 351
भक्तजनों का स्वागत 352
श्री गोकुलानन्द एवं श्रीदास की दीक्षा 353
महाप्रसाद 353
श्रीनिवास के कुछ प्रिय शिष्य 354
गोविन्द को दीक्षा 355
सांपों से भरा धान्यागार 356
श्रीरामचन्द्र को स्वप्न में दर्शन 357
श्रीनिवास-नरोत्तम भेंट 358
आयोजन की तैयारी 359
फाल्गुन पूर्णिमा 359
श्रीश्यामदास 360
वंशीदास 361
पांच विग्रह 361
ईश्वरी जाह्नवा भी 361
उल्लास बढ़ गया 362
अच्युत और गोपाल 363
काटोया=कंटकनगर 363
राजा संतोषदत्त 364
देवता भी पधारेंगे 364
छः विग्रह स्थापित 365
संकीर्तन आरम्भ 366
मृदंग पूजन 367
गान प्रारंभ 367
श्रीगौर सुन्दर प्रकट हो गये 368
देवता एवं गन्धर्व भी 369
अन्तर्धान हो गये 369
श्री जाह्नवा के आदेश से होली उत्सव 370
मंगला आरति 371
सन्तोष दत्त द्वारा सेवा 372
उत्सव विश्राम-विदाई 373
आगे का कार्यक्रम 373
एकादश प्रवाह 374
ईश्वरी जाह्नवा-देवी की ब्रज यात्रा और वापिस खरदह आना 374
उत्सव की धूम 374
श्रीनरोत्तम द्वारा संकीर्तन 375
जाह्नवा माता कृपा दान 376
चण्डीदेवी द्वारा जाह्नवा परिचय 376
साधारण नहीं जाह्नवा देवी 377
जाह्नवा द्वारा कृपा वर्षण 377
डाकुओं पर जाह्नवा-कृपा 378
मथुरा-आगमन 379
श्रीवृन्दावन प्रस्थान 381
विग्रह दर्शन लालसा 382
श्रीराधाकुण्ड दर्शन-इच्छा 383
दास गोस्वामी मिलन 383
श्रीकृष्ण दर्शन हुए 384
श्रीगोवर्धन दर्शन 386
मृत-ब्राह्मण पुत्र को जीवित किया 387
श्रीराधागोपीनाथ का स्वप्नादेश 388
विदाई की तैयारी 388
बड़े गंगादास 389
खेतुड़ी पहुंची 390
राजा संतोष की सेवा 391
छः प्रहर संकीर्तन 392
तेलिया बुधरी आगमन 393
बड़े गंगादास का विवाह 393
एकचक्रा-प्रस्थान 394
एकचक्रा आगमन 394
एकचक्रा में पाण्डव 394

श्रीनित्यानंद प्रभु के पूर्वज	395
श्रीनित्यानंद प्रभु का जन्म	396
श्रीनित्यानन्द का खेल - लीलाभिनय	397
विद्वान् बन गये प्रभु	398
संन्यासी के साथ प्रस्थान	398
बलराम आवेश	399
खंडहर हो गया एकचक्रा	400
फिर भी आशा बनी हुयी है	401
दिव्य एकचक्रा धाम	401
शराबी ब्राह्मण पर कृपा	403
श्रीनिवास की पत्नी	404
श्रीखण्ड के लिये चलीं जाह्नवा देवी	405
श्रीनवद्वीप-दर्शन	405
अम्बिका क़ी ओर	406
नाव-यात्रा	407
द्वादश प्रवाह	**407**
श्रील निवासाचार्य, श्रील श्रीनरोत्तम, श्रील श्रीरामचन्द्र कविराज द्वारा-श्री नवद्वीप दर्शन	407
श्रीनवद्वीप पहुँचे	408
सर्वाधिक शोभायमान श्रीनवद्वीप	409
यही है गोलोक श्रीवृन्दावन	410
नौ द्वीप	410
देव-क्रीड़ा भूमि श्रीनवद्वीप	411
मायापुर श्रीनवद्वीप में ही है	412
सेवक ईशान	412
ब्राह्मण से परिचय	413
अतोपुर-अन्तर्द्वीप	414
ब्रह्मा ने की आराधना	414
श्रीचैतन्य दर्शन-वार्तालाप ब्रह्मा जी से	415
श्री शिव द्वारा श्रीचैतन्य चर्चा	416
पार्वती जी को दिये दर्शन	417
सीमन्तद्वीप या सिमलिया	418
गोद्रुम द्वीप-गादिगाछा	418
श्रीइन्द्र को श्रीचैतन्य दर्शन	418
मध्यद्वीप-माजिता	419
सप्तऋषियों को श्रीचैतन्य दर्शन	420
सप्तऋषि घाट	420
वामनपोखरां	421
यहाँ पुष्कर तीर्थ प्रकट हुये	421
इन्द्रादि देवगण	422
उच्चहट्ट	423
कोलद्वीप-कुलिया पहाड़पुर	423
ऋतुद्वीप-रातुपुर	424
समुद्र की आशा बँध गयी	425
हो गये श्री चैतन्य दर्शन	426
चम्पकहट्ट	426
एक ब्राह्मण की कथा	426
रातुपुर का इतिहास	428
जह्नुद्वीप	428
बृहस्पति भी होंगे नवद्वीप में	429
जह्नु मुनि को दर्शन	430
मोद द्रुमद्वीप	430
श्रीराम जानकी संवाद	431
श्रीजानकी जी को लीलादर्शन	432
श्रीरामभक्त ब्राह्मण की कथा	432
ब्राह्मण को श्रीगौरचन्द्र के दर्शन	433
श्रीनारायण द्वारा श्रीनवद्वीप चर्चा	434
द्वारकाधीश बने श्रीचैतन्य	434
एक और ब्राह्मण	435
ब्राह्मण को दर्शन	436
मातापुर	436
एकचक्रा में पाण्डव	436
रुद्रद्वीप	438
श्री रुद्र द्वारा उद्घोषणा	438
भरद्वाज टीला	440
सुवर्ण विहार का इतिहास	440
राजा को हुये दर्शन	441
नवद्वीप स्थित मायापुर में मिश्र-गृह	442
लीला स्मरण	442
विश्वरूप-जन्म	442
श्रीअद्वैत-द्वारा आह्वान	443
श्रीविश्वम्भर-जन्म	443
फाल्गुन पूर्णिमा (धुलहड़ी)	444
महाप्रभु की बाल लीलायें	445
सर्प की कुण्डली	446
नित्य श्रीगौरहरि के दर्शन	446
देवगण पधारे दर्शनों हेतु	447
तन पर मिट्टी	448
बाल चापल्य	449
दो चोरों पर कृपा	449
तैर्थिक विप्र पर कृपा	450
नदिया में ही रहने लगे	451
हिरण्य-गोवर्धन	451
बाल चपल चेष्टाएं	452
बलदेव के अंश अवतार श्रीविश्वरूप	452
संस्कार का समय	453
यज्ञोपवीत संस्कार	454
मिश्र जी का देह त्याग	454
स्वर्ण का टुकड़ा?	455

लक्ष्मी प्रिया मिलन 455
विवाह-चर्चा 456
विवाह की तैयारी 456
दूल्हे राजा निमाई 457
आ गयी बारात 458
वधू लक्ष्मीप्रिया 459
आ गयी घर पर वधू 459
वात व्याधि 460
लक्ष्मीप्रिया अन्तर्धान 460
विष्णुप्रिया से विवाह 461
नदी से जल आनयन 461
दूसरा विवाह समारोह 462
लालाकी आई है बारात 463
श्रीसनातन मिश्र परम हर्षित 463
पाणिग्रहण 464
विदाई 465
विवाह एवं अन्य लीला स्थलियाँ 465
महाप्रभु का भक्ति विलास 467
सात्विक विकार 468
महामन्त्र-जप आदेश 470
अद्‌भुत संकीर्तन शोभा 470
श्रीनवद्वीप-दर्शन 471
जुलाहे का घर 471
ज्योतिषी पर कृपा 472
केशव काश्मीरी पर कृपा 472
गया गमन 473
यह वही वृक्ष है 474
श्रीअद्वैत प्रभु द्वारा निमाई पूजन 475
नारायणी पर कृपा 476
मुझे क्यों विलम्ब हुआ 476
श्री नित्यानन्द प्रभु आगमन 476
व्यास पूजा 477
श्रीबलराम आवेश 478
वेदी पर पूजन 478
श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि 480
गदाधर पण्डित की दशा खराब? 480
श्री वास आंगन 481
शालिग्राम शिला गोद में 482
मुरारी गुप्त का रामाष्टक 482
आज से तुम रामदास 483
आम का वृक्ष 484
श्रीकेशव भारती आगमन 484
निमाई का बाल हठ 484
मेरी दही ए पी गयौ सरररररररररर 485
श्रीमुरारी गुप्त की थाली में 486
इस स्थान को देखो 486
श्री निमाई-स्मृति के चिह्न 487
यहां पाठशाला थी 487
अभिषेक 488
जगाई-माधाई 489
फैल गया समाचार 490
श्रीवास पंडित की सास 490
श्रीशुक्लाम्बर के चावल 491
विभिन्न वेशों में नृत्य 491
कभी पार्वती-कभी लक्ष्मी 492
श्रीनित्यानन्द बलराम के रूप में 493
महाप्रभु को हुयी अपच 493
काजी पर कृपा 494
दुर्लभ नगर संकीर्त्तन 495
श्रीधर खोला बेचा 496
जन्माष्टमी-नृत्य 496
श्रीराधाष्टमी महोत्सव 497
पुष्प एवं जल केलि 497
होली 498
ब्राह्मण ने शाप दिया 499
संकीर्तनावेश 499
श्रीवास पुत्र की मृत्यु 500
विभिन्न भाव एवं आवेश 500
संन्यास लीला 501
शचीमाता बेसुध 502
संन्यास की सूचना गोपनीय 503
वैष्णवजन की दशा 504
शची को शान्तिपुर में मिले 505
श्रीनित्यानन्द अभिषेक 506
कदम्ब पुष्प बिना मौसम 506
श्रीपुरन्दर पण्डित 507
श्रीनवद्वीप में श्रीनित्यानंद 508
श्रीनित्यानंद विवाह 509
स्वप्नादेश 510
विवाह का प्रस्ताव - ब्राह्मण द्वारा 510
अधिवास उत्सव 511
असाधारण सुन्दर वर 512
कृष्णलीला में काकुद्‌मि 512
वारुणी एवं रेवती 513
नित्यानन्द-भजन 513
अद्वैत-भजन 514
स्वर्ण नगरी - श्रीनवद्वीप 515
वैकुण्ठ लीला दर्शन 515
द्वारका-मथुरा लीला 516
त्रयोदश प्रवाह **517**

श्रीनिवास आचार्य का पुनर्विवाह, वीरचन्द्र प्रभु का विवाह एवं श्रीवृन्दावन यात्रा 517
ईशान से विदा ली 517
नदिया का विवरण बताते चले 518
विह्वलता से बेकल 518
राजा वीर हम्वीर का आगमन 519
श्रीरामचन्द्र कविराज द्वारा राजा पर कृपा 519
प्रेमप्रदाता ईश्वरी जाह्नवा 520
राजा द्वारा मुद्रा उपहार 521
श्रीराधा विग्रह श्रीगोपीनाथ जी के लिये 522
अनेक परिधान आभूषण 522
नृसिंह चैतन्य का नृत्य 523
राजा विदा हुआ 523
पापों का नहीं, सेवाप्राप्ति का चिन्तन करो 524
द्रौपदी देवी 524
रघुनन्दन से विदा 525
खेतुड़ी आगमन 525
एक नास्तिक ब्राह्मण 526
अब आप ही संभालो 526
श्रीरघुनन्दन का तिरोभाव 527
दुर्लभ उत्सव हुआ 527
ब्राह्मण को भी स्वप्न 528
दोनों पत्नियां परम प्रसन्न 529
श्री परमेश्वरी दास 529
आठपुर में श्रीराधागोपीनाथ 530
श्रीवीरचन्द्र प्रभु विवाह 530
श्रीनित्यानंद की सुपुत्री गंगा देवी 531
जाह्नवा देवी द्वारा श्रीगोपीनाथ सेवा 531
श्रीवीरचन्द्र प्रभु द्वारा श्रीवृन्दावन यात्रा 533
यात्रा-समाचार 534
श्रीवीरचन्द्र प्रभु के दर्शनों को उमड़े 535
ब्रजधाम दर्शन 535
कैसे जाऊँ बरसाना 536
श्रीराधा जन्म भजन 536
श्रीकृष्ण जन्म प्रसंग 537
श्रीराधाकृष्ण मिलन 538
पावन सरोवर 538
गोविन्द मन्दिर में जन्माष्टमी 539
श्रीराधाष्टमी महोत्सव 540
श्रीराधा-शोभा 540
श्रीवीरचन्द्र प्रभु की वापसी 541
चतुर्दश प्रवाह 542
श्रीजीवगोस्वामी द्वारा लिखित पत्र एवं वोरा-कुलि ग्राम महोत्सव 542
आ गया पत्र 543
पत्र-प्रारंभ 543
पत्र विश्राम 544
द्वितीय पत्र प्रारंभ 544
पत्र विश्राम 544
तृतीय पत्र प्रारंभ 545
पत्र विश्राम 546
चतुर्थ पत्र प्रारंभ 546
पत्र विश्राम 546
श्रीरामचन्द्र का आगमन 547
श्रीरामचन्द्र क्यों हँसे 548
श्रीनिवास की शोभा 549
श्रीगोविन्द चक्रवर्ती 550
श्रीराधाविनोद नामकरण 551
श्री गौरचन्द्र प्रकट हो गये 552
अचानक नृत्य बन्द किया 553
भावपूर्ण विदाई 553
श्रीरघुनाथ आदि नास्तिक 554
याजिग्राम में पुनरागमन 555
श्री वीरचन्द्र प्रभु का पत्र 555
पुनः श्री श्रीनिवास चरित सार 556
ब्रज दर्शन 558
पंचदश प्रवाह 561
श्रीश्यामानन्द प्रभु का उत्कल देश में प्रचार एवं रसिकानन्द प्रभु का चरित्र 561
श्रीश्यामानन्द-परिचय 561
अच्युत राजा 562
आकाशवाणी 563
दीक्षा 563
अनेक शिष्य बनाये 564
हाथी वाले को बनाया चेला 566
श्रीहृदय चैतन्य द्वारा दीक्षा 567
ब्रजधाम यात्रा 567
नूपुर प्राप्ति 568
श्रीरामचन्द्र कविराज 568
श्रीरामकृष्ण-आचार्य 569
श्रीगंगा नारायण चक्रवर्ती 570
उपसंहार 571
दैन्यवचन 572
लेखक परिचय 574

॥ श्रीहरि ॥

व्रजविभूति श्रीश्यामदास

श्रीश्यामलाल हकीम

● **प्राक्कथन**

सन्त भगवद्–शक्ति का ही एक स्वरूप होते हैं। सन्तों का ह्रदय कोमल होता है। जैसे जल का सहज स्वभाव हर–एक को शीतलता प्रदान करना होता है, वैसे ही सन्तों का सहज स्वभाव होता है–दुःखी एवं सन्तप्त जीवों पर करुणा करके उनके दुःखों को, उनके संकटों को दूर करने का उपाय बताकर उन्हें कल्याणकारी मार्ग पर अग्रसर करना। यदि किसी जीव में यह गुण है तो किसी भी वेश में हो, वह सन्त है और किसी सन्तवेशधारी में यह गुण–लक्षण नहीं है, तो वह सन्त नहीं है–यह परम सत्य है।

सन्त इस संसार में, इस पृथ्वी पर जीवों का कल्याण करने आते हैं और जीवन मृत्यु से परे होते हुए भी निश्चित समय पर अपने इस भौतिक शरीर का त्याग कर प्रयाण कर जाते हैं। लेकिन अमर हो जाते हैं – उनके आचरण, उनकी शिक्षा और विशेषकर उनके द्वारा साक्षात् किये गये अनुभव और उनके उपदेश, जिनका अनुसरण करके जीवमात्र अपने कल्याण का पथ प्रशस्त करता है। वेद, उपनिषद्, पुराण, महापुराण अथवा अन्य जितने भी श्रीमद्भगवद्गीता, श्रीमद्भागवत, श्रीरामायण आदि ग्रन्थ आज हमारे समक्ष हैं–वे सब निश्चित ही किन्हीं न किन्हीं सन्त–महापुरुषों के वचनामृत ही हैं, अथवा अपौरुषेय हैं, जिनके द्वारा जीवमात्र का यथायोग्य कल्याण हो रहा है।

● **परिचय**

नाम– श्रीश्यामलाल हकीम (श्रीश्यामदास), जन्म– भैमी एकादशी 3 फरवरी सन् 1921, जन्मस्थान– डेरागाजीखान, वर्ण– क्षत्रिय। उपजाति– अरोड़ा (नांगिया), भाषाज्ञान– हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, बंगला, संस्कृत, फारसी। व्यवसाय– हकीम हाजिक की डिग्री प्राप्त करने के बाद अपने पैतृक सेवा–व्यवसाय यूनानी चिकित्सक के रूप में अपने पिता के साथ अपने जन्म नगर में चिकित्सा कार्य किया एवं ख्याति प्राप्त की। आप उस चिकित्सक परिवार से हैं, जिसमें रोगी के मूत्र या रोगी के कपड़े को देखकर ही रोग का निदान किया जाता था।

आज से एक शताब्दी पूर्व अखण्ड भारत के पंजाब प्रान्त के डेरागाजीखान नगर में स्वामी श्री इन्द्रभानुजी (श्रीललित लड़ैतीजी) के नाम से एक भक्त कवि हुए हैं, जो भक्ति–ज्ञान–वैराग्य के साक्षात् मूर्तिमन्त एवं परमसिद्ध सन्त थे। श्रीचैतन्य सम्प्रदाय के व्रजभाषी–कवियों में उनका नाम पर्याप्त आदर एवं सम्मान के साथ लिया जाता है। आपने श्रीराधा–दासी भाव में अनेक पद्यात्मक रचनाऐं कीं। आपके लीलापरक ग्रन्थ श्रीकिशोरीकरुणाकटाक्ष, श्रीदम्पतिविलास एवं श्रीरासपञ्चाध्यायी आपकी व्रजनिष्ठा, श्रीराधाकृष्णदास्य एवं काव्य–प्रतिभा के परिचायक हैं। आपके जीवन–काल

में अनेक लोगों ने आपके भक्ति–चमत्कार, सरल स्वभाव, विनम्रता एवं सहिष्णुता का साक्षात् दर्शन किया है।

आपके ही वंश में राय साहब श्रीरघुनाथदास जी हकीम एक व्रजनिष्ठ परमभक्त थे, श्रीरघुनाथदास जी एवं माता सीता देवी के घर में जन्मे एक मात्र सुपुत्र थे श्रीश्यामलाल जी हकीम 'श्रीश्यामदास'। श्रीधाम वृन्दावन से आपके परिवार का पुराना सम्बन्ध था और आना–जाना था। आपके मन में भी श्रीधाम वृन्दावन के दर्शन और निवास की लालसा बाल्यकाल से थी। अतः समय–समय पर आप श्रीवृन्दावन चले आते। यहाँ रहकर आप प्रिया–प्रीतम की लीलाओं का आस्वादन करते और महत्पुरुषों से कथा–श्रवण कर भजन की शिक्षा ग्रहण करते।

चिकित्सा के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त करने के साथ–साथ धार्मिक आचरण एवं धार्मिक गतिविधियों में भी आप विशेष रुचि रखते थे। वहाँ होने वाले परस्पर दैनिक सत्संग, संकीर्तन एवं प्रवचन में आप सदैव प्रमुख रूप से भूमिका निर्वाह करते थे। प्रवचन भी करते थे।

● नाम–मन्त्र–दीक्षा

श्रृंगारवट में विराजमान श्रीचैतन्य सम्प्रदाय की महान् विभूति श्रीमन्नित्यानन्द प्रभु–वंशावतंस परमभागवत पूज्यचरण श्रीदेवकीनन्दनजी गोस्वामी महाराज से कृपाशक्ति–दीक्षा प्राप्त कर श्रीचैतन्य–सिद्धान्त साहित्य का आपको परिचय हुआ तो आप चमत्कृत हो उठे। श्रीगुरुदेव एवं विद्वद्जन की कृपा प्राप्त कर आपने श्रीचैतन्यानुयायी गोस्वामिगण के साहित्य का गहन अध्ययन–आस्वादन कर उसे हिन्दी भाषा–भाषी साधकों के हित उपलब्ध कराने का बीड़ा उठाया। कलियुग में जबकि असत्य आचरण, दूषित वातावरण, भयंकर असभ्य, संस्कृति–नाशक मोबाइल, इण्टरनेट और टेलीविजन कार्यक्रमों का बोलबाला है, ऐसे में सच्चे सन्तों तक पहुँचना बहुत मुश्किल है– अतः सत्शास्त्र–सन्तवचनामृत ही जीवमात्र का सहज कल्याण करने का एकमात्र अनुकूल साधन है।

दीक्षा ग्रहण के तुरन्त पश्चात् श्रीगुरुकृपा से आपमें कवित्व शक्ति जागृत हो उठी और श्रीप्रियाप्रियतम की प्रेरणा से आप श्रीभगवन्नाम–गुण–लीलापरक काव्य–रचनाएँ करने लगे। श्रीभक्तभाव संग्रह नामक ग्रन्थ में 'ललितविहारिणि', 'श्याम' एवं 'श्यामदास' उपनाम से आपकी बहुत सी रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं।

● परिवार

धार्मिक परिवेश में रहते हुए आपने अपने गृहस्थ के दायित्वों को भी अच्छी प्रकार से निर्वाह किया। आपके तीन पुत्र थे–सबसे बड़े सुपुत्र को आपने दिल्ली से चिकित्सक की डिग्री दिलायी और उन्हें एक सफल चिकित्सक के रूप में स्थापित किया। दैवयोग से सन् 2002 से वे भी हमारे मध्य नहीं रहे। शेष दोनों पुत्रों को उच्च शिक्षा दिलाकर श्रीहरिनाम प्रेस में स्थापित किया। अपनी पुत्रियों को भी उच्च कुल में विवाहित कर अपने दायित्वों का निर्वाह किया। इस समय अनेक दौहित्र–पौत्रादिकों से भरा पूरा आपका विशाल परिवार है। सभी धनधान्य, सम्पत्ति से परिपूर्ण हैं और भगवद्भक्ति में यथाशक्ति संलग्न हैं।

आपके जन्म से लेकर आज तक अनेक चमत्कारिक घटनाओं एवं संस्मरणों का एक विशाल प्रसंग हैं, जिन्हें संकलित किया गया है। 'व्रजविभूति श्रीश्यामस्मृति' नाम से यह ग्रन्थ उपलब्ध है। समादृत है।

सन् 1947 में जब भारत विभाजित हुआ तो आपका परिवार श्रीधाम वृन्दावन आ गया। पिता की वयसाधिक्य के कारण परिवार के समस्त दायित्व आप पर ही थे। कठिन परिश्रम से समस्त परिवार का पालन करते हुए आप वृन्दावन में रहने लगे। और 'चल मन वृन्दावन चल रहिए' की आपकी साधना यहाँ पूर्ण हुई।

आप सपरिवार वृन्दावन आकर बस गये और लोई बाजार में दुकान लेकर चिकित्सा कार्य प्रारम्भ किया। प्रारम्भ में सामान्य रोगी तो आता ही नहीं था, प्रायः ऐसे रोगी आते थे, जिन्हें सब ओर से निराश होकर जवाब मिल जाता था। ईश्वर में विश्वास और दृढ़ कार्य–निष्ठा से यूनानी पद्धति से ऐसे मरणासन्न रोगियों की चिकित्सा कर अनेक रोगियों को स्वस्थ कर नगर एवं आसपास के क्षेत्र में 'खानदानी' के नाम से सुप्रसिद्ध चिकित्सक के रूप में ख्याति एवं सम्मान अर्जित किया। प्रारम्भ में ब्राह्मण, वैष्णव एवं हरिजन को निःशुल्क दवा दिया करते थे। दोपहर में खाली समय मिलने पर ग्रन्थों का अध्ययन, आस्वादन एवं सम्पादन में अपना समय सार्थक करते थे। बंगला साहित्य को पढ़कर आप सदैव चमत्कृत होते रहे। अध्ययन एवं साहित्य में रुचि एवं सत्संग–कथा–प्रवचन में लगातार लगे रहने एवं सन्तों के संग में सदैव रहने से विशेषतः श्रीगुरुदेव की अन्तिम अवस्था में शारीरिक सेवा करने के कारण इनमें दिव्य शक्ति पुंजीभूत होती रही।

वृन्दावन में इनके युवा सुपुत्र एवं युवा पत्नी की असामयिक गोलोक–प्राप्ति एवं अन्य भीषण विपत्तियों के कारण अन्य परिवारीजनों ने इन्हें वृन्दावन छोड़कर अन्य नगर में बसने की सलाह दी। लेकिन वृन्दावन में अगाध निष्ठा के कारण वृन्दावन छोड़कर जाना तो दूर अपने परिवारी–रिश्तेदारों को प्रारब्ध एवं इन सब घटनाओं की दार्शनिक पृष्ठभूमि समझा कर अपनी साधना सेवा में संलग्न रहे।

● ब्रजनिष्ठा – ग्रन्थ सम्पादन

धार्मिक एवं ब्रजनिष्ठापूर्ण परिवार होने के कारण आपका व्रज–वृन्दावन से सदैव ही सम्बन्ध तो रहता ही था। विभाजन से पूर्व भी आप प्रायः अपने श्रीगुरुस्थान शृंगारवट में आया–जाया करते थे एवं अनेक समय तक वृन्दावन में निवास कर सन्तों का संग करते हुए भजन की शिक्षा प्राप्त करते थे। वृन्दावन आने–जाने से व्रजभाषा एवं संस्कृत भाषा पर आपका सम्यक् अधिकार हो गया। व्यवसाय से हकीम होने के कारण आपका अधिकार उर्दू, फारसी एवं अंग्रेजी और हिन्दी आदि भाषाओं पर पहले से ही था। इसी क्रम में आपने संस्कृत एवं बंगला भाषा में प्रकाशित गौड़ीय–गोस्वामिग्रन्थों का अध्ययन किया। उस समय यह ग्रन्थ केवल बंगला लिपि में संस्कृत–बंगला भाषा में उपलब्ध थे। आपके मनस् में यह प्रेरणा हुई कि ये ग्रन्थरत्न यदि हिन्दी में उपलब्ध और प्रकाशित होते तो हिन्दी–भाषा–भाषी साधक–भक्त भी इसका अध्ययन सुगमता से कर पाते। आपने भगवत् कृपा का सम्बल लेकर निश्चय किया कि इस कार्य को वे करेंगे और तब से 'श्रीश्यामदास' की लेखनी का प्रवाह आरम्भ हुआ जो आजीवन नहीं रुका।

आपने बंगला भाषा में उपलब्ध गोस्वामिग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद और सम्पादन प्रारम्भ किया उन पर अपनी टीकाएँ भी लिखीं जो श्रीहरिनाम संकीर्तन मण्डल द्वारा प्रकाशित होने लगे। प्रभु प्रेरणा से धीरे–धीरे छोटे–बड़े लगभग 100 ग्रन्थों का सम्पादन एवं उनके प्रकाशन की व्यवस्था हुई। यह निश्चित ही एक महत् कार्य है जो श्रीश्यामदास जी द्वारा लगभग 60 वर्षों से अनवरत किया जा रहा था। अधिकतर सभी ग्रन्थों के

2–3 या 4 बार तक पुनर्मुद्रण हो चुके हैं। समय के अनुसार आधुनिकतम पद्धति से मुद्रित ग्रन्थ सुरुचिपूर्ण साज–सज्जा से युक्त हैं, जिनके दर्शन मात्र से पाठक का अध्ययन की ओर सहज आकर्षण हो जाता है।

● बंगला भाषा : श्रीचैतन्य साहित्य

श्रीराधाकृष्ण मिलित विग्रह महाप्रभु श्रीचैतन्य का अवतार बंगाल में हुआ था। उनके अनुयायी समस्त गोस्वामिवृन्द प्रायः बंगाल प्रान्त के ही थे। इसी कारण श्रीचैतन्य–सम्प्रदाय का जो भी सिद्धान्त व साहित्य है–वह सभी बंगला व संस्कृत भाषा में ही है– उसकी लिपि बंगला ही है। उस बंगला साहित्य का हिन्दी में प्रस्तुतिकरण, उन पर हिन्दी टीकाओं से ही हिन्दी भाषी समाज आज उसका लाभ ले रहा है। आज भी श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ऐसे अनेक ग्रन्थ हैं जो भारत ही नहीं पूरे विश्व में हिन्दी भाषा में श्रीश्यामदास जी द्वारा ही उपलब्ध कराये गये हैं। उनकी यह देन हिन्दी चैतन्य साहित्य में स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य है।

कहना न होगा कि इतना बड़ा दुर्लभ कार्य प्रभुकृपा से अकेले एक व्यक्ति ने ही किया। इस सत्कार्य में अनेक सहयोगी सदैव उनसे जुड़ते रहे। आज भी देश–विदेश के कोने–कोने से सन्त हृदय सज्जन येन–केन–प्रकारेण इस सत्शास्त्र के संरक्षण एवं प्रकाशन यज्ञ में अपना योगदान कर रहे हैं।

'ग्रन्थ प्रभु के विग्रह हैं' – इनकी सेवा प्रभु की साक्षात् सेवा है। सत्शास्त्र की सेवा साक्षात् स्थायी सन्त–सेवा है। जिस प्रकार भोजन पेट की खुराक है–उसी प्रकार ग्रन्थ आत्मा की खुराक हैं। ग्रन्थ–अध्ययन सदैव के लिए एक दिव्य आनन्द की अनुभूति प्रदान करता है।

● श्रीहरिनाम प्रेस की स्थापना

उस समय वृन्दावन में प्रेसें नहीं के बराबर थीं। आपने मन ही मन निर्णय कर लिया कि अब अगला ग्रन्थ अपनी ही प्रेस में छापूँगा। और यह सोचकर कि मैं चिकित्सा–कार्य करता रहूँगा और प्रेस में मेरे ग्रन्थ छपते रहेंगे, आपने सन् 1969 में श्रीहरिनाम प्रेस की स्थापना की। और हुआ भी यही कि 2–3 वर्ष तक आप चिकित्सा करते रहे और प्रेस में अपने ही ग्रन्थ छपते रहे। बाद में अन्य प्रेसों के अभाव, अव्यवस्था के कारण दूसरे ग्रन्थों का मुद्रण–कार्य भी होने लगा। श्रीहरिनाम प्रेस ने अपनी एक अलग पहचान स्थापित की। सन् 1978–79 में प्रेस का कार्य अपने पुत्रद्वय डॉ. गिरिराजकृष्ण एवं डॉ. भागवतकृष्ण नांगिया को धीरे–धीरे सौंपते हुए आपने व्यावसायिक व्यस्तता से विदा ली।

● मासिक पत्र श्रीहरिनाम

सन्तवचनामृत स्वरूप इन ग्रन्थों के साथ–साथ सन् 1969 से आज तक अनवरत रूप से 'श्रीहरिनाम' नामक मासिक–पत्र का प्रकाशन भी किया जा रहा है–यह पत्रिका व्यावहारिक रूप से लागत से भी कम मूल्य पर देश–विदेश के हजारों पाठकों को घर बैठे प्रेषित की जाती है। देश के अनेक विद्वानों को यह पत्रिका निःशुल्क प्रेषित की जाती है।

इस मासिक पत्र में ब्रजभक्ति, वैष्णव दर्शन आदि विषयों पर मनीषियों के निबन्ध प्रकाशित किये जाते हैं। ब्रज में आयोजित होने वाले विशेष समारोहों के समाचार व

सूचनाएँ इसमें प्रकाशित की जाती हैं। प्रत्येक अंक में उस मास में आने वाले व्रत एवं उत्सवों की सूची रहती है। पत्रिका की विषय वस्तु अत्यधिक गंभीर, सिद्धान्त एवं शास्त्र प्रतिपादित होती है। इसके प्रमुख सम्पादक श्रीश्यामदास ही थे। यह पत्रिका समाचार पत्रों के निबन्धक से पंजीकृत है और आज भी नियमित प्रकाशित हो रही है।

● ग्रन्थ प्रकाशन कोष का उपक्रम

अपने जन्म स्थान डेरागाजीखान् में प्रतिवर्ष एक श्रीहरिनाम सम्मेलन का आयोजन आप करते थे। जब विभाजन हुआ तो आक्रान्ताओं के भय से उस वर्ष वह सम्मेलन नहीं हुआ– लेकिन उस सम्मेलन के निमित्त कुछ धनराशि एकत्र हो चुकी थी, वह धनराशि सम्मेलन के कैशियर श्रीदेवीदासजी कथूरिया ने विभाजन के पश्चात् आपके बहुत न–नुकर करने पर भी आपको दे दी। वह राशि आपके पास काफी समय तक सुरक्षित रही– समस्या थी कि इस धर्मराशि का क्या किया जाय ? एक सन्त की प्रेरणा से उस राशि से सर्वप्रथम 'श्रीमद्वैष्णव सिद्धान्त रत्न संग्रह' ग्रन्थ का प्रकाशन करके उस राशि को ग्रन्थ सेवा में निवेशित किया गया।

निःशुल्क ग्रन्थ वितरण की सन्तों द्वारा मनाही करने पर उसकी कीमत रखी गयी– परिणाम फिर वही कि वह राशि बढ़कर पुनः एकत्र हो गयी। और यहीं से ग्रन्थ प्रकाशन के एक पृथक् कोष की स्थापना हो गयी।

● ग्रन्थ विक्रय राशि

पर्याप्त ग्रन्थ प्रकाशन कोष एवं स्टॉक होने पर भी यह कोष अपर्याप्त ही रहता है। क्योंकि नवीन प्रकाशन हेतु एक विपुल राशि एक साथ चाहिये होती है। ब्रिकी तो 1–1 ग्रन्थ की होती है। अतः सामंजस्य में व्यवधान बना रहता है। ग्रन्थ विक्रय द्वारा प्राप्त होने वाली राशि से न किसी का व्यवसाय चलता है, न यह राशि किसी की आजीविका का साधन है, न कोई वेतन दिया या लिया जाता है, न कोई किराया, बिजली और व्यवस्था सम्बन्धी व्यय किया जाता है। **ग्रन्थ विक्रय से प्राप्त होने वाली राशि का एक–एक पैसा पुनः केवल ग्रन्थ प्रकाशन में ही व्यय किया जाता है।** यही कारण है कि आज छोटे–बड़े एवं विशाल ग्रन्थ हर समय पाठकों हेतु उपलब्ध हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे। यह सब प्रभु–गुरु–वैष्णववृन्दकी कृपा का साक्षात् फल है जिसके परिणामस्वरूप श्रीमहाप्रभु के साहित्य का प्रसार–प्रचार अबाध गति से हो रहा है।

● श्रीहरिनाम संकीर्तन सम्मेलन

सन् 1959 से 1984 तक लगातार 25 वर्षों तक प्रतिवर्ष होली के अवसर पर आपने विशाल श्रीहरिनाम संकीर्तन सम्मेलन का आयोजन स्थानीय बसन्तीबाई धर्मशाला में किया, जिसमें देश एवं ब्रज के सुप्रसिद्ध विद्वानों के प्रवचन, स्वामी श्रीरामस्वरूपजी की मण्डली की रासलीला एवं स्वामी श्रीहरिगोविन्द जी की मण्डली की श्रीगौरांग लीला का त्रिदिवसीय भव्य आयोजन होता था। अन्तिम दिन विशाल शोभायात्रा से यह उत्सव समाप्त होता था। यही एक मात्र ऐसा उत्सव था जो वृन्दावन में होली के अवसर पर होता था, बाद में ऐसे उत्सव अनेक होने लगे और ऐसे उत्सवों का व्यवसायीकरण हो जाने के कारण यह सम्मेलन 1985 से स्थगित कर दिया गया।

● श्रीगिरिराज कृपा

एक बार आपके मन में इच्छा हुई कि घर में पूजित श्रीप्रिया–प्रियतम एवं गोपालजी के श्रीविग्रहों के साथ–साथ श्रीगोविन्द 'श्रीगिरिराज' रूप में विराजित हों और मैं उनकी सेवा–पूजा करूँ। श्रीगिरिराज निजधाम छोड़कर कहीं नहीं जाते–ऐसी मान्यता है।

आप शीघ्र ही तत्कालीन सन्तप्रवर पं. श्रीगयाप्रसादजी के पास गोवर्धन गये और अपनी भावना प्रकट की। पूज्य पंडित जी आपकी सेवा भावना निष्ठा से परिचित थे। तुरन्त उन्होंने कागज के दो छोटे टुकड़े लिये। एक पर लिखा–'यहीं विराजौ'। दूसरे पर लिखा 'आज्ञा होय तौ चलौ श्रीवृन्दावन।' दोनों कागज पुड़िया बनाकर अपने एक सेवक को दिये और कहा कि 'श्रीगिरिरांज के समक्ष इन दोनों पर्ची को डालकर किसी व्रजवासी बालक से एक पर्ची उठवाकर ले आओ।' शीघ्र ही सेवक कागज का एक टुकड़ा ले आया। उस पर लिखा था 'आज्ञा होय तौ चलौ श्रीवृन्दावन।' भक्त एवं भगवान् दोनों की साक्षात् स्वीकृति से आगामी दिन ब्रह्ममुहूर्त्त में श्रीगिरिराजजी को स्वगृह में पधराया गया–सात्विक अभिषेक उत्सवादि से प्रभु प्रतिष्ठित हुए–जो आज पर्यन्त पूजित व सेवित हैं।

● सन्त-सज्जन-सत्कृपा

प्रारम्भ से ही संतों से सत्संग, भगवच्चर्चा, आदि की आपमें विशेष रुचि थी। भागवत निवास के पूज्य बाबा श्रीकृपासिंधुदासजी, श्रीतीनकौड़ीमहाराज, गोस्वामी श्रीरासविहारीलालजी, गो. श्रीविजयकृष्णजी, श्रीअखण्डानन्द सरस्वतीजी, श्री गो. नृसिंहवल्लभ जी, श्रीनित्यानंदजी भट्ट, श्रीरामदासजी शास्त्री, श्रीबिन्दुजी महाराज, श्रीकृष्णदासबाबा कुसुमसरोवर, स्वामी श्रीभक्तिहृदय बनमहाराज जैसे अनेक सन्त एवं विद्वानों की आप पर सदैव स्नेहपूर्ण कृपा रही। गोस्वामी श्रीअतुलकृष्ण जी, गोस्वामी श्रीपुरुषोत्तमजी, गोस्वामी श्रीचैतन्यजी, श्रीअच्युतलालजी भट्ट, श्रीश्रीवत्सजी गोस्वामी, श्रीवैरागी बाबा, श्रीचन्द्रशेखरदास बाबा जी आदि से समय समय पर भगवत् चर्चा आदि का क्रम बना रहता था इनके अतिरिक्त प्रायः प्रतिदिन अनेक वैष्णव–जिज्ञासु भक्त–सज्जन भगवत् चर्चा हेतु आते रहते थे।

● व्रजविभूति सम्मान

हर्ष एवं गौरव का विषय है कि मथुरा एवं ब्रज की प्राचीन संस्था ब्रज कला केन्द्र द्वारा आपकी विशाल साहित्य सेवा का मूल्यांकन करते हुए सन् 2004 में श्रीकृष्ण जन्मभूमि के विशाल सभागार में आपको 'व्रजविभूति' सम्मान से अलंकृत किया गया। यह सम्मान ब्रज कला केन्द्र द्वारा दिये जाने वाले सम्मानों में सर्वोच्च स्थान रखता है। इसके अतिरिक्त वृन्दावन की अनेक सामाजिक धार्मिक संस्थाओं द्वारा समय–समय पर आपका सम्मान किया गया। आकाशवाणी के मथुरा–वृन्दावन केन्द्र से आपकी अनेकों ब्रजवार्ताएँ एवं कार्यक्रम समय–समय पर प्रसारित होते रहे।

● विविध

इस्कॉन के संस्थापक स्वामी ए. सी. भक्तिवेदान्त प्रभुपाद से आपका मित्र भाव था। श्री राधादामोदर में निवास करते समय जब उन्होंने अपने प्रथम ग्रन्थ श्रीमद्भागवत का प्रकाशन करवाया, तब आपने उनका पूर्ण सहयोग किया एवं इस ग्रन्थ के विक्रय, प्रसार–प्रचार में सर्वाधिक योगदान दिया। वृन्दावन में श्रीकृष्णबलराम मंदिर की स्थापना के सन्दर्भ में प्रायः प्रभुपाद से आपकी चर्चा व सम्बन्ध रहा। मंदिर की स्थापना के

समय आयोजित विशाल समारोह का मंच संचालन श्रीश्यामदास जी ने किया था। वृन्दावन शोध संस्थान की हाथरस धर्मशाला में स्थापना में आपका विशेष योगदान रहा। अन्त तक आप शोध संस्थान के आजीवन सदस्य थे एवं बहुत समय तक आप संस्थान के संयुक्त सचिव रहे। आपने सपरिवार पुरी, नवद्वीप, मायापुर आदि भारत के प्रमुख तीर्थों के तीर्थाटन के अतिरिक्त 40 दिवसीय पैदल ब्रज चौरासी कोस यात्रा कर मानव–जीवन धन्य किया।

● **श्रीमन्नित्यानंदप्रभु कृपा-करूणा**

जैसा कि पूर्व में वर्णित है श्रीश्यामदासजी की जन्मतिथि ईसवीय सन् अनुसार 3 फरवरी सन् 1921 माघशुक्ला भैमी एकादशी है। इस तिथि के ठीक एक दिन बाद माघ शुक्ला त्रयोदशी को श्रीमन्नित्यानन्द प्रभुपाद की जयन्ती तिथि होती है। श्रीनित्यानन्द जयंती तिथि के आस–पास जन्म लेने वाले 'व्रजविभूति श्रीश्यामदास' जी की श्रीनित्यानन्द–परिवार में दीक्षा, यज्ञोपवीत, मुण्डन आदि संस्कार हुए। जीवन पर्यन्त श्रीनिताई चांद की करुणा कृपा बरसती रही। न जाने कबसे आजीवन श्रीनित्यानन्द प्रभु के सिद्ध स्थान श्रीशृंगारवट के ही एक मकान में रहे। आपके ज्येष्ठ पुत्र का नाम भी आपने रखा – नित्यानन्द। आपके तीनों सुपुत्र भी श्रीनित्यानन्द परिवार में ही दीक्षित हैं और यह भी श्रीमन्नित्यानन्द प्रभु की कृपा का ही साक्षात् फल है कि इस शरीर की अन्तिम श्वांस भी आपने श्रीनित्यानन्द प्रभु के सिद्ध स्थान श्री शृंगारवट से लायी हुई व्रजरज पर ली और अपना पार्थिव शरीर श्रीशृंगारवट की व्रजरज को समर्पित किया। धन्य है निताई चांद तेरी अपार करुणा। सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो आपका सम्पूर्ण जीवन–चक्र 'श्रीनित्यानन्द प्रभुपाद' की करुणामयी कृपा से ओत–प्रोत रहा।

श्रीश्यामदास जी से जब उनकी विपुल सेवा की चर्चा की जाती तो इसका श्रेय सदैव वे गुरुशास्त्र कृपा एवं श्री श्रीनिताई–गौर की दिव्य शक्ति को ही देते थे। वह कहते थे कि मैं तो उनके हाथ की कठपुतली हूँ, जैसा वे मुझे नचा रहे हैं, वैसा ही मैं नाच रहा हूँ। 'नाचेंगे हम तो नटवर जैसा हमें नचा लें।'

● **लीलाप्रवेश**

सन् 1985 से व्यवहार–व्यवसाय सभी लौकिक कार्यों से अनासक्त होकर आप बाग बुन्देला स्थित अपने निवास पर ही एक छोटे से कमरे में अपने सात्विक साधनयुक्त कार्यालय में मुख्य रूप से साहित्य सेवा एवं श्रीविग्रह ठाकुर सेवा में विधिवत् व्यस्त रहते थे। लगभग 85 वर्ष की आयु में भी अति सक्रिय जीवन यापन करने वाले श्रीश्यामदासजी की कभी अस्तव्यस्त न होने वाली दिनचर्या अचानक थोड़ी अव्यवस्थित हो गयी थी।

धनतेरस दिनांक 30 अक्टूबर 2005 को उन्हें अत्यधिक ठंड लगी। जाँच में मलेरिया पाया गया और उचित चिकित्सा दी गयी। दीपावली वाले दिन लगभग स्वस्थ हो गये। अपने अधिकारी एवं कर्मचारियों को दीपावली की शुभकामनाऐं दीं, आशीष दिया। दूसरे दिन अन्नकूट महोत्सव का आयोजन था, जो घर में ही प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी मनाया गया। लगभग 3 घंटे कैसियो बजाते हुए सस्वर संकीर्तन किया। प्रसाद पाया। रात्रि को बेचैन हुए और स्वास्थ्य बिगड़ता गया। नगर के प्रसिद्ध फिजीशियन एवं सर्जन चिकित्सकों के साथ–साथ उनके पौत्र डॉ. नीलकृष्ण ने घर

पर ही एक अच्छे अस्पताल से अधिक सेवा–निष्ठाभाव से चिकित्सा सेवाऐं प्रदान कीं। स्वास्थ्य में गिरावट होती रही। दिनांक 5 नवम्बर दोपहर को शान्त भाव में विश्राम कर रहे थे, उन्हें देखने आये अपने एक मित्र से मैंने कहा कि सो रहे हैं। 5–6 मिनट बाद बोले, "मैं सो नहीं रहा हूँ, तुम्हारे पास कलम–कागज है–मैं बोलता हूँ – लिखो तो" – उन्होंने पद रचना की और उसे मैंने लिपिबद्ध किया। रात्रि में शैया पर ही वृन्दावन दिग्दर्शिका का विमोचन किया। उसके पश्चात् 6, 7, 8 नवम्बर को लगभग शांत रहे जैसे लीला–चिन्तन में एकाग्रचित्त हों। 9 नवम्बर 2005 को सायं 4 बजे शरीर के संकेत को देखते हुए सारी कृत्रिम नलियां हटा दी गयीं और परिवारीजनों ने भगवन्नाम संकीर्तन प्रारंभ किया। 4 से 7 बजे तक उच्च संकीर्तन चलता रहा। उस समय शरीर लगभग समाप्त हो गया। चित्त तो पहले से ही शांत था। केवल शांत श्वास चलते रहे। धीरे–धीरे संकीर्तन चलता रहा। दूर–पास से आपके सभी बेटियाँ–दामाद, पुत्र–बहुएँ, नाती–पोते लगभग 30–35 परिवारीजन उनके समीप उपस्थित थे। रात्रि लगभग 11:20 पर उनके श्वास की गति धीमी हो गयी, उन्हें श्रृंगारवट से लायी हुई ब्रजरज बिछाकर उनके निजीकक्ष में भूमि पर लिटाया गया। गंगाजल से शरीर शुद्धि की गयी। उनके अंगों पर वैष्णव–पद्धति अनुसार 'द्वादश तिलक' लगाया गया। अति उच्चस्वर से 'महामन्त्र' का संकीर्तन, निताई गौर हरिबोल, जय श्रीराधे की नाम ध्वनि 12 बजे तक चली। रात्रि लगभग 11:50 पर उन्होंने अन्तिम श्वांस ली और गोपाष्टमी के दिन 9 नवम्बर 2005 को प्रियाप्रियतम की निकुंजलीला में प्रविष्ट हो गये। अक्षय नवमी, 10 नवम्बर 2005 को श्रीधाम वृन्दावन में यमुनातट पर उनका पार्थिव शरीर अग्नि को समर्पित कर दिया गया।

उनके श्रीचरणों में हमारी एवं आपकी सच्ची श्रद्धांजलि यही है कि हम एवं आप धर्म–प्रचार हेतु उनके ग्रन्थ प्रकाशन के क्रम को अबाध गति से संचालित रखें एवं श्रीहरिनाम मासिक पत्र का प्रकाशन नियमित रूप से चलता रहे।

सन्त–सज्जन–गुरु–गोविन्द की कृपा से गौड़ीयदर्शन में पी-एच. डी. उपाधि प्राप्त उनके पुत्रद्वय डॉ. गिरिराजकृष्ण एवं डॉ. भागवतकृष्ण, उनके साहित्य–सेवा कार्य को इस विश्वास के साथ वर्तमान में संचालित कर रहे हैं कि गुरुशास्त्र–सज्जन संतजन कृपा से ही ग्रन्थ सेवा प्रचार–प्रसार अबाधित रूप से अवश्य ही चलता रहेगा।

श्रीश्यामदासजी द्वारा दिनांक 5 नवम्बर 2005 को रचित अन्तिम पद–

पार्थ सारथि ! परम निस्वार्थी, किन्तु स्वार्थी जमाने में।
अपनौ सेवाकार्य तुच्छन से निकाल लेत, आप रहे मस्त बंसी बजाने में।
विकट आपदा कष्ट सब टाले, निजी स्वारथ बनाने में।
जागत जागत निद्रा भागी, देह क्रिया भई भंग।
सेवा सिमरन, सिमरन छूट्यौ, छूट्यौ ग्रन्थन कौ संग।
'श्यामदास' प्रारब्ध की महिमा, निज विपाक कौ रंग।

प्रथम प्रवाह

वैष्णव स्तुति

हे गौरहरि! आप में शुभता का वास है, जिसे भगवान् श्रीकृष्ण के नाम-कीर्तन से सुसज्जित किया गया है। आप लालित्य का ऐसा सागर हो जिसमें निरंतर भक्ति भाव प्रवाहित होता रहता है, आप प्रेम का ऐसा पर्वत हो जिसकी आभा स्वर्ण से भी अधिक देदीप्यमान है। आपकी सौन्दर्ययुक्त छवि हर जीवधारी के नेत्रों को शान्ति प्रदान करती है और आप मानव जाति के सभी दुखों को दूर करने वाले हो। आप सभी भक्तजनों के प्राण हो। कृपया मुझ पर अनुग्रह कीजिये।

हे मेरे श्रीगोपालभट्ट प्रभु, आप श्रीगौर के चरणकमल में भ्रमर के समान हो। आप वह सूर्य हो, जो माया रूपी अंधकार का नाश करता है। आप कृपासिन्धु हो और ब्राह्मणजनों में भी अग्रगण्य हो। आप श्री वेंकटभट्ट के सुपुत्र हो और दिव्य प्रेम का अनमोल आभूषण हो। आप सांसारिक विपत्तियों का विनाश करने वाले और विपत्ति से पीड़ित लोगों में प्रसन्नता का संचार करने वाले हो। हे नाथ मेरी रक्षा कीजिए।

हे मेरे श्रीगोपालभट्ट प्रभु, आप श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमल में भ्रमर के समान हो। आप भगवान् के सबसे प्रवीण भक्त हो। मेरे श्रीनिवास प्रभु, जिनका स्वरूप श्रीशचीनन्दन जी के समान स्वर्णिम है, आप ब्राह्मण जनों के अधिपति हो। मुझे आशीर्वाद दीजिए।

मैं निरंतर श्री श्रीनिवास प्रभु और उनके सहचरों की आराधना करता हूँ, जो कि श्रीकृष्णचैतन्य चन्द्र के दिव्य प्रेम के कल्पतरु हैं।

मेरे सुधी पाठको, यह ग्रन्थ सभी वैष्णवजनों का जीवन है, सभी विपत्तियों, दुर्भाग्य आदि का विनाश करने वाला है, इस 'भक्तिरत्नाकर' का बार-बार अति आनन्द से श्रवण कीजिए।

श्री गौरसुन्दर एवं उनके पार्षदों की स्तुति

श्रीगौरसुन्दर; देवताओं के देवता एवं भक्ति के अनुरागी थे और जिनकी सौन्दर्ययुक्त मुखाकृति सम्पूर्ण विश्व को मोहित करती थी।

ये श्रीलक्ष्मी के पति थे और माता शची और श्रीजगन्नाथ के सुपुत्र थे। ये श्री नित्यानन्द प्रभु, श्री अद्वैत आचार्य और श्री गदाधर पंडित की आत्मा और प्राण थे।

हे मेरे प्रभु, वेदों ने भी आपकी जय जयकार की है। ऐसा कोई नहीं जो आपकी लीलाओं से आकर्षित न हुआ हो। आप गुरु हो, आप भक्ति की शक्ति

हो और श्री विष्णु के मूल हो। आपने अपनी मुखाकृति के माध्यम से अपनी लीलाओं को प्रकट किया है।

वैष्णव विद्वानों ने सदैव ही आप की लीलाओं की स्तुति करने का प्रयास किया है, जो उनके मतानुसार हर प्रकार के कल्याण और सौभाग्य का स्रोत हैं।

मैं इन वैष्णव गुरुजनों की शिक्षा और संस्कृति को जाने बिना इनकी पूजा करता हूँ– श्रीवास और उनके आध्यात्मिक परिकर, श्रीअद्वैत प्रभु और उनके अनुयायी, प्रभु श्रीनित्यानन्द और उनके सहभागी, श्रीगदाधर और उनके अनुयायी और स्वंय भगवान् श्रीकृष्णचैतन्यदेव।

भगवान् श्रीकृष्ण ने पहले ही गुरु, कृष्ण, भक्ति, शक्ति, अवतार, प्रकाश इन छः माध्यमों से निज लीलाओं का प्रदर्शन कर रखा था। इनकी अतिशय कृपा के बिना किसी में योग्यता नहीं कि वह भगवान् की रहस्यमयी दैवीय क्रियाओं को समझ सके।

आप स्वयं भगवान् हो। आप सभी प्राणधारियों के आश्रय हो, मैं आपकी इच्छा के बिना एक भी शब्द के उच्चारण का साहस नहीं कर सकता।

दयालुता और भक्ति दाता गुणों से युक्त अनमोल रत्नों की खान श्रीकृष्ण चैतन्य की जय जयकार हो।

दयालुता और दया के सागर, जगत के उद्धारक, निर्धनों और अभागों के सखा श्रीनित्यानन्द राम की जय जयकार हो। आप श्रीकृष्णचैतन्य के वास्तविक अवतार और एकमात्र स्वरूप हो जो मानव जाति की सभी इच्छाऐं पूर्ण करने वाला है।

मानव जाति का उद्धार करने वाले, दयालु हृदय श्रीअद्वैताचार्य जी की जय जयकार हो। आप श्रीकृष्ण–चैतन्य का एक अवतार (अंश अवतार) हो। मैं आपके वैभव की व्याख्या करने का दुस्साहस नहीं कर सकता।

श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो, जो श्रीचैतन्यमहाप्रभु की आध्यात्मिक शक्ति के महानतम उत्तराधिकारी हैं और जिनका आध्यात्मिक स्वरूप अपनी सारी सीमाऐं पार कर चुका है।

श्रीवास पंडित की जय जयकार हो जो अपने भक्तजनों में अग्रगण्य हैं और यहाँ तक कि अंश अवतार भी जिनके भक्तिमय चरित्र को अपनाने में असमर्थ हैं।

श्रीस्वरूप, वक्रेश्वर, श्रीमुरारी और श्रीहरिदास जी की जय जयकार हो। श्रीनरहरि, श्रीगौरदास, श्रीशुक्लाम्बर, श्रीमुकुंद, श्रीवासु, श्रीमाधव और श्रीशंकर की जय जयकार हो।

श्रीविद्यानिधि पुंडरीक और श्रीवासुदेव सार्वभौम भट्टाचार्य जी की जय जयकार हो।

श्रीगदाधरदास पंडित, श्रीजगदीश, श्रीकाशीश्वर की जय जयकार हो। श्रीपरमानंद भट्टाचार्य जी और श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी की जय जयकार हो। आचार्य श्री के सुपुत्र द्विज हरिदास और कमल समान नेत्रों वाले रायरामानन्द की जय जयकार हो।

श्रीलोकनाथ जी, श्रीभूगर्भ जी, श्रीसनातन और श्रीरूप जी की जय जयकार हो। श्रीकाशी मिश्र, श्रीगोपीनाथ, श्रीषष्टिधारा, श्रीअभिराम, श्रीवंशी और श्रीसारंग की जय जयकार हो।

श्री प्रबोधानन्द सरस्वती, श्री गोपाल भट्ट जी और श्री वेंकट जी के अन्य पुत्रों की जय जयकार हो। श्रीगोवर्धन निवासी श्रीरघुनाथभट्ट, श्रीरघुनाथदास और श्रीराघव की जय जयकार हो। श्रीहृदयानन्द, श्रीसंजीव सेन और श्रीरघुनंदन की जय जयकार हो। श्रीकनु, श्रीधनञ्जय, श्रीविजय, श्रीरम्य, श्रीसद्बुद्धि मिश्र और श्रीजीव गोस्वामी की जय जयकार हो। सभी भागवत आचार्यों, श्रीमाधव, श्री श्रीधर, श्रीवृन्दावन दास की जय जयकार हो।

श्रीकृष्णदास कविराज महाशय और श्रीनिवासाचार्य की जय जयकार हो। ठाकुर महाशय श्रीनरोत्तम और श्रीहरि श्यामानन्द जी की जय जयकार हो। श्रीचैतन्यचन्द्र जी के असंख्य भक्तवृन्द की जय जयकार हो।

श्रीकृष्णचैतन्य अपने उन सभी भक्तों के प्राण थे, जो उनका अनुग्रह पाकर स्वयं को सौभाग्यशाली मानते थे। श्री चैतन्य महाप्रभु जो कि सदैव अपने भक्तों की मनोकामनाएं पूर्ण करने में प्रवृत्त रहते थे, उनके शिष्यों के चरित्र का वर्णन करते समय अनेक विचार मन में उत्पन्न एवं विलीन होते रहते हैं।

गौरचन्द्र अपने उन सभी भक्तों से बहुत स्नेह करते थे, जिनके अनुनय-विनय के कारण उन्होंने इस संसार में अवतार लेना स्वीकार किया था। जो लीलाऐं श्री गौरहरि ने कलियुग में अभिनीत कीं वो ब्रह्मा जी, शिव जी और अन्य देवताओं के चिन्तन से बहुत आगे थीं। श्रीचैतन्य की अति सुन्दर लीलाएं तीन भागों में विभाजित थीं: आदि, मध्य और अन्त्य।

प्रथम खण्ड में श्रीचैतन्य का छात्र के रूप वर्णन है, मध्य खण्ड में संकीर्तन की महिमा के रहस्योद्घाटन का वर्णन हैं और अंतिम खण्ड में श्रीगौरचन्द्र के नीलांचल में संन्यासी जीवन का वर्णन है जिसके बाद उन्होंने श्रीनित्यानन्द को गौड़देश का दायित्व सम्भालने का आदेश दिया।

कलियुग श्रीकृष्णचैतन्य जैसे यशस्वी संन्यासी और उनके सहभागी श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत की उपस्थिति से कृतज्ञ हो गया था। हलधर श्रीबलराम के अवतार श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत श्रीचैतन्य महाप्रभु के अभिन्न अंग हैं। ऐसा कौन है जो श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत की आध्यात्मिक निष्ठा को समझ सकता है जो कि हमेशा श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रेम सिन्धु में अवगाहन करते रहते थे? कौन है जो श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत का अमृतमय वार्तालाप श्रवण

करना पसन्द नहीं करता? श्रीचैतन्य के ये दो भक्त दीर्घायु हों। मेरी हार्दिक इच्छा है कि मुझमें वो सामर्थ्य हो कि मैं दूरस्थ स्थानों में और आस पास इनकी स्तुति का गान कर सकूँ।

नवद्वीप में श्रीगौरचन्द्र महाप्रभु, श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत ने अनेकों आनन्दमय लीलाऐं कीं। श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तों ने इन अमृतमयी लीलाओं का निरंतर आनन्द लिया। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड गौरांग महाप्रभु की उत्तमोत्तम लीलाओं से पवित्र हो गया था परन्तु वैष्णवजनों के विरोधी इन लीलाओं के आनन्द से वंचित रह गये।

जिन्होंने भगवान् के भक्तों के अनुकूल स्पर्श प्राप्त किया हो वे भक्तिमय प्रेम के सागर की गहराई में निमग्न रहते हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने दो प्रकार की लीलाऐं रचाईं- व्यक्त या प्रकट लीलाऐं और अव्यक्त या अप्रकट लीलाऐं। कभी कभी श्रीचैतन्य महाप्रभु भक्तों के सम्मुख प्रकट होते हैं और कभी उन्हें दिखते ही नहीं। यद्यपि, चाहे प्रकट लीला हो या अप्रकट, श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों के साथ समान व्यवहार करते थे।

सभी वैष्णव धर्मग्रन्थों में श्रीशचीनन्दन की नदिया लीला का वर्णन है। चैतन्य भागवत में भी इसका वर्णन है। श्रीगौरांग आज भी नदिया में साक्षात् लीला करते हैं परन्तु किसी-किसी भाग्यशाली को ही इनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त होता है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु का नदिया के प्रति भक्तिभाव सर्वविदित तथ्य है। जो भी इसको अस्वीकार करता है वो वास्तव में पापी है। हम नित्य श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीनित्यानन्द प्रभु का गुणगान करते हैं जिन्होंने पवित्र कण्ठी धारण कर स्वयं को प्रकट किया और अपने अनन्त सहचरों के साथ अध्यात्म के आनुगत्य में रहे।

श्रीवृन्दावन चन्द्र गौर को अनेक धर्मों का पालन करने वाले सहभागियों के साथ नदिया में भ्रमण करने में अति आनन्द आता था। श्रीनवद्वीप और श्रीवृन्दावन बिलकुल ही अभिन्न हैं। एक स्थान पर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपनी लीलाऐं प्रदर्शित की हैं और दूसरे स्थान पर भगवान् श्रीश्याम सुन्दर ने अपनी लीलाऐं प्रदर्शित कीं। श्रीनवद्वीप और श्रीवृन्दावन केवल उन लोगों के लिए दो अलग अलग स्थान हैं जिन्हें इस वास्तविकता का पता ही नहीं कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ही श्रीश्याम सुन्दर का अवतार हैं। जो श्रीगौर और श्रीकृष्ण दोनों को अपना प्राण और आत्मा मानते हैं, वे ही समझ सकते हैं कि श्रीनवद्वीप और श्रीवृन्दावन अभिन्न हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु की कृपा पाकर कोई भी इसका अनुभव कर सकता है कि श्रीनवद्वीप की लीला और श्रीवृन्दावन की लीला में कोई अंतर नहीं है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तों की दीर्घायु हो। अब मेरे द्वारा कहा गया आख्यान ध्यान से सुनिये। मैं श्रीगोपाल भट्ट के समग्र व्यक्तित्व और चरित्र के बारे में कुछ बताना चाहूँगा।

श्रीगोपालभट्ट गोस्वामिपाद के पूर्वज

श्रीगोपालभट्ट एक महान् भक्त और प्रभु के प्रेमी थे जिन्होंने श्रीगौरचन्द्र को अपना प्राण और आत्मा मान लिया था।

श्रीनिवास आचार्य जो प्रेम के क्षेत्र के सम्राट थे, श्रीगोपालभट्ट के सबसे प्रिय शिष्य थे। श्रीनिवास आचार्य के अनुगामी प्रभु के प्रति अपने आध्यात्मिक अनुराग के लिए बहुत प्रसिद्ध हो गये थे।

मैं उन भक्तों के जीवन चरित्र का वर्णन बहुत विस्तार से करना चाहता हूँ जिनके लिए भगवान् श्रीगौरांग और उनके शिष्य ही एकमात्र आश्रय थे। हे श्रोताओ, मैं आपसे बारम्बार विनय करता हूँ कि केवल श्रीगौरचन्द्र का ध्यान करें और किसी का नहीं। श्रीगौरचन्द्र की इस संसार में वास्तविक महिमा यही है कि वो अपने उन भक्तों पर प्रभुत्व कर सकते थे जिनके हृदय में केवल वे ही विराजमान थे अन्य कोई नहीं। श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों के प्राण थे और भगवान् भी केवल अपने भक्तगणों का ही चिन्तन करते हैं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छानुसार उनके भक्तों ने भिन्न-भिन्न स्थानों पर जन्म लिया और भगवान् उन्हें समय समय पर दर्शन देते रहते थे। वैष्णव साहित्य के विद्वान् लेखकों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके भक्तों के परस्पर मिलन का वर्णन किया है।

जो लोग भक्त और भगवान् के मध्य परस्पर सम्बन्ध को अस्वीकार करते हैं, उनका नाश निश्चित ही है। मैं भक्तगणों और सामान्यजनों, दोनों को यह सलाह देना चाहता हूँ कि इस सार्वभौमिक सत्य को स्वीकार कर लें और इस पर अनुमान लगाने का प्रयास न करें। भक्त की निष्काम इच्छाऐं निश्चित ही भगवान् से अत्यधिक शक्तिशाली हैं, श्रीचैतन्य महाप्रभु के लिए उनके दासों के भक्तिमय गुण अति सम्माननीय हैं।

कभी-कभी श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने भक्तों से मिलने जाते थे और कभी भक्तगण उनसे मिलने को आते थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु की श्रीगोपालभट्ट से दक्षिण भारत में भेंट हुई। मैं भट्ट परिवार के इतिहास का संक्षेप में वर्णन करुंगा। श्रीगोपाल भट्ट श्रीवेंकटभट्ट के सुपुत्र थे। श्रीवेंकटभट्ट दक्षिण भारत में रहते थे और सभी शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। श्रीत्रिमल्ल, श्रीवेंकट और श्री प्रबोधानन्द तीन भाई थे जिनके एकमात्र प्राण और आत्मा थे श्रीगौरचन्द्र।

पहले वे श्रीश्री लक्ष्मी-नारायण की आराधना करते थे पर बाद में श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुग्रह पर श्रीश्रीराधा-कृष्ण के परम भक्त हुए।

दक्षिण की अपनी यात्रा के अन्तर्गत महाप्रभु श्रीगौरहरि ने अपना चातुर्मास्य आनन्दपूर्वक श्रीभट्ट जी के निवास पर बिताया। चैतन्य-चरितामृत नामक ग्रंथ में भगवान् की दक्षिण यात्रा का बहुत सुन्दर वर्णन है। श्रीचैतन्य-चरितामृत में श्रीगोपाल भट्ट का तो कहीं कोई वर्णन नहीं अपितु भट्ट परिवार का वर्णन है। श्रीचैतन्यचरितामृत (मध्य लीला 9.82-83) में श्रीवैंकटभट्ट नाम के एक वैष्णव का उल्लेख है जिन्होंने आदर सत्कारपूर्वक श्रीचैतन्य महाप्रभु को अपने निवास पर आमंत्रित किया।

श्रीगोपालभट्ट चरित्र

उन्होंने महाप्रभु के चरण धोये और परिवार सहित चरणामृत ग्रहण किया। ये कहा जाता है कि श्री वैंकट के सुपुत्र गोपाल उस जल को ग्रहण कर हर्षोन्माद से अति भावुक हो गये थे। यद्यपि हर्षोन्माद से परिपूर्ण प्रेम प्राप्तकर कांपते हुए जैसे तैसे उन्होंने स्वयं को संभालने का प्रयास किया।

गोपाल एक सुन्दर युवा थे जिनका रंगरूप स्वर्णिम चंपक पुष्प के समान था। उनके कमल के समान मुखमण्डल पर विशाल नेत्र और भौंहें स्थित थीं और ललाट तथा नासिका पर वैष्णव तिलक धारण कर रखा था। उनके कर्ण और कण्ठ बहुत सुन्दर थे। उनके अति सुन्दर हाथ, वक्षस्थल और पतली कमर थी। उनकी पिंडली, घुटने और रक्तिम आभा वाले चरण कितने सुन्दर थे! उन्होंने चमकीले वस्त्र धारण कर रखे थे और अनेकों आभूषण उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। उनके निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होते हुए सौन्दर्य और साहस को देख कर हर कोई उन पर मोहित था।

अपनी आत्मा और प्राण श्रीचैतन्य महाप्रभु को पाकर गोपाल ने प्रभु सेवा में ही प्रसन्नतापूर्वक स्वयं को समर्पित कर दिया था। मैं श्रीगोपाल भट्ट की आराधना करता हूँ जो ब्राह्मणों में श्रेष्ठ हैं और परम निष्कपटता से श्रीचैतन्य महाप्रभु की सेवा में लगे हुए थे। मैं यह बताने में असमर्थ हूँ कि कैसे श्रीगोपाल भट्ट ने गौरहरि का आनुगत्य प्राप्त किया। फिर भी मैं श्रीगोपालभट्ट के चरित्र का वर्णन करने का प्रयास करूँगा जो सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभु की सेवा में मग्न रहते थे।

श्रीगोपालभट्ट, श्रीचैतन्य महाप्रभु को तपस्वी रूप में देखकर संतुष्ट नहीं थे। वे एकांत में विलाप करते हुए अवरुद्ध कण्ठ से विधाता से कहा करते थे, 'हे विधाता! मैंने इस दूरस्थ स्थान पर क्यों जन्म लिया। आपने मुझे क्यों बाध्य किया कि मैं श्रीचैतन्य महाप्रभु को तपस्वी रूप में देखूँ और नदिया में उनकी लीलाओं के अवलोकन से वंचित रहूँ।

आप कितने निष्ठुर हो जो उन्हें एक संन्यासी जैसा जीवन जीने की अनुमति दी जबकि मैं दीर्घकाल से उन्हें श्रीराधिका जी के स्वामी श्रीब्रजेन्द्र-नन्दन के रूप में देखना चाहता हूँ।

इस तरह विलाप करते हुए श्रीगोपालभट्ट प्रचण्ड अग्नि के समान ऊष्ण व गहरी सांसें लेते हुए उन्मत्त व्यक्ति की तरह रो रहे थे। विधि को क्षमा करते हुए गोपाल खुद के भाग्य को ही कोसने लगे। इस तरह विलाप करते हुए गोपाल मौन रहने लगे पर श्रीगौरहरि उनकी मनोदशा अच्छी तरह समझ सकते थे।

जब गोपाल गहरी निद्रा में थे तो नवद्वीप के स्वामी उनके स्वप्न में प्रकट हुए। प्रभु श्रीगौरसुन्दर उस समय नवद्वीप की गलियों में विचरण कर रहे थे, वह भी उनके साथ थे। श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत ने स्नेह से उन्हें अपनी बांहों में भर लिया परन्तु जैसे ही वे उन्हें कुछ बताने लगे, श्रीगोपाल की नींद खुल गयी।

गोपाल ने घबराहट में आस पास देखा और गौरहरि को ढूँढ़ने के लिए बैचेन हो गये। श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रसन्न हो गये और नील वर्णधारी चरवाहे बालक के रूप में प्रकट हो गये। दिव्य सौन्दर्य अवस्थित रहा परन्तु कुछ ही क्षणों में नील वर्ण स्वर्णिम वर्ण में परिवर्तित हो गया। श्रीगौरसुन्दर के तेज ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मंत्रमुग्ध कर दिया। उनके कंधों तक लहराते घुंघराले केश कितने सुन्दर थे। वैष्णव तिलक उनके मस्तक की शोभा बढ़ा रहा था, उनकी भृकुटियाँ कलात्मक ढंग से उभरी हुई थीं और उनकी तेजस्वी झलक सभी स्त्रियों का हृदय चुराने वाली थी। उनका सुन्दर मुखमण्डल शरद ऋतु के चन्द्रमा को पराजित कर रहा था और उनकी मुस्कान से अमृत बरस रहा था। उनके अंग वस्त्र में तीन सिलवटें थीं और वे भिन्न-भिन्न प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित थी। उनके हाव-भाव और अंग विन्यास चित्त आकर्षित करने वाले थे। श्रीनिमाई के गले में पड़ी मालती पुष्पों की माला गोपाल को मंत्रमुग्ध कर रही थी।

श्रीगोपाल भट्ट, श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीचरणों में गिर गये और पुनः आशाओं भरी दृष्टि से उनके मुखमण्डल को देखने लगे परन्तु भगवान् संन्यासी रूप को ग्रहण किए रहे। महाप्रभु श्रीगौरचन्द्र ने श्रीगोपालभट्ट को शांत किया और प्रत्यक्ष निर्देश दिए। उन्होंने उन्हें शीघ्रातिशीघ्र श्रीवृन्दावन जाने का निर्देश दिया क्योंकि वहाँ वे दो अनमोल रत्न श्रीरूप और श्रीसनातन से मिलने वाले थे!

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, 'उन्हें मेरी कामना के बारे में बताना'। श्रीवृन्दावन में तुम सम्पूर्ण विश्व के अनेक शिष्यों से मिलोगे।'

श्रीगोपाल भट्ट को ऐसे निर्देशित करते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें गोद में उठा लिया और अपने नेत्रों से बहते अश्रुओं से उनके शरीर को भिगो दिया। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीगोपालभट्ट को सलाह दी कि उनके निर्देशों को गुप्त रखें और किसी से भी इसके बारे में चर्चा न करें। श्रीगोपालभट्ट उनके निर्देशों का पालन करते हुए बहुत प्रसन्न थे।

श्रीगोपालभट्ट जिस निष्ठा से श्रीगौरांग की सेवा कर रहे थे, श्रीवैंकटभट्ट ये देखकर संतुष्ट थे। वे अपने सुपुत्र को श्रीगौरचन्द्र के उदार चरणकमलों में समर्पित करके अत्यधिक प्रसन्न हो गये। इसके बाद श्रीगोपालभट्ट दिन रात

अपना समय श्रीगौरहरि के साथ बिताने लगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु चार मास पश्चात् उनका गृह त्याग देंगे, यह विचार तीनों भाईयों को उदास कर देता था। त्रिमल्ल, वैंकट और प्रबोधानन्द आश्चर्य जताते थे कि उनके दिन श्रीचैतन्य महाप्रभु के बिना कैसे व्यतीत होंगे। वे आपस में पूछते थे कि 'हमारे साथ कौन हास परिहास करेगा?'

'कौन हमारे साथ जाकर कावेरी नदी में स्नान करेगा?' वे आपस में एक-दूसरे से पूछते। 'कौन श्रीरंगनाथ मन्दिर में संकीर्तन करेगा और कौन हम जैसे अधम साथियों को भक्ति के रत्न प्रदान करेगा? श्रीचैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति के अभाव में ये जनसमूह बिखर जाएगा और यह स्थान निर्जन हो जाएगा'।

यद्यपि उनके मुख पर अश्रुबिन्दु छलक आये थे पर फिर भी उन्होंने अपने दु:ख को किसी के समक्ष व्यक्त नहीं किया। चातुर्मास्य समाप्त होने पर जब वास्तव में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उनके घर से विदा ली तो वे निराश होकर रुदन करने लगे। जैसे ही भगवान् ने घर छोड़ा तो भट्ट बंधुजन उनके चरण कमलों में भूमि पर गिर पड़े। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने तीनों भाइयों को स्नेह से गले लगा कर शांत किया। श्रीगोपालभट्ट को शांत कर श्रीचैतन्य महाप्रभु पुन: अपनी दक्षिण की यात्रा पर निकल पड़े।

अंत में वे नीलाचल पहुंचे जहाँ वे अपने सहभागियों और भक्तजनों से मिले। वे गौड़ देश और श्रीवृन्दावन गये और वहाँ अपने अनेकों अनुयायियों से मिले। एक महान तपस्वी, श्रीकृष्णचैतन्य* ने अपने भक्तजनों की सहायता से कलियुग को कृतार्थ कर दिया था। वे जहाँ जाते, भगवान् अपने भक्तों को पहले ही बता देते कि उन्होंने नीलाचल में वास करने का निश्चय किया है।

दक्षिण भारत में श्रीवैंकटभट्ट और उनके दो भाई श्रीचैतन्य महाप्रभु* के वियोग में निराश हो गये थे। प्रभु की अनुपस्थिति में श्रीगोपाल की मनोदशा अकथनीय हो गयी थी। वे वियोग के उस पल के बारे में विचार करते थे जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने आश्वासन दिया था कि उनकी इच्छा शीघ्र पूरी होगी। उन्हें श्रीगौरांग* द्वारा श्रीवृन्दावन ले जाने का वचन स्मरण हो आया। गोपाल श्रीगौरांग के स्नेह में डूबे रहे और उनके आध्यात्मिक मत का प्रचार करने से पूरे देश में उनकी कीर्ति फैलनी आरम्भ हो गयी।

किसी ने कहा, 'इसका सारा श्रेय श्रीप्रबोधानन्द को जाता है, जिन्होंने बाल्यकाल से उन्हें शिक्षा प्रदान की। कोई भी श्रीगोपाल की विद्वत्ता का मुकाबला नहीं कर सकता था, जिन्होंने निश्चय ही अपना ज्ञान अपने चाचा के अथक प्रयासों से प्राप्त किया था।'

---

*ये तीनों ही महाप्रभु के नाम हैं.

किसी ने कहा, श्रीप्रबोधानन्द की अपार विद्वत्ता के कारण ही उन्होंने सरस्वती की उपाधि प्राप्त की है। सोते हुए चाहे जागते हुए वे केवल श्रीकृष्णचैतन्य के बारे में ही सोचते थे और किसी के बारे में नहीं।

हरि-भक्ति-विलास (1.2) के अनुसार: श्रीगौरसुन्दर के प्रिय श्रील प्रबोधानन्द के शिष्य श्रीगोपालभट्ट जी ने हरि-भक्ति-विलास ग्रन्थ का संकलन किया और श्रीरघुनाथदास, श्रीरूप और श्रीसनातन को परितृप्त किया।

सांसारिक विषयों में बहुत ही अनासक्त श्रीगोपालभट्ट स्नेहशील और कवि हृदय थे। वे गायन में, विभिन्न वाद्य यन्त्रों के वादन और नृत्य कला में निपुण थे। श्रीगोपालभट्ट द्वारा संकलित दिव्य छन्द का अनुपम ग्रन्थ पठनीय था, जिसके लिये श्रीप्रबोधानन्द जी को पहले श्रेय दिया जाना चाहिये, जोकि पढ़ने वाले और सुनने वाले दोनों को मंत्रमुग्ध करता है। इस प्रकार सभी ने श्रीप्रबोधानन्द और उनके भतीजे श्रीगोपालभट्ट की प्रशंसा की जो कि बहुत विद्वान् और दयालु थे।

श्री गोपाल ने अपने माता-पिता की देखभाल के दायित्व को बड़ी गम्भीरता से निभाया और वे भी आपसे सदैव संतुष्ट रहते थे। एक बार एक ब्राह्मण ने श्रीवेंकट भट्ट से कहा, 'निश्चित ही आपको ऐसे पुत्र का पिता होने का गर्व होना चाहिए जो हर तरह से उत्कृष्ट है। आपके पुत्र ने जैसी गहरी भक्ति दिखाई है वैसी भक्ति मैंने कभी भी न तो देखी है और न ही सुनी है। अपने माता पिता के लिये उनमें जो विनम्रता है, वह भी अतुलनीय है।'

श्रीवेंकटभट्ट ब्राह्मण को गोपाल के भाग्य के बारे में यह बताकर प्रसन्न होते कि वे भगवान् के एक प्रख्यात भक्त बन गए हैं। गोपाल ने बहुत उत्सुकता से प्रत्याशित होकर श्रीजगन्नाथ जी को नीलाचल में देखा परन्तु उसी समय वे व्याकरण और अन्य ग्रन्थों का अध्ययन भी करना चाहते थे। श्रीवेंकटभट्ट ने ब्राह्मण को यह भी बताया कि कैसे उनके पुत्र गोपाल ने कितनी निष्ठा और ईमानदारी से परम तत्व श्रीकृष्णचैतन्य की सेवा की है।

ब्राह्मण गोपाल के बारे में कहे गए वृत्तान्तों का आनन्द लेता था और गोपाल जैसे श्रेष्ठ पुत्र के प्रसन्न चित्त पिता होने के लिए श्रीवेंकटभट्ट की प्रशंसा करता। उसके बाद ब्राह्मण घर लौट आया। गोपाल के माता-पिता ऐसे पुत्र को पाकर निश्चित ही भाग्यशाली थे जिसने खुद को पूर्णरूप से श्रीचैतन्य महाप्रभु के कृपालु चरणारविन्द की सेवा में लगा दिया था। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक अपने पुत्र को श्रीवृन्दावन जाने की आज्ञा प्रदान की और उसके बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु के पावन नाम का जप करते हुए यह संसार सदैव के लिये त्याग दिया।

कुछ समय बाद गोपाल श्रीवृन्दावन में श्रीरूप और श्रीसनातन से मिले। यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु उस समय नीलाचल में थे, किन्तु प्रभु होने के कारण

वे सर्वज्ञाता भी थे, वे समझ सकते थे कि गोपाल श्रीवृन्दावन चले गये हैं। एक दिन उन्होंने श्रीकाशी मिश्र के घर का त्याग किया और श्रीगोपीनाथ और श्रीगदाधर से मिलने पहुंचे। श्रीगौरचन्द्र का श्रीगदाधर पण्डित के प्रति जो आकर्षण था वह ऐसा अमूल्य भाव था जिसका अधिकारी अत्यंत सौभाग्यशाली व्यक्ति ही हो सकता था।

इसी प्रकार श्रीनित्यानन्द और श्रीगदाधर की मित्रता भी सामान्य सूझबूझ से परे थी। श्रीगदाधर और श्रीअद्वैत के परस्पर वार्तालाप का विवरण सुनने वाले को आत्मिक शान्ति प्रदान करता था। श्रीनिवास पंडित हमेशा श्रीपंडित गदाधर की प्रशंसा करते थे और उन्हें अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय मानते थे।

प्रभु श्रीहरिदास और प्रभु श्रीगदाधर के पारस्परिक सम्बन्धों में क्या आनन्द छिपा था यह कोई नहीं समझ सकता था, न ही कोई ये समझ सकता था कि पंडित श्रीगदाधर और गदाधर दास के मध्य किस तरह का प्रबल प्रेम था।

ऐसा कोई प्राणी नहीं था जो पर्याप्त रूप से गदाधर और उनके स्वामी श्रीगौरचन्द्र के मध्य प्रेममय सम्बन्ध का वर्णन कर सके। गदाधर के निवास पर महाप्रभु और उनके भक्तगण अपने अपने स्थान पर बैठ जाते थे। केवल कोई अत्यन्त सौभाग्यशाली ही इस सुन्दर दृश्य का अवलोकन कर सकता था। एक महानतम योगी, महाप्रभु गौरराय ने अपनी चिंता को अपने शिष्यों के समक्ष रखा, 'मुझे बहुत चिंता हो रही है, लम्बे समय से मुझे ब्रज से कोई समाचार नहीं आया।'

उन्होंने भक्तों को बताया कि वे कुछ पत्र श्रीवृन्दावन भेजना चाहते हैं, पर जैसे ही वे ये बोले, उन्हें श्रीरूप और सनातन का भेजा हुआ एक पत्र प्राप्त हुआ, जिसमें श्रीगोपाल भट्ट के वहाँ आगमन का समाचार था। पत्र की उमंग में श्री चैतन्य महाप्रभु गोपाल के बारे में अपने भक्तों को बताने लगे, 'मेरे दक्षिण में प्रवास के समय मुझे श्रीवैंकट भट्ट के निवास पर ठहरने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ मैं श्रीभट्ट के पुत्र गोपाल से मिला जो कि अब तक खुद को ग्रन्थों के महान् विद्वान् सिद्ध कर चुके हैं। अपने पिता की आज्ञा से गोपाल ने पूरी निष्ठा से मेरी सेवा की। भगवान् श्रीकृष्ण की उन पर अपार कृपा है और अब वह श्रीवृन्दावन वास को चले गये हैं। श्रीरूप और सनातन मुझे अतिप्रिय हैं और गोपाल के वहाँ पहुंचते ही उन्होंने मुझे पत्र भेज दिया।

श्रीचैतन्य महाप्रभु से स्वयं से सम्बंधित प्रसंग सुनकर उनके शिष्य बहुत प्रसन्न हुए। महाप्रभु जी ने श्रीरूप और सनातन की प्रशंसा की और फिर उन्हें उत्तर भेजा। उन्होंने लिखा, 'गोपाल के श्रीवृन्दावन आने की बात सुनकर मैं प्रसन्न हूँ। तुम उसे अपने भ्राता के रूप में अंगीकार करो। समय समय पर मुझे अपनी गतिविधियों और लोक कल्याण की जानकारी देने वाले पत्र भेजते रहना। जो पुस्तकें अब तक तुम लिख चुके हो और जो अभी लिख रहे हो वे

समयान्तर में पूरे विश्व में सर्व स्वीकार्य होंगी। जो व्यक्ति इन पुस्तकों के वितरण में सहयोग करेगा, भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से वह अब आ चुका है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने किसी को आदेश दिया कि वह तत्क्षण प्रस्थान करे और वह पत्र तथा श्रीवृन्दावन के अपने भक्तों के लिये बहुत से वस्त्र ले जाये। जब पत्रवाहक श्रीवृन्दावन में गोस्वामीगणों से मिला तो उसने वह पत्र और वस्त्र उन्हें दे दिये। मुझ में यह वर्णन करने का साहस नहीं है कि कितनी प्रसन्नता से गोस्वामीगणों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदत्त उपहार और पत्र स्वीकार किये। श्रीरूप और श्रीसनातन ने सहर्ष श्रीगोपाल को अपना भाई अंगीकार किया।

एक आंतरिक रहस्योद्घाटन की सहायता से श्रीगोपाल भट्ट को श्रीसनातन गोस्वामी ने एक बार में ही पहचान लिया। श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीगोपाल भट्ट को श्रीहरिभक्ति विलास ग्रंथ के बारे में बताया। ग्रंथ के बारे में सुनते हुए श्रीगोपाल भट्ट ने भगवान् के श्रीविग्रह की सेवा का गुप्त रूप में विचार किया। एक रात्रि श्रीगोविन्ददेव ने स्वप्न में श्रीरूप गोस्वामी को गोपाल की इच्छा के बारे में बताया। श्रीरूप के स्नेहशील आनुगत्य में श्रीगोपालभट्ट ने श्रीश्रीराधारमण की उपासना सेवा का ज्ञान प्राप्त किया। इस विषय पर बाद में विस्तार से चर्चा हो सकती है, सम्प्रति में इतना ही कहूँगा कि श्रीगोपाल की प्रभु सेवा के प्रयासों में अगाध निष्ठा झलकती थी।

श्रीलोकनाथ, श्रीभूगर्भ, पण्डित काशीश्वर, श्रीपरमानन्द जी और अन्य भक्त– जनों ने श्रीगोपालभट्ट को अपना स्नेहिल आशीष दिया। वे अपना समय श्रीरूप और सनातन के साथ श्रीकृष्ण की प्रिय लीलाओं के चिंतन में व्यतीत करना पसन्द करते थे। श्रीगोपाल के हृदय में श्रीसनातन के लिये सम्मान हिलोरें लेता था जबकि उनके और रूप के मध्य गहरी मित्रता विकसित होने लगी थी। परन्तु इन सब से ऊपर श्रीगोपालभट्ट को श्रीश्रीराधारमण की सेवा में खुद को संलग्न करने में अत्यधिक आनन्द आता था।

अपने ज्ञान और अध्यात्म के बल पर श्रीगोपाल भट्ट किसी की भी जिज्ञासाओं का समाधान कर सकते थे और वे शीघ्र ही वृन्दावन में सबके प्रिय हो गये। मैं श्रीगोपालभट्ट के प्रति अपना सम्मान व्यक्त करता हूँ जो श्रीरूप और सनातन के सानिध्य और उनसे मिलने वाले प्रेम से तृप्त हो गये थे और जो श्रीश्रीराधारमण की सेवा में तल्लीन रहते थे।

कुछ भक्तों ने श्रीगोपालभट्ट की लीलाओं का वर्णन करने का पूर्व में भी प्रयास किया परन्तु वे असफल रहे। जो भी उनके जीवन की अगाध महत्ता पर वाद–विाद करता वह अपराध से ग्रस्त हो जाता। यहाँ तक कि महानतम कवि भी श्रीगोपालभट्ट के जीवन और लीलाओं का वर्णन करने में असफल रहे। मैं आशा करता हूँ कि सम्भवत: बाद में मैं इनका वर्णन कर पाऊँ, पर अभी सम्भव नहीं।

यद्यपि ठाकुर श्रीवृन्दावन दास ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का वर्णन किया है पर वह प्रभु की दक्षिण की यात्रा के वर्णन का विस्तार न कर पाये। श्रीवृन्दावन दास श्रील व्यासदेव के अवतार थे, अब तक श्रीव्यासदेव के सुझाव पर, उन्होंने प्रभु के उस लीला के अंश का वर्णन नहीं किया। श्रीवेदव्यास से बल पाकर श्रीकृष्णदास कविराज ने आनन्दमग्न होकर बड़े विस्तार से प्रभु की दक्षिण भारत की यात्रा का वर्णन किया पर उन्होंने कुछ अंश छोड़ दिये ताकि बाद में कविगण उनका विस्तार कर सकें, ऐसे ही जैसे गुरु अपने भोजन का शेष भाग, प्रसाद रूप में अपने शिष्यों के लिये रख देते हैं।

एक साधारण व्यक्ति, एक महान् कवि की रचनाओं को नहीं समझ सकता इसलिए लोग उनकी रचनाओं पर चिंतन नहीं करते हैं और बस वैसा ही समझते हैं जैसे वे स्वयं हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों के बारे में लिख़ने से पूर्व श्री कविराज ने बहुत गम्भीरता से उनके चरित्र को गहराई से समझा। श्रीचैतन्य महाप्रभु की अभिलाषाओं को जानने के लिये वैष्णव कवि सदैव उनके शिष्यों की निकटता में रहते थे और उनका मार्गदर्शन और अनुमति प्राप्त करने के बाद ही कवि उनके बारे में लिखते थे।

अनेकों भक्तों से अनुमति लेने के बाद श्रीकृष्णदास कविराज ने कई ग्रन्थ रचे। श्रीगोपालभट्ट नहीं चाहते थे कि किसी भी ग्रन्थ में उनका नाम आये यद्यपि उन्होंने कविराज को ही लिखने के लिये अधिकृत किया और प्रोत्साहित किया था। एक अज्ञानी होने के कारण हम ये कभी समझ नही पायेंगे कि क्यों श्रीगोपालभट्ट ने अपना नाम लिखने से मना किया। सम्भवत: उनकी विनम्रता ने उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य किया हो। कविराज में साहस नहीं था कि वे उनके आदेश की अवज्ञा करें इस कारण कविराज के ग्रन्थो में श्रीगोपालभट्ट का नाम कदाचित ही वर्णित है।

मैंने एक वृद्ध वैष्णव से सुना है कि श्रीलोकनाथ गोस्वामी ने भी यही आदेश दिया था कि उनका नाम भी न वर्णित हो। श्रीकृष्णदास कविराज को श्रीगोपालभट्ट की स्तुति में कुछ निराले पद लिखने में बहुत आनन्द आता था और वे श्रीगोपाल भट्ट को कभी नहीं बताते थे कि ये पद उन्होंने लिखे हैं। यह ग्रन्थ अति विशाल न हो जाए इस भय से मैं श्रीगोपालभट्ट के श्रीवृन्दावन वास के समय के ज्ञान की गम्भीरता के बारे में विस्तृत रूप से नहीं लिख सकता।

श्रीभट्ट ने श्रीकृष्ण कर्णामृत ग्रन्थ में अनेकों टिप्पणियाँ दी हैं जो सभी वैष्णवों को असीम आनन्द प्रदान करती हैं। अध्यात्म पथ के अविस्मरणीय व्यक्तित्व श्रीगोपालभट्ट ने बहुत सी अलौकिक गतिविधियां प्रदर्शित की हैं। बहुत समय बाद उन्हें श्रीनिवास मिले और उनकी अभिलाषा पूर्ण की। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर श्रीनिवास ने श्रीगोपालभट्ट से दीक्षा ग्रहण की और बाद में गोस्वामी जी की रचनाओं को बंगाल में प्रसारित किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने

श्रीरूप और अन्य को वैष्णव धर्म के धर्मग्रन्थों को लिखने और संकलित करने के लिये प्रेरित किया और इन धर्मग्रन्थों को प्रसारित करने के लिए उन्होंने श्रीनिवास आचार्य और श्रीठाकुर महाशय को प्रेरित किया जो कि श्रीचैतन्य प्रभु की भक्ति में समान स्वरूप थे।

नरोत्तमदास ठाकुर महाशय ने अपनी रचनाओं में श्रीरूप और श्रीनिवास आचार्य की सामर्थ्य को उजागर किया है। ठाकुर महाशय द्वारा रचित श्लोक में वे कहते हैं, 'मुझे, दया के सागर श्रीचैतन्यदेव के दर्शन कब प्राप्त होंगे। उनका लक्ष्य श्री रूप और अन्य भक्तों के ज्ञान की मदद से अनेक वैष्णव ग्रन्थों की रचना कर बाद में श्रीनिवास आचार्य के प्रयासों से सम्पूर्ण विश्व के लोगों में प्रसारित करना था।'

श्रीनिवास आचार्य एक महान विद्वान् थे जिन्होंने इन अमूल्य वैष्णव ग्रन्थों का प्रसार कर, विश्व भर के लोगों को लाभान्वित किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से उनके अनेक शिष्य थे, जिनमें से श्रीरामचन्द्र, श्रीगोकुल इत्यादि बहुत विख्यात हुए। मैं सम्पूर्ण विश्व को श्रीरामचन्द्र और श्रीगोकुलानन्द के बारे में बताना चाहता हूँ।

रामचन्द्र और गोविन्द दो विख्यात भाई थे जिनके पिता चिरंजीव थे और मातृक नाना दामोदर थे। दामोदर सेन श्रीखण्ड में रहते थे और अपने महान काव्य ज्ञान के कारण बहुत विख्यात थे। श्री गोविन्द कविराज द्वारा रचित श्री संगीत माधव में वर्णन है कि: 'कोई भी दामोदर को तर्क-वितर्क में हराने की सामर्थ्य नहीं रखता था क्योंकि वे न केवल एक कवि थे बल्कि एक महान तर्कवादी भी थे'।

एक बार एक विश्व विख्यात विद्वान् था, जो कि सरलता से उनसे परास्त हो गया था, उन्हें शाप दिया कि उनके जीवन काल में कभी भी पुत्र संतान न हो।

दामोदर ने बहुत यत्न से उस महान् विद्वान को शांत करने का प्रयास किया जिससे अंततः उन्हें आशीर्वाद मिला कि उनकी एक पुत्री होगी जो कि सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध होगी। 'आपकी पुत्री दो महान् पुत्रों को जन्म देगी जो कि सारी अशुभता को हटाकर विश्व को लाभान्वित करेंगे' विद्वान् ने कहा। बाद में दामोदर की सुनन्दा नामक पुत्री हुई जो केवल सुन्दर ही नहीं अपितु गुणों का संग्रह थी। श्रीखण्ड की महिलाओं ने उनके स्वभाव की बहुत प्रशंसा की और जब उनकी विवाह योग्य अवस्था हुई तो उन्होंने उपयुक्त वर की तलाश की।

दामोदर कविराज ने अपनी पुत्री के लिये चिरंजीव को सबसे उपयुक्त पति जानकर पसंद किया और बड़ी प्रसन्नता से उनके साथ विवाह कर दिया। यद्यपि मैं विवाह समारोह का वर्णन विस्तार से करना चाहता था पर मुझे स्वयं को रोकना होगा क्योंकि विवरण अत्यधिक विस्तृत है।

कुमारनगर नामक गांव में भागीरथी नदी के किनारे बहुत से वैष्णव आनन्द पूर्वक रहते थे। विवाह के बाद यह चिरंजीव का और सुनन्दा का घर था। उसने श्रीखण्ड में रहने का निर्णय किया। चिरंजीव सेन श्रीखण्ड में बहुत विख्यात थे। वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के सहभागी थे और उन्होंने स्वयं को अखंड संकीर्तन में व्यस्त कर लिया। वे अपनी दैन्यता और निर्धन व उपेक्षित लोगों में आध्यात्मिक स्नेह वितरण करने के लिये बहुत लोकप्रिय थे।

श्रीचैतन्यचरितामृत के लेखक ने चिरंजीव सेन का नाम श्रीचैतन्य महाप्रभु के सहयोगियों के रूप में किया है। श्रीचैतन्यचरितामृत (मध्य 91-92) के अनुसार मुकुन्ददास, नरहरि, श्रीरघुनन्दन, श्रीखण्ड के चिरंजीव और सुलोचना प्रभु के सहभागियों में से थे।

चिरंजीव सेन एक महान विद्वान् थे जो अपनी पत्नी के साथ आनन्दपूर्वक श्रीखण्ड में वास करते थे। वह संत वशिष्ठ की उत्कृष्ट पत्नी अरुंधति के समान आज्ञाकारी थी। वह बहुत ही शिष्ट महिला थी और अलौकिक शक्तियों का भंडार थी।

श्रीरामचन्द्र कविराज

श्रीरामचन्द्र कविराज बचपन से ही अपने माता-पिता के समान प्रख्यात थे। रामचन्द्र का अध्यात्म की ओर अत्यधिक झुकाव था और वे पड़ोसियों से बिलकुल तटस्थ व्यवहार करते थे। वे बड़े प्रसन्न चित्त के और प्रेम के देवता कामदेव जैसे अति आकर्षक व्यक्ति थे। उन्होंने शीघ्रता से और सरलता से सब प्रकार के धर्म ग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

रामचन्द्र के अद्वितीय गुणों को देखकर, प्रबुद्ध व्यक्ति भी ये सोचते थे कि वे शायद किसी देवता का अवतार हैं। उन्होंने अपनी इच्छा से वैद्य के यहाँ जन्म लिया और ऐसा करने से लोग उन्हें सामान्य व्यक्ति मानने लगे। वैष्णवजन सोचते थे कि यदि उन्होंने वैष्णव मार्ग चुना तो वे अनेकों को अपना वैष्णवीय सहभागी बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। जैसे-जैसे समय बीतता गया, लोग रामचन्द्र में और अधिक रुचि लेने लगे।

मैं उन परिस्थितियों का वर्णन नही करूँगा जिन के कारण श्रीरामचन्द्र, श्रीनिवास के शिष्य बने परन्तु मैं वृन्दावन की एक घटना के बारे में बताता हूँ जिस कारण उन्हें कविराज की उपाधि मिली। श्रीपरमानन्द भट्टाचार्य, श्रीजीव गोस्वामी और वृन्दावन के अन्य निवासी श्रीरामचन्द्र के काव्य से मंत्रमुग्ध थे और इसलिए उन्होंने श्रीरामचन्द्र को कविराज की उपाधि प्रदान की।

श्री नरोत्तम ठाकुर

श्रीरामचन्द्र कविराज बहुत निपुण व्यक्ति थे और श्रीनरोत्तम दास महाशय के बहुत ही अन्तरंग सहभागी थे। श्री संगीत माधव नाट्य रचना में भी श्रीरामचन्द्र के बारे में वही जानकारी दी गई है। मैं श्रीरामचन्द्र और श्रीनरोत्तम के सम्बन्ध के बारे में बाद में वर्णन करूँगा परन्तु यहाँ मैं संक्षेप में ही वर्णन करूँगा।

श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीनरोत्तम परस्पर अविभाज्य थे और इस कारण लोग उनका नाम एक साथ ऐसे उच्चारित करते थे जैसे वे दोनों एक ही हों मानों नर–नारायण का स्वरूप हों। वे इस संसार में लोगों में प्रसन्नता बांटने के लिये ही अवतरित हुए। ग्रन्थों के महान विद्वान् होने के कारण वे विधर्मी विचारधारा को सरलता से परास्त कर देते थे। वे अध्यात्म ज्ञान की शिक्षा देने में बहुत निपुण थे और उनकी प्रतिभा सम्पूर्ण विश्व में मान्य थी।

श्रीसंगीत माधव ग्रन्थ में भी यही वर्णन है कि श्रीनरोत्तमदास एक महान वैष्णव थे जो जीवन भर ब्रह्मचारी रहे। जिन्होंने सभी धार्मिक स्थलों की यात्रा की। श्रीसंगीत माधव में श्रीनरोत्तम दास का यही वर्णन है।

सामान्य व्यक्ति नरोत्तम के चरित्र की गहराई को नहीं समझ सकते। वे साधारणतः श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रति ही अति आकर्षित रहे। नरोत्तमदास का जन्म माघ मास की पूर्णिमा को हुआ। जिस प्रकार चन्द्रमा का आकार दिनोंदिन बढ़ता जाता है उसी प्रकार दिन पर दिन नरोत्तमदास भी बढ़ते गये।

उन्होंने सभी ग्रन्थों की शिक्षा ग्रहण करके स्वयं को बहुत कुशल सिद्ध किया। वे सदैव श्रीकृष्णचैतन्य के विशिष्ट गुणों के विचार चिन्तन में ही लीन रहते थे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की योजना के अनुसार श्रीनरोत्तम दास ने स्वयं को प्रेम और भक्ति के मूर्तिमान अवतार के रूप में प्रमाणित किया, जिसे कोई सांसारिक मोह नहीं था। वे बचपन से ही उस दिन की प्रतीक्षा में थे जब वे घर को त्याग सकें और एक तपस्वी का जीवन व्यतीत कर सकें। वे लगातार श्रीचैतन्य, श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत आचार्य और अन्य से इस इच्छा की पूर्ति के लिये प्रार्थना करते। एक दिन श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने पार्षदों सहित नरोत्तम के स्वप्न में आये और विभिन्न प्रकार से स्नेह वृष्टि करके शांत किया।

एक बार बंगाल के राजा का एक दूत आया और एक आवश्यक कार्य हेतु नरोत्तम के पिता और चाचा को बुला ले गया।

श्री पद्मनाभ चक्रवर्ती उनके पिता जी और श्रीमती सीता उनकी माता जी थीं। वे जैसोर जिला के तलकहैणा गांव में रहते थे। प्राचीन निरुक्तम ग्रन्थ में श्री लोकनाथ के परिवार और वंशावली का वर्णन है।

श्रीलोकनाथ

वृद्ध पद्मनाभ लोकनाथ के पिता और श्री अद्वैत प्रभु के कृपापात्र सहभागी थे। यद्यपि लोकनाथ को घर आदि से कोई मोह नहीं था तो उन्होंने श्रीनवद्वीप में श्रीचैतन्य महाप्रभु के पास जाने के लिये गृह त्याग दिया। महाप्रभु श्रीगौरचन्द्र ने लोकनाथ पर अति कृपा बरसाई और तत्काल श्रीवृन्दावन जाने की सलाह दी। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने एक उद्देश्य की पूर्ति हेतु उन्हें श्रीधाम वृन्दावन जाने का आदेश दिया क्योंकि वे जानते थे कि वे अपने प्राण को छोड़कर जाना कैसे स्वीकार करेंगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु संन्यासी के रूप में श्रीवृन्दावन की यात्रा पर जाना चाहते थे इसलिए उन्होंने लोकनाथ को पहले ही वहाँ भेज दिया।

लोकनाथ महाप्रभु का उद्देश्य समझ गये थे और जानते थे कि श्रीचैतन्य महाप्रभु एक-दो दिन में संन्यास ग्रहण करेंगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्तरंग सहभागी मुण्डन संस्कार में सुन्दर घुँघराली लटों को पृथक् होते हुए कैसे सहेंगे? श्रीलोकनाथ रोते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में गिर गये क्योंकि वह तो इस दृश्य की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। सर्वोच्च स्वामी श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीलोकनाथ के भाव समझ गये थे, उन्होंने उनको कोमल आलिंगन प्रदान कर सांत्वना दी और चुपचाप उन्हें श्रीवृन्दावन जाने को कहा। श्रीलोकनाथ ने स्वयं को श्रीचैतन्य महाप्रभु के कृपालु चरण कमलों में समर्पित कर दिया, प्रभु के सहभागियों की चरण वन्दना कर के नवद्वीप से निकल गये। भारी मन से यात्रा करते हुए वृन्दावन पहुँचने से पूर्व अनेकों तीर्थ स्थलों की भी यात्रा की।

श्रीचैतन्य महाप्रभु, जो हमेशा अपने भक्तों के प्रेम के वशीभूत रहते थे, उन्होंने विरक्त जीवन को अंगीकार किया और तब नीलचन्द्र से मिलने नीलाचल चले गये। वहाँ से श्रीचैतन्य महाप्रभु ने दक्षिण भारत की यात्रा की। जब श्रीलोकनाथ को श्रीचैतन्य महाप्रभु के भ्रमण का पता लगा तो वे भी दक्षिण भारत की ओर चल दिए। दक्षिण भारत से श्रीचैतन्य महाप्रभु वृन्दावन चले गये। लोकनाथ भी यह समाचार पाते ही ब्रज की ओर प्रस्थान कर गये।

वृन्दावन से श्रीचैतन्य महाप्रभु ने प्रयाग की ओर यात्रा प्रारम्भ की और जब श्रीलोकनाथ ने यह सुना तो वे बहुत व्याकुल हो गये। उन्होंने अगली सुबह प्रयाग जाने का संकल्प लिया परन्तु उसी रात श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उनको स्वप्न में दर्शन दिये और श्रीवृन्दावन में ही रहने का आदेश दिया।

श्रीलोकनाथ अपने स्वामी के आदेश की अवहेलना नहीं कर सकते थे इसलिए वे वृन्दावन में ही एकांत में रहने लगे। बहुत समय बाद वे श्रीरूप और सनातन से वृन्दावन में मिले और वे सभी एक दूसरे की संगति में बहुत प्रसन्न हो गये। वे श्रीगोपाल भट्ट व अन्य वैष्णवों से मिले और सभी ने उन्हें सस्नेह

अंगीकार किया। श्रीलोकनाथ और श्रीभूगर्भ के परस्पर सम्बन्ध इतने अंतरंग थे कि केवल देह की भिन्नता ही दोनों के मध्य एकमात्र अंतर था।

श्रीलोकनाथ प्रभु आध्यात्मिक जीवन के हर कार्य में दक्ष हो गये थे और दीर्घकाल तक भगवान् श्रीगोविन्द की सेवा में रहे थे। अध्यात्म में उनका गहन झुकाव था और लौकिक कार्यों में अरुचि ने उन्हें सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध कर दिया था। हरि-भक्ति-विलास ग्रन्थ में श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीलोकनाथ प्रभु के नाम का मंगलाचरण में उल्लेख किया है। उन्होंने लिखा है, 'श्री काशीश्वर गोस्वामी प्रभु के सानिध्य में वृन्दावन के सौन्दर्य में वृद्धि हो! और श्रीकृष्णदास कविराज प्रभु और श्रीलोकनाथ प्रभु भी वहाँ ऐसे ही प्रकाशित हों।'

ग्रन्थ के प्रारम्भ में श्रीवैष्णवतोषिणी और श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीलोकनाथ का नाम मंगलाचरण के लिये वर्णित किया है। 'मैं श्री काशीश्वर, श्रीलोकनाथ और श्रीकृष्णदास कविराज की स्तुति गान करता हूँ, जिन्होंने स्वयं को श्री गोविन्द के चरण कमलों में समर्पित कर दिया है।"

लोकनाथ को वृन्दावन में श्रीकृष्ण की सभी लीला स्थलियों का अवलोकन करने में अत्यन्त आनन्द आता था। चतरवाणा के निकट उमराओ गांव में किशोरी कुण्ड नाम का एक पावन स्थल है। उन्होंने वहाँ एकान्त में रहने का निर्णय लिया, इस आशा को संजोये हुए कि एक दिन उन्हें श्रीकृष्ण की विग्रह सेवा प्राप्त होगी। श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीलोकनाथ की यह अभिलाषा जान गये थे और उनके सामने श्रीकृष्ण के विग्रह को छिपाये हुए, प्रकट हुए।

उन्होंने श्री राधा-विनोद नाम के विग्रह को श्रीलोकनाथ को सौंप दिया और तत्काल अन्तर्धान हो गये।

श्रीलोकनाथ यह न समझ सके कि किसने उन्हें इतने सुन्दर विग्रह प्रदान किये और न ही यह समझ सके वह सज्जन कहाँ अन्तर्धान हो गये। श्रीलोकनाथ को बेसुध अवस्था में देख श्रीराधा-विनोद मुसकराये और समझाने लगे, 'मैं किशोरी कुण्ड के निकट इस उमराव गाँव के वन में निवास कर रहा था। मैं यह समझ सकता था कि तुम संतुष्ट नहीं हो, अतः मैं बिना किसी की सहायता लिये, स्वयं ही तुम्हारे पास चला आया। अब कृपया मुझे भोजन प्रदान करो।'

श्रीलोकनाथ स्तब्ध खड़े रह गये और उनके नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली, फिर भी शीघ्रता से उन्होंने कुछ भोजन बनाया और श्री राधा-विनोद को निवेदित किया। तत् पश्चात उन्होंने पुष्पों की सेज लगाई और श्रीविग्रह को शयन करने का निवेदन किया। श्रीलोकनाथ ने उन्हें एक पत्ते से पंखा झला और उनकी चरण सेवा करते हुऐ उन्हें असीम आनन्द की अनुभूति हुई। उन्होंने स्वयं को श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में पूर्णतः समर्पित कर दिया और प्रभु के अमृतमय सौन्दर्य में स्वयं को लीन कर लिया। उन्होंने शीघ्रता से श्रीविग्रह के लिये वस्त्र का छोटा सा मन्दिर रूपी झोला तैयार किया।

वह छोटा सा झोला दिव्य पुंज से चमक उठा। श्रीलोकनाथ ने उसे गले में डाल लिया और वे जहाँ भी जाते उन्हें साथ ले जाते। गांव के लोग उनके लिये एक छोटी सी कुटिया का निर्माण करवाना चाहते थे पर वे एक वृक्ष के नीचे आश्रय पाकर पूर्णतः सन्तुष्ट थे और कोई अन्य आवास नहीं चाहते थे। उनका भौतिक सुख साधनों में तनिक भी अनुराग नहीं था। सामान्य लोग उनकी अनासक्ति की गम्भीरता को नहीं समझ सकते थे।

उमराओ में दीर्घ काल तक निवास करने के बाद वे वृन्दावन चले गये, जहाँ गोस्वामी जनों ने उन्हें सहृदयता से अंगीकार किया और उनकी देखभाल की। वे दीर्घकाल तक आनन्द पूर्वक वहाँ रहे परन्तु श्रीकृष्ण के विरह की अग्नि पुनः उनके अन्तःकरण को दग्ध करने लगी। श्रीसनातन, श्रीरूप और अन्य भक्तों के अन्तर्धान होने से वृन्दावन के वैष्णव समाज में रिक्तता उत्पन्न हो गयी। वे पूरे दिन श्रीरूप और श्रीसनातन के वियोग में विलाप करते रहते थे और अपने जीवन के प्रति उदासीन हो गये थे।

श्रीलोकनाथ की श्रीनरोत्तम पर कृपा

उसी समय श्रीनरोत्तमदास वृन्दावन आ गये और तत्काल स्वयं को श्रीलोकनाथ की अविराम सेवा में संयुक्त कर दिया। श्रीलोकनाथ श्रीनरोत्तम की मनोवृत्ति एवं व्यवहार से पूर्णतः सन्तुष्ट हुए और उन्हें दीक्षा मंत्र प्रदान किया।

श्रीगोपालभट्ट व अन्य वैष्णवों ने भी श्रीनरोत्तमदास को अपना अन्तरंग सखा स्वीकार कर लिया।

श्रीनरोत्तम ने श्रीजीव गोस्वामी के स्नेह के साथ साथ 'ठाकुर महाशय' की उपाधि भी प्राप्त की। वृन्दावन में श्रीनिवास आचार्य श्रीनरोत्तम से मिले और धीरे-धीरे वहाँ वैष्णवों की एक ऊर्जावान मण्डली स्थापित हो गयी। श्रीनिवास वृन्दावन में श्रीश्यामानन्द से भी मिले।

श्रीश्यामानन्द

श्री श्यामानन्द दण्डेश्वर नामक गांव में रहते थे। उनके पिता जी का नाम कृष्ण मण्डल था। इस प्रकार श्रीश्यामानन्द का जन्म एक गोप परिवार में हुआ। वे भगवान् श्रीकृष्ण को अपना प्राण और आत्मा मानते थे और वैष्णव जन उन्हें अति प्रिय थे। मैं ग्रन्थ विस्तार के भय से श्रीकृष्ण मण्डल का जीवन परिचय नहीं दूँगा।

श्रीश्यामानन्द के पिता पहले धरेण्ड वहदूपूरा नामक गांव में रहते थे। कुछ विद्वान् कहते हैं कि श्रीश्यामानन्द का जन्म वहीं हुआ था। कुछ का मानना है कि श्री मण्डल ने अपने बड़े पुत्र और एक पुत्री को खो दिया था। श्रीश्यामानन्द

उनकी तीसरी सन्तान थे। श्रीश्यामानन्द का जन्म बहुत शुभ काल में हुआ था और जन्म से ही उन्होंने गांव वालों को मन्त्रमुग्ध कर दिया था।

नवजात बालक के व्यवहार को देखते हुए श्रीकृष्ण मण्डल ने अपनी पत्नी को बालक की अतिरिक्त ध्यान से देखभाल करने को कहा और उसका भविष्य भगवान् कृष्ण के हाथों में सौंप दिया। गांव की महिलाओं ने बच्चे का कोई प्रिय नाम सुझाने के बजाय दुखिया नाम सुझाया। उनके पालन-पोषण में माता-पिता को अनेक कष्ट सहने पड़े इस कारण उनका नाम दुखिया रखा गया। अन्नप्राशन संस्कार पर एक महा उत्सव का आयोजन किया गया और बाद में मुण्डन कर के सिर पर केवल शिखा छोड़ दी। पूरे गांव ने इस उत्सव का आनन्द लिया।

दुखिया कभी भी अपने मित्रों के साथ नहीं खेलते थे बल्कि व्याकरण और अन्य विषयों की शिक्षा भी इन्होंने जल्दी ही पूरी कर ली। गांव के लोग उनकी लगन को देखकर अचम्भित थे। उन्हें विशेषकर गांव के वैष्णव जनों से श्रीगौरांग, श्रीनित्यानन्द और उनके पार्षदों की जीवन गाथाऐं सुनना अति प्रिय था।

जैसे ही वे श्रीगौर-निताई का स्तुति गान करते, उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगती थी। वे सदैव श्रीश्रीराधा-गोविन्द की लीलाओं का स्मरण करते रहते और माता-पिता की सेवा में निष्ठापूर्वक लीन रहते।

जब दुखिया बड़े हुए तो उनके माता-पिता ने उन्हें अपनी पसन्द के किसी आदरणीय आध्यात्मिक गुरु से कृष्ण मन्त्र की दीक्षा लेने की सलाह दी। विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर उन्होंने उत्तर दिया कि उन्होंने पहले से ही अम्बिका के प्रभु श्रीहृदय चैतन्य को अपना आध्यात्मिक गुरु मान लिया है। श्रीहृदयचैतन्य गौरीदास पंडित की शाखा से सम्बंधित थे और श्रीकृष्णचैतन्य और श्रीनित्यानन्द के सच्चे अनुयायी थे। दुखिया जानते थे कि श्रीगौर-निताई सदैव श्रीहृदय चैतन्य के निवास पर उपस्थित रहते थे अतः उन्होंने, उनसे दीक्षा ग्रहण करने का संकल्प लिया, किन्तु तभी जब उनके माता-पिता सहमति प्रदान करें। उन्हें पूर्वानुमान था कि उनके माता-पिता कभी नहीं चाहेंगे कि उनका युवा पुत्र अकेले इतने दूरस्थ स्थान की यात्रा करे परन्तु उन्होंने उन्हें बताया कि इस समस्या का समाधान पहले ही ढूँढ लिया गया है।

जब दण्डेश्वर के ग्रामवासी एकत्र हो कर गंगा स्नान को जायेंगे तो वे भी उनके साथ चले जायेंगे। उन्होंने पूर्ण उत्साह से अपने माता-पिता से याचना कर के इस प्रस्ताव पर समर्थन और आशीर्वाद मांगा। वे उनके प्रस्ताव से बहुत प्रसन्न हुए और सहर्ष आशीर्वाद दे दिया, ये मानते हुए कि यह सब प्रबंध श्री चैतन्य महाप्रभु की इच्छा से ही आयोजित हुआ है।

अम्बिका में श्रीहृदयचैतन्य ने बहुत उत्साह से बालक का स्वागत किया। उन्होंने उनका और उनके गांव का नाम पूछा, इसके उत्तर में बालक ने उन्हें

अपनी जीवन गाथा कह डाली। श्रीहृदयचैतन्य, दुखिया की आत्मकथा से बहुत द्रवित हो गये और उन्हें कृष्णदास नाम दिया। उन्होंने यह भी संकेत दिया कि जब वे वृन्दावन में रहेंगे तो उन्हें श्यामानन्द नाम से जाना जायेगा। दुखी कृष्णदास, यह नाम एक निष्कपट शिष्य के रूप मे प्रसिद्ध हो गया जिन्होंने गुरु की भगवान् के रूप में सेवा की। श्रीहृदयचैतन्य बहुत सन्तुष्ट हो गये। अपना शिष्य स्वीकार करते हुए, श्रीहृदयचैतन्य ने दुखी कृष्णदास को श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया और इस प्रकार कृष्णदास की सभी इच्छाएं पूर्ण हो गयीं।

श्रीश्यामानन्द शतक नामक ग्रन्थ श्रीश्यामानन्द प्रभु के जीवन की इन जानकारियों को प्रमाणित करता है।

श्रीश्यामानन्द प्रसन्नतापूर्वक अपने गुरु के निवास पर रहने लगे परन्तु कुछ समय बाद श्रीहृदयचैतन्य ने उन्हें वृन्दावन जाने का आदेश दिया। श्यामानन्द उदास हो गये क्योंकि वे अपने गुरु का घर नहीं त्यागना चाहते थे। तथापि श्रीहृदयचैतन्य ने प्रेमपूर्वक आलिंगन कर श्रीश्यामानन्द से वृन्दावन जाने का दृढ़ आग्रह किया।

अत्यधिक विलाप करते हुए दुखी कृष्णदास ने श्रीहृदयचैतन्य के चरणों में नतमस्तक होकर गृह त्याग दिया। प्रभु श्रीनित्यानन्द और श्रीचैतन्य महाप्रभु के बारे में कल्पना करते हुऐ उनके नेत्रों से प्रेम अश्रु बह निकले। अनेक प्रकार से विलाप करते हुऐ वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के सम्मुख भी नतमस्तक हुए और विदा होने की अनुमति मांगी। श्रीनवद्वीप और अन्य स्थलों की यात्रा करते हुए वे लगातार शुद्ध भक्ति सेवा पाने के लिये प्रार्थना करते रहे। जब वे गौड़-मण्डल पहुंचे तो भावावेश में चीत्कार कर के रोने लगे और उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी।

श्रीकृष्णदास, प्रभु श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीचैतन्य महाप्रभु का उच्च स्वर में नाम लेकर वियोग में रुदन करने लगे। वे बार-बार श्रीचैतन्य महाप्रभु और पावन गौड़-मण्डल से अनुकम्पा की याचना करने लगे। क्या कोई समझ सकता है कि उन्होंने श्रीगौड़-मण्डल से याचना क्यों की? विद्वानों का मत है कि श्रीगौड़-मण्डल स्वयं प्रभु श्रीनित्यानन्द ही हैं और उस पवित्र स्थान से सभी इच्छाऐं फलित होती हैं।

श्रीश्यामानन्द शतक ग्रन्थ में श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय द्वारा रचित एक गीत में कहा गया है कि, 'जिस किसी ने भी प्रभु श्रीचैतन्य के चरणकमलों को अपनी एकमात्र सम्पत्ति मान लिया है, वही आध्यात्मिक सेवा का वास्तविक सार जान सकता है। यदि कोई विनम्रता से श्रीचैतन्य प्रभु की मनभावन लीलाओं का श्रवण करता है तो तत्काल ही उसका हृदय सभी भौतिक मलिनताओं से स्वच्छ व निर्मल हो जाता है।"

'जो कोई भी बस एक बार श्रीचैतन्य महाप्रभु का नाम ले लेता है उसके हृदय में तत्काल दैवी प्रेम उत्पन्न हो जाता है।' मैं उन्हें कोटि-कोटि बधाई देते हुए कहूँगा, 'जय हो' जो कोई भी श्रीचैतन्य महाप्रभु के अति उत्तम गुणों को श्रवण कर परमानन्द की अनुभूति करते हुए रुदन करता है तो वह श्रीराधाकृष्ण के मध्य अनन्त प्रेम प्रसंग को तत्काल ही समझ सकता है।

जिस किसी ने भी यह समझ लिया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के सहभागी सदा ही जीवन मुक्त आत्मा हैं वह उसी समय, अगले जन्म के लिये वृन्दावन के नन्द महाराज के पुत्र श्रीकृष्ण के धाम में वास प्राप्ति की योग्यता पा लेता है। यदि कोई यह जान जाता है कि पशिचम बंगाल के गौड़-मण्डल, जहाँ श्रीचैतन्य प्रभु ने लीलाएं रचाईं और सिद्ध किया कि गौड़ मण्डल और अति श्रेष्ठ वृन्दावन धाम के वास में कोई अंतर नहीं। अत: जो गौड़ मण्डल में रहता है तो वह वास्तव में श्रीवृन्दावन में ही रहता है।

जो कोई भी श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा बहाई जाने वाली भक्ति रस के सागर की लहरों में गोते लगाता हुआ आनंदित होता है वह तत्काल श्रीश्रीराधा-माधव का अनन्य भक्त बन जाता है। ये महत्व नहीं रखता कि वह भक्त गृहस्थ है या जीवन से विरक्त होने वाली अवस्था में। यदि वह वास्तव में श्रीचैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन और अन्य गतिविधियों में भाग ले रहा है और वास्तव में समझ रहा है कि यह क्या है, तब वह व्यक्ति सदैव मुक्त है। नरोत्तम दास उसके संग की इच्छा रखते हैं।

श्रीश्यामानन्द प्रभु के अभिन्न विग्रह श्री नरोत्तम

बहुत से महान् भक्तों ने नरोत्तम दास ठाकुर महाशय और श्यामानन्द प्रभु का स्तुति गान किया है। अपने गुरु के आदेश का स्मरण करते हुए अति उत्सुकता से श्यामानन्द विभिन्न धार्मिक स्थलों से होते हुए सीधा वृन्दावन चले गये। उन्होंने वृन्दावन में ऐसी उत्कृष्ट आध्यात्मिक गतिविधियां प्रदर्शित कीं जिस कारण सब उनसे अत्यधिक तृप्त हो गये। स्वयं श्रीश्यामसुन्दर उनकी भक्ति से इतने प्रसन्न हुए कि दुखी कृष्णदास अब वृन्दावन में श्रीश्यामानन्द के नाम से पहचाने जाने लगे। क्योंकि श्रीजीव गोस्वामी श्रीश्यामानन्द को एक निष्कपट आध्यात्मिक सेवा में लगे वैष्णव के रूप में देखते थे तो उन्होंने उन्हें सभी गोस्वामीगणों के साहित्य की शिक्षा प्रदान की। वृन्दावन में श्रीचैतन्य महाप्रभु के सभी पार्षद भी अपने भक्तों की मण्डली में श्यामानन्द को पाकर अति प्रसन्न थे। श्यामानन्द वृन्दावन में जो भी गतिविधियां करते, अपने गुरु के आदेश से ही करते थे।

श्यामानन्द की वृन्दावन की गतिविधियों का समाचार सुनकर श्रीहृदय चैतन्य बहुत प्रसन्न हो जाते थे। उन्होंने जीव गोस्वामी को एक पत्र लिखा कि वे

श्रीश्यामानन्द को उन्हें सौंपते हैं। उन्होंने जीव गोस्वामी से प्रार्थना की कि वे श्रीश्यामानन्द की इच्छा पूर्ण करें और कुछ समय बाद उन्हें वापिस भेज दें।

उन्होंने श्रीश्यामानन्द को सलाह दी कि वे श्रीजीव गोस्वामी का अपने गुरु भाई की तरह सम्मान करें। उन्होंने श्रीश्यामानन्द को सावधान भी किया कि अध्यात्म सीखते हुए और अन्य वैष्णव जनों से व्यवहार करने में सजग रहें।

इन निर्देशों के साथ श्रीहृदयचैतन्य को आशा थी कि वे श्रीश्यामानन्द को सजग रखेंगे। श्रीश्यामानन्द ऐसे गुरु को पाकर स्वयं को बहुत भाग्यशाली अनुभव करते थे।

बहुत समय बाद श्रीश्यामानन्द बंगाल लौट आये और श्रीमुरारी एवं अन्य को उत्कल में दीक्षा प्रदान की। मैंने अधिक विस्तृत वर्णन न करते हुए ऐसे ही श्रीनरोत्तम और श्रीश्यामानन्द के अन्तरंग सम्बन्धों की संक्षेप में जानकारी देने का प्रयास किया है।

वृन्दावन में श्रीनरोत्तम प्रेम और भक्ति की नदी में गोते लगा रहे थे परन्तु गुरु की इच्छा से उन्होंने बंगाल के लिये वृन्दावन को त्याग दिया। मैं बाद में बताऊंगा कि वे गौड़ देश कैसे गये। वहाँ श्रीनरोत्तम दास के श्रीवसन्त नाम के एक शिष्य थे, जिनका जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ और वे एक महान् कवि थे। उन्होंने कुछ गीतों की रचना की जिसमें उन्होंने श्रीनरोत्तमदास ठाकुर की यात्रा का वर्णन किया है।

श्रीवसन्त ने एक गीत में कहा है कि, 'हे नरोत्तम प्रभु, श्रेष्ठ गुणों के महासागर! मैं नहीं जानता कि ईश्वर ने आपके उदार शरीर की रचना कैसे की, जिसने स्वर्ण कमल के पुष्प के मद को भी पराजित कर दिया। गौरांग के प्रेम में दीवाने, सम्पूर्ण वैभव का त्याग करने वाले और वृन्दावन के जीवन का आनन्द लेने वाले श्रीनरोत्तम दास ने स्वयं को श्रीलोकनाथ प्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया। उन पर अनुग्रह कर, श्रीलोकनाथ प्रभु ने उन्हें मोहित कर के गौड़ देश भेज दिया, जो बंगाल जाकर फिर नीलाचल गये और वहाँ से वापिस गौड़ देश लौट आये। श्रीलोकनाथ प्रभु के पार्षदों ने उन पर अनुग्रह किया और उन पर कई गीतों की रचना की। श्रीनरोत्तम दास के सेवक वसंत यह कहते हैं कि उन्होंने विधर्मी दुष्ट आत्माओं को शांतिप्रिय भक्तजन बनाकर सुधारा है।'

इस प्रकार श्रीवसंत ने श्रीनरोत्तम प्रभु के श्रेष्ठ गुणों का वर्णन किया है। श्रीलोकनाथ ने श्रीनरोत्तम दास को श्रीश्रीगौरांग-कृष्ण के श्रीविग्रह की देख-रेख करने, वैष्णवों की सेवा करने और जब तक बंगाल में हों तो संकीर्तन करने का निर्देश दिया।

उस आदेश का पूर्ण निष्कपटता से अनुसरण करते हुए, नरोत्तम दास ने एक समय पर एक साथ छः श्रीविग्रहों की सेवा की। इन छः अति सुन्दर श्रीविग्रहों के नाम थे: श्रीगौरांग, श्रीवल्लभी-कान्त, श्रीकृष्ण, श्रीव्रज-मोहन,

श्रीराधा-रमण और श्रीराधा-कान्त। वे श्रीविग्रह की सेवा करते समय अत्यधिक दृढ़ रहते थे और उन्होंने स्वयं को पूर्णत: वैष्णव सेवा के लिए समर्पित कर दिया था।

सभी श्रेणी के लोगों को नरोत्तम दास द्वारा किये जाने वाले कीर्तन में अत्यंत आनन्द प्राप्त होता था। गौड़ देश में श्रीगौरांग के सभी पार्षद श्रीनरोत्तम दास को अपने मध्य में पाकर अति प्रसन्न थे। श्रीनित्यानन्द की पत्नी श्रीमती जाह्नवा देवी को सम्पूर्ण विश्व ने बहुत आदर व प्रेम दिया। वह आध्यात्मिक विषयों में बहुत निपुण थीं और श्रीनरोत्तम दास से बहुत स्नेह करती थीं। वह उनके भक्ति में अत्यधिक झुकाव से और उनकी भौतिक अनासक्ति से पूर्णत: सन्तुष्ट थीं। उनकी कृपा से श्रीनरोत्तम दास वापिस खेतुडी गांव आ गये और वहाँ के निवासियों को अपना साहचर्य प्रदान किया।

मैं एक अयोग्य व्यक्ति हूँ अत: श्रीमती जाह्नवा देवी द्वारा श्रीनरोत्तम दास पर जो दिव्य कृपा बरसाई गई, मैं कैसे उसका वर्णन कर सकता हूँ। श्री ठाकुर महाशय एक उदार व्यक्ति थे। जिस किसी को भी उनका अनुग्रह मिलता उसको लगता था कि उसकी सब कामनाऐं पूर्ण हो गयीं। गंगा नारायण और सन्तोष आदि बहुत से लोग उनके शिष्य बन गये। उनके अद्‌भुत प्रवचनों के लिये सारा श्रेय श्रीनरोत्तम दास को जाता है।

श्री गोविन्द कविराज ने श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की स्तुति में कुछ ग़ीतों की रचना की। अपने गीतों में वे कहते हैं, 'प्रेम और भक्ति के साम्राज्य के राजा श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की जय हो, जिनका स्वभाव श्रीरामचन्द्र कविराज के समान है। वे भगवद् प्रेम के शिरोमणि हैं और उनका आवेग उनका भूषण है। वे खेतुड़ी की प्रेम गद्दी पर अपने भक्तों के पास विराजते थे। वे सदा स्वयं को श्रीश्रीराधामाधव की सेवा में और श्रीरूप और श्रीसनातन के ग्रन्थों को समझाने में व्यस्त रखते थे। वे सदा ये परवाह किये बिना कि क्या धार्मिक है और क्या अधार्मिक, उदारतापूर्वक संकीर्तन में मग्न रहते। भागवत और अन्य ग्रन्थों के विद्वान् होने से उनके स्पष्टीकरण अन्य सभी पण्डितों के तर्कों पर ग्रहण लगा देते थे। वे नास्तिक लोगों के लिये संकट थे और निर्धनों के लिये प्रेम के संरक्षक थे।'

सिर्फ मैं, गोविन्ददास ही अयोग्य व्यक्ति हूँ जो उनका अनुग्रह प्राप्त न कर सका।

श्रीगोविन्ददास

श्रीरामचन्द्र कविराज के छोटे भाई थे गोविन्द। प्रत्येक व्यक्ति ने गोविन्द की सब प्रकार के धर्मग्रन्थों के सम्बन्ध में बहुमुखी प्रतिभा की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने अनेकों अमृतमयी भजनों की रचना की जिन्होंने श्रीजीव और

श्रीलोकनाथ को आनन्दित किया।अपने भजनों में वे गिन-गिन कर ब्रज के गोस्वामीगणों की स्तुति करते और इसलिये श्रीलोकनाथ और श्रीजीव ने उन्हें कविराज की उपाधि प्रदान की।

मलयागिरि जैसे श्रीगोविन्द कविराज के बसन्त ऋतु की उद्विग्न कर देने वाली पवन के समान गाये जाने वाले छन्दों की महक से श्रीजीव गोस्वामी और उनके भ्रमर जैसे शिष्यों का मनोरथ रूपी वृक्ष मंत्रमुग्ध हो जाता और वृन्दावन वासियों को उन्मत्त कर देता था। इससे अधिक और कौनसी गतिविधि प्रशंसा योग्य है?

ब्रज से श्रीजीव गोस्वामी बार बार पत्र लिखकर श्रीगोविन्द दास को अन्य काव्य की रचना करने का आग्रह करते। श्रीगोविन्द कविराज आग्रह के उत्तर में और आनन्दमयी भजन भेज देते। इसकी चर्चा मैं बाद में पुनः करूँगा, अभी मैं इतना कहूँगा कि श्रीगोविन्द कविराज वैष्णवों के जीवन का केन्द्र थे। उनके द्वारा रचित काव्य के सुगन्ध और सौन्दर्य में वृद्धि हुई और श्रीनरोत्तमदास, श्रीरामचन्द्र कविराज एवं अन्य सदैव इनके रसास्वादन में मग्न होते रहे।

सच्चे वैष्णव राजा हरि नारायण किसी अन्य व्यक्ति का इतना सम्मान नहीं करते थे जितना कि श्रीरामचन्द्र का। मैंने स्वयं गहराई में जाकर राजा हरि नारायण की श्रीरामचन्द्र द्वारा अथवा अन्य लोगों की श्रीहरि नारायण के द्वारा दीक्षा की जाँच की।

श्रीगोविन्ददास ने रामचरित नामक ग्रन्थ की रचना की और उसे श्रीहरि नारायण को समर्पित कर दिया। उस ग्रन्थ के एक भजन के शब्द हैं, 'राम रघुनन्दन की जय हो, जो कि जनक सुता के प्रियतम नाथ हैं और अनन्तकाल से देवों, मनुष्यों, वानरों और उड़ने वाले जीवों और रात्रि के समय यात्रा करने वालों के इष्ट हैं।' जिनका रंग रूप हरी घास और वर्षा ऋतु के नवजात मेघ के वर्ण का मिश्रण हैं और जिनके नेत्र काजल के समान काले हैं।

अपने बाणों को अपने दाएं कन्धे पर और अपने धनुष को अपने बाऐं कन्धे पर रख कर, वे युद्ध के समय भी पूर्णतः शांत रहते। उनका चरित्र सागर की तरह गम्भीर है। उनकी जय जयकार हो, जिनके भाई ने छत्र की छांव और चर्म से पंखा झलकर उनके चरण पादुका को पूजा। ये वो भगवान् हैं जिनका श्रीशिव, श्रीब्रह्मा, श्रीसनक, श्रीसनातन और अन्य देवताओं ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया। उनकी जय जयकार हो जिन्हें श्रीमारुति नन्दन एकमात्र भगवान् मान कर पूजते हैं। मैं, गोविन्द दास हमेशा इस सत्य को हृदय में आत्मसात करता हूँ कि राजा हरि नारायण उनके सशक्त प्रतिनिधि हैं।

श्री सन्तोष दत्त के आदेश से राजा हरि नारायण ने संगीत माधव नामक नाटक लिखा। इसमें श्रीश्रीराधा-कृष्ण के प्रणय-निवेदन का इतनी सुन्दरता से वर्णन किया गया है कि श्री सन्तोष दत्त मन्त्रमुग्ध हो गये।

श्रीसन्तोष दत्त

मैं आशा करता हूँ कि मेरे सुधी पाठक, श्रीसन्तोष दत्त की आत्मकथा सुनकर बहुत सन्तुष्ट होंगे। गोपालपुर की राजधानी में पद्मावती नदी के तट पर राजा कृष्णानन्द दत्त और पुरुषोत्तम दत्त रहते थे, दोनों ही महान् व्यक्तित्व थे। कृष्णानन्द दत्त पुरुषोत्तम दत्त के छोटे भाई थे और लोग दोनों के मध्य प्राय: आत्मीय सम्बन्ध देखना पसन्द करते थे। श्रीनरोत्तम दास श्री कृष्णानन्द के पुत्र थे जिनका चरित्र वर्णन पहले ही किया जा चुका है। श्रीसन्तोष श्रीपुरुषोत्तम के पुत्र और श्रीकृष्णानन्द के भतीजे थे और विभिन्न व्यवस्थाओं के क्रियान्वयन में कुशल थे। इस कारण उनका बंगाल के राजा, राज्य के मंत्रियों और विषयों पर प्रभुत्व था। हर कोई उनकी आज्ञा मानता क्योंकि वे इतने दयालु थे कि सभी उनसे प्रेम करते। साथ ही वे एक सम्माननीय विद्वान् थे जिन्हें धर्मग्रन्थों के पठन पाठन में आनन्द प्राप्त होता था। वे श्रीनरोत्तम दास के भाई और शिष्य थे और सदैव अपने गुरु, श्रीकृष्ण और वैष्णवजनों की सेवा में रत रहते थे।

श्री संगीत माधव नाटक में श्रीसन्तोष दत्त का जीवन इन्हीं शब्दों में वर्णित है: 'इस संसार में श्री सन्तोष दत्त से अधिक भाग्यशाली सज्जन कौन हो सकता है, जिन्होंने श्रीश्रीराधा-माधव का आशीष स्वयं के भक्ति पूर्ण प्रयासों से अर्जित किया और उनके स्वरूपों को अपने कमल समान हृदय में विराजित कर सके?'

'श्री सन्तोष दत्त से अधिक और कौन कृपापात्र है, जिसने अपनी शुद्धता के तेज से और सांसारिक लोगों की भलाई के संकल्प से श्रीश्रीराधा-माधव के श्रीविग्रह की वास्तविक पहचान को प्रकट किया। अहा! श्री सन्तोष दत्त के दिव्यतम प्रयासों से श्रीगौरांग, श्रीश्रीराधा-रमण, श्रीश्रीराधा-कान्त स्वयं प्रकट हो गये। अहा! श्रीनरोत्तमदास के निवास पर कितनी दिव्यतम गोष्ठियां, तार्किक परिचर्चाऐं और गुरु की निष्कपट सेवा उपासना आदि संचालित होने लगीं। श्रीसन्तोष के चरणों के अलावा ऐसा कोई सुरक्षित स्थान नहीं था जहाँ वास्तविक भक्तों और क्लेशग्रस्त जनों को शान्ति मिल सकती थी। लोग श्रीसन्तोष की अद्भुत भक्ति सेवा के लिये प्रशंसा करते थे। कुछ लोग मानते थे कि निश्चित ही उनके पास कोई अलौकिक शक्तियां हैं जो उन्हें कठोर भक्ति मार्ग में बांधे हुए हैं। बिना किसी ऐसी शक्ति के कोई कैसे इस प्रकार भक्ति गुण को एकत्र कर सकता है? अन्य लोग मानते थे कि यह श्रीनरोत्तमदास और श्रीरामचन्द्र कविराज की अनुकम्पा थी जिसने सन्तोष को अध्यात्म के क्षेत्र में सफलता पाने के लिये सशक्त किया।'

श्रीसन्तोष के अद्भुत प्रयासों के बारे में कहने को तो बहुत कुछ है परन्तु मैं विस्तार भय से अधिक नहीं बता सकूँगा। श्री गोविन्द कविराज में उनका

अनुराग यह दर्शाता है कि वे केवल शरीरिक रूप से अलग थे परन्तु आंतरिक गुणों और स्वभाव में वे समकक्ष थे। श्रीकविराज और श्रीनरोत्तम दास ने अपना जीवन इन्हीं विद्वान् और योग्य भक्तों के साथ खेतुड़ी गांव में बिताया।

जो कोई भी हृदय से इन भक्तों की वास्तविकता समझ सकता है उसे भगवान् श्रीकृष्ण का अनुग्रह अवश्य प्राप्त होता है। श्रीरामचन्द्र ने कैसे सेवाऐं दी थीं, इसका वर्णन मैं बाद में करूँगा परन्तु अभी श्री गोकुलानन्द के जीवन का वर्णन करूँगा।

श्रीगोकुलानन्द

प्रेम और भक्ति के दाता द्विज श्रीहरिदास, श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु के प्रिय और पार्षद थे। श्रीहरिदास उच्चकोटि के निपुण और अनुभवी भक्त थे जो दिन और रात हर समय संकीर्तन में संलग्न रहते। उनके पुत्र, श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास बचपन से ही होनहार थे।

उन्होंने शास्त्रों की अपनी शिक्षा अल्प अवधि में ही पूरी कर ली और संकीर्तन में मग्न हो जाना उन्हें बहुत प्रिय था।

श्रीगोकुलानन्द को श्रीनिवास आचार्य की पूर्ण अनुकम्पा प्राप्त थी। अपने पिता के आदेश पर उन्होंने श्रीआचार्य से दीक्षा ग्रहण की और सच्ची निष्ठा से उनकी सेवा की। उनके छोटे भाई श्रीदास भी महान् भक्त थे, जिन्होंने उनका अनुसरण किया। श्रीनिवास आचार्य स्नेही व्यक्ति थे जो अपना दिन अपने शिष्यों के साथ आनन्द पूर्वक बिताते थे। वे उन्हें आध्यात्मिक विषयों में परामर्श देते और श्रीकृष्णचैतन्य के प्रति उनका आकर्षण बढ़ाने का प्रयास करते।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीगोकुलानन्द की प्रतिभा को पूरे विश्व ने सराहा। श्रीनिवास की आत्मकथा श्रवण करने की वैष्णवों की अभिलाषा कभी तृप्त नहीं होती थी। मैं नहीं समझ सकता कि वैष्णवजनों ने क्यों मुझ जैसे अज्ञानी व्यक्ति को इस विषय में लिखने के लिये पसन्द किया, परन्तु कृपया मुझे सुनिये, क्योंकि वैष्णवजनों ने मुझे आपको ये सब कथाएं बताने का आदेश दिया है। यह मेरा निजी मत है कि जो कोई भी ध्यानपूर्वक इन प्रसंगों का श्रवण करेगा उसे निश्चित ही श्रीगौर का अनुग्रह प्राप्त होगा जो कि स्वयं श्रीब्रजेन्द्रनन्दन हैं। जो कोई भी उत्साहपूर्वक इन कथाओं को अन्य को श्रवण करायेगा उसे निस्संदेह प्रभु श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत की अनुकम्पा प्राप्त होगी। जिसमें भी श्रीगदाधर प्रभु, श्रीनिवास और अन्यों के प्रति आदर भाव है, उसे निश्चित ही भक्ति रूपी अनमोल रत्न प्राप्त होगा और जिस किसी को इनके भक्ति गुणों में कोई विश्वास नहीं वह निश्चित ही विनाश को प्राप्त हो जायेगा।

कृपया श्रीनिवास जी की आत्मकथा सुनें, ऐसा करने से आप की सभी कामनाएं पूर्ण होंगी। इस चर्चा से आपको अत्यधिक आनन्द प्राप्त होगा।

पाठको, अब इस विषय का बारम्बार रसास्वादन कीजिये क्योंकि ये आपको सभी चिंताओं से शान्ति व मुक्ति प्रदान करेंगे। प्राधिकारी वर्ग ने इस ग्रन्थ का नाम 'भक्ति-रत्नाकर' रखा क्योंकि इसमें छंदो की अनेकों लहरें हैं।

हे पाठको! अनेक भक्तों के श्रीचरणों को अपने मस्तक पर धारण कर, 'भक्ति-रत्नाकर' की लहरों में गोते लगाओ। भक्ति एक भक्त का अधिकार है परन्तु ये एक भक्त के लिये केवल तभी प्राप्य है जब वह अन्य व्यक्तियों को भी इसे प्राप्त करने में सहायता करता है।

भक्ति भाव की श्रीविग्रह भक्ति देवी की जय हो, जिनका आशीष विनम्रतापूर्वक चाहता हूँ। उनकी कृपा के बिना मेरी कोई कामना पूर्ण नहीं हो सकती।

यदि कोई व्यक्ति दीर्घकाल से धर्म-कर्म के कार्य में लगा हो तो भी उसके लिये यह सम्भव नहीं कि उसे श्रीकृष्ण चरण सेवा प्राप्त हो। यदि कोई श्रीकृष्ण भक्ति रूपी रत्न को प्राप्त करना ही चाहता है तो उसे प्रयास करना चाहिये कि आध्यात्मिक गतिविधियों में वह हर समय लीन रहे। मैं ऐसे व्यक्ति को सावधान करूँगा कि वह भक्ति रूपी रत्न को अपने हृदय में आत्मसात रखे क्योंकि सभी शास्त्रों के अनुसार भक्ति इस संसार में अत्यधिक अमूल्य परिग्रह है। ज्ञान के द्वारा मुक्ति प्राप्त करना सरल है और श्रीविग्रह को प्रसाद आदि पवाकर कामनायें पूर्ण की जा सकती हैं, पर यदि जीवन पर्यन्त धार्मिक गतिविधियाँ और योग अभ्यास शुद्ध भाव से किया जाये तो भी भगवान् श्रीहरि की भक्ति, जो कि संसार में सर्वाधिक अमूल्य अधिकार है, प्राप्त करना सरल नहीं है।

भक्ति की यथार्थ महानता को कौन जान सकता है? इस उद्देश्य हेतु श्रीचैतन्य महाप्रभु ने इस संसार में अवतार लिया कि वे भक्ति के वास्तविक माधुर्य का रसास्वादन कर सकें। मेरी कामना है कि मैं उन सब आपदाओं में अपने प्राण त्याग सकता जो उस दिव्य अवतार के साथ बीतीं और जिसने मुझ जैसे नीच को भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों की सेवा रूपी निधि का स्वामी बना दिया। मैं इसे अपने हृदय में आत्मसात करना चाहता हूँ क्योंकि मुझे भय है कि कहीं सांसारिक मोह-माया में बंधकर मैं इसे खो न दूँ।

श्रीमद्भागवत (5.6.18) के अनुसार: 'मेरे प्रिय राजा, महान व्यक्ति, मुकुन्द वास्तव में पांडवों के सभी सदस्यों और यदुवंशियों के अनुरक्षक हैं। वे तुम्हारे आध्यात्मिक गुरु हैं, पूजनीय देव हैं, मित्र हैं और तुम्हारी गतिविधियों के निर्देशक हैं। इससे ज्यादा मैं क्या कहूँ कि कभी-कभी वे सेवक या सन्देशवाहक के रूप में तुम्हारे परिवार की सेवा करते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि वे सामान्य सेवक की तरह कार्य करते हैं। जो प्रभु की अनुकम्पा पाने में लीन रहते हैं उन्हें सरलता से मुक्ति मिल जाती है, परन्तु वे अपनी सेवा का सौभाग्य किसी को इतनी सरलता से नहीं देते।'

यहाँ तक कि ब्रह्मा जी भी जिस मोक्ष को प्राप्त करने में असफल रहे, उसे कौन पा सकता है फिर भी यह श्रीकृष्ण चैतन्य के अनुग्रह से उपलब्ध हो जाता है।

श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीबलराम के अवतार थे और श्रीअद्वैत महा-विष्णु के अवतार थे। उनकी अनुकम्पा वितरण की विधियों ने सम्पूर्ण विश्व को भक्तिमय कर दिया। श्रीगदाधर पंडित और अन्य जो कि भगवदीय कृपा से सशक्त थे, उन्होंने भी लोगों को श्रीकृष्ण भक्ति प्राप्त करने में सहायता करना अपना सौभाग्य माना। श्रीनिवास और श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्य भक्तजनों ने भी हर वर्ण के लोगों में भक्ति का संचार किया।

श्रीगौर के स्वगुणों का वर्णन कौन कर सकता है, जो कि प्रेम और भक्ति के महानतम संरक्षक थे? उन्होंने स्वयं अपने भक्तों में भक्ति का संचार कर उन्हें सशक्त किया कि वे हर किसी को वर्ण और पन्थ के भेदभाव के बिना शिक्षित कर सकें। सब जगह पर भक्ति प्रचार के मिशन के लिये अपने सहयोगियों को अलग-अलग स्थानों पर मण्डली बना कर स्थापित होने का निर्देश दिया।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीरूप और श्रीसनातन को पशिचम में भेजा ताकि वे अनेक ग्रन्थों का प्रचार कर सकें। उन्होंने कई ग्रन्थ लिखे जैसे कि, 'श्री हरि-भक्ति-विलास' जिसमें उन्होंने भक्ति दर्शनशास्त्र के अनेक पहलुओं के बारे में बताया। उन्होंने 'श्रीभक्ति-रसामृत-सिन्धु' नामक ग्रन्थ लिखा, जो आध्यात्मिक दर्शनशास्त्र का एक प्रामाणिक ग्रन्थ है और जो भक्तों को अत्यंत आनन्द प्रदान करता है। ये दो वैष्णवजन श्रीचैतन्य महाप्रभु के अतिप्रिय सहभागी थे। उनकी स्मृति इन्हें प्रसन्नता प्रदान करती थी और भगवान् श्रीकृष्ण का अनुग्रह प्राप्त करने में सहायता करती थी।

श्रीजीव गोस्वामी और उनके पार्षद, धार्मिक ग्रन्थ लिखते हुए विश्व को मन्त्रमुग्ध करते रहे थे। श्रीजीव गोस्वामी के आध्यात्मिक गुणों का वर्णन कौन कर सकता है, जो कि श्रीसनातन गोस्वामी के अत्यन्त प्रिय थे। श्रीसनातन गोस्वामी एक महान् व्यक्तित्व थे, जिनकी श्रीमद्भागवत में अगाध प्रीति थी। जब वे युवा थे तो ब्रह्मा जी उनके स्वप्न में आये और उन्हें श्रीमद्भागवत की हस्तलिपि प्रदान की। जब वे स्वप्न से जागे तो पाया कि वहाँ कोई ग्रन्थ नहीं है तो अत्यंत व्याकुल हो गये परन्तु बाद में उसी प्रातः ब्रह्मा जी ने वास्तव में उन्हें वह ग्रन्थ प्रदान किया।

श्रीसनातन श्रीमद्भागवत को पाकर इतने उत्साहित हो गये कि भक्ति रूपी सागर में हर्षोन्मत्त होकर डुबकियाँ लेने लगे।

जो भी अनुभूति उन्हें श्रीमद्भागवत से प्राप्त हुई उसे उन्होंने अपने ग्रन्थ 'श्री वैष्णव तोषिणी' में व्यक्त किया है। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीसनातन गोस्वामी

के जीवन इतिहास का वर्णन अपने ग्रन्थ 'लघु तोषिणी' में किया है। यद्यपि श्रीजीव ने श्रीसनातन गोस्वामी के ग्रन्थ वैष्णव तोषिणी का संपादन किया है, पर वे श्रीसनातन गोस्वामी के बारे में और अधिक बताना चाहते थे, इस कारण उन्होंने श्रीलघु तोषिणी की रचना की।

श्रीजीव गोस्वामी की सात पीढ़ियां

अब मैं श्रीजीव गोस्वामी के परिवार की सात पीढ़ियों का परिचय करवाऊँगा। एक बार सर्वजन सतगुरु नामक एक विख्यात ब्राह्मण थे जो कि भारद्वाज गोत्र के बड़े सम्मानीय यजुर्वेदी ब्राह्मण थे। वे कर्नाटक के राजा थे और अपने समकालीन सभी राजाओं के इष्ट थे। वे सभी वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् थे और बहुत ही सौभाग्यशाली व्यक्ति थे।

उनके पुत्र श्रीअनिरुद्ध देव भगवान् इन्द्र के समान यशस्वी थे और चन्द्रमा के समान प्रख्यात थे। वे वेदों के निपुण पण्डित और उस समय के राजाओं के प्रिय थे। उनकी दो रानियाँ भी विख्यात थीं। अनिरुद्ध देव के दो पुत्र, रूपेश्वर और हरिहर अपने आध्यात्मिक गुणों के कारण अति आदरणीय हो गये थे। बड़े भाई रूपेश्वर ने शास्त्रों के विद्वान् के रूप में ख्याति अर्जित की जबकि हरिहर अस्त्र कला में विशेषज्ञ हो गये थे। उनके विवाह के उपरान्त राज्य के शासन की जिम्मेदारी उन्हें सौंप कर पिता जी ने प्राण त्याग दिये। यद्यपि जल्दी ही छोटे भाई ने बड़े भाई के हाथों से शासन प्रबन्ध छीन लिया। सभी शक्तियाँ खोकर रूपेश्वर और उनकी पत्नी आठ घोड़ों द्वारा खींचे जाने वाले रथ पर यात्रा करते हुए पौलस्त्य देश आ गये। श्री शिखरेश्वर ने उनसे मित्रता की और वहीं रहने के लिये राजी कर लिया।

श्रीरूपेश्वर के पुत्र पद्मनाभ बहुत ही सुन्दर और प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। वे सरलता से चारों वेदों में दक्ष हो गये और केवल इसी कारण से विख्यात हो गये। निर्मल चरित्र वाले पदम्नाभ निष्कपटता से भगवान् श्रीजगन्नाथ के प्रेम में लीन रहते थे। पदम्नाभ शिखर भूमि को त्याग कर गंगा नदी के तट पर वास करने को निकल पड़े। वे नैहट्टी नामक गांव में रहे। नैहट्टी में पदम्नाभ ने श्री पुरुषोत्तम के श्रीविग्रह की उपासना की। एक त्याग के प्रदर्शन पर उन्हें अठारह पुत्रियां और पाँच पुत्र प्राप्त हुए।

उनके पाँच पुत्रों के नाम थे पुरुषोत्तम, जगन्नाथ, नारायण, मुरारी और मुकुन्द। उनके बड़े पुत्र पुरुषोत्तम और छोटे पुत्र मुकुन्द पाँचों भाइयों में अनुभव और चरित्र के अर्थ में सर्वश्रेष्ठ थे। श्रीमुकुन्ददेव के पुत्र श्रीकुमार ब्राह्मण कुल के दीपक और बहुत धार्मिक व्यक्ति थे। वे अपने आप को सदैव निजी तौर पर साधना में व्यस्त रखते थे, उन्हें भय हो गया था कि कोई बुरी आत्मा उनके समक्ष न आ जाये। यदि संयोग से कोई अहिन्दू सामने से चला आता था तो वे तत्काल

कुछ तपस्या में लग जाते और चावल नहीं खाते थे। कुछ पारिवारिक कष्टों के कारण वे कुछ परेशान हो गये और अपना गांव नैहट्टी त्याग दिया।

श्रीकुमार अपने अनुयायिओं के साथ आज के बंगलादेश गये और वहाँ के एक गांव बक्ल-चन्द्रद्वीप में बस गये। वहाँ जैस्सोर जिले में फतेहवाड़ा नाम का एक गांव था, जहाँ उन्होंने विभिन्न स्थानों के वैष्णवों के लिये एक घर बनवाया।

श्रीसनातन-श्रीरूप-श्रीवल्लभ

श्रीकुमार देव के अनेक पुत्रों में श्रीसनातन, श्रीरूप और श्रीवल्लभ भी थे जो कि वैष्णव सम्प्रदाय का प्राण थे। लघु तोषिणी ग्रन्थ में इसका वर्णन किया गया है। श्रीसनातन, श्रीरूप और श्रीवल्लभ अनन्य भगवद् भक्त थे। श्रीसनातन अग्रज थे, श्रीरूप मंझले और श्रीवल्लभ तीनों में सबसे अनुज भ्राता थे। उनके पुत्र थे श्रीजीव गोस्वामी। यदि मैं तीनों भाइयों के पारस्परिक सम्बन्धों का वर्णन करूँगा तो यह ग्रन्थ अत्यधिक विशाल हो जायेगा।

बंगाल के मुस्लिम राजा ने अपने विशेषज्ञ से सुना कि मंत्री पद ग्रहण के लिये श्रीसनातन और श्रीरूप उपयुक्त हो सकते हैं। इसके बाद उसने श्रीसनातन और श्रीरूप को अपने मंत्रीमण्डल में दो महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त कर दिया। राजा के भय से उन दोनों ने उस पद को स्वीकार कर लिया और उसका प्रभाव बढ़ाने में सहायता की। राजा उनसे इतना संतुष्ट हुआ कि उसने अपना राज्य दोनों में बांट दिया और अपनी रियासत का भोग करने की अनुमति प्रदान की। श्रीरूप और श्रीसनातन अपनी धन सम्पत्ति लेकर बंगाल के एक गांव रामकेलि में रहने चले गये।

विभिन्न देशों के विद्वान् श्रीरूप और श्रीसनातन के दरबार में आते थे। वहाँ अनेकों गायक, वादक, नर्तकियां और कवि भी श्रीरूप और श्रीसनातन के दरबार में सेवा करते थे। वे राज्य की भलाई के लिये खुलकर धन व्यय करते थे परन्तु उन्होंने कभी किसी को हानि नहीं पहुँचाई। वे अपना निजी समय शास्त्रों की चर्चा, पठन, पाठन और विद्वद्जनों के साथ परिचर्चा में बिताते थे। यदि कोई विद्वान् 'न्याय-शास्त्र' पर ग्रन्थ लिखता, वह उसे तब तक पूर्ण नहीं मान सकता था, जब तक उसके कार्य को श्रीरूप और श्रीसनातन अनुमोदित न कर दें।

देश के सभी विद्वान् दोनों भाइयों की शैक्षणिक योग्यता की भूरि-भूरि प्रशंसा करते थे। जैसे-जैसे उनकी ख्याति बढ़ी, कर्नाटक और अन्य देशों के ब्राह्मण उनके दरबार में आने लगे। श्रीरूप और श्रीसनातन ने अपने राज्य के ब्राह्मणों के लिये गंगा जी के निकट आवास की व्यवस्था कर दी। भट्ट श्रेणी के ब्राह्मण जो भट्टबाटी गांव में रहते थे वे विभिन्न शास्त्रों के विद्वान् थे। रामकेलि के ब्राह्मणों ने श्रीरूप और श्रीसनातन की बहुत सी महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ पूर्ण

करने में सहायता की। श्रीरूप और श्रीसनातन बड़ी निष्ठा और दीनता से वैष्णव जनों की सेवा करते रहते थे। नवद्वीप से आने वाले ब्राह्मण उनके लिये अति आदरणीय थे।

श्रीसनातन के गुरु

श्रीविद्यावाचस्पति, श्रीसनातन के आध्यात्मिक गुरु थे और वे समय-समय पर रामकेलि में प्रवास करते थे। श्रीसनातन ने उनकी शरण में रहकर अनेक ग्रन्थों का अध्ययन किया और उनके मन में श्रीविद्यावाचस्पति के लिये अगाध सम्मान था। उन्होंने बहुत सम्मान के साथ अपने ग्रन्थ 'श्री दशम टिप्पणी' में उनका नाम उल्लिखित किया है। श्रीरूप और श्रीसनातन द्वारा किये गये अद्वितीय कार्यों के वर्णन करने की क्षमता किसमें है?

उनके आवास के पास, एक एकांत स्थान पर 'कदम्ब कानन' नाम का एक बाग था और उसके भीतर राधाकुण्ड और श्यामकुण्ड की प्रतिकृति थी। श्रीरूप और श्रीसनातन वृन्दावन की लीलाओं का स्मरण करते और ऐसा करते हुए प्रेमाश्रु बहाने लगते। वे सदैव अपने श्रीश्रीराधा माधव के श्रीविग्रह की सेवा में लीन रहते और श्रीकृष्णचैतन्य से मिलने को आतुर रहते, जो उस समय नदिया में वास करते थे।

उन्हें मुस्लिम राजा के यहाँ नौकरी करने का पछतावा था और उनके पिता जी सदा उनके एक मुस्लिम की सेवा करने के अपमान का प्रायश्चित्त करते रहते थे। वे जो कार्य करते और जिस तरह की उनकी संगति थी, वे अपनी अवस्था पर विलाप करते रहते थे क्योंकि वे अपने आप को राजा से उत्तम नहीं समझते थे। वे अपने आप को अयोग्य समझते थे क्योंकि वे अपने परम प्रभु के बजाय यवनों के राजा की सेवा में लगे थे। यद्यपि वे एक ब्राह्मण राजा के वंशज थे परन्तु वे स्वयं को ब्राह्मण नहीं मानते थे।

जो भी श्रीचैतन्य महाप्रभु की अनुकम्पा प्राप्त करता उसका व्यवहार नम्र हो जाता। एक भक्त कभी स्वयं को महान् नहीं समझता परन्तु सदा विनम्रता ग्रहण करता है। श्रीचैतन्य महाप्रभु स्वयं स्वामी होकर भी एक भक्त की तरह विनम्र रहते। श्रीगौरचन्द्र जानते थे कि प्रसन्नता मानव स्वभाव में ही निहित है और उन्होंने अपने शिष्यों को भी यही गुण सिखाया था। केवल श्रीकृष्णचैतन्य ही श्रीरूप और श्रीसनातन के विचारों को समझ सकते थे।

अपने शिष्यों के उत्कट प्रेमयुक्त वातावरण से दूर श्रीगौरचन्द्र श्रीरूप और श्रीसनातन से मिलने रामकेली चले गये। रामकेली के लोग, यहाँ तक कि यवनों की भी भीड़ स्वामी के दर्शन करने को एकत्र होने लगी। श्रीरूप और श्रीसनातन की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा, वे गुप्त रूप से श्रीचैतन्य प्रभु से मिलने गये और उनके चरण कमलों में गिर गये। अपने मुख में तृण दबाकर दोनों भाई इतने

आत्मीय भाव से श्रीचैतन्य प्रभु से मिले कि वहाँ एकत्र सभी भक्तों के हृदय में करुणा पूर्ण भाव भर गया। 'श्रीचैतन्यचरितामृत' से एक उद्धरण यह बतलाता है कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, 'अपनी मानवता का परीक्षण कीजिये। मैं तुम्हारी दयनीय दशा देखकर अत्यन्त खिन्न हूँ।'

यद्यपि श्रीरूप और श्रीसनातन एक सम्मानीय परिवार से थे और अत्यंत शक्तिशाली होने पर भी उन्होंने स्वयं को यवनों से निम्न मानकर इतनी दीनता दिखाई। यह सब देखकर ब्राह्मण और अन्य सभी चकित रह गये। यह कौन समझ सकता था कि श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने प्रिय शिष्यों के साथ सम्पूर्ण मानव जाति के लिये एक आदर्श स्थापित कर रहे थे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीरामानन्द के घर पर रहते हुए कन्दर्प का अभिमान पूर्णतः विनष्ट कर दिया था। उन्होंने श्रीदामोदर के निवास पर अपनी तटस्थता दिखाई। उन्होंने श्रीहरिदास के निवास पर रहते हुऐ धैर्य का पाठ पढ़ाया और श्रीरूप और श्रीसनातन के माध्यम से दीनता का पाठ सिखाया। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने सभी लोगों को भक्त के चार गुण बताए- ब्रह्मचर्य, तटस्थता, धैर्य और दीनता।

श्रीरूप और श्रीसनातन का चरित्र अयोग्य व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली तुलना से परे था जिस कारण कोई न कोई उनके व्यवहार को लेकर तर्क करता रहता था। वे यदि नरक ही जाना चाहते हैं तो उन्हें इस तरह तर्क करते रहने देते हैं। श्रीरूप और श्रीसनातन को आशीर्वाद देकर श्रीगौरहरि और उनके साथियों ने रामकेली से विदा ली।

श्रीरूप, श्रीसनातन और श्रीवल्लभ की प्रसन्नता का पारावार न था। केशव क्षत्री और अन्य विद्वान्, श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिलकर अति प्रसन्न थे। विद्वत्जनों के अलग-अलग अनुभव सुनकर श्रीजीव, श्रीचैतन्य महाप्रभु में बहुत अनुरक्त हो गये और एकान्त में उनका दर्शन करने लगे। श्री जीव एक निपुण बालक थे। यहाँ तक कि युवा अवस्था में थोड़े समय में ही इन्होंने व्याकरण और अन्य विषयों की शिक्षा पूर्ण कर ली।

श्रीसनातन और श्रीरूप अपने भतीजे श्रीजीव से अति प्रसन्न थे और उनसे अत्यन्त प्रेमपूर्ण व्यवहार करते थे। श्रीजीव निरन्तर श्रीचैतन्य महाप्रभु के रूप माधुर्य का चिंतन करते रहते और शास्त्रों को सीखने की अपनी सच्ची निष्ठा के कारण सब को सन्तुष्ट करते थे। कुछ तो उन्हें किसी देवता का सूक्ष्म अवतार मानते क्योंकि कोई सामान्य व्यक्ति इतने कम समय में इतना बृहत् भक्ति ज्ञान अर्जित नहीं कर सकता। लोग श्रीजीव को देखकर मन्त्रमुग्ध हो जाते जोकि श्रीरूप, श्रीसनातन और श्रीवल्लभ के समान सुन्दर और सुशील थे।

यदि सम्भव होता तो मैं उन सब विपदाओं के साथ अपने प्राण त्याग सकता था जिनके कारण श्रीजीव, श्रीसनातन और श्रीरूप को मन्त्री पद का

त्याग करना पड़ा। उन्होंने अपने प्रभु के श्रीविग्रह की पूजा-अर्चना के साथ प्रार्थना की। वे श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिले और उन्होंने एक संदेशवाहक को उन्हें अपना निर्णय बताने के लिये भेज दिया। इस सन्दर्भ में उन्होंने एक व्यक्ति को चन्द्रद्वीप और एक व्यक्ति को फतेवाड़ा भेज दिया।

श्रीरूप और श्रीवल्लभ ने अपनी सारी धन सम्पदा एक नौका में लाद दी और एक घर की ओर प्रस्थान किया, जहाँ से वे इसे ब्राह्मणों और वैष्णवों में विभाजित कर सकें। तब वे ब्रज की ओर चल दिये जहाँ वे श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिल सके जो कि पहले से ही वहाँ के लिये प्रस्थान कर चुके थे। श्रीवृन्दावन के बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रयाग गये, जहाँ वे श्रीरूप और श्रीवल्लभ से मिले। श्रीगौरहरि ने उन्हें आशीर्वाद दिया और यथा शीघ्र श्रीवृन्दावन लौट जाने का निर्देश दिया।

श्री सनातन द्वारा भागवत आलोचना

श्रीसनातन ने सरकारी पद का त्याग कर दिया और घर पर ही शास्त्रों का पठन और विचार-चिन्तन प्रारम्भ कर दिया। घर पर कुछ भट्टाचार्य ब्राह्मणों के सान्निध्य में श्रीमद्भागवत पर चर्चा करना सनातन को अति प्रिय था। श्रीसनातन फिर काशी गये और वहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिले। श्रीचैतन्यचरितामृत में इन सब घटनाओं का विशद् वर्णन है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीसनातन से इतना स्नेह करते थे कि उन्होंने स्वयं पर ध्यान न देने के कारण धूल से सने और मैले हुए उनके शरीर को अपने हाथों से साफ किया। अपने ग्रन्थ में कवि कर्णपूर ने श्रीसनातन पर स्वामी की अति विशेष कृपा के बारे में लिखा है। कवि कर्णपूर ने न केवल श्रीसनातन पर स्वामी की विशेष अनुकम्पा का उल्लेख किया है बल्कि श्रीसनातन के निष्कपट प्रयासों का भी वर्णन है जिसके कारण उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु की अनुकम्पा प्राप्त हुई।

काशी में प्रभु के भक्त भी श्रीसनातन के प्रति प्रभु की उदारता देखकर प्रसन्न थे। श्रीचैतन्यदेव के आदेश पर श्रीसनातन इसके बाद ब्रज चले गये। तब तक श्रीरूप ने ब्रज को त्याग दिया और इस कारण वे श्रीसनातन से वहाँ मिलने से वंचित हो गये। नीलाचल में श्रीचैतन्य महाप्रभु एकबार फिर श्रीरूप और श्रीसनातन से मिलने को व्याकुल हो उठे। श्रीरूप और श्रीवल्लभ यह समाचार पाकर अति प्रसन्न हुए और तत्काल गौड़ देश के मार्ग से नीलाचल की ओर चल दिये। श्रीवल्लभ, श्रीरघुनाथ जी के भक्त थे और भगवान् की सदा उसी रूप में पूजा करते थे। वे श्रीचैतन्य महाप्रभु की सेवा में अति प्रसन्न थे, जो कि स्वयं श्रीरघुनाथ थे। गौड़देश में भ्रमण के काल खण्ड में ही, गंगा के तट पर, श्रीवल्लभ ने अपना शरीर त्याग दिया।

कुछ समय बाद श्रीरूप ने नीलाचल की यात्रा पुनः आरम्भ की। उन्हें नीलाचल में पुनः श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों का संग पाकर अति प्रसन्नता हुई। श्रीचैतन्य, श्रीअद्वैत और श्रीनिताई ने श्रीरूप को अत्यधिक स्नेह दिया। वे दीर्घकाल तक उनके साथ रहे और पुनः गौड़ देश के मार्ग से, श्रीवृन्दावन की ओर चल पड़े।

बंगाल में श्रीरूप ने अपने सम्पत्ति के स्मरणपत्रों को अपने सगे सम्बन्धियों, ब्राह्मणों और धार्मिक स्थानों में वितरित कर दिया। इस भार से मुक्त हो कर वे ब्रज की ओर चल दिये। ये सब घटनायें भी श्रीचैतन्यचरितामृत में वर्णित हैं।

श्रीवृन्दावन से नीलाद्रि गमन

श्रीवृन्दावन से श्रीसनातन गोस्वामी झारखण्ड होते हुए नीलाद्रि की ओर चल दिये। कुछ दिन बाद वे नीलाचल पहुँचे और श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिले, जो उन्हें देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। प्रभु ने बड़े प्रेम से उन्हें अपने अन्य साथियों से मिलवाया और कुछ दिन अपने साथ रखा, फिर श्रीसनातन को वापिस श्रीवृन्दावन लौट जाने का आदेश दिया।

श्रीवृन्दावन में श्रीसनातन, श्रीरूप से मिले और दोनों ने मिलकर भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति केवल विशुद्ध भक्ति प्राप्त करना ही एकमात्र लक्ष्य बनाकर बहुत सावधानी से शास्त्रों को पढ़ना आरम्भ किया। जो कोई भी इन दोनों भाइयों का अनुग्रह प्राप्त कर लेगा, निश्चित ही उसे श्रीकृष्ण चैतन्य का भी आशीर्वाद प्राप्त होगा।

श्रीसनातन के पुजारी एक ब्राह्मण थे, जो जब श्रीवृन्दावन आये थे तो सर्वप्रिय थे। उन्होंने अपना सारा वैभव त्याग दिया और श्रीसनातन गोस्वामी से दीक्षा ग्रहण कर ली। आज भी खड ग्राम में उनके वंशज श्रीसनातन गोस्वामी की कृपा के अलावा और कुछ नहीं जानते। श्रीकृष्ण के प्रेम में श्रीरूप और श्रीसनातन ने मथुरा मण्डल में लुप्त अनेक धार्मिक स्थानों की खोज की।

श्रीजीव गोस्वामी चरित्र

वृन्दावन में अपने परिजनों के प्रति आकर्षण के कारण बंगाल के श्रीजीव काफी बदल गये। श्रीजीव की वृन्दावन यात्रा अति विलक्षण थी। जिस दिन श्रीरूप और श्रीसनातन वृन्दावन से गये तब श्रीजीव के मन में व्यक्तिगत अनुभूति हुई, उन्होंने निर्णय लिया कि वे अपने आभूषणों, सुन्दर वस्त्रों, सुखद शैया और स्वादिष्ट व्यंजनों का मोह त्याग देंगे। राजसी और सांसारिक चर्चाओं में उन्हें बिलकुल रुचि अनुभव नहीं होती थी।

श्रीजीव को व्याकुल अवस्था में देखकर किसी व्यक्ति ने टिप्पणी करते हुए कहा मेरे प्रिय मित्र कुमार देव के पुत्रों में से तीन महान् वैष्णव और शास्त्रों

के परम विद्वान् थे- श्रीसनातन, श्रीरूप और श्रीवल्लभ। मैंने कभी इतनी सहनशीलता और तटस्थता नहीं देखी, जैसी श्रीवल्लभ ने सांसारिक संसाधनों की अनासक्ति में दिखाई। जब गंगा के किनारे अपने पिता की मृत्यु को देखा, जीव स्तब्ध थे। फिर भी धन-सम्पत्ति में उन्हें कोई आसक्ति नहीं थी। जब मैंने उनके बारे में सोचा तो मेरा हृदय विदीर्ण हो गया। एक दिन मैंने उन्हें एकान्त स्थान पर फूट-फूट कर रोते हुए देखा।

यह सुनकर किसी ने उत्तर दिया, 'मेरे प्रिय मित्र, यह सब सामान्य है। यह श्रीकृष्ण का आशीर्वाद है, जो श्रीजीव ऐसा बर्ताव कर रहे हैं। वे काफी आत्मसंयमित हो गये हैं और श्रीमद्भागवत के अतिरिक्त उन्हें कुछ नहीं सूझता, जो कि उनका जीवन बन गया है। उन्हें कृष्ण की चर्चा रूपी आनन्दमय सागर में तैरना अत्यधिक प्रिय था। उनके साथ श्रीकृष्ण की चर्चा के अतिरिक्त अन्य बातें करने का साहस किसी में नहीं था। वे अवश्य ही श्रीचैतन्य महाप्रभु से एकांत में मिले होंगे क्योंकि मैंने उन्हें श्रीकृष्णचैतन्य का नाम लेकर रोने के बाद जमीन पर गिर कर मूर्च्छित होते हुए देखा है। जब मैं उन्हें आंसुओं में भीग कर विलाप करते हुए भूमि पर लुढ़कता हुआ देखता हूँ तो मेरे हृदय में अति कष्ट होता है। मैं उनके विलाप को सहन नहीं कर सकता। मेरे प्रिय मित्रो, यह निश्चित है कि श्रीजीव सदा के लिये अपना गृह त्याग देंगे।'

'पर वह तो अभी बालक है,' किसी ने तर्क दिया। 'अलग-अलग स्थानों पर जाने में जो कष्ट होगा, वे उसे कैसे सहेंगे?'

'उनके हृदय में श्रीचैतन्य महाप्रभु के लिये असीमित प्रेम है' दूसरे व्यक्ति ने कहा, 'वे ब्राह्मण कुल के दीपक हैं', किसी अन्य ने कहा, 'अगर वे गये तो पूरा गांव अंधकार में डूब जायेगा।'

गांव के लोगों में श्री जीव के बारे में चर्चा चलती रही। वे श्री जीव को ऐसी अवस्था में छोड़कर अपने घर भी नहीं जा सकते थे। इस समय श्री जीव सोचने बैठ गये कि कब वे घर का त्याग करेंगे। एक सन्ध्या वे एकांत में बैठे, रोते हुए पावन नाम ले रहे थे। यद्यपि उन्होंने स्वयं पर नियंत्रण करने का प्रयास किया परन्तु अंततः वे विचलित हो गये और रोने लगे, 'ओह मेरे स्वामी, श्रीकृष्ण चैतन्य!

'ओह नित्यानन्द! ओह मेरे स्वामी, श्रीअद्वैताचार्य, करुणासिंधु! ओह भक्तवत्सल भगवान्! कृपया इस नीच व्यक्ति के प्रति दयाभाव रखिये!'

सम्पूर्ण रात्रि विलाप के कारण श्री जीव सो नहीं पाते थे। एक बार पहले भी रामकेलि में उन्होंने स्वप्न में देखा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके सहभागी संकीर्तन में झूमते हुए पूरे विश्व में ऐसा प्रेम बहा रहे थे जो कि स्वयं ब्रह्मा जी को भी उपलब्ध नहीं था। उस रात फिर वही दृश्य उनके सपने में आया।

सैकड़ों, सहस्रों की संख्या में आगे आकर संकीर्तन और पावन हरिनाम का उच्चारण करने लगे, जिसने सम्पूर्ण आकाश-पाताल को गुंजायमान कर दिया।

अचानक श्रीचैतन्य महाप्रभु अन्तर्धान हो गये और सपने के धुंधलाते ही श्री जीव विरह कातर हो उठे। वे दोबारा गहरी निद्रा में सो गये और एक दूसरा अत्युत्तम दृश्य उनके स्वप्न में प्रकट हुआ। मैं बाद में बताऊँगा कि उन्होंने स्वप्न में क्या देखा परन्तु अभी तो मैं आपको श्री जीव के आरम्भिक जीवन के बारे में बताता हूँ।

अपने बाल्यकाल में श्री जीव मित्रों के साथ खेलना पसन्द नहीं करते थे और न ही कोई ऐसी गतिविधि करते थे जिसका श्रीकृष्ण से सम्बन्ध न हो। वे कृष्ण-बलराम के श्रीविग्रह बनाते और पुष्प, चन्दन के लेप आदि से उपासना करते, बहुत अच्छे वस्त्र और आभूषण धारण करवाते। वे श्रीविग्रहों को स्थापित करने से पूर्व साष्टांग प्रणाम करते। वे उन्हें तरह तरह के मिष्ठान पवाते और फिर मित्रों के साथ श्रीविग्रह के प्रसाद रूप में उसे ग्रहण करते।

वे श्रीकृष्ण-बलराम के श्रीविग्रह से इतना प्रेम करते कि जब वे एकान्त में होते तो उनके साथ खेलते। सोते समय वे श्रीविग्रहों को कस के पकड़ कर अपने हृदय से लगाकर सो जाते थे। उनके माता-पिता ये सोचकर उन श्रीविग्रहों को अलग नहीं करते थे कि वे केवल उनसे खेल ही तो रहे हैं। हर कोई श्रीजीव का श्रीकृष्ण-बलराम के प्रति प्रेम देखकर प्रसन्न था।

श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु उनके प्रेम में इतने बंध गये कि उनके स्वप्न में प्रकट हुए। श्रीकृष्ण और श्रीबलराम भी उनके सपने में प्रकट हुए। श्रीजीव श्रीकृष्ण को गहरे नील वर्ण और श्रीबलराम को गौर वर्ण में देखकर मंत्रमुग्ध हो गये। वे कन्दर्प जैसे दिखते थे और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपने हाव-भाव से मंत्रमुग्ध कर रहे थे।

अचानक श्रीकृष्ण और श्रीबलराम, श्रीगौर और श्रीनिताई में परिवर्तित हो गये और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उनके श्रीअंग की दिव्य सुगन्ध से सुवासित हो उठा। इस अलौकिक सौन्दर्य को देखकर श्रीजीव रोते हुए दोनों गुरुओं के श्रीचरणों में गिर पड़े। करुणा के दो महान सागर श्रीगौर-नित्यानन्द राय ने अपने चरण श्रीजीव के शीश पर रख कर उन्हें बहुत स्नेह प्रदान किया। वे जो भी बोलते, अमृत की तरह श्री जीव के कानों में पड़ता गया। श्रीगौरसुन्दर ने प्रेम में भाव विभोर होकर श्रीजीव को दयाशील श्रीनित्यानन्द के (चरणकमलों) में अर्पित कर दिया।

यद्यपि श्रीनित्यानन्द प्रभु बार-बार श्री जीव को यह बताते रहे, 'मेरे गौर प्रभु को अपने प्राण और आत्मा में समाहित होने दो।'

जब श्री जीव उनके चरणकमलों का स्पर्श पाने के लिये झुके तो वे अन्तर्धान हो गये, इस वजह से श्री जीव निराश हो गये मानों नरक में जा गिरे हों।

जब वे उठे तो प्रात:काल होने वाला था और वे शिक्षा ग्रहण करने के बहाने वहाँ, से श्रीवृन्दावन जाने की तैयारी करने लगे। श्रीनवद्वीप के लोग यह जानते थे कि वे श्रीवृन्दावन जा रहे हैं। उन्होंने अपने अनुयायियों से विदा ली और मात्र एक सेवक के साथ घर का त्याग कर दिया।

अपने प्रभु के प्रेम में भाव-विभोर हो, श्रीजीव अवचेतन अवस्था में भटकने लगे, मार्ग में चलने वाले यात्री उनकी दशा देखकर गर्वित होकर आश्चर्य करते, 'ये नवयुवक कौन है?' वे चकित होते, 'ये वास्तव में कोई राजकुमार होंगे क्योंकि उनका रंगरूप चंपक पुष्प की भांति स्वर्णिम है! कितना सुन्दर मुख है! जरा इनकी आकर्षक नेत्रों, नासिका, भौंह, मस्तक, कानों और घुंघराले केशों को देखो। उनकी गर्दन, छाती और नख और कमल समान हाथों की उंगलियों को देखो! इनकी जंघा, घुटने और चरण कितने सुन्दर हैं।'

हर किसी ने उनके गले में लटकी तुलसी माला और छाती के चारों ओर लिपटे अति श्वेत यज्ञोपवीत के पवित्र सूत्र की प्रशंसा की। किसी ने कहा, 'मेरे मित्रो, मैं इनसे अपनी दृष्टि नहीं हटा पा रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि इनके साथ घटित होने वाली विपदाओं में प्राण त्याग दूँ।'

दूसरे व्यक्ति ने कहा,' हम नहीं समझ सकते कि हम इन्हें देखकर क्यों मुग्ध हो रहे हैं। हम चाहते हैं, हम सब इनसे परिचित हो सकें।'

यद्यपि लोग बोलते रहे, श्रीजीव परम आनन्द में अपनी यात्रा करते रहे। जब उन्होंने नवद्वीप में प्रवेश किया, हर किसी ने उन्हें अंगीकार किया क्योंकि वे उन्हें श्रीरूप और श्रीसनातन के भतीजे के रूप में जानते थे। श्रीजीव की विद्वत्ता और धार्मिक गतिविधियों से अभिभूत होकर ब्राह्मणों ने उनसे पूछताछ की।

श्रीजीव श्रीनवद्वीप धाम का सौन्दर्य देखकर मंत्रमुग्ध हो गये थे। सोलह कोस में फैले पावन धाम में पुष्पों के बगीचे, तालाब, वन, उपवन, झोंपड़ियां और गंगा का किनारा था। श्री जीव बहुत से वैष्णवों से मिले जो उनसे मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और वे उन्हें सीधे श्रीवास पंडित की कुटिया की ओर ले गये जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके परिकर बैठे थे।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने पहले ही श्रीवास पंडित को श्रीजीव के आगमन की सूचना दे दी थी। श्रीवास ने जब कुटिया के बाहर द्वार पर श्रीजीव को देखा तो प्रसन्नता से श्रीनित्यानन्द को जानकारी दी। श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीजीव के आने का समाचार पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और किसी को भेजकर उन्हें भीतर लाने को कहा। श्रीजीव श्रीनित्यानन्द प्रभु से मिलने की उत्सुकता में जैसे ही विनम्र होकर उनके चरणकमलों में झुके, वे सुध-बुध भूलकर कर रुदन करने लगे। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने बहुत स्नेह से अपने चरणकमल श्रीजीव के शीश पर रख दिये।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उन्हें उठाया और गाढ़ालिंगन करके कहा, 'मैं खड़दह से यहाँ केवल तुमसे मिलने आया हूँ।'

इसप्रकार प्रभु ने श्रीजीव को शांत किया और श्रीवास और अन्य वैष्णव-जनों को उन पर अनुग्रह करने को कहा। उन्होंने कुछ दिन श्रीजीव को अपने सान्निध्य में रखा और फिर श्रीवृन्दावन जाने का आदेश दिया। जाते समय श्रीजीव समुपस्थित भक्तजनों के वियोग में उदास होकर श्रीनित्यानन्द प्रभु के श्रीचरणों में झुक गये।

अपने चरणकमल श्रीजीव के मस्तक पर रख और अत्यधिक स्नेह करके श्रीनित्यानन्द प्रभु बोले, 'शीघ्र श्रीवृन्दावन पहुँचो, क्योंकि यह श्रीचैतन्य महाप्रभु का आदेश है कि तुम्हारा परिवार उसी स्थान पर रहेगा।'

श्रीजीव ने सभी वैष्णवजनों के श्रीचरणों में आदर सहित प्रणाम किया और श्रीवृन्दावन को चल दिये। श्रीवास और अन्य भक्तजनों ने श्रीजीव को अनेक प्रकार के आशीष प्रदान किये। नवद्वीप से श्रीजीव काशी पहुँचे जहाँ वे श्रीमधुसूदन वाचस्पति से मिले जो कि सभी शास्त्रों के प्राध्यापक थे, तथा बृहस्पति की तरह महान विद्वान् थे। विद्वत्जन श्रीजीव से मिलकर अति प्रसन्न हुए और उन्हें दीर्घकाल तक अपने स्थान पर रखा तथा उस काल में उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी को वेदांत और अन्य सत् साहित्य का पाठ पढ़ाया।

श्रीवाचस्पति श्री जीव की बौद्धिक क्षमताओं से इतने प्रभावित हुए कि पूरे काशी में उन्हें सुपरिचित कर दिया और वे शीघ्र ही न्याय, वेदांत और अन्य शास्त्रों के सर्वमान्य विद्वान् हो गये। काशी से श्रीजीव श्रीवृन्दावन चले गए और वहाँ श्रीरूप और श्रीसनातन का अनुग्रह प्राप्त किया। श्रीसनातन, श्रीरूप और श्रीवल्लभ के गुणों के वर्णन का कोई अन्त नहीं हो सकता।

श्रीरघुनाथदास

श्रीरघुनाथदास अपने पिता से आज्ञा प्राप्त कर श्रीवृन्दावन चले गए जहाँ वे श्रीरूप और श्रीसनातन से मिले। लघु तोषिणी ग्रन्थ में श्रीजीव का विस्तृत इतिहास मिलता है।

श्रीरूप और सनातन के निरंतर वृन्दावन वास के समय उनके मनोभाव को भगवान् श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं समझ सकता था। प्रेम और दया से परिपूर्ण वे एक ग्वाल बाल के रूप में उनके सामने आये और उनसे खीर मांगी। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर श्रीरूप और श्रीसनातन ने बहुत से ग्रन्थ रचे जो विश्व भर में प्रसिद्ध हो गये।

श्रीरूप ने श्री हंसदूत और श्रीसनातन ने बृहद्भागवतामृत और अन्य ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने श्रीवैष्णव तोषिणी ग्रन्थ की रचना की और श्रीजीव को उसे संपादित करने को कहा। ऐसा निर्देश पाकर श्रीजीव ने लघुतोषिणी की

रचना की। पहला ग्रन्थ शक संवत् 1476 में पूरा हुआ और दूसरा ग्रन्थ शक संवत् 1504 में पूरा हुआ। श्रीरूप द्वारा रचित ग्रन्थ में श्रीकृष्ण के गोपाल रूप के वृत्तान्त का वर्णन है।

श्रीरूप द्वारा रचित ग्रन्थ विश्व भर में प्रसिद्ध हो गये जैसे कि श्रीभक्ति-रसामृतसिंधु। उन्होंने ललित-माधव, विदग्ध-माधव, दानकेलि, रसामृत-युगल, मथुरा-महिमा, नाटक-चन्द्रिका और श्रीभागवतामृत जैसे लघु नाटकों की भी रचना की।

श्रीसनातन गोस्वामी ने बृहद्भागवतामृत, दिग्दर्शिनी टीका सहित, हरि-भक्ति-विलास, लीला-स्तव की रचना की और वैष्णव तोषिणी पर दशम टिप्पणी की रचना की जिसे श्रीजीव ने श्रीसनातन के आदेश पर पुनः संक्षिप्त रूप में लिखा।

ग्रन्थ के सम्पादन में श्रीजीव ने स्पष्ट करने हेतु कुछ नये विवरण जोड़े और श्रीसनातन के कुछ विचारों को निरस्त कर दिया, जिसके लिये उन्होंने अपने चाचा श्रीसनातन से क्षमा याचना की।

शक संवत् 1476 में वैष्णव तोषिणी ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ और शक संवत् 1504 में लघु तोषिणी ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ। मैंने यह उल्लेख किया है कि दोनों ग्रन्थ गोस्वामीजनों द्वारा लिखित हैं परन्तु मैं आपको कुछ और भी बताना चाहता हूँ। श्री जीव के शिष्य श्रीकृष्णदास अधिकारी ने अपने ग्रन्थ में गोस्वामीजनों द्वारा लिखित ग्रन्थों का पूरा विवरण दिया है।

श्रीसनातन कृत ग्रन्थ

श्रीसनातन गोस्वामी के चार प्रमुख ग्रन्थ हैं- बृहद्भागवत के दो भाग टीका सहित, हरि-भक्ति-विलास और उनकी दिग्दर्शिनी नामक टीका, लीला स्तव और वैष्णव तोषिणी टीका सहित।

श्रीरूप कृत ग्रन्थावली

श्रीरूप गोस्वामी ने 16 प्रमुख ग्रन्थ लिखे जिसमें उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण की विभिन्न प्रकार की लीलाओं को प्रकाशित किया है। ग्रन्थों के नाम हैं- हंसदूत काव्य, उद्धव सन्देश, कृष्ण-जन्मतिथि-विधि, श्री-बृहद्-गणोद्देश-दीपिका, श्रीलघु-गणोद्देश-दीपिका, स्तव-माला, ललित-माधव, दान-लीला-कौमुदी, दान-केलि-कौमुदी, भक्ति-रसामृत-सिन्धु, श्री-उज्ज्वल-नीलमणि, प्रयुक्ता-ख्यात-चन्द्रिका, मथुरा-महिमा, पदावली और नाटक-चन्द्रिका एवं लघुभागवतामृत।

उन्होंने वैष्णवजनों द्वारा अनुरोध किये गये ग्यारह श्लोक भी लिखे और उन्हें और विस्तृत करने के लिये श्रीकृष्णदास कविराज को सौंप दिया। सभी

श्लोक भगवान् श्रीकृष्ण की आठ दिव्यतम लीलाओं से सम्बन्धित थे और वैष्णवजनों में बहुत विख्यात हुए। श्रीकृष्णदास कविराज ने विरुदावली नामक ग्रन्थ को संपादित और संक्षिप्त किया।

श्रीरघुनाथदास ग्रन्थावली

श्रीरघुनाथदास गोस्वामी ने जो तीन ग्रन्थ लिखे, वे थे- स्तव-माला, दान-चरित और मुक्ता-चरित।

श्रीजीव गोस्वामी ग्रन्थावली

श्रीजीव गोस्वामी द्वारा रचित ग्रन्थ थे- श्रीहरिनामामृत नामक व्याकरण ग्रन्थ और उसकी टीका, सूत्र-मल्लिका, कृष्णार्चन-दीपिका, गोपाल-विरुदावली, रसामृत का अंतिम भाग, श्री माधव-महोत्सव, संकल्प कल्पद्रुम, भावार्थ-सूचक-चम्पू, गोपाल-तापिनी टीका, ब्रह्मसंहिता टीका, रसामृत टीका, उज्ज्वल-नीलमणि टीका, योगसारस्तव-टीका, अग्नि पुराण का श्री गायत्री भाष्य, भगवान् श्रीकृष्ण के चरण चिह्न की पद्म पुराण की व्याख्या, श्री राधिका जी के हस्त-चिह्नों और चरण चिह्नों के संग्रहीत लेख पत्र, गोपाल चम्पू का प्रथम खण्ड, गोपाल चम्पू का अंतिम खण्ड, श्रीमद्भागवत के सात विख्यात सन्दर्भ, जो कि तत्व संदर्भ, भगवत संदर्भ, भक्ति संदर्भ, प्रीति संदर्भ, क्रम संदर्भ, कृष्ण संदर्भ, और परमात्म संदर्भ के नाम से जाने गये।

इन चार गोस्वामीजनों की लेखन कला का अनुसरण करके बहुत से भक्तों ने अनेक ग्रन्थ लिखे। केवल वे, जिन्हें भक्ति देवी की कृपा प्राप्त हो जाए, इन ग्रन्थों का वास्तविक सार जान सकते हैं। वेदों और पुराणों में भक्ति की उच्चतम महानता के बारे में बताया गया है और एक विशुद्ध भक्त कुछ भी कर सकता है, चाहे कितना भी दुष्कर कार्य हो। यद्यपि वेदों और पुराणों में भक्ति के गौरव का वर्णन है, पर एक विशुद्ध भक्त ही जानता है कि भक्ति वास्तव में क्या है।

मेरे मित्रो, मेरी कामना है कि मैं सारा जीवन भक्ति और विशुद्ध भक्तों की महिमा का गुणगान करता रहूँ। मुझे भक्ति या भक्त से घृणा करने वाले किसी का भी स्पर्श भी प्राप्त न हो। हे गौर के सम्माननीय भक्तो, जो अपने भक्तों की सभी इच्छाएं पूर्ण करने वाला है वह मेरे प्रति भी दया भाव रखे क्योंकि मैं सदैव श्रीनिवास आचार्य के श्रीचरणकमलों की सेवा में रहना चाहता हूँ।

ब्रह्माण्ड के लोगों को यहाँ प्रकट होने के लिये श्रीनिवास आचार्य ठाकुर का आभारी होना चाहिये। श्रीनिवास आचार्य ने स्वयं को गौड़ देश, नीलाचल और श्रीवृन्दावन में प्रकाशित किया। यदि मैं भाग्यशाली रहा तो उनके रहस्योद्घाटन का विस्तृत वर्णन करूँगा, सम्प्रति मैं उनके जन्म से उनकी जीवन गाथा को प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

श्रीनिवास आचार्य

श्रीनिवास आचार्य श्रीचैतन्य नामक एक ब्राह्मण के यहाँ अवतरित हुए, जो कि गंगा जी के तट पर श्रीखण्ड नामक गांव में रहते थे। बाल्यकाल में ही वे शीघ्र ही सभी शास्त्रों के विद्वान् हो गये थे। जब उन्हें श्रीकृष्णचैतन्य की महिमा का बोध हुआ तो वे अत्यधिक उन्मत्त हो गये और तत्क्षण श्रीखण्ड के रास्ते से क्षेत्र की ओर चल दिये। श्रीनिवास श्रीचैतन्यचन्द्र और उनके पार्षदों से नीलाचल में मिलने की आशा करने लगे।

मार्ग में ही उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्तर्धान होने का समाचार प्राप्त हुआ और वे अत्यन्त शोक में डूब गये। श्रीचैतन्य प्रभु जो कि उनके बहुत स्नेही और अपने भक्तों के प्राण थे, वे श्रीनिवास के स्वप्न में प्रकट हुए। प्रभु ने उन्हें अनेक प्रकार से सान्त्वना दी और गौड़ देश जाकर उनके पार्षदों से मिलने का आदेश दिया। श्रीनिवास को श्रीचैतन्य प्रभु के पार्षदों से हर प्रकार का अनुग्रह प्राप्त हुआ जिन्होंने उन्हें गौड़ देश वापिस जाने को कहा था। श्रीनिवास ने ऐसा ही किया परन्तु वे अपनी व्याकुलता पर नियंत्रण न रख सके और पुनः श्रीखण्ड होते हुए नीलाचल को चल दिये।

श्रीनिवास के यज्ञपुरा पहुँचने से पूर्व ही किसी तरह उन्हें श्रीगदाधर पंडित के इस संसार से अन्तर्धान होने का समाचार मिला। इस समाचार से उन्हें गहरा आघात लगा और वे मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर गये तथा अत्यधिक विलाप करने लगे जिनसे पर्वत भी पिघल जायें। पंडित गोस्वामी ने सपने में उन्हें बहुत सान्त्वना दी और गौड़ देश लौटने को कहा।

इस विक्षिप्तता से श्रीनिवास को अपने मनोमस्तिष्क में एक प्रकार की उन्मत्तता का अनुभव हुआ जिसने उन्हें भयभीत कर दिया, पर यह बात उन्होंने किसी को नहीं बताई। बंगाल जाते समय अचानक उन्हें श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य के अन्तर्धान होने का समाचार मिला। इस बार तो उन्होंने अपने प्राण त्यागने का पूर्ण निश्चय कर लिया परन्तु दोनों प्रभुगणों ने स्वप्न में प्रकट होकर उन्हें बहुत सान्त्वना दी।

प्रात:काल श्रीनिवास बंगाल की ओर चल दिये जहाँ वे श्रीनवद्वीप और अन्य स्थानों पर गए। वे श्रीखण्ड भी गये और वहाँ से शीघ्र ही वृन्दावन चले गये और स्वयं को श्रीगोपालभट्ट के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। वे उस समय श्रीनरोत्तम दास से मिले और गोस्वामीजनों द्वारा रचित ग्रन्थों का अध्ययन किया। बाद में गोस्वामीजनों ने उन्हें बंगाल जाकर अपने ग्रन्थों को वितरण करने का आदेश दिया। विष्णुपुरा वन में राजा ने ग्रन्थ चोरी कर लिये परन्तु अंततः श्रीनिवास को वापिस लौटा दिये और उनके चरणकमलों की शरणागति प्राप्त की।

श्रीनरहरि सरकार ठाकुर के प्रस्ताव पर श्रीनिवास ने विवाह किया और कुछ दिन बाद वृन्दावन वापिस आ गये।

बहुत पहले ही वे बंगाल वापिस आ गये और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के संग प्रसन्नता से रहने लगे। प्रभु वीरचन्द्र ने कीर्तन का आयोजन कर इन दोनों की बहुत सहायता की, जिसमें कि वे सदा ही लीन रहते। उन्होंने प्रत्येक स्थान पर गोस्वामीजनों के ग्रन्थ वितरित किये और इससे पतित लोगों को अपने पापों से मुक्त होने में सहायता मिली। उन्होंने बहुत से शिष्यों को अपनाया जिन्हें गोस्वामी जनों के ग्रन्थ पढ़ने में अति आनन्द आता था।

कुछ दिन बंगाल में आनन्द लेने के बाद श्रीनिवास आचार्य पुनः श्रीवृन्दावन आ गये और इस प्रकार श्रीवृन्दावन और बंगाल के मध्य संवाद का एक नया मार्ग विकसित हो गया।

मेरे सुधी पाठको, मैं एक अज्ञानी व्यक्ति हूँ और इस कारण मैं नहीं जानता कि किस तरह श्रीनिवास आचार्य जैसे समर्पित व्यक्तित्व के चरित्र का वर्णन करूँ इसलिये धैर्य से मुझे सुनिये। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि झूठे तर्क-वितर्कों में लिप्त नीच व्यक्तियों के स्पर्श से बहुत दूर रहते हुए कृपया 'भक्ति रत्नाकर' की गहराई में डूब जाइये। मैं श्रीनरहरिदास, श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों को अपने मस्तक पर धारण कर बहुत साहस करते हुए 'भक्ति-रत्नाकर' ग्रन्थ को लिख रहा हूँ।

द्वितीय प्रवाह

श्रीगौरसुन्दर और उनके पार्षदों की स्तुति

श्रीगौर कृष्ण की जय जयकार हो जिन्होंने नदिया के स्वामी के रूप में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मंत्रमुग्ध कर दिया और जो अपने भक्तों के प्राण और आत्मा हैं। श्रीनित्यानन्द हलधर की जय जयकार हो। श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो जो कि स्वयं भगवान् हैं। श्रीगदाधर पंडित, श्रीवास, श्रीस्वरूप, श्रीवक्रेश्वर और श्रीहरिदास ठाकुर की जय जयकार हो।

श्रीवासुदेव सार्वभौम वाचस्पति और भगवान् श्रीकृष्ण के महानतम प्रेमी श्रीरामानन्द की जय जयकार हो। श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि, श्रीजगदानन्द पण्डित और श्रीसंजय की जय जयकार हो। श्रीविद्या वाचस्पति और श्रीनाथ चक्रवर्ती की जय जयकार हो। श्रीगदाधर दास, श्रीनरहरि दास और श्रीमुकुन्द की जय जयकार हो।

श्रीवासु घोष, श्रीगौरीदास, श्रीधनंजय, श्रीवनमाली और श्रीगरुड़ महाशय की जय जयकार हो। श्रीवल्लभ आचार्य और द्विज हरिदास की जय जयकार हो। श्रीरूप और श्रीसनातन और श्रीगोपाल भट्ट की जय जयकार हो। श्रीरघुनाथ भट्ट, श्रीरघुनाथ दास और श्रीजीव की जय जयकार हो।

श्रीभूगर्भ, श्रीलोकनाथ, श्रीषष्टीधर, श्रीसुबुद्धि मिश्र और श्रीचन्द्र शेखर की जय जयकार हो। श्रीकेशी मिश्र, श्रीगोपीकान्त, और श्रीहृदयानन्द की जय जयकार हो। श्रीजगन्नाथ सेन, श्रीमधुसूदन, श्रीचिरंजीव सेन और श्रीरघुनन्दन की जय जयकार हो।

श्रीसारंग, श्रीअभिराम और ठाकुर वृन्दावन की जय जयकार हो। श्रीकृष्णदास कविराज और आचार्य श्रीनिवास की जय जयकार हो। श्रीठाकुर महाशय नरोत्तम और श्रीश्यामानन्द की जय जयकार हो। श्रीगौरचन्द्र के सभी भक्तों की जय जयकार हो।

मैं उन असंख्य भक्तों का आदर करता हूँ जिनके आत्मा और प्राण श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु हैं। मैं आध्यात्मिक योग्यता वाले श्रोताओं का भी सुनने के लिये आदर करता हूँ। अब धैर्य रखिये, मैं कुछ और बताऊँगा।

श्रीचैतन्यदास ब्राह्मण

गंगा के तट पर चाखण्डी नामक गांव था जहाँ श्रीचैतन्य दास नामक ब्राह्मण रहते थे। उनका वास्तविक नाम श्रीगंगाधर भट्टाचार्य था। उनका चैतन्यदास नाम कैसे पड़ा, उसका वर्णन यहाँ होगा।

श्रीनिवास के पिता : श्रीचैतन्यदास

श्रीगौरसुन्दर ने श्रीकेशव भारती से संन्यास ग्रहण किया। नवद्वीपचन्द्र, श्री गौर जो आध्यात्मिक गुणों का सागर थे, उन्होंने नदिया में अपने पार्षदों के संग लीलाओं का आनन्द लिया। अपनी गुप्त इच्छा अपने सहभागियों को बताकर श्रीगौर कंटक नगर चले गये जहाँ श्रीकेशव भारती रहते थे।

जब नदिया में यह समाचार फैला कि श्रीगौरचन्द्र संन्यास ग्रहण करने वाले हैं तो कंटक नगर के लोग जल्दी-जल्दी उनसे मिलने आने लगे। हर कोई चाहे वृद्ध हो या युवा, पुरुष हो चाहे स्त्री सब श्रीगौरांग को देखने के लिये दौड़ पड़े। वे एकटक खड़े हो गये और श्रीगौरसुन्दर के सुन्दर घुंघराले बालों को देखने लगे।

लोग भावावेश में फंसकर अपने भावों को व्यक्त नहीं कर पा रहे थे। स्वामी श्रीगौरचन्द्र उनकी भावनाऐं समझते थे और उन्होंने बहुत विनम्रता से उन्हें आशीर्वाद देने की प्रार्थना की कि भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों के प्रति उनके अनुराग के प्रयासों में वे सफलता प्राप्त करें।

श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीभारती के निवास पर रहे और आग्रह किया कि अब विलम्ब का कोई कारण नहीं है। श्रीभारती का कंठ, भावों से अवरुद्ध हो गया और वे कुछ न बोल पाये। स्वामी के आदेश पर एक नाई उपस्थित हुआ, जैसे ही उसने अपना हाथ श्रीचैतन्य प्रभु के शीश पर रखा और केश काटने लगा, वह पूर्णतः अश्रुओं में डूब गया। अपना कार्य पूर्ण करते ही नाई जमीन पर गिर गया और अपने कार्य के लिये बुरी तरह विलाप करने लगा।

श्रीचैतन्य महाप्रभु को घुंघराली लटों के बिना देख सब तरफ लोग रोने लगे सम्पूर्ण वातावरण में बातचीत का इतना कोलाहल हो गया कि एक के लिये दूसरे की बात सुनना असंभव हो गया। वे विधाता को उनकी करनी पर कोसने लगे।

श्रीगंगाधर भट्टाचार्य श्रीचैतन्य महाप्रभु के केश मुण्डन के समय उपस्थित थे। वे खुद पर नियंत्रण न रख सके और विलाप करते हुए मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर गये। भगवान् की इच्छा से कुछ देर में उन्हें होश आ गया।

श्रीचैतन्य महाप्रभु को श्रीकृष्ण चैतन्य नाम दिया गया और जब यह नाम ब्राह्मण, श्रीगंगाधर के कानों में पड़ा तो वे बार-बार इसका उच्चारण कर रोने लगे। वे अब अधिक देर तक कंटक नगर में नहीं रह सकते थे, तो पागलों की भांति तेजी से गंगा के किनारे की ओर भागे।

उन्हें खाने-पीने व नहाने की भी कोई सुधि न रही बस निरन्तर श्रीकृष्ण चैतन्य नाम उच्चारित करते रहे। इसी भाव में उन्होंने अपने गांव चाखण्डी में प्रवेश किया और लोग उनका परिवर्तित रूप देखकर आश्चर्यचकित रह गये। दूर खड़े लोगों ने श्रीगंगाधर भट्टाचार्य को देखा।

एक व्यक्ति ने दूसरे से कहा, कितने आश्चर्य की बात है! गंगाधर भट्टाचार्य पागल हो गये हैं।

दूसरे व्यक्ति ने कहा, मैं इनके पागलपन का कुछ कारण जानता हूँ। मेरी बात ध्यान से सुनो। नदिया के श्रीनिमाई पण्डित, जो भगवान् के अवतार हैं तथा सूर्य के समान तेजवान हैं उन्होंने अपना गृह त्याग दिया और कंटक नगर चले गये। उन्होंने अपने सुन्दर स्वरूप का त्याग कर संन्यास ग्रहण किया। श्रीकेशव भारती ने उन्हें संन्यास दीक्षा दी एवं उन्हें श्रीकृष्णचैतन्य नाम दिया। हर कोई उन्हें संन्यासी के रूप में देखकर दु:ख में डूब गया यहाँ तक कि आकाश में पार्षदगण भी रो रहे थे। यह प्रत्येक के लिये अत्यंत दु:खद था। गंगाधर को अपने स्वामी के सुन्दर केशों का स्मरण था इसलिए वे बार बार उनका नाम उच्चारण करके रो रहे थे। इस कारण वे पागलों की भांति विलाप कर रहे थे। मुझे उनको दोबारा सामान्य करने का कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था। किसी ने कहा, 'ये श्रीचैतन्य प्रभु के सेवक हैं इसलिए श्रीचैतन्य महाप्रभु ही इन्हें ठीक कर सकते हैं।'

गदाधर भट्टाचार्य का नाम हुआ चैतन्यदास

इसके बाद गांव के लोग उन्हें चैतन्य दास के नाम से पुकारने लगे। गंगाधर अपने नये नाम से संतुष्ट थे और जो भी इस नाम से पुकारता उसे तत्काल उत्तर देते। इस नाम के बाद कोई भी उन्हें पुराने नाम से नहीं बुलाता था। जो भी उस गांव में रहने आता, उसे ये सब बातें चखण्डी के ब्राह्मण से पता चल जाती।

श्रीचैतन्य दास की पत्नी लक्ष्मीप्रिया एक पतिव्रता महिला थी। उनकी कोई सन्तान न थी परन्तु इसका उन्हें कोई दु:ख नहीं था। श्रीचैतन्य महाप्रभु की योजना के कारण उनके मन में पुत्र पाने की इच्छा और बलवती होती गयी। श्रीचैतन्य दास ने अपनी पत्नी से पूछा कि उन्हें ऐसी इच्छा क्यों हो रही है। वे नहीं समझ सके कि क्यों वे पुत्र पाने के लिये इतने उत्सुक हो रहे हैं।

लक्ष्मीप्रिया ने उन्हें बताया, 'कृपया शीघ्र नीलाचल चलिये क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु हमारी इच्छा पूरी करेंगे।'

श्रीचैतन्य दास इस सुझाव से प्रसन्न हुए और दोनों याजिग्राम के मार्ग से नीलाचल के लिये चल दिये। श्रीबलराम नाम के ब्राह्मण जो कि लक्ष्मीप्रिया के पिता थे, याजिग्राम में रहते थे। पति पत्नी, उनके घर पर चार दिवस तक रहे, फिर शुभ घड़ी में अपनी यात्रा आरम्भ की। श्रीबलराम ने अपनी बेटी और दामाद को विदा किया और प्रार्थना की कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणों में उनकी ओर से सम्मान का निवेदन कर दें।

श्रीचैतन्य दास ने प्रसन्नता पूर्वक अपने ससुर से विदा ली। नीलाचल के रास्ते में उन्हें बहुत से यात्री मिले जो उसी पावन स्थल की ओर जा रहे थे। एक

रात्रि दोनों पति पत्नी अपने भाग्य को कोसते हुए विलाप करने लगे क्योंकि उन्होंने अभी तक श्रीचैतन्य महाप्रभु का अनुग्रह प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया था। उन्हें संदेह था कि नीलाचल में उन्हें श्रीकृष्ण चैतन्य और श्रीजगन्नाथ के दर्शन होंगे भी या नहीं।

क्या स्वप्न देखा

इस तरह विलाप करते हुए ब्राह्मण गहरी निद्रा में सो गये और एक अद्‌भुत स्वप्न देखा। उन्होंने श्रीश्यामसुन्दर जैसे दिखने वाले बालक को चित्ताकर्षक मुद्रा में खड़े हुए देखा। वे सुन्दरता में कोटि कन्दर्पों को लज्जित कर रहे थे। उनके शीश पर मोर पंख था और उन्होंने पीताम्बर धारण किया हुआ था। उनका मुखविन्यास कोटि चन्द्रमाओं को परास्त कर रहा था। उनका तन अनेकों आभूषणों से अलंकृत और चंदन के लेप में संलिप्त था। जैसे ही उन्होंने मुरली बजाई, पूरा ब्रह्माण्ड मंत्रमुग्ध हो गया।

अचानक ही बालक के शरीर का रंग चमकीले स्वर्णिम रंग में परिवर्तित हो गया। उन्होंने बादल के रंग के लाल किनारे वाले वस्त्र धारण कर रखे थे। यद्यपि उनके आभूषण और मुद्रा श्यामसुन्दर जैसी ही थी। तभी फिर से श्रीचैतन्य दास ने श्रीगौर को दूसरे रूप में मुंडित शीश और हाथ में दंड और कमण्डलु धारण किये हुए देखा। एक बार फिर प्रभु ने अपना रूप बदला और इस बार श्रीचैतन्य दास ने श्रीगौर को श्रीश्यामसुन्दर के रूप में देखा जिनके नेत्र कमलदल के समान थे, वे सुभद्राजी और श्रीबलराम के संग खड़े थे और अन्य देवता उनकी उपासना कर रहे थे।

जब ब्राह्मण अचानक स्वप्न से जागे तो प्रभु के वियोग में निराश हो गये। उनकी पत्नी ने बहुत स्नेह से उन्हें सांत्वना दी। तब उत्सुक मन से बहुत सवेरे ही उन्होंने अपनी यात्रा पुनः आरम्भ की। श्रीचैतन्य महाप्रभु के दर्शनों को उत्सुक वे कुछ दिवसों के बाद नीलाचल पहुँच गये।

श्रीमहाप्रभु-दर्शन

श्रीचैतन्य महाप्रभु उनके मन के भाव जानते थे। उस समय वे अपने सहचरों के साथ मन्दिर के सिंहद्वार नाम के द्वार को पार कर रहे थे। महाप्रभु की चाल-ढाल, हाथियों के यूथपति को भी परास्त करने वाली थी। उनका रंग-रूप तरल स्वर्ण के समान और आभा सूर्य के समान तेजस्वी थी। उनके मुख का सौन्दर्य चन्द्रमा पर विजय पाने वाला और मुख की मुस्कान अमृत बरसाने वाली थी। उनके कमल समान नयन और दीर्घ कर्ण, कन्दर्प से भी सुन्दर थे। उनके मस्तक पर चंदन तिलक चमक रहा था और गले में तुलसी माला थी। उनका चौड़ा वक्षस्थल कामदेव को भी अभिमानरहित कर सकता था। उन्होंने सुन्दर

केसरिया वस्त्र धारण कर रखा था और हाथ घुटनों तक आ रहे थे। उनके शरीर का अंग-अंग इतना सुन्दर था कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पृथ्वी पर उनके अवतार लेने का आभारी था।

ब्राह्मण और उनकी पत्नी अपलक श्रीगौरचन्द्र की सुन्दरता निहार कर प्रसन्न हो रहे थे। वास्तव में वे अपनी दृष्टि उस उत्तमोत्तम तन से हटा नहीं पा रहे थे। यद्यपि श्रीचैतन्य दास, श्रीचैतन्य महाप्रभु के मुंडित शीश को देखकर अपने अश्रुओं पर नियंत्रण नहीं कर पाये। अपने नेत्रों के कोने से देखते हुए श्रीकृष्ण चैतन्य ने उस अत्यधिक भाग्यशाली ब्राह्मण पर अपनी दिव्य कृपा बरसा दी।

ब्राह्मण को सांत्वना देकर, श्रीचैतन्य प्रभु ने प्रेम से उससे कहा, 'भगवान् जगन्नाथ तुम्हें यहाँ लेकर आये हैं क्योंकि वे तुमसे प्रसन्न हैं, जाओ और मन्दिर में उनके दर्शन करो, वे तुम्हारी इच्छाएें पूर्ण करेंगे।'

श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीमुख से ये मधुर वचन सुनकर, ब्राह्मण उनका अभिवादन करने के लिये जमीन पर गिर गये। उन्होंने अपना हृदय और आत्मा चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में अर्पित कर दिये।

प्रभु ने श्रीगोविन्द को आदेश दिया, 'इस भोले ब्राह्मण चैतन्यदास को श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन करवाने का दायित्व संभालो।'

श्रीगौरचन्द्र और उनके भक्तगण भी श्रीनीलचन्द्र के दर्शन को गये। श्रीचैतन्य दास ने बहुत विनम्रता से श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तगणों का अभिवादन सत्कार किया। वे उनसे प्रसन्न हुए और श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्य भक्तगणों से मिलवाया।

भक्तगणों के निर्देशन में दर्शन

चैतन्य महाप्रभु के आदेश पर भक्तगण ब्राह्मण देव को श्रीजगन्नाथ जी के मन्दिर में दर्शन करवाने ले गये। एक ही स्थान पर चल और अचल भगवान् के दर्शन पाकर ब्राह्मण की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न था। चुपचाप उन्होंने दोनों भगवान् से हर प्रकार से प्रार्थना की तो गौरहरि उन पर मुस्कुरा दिये।

इसके बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु ने ब्राह्मण को भगवान् जगन्नाथ के चरणों में समर्पित करते हुए उन्हें बंगाल जाने का आदेश दिया। श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन कर श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके अनुयायी उनके एक प्रिय सहभागी काशी मिश्र के घर गये। कुछ समय बाद श्रीचैतन्य दास अत्यधिक संतुष्ट होकर घर लौट आये। सभी भक्तजन ब्राह्मण चैतन्य दास के सौभाग्य के बारे में ही सोचते हुए अपने-अपने घर लौट आये।

पुत्र श्रीनिवास होगा

बाद में भक्तजनों ने श्रीगोविन्द से पूछा कि क्या वे जानते हैं कि ब्राह्मण ने जगन्नाथ जी से क्या प्रार्थना की। श्रीगोविन्द ने उन्हें आश्वस्त किया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु की मनोकामना से ब्राह्मण की इच्छा जल्दी ही प्रकट होगी।

इसी समय श्रीगोविन्द को बुलाया और गम्भीर मुद्रा में उनसे कहा, 'ब्राह्मणदेव यहाँ जगन्नाथ जी से पुत्र के लिये प्रार्थना करने आये थे। उन्हें 'श्रीनिवास' नाम से पुत्र प्राप्त होगा। मैं श्रीरूप को समर्थ करूँगा कि वे कई ग्रन्थों की रचना करें और श्रीनिवास को समर्थ करूँगा कि वे उन ग्रन्थों का वितरण कर सकें। श्रीनिवास मेरे विशुद्ध प्रेम का स्वाभाविक रूप हैं और वे सब को प्रसन्नता प्रदान करें।'

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने ब्राह्मण चैतन्य दास को तत्काल बंगाल जाने का आदेश दिया। तब चैतन्य दास के स्वप्न में भगवान् जगन्नाथ आये और यथाशीघ्र गौड़ देश जाने का आदेश दिया।

उन्होंने ब्राह्मण से कहा, 'तुम्हें एक पुत्र होगा जो प्रेम भक्ति से परिपूर्ण होगा। वह कुछ समय में ही शास्त्रों का महान् विद्वान् बन जायेगा।'

जब वे जागे तो ब्राह्मण ने स्वयं से कहा, 'मैं उस स्थान का त्याग कैसे कर सकता हूँ जहाँ मुझे इतनी प्रसन्नता प्राप्त हुई, श्रीगौरचन्द्र जो कि श्रीव्रजेन्द्रनंदन भी हैं और भगवान् जगन्नाथ भी, जिन्होंने मुझ जैसे अयोग्य व्यक्ति को अपने कार्य के लिये अंगीकार किया है।'

बोलते बोलते ब्राह्मण और उनकी पत्नी भावुकता वश रोने लगे। उसी समय श्रीगोविन्द दास ब्राह्मण के घर आए और आदर सहित उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिलवाने को ले गये। तब श्रीचैतन्य ने अपने एक सेवक से ब्राह्मण चैतन्यदास को नीलचन्द्र के पास ले जाने का आदेश दिया।

महाप्रभु ब्राह्मण को देखकर हँसे और बोले, 'जगन्नाथ स्वामी तुमसे बहुत प्रसन्न हैं और जल्दी ही तुम्हारी इच्छाएं पूर्ण करेंगे। बिना विलम्ब किये बंगाल लौट जाओ और अखण्ड नाम संकीर्तन में मग्न हो जाओ।'

इसप्रकार महाप्रभु ने ब्राह्मण को विदा किया। श्रीचैतन्य दास ने प्रभु के चरणकमलों में शीश झुकाकर चलने की तैयारी की। मुझमें इस दृश्य का वर्णन करने की योग्यता नहीं हैं जब कि एक अतिप्रिय सेवक अपने स्वामी से विदा ले रहा हो। ब्राह्मणदेव ने जाते समय प्रभु के सहभागियों का सम्मान व्यक्त किया। वे उन्हें विदा लेते देख अप्रसन्न थे।

ब्राह्मण और उनकी पत्नी ने नीलाचल छोड़ दिया और गौड़ देश जाने तक सारे रास्ते रुदन करते रहे। जब वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर बंगाल पहुँचे तो उन्होंने नीलाचल में जो भी घटित हुआ उसकी जानकारी सब लोगों को दी।

अत्यधिक प्रसन्नता के साथ वे याजिग्राम के श्रीबलराम शर्मा के घर गये और उन्हें सब बता दिया। वे वहाँ कुछ दिवस रहे और श्रीबलराम को अपने साथ लेकर अपने घर लौट आए।

श्रीचैतन्य दास के एक मित्र उनसे मिलने उनके घर आये। श्रीबलराम उनके साथ एक सप्ताह रहे और फिर याजिग्राम वापिस आ गये। चखण्डी गांव के लोग श्रीचैतन्य दास को अपने बीच पाकर स्वयं को बहुत सम्मानित व भाग्यवान अनुभव करते थे।

श्रीचैतन्य दास सदैव श्रीकृष्ण सम्बन्धित विषयों में मग्न रहते। उन्होंने स्वयं को श्रीगौर चन्द्र के चरण कमलों में समर्पित कर दिया और सदैव संकीर्तन में व्यस्त रहने लगे। गांव के लोग श्रीचैतन्य दास की अद्‌भुत भक्तिमय क्रियाएँ देखकर आश्चर्यचकित थे।

यद्यपि कुछ लोगों ने यह कहकर उनकी निन्दा की, 'यह सब व्यर्थ हैं, इनके व्यवहार के कारण इन्हें कोई बालक प्राप्त नहीं होगा और अपनी धन सम्पदा ये पहले ही खो चुके हैं।'

ऐसे ताने सुनकर ब्राह्मणदेव हँस देते थे और मौन ही रहते थे। कुछ समय बाद इन ईर्ष्यालु लोगों को मौन कराने को लक्ष्मीप्रिया गर्भवती हो गयीं। उनके गर्भधारण के समय से ही आलोचक भी पति पत्नी दोनों का आदर सत्कार करने लग गये। चखण्डी की महिलाएं, लक्ष्मीप्रिया के गर्भधारण की खबर से प्रसन्न हो गईं और उनके लिये विभिन्न प्रकार की भेंट लाईं।

श्रीनिवास का जन्म

अंततः जब बालक के जन्म लेने का समय आया, उनके पति अति उत्सुक थे। फिर रोहिणी मुहूर्त (वैदिक गणना के 27 नक्षत्रों में से चौथे नक्षत्र की) शुभ घड़ी में **वैशाख मास में पूर्णिमा के दिवस**, लक्ष्मीप्रिया ने एक पुत्र को जन्म दिया।

पुत्र के जन्म के समय श्रीचैतन्य दास को स्वप्न में अनेक अनोखी घटनाऐं होती दिखाई दीं। अपने पुत्र के स्वर्णिम आभा वाले रंग रूप को देख उनके आनन्द की सीमा न रही। श्रीचैतन्य दास ने अपने पुत्र को श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया।

श्रीनिवास के जन्म का समाचार सुनकर बालक को आशीष देने के लिए अनेकों सम्मानित लोग ब्राह्मण के घर आने लगे। गांव की महिलाएं सुन्दर बालक को देखकर अति प्रसन्न थीं और अन्तर्मन से आशीर्वाद देने लगीं। उन्होंने श्रीचैतन्य दास और उनके भाग्य की सराहना की।

इसके बाद बालक चन्द्रमा के समान बड़ा होने लगा। श्रीनिवास की उचित अवस्था होने पर उनकी **अन्न प्राशन और नामकरण संस्कार** की विधि पूर्ण

की गयी। अपने सम्बन्धियों और मित्रों के कहने पर श्रीचैतन्य दास ने अपने पुत्र का नाम श्रीनिवास रखा। सभी अतिथि जो समारोह में आये थे सब ने इस नाम को सहर्ष स्वीकार किया।

समय के साथ-साथ सभी बालक को फर्श पर घुटुरवन चलते हुए देख कर और फिर अपनी माता की उंगली पकड़ कर चलना सीखते हुए देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते थे। कभी-कभी चलते-चलते जब वे गिर जाते तो माँ झट से उन्हें अपनी गोद में उठाकर मुस्कुरा देती। गांव की सभी महिलाएं ब्राह्मण के घर आतीं ताकि वे प्यार से बालक को अपनी गोदी में उठा सकें।

पुत्र को नाम-उपदेश

एक दिवस लक्ष्मीप्रिया ने अपने पुत्र से गौर, विश्वम्भर, गदाधर, श्रीवास, श्रीकृष्ण चैतन्य, श्रीनित्यानन्द, श्रीहलधर, श्रीअद्वैत प्रभु, और श्री नन्द के पुत्र श्रीकृष्ण का नाम बोलने को कहा। उन्होंने उन्हें श्री गोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदनमोहन और श्रीचैतन्य प्रभु के सहभागियों के नाम उच्चारण के लिये प्रोत्साहित किया।

श्रीनिवास आनन्दित हुए और नामों के उच्चारण का प्रयास करने लगे परन्तु वे सब नाम एक साथ नहीं बोल सके। उनके मधुर शब्द, सुनने वाले के कानों को ऐसे आनन्दित कर रहे थे मानों बालक के मुख से अमृत बरस रहा हो। जब श्रीनिवास पांच वर्ष के हुए तो वे अपनी शिक्षा आरम्भ करना चाहते थे। उनके पिता उन्हें शिक्षित करने को राजी हो गये और निपुण बालक सरलता से सभी विषय सीखता गया।

उपनयन

कुछ ही दिवसों में श्रीनिवास का **चूड़ाकरण संस्कार** हुआ और वे **जनेऊ धारण** कर बहुत सुन्दर दिख रहे थे। लोग उनके शीघ्रता से व्याकरण, कोश, अलंकार और तर्क सीखने की क्षमता से अत्यधिक आश्चर्यचकित हो गये। उनके गुरु श्रीधनंजय वाचस्पति ने उन्हें बड़ी कुशलता से पढ़ाया। कुछ समय में ही श्रीनिवास चखण्डी गांव का गौरव बन गये।

वृद्ध और निपुण ब्राह्मण जो भगवान् विष्णु जी के उपासक थे उन्होंने एक दूसरे से कहा कि उन्होंने अपने जीवन में पुण्य आत्मा श्रीनिवास जैसे बालक को नहीं देखा जिसने इतने कम समय में शास्त्रों का इतना ज्ञान प्रांप्त कर लिया हो। वे भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति उनकी भक्ति की भी चर्चा करते थे। वे उस बालक के सौन्दर्य को देखकर मंत्रमुग्ध हो जाते और हैरान होते थे कि सम्भवतः वे भगवान् का कोई अवतार हैं। वे सोचते थे कि इतने सुन्दर हाव भाव से युक्त स्वर्णिम रूप, चन्द्रमा के समान मुख, सुन्दर मुखमण्डल में चित्ताकर्षक दन्तावली,

सुन्दर घुंघराले बाल, विशाल वक्षस्थल, सुडौल ग्रीवा, हाथ, पैर और कंधे किसी सामान्य बालक में नहीं हो सकते। वे ये मानते थे कि श्रीचैतन्य दास का सौभाग्य श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुग्रह के कारण ही था। इसी अनुग्रह के कारण उन्हें पुत्र रूपी रत्न की प्राप्ति हुई। उन्होंने श्रीनिवास को हृदय से आशीष दिया और सफल जीवन की शुभ कामनाएं दी।

एक व्यक्ति ने कहा कि यद्यपि मेरे स्वयं के कई पुत्र हैं फिर भी वे श्रीनिवास से ही अधिक प्रेम करते हैं। उस व्यक्ति ने श्रीचैतन्य दास को सलाह दी कि वे श्रीनिवास का शीघ्र विवाह कर दें। इस प्रकार सभी लोगों ने श्रीनिवास को अनेक प्रकार से आशीर्वाद दिये। श्रीनिवास प्रायः चखण्डी में रहने वाले भक्तों के घर आते जाते रहते थे।

श्री गोविन्द घोष

श्रीगोविन्द घोष श्रीगौरचन्द्र के एक महान् भक्त थे जो कि हमेशा प्रभु की लीलाओं के बारे में ही सोचते रहते थे। धीरे-धीरे उनके हृदय में श्रीनिवास के प्रति गहन अनुराग उत्पन्न होने लगा। वे सबको बताने लगे कि श्रीनिवास श्रीगौरचन्द्र के ही एक अवतार हैं। वास्तव में गांव के लोग श्रीनिवास से अत्यधिक अनुराग रखने लगे थे।

श्रीनरहरि और श्रीखण्ड के श्रीरघुनन्दन श्रीनिवास के दर्शनों को आतुर थे, स्वयं श्रीनिवास भी उनके दर्शनों को उत्सुक थे। यद्यपि श्रीनिवास अकेले श्रीखण्ड नहीं जा सकते थे। सौभाग्य से याजिग्राम से एक व्यक्ति वहाँ आया और वे उनके साथ नरहरि और श्रीरघुनन्दन से मिलने याजिग्राम वापिस लौट आये। उस समय जब वे श्रीनिवास से मिले, श्रीनरहरि ठाकुर और उनके अनुयायी याजिग्राम के रास्ते गंगा स्नान को जा रहे थे।

श्रीनरहरि-मिलन एवं कृपा

श्रीनिवास और श्रीनरहरि एक दूसरे से मिलकर अति प्रसन्न हुए। श्रीनिवास विनम्रता से श्रीनरहरि के चरणों में झुके तो श्रीनरहरि ने प्रेम से उन्हें अपने आलिंगन में ले लिया। ठाकुर नरहरि ने श्रीनिवास को बताया, 'मेरे प्रिय पुत्र, तुम्हें देखकर मेरे नेत्र सजल हो गये हैं क्योंकि मैं भी तुम से बहुत समय से मिलने को उत्सुक था।'

उन्होंने बोलते हुए श्रीनिवास के तन को अपने कमल समान हाथों से सहलाया। श्रीनिवास ने हाथ जोड़कर कहा, 'मुझ पर दया कीजिये और मुझे हर प्रकार की सफलता प्रदान कीजिये। मैं एक अयोग्य व्यक्ति हूँ, मैं कुछ नहीं जानता, कृपया सभी दुर्भाग्यों से मेरी रक्षा कीजिये।'

मधुमती सखी हैं नरहरि सरकार ठाकुर

श्रीनिवास बोलते बोलते रो पड़े। ठाकुर नरहरि ने उन्हें सांत्वना दी और अपने घर ले गये। 'श्रीगौरगणोद्देश दीपिका' के अनुसार श्रीनरहरि ठाकुर सरकार पहले वृन्दावन में श्रीवृषभानुनंदिनी राधिका रानी की अति प्रिय विश्वास-पात्र सखी मधुमति थीं।

वे अब श्रीचैतन्य महाप्रभु के अतिप्रिय अनुयायी श्रीनरहरि सरकार के रूप में प्रकट हुईं थीं। बहुत सी महत्वपूर्ण बातें जानने और श्रीठाकुर से सार्थक सलाह लेने के बाद श्रीनिवास चखण्डी लौट आए।

श्रीनिवास ने अपने पिता से उत्सुकता वश अनुरोध किया कि वे श्रीगौरांग के जीवन के बारे में उन्हें कुछ बताएं। श्रीचैतन्य दास ने कहा, 'एक अज्ञानी होने के नाते मैं कैसे श्रीगौरचन्द्र की लीलाओं का वर्णन करूं, वे तो भगवान् ब्रह्मा की पहुँच से भी बाहर हैं।'

पिता से श्रीनिवास द्वारा श्रीचैतन्य चरित श्रवण

पुत्र श्रीनिवास! मेरी बात ध्यान से सुनो। श्रीगौर राय स्वयं वृन्दावनचन्द्र श्रीकृष्ण हैं। जब वे अन्य बालकों के साथ खेलने वाले एक बालक मात्र थे, तब हम पढ़ रहे थे। हम छात्र थे और अपने गुरु से पाठ पढ़ते थे। उस समय हमें भगवान् की भक्ति का कुछ पता नहीं था। हमने श्रीचैतन्य महाप्रभु के बारे में और उनकी मनोहारी गतिविधियों के बारे में सुना, और उनसे चाहे एक बार ही सही पर मिलने की अभिलाषा हुई। यद्यपि उत्पाती लोग हमें वहाँ नहीं जाने देते थे। उन्हें अपने ज्ञान का इतना अभिमान था कि वे श्रीचैतन्य महाप्रभु का उपहास करने लगे। मैं खुद को दुखी अनुभव कर भगवान् कृष्ण से प्रार्थना करने लगा कि मुझे गौर राय प्रभु से मिलने का एक अवसर दे दीजिये। मैंने यह भी प्रार्थना की कि वे अंहकारियों के अभिमान का नाश कर दें। अब सुनो कि भगवान् ने कैसे स्वयं उन अहंकारियों का अभिमान नष्ट किया।

केशव काश्मीरि मिलन

सौभाग्य से एक विश्व विख्यात विद्वान् श्रीनवद्वीप आये। उन्होंने स्वयं को सरस्वती देवी के प्रतिनिधि के रूप में प्रचारित किया, जिनके अनुग्रह से वे एक महान् विद्वान् बन पाये थे। श्रीनवद्वीप के अध्यापक गण बहुत ही भयभीत थे और चखण्डी के लोग बहुत घबरा से गये थे। उस समय सरस्वती देवी के पति भगवान् नारायण, निमाई पंडित के रूप में नवद्वीप में रहते थे और अपने छात्रों को जाह्नवी नदी के तट पर व्याकरण और अन्य शास्त्र पढ़ा रहे थे।

उस विद्वान् ने निमाई पंडित की शैक्षणिक ख्याति के बारे में सुन रखा था परन्तु निमाई को मात्र बालक समझ कर अपना प्रतिद्वंदी नहीं मानते थे। फिर भी

उन्होंने निमाई को गंगा की स्तुति पर विस्तार से बताने के आग्रह को स्वीकार लिया। विद्वान् ने अपनी काव्य उत्कृष्टता से सहज में ही कुछ श्लोक उच्चारित कर दिये और जो सुन रहे थे वे आश्चर्यचकित थे।

विभिन्न श्लोकों में से प्रभु ने एक श्लोक इंगित किया जिसमें विद्वान् ने कई गलतियां की थीं। जब विद्वान् अपना बचाव न कर सका तो वह लज्जित हुआ और उसने पराजय स्वीकार कर ली।

निमाई पंडित ने विद्वान् के साथ एक सज्जन की तरह व्यवहार किया। जब उस विद्वान् को सरस्वती देवी से निमाई की वास्तविक पहचान प्राप्त हुई तो उसने स्वयं को प्रभु चरणों में समर्पित कर दिया। नदिया के विद्वान् निमाई पंडित की विजय का समाचार सुनकर अत्यधिक प्रसन्न हुए और महाप्रभु की ख्याति पूरी धरा पर फैल गयी।

गया गमन

श्रीचैतन्य महाप्रभु, अपने अनेक अनुयायियों के साथ गया गए और गया से एक परिवर्तित व्यक्ति के रूप में वापिस आए। पूरी मानव जाति को शिक्षित करने के लिये वे प्रेम और भक्ति के वास्तविक अर्थ का प्रदर्शन करने लगे और इससे उनके अनुयायी बहुत प्रसन्न हुए। सभी निमाई पंडित के आध्यात्मिक गुणों की प्रशंसा करने लगे थे।

नदिया के लोग कभी निमाई को सर्वोच्च प्रभु के रूप में नहीं जान पाए। उन्होंने श्रीनिवास और अन्य भक्तों को आशीष दिया और वे धीरे-धीरे उनके वास्तविक रूप को पहचान पाए। अंततः श्रीगौरहरि अपनी पहचान न छिपा सके तो इस कारण अपने भक्तों श्रीवास पंडित, श्री पंडित गदाधर, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीहरिदास, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी और अन्य भक्तों, जो भी उनके आध्यात्मिक गुणों से मंत्रमुग्ध थे, के सामने अपनी पहचान प्रकट कर दी। अद्वैत प्रभु, प्रभु बलदेव नित्यानन्द नदिया में श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं में उनके साथ जुड़े।

मेरे पुत्र श्रीनिवास, मैं तुम्हें बताना चाहता हूँ कि भगवान् के इस अवतार ने जो करुणा मानव जाति पर बरसाई उसकी कोई सीमा नहीं थी। बिना किसी हथियार के उन्होंने मानव जाति का प्रेम और भक्ति से उद्धार किया। श्रीनिमाई विशेष रूप से दुष्टों, अधर्मियों, विधर्मियों जैसे कलियुग के प्रभावशाली लोगों तक का उद्धार करना चाहते थे।

जगाई-माधाई

नदिया में जगाई और माधाई नाम के दो बहुत ही कुख्यात विषयासक्त व्यक्ति रहते थे। वे शराब और महिलाओं में आसक्त थे और हमेशा बुरे कर्मों में लिप्त रहते थे। नदिया के लोग जानते थे कि केवल भगवान् ही स्वयं उन्हें सजा

दे सकते हैं। उन दोनों भाइयों के सामने रावण और कंस भी कुछ नहीं थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने करुणा के सागर श्रीनित्यानन्द प्रभु की सहायता से उनके पापयुक्त जीवन का उद्धार किया।

एक दिवस श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को श्रीकृष्ण की शिक्षा को प्रचारित करने की सलाह दी। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीहरिदास ठाकुर ने इस दायित्व को गम्भीरता से लिया और गलियों में जा जाकर हरिनाम गाने लगे। उनके गान के स्वर ने जगाई माधाई को व्यथित कर दिया और वो श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीहरिदास को मारने को दौड़े। नशे में धुत माधाई ने श्रीनित्यानन्द प्रभु के सिर पर चोट पहुँचाई परन्तु दया के सागर श्रीनित्यानन्द अविचलित और स्थिर रहे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु यह समाचार सुनकर बहुत क्रोधित हुए पर श्रीनित्यानन्द ने प्रभु के क्रोध को शांत किया और पूर्ण रूप से असहाय उन दो भाइयों पर कृपा करने का निवेदन किया। प्रभु ने तुरन्त उन्हें क्षमा प्रदान कर दी। जगाई और माधाई श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीगौरचन्द्र प्रभु के चरणकमलों में गिर गये। दोनों कुख्यात भाई परिवर्तित हो चुके थे और रोते हुए प्रभु से उन्हें क्षमा करने और उनके व्यथित मस्तिष्क को स्थिर करने का निवेदन करने लगे। चैतन्य महाप्रभु उनसे प्रसन्न हुए और उन्हें गंगा जी के किनारे पर स्नान घाटों को साफ करने का आदेश दिया। वे गंभीरता से प्रभु के आदेश पर दृढ़ हो गये और नित्य स्वयं को वहाँ की साफ सफाई वाले कार्य में लीन कर लिया। इस प्रकार वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय शिष्य बन गये।

कुछ निम्न श्रेणी के छात्र निमाई का उपहास करने लगे क्योंकि उन्होंने इन दोनों कुख्यात भाइयों का उद्धार किया था। वे वास्तव में सदैव निमाई की आलोचना करते रहते थे और उनमें कमियां ढूँढते रहते थे। यद्यपि नवद्वीप के लोग सामान्यतः यह सोचकर स्वयं को चिन्ता मुक्त अनुभव करते कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने प्रेम और करुणा से दोनों भाइयों को पराजित कर दिया था। इसके बाद भक्तगण निश्चिंत होकर संकीर्तन करने लग गये थे।

काजी उद्धार

उस समय नवद्वीप और आस पास का क्षेत्र यवन काजी के शक्तिशाली प्रभाव में था। गौड़ देश का यवन राजा भी इस काजी के नियंत्रण में था। जिसका परिणाम ये था कि सामान्य जन काजी के भय से कोई भी धार्मिक अनुष्ठान नहीं कर पा रहे थे क्योंकि उसने संकीर्तन करना निषेध कर दिया था। उसने श्रीचैतन्य महाप्रभु के क्रोध को आमंत्रण दे दिया था।

एक रात प्रभु अपने पार्षदों को लेकर गलियों में संकीर्तन करने चले गये। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर सभी नदिया वासियों ने प्रत्येक घर में एक दिव्य

उत्सव का आयोजन किया और लोगों ने दीये जलाये। सैंकड़ो हजारों की संख्या में लोग दीपक लेकर नदिया की गलियों में आकर संकीर्तन से जुड़ने लगे। पूरे वातावरण में ढोल, करताल की ध्वनि और भक्तों के नृत्य करते चरणों की चाप गूंज उठी। जैसे ही उन्होंने नृत्य और नाम का उच्चारण किया, जन समुदाय ने क्रोध में काजी के घर और बगीचे को नष्ट करना आरम्भ कर दिया।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने पूर्व में स्वयं को नृसिंह अवतार के रूप में उजागर कर दिया था तो काजी समझ सकता था कि वे एक साधारण व्यक्ति नहीं थे। जब अपने सेवकों से उसे पता चला कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के नेतृत्व में एक विशाल संकीर्तन मण्डली उसके घर और बगीचे को विनष्ट कर रही है तो वह भयभीत हो गया और अश्रुपूर्ण नेत्र लिए शीघ्रता से प्रभु से मिलने पहुँचा। वह श्रीगौरचन्द्र के चरणकमलों में गिर गया और दया की भीख माँगने लगा। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उसी समय उस पर अनुग्रह किया और तब से गलियों में निर्बाध रूप से संकीर्तन होने लगा।

श्रीचैतन्यदास को गौर दर्शन

श्रीचैतन्य दास ने बोलना जारी रखा, 'मैंने यह योजना बनाई थी कि याजिग्राम से लौटने के बाद मैं श्रीगौरचन्द्र से मिलने नवद्वीप जाऊँगा । यह बात मस्तिष्क में रखते हुऐ मैंने शीघ्रता से याजिग्राम में अपने कार्य पूर्ण किये और प्रसन्नतापूर्वक कंटकनगर की ओर यात्रा पर निकल पड़ा। श्रीकेशव भारती स्वामी पहले वहाँ रहते थे और मुझसे बहुत प्रेम करते थे। मैं जब भी याजिग्राम या कंटकनगर जाता तो उनसे अवश्य मिलता और कभी-कभी उनके यहाँ वास करता था। मैंने सोचा वहाँ जाने के बाद मैं श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिलने नवद्वीप जाऊँगा।'

मार्ग में मैंने देखा कि एक विशाल जन समुदाय कहीं जा रहा था तो उस कारण मार्ग पर बहुत भीड़ थी। मैंने किसी से पूछा कि वे कहाँ जा रहे हैं तो उसने उत्तर दिया कि वे श्री भारती के घर जा रहे हैं क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु वहाँ गये हैं। यह बात सुनकर तो मेरा हृदय इतना प्रसन्न हो गया मानों चन्द्रमा धरती पर उतर आया हो। मैं श्री भारती के घर पहुँचा और वहाँ श्रीगौरसुन्दर के दर्शन किये जिनके गौर वर्ण ने दर्शनमात्र से मुझे मंत्रमुग्ध कर दिया।

मैंने ऐसा रूप-रंग पहले कभी नहीं देखा जो कनक-चम्पा के फूलों को भी लज्जित कर दे, ऐसे घुंघराले केश, चमकदार मस्तक, ऐसे सुन्दर कान, नाक और नेत्र, ऐसा सुन्दर मुखमण्डल जो कि जो सहस्रों चंद्रमाओं के अभिमान को भी पराजित कर दे। मैंने इतना चौड़ा वक्षस्थल, इतने लम्बे हाथ, ऐसी पतली कमर और इतनी सुन्दर जंघाऐं और चरण अपने जीवन में किसी के नहीं देखे।

हे मेरे पुत्र श्रीनिवास, मैं तुमसे क्या कहूँ? श्रीचैतन्य महाप्रभु के अति उत्तम सौन्दर्य को देखते हुए मैं वहाँ प्रभु के सौन्दर्य रूपी दिव्य अमृत के सागर में डूब जाता था। जब किसी ने दूसरे व्यक्ति से पूछा कि प्रभु यहाँ क्यों आये थे तो उत्तर मिलता कि वे केशव भारती से संन्यास ग्रहण करेंगे और इस प्रकार अपने सुन्दर घुंघराले केशों का त्याग कर देंगे।

इन शब्दों ने मेरे हृदय में विस्फोट सा कर दिया। मैंने एक नाई को आते और उसे श्रीचैतन्य महाप्रभु का मुण्डन आरम्भ करते देखा। जब मुण्डन पूरा हुआ तो लोग उच्चस्वर में इस तरह विलाप करने लगे मानों सम्पूर्ण विश्व ही विकल हो गया हो।

भगवान् की इन लीलाओं का वर्णन करते–करते ब्राह्मण चैतन्य दास अचानक भूमि पर गिर कर बेसुध हो गये। अपने पिता से यह वृत्तान्त सुनकर श्रीनिवास अत्यधिक विलाप करने लगे। बहुत समय बाद ब्राह्मण को सुधि आयी तो वे गहरी सांस लेने लगे। जब उन्होंने अपने नेत्र खोले तो अपने पुत्र को रोते हुए जमीन पर लेटा हुआ पाया। उन्होंने अपने पुत्र को गोद में उठाया और श्रीगौरहरि से उस पर अनुग्रह करने की प्रार्थना की। उन्होंने धूल से सने अपने पुत्र के तन को साफ किया और उसके अश्रु पौंछे। तब उन्होंने नीलाचल में घटित अन्य घटनाओं के वर्णन को जारी रखा।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की नीलाचल की अद्भुत लीलाओं का वर्णन करते समय श्रीचैतन्य दास अपने नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं पर नियंत्रण नहीं कर सकते थे। उन्होंने अपने पुत्र को श्रीनित्यानन्द प्रभु, अद्वैत प्रभु और प्रभु के अन्य सहभागियों की विशिष्टताओं के बारे में बताया। उन्होंने प्रभु की ब्रज लीलाओं के बारे में भी बताया जिसके सम्बन्ध में उन्होंने श्रीनवद्वीप में अवतार लिया।

श्रीनिवास, श्रीगौरांग प्रभु की लीलाएं सुनने की अपनी इच्छा पर नियंत्रण न रख सके और विधाता से सहस्रों कानों की प्रार्थना की ताकि वे सम्पूर्णता से प्रभु की उन लीलाओं का श्रवण कर सकें।

उनकी अभिलाषा इतनी प्रबल थी कि उनका मुखमण्डल लाल हो गया और लगातार नेत्रों से अश्रु बहने लगे थे। वे बार–बार अपने पिता के चरणों में झुकते और उनसे श्रीगौरचन्द्र के बारे में बहुत सी बातें पूछते थे।

बाद में श्रीचैतन्य दास ने अपने पुत्र को बताया कि वे इतने बड़े हो गये हैं कि याजिग्राम में अपनी माता की देखभाल कर सकें। श्रीचैतन्यदास, अपनी सभी पारिवारिक जिम्मेदारियों यहाँ तक कि अपनी पत्नी की देखभाल भी श्रीनिवास को सौंप कर मुक्त होना चाहते थे क्योंकि उन्होंने श्रीवृन्दावन जाने का निश्चय कर लिया था।

श्रीरूप सनातन चरित्र भी सुनाया

वृन्दावन में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीरूप और श्रीसनातन के लिए अनेक कार्य करने को सौंप रखे थे। दोनों भाइयों द्वारा निभाये गये कर्तव्यों से यह सिद्ध होता था कि वे सामान्य व्यक्ति नहीं हैं। श्रीचैतन्यदास ने अपने पुत्र को बताया कि जब उन्होंने पहली बार श्रीरूप और श्रीसनातन को देखा तो वे उन्हें नहीं पहचान पाये। अब वे उन्हें जानते हैं तो वे उनकी जीवन गाथा अपने पुत्र को बता सकते हैं।

श्रीचैतन्य दास ने कहा, 'नवद्वीप के बहुत से प्राध्यापक गण गांव रामकेली में एकत्र हो जाते थे। मेरे प्राध्यापक चाखण्डी में सबसे ज्ञानी थे और उन्हें रामकेली में बुलाया गया। हम भी अपने प्राध्यापक के साथ रामकेली गये और एक शुभ समय पर उस स्थान पर पहुँच गये। श्रीरूप और श्रीसनातन के आवास के साथ ही अपने आवास को स्थापित कर हम प्राध्यापक के साथ दरबार में गये। वहाँ हमने देखा कि देवताओं के राजा इंद्र के समान श्रीरूप और श्रीसनातन पंडितों और प्राध्यापकों से घिरे दरबार में बैठे थे। उनके सौन्दर्य और बुद्धिमत्ता ने हर उपस्थित व्यक्ति का हृदय वश में कर लिया था। वे जब विशाल सुन्दर नेत्रों से अपने आस-पास देखते तो सब को देखकर मुस्कुरा देते। हम उनके लम्बे हाथों, चौड़े सीने और पतली कमर से आकर्षित थे।'

उन्होंने पूरे आदर सत्कार सहित हमारा स्वागत किया और हम उनके दैन्यपूर्ण और विनम्र व्यवहार से अचम्भित थे। यद्यपि उनके पास अपार धन-सम्पदा थी पर वे कभी अभिमान में नहीं दिखे। इसके विपरीत वे सबसे प्रार्थना करते कि सब उन्हें आशीर्वाद दें कि उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों की भक्ति प्राप्त हो।

श्रीसनातन बड़े भाई थे और श्रीरूप छोटे भाई थे परन्तु दोनों ही सभी शास्त्रों के विद्वान् थे।

उन्होंने अनेक देशों के प्राध्यापकों को धन संपदा भेंट करके सन्तुष्ट किया और वे विभिन्न विषयों पर ध्यान से उन प्राध्यापकों के विचार भी सुनते थे। प्राध्यापक भी उन भाइयों की विभिन्न छंदों की व्याख्या के लिये प्रशंसा करते थे। यद्यपि बंगाल के राजा के मंत्री के रूप में दरबार में वे अत्यन्त प्रभावशाली और गौरवमय पद पर थे और राजा के मन में भी उनके लिये अत्यधिक अनुराग था फिर भी उन्होंने किसी का अपमान नहीं किया था। हम कई दिवसों तक उनके साथ बहुत सन्तुष्टि पूर्वक रहे।

बहुत समय बाद प्राध्यापक ने रामकेली त्याग दिया और हम भी अपने गांव आ गये। इसके कुछ दिवस बाद श्रीचैतन्य दास ने जीवन के वैभव से संन्यास ले लिया और अनेकों वैष्णवों के साथ नीलाचल चले गये। श्रीचैतन्य महाप्रभु

श्रीवृन्दावन चले गये और मार्ग में रामकेली में रुके, जहाँ वे श्रीरूप और श्रीसनातन से मिले। उन्हें आशीष देकर प्रभु ने व्रज यात्रा को बीच में समाप्त कर जगन्नाथपुरी लौट जाने का निश्चय किया। कुछ समय बाद फिर वे श्रीवृन्दावन को चल दिये।

रामकेली में श्रीरूप और श्रीसनातन ने सुना कि श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीवृन्दावन चले गये। हम नहीं जानते कि किसने उन्हें प्रेरित किया परन्तु उस समय तक उन्होंने धन सम्बन्धी कार्यों और सांसारिक सुख सुविधाओं का त्याग कर दिया था। श्रीरूप और उनके भाई श्रीवल्लभ पहले व्रज को गये और प्रयाग में श्रीकृष्णचैतन्य से मिले। प्रभु श्रीरूप से मिलकर अति प्रसन्न हुए और उन्हें विविध आशीष दिये। रामकेली से श्रीसनातन गुप्त रूप से व्रज गये और काशी में श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिले। श्रीचैतन्य महाप्रभु भी श्रीसनातन से मिलकर प्रसन्न हुए और उन्हें महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

जब लोगों को यह पता लगा कि श्रीरूप और श्रीसनातन व्रज चले गये हैं तो वे आश्चर्यचकित हुए कि दोनों भाइयों के लिये ये कैसे संभव है कि वे अपने धन वैभव का इस प्रकार त्याग कर दें। रामकेली के सभी लोग पुरुष, महिलायें, बच्चे, जवान, वृद्ध सभी श्रीरूप और श्रीसनातन की गतिविधियों की प्रशंसा करते थे। रामकेली के प्राध्यापक, श्रीरूप और श्रीसनातन की अनुपस्थिति में वहाँ नहीं रहना चाहते थे, तो वे भी चले गये। वैष्णनजनों के अतिरिक्त सभी को बुरा लगा कि श्रीरूप और श्रीसनातन का सांसारिक विषयों से मन हट गया था।

श्रीवृन्दावन में श्रीरूप और श्रीसनातन ने अध्यापक की सेवा को चुना। लुप्त स्थानों को खोजने के बाद श्रीरूप गोस्वामी केवल एक बात को लेकर चिंता अनुभव करने लगे। शास्त्रों के अनुसार श्रीगोविन्द व्रजेन्द्र कुमार श्रीविग्रह के रूप में श्रीवृन्दावन में किसी पवित्र स्थान पर स्थापित किये गये थे पर श्रीरूप को वे विग्रह नहीं मिले, यद्यपि उन्होंने काफी समय तक कई स्थानों पर खोज की। उन्होंने यहाँ तक कि व्रज के घरों में भी श्रीविग्रह को खोजा और जब वे श्रीविग्रह को नहीं खोज पाये तो वे धैर्यपूर्वक यमुना जी के तट पर आकर बैठ गये।

श्रीगोविन्द देव का प्राकट्य

संयोग से एक दिवस एक ब्रजवासी श्रीरूप गोस्वामी के पास आया। वह देखने में सुन्दर और शांत स्वभाव का था। उसने श्रीरूप से पूछा कि वे इतने उदास क्यों हैं? श्रीरूप ने उस ब्रजवासी में अति दिव्य आकर्षण का अनुभव किया और अपनी पूरी व्यथा कह डाली। तब ब्रजवासी ने उन्हें चिंता न करने को कहा। वृन्दावन में एक गोमा टीला नामक स्थान था जहाँ एक गाय नित्य दोपहर को आकर स्वेच्छा से अपने दुग्ध से उस स्थान को सींचती थी क्योंकि श्रीगोविन्द ने वहाँ स्वयं को धरती में छिपा रखा था। व्रजवासी श्रीरूप को गोमा टीला ले

गया और वह स्थान दिखाकर अन्तर्धान हो गया। यह सब देखकर श्रीरूप बेसुध होकर जमीन पर गिर पड़े।

कुछ समय बाद श्रीरूप को सुध आयी पर वे अपने आँसुओं पर नियंत्रण न रख पाये। श्रीरूप भगवान् की इच्छा समझ गए थे और उन्होंने अपने भाव को नियंत्रित किया। उन्होंने व्रजवासियों को श्रीगोविन्द के गुप्त विग्रह के बारे में बताया और वे सब अचम्भित होकर और यह समझकर कि वह स्थान बड़ा डरावना था, एक झुण्ड के रूप में गोमा टीला आ गये। तभी श्रीबलराम के मुख से एक दिव्य आकाशवाणी हुई, जिसे सबने सुना। तब ब्रजवासियों ने सावधानी से धरती की खुदाई शुरू की और अंततः उन्हें **श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह** के दर्शन हुए जिसकी सुन्दरता लाखों कन्दर्पों के सौन्दर्य के समान थी।

व्रज के श्रीहरिदास पंडित गोस्वामी के शिष्य श्रीराधा कृष्ण गोस्वामी द्वारा रचित श्री सदन दीपिका ग्रन्थ में इस घटना का सम्पूर्ण विवरण है। हर किसी ने श्रीगोविन्द के नाम की महिमा गायी। असंख्य लोग गोमा टीला की ओर आकर्षित होकर श्रीविग्रह के दर्शनों को आने लगे। यहाँ तक कि ब्रह्माजी और अन्य देवता भी मनुष्य रूप में श्रीविग्रह के दर्शन करने आये। वास्तव में उस स्थान पर सहस्रों लोगों की भीड़ जमा हो गयी।

श्रीकाशीश्वर एवं श्रीगौरगोविन्द विग्रह

श्रीरूप गोस्वामी ने तत्काल श्रीचैतन्य महाप्रभु को जगन्नाथपुरी में पत्र भेजा और जब उन्हें पत्र प्राप्त हुआ तो वे प्रसन्नता के कारण अपने भावों पर नियंत्रण न रख पाये। तब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीकाशीश्वर को गुप्त रूप से वृन्दावन जाने का आदेश दिया। यद्यपि वे विलाप करने लगे क्योंकि वे प्रभु की संगति नहीं छोड़ना चाहते थे। श्रीगौरहरि अपने भक्त के मनोभाव को जान गये तो उन्होंने उन्हें अपना श्रीविग्रह प्रदान किया। तब प्रभु ने उन्हें समझाया कि श्रीगौर गोविन्द के श्रीविग्रह की उपासना कैसे करनी है और उन्हें श्रीवृन्दावन भेज दिया।

श्रीवृन्दावन पहुँचकर श्रीकाशीश्वर ने श्रीगौर गोविन्द के श्रीविग्रह को श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह के दायीं तरफ स्थापित कर दिया और दोनों की सेवा अत्यधिक गंभीरता और भक्तिभाव से करने लगे। श्री सदन दीपिका ग्रन्थ में इसका बहुत सुन्दर वर्णन है। श्रीगोविन्द देव की लीलाऐं कोई भाग्यशाली ही समझ सकता है। प्रभु ने दो प्रकार की लीलाऐं कीं जो प्रकट और अप्रकट हैं।

वृन्दादेवी प्राकट्य

मेरे पुत्र श्रीनिवास, मैं तुमसे क्या कहूँ? श्रीगोविन्द देव ने स्वयं अपने प्रकट रूप को श्रीरूप के सामने उजागर किया। श्रीरूप के स्वप्न में श्रीवृन्दा

देवी आयीं। तब श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेशानुसार श्रीरूप ने **ब्रह्मकुण्ड के तट से** श्रीवृन्दा देवी के श्रीविग्रह को खोद कर निकाला। **श्रीवृन्दा देवी** के श्रीविग्रह की मुद्रा अत्यंत सुन्दर थी जो तत्काल अपने भक्तों की इच्छा पूर्ण करने वाली थी। श्रीसदन दीपिका में इस घटना का भी विस्तृत वर्णन है।

श्रीमदनगोपाल

मेरे पुत्र श्रीनिवास, मैं श्रीरूप और श्री सनातन के महावन में वास के दौरान घटित गतिविधियों का पर्याप्त रूप से वर्णन करने में असमर्थ हूँ। एक दिवस श्रीसनातन ने श्रीमदन गोपाल को अपने मित्रों के साथ यमुना जी के तट पर खेलते हुऐ देखा। श्रीमदन गोपाल जो श्रीसनातन के प्रेम में अभिभूत थे, श्रीसनातन के सपने में भी आये और बोले, 'मैं महावन में रहना पसंद नहीं करता। मैं तुम्हारी झोपड़ी में रहना चाहता हूँ।' यह कहकर वे श्रीसनातन को उन्मादपूर्ण दशा में छोड़कर अन्तर्धान हो गये।

श्रीसनातन पूरी तरह से प्रभु की इच्छा समझ गये थे, हर्षोन्माद के साथ वे अगले दिवस प्रभु को अपनी कुटिया में ले आये और बिना हिचकिचाहट के प्रभु की सेवा में लग गये। यद्यपि वे बहुत अप्रसन्न हो गये क्योंकि वे राजाओं के राजा श्रीमदन गोपाल को रूखी सूखी बाटियाँ ही निवेदित कर सकते थे। प्रभु अपने भक्त के मनोभाव को समझ गये और स्वयं ही अपने लिये भोजन का प्रबन्ध कर लिया।

श्रीमदनमोहन मन्दिर

मुलतान के कृष्णदास कपूर नाम के एक समृद्ध व्यक्ति बहुत प्रभावी क्षत्रिय थे। वे अपनी नाव छोड़कर रोते हुए श्रीसनातन गोस्वामी के चरणकमलों में आ गिरे। श्रीसनातन ने उन्हें आशीष दिया और श्रीमदन मोहन के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। उसी दिवस से कृष्णदास कपूर ने भगवान् के लिये मन्दिर का निर्माण करना प्रारम्भ कर दिया और उसे बहुत से बहूमूल्य आभूषणों से सजाया। उन्होंने प्रभु के लिये तरह-तरह के व्यंजन निवेदित किये। श्रीसनातन सब प्रकार के प्रबन्धों से सन्तुष्ट थे और ब्रजवासी भी श्रीसनातन गोस्वामी के प्राणधन श्री मदन मोहन को देखकर प्रसन्न थे।

श्रीगोपीनाथ मन्दिर

किस तरह श्रीचैतन्य महाप्रभु ने स्वयं को अपने भक्तों के सम्मुख प्रकट किया उसे कौन समझ सकता है? श्रीपरमानन्द भट्टाचार्य और श्री मधु पंडित, दो बहुत ही महान् भक्त थे जो श्रीकृष्ण, व्रजेन्द्रनन्दन कृष्ण के अगाध प्रेम में बंध

गये थे? उन्होंने वंशीवट के निकट **श्रीगोपीनाथ जी के विग्रह** को प्रतिष्ठापित किया। श्री साधन दीपिका ग्रन्थ में इसका वर्णन है।

जब श्रीकृष्णदास ने श्रीमदनमोहन के दर्शन किये तो वे दण्डवत् होकर प्रभु के चरणों में गिर गये। तब श्रीमधु पंडित को उनकी विग्रह सेवा का मुख्य पुजारी नियुक्त किया गया। श्रीपरमानन्द भट्टाचार्य श्रीमधु पंडित से बहुत स्नेह रखते थे। ब्रज के लोग प्रभु की चमकती हुई कांति और रूप-रंग को देखकर अभिभूत थे इसलिये वे सब मिलकर श्रीगोपीनाथ जी के दर्शनों को आते।

श्रीचैतन्य दास ने अपने पुत्र के सम्मुख स्वीकारा कि वे श्रीवृन्दावन जाने को बहुत उत्सुक थे। यह घटना अपने पुत्र को बताते बताते श्रीचैतन्य दास फूट-फूट कर रोने लगे, इतना कि उनके अश्रु गालों से होते हुऐ पूरे तन को पूरी तरह भिगो गये।

श्रीनिवास ने अपने पिता के चरण पकड़ लिये और रोने लगे। वे विस्मित थे कि कब उनकी अभिलाषा पूर्ण होगी। बहुत देर बाद दोनों ने स्वयं के भावावेश को संभाला और श्रीकृष्ण की लीलाओं के चिन्तन में लीन रहे।

जो कोई भी पिता-पुत्र के इस संवाद को एकाग्रचित होकर सुनेगा उसे निश्चित ही भक्ति रूपी अनमोल रत्न प्राप्त होगा। कवि श्रीनरहरि दास ने श्रीअद्वैत प्रभु के चरणकमलों के आनुगत्य में इस ग्रन्थ 'श्रीभक्तिरत्नाकर' के वर्णन करने का दायित्व सम्हाला है।

तृतीय प्रवाह

श्रीनिवास चरित्र

श्रीगौरसुन्दर, श्रीनित्यानन्द अवधूत श्रीहलधर, श्रीअद्वैत ईश्वर, शान्तिपुर के भगवान् और श्रीगौर के अतिप्रिय श्री पंडित गदाधर की जय जयकार हो।

पंडित ठाकुर श्रीनिवास, हरिनामामृतमग्न श्रीहरिदास, श्रीस्वरूप दामोदर और श्रीमुरारी गुप्त की जय जयकार हो।

श्रीवासुदेव सार्वभौम महाशय, राय रामानन्द, प्रेम के भण्डार श्रीगौरीदास, श्री पंडित वक्रेश्वर, श्रीनरहरि, श्रीमुकुन्द और श्रीकाशीश्वर की जय जयकार हो।

श्रीजगदीश, श्रीगौरीदास, श्रीधनंजय, श्रीसनातन, श्रीरूप, श्रीजीव, श्रीगोपाल, श्रीभूगर्भ, श्रीलोकनाथ और श्रीरघुनाथ भट्ट की जय जयकार हो।

श्रीखण्ड के श्रीरघुनाथ दास, गोवर्धन के श्रीराघव, श्रीनिवास, श्रीनरोत्तम, श्रीरामचन्द्र और श्रीश्यामानन्द की जय जयकार हो।

श्रीठाकुर की जय जयकार हो, जो एक महान् वैष्णव थे और जिनके स्पर्श से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पवित्र हो गया था।

असंख्य पाठकों की जय जयकार हो जिनमें श्रेष्ठतम आध्यात्मिक भक्ति गुण है।

श्रीनिवास, श्रीगौर की स्मृतियों को अपने हृदय में समेट कर, अपने माता-पिता की सेवा में लीन हो गये जो अपने पुत्र से बहुत स्नेह करते थे। यहाँ तक कि चाखण्डी गांव के लोग भी श्रीनिवास से इतना प्रेम करते थे कि वे उन्हें देखे बिना एक दिवस भी नहीं रह सकते थे। श्रीनिवास उनसे बहुत नम्रता से बर्ताव करते थे इससे उनका स्नेह और बढ़ गया। कुछ समय के बाद श्रीनिवास के पिता जी की मृत्यु हो गयी और उनकी माता ने केवल अपने पुत्र के लिए अपना दु:ख पी लिया।

अपने पिता की मृत्यु के कुछ दिवस बाद श्रीनिवास अपने नाना के घर याजिग्राम गये। उन्होंने याजिग्राम में ही अपनी माता के साथ रहने का मन बनाया। याजिग्राम के वासी यह समाचार सुनकर अति प्रसन्न हुए और बहुत प्रसन्नता से उनके लिये एक सुन्दर कुटिया का निर्माण किया। श्रीनिवास वास्तव में याजिग्राम और उसके आस पास के क्षेत्र वासियों के प्राण थे।

वे हमेशा भक्तिभाव में लीन रहते थे और ये बात श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों को प्रसन्न करती थी।

श्रीनिवास ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तों के श्रीमुख से श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाएं सुनी और सुनते सुनते उनका आनन्द बढ़ता गया। श्रीनिवास नीलाचल जाने को उत्सुक हो गये। उन्हें चिंता होने लगी कि क्या वे प्रभु का संग पाने के योग्य है, क्या प्रभु के पार्षद उन पर अनुग्रह करेंगे, क्या श्रीगदाधर पंडित उन्हें आश्रय प्रदान कर उन्हें अपनी छत्रछाया में रखने को राजी होंगे, जब श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीमद्‌भागवत सुनकर अपने शिष्यों के समक्ष व्याख्या कर रहे होंगे तो क्या वे सामने बैठ सकेंगे, क्या वे प्रभु नीलचन्द्र जगन्नाथ के साथ श्रीबलराम प्रभु और सुभद्रा देवी के दर्शन कर पायेंगे?

श्रीखण्ड के लिये प्रस्थान

श्रीनिवास ने अपना मन बनाया और फिर श्रीखण्ड के लिये निकल पड़े। रुदन करते हुए उन्होंने श्रीविग्रह के सम्मुख और श्रीगौरचन्द्र के प्रिय पार्षदों के आगे झुककर अभिवादन किया। ठाकुर नरहरि ने हाथ बढ़ा कर श्रीनिवास को बहुत स्नेह दिया। उन्होंने श्रीनिवास की कुशलक्षेम जानी और आँसुओं से श्रीनिवास का पूरा तन भिगो दिया। श्रीनिवास ने बताया कि वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के दर्शनों के लिये नीलाचल की यात्रा पर जा रहे हैं। श्रीनरहरि ने प्रसन्नतापूर्वक तत्काल ही नीलाचल जाने की स्वीकृति प्रदान कर दी क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु जल्दी ही संसार से विदा लेने वाले थे।

श्रीअद्वैत की तर्जा

श्रीअद्वैत आचार्य ने कुछ तर्जा गीत लिखे और श्रीनरहरि को भिजवा दिये। इन गीतों में उन्होंने अपने कुछ विचारों को प्रकट किया था। श्रीचैतन्यचरितामृत में यह वर्णित हैं: 'बाउल से कह दो, लोग बाउल हो गये हैं। यहाँ बिकता नहीं है चावल और सब गतिविधियां हो गयी हैं आउल (उलट पलट)।

तर्जा गीतों के अर्थ ने भक्तों को बहुत चिंतित कर दिया। उन्हें शंका हो गई कि श्रीचैतन्य महाप्रभु जो कि स्वयं प्रभु हैं, किसी भी समय संसार से विदा हो जायेंगे। जैसे ही श्रीनिवास ने यह गीत सुना, वे रोने लगे, पर भक्तों ने उन्हें सांत्वना दी और नीलाचल जाने का सुझाव दिया। उन्होंने यात्रा में होने वाले व्यय के लिये उन्हें कुछ धन भी दिया।

रघुनन्दन, श्रीनिवास से मिलने आये और उन्हें बहुत हर्षित होकर आलिंगन किया। श्रीनिवास, श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीखण्ड में रहने वाले सभी भक्तों से मिले और विदा होने की आज्ञा मांगी। वे याजिग्राम वापिस आ गये और अपनी माता को सब बता दिया। माघ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी के शुभ दिवस, श्रीनिवास ने अपनी माता से विदा ली और नीलाचल को चल दिये। वे तब एक सुन्दर युवा थे और देखने वाले अनेक यात्रियों को आकर्षित करते थे।

किसी ने कहा, 'वे जरूर एक राजकुमार होंगे। वे एक महान भक्त होने पर भी पैदल चल रहे हैं।'

दूसरे ने कहा, 'वे बार-बार रो रहे हैं कि नहीं ? यदि ऐसा है तो वे निश्चित ही श्रीगौर के अनुयायी हैं।'

किसी ने कहा, 'ये संभव है, अंततः श्रीगौरचन्द्र के लिये सब कुछ संभव है।'

अन्य व्यक्ति ने कहा, 'मेरे प्यारे भाइयों, जो भी श्रीगौरचन्द्र का एक बार दर्शन कर ले, चाहे पुरुष हो या महिला, वह अपने भावों पर नियंत्रण नहीं रख सकता।'

एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'श्रीगौरचन्द्र ही श्रीब्रजेन्द्र कुमार हैं और वे नीलाचल में अपनी श्रेष्ठ लीलाएें करते हैं।'

एक व्यक्ति ने कहा, 'उत्कल बहुत भाग्यशाली स्थान है क्योंकि प्रभु यहाँ चल और अचल दोनों रूपों में विद्यमान हैं।'

किसी ने कहा, 'श्रीगौर और श्रीजगन्नाथ एक ही हैं और जो कोई भी इसे अस्वीकार करेगा उसका नाश होगा।'

ऐसे ही बातचीत करते हुए लोगों ने श्रीनिवास को रोते हुए पास से जाते देखा। जैसे-जैसे श्रीनिवास आगे बढ़े, जो भी व्यक्ति उन्हें श्रीक्षेत्र से आता हुआ मिलता, उसका आदर-सत्कार करते और उनसे श्रीचैतन्य महाप्रभु की कुशल

क्षेम पूछते। वे भगवान् से हमेशा दो पंख देने की प्रार्थना करते थे ताकि वे नीलाचल के लिये उड़ान भर सकें।

नीलाचल गमन

श्रीचैतन्य महाप्रभु के लीला संवरण का हृदय विदारक समाचार सुनकर श्रीनिवास नीलांचल की ओर तेजी से भागे। इस हृदय विदीर्ण कर देने वाले आघात का कोई वर्णन नहीं हो सकता। श्रीनिवास पागलों की तरह अपने हाथ अपने शीश पर मार रहे थे, वे अपने बालों को नोचने लगे, अपने नाखूनों से अपने वक्षस्थल की त्वचा फाड़ दी। वे इतनी बुरी तरह विलाप करने लगे कि पत्थर भी पिघल जाये। वे बार-बार अचेत होकर जमीन पर गिर रहे थे। वे पूरा दिवस विलाप करते रहे और संध्या समय उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि वे अग्नि में कूदकर प्राण त्याग देंगे। वे बार-बार रोते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु का नाम उच्चारण कर रहे थे।

स्वप्न में दर्शन

प्रभु की इच्छा से, देर रात्रि श्रीनिवास गहरी निद्रा में सो गये और श्रीगौरचन्द्र का सपना देखने लगे। श्रीनिवास ने प्रभु को एक सुन्दर प्रकाश पुंज के रूप में देखा। उनके श्रीमुख का तेज कोटि चन्द्रमाओं को चुनौती दे रहा था। उनके विशाल सुन्दर नेत्र थे। उनके हाथ घुटनों तक पहुँच रहे थे और गले में पुष्प माला लटक रही थी। उनकी अमृतमयी मुस्कान ने तत्क्षण श्रीनिवास को मंत्रमुग्ध कर दिया। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु उनके सामने आये तो श्रीनिवास उनके चरणों में झुक गये। तब प्रभु ने श्रीनिवास के मस्तक पर चरण रख उन्हें आशीष दिया। श्रीनरसिंह कविराज ने इसका वर्णन अपने ग्रन्थ में किया है।

जब श्रीचैतन्य महाप्रभु उनके स्वप्न में से अदृश्य हुए तो श्रीनिवास जाग गये परन्तु वे पुनः बहुत उदास हो गये। यह जानकर कि श्रीनिवास अभी शांत नहीं हुए, श्रीगौरहरि पुनः उनके स्वप्न में प्रकट हुए और बताया कि श्रीगदाधर पंडित और उनके अन्य पार्षद बहुत उत्सुकता से उनके आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं, तो उन्हें बिना विलम्ब किये नीलाचल जाना चाहिये।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने हाथों से श्रीनिवास के अश्रु पूरित नेत्रों को पोंछ कर, उन्हें आलिंगन किया और फिर अन्तर्धान हो गये। प्रातः श्रीनिवास उठे और अपनी यात्रा जारी रखी। कुछ समय बाद वे नीलाचल पहुँच गये और श्रीनरेंद्र सरोवर को देख कर वे अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न कर पाये। श्रीनरेंद्र एक राजा थे और शौच उनके प्रधानमंत्री थे। सरोवर का नाम इन दो महान् व्यक्तियों के नाम पर ही रखा गया। श्रीचैतन्य महाप्रभु अक्सर इसी झील में खेलते थे। जब उन लीलाओं की याद आने लगी तो श्रीनिवास जमीन पर लोट-लोट कर

विलाप करने लगे। कुछ देर बाद उन्होंने स्वयं को सम्भाला और श्रीनरेन्द्र के प्रति सम्मान व्यक्त करके यात्रा जारी रखी। (आजकल यह स्थान नरेन्द्र सरोवर नाम से प्रसिद्ध है)

सिंहद्वार पर संकीर्तन

उस दिवस देर रात में श्रीनिवास ने सिंह द्वार के निकट ही एक स्थान पर विश्राम करने का निश्चय किया और पावन नाम कीर्तन में स्वयं को लीन कर लिया। चलते हुए उनके नेत्रों से झरझर अश्रु बह रहे थे। सहसा उनका संतुलन बिगड़ गया और वे जमीन पर गिर गये। अंततः श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से वे सो गये। श्रीबलराम और सुभद्रा के संग भगवान् जगन्नाथ उनके स्वप्न में प्रकट हुए।

भगवान् जगन्नाथ ने श्रीनिवास को करुणापूर्ण दृष्टि से देखा और अदृश्य हो गये। जब श्रीनिवास भावोन्माद में लीन थे तो एक ब्राह्मण आये और उनसे बोले, 'हे ब्राह्मण पुत्र, तुमने बहुत समय से कुछ खाया नहीं है, यह महाप्रसाद लो और खा लो।'

यह कहकर ब्राह्मण अदृश्य हो गये। श्रीनिवास चौंक गये, और विचार करने लगे कि 'इन ब्राह्मण को मेरे दु:ख का पता कैसे लगा? कुछ महाप्रसाद देकर वे अदृश्य क्यों हो गये?'

वे इस बारे में सोच ही रहे थे कि प्रभु उनके सम्मुख प्रकट हुए और उन्हें सांत्वना दी। श्रीनिवास ने प्रभु की करुणा को स्वीकार किया और प्रसन्नता से महाप्रसाद पाया। इसके बाद श्रीनिवास जागे और नरेन्द्र सरोवर का जल, जो उन्होंने एक पात्र में रखा था उससे हाथ मुंह धोया और उस जल का पान भी किया। उन्होंने शान्तिपूर्वक जप किया और धीरे-धीरे पुनः गहरी निद्रा में सो गये।

स्वप्न में महाप्रभु दर्शन

श्रीनिवास ने स्वप्न में देखा कि श्रीगौरांग प्रभु अपने पार्षदों से घिरे, देवताओं के राजा पुरन्दर के समान अपनी प्रजा के साथ दरबार में बैठे हैं। गदाधर पंडित प्रभु के संग बैठे हैं और सुरीले कण्ठ से भागवत का पाठ कर रहे हैं। सभी श्रोता भावोद्रेक में रोने लगे थे और उनके शरीर में उत्साह के कारण कंपन हो रहा था। तब तक वह सपना धुंधला गया।

जब श्रीनिवास जागे तो उन्होंने पुनः जप शुरू कर दिया और एक बार फिर सो गये। इस बार उन्हें स्वप्न आया कि श्रीगौरचन्द्र और उनके पार्षद सिंह द्वार की ओर से आ रहे हैं। श्री गौर का तन एक स्वर्ण पर्वत को भी लज्जित कर रहा था। उनके हाथ घुटनों तक थे। उनका चेहरा अनेकों चन्द्रमाओं के समान सुन्दर

था। उनकी मुस्कान अमृत बरसाती हुई सी प्रतीत होती थी। उनके विशाल कमल समान नेत्र कानों तक विस्तृत थे और वे निरंतर प्रेम अश्रु बहा रहे थे। उन्होंने गले में तुलसी की एक माला धारण कर रखी थी और एक सुन्दर अंग वस्त्र भी धारण कर रखा था। उनका आभायुक्त शरीर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को आकर्षित कर रहा था।

वे हर्षोन्मत्त होकर, सिंह की सी सुन्दर चाल से चल पड़े। श्रीनिवास हर्षोन्मादित प्रेम में डूबे थे और इतने मंत्रमुग्ध थे कि वे नींद में ही भूमि पर गिर गये और श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणों में जा झुके। प्रभु ने अपने दास पर बहुत दयाभाव से दृष्टिपात किया और कहा, 'क्षमा मत मांगो, तुम्हारा हृदय सदैव मेरे लिये शांतिदायक स्थान रहेगा।'

ऐसा कहकर श्रीचैतन्य महाप्रभु अन्तर्धान हो गये और श्रीनिवास नींद से जाग गये, उस समय तक सवेरा हो चुका था। श्रीनिवास ने स्वयं को शांत किया और कुछ यात्रियों से मार्ग पूछते हुए, मार्कण्ड की ओर चल दिये। अपने नित्य कर्म से निवृत्त होकर मार्कण्ड में स्नान किया। तब उन्होंने एक वृद्ध ब्राह्मण से श्रीगोपीनाथ जी के मन्दिर का मार्ग पूछा। वह वृद्ध व्यक्ति उन्हें मन्दिर ले गया, जहाँ गदाधर पंडित रहते थे, यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु के परलोक गमन के कारण वे अपने जीवन को सही प्रकार से नहीं चला पा रहे थे।

श्रीगदाधर पण्डित से मिलन

श्रीगदाधर पंडित की यह अवस्था देखकर श्रीनिवास बहुत व्यथित हो गये। वे नीचे मुंह करके श्रीगदाधर पंडित के चरणकमलों में गिर गये और फिर शीघ्रता से श्रीगोपीनाथ जी के मन्दिर में प्रवेश कर गये। उपस्थित लोगों ने उनसे पूछा कि वे कौन हैं और कहाँ से आये हैं? श्रीनिवास ने उत्तर दिया कि वे बंगाल से आये हैं। उनके पिता का नाम श्रीचैतन्य दास और उनका नाम श्रीनिवास है। सभी अत्यधिक प्रसन्न हुए और उन्हें प्रेम से अंगीकार किया।

श्री पंडित गोस्वामी एक निर्जन स्थान पर अकेले बैठे थे। उनकी मानसिक स्थिति अवर्णनीय थी। उनका चन्द्रमा समान मुखमण्डल और सुन्दर शरीर ऐसा क्षीण हो चुका था जैसे जल बिना मुरझाया कमल। वे निरंतर विलाप कर रहे थे और उनका पूरा शरीर और उनके हाथों में विद्यमान श्रीमद्भागवत भी अश्रु सिंचित हो चुकी थी। वे बार-बार श्रीगौरसुन्दर का नाम उच्चारण कर रहे थे और अग्नि से भी गर्म गहरी सांसें भर रहे थे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की आज्ञा से ही केवल श्रीनिवास से मिलने के लिए ही श्रीगदाधर पंडित जीवन यापन कर रहे थे। जब श्रीनिवास, श्रीगदाधर पंडित के चरणों में झुके तो वे तत्काल ही अपनी सामान्य अवस्था में आ गये।

तब किसी ने उन्हें श्रीनिवास से परिचित करवाया। श्रीगदाधर पंडित ने उत्सुकतापूर्वक श्रीनिवास को अंगीकार किया और दोनों एक दूसरे को अपने अश्रुओं से अभिषिक्त करते हुऐ रुदन करने लगे। यद्यपि श्रीगदाधर पंडित मानसिक तौर पर बहुत व्यथित थे परन्तु श्रीनिवास को देखकर वे कुछ प्रसन्न हुए।

तब गदाधर पंडित ने अपने एक अनुयायी को श्रीनिवास को वहाँ रहने वाले अन्य गोस्वामी जनों का परिचय करवाने का आदेश दिया। जल्दी ही सभी भक्तों को सूचना मिल गयी कि श्रीनिवास, पंडित गोस्वामी से मिलने आये थे।

श्रीराय रामानंद मिलन

श्रीरामानन्द राय नित्य श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य के घर आते थे, जहाँ वे श्रीचैतन्य महाप्रभु का स्तुति गान करते थे। श्रीनिवास, श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य के घर पहुँचे, जहाँ वे उन दोनों से मिले और उनके चरणकमलों में झुक गये। श्रीनिवास को देखकर उन दोनों के हृदय में करुणा का सागर उमड़ पड़ा। उन्होंने बहुत हर्ष से उन्हें आलिंगन किया और श्रीनिवास नेत्रों में अश्रु लिये बार-बार उनके चरणों में झुक रहे थे। उन्होंने श्रीनिवास को पुनः अंगीकार किया और एक अनुयायी को उन्हें श्रीवक्रेश्वर पंडित से मिलवाने का आदेश दिया।

श्रीवक्रेश्वर पण्डित

श्रीनिवास, श्रीवक्रेश्वर पंडित के चरणकमलों में जा गिरे, जिन्होंने बहुत प्रेम भाव से बालक का आलिंगन किया। वे बोले, अच्छा किया मेरे प्रिय पुत्र, जो तुम आ गये, श्रीचैतन्य महाप्रभु तुम्हारे माध्यम से कई गतिविधियां करेंगे। तब उन्होंने श्रीनिवास को अन्य गोस्वामीजनों से मिलने का आदेश दिया।

श्रीपरमानन्द और अन्य संन्यासीजन श्रीचैतन्य महाप्रभु के गमन के बाद बहुत दीन अवस्था में रह रहे थे। न तो उन्हें दिवस रात का आभास होता और न ही उनके शरीर में सामर्थ्य रही थी, वे केवल जीने के लिये ही जी रहे थे।

श्रीनिवास उनमें से प्रत्येक से मिले और सम्मान प्रकट किया, वहीं संन्यासीजनों ने भी बहुत प्रेम से उन्हें अंगीकार किया। वे परस्पर रुदन करते हुए एक दूसरे से मिले और कुछ देर बाद सबने स्वयं को संभाला और श्रीनिवास को अन्य भक्तों से मिलने का सुझाव दिया।

श्रीनिवास, शिखी महिती के आवास पर अनेक वैष्णवों से मिले। भक्तों ने श्रीनिवास का बहुत भाव से अभिवादन किया और श्रीनिवास ने उन सभी से बातें की। कन्हाई खुन्ती ने उन्हें बताया, 'श्रीनिवास मेरे पुत्र, आज तुम एक प्रकाश पुंज की तरह हमारे अंधकारमय जीवन में आये हो।' उन्होंने और उनकी बहन ने कहा, 'हम तुम्हारे कारण ही जीवित हैं।'

श्रीपटनायक वाणीनाथ और अन्य, श्रीनिवास से मिलकर बहुत प्रसन्न थे, उन्होंने सुझाव दिया कि वे अन्य भक्तों से भी मिलें और उन्हें दुःखों से कुछ विश्रान्ति प्रदान करें। श्रीवाणीनाथ से आज्ञा लेकर श्रीनिवास श्रीगोविन्द और श्रीशंकर से मिले। उन्होंने पाया कि वे दोनों एक एकान्त स्थान पर बैठे श्रीगौरांग प्रभु के विरह में विलाप कर रहे थे। वे इतने दुर्बल हो गये थे कि हवा का झोंका भी उन्हें हिला सकता था।

श्रीनिवास उनके चरणकमलों में जा गिरे और तत्क्षण उन्होंने उन्हें अपनी भुजाओं में उठा लिया। वे सभी बुरी तरह से विलाप करते हुए जोर-जोर से रोने लगे। श्रीनिवास अचेत होकर धरती पर गिर गये परन्तु भक्तों ने अत्यंत प्रेमभाव से उन्हें सांत्वना दी और अन्य भक्तों से मिलने का सुझाव दिया। बहुत चिन्तित मनोभाव में श्रीनिवास, गोपीनाथ आचार्य से मिलने पहुँचे, जो इन्हें देखकर बहुत भावुक हो गये और उन्होंने इन्हें अपनी भुजाओं में भर लिया। कुछ देर बाद श्री आचार्य ने कहा, 'मेरी तुमसे मिलने की बहुत इच्छा थी, कुछ दिवस पूर्व श्रीचैतन्य महाप्रभु इस संसार से अलक्षित हो गये और दुर्भाग्य से तुम यहाँ समय पर नहीं पहुँच सके। तुम पश्चाताप मत करना, श्रीचैतन्य महाप्रभु सदा तुम्हारे हृदय में रहेंगे, अब जाओ और महाप्रभु के अन्य भक्तों से मिल लो।'

इस प्रकार श्रीनिवास प्रत्येक जगह गये और महान् भक्तों से मिले, जिन्होंने बहुत हर्ष के साथ उन्हें अंगीकार किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु के अदर्शन के कारण सभी भक्तों की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी थी, जिसका वर्णन सहस्रों मुखों से भी नहीं किया जा सकता। श्रीनिवास उन सब स्थानों पर गये जहाँ प्रभु के श्रीविग्रह स्थापित थे, और उन भक्तों से मिले जो जड़हीन देवों जैसे प्रतीत हो रहे थे। ऐसा लगता था मानों वे केवल श्रीनिवास से मिलने को ही जीवित हैं।

श्रीनिवास निराश होकर रुदन करने लगे क्योंकि वे श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी और श्रीस्वरूप दामोदर का संग नहीं प्राप्त कर सके थे। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी, श्रीचैतन्य महाप्रभु के गमन और श्रीस्वरूप दामोदर के अभाव के कारण बहुत निराश हो गये थे और इस कारण वृन्दावन चले गये थे। श्रीनिवास इन दो महान् भक्तों से नहीं मिल पाये थे जिस कारण वे विलाप करने लगे।

श्रीरघुनाथदास

तथापि वे भारी मन से उस स्थान पर गये जहाँ रघुनाथ दास गोस्वामी रहा करते थे। श्रीयदुनन्दन आचार्य के शिष्य श्रीरघुनाथदास के आनन्दमय चरित्र का वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीचैतन्य चन्द्रोदय नामक कथानक में श्रीशिवानन्द सेन ने श्रीयदुनन्दन आचार्य की पहचान को प्रकाशित किया है, जो कि श्रीवासुदेव दत्त ठाकुर के

प्रिय शिष्य और मित्र थे। नीलाचल में हर कोई श्रीरघुनाथ दास को जानता था क्योंकि वे बहुत ही सुन्दर युवा पुरुष और श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय शिष्य थे।

श्रीप्रतापरुद्र

जब श्रीकृष्ण चैतन्य विद्यमान थे तो श्रीप्रतापरुद्र महाराज ने अपना राज्य अपने पुत्र को सौंप दिया था। राजा ने श्रीवासुदेव सार्वभौम और श्रीरामानन्द राय के संग स्वयं को श्रीचैतन्य महाप्रभु के गुणगान में लीन कर लिया था। इस प्रकार वे बहुत हर्ष के साथ अपने दिवस व्यतीत करने लगे किन्तु तब एक दिवस अचानक उन्हें कुछ बुरी खबर की आशंका हुई। ठीक उसी समय उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु के अदर्शन का समाचार प्राप्त हुआ जिसके बाद राजा भूमि पर जा गिरे और अपनें मस्तक पर हाथों से प्रहार करने लगे। अंततः वे अचेत हो गये। राय रामानन्द की स्थिति भी राजा प्रतापरुद्र के जैसी हो गयी थी क्योंकि वे भी श्रीचैतन्य महाप्रभु के वियोग को नहीं सह पाये थे।

यह सुनकर कि राजा भी श्रीचैतन्य महाप्रभु के अदर्शन से पूर्व उनके दर्शनों से वंचित रह गये थे, श्रीनिवास उनके दुर्भाग्य को कोसते हुए विलाप करने लगे।

श्रीहरिदास समाधि दर्शन

श्रीनिवास सागर तट पर गये और श्रीहरिदास की समाधि स्थल के दर्शन किये। समाधि स्थल पर दण्डवत् प्रणाम कर हार्दिक सम्मान प्रकट किया। वे ठाकुर श्रीहरिदास की लीलाओं का स्मरण करने लगे और उनके अवर्णनीय चरित्र का ध्यान करते हुए पुनः भूमि पर जा गिरे। बार-बार श्रीहरिदास का नाम लेते हुए अचेत होने लगे। वहाँ उपस्थित भक्तजनों ने उन्हें संभालने का प्रयास किया, उन्होंने फिर समाधि स्थल पर सम्मान व्यक्त किया और विलाप करते रहे।

बालक को इतना व्याकुल देख एक भक्त श्रीनिवास को पंडित गोस्वामी के पास ले गया, जिन्होंने तब उन्हें श्रीजगन्नाथ जी के मन्दिर जाने का आदेश दिया।

श्रीजगन्नाथ दर्शन

श्रीनिवास ने मन्दिर के मुख्य द्वार सिंह द्वार से मन्दिर में प्रवेश किया। उस समय वे सूर्य के समान तेजोमय लग रहे थे। उनका तन धूल से सना हुआ था और रोने के कारण नेत्र लाल हो चुके थे। हर कोई श्रीनिवास की अवस्था देखकर मंत्रमुग्ध हो गया था और साथ ही उनकी तेजस्वी चाल-ढाल का साक्षी बन कर अचम्भित था। किसी ने कहा, 'श्रीनिवास को देखो, जिनका हृदय श्रीकृष्ण चैतन्य का अनादि आवास है।'

एक दूसरा व्यक्ति उससे सहमत होते हुए बोला, 'यह सत्य ही है, अन्यथा इतने सारे भक्तजन उनके प्रति चिंतित न होते। यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद उनके वियोग में बहुत दयनीय स्थिति में थे फिर भी वे श्रीनिवास की उपस्थिति में प्रसन्न दिखाई दे रहे थे।'

किसी अन्य ने कहा, 'भगवान् जगन्नाथ हमारे दु:खों को कम करने के लिये ही इन्हें यहाँ लाये हैं।' एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा पूर्व में दिया गया सन्देश अब हमें स्पष्ट है।' एक व्यक्ति ने कहा, 'मैं ऐसे कोमल बालक को कष्ट सहता नहीं देख सकता।'

श्रीनिवास ने सिंहद्वार को प्रणाम किया और प्रभु के दर्शन करने के लिये चल पड़े, जो कि पीड़ादायक नरक में रहने वाले पापियों को भी मोक्ष प्रदान करने वाले हैं। वे पहले श्रीनरसिंह भगवान् के दर्शनों को गये। उन्होंने श्रीविग्रह को प्रणाम किया और विविध प्रकार से स्तुतिगान किया। तब बहुत सावधानी से उन्होंने मन्दिर में प्रवेश किया और एक ऐसे कोने में खड़े हो गये जहाँ से वे दूर से नीलचन्द्र के दिव्य चेहरे का दर्शन कर सकें।

श्रीनीलचन्द्र का सौन्दर्य इतना भव्य था कि वर्षाकालीन काले मेघों के सौन्दर्य को भी परास्त कर दे। उनके विशाल कमल नयन और उनका सुन्दर मुखमण्डल कोटि चन्द्रमाओं को भी परास्त कर रहा था। उनके हाथ बहुत सुन्दर थे, वे आभूषणों और चमकीले वस्त्रों में बहुत ही सुन्दर और आकर्षक लग रहे थे। उनकी सुन्दर ग्रीवा में पृथ्वी को स्पर्श करती पुष्पों की माला लटक रही थी और उनके आकर्षक मस्तक पर पुष्पनिर्मित मुकुट सुसज्जित था।

श्रीबलराम दर्शन

श्रीनिवास ने आगे श्रीबलदेव के विग्रह के दर्शन किये जो कि बहुत सुन्दर थे और इनका सौन्दर्य चन्द्रमा को, कुन्द पुष्प को तथा मलयपर्वत को भी पराजित कर रहा था।

कितना दिव्य मुख! उनके नेत्रों की एक दृष्टि भी कन्दर्प को बेसुध करने वाली थी। उनके हाथ, भौंहे, विशाल नयन और मस्तक इतने सुन्दर थे कि किसी के लिये इनका वर्णन करना असंभव ही होगा। श्रीनिवास श्रीबलदेव के सौन्दर्य का दर्शन कर रोमांचित हो गये थे और श्रीसुभद्रा जी का सौन्दर्य मंत्रमुग्ध कर देने वाला था। उन्होंने पूर्णतः सन्तुष्टि से सुदर्शन चक्र के दर्शन किये।

जगन्नाथ जी के मुख्य पुजारी ने उन्हें कुछ प्रसाद और प्रभु की धारण की हुई पुष्प माला प्रदान की। श्रीनिवास प्रांगण में स्थित सभी मन्दिरों में गये और अंत में वे और उनका मार्गदर्शक श्रीगोपीनाथ आचार्य के निवास पर लौट आये जहाँ पुनः उन्होंने श्रीविग्रह के चरणकमलों में प्रणाम किया।

पुनः गदाधर पण्डित के पास

दूसरी बार वे पुनः पंडित गोस्वामी के आवास पर गये, जिन्होंने उन्हें महाप्रसाद पाने की आज्ञा दी जो उन्हें प्राप्त हुआ था। श्रीनिवास भावुक हो गये और रुदन करने लगे। वे प्रसाद की दिव्य सुगन्धि से आकर्षित हो गये और बहुत प्रेम भाव से प्रसाद पाया। श्रीगदाधर पंडित ने उन्हें अपने पास बैठने को कहा और रुंधे स्वर में बोले, 'तुम्हें भागवत पढ़ने की इच्छा है और मैं भी तुम्हें पढ़ाना चाहता हूँ परन्तु अब सब कुछ अव्यवस्थित हो गया है।'

यह कहकर श्रीगदाधर पंडित मौन हो गये। समय-समय पर वे भागवत के श्लोकों का उच्चारण करते और उनका अर्थ श्रीनिवास को बताते, जो निर्देश पाकर अपने आपको सौभाग्यशाली समझते। पंडित गोस्वामी ने श्रीनिवास को श्रीवृन्दावन जाने का सुझाव दिया क्योंकि वहाँ सभी इच्छाएें पूर्ण होंगी। उन्होंने श्रीनिवास को बताया कि उनके पास भागवत थी परन्तु वह क्षतिग्रस्त हो चुकी थी। श्रीनिवास ने ग्रन्थ के दर्शन किये और मस्तक से लगाकर सत्कार किया और शब्दों को देखते हुए बहुत भावुक हो गये। उन्होंने श्रीकृष्ण चैतन्य और गदाधर पंडित को याद किया जिनके अश्रुबिन्दुओं ने कुछ स्थानों पर शब्दों को अपठनीय कर दिया था।

ग्रन्थ पढ़ते समय श्रीनिवास कुछ इस प्रकार आनन्द की चरम सीमा का स्पर्श कर गये कि जिस कारण गोस्वामी जी भी भयभीत हो गये। उन्होंने अपने असीमित प्रेम भाव से श्रीनिवास को शांत करने का प्रयास किया। श्रीगोस्वामी ने श्रीनिवास को भक्तों से विदा लेकर गौड़ देश लौट जाने का सुझाव दिया। उन्होंने श्रीनिवास को आदेश दिया कि उनका सन्देश गदाधर दास, श्रीखण्ड के नरहरि और अन्य भक्तों तक पहुँचा दे। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों श्रीगोस्वामी ने श्रीनिवास को कुछ कठिन निर्देश दिये थे जो वह बालक नहीं समझ सका था। श्रीनिवास विलाप करने लगे क्योंकि वे उन निर्देशों पर प्रश्न नहीं कर सकते थे। वास्तव में जब उन्होंने श्रीगोस्वामी से विदा मांगी तो श्रीनिवास व्याकुलता पूर्वक रोने लगे और श्रीगोपीनाथजी के चरणकमलों में प्रणाम करके श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन करने चले गये।

श्रीखण्ड प्रस्थान

श्रीनिवास ने बहुत व्यथित मन से प्रभु के समक्ष प्रार्थना की। उन्होंने सब भक्तों से विदा ली और कुछ भक्त उन्हें दूर तक छोड़ने आये। श्रीनिवास बंगाल पहुँचे और श्रीगोस्वामी का सन्देश अनेकों भक्तों तक पहुँचाया। वे सोचने लगे कि क्या उन्हें दोबारा कभी श्रीगोस्वामी के दर्शन होंगे, ऐसा सोचते हुए वे श्रीखण्ड की ओर चल पड़े।

श्रीनिवास से मिलकर ठाकुर नरहरि ने हर्षोन्मत्त होकर उनका आलिंगन किया और रुदन करने लगे। उन्होंने श्रीनिवास से नीलाचल में श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों की अवस्था के बारे में पूछा। श्रीनिवास ने अवरुद्ध स्वर में महाप्रभु के गमन के कारण, भक्तों की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए सब कुछ बता दिया। पंडित गोस्वामी के बारे में बताते हुए श्रीनिवास स्वयं पर नियंत्रण न रख पाये और बेसुध होकर धरती पर गिर गये। श्रीरघुनन्दन और कुछ अन्य भक्त भी श्रीनिवास की दशा देखकर ही भावुक हो उठे। ठाकुर नरहरि आगे आये और सबको सांत्वना देकर शांत करने का प्रयास करने लगे।

पण्डित का अप्रकट समाचार

श्रीनिवास ने वह रात्रि श्रीखण्ड में व्यतीत की और प्रातःकाल पुनः जगन्नाथ पुरी के लिये प्रस्थान कर गए, यह सोचते हुए कि इस बार वे न केवल श्रीगोस्वामी के आदेश का पालन करेंगे बल्कि उनके पास में ही रहेंगे। ओडिशा में प्रवेश करते ही श्रीनिवास ने देखा कि कुछ व्यक्ति उसी दिशा में आ रहे हैं। बहुत उत्सुक होकर उन्होंने उन लोगों से पूछा कि उनके पास श्रीगदाधर पंडित का कोई समाचार है, परन्तु उन लोगों ने कोई उत्तर नहीं दिया।

पण्डित गोस्वामी अप्रकट

कुछ देर बाद उन्होंने मात्र इतना कहा कि श्रीपंडित संसार से गमन कर गये हैं। श्रीनिवास इस हृदय विदारक समाचार को सुनकर बेसुध हो जमीन पर गिर गये जैसे कोई वृक्ष जड़ से काट दिया गया हो। श्रीनिवास को ऐसा दुखद समाचार देने के पश्चाताप स्वरूप नीलाचल के लोग स्वयं को प्रताड़ित करने लगे। इसके अतिरिक्त उनके ऐसा पूछने पर वे करते भी क्या? अब उन्होंने ये विचार किया कि उन्हें उनका ध्यान रखना चाहिये और उनके प्राण बचाने का पूरा प्रयास करना चाहिये। इन लोगों ने श्रीनिवास को सचेत करने के लिये हर संभव प्रयास किये और सचेत हो जाने पर वे पुनः विलाप करने लगे और अपने हाथों से सिर पीटने लगे। वे उच्चस्वर में श्रीगदाधर पंडित को पुकारने लगे और उन्हें वापिस गौड़ देश भेजने के लिये विनय करने लगे। उनके विलाप से पशु पक्षियों का हृदय भी विचलित हो उठा।

उसके बाद रात्रि में जब श्रीनिवास गहन निद्रा में थे तो श्रीगदाधर पंडित जी उनके सपने में आये जो उन्हें तरह-तरह से सांत्वना देने का प्रयास कर रहे थे। फिर भी श्रीनिवास का रुदन नहीं रुका। वे पागलों की तरह जयपुर गांव की दिशा में भागने लगे और फिर दिशा भटक गये।

स्वप्न में श्रीगौर गदाधर दर्शन

एक अन्य रात्रि को श्रीगौर और श्रीगदाधर उनके सपने में आये और उन्हें नवद्वीप के मार्ग से वृन्दावन जाने का आदेश दिया। आदेश देकर वे अन्तर्धान हो गये। प्रातः श्रीनिवास गौड़ देश के लिये निकल पड़े और मार्ग में वे अनेक लोगों से मिले जो उन्हें भविष्य के एक महान् भक्त के रूप में देख रहे थे। सबको संदेह हुआ कि श्रीनिवास को बंगाल से कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ है और जब श्रीनिवास ने उनसे सीधा गौड़ देश के भक्तों के कुशल-क्षेम के बारे में पूछा तो वे एक शब्द भी न बोल पाये।

श्रीनित्यानंद-अद्वैत अदर्शन

श्रीनिवास के बार-बार पूछने पर अंततः कोई खड़ा हुआ और दृष्टि झुकाकर रोने लगा। तब उसने अवरुद्ध कंठ से बताया कि श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य भी संसार से गमन कर गये हैं। जब यह हृदय विदारक समाचार उन्होंने सुना तो वे भूमि पर गिर गये और अपने जीवन समाप्त करने की चेष्टा करने लगे। वे हाथों से सिर पर प्रहार करने लगे और वक्षस्थल के चर्म को नाखूनों से नोंचने लगे। अपनी भुजाऐं आकाश की ओर फैलाकर वे श्रीगौर, श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत, श्रीगदाधर और श्रीस्वरूप का नाम लेकर पुकारने लगे। उच्चस्वर में उन्हें सूचित करने लगे, 'मैं इस संसार में आपके बिना नहीं रह सकूँगा। मैं अग्नि जलाकर उसमें प्रवेश करूँगा।'

इस तरह विलाप करते हुए श्रीनिवास देर रात्रि में सो गये। उस रात श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीनिवास के स्वप्न में आये। नित्यानन्द प्रभु की प्रातःकाल के सूर्य की किरणों के समान चमकने वाली आभा देखकर श्रीनिवास अति अभिभूत हो गये। कितना सुन्दर प्रेम से अभिभूत करने वाला मुस्कुराता हुआ मुखमण्डल था। पूर्णिमा के चन्द्रमा सा सुन्दर मुख! मस्तक पर तिलक धारण कर वे कितने सुन्दर लग रहे थे। उनके कानों में चमकदार कुण्डल लटक रहे थे। उनके विशाल नेत्र मंत्रमुग्ध कर रहे थे और उनकी घुमावदार नासिका तोते की चोंच के समान थी। उनके सुन्दर दांत, कुंद पुष्पों की पंक्ति जैसे लग रहे थे। उनकी चाल सिंह के समान थी। उनके चरणकमलों में सुन्दर नूपुर झंकृत हो रहे थे।

श्रीनिवास, अद्वैत प्रभु के सौन्दर्य से भी मंत्रमुग्ध हो गये थे, जिनकी आकृति की तुलना एक स्वर्ण पर्वत से की जा सकती है। उनके मस्तक पर एक सुन्दर तिलक और गले में तुलसी की माला लटक रही थी। उनकी लम्बी भुजाऐं, हाथी की शुण्ड के समान थी और उनका विशाल वक्षस्थल, पतली कमर, सुन्दर घुटने, और चरण संसार के वासियों को सहज ही मंत्रमुग्ध करने वाले थे।

स्वप्न में दर्शन

श्रीनिवास, प्रभु की ऐसी दिव्य शारीरिक संरचना को देख, हर्षित होकर रोने लगे। वे उन दोनों के चरणकमलों में गिर गये और उन्हें अश्रुओं से सिंचित कर दिया। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य भी श्रीनिवास को देखकर प्रसन्न थे और उन्होंने बहुत भाव से भुजाऐं फैलाकर उनका आलिंगन किया। उसके बाद उन्होंने उन्हें अनेक प्रकार से सांत्वना दी।

उन्होंने उन्हें बताया, 'जो तुमने प्रण लिया है, वैसा मत करो क्योंकि तुमको बहुत से दायित्व निभाने हैं। पहले बंगाल जाओ क्योंकि वहाँ अनेक भक्त तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं, उसके बाद तुम श्रीवृन्दावन जाओगे।'

श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य ने पुनः श्रीनिवास का आलिंगन किया और उनके मस्तक पर अपने चरणकमल रख दिये और ऐसा करने के बाद अन्तर्धान हो गये। अगली सुबह श्रीनिवास कुछ व्यग्र हो गये थे परन्तु उन्होंने यात्रा आरम्भ कर दी। कुछ ही दिवस में वे ओडिशा की सीमा पार कर मध्य देश के मार्ग से होते हुए बंगाल में प्रवेश कर गये। वे श्रीखण्ड गये और श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों से भी मिले।

श्रीनित्यानन्द प्रभु के आदेश का स्मरण करते हुए, श्रीनिवास नवद्वीप के लिये चल पड़े परन्तु जैसे ही अन्य यात्रियों से नदिया के बारे में समाचार सुना, वे स्वयं के अश्रुओं पर नियंत्रण न कर पाये। वे नदिया जाने के लिये इतने उत्साहित हो गये कि दो दिवस की दूरी एक दिवस में पूरी कर ली।

श्रीनिवास की नदिया यात्रा का श्रवण, शुद्ध हृदय के भक्त को भगवान् कृष्ण की भक्ति प्राप्त करने में सहायता कर सकता है। श्रीनिवास की स्तुति का स्मरण करके, नरहरि को यह ग्रन्थ 'भक्ति-रत्नाकर' लिखने में अत्यधिक आनन्द की अनुभूति हुई।

चतुर्थ प्रवाह

श्रीनिवास का भ्रमण एवं दीक्षा-

नवद्वीप के चन्द्र और शची माता के पुत्र श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय जयकार हो। वे व्यथित लोगों के प्रभु और भक्तों के प्राण आधार हैं।

विश्व की तारणहार और अति करुणामयी पद्मावती के पुत्र श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो।

श्रीमाधव के पुत्र श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो और श्रीनिवास ठाकुर तथा प्रभु के अन्य पार्षदों की जय जयकार हो।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं की व्याख्या को श्रवण करने वाले उन सभी की जय जयकार हो क्योंकि वे सब श्रेष्ठ गुणों के भण्डार हैं।

श्रीनवद्वीप दर्शन

जब श्रीनवद्वीप पहुँच कर श्रीनिवास ने पावन धाम का अवलोकन किया तो वे अति उत्कण्ठा में रुदन करने लगे। वे कुछ क्षण के लिये एक वृक्ष के नीचे बैठे और बहुत कठिनता से स्वयं को शांत किया। जैसे ही उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु की नवद्वीप की लीलाओं का स्मरण हुआ, वे अधीर हो गये। तब उन्होंने भाव जगत में प्रवेश किया और वे श्रीचैतन्य महाप्रभु को अपने पार्षदों के साथ लीला करते देख आश्चर्यचकित हो गये।

नवद्वीप की युवतियां, श्रीचैतन्य महाप्रभु का स्तुति गान करते हुए विचरण कर रही थीं। प्रत्येक घर से पावन संकीर्तन के स्वर गुंजायमान हो रहे थे, ऐसा लग रहा था मानों नगर में अति उन्मादित प्रेम की नदी बह रही हो। उस आनन्द का वर्णन कौन कर सकता है जिसमें श्रीनिवास पूर्णतः लीन हो गये थे?

यद्यपि एक क्षण में ही श्रीनिवास की परिकल्पना बदल गई और उन्होंने देखा कि हर कोई दुख के सागर में डूब रहा है। अचम्भित हुए श्रीनिवास कुछ लोगों के पास गये और पूछा, 'श्रीचैतन्य महाप्रभु का घर कहाँ है?'

यद्यपि उनका प्रशन लोगों के कष्ट को बढ़ाने वाला ही था और किसी ने उत्तर नहीं दिया। व्यग्र विचारों के बीच श्रीनिवास ने दोनों हाथ उठाकर, 'मेरे प्रिय श्रीगौरांग प्रभु! मेरे प्रिय श्रीगदाधर प्रभु! आप मेरी आत्मा और प्राण हो परन्तु आप कहाँ चले गये हो' ऐसे चिल्लाते हुऐ चलना जारी रखा।

अपूर्व विरह विलाप

उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य का नाम पुकारा और घोर दुःख की गहराई में डूब गये। उनका विलाप इतना गहन था जिससे पत्थरों में भी दरार पड़ जाये। सहसा एक व्यक्ति श्रीनिवास के सम्मुख प्रकट हुआ। वह सुन्दर बालक श्रीनिवास को देखकर आश्चर्यचकित हो गया और उसने उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु के घर की ओर जाने के मार्ग पर प्रशस्त किया।

श्रीवंशीवदन से मिलन

जब वे प्रभु के घर पहुँचे, श्रीनिवास ने सब ओर देखा और पुतले के समान जड़वत खड़े हो गये। यद्यपि श्रीवंशीवदन ठाकुर श्रीनिवास को नहीं जानते थे, पर जब उन्होंने युवा श्रीनिवास को देखा तो उन्हें पहचान गये। फिर भी श्रीवंशीवदन ने श्रीनिवास की पहचान पूछी और उत्तर में श्रीनिवास ने अपनी जीवन गाथा

संक्षेप में सुना दी। श्रीवंशीवदन ने श्रीनिवास को अंगीकार किया और बालक को अश्रुओं से भिगो दिया।

विष्णुप्रिया दर्शन

श्रीनिवास दण्डवत् प्रणाम कर अपना आभार व्यक्त करना चाहते थे पर वंशीवदन ठाकुर ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया। वंशीवदन तब श्रीनिवास के आने का समाचार देने श्रीविष्णुप्रिया के पास गये। उस समय श्रीविष्णुप्रिया देवी अपनी प्रिय सेविका को अपने स्वप्न के बारे में बता रही थीं। उनके प्रभु जो कि सम्पूर्ण सृष्टि को आकर्षित करने वाले थे, वे मनमोहक मुद्रा में उनके सम्मुख प्रकट हुए। वे उनकी तुलना में किसी प्रकार का वर्णन नहीं कर सकती थी क्योंकि उनका सौन्दर्य कामदेव के गर्व को भी परास्त कर देने वाला था।

उनकी असाधारण प्रतिभा के सामने मेघ विद्युत की भी कोई तुलना नहीं थी। उनका तन चन्दन के लेप से सुसज्जित था और वे ऐसे चमक रहे थे मानों पतझड़ की चांदनी के प्रकाश में स्नान करके आये हों। उनके सुन्दर वस्त्र युवतियों को आकर्षित कर रहे थे, जिन्होंने उन्हें देखकर अपनी लज्जा का परित्याग कर दिया था। कौन उनके लम्बे घुंघराले केशों की सुगन्ध को भूल सकता है? उनके विशाल नयन कमल की पंखुड़ियों की शोभा बढ़ा रहे थे और जो भी उनकी झलक पाता, वह उनके आकर्षण में बँध कर रह जाता था।

उनके विशाल हाथ उनके घुटनों तक आ रहे थे, उनकी चाल बहुत सुन्दर थी और उनके चौड़े वक्षस्थल का दर्शन सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित करने योग्य था। उनके चन्द्रमा के समान मुख की मुस्कान से अमृत बरस रहा था।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने स्नेहपूर्ण व्यवहार से विष्णुप्रिया देवी को बिठाया और तब उनसे बहुत मृदु और सौम्य शब्दों में कहा, 'श्रीनिवास नाम के एक ब्राह्मण बालक ने अनिर्वचनीय रूप से कष्ट सहा है। आज वह आपके दर्शन करने आयेगा। आप उसे बहुत प्रिय भक्त जानकर अपनी करुणा प्रदान करना।'

प्रभु अपनी मधुर वाणी से विष्णुप्रिया को आनन्द प्रदान करते रहे और अचानक अन्तर्धान हो गये और वे दुखी हृदय से नींद से जाग गईं। वे जानती थीं कि श्रीनिवास उनके प्रभु के अति प्रिय हैं, इसलिये वे उत्सुकता से उनके आने की प्रतीक्षा करने लगीं। जब वे इस स्वप्न के बारे में अपनी सेविका को बता रही थीं उसी समय वंशीवदन ठाकुर, नीलाचल से श्रीनिवास के आगमन का समाचार लिये वहाँ उपस्थित हुए।

विष्णुप्रिया देवी उनके दर्शन करना चाहती थीं और वह भी उनके दर्शन की उत्सुकता लिये आये थे। जब दण्डवत् प्रणाम कर सम्मान देने हेतु वे धरती पर झुके तो उल्लास में अश्रुधारा बह निकली। विष्णुप्रिया देवी ने देखा कि श्रीनिवास कुछ दूर से उन्हें प्रणाम कर रहे हैं तो उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु का स्मरण हुआ और

उन्होंने उन्हें उठाकर अभिवादन स्वीकार किया। हालांकि विष्णुप्रिया ने प्रभु के वियोग में अत्यधिक कष्ट सहा था, परन्तु श्रीनिवास को देखकर उन्हें आत्मिक आनन्द की अनुभूति हुई। उन्होंने बहुत मधुर शब्दों में उनका अभिवादन किया और अपने चरणकमल उनके शीश पर धर दिये। उन्होंने उन्हें कुछ 'महाप्रसाद' पाने का आदेश दिया और तब मौन होकर अश्रु बहाते हुऐ खड़ी हो गईं।

कोई बालक उनके लिये प्रसाद लेकर आया और उन्होंने आदर सहित ग्रहण किया। वे भी अश्रुओं में तर हो गये थे। श्रीनिवास प्रतिदिन श्रीविष्णुप्रिया के दर्शन करने जाते और उनकी असाधारण गतिविधियों को देखते। श्रीचैतन्य महाप्रभु से विरह के कारण वे रात्रि में कभी सोती नहीं थीं। कभी सोना भी हो तो वे कठोर धरती पर लेट जाती थीं। उनका स्वर्णिम रूप रंग मुरझा सा गया था। श्रीहरि का पावन नाम स्मरण करते हुए वे प्रत्येक मन्त्र उच्चारण पर चावल का एक-एक दाना एक जगह संग्रह करतीं और बाद में केवल वही दाने भिगो कर प्रभु को निवेदित करतीं। यद्यपि निवेदित प्रसाद बहुत थोड़ा होता था फिर भी वे उसका केवल एक हिस्सा ग्रहण करतीं थीं। कोई नहीं जानता था कि वे इतने अल्प आहार में अपना जीवन निर्वाह कैसे करती थीं।

दिनों दिन विष्णुप्रिया का स्वास्थ्य गिरता जा रहा था फिर भी उनमें वह बल था कि वे श्रीनिवास के आने पर उनका सत्कार कर सकीं।

शीघ्र ही ये स्पष्ट हो गया कि वे सिर्फ श्रीनिवास पर करुणा बरसाने के लिये ही जीवित थीं। माता शची श्रीनिवास के स्वप्न में आयीं और उन पर अवर्णनीय अनुकम्पा बरसायी। पूरे नवद्वीप में यह समाचार फैल गया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के एक अतिप्रिय परिकर आये हैं।

श्रीमुरारी गुप्त, श्रीवास पंडित, श्रीदामोदर पंडित, श्रीसंजय, श्रीविजय, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी, श्रीगदाधर दास, और श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनेकानेक भक्तगण आये और श्रीनिवास को आशीष प्रदान किया। यद्यपि व्यावहारिक दृष्टि से वे सभी श्रीप्रभु के वियोग में विरह के कारण मृत्यु के कगार पर थे परन्तु श्रीनिवास से मिलकर उन्हें कुछ प्रसन्नता हुई। निश्चित ही श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने प्रिय भक्तों को जीवित रखा था ताकि वे श्रीनिवास को आशीर्वाद प्रदान कर सकें।

शान्तिपुर गमन

प्रभु के भक्तों की पत्नियों ने श्रीनिवास से स्नेह पूर्ण व्यवहार किया। कुछ समय बाद उन्होंने आज्ञा प्रदान कर दी ताकि वे श्रीवृन्दावन की अपनी यात्रा नियमित रख सकें। बहुत असंतुष्ट हृदय से श्रीनिवास ने नवद्वीप वासियों से विदा ली और शांतिपुर में श्रीअद्वैत आचार्य के निवास की ओर चल पड़े।

दु:खी मन से जैसे ही उन्होंने शांतिपुर में प्रवेश किया, श्रीनिवास ने अचानक देखा कि श्रीअद्वैत आचार्य सांत्वना देने उनकी ओर आ रहे हैं। श्रीनिवास, श्रीअद्वैत आचार्य की झलक पाकर अचम्भित से हो गये और आश्चर्यचकित हो गये कि कहीं उन्हें मतिभ्रम तो नहीं हो गया। जल्दी ही उनका सन्देह दूर हो गया, यद्यपि जब उन्हें दिव्य निर्देश प्राप्त हुए तो वे बहुत प्रसन्न हुए। अपने ही अश्रुओं में भीगते हुए उन्होंने श्रीअद्वैत आचार्य के सौन्दर्य को निहारा और फिर उनके घर में प्रवेश किया।

जब शांतिपुर के वासियों ने सुना कि श्रीनिवास आ गये हैं तो वे उत्सुकतावश उनसे मिलने आये। श्रीचैतन्य महाप्रभु के वियोग में वे सब बहुत दुर्बल और कमजोर हो गये थे। ऐसा प्रतीत होता था कि सीता देवी, श्रीनिवास को आशीर्वाद देने के लिये ही जीवित थीं और जब वे पधारे तो उन्होंने उन्हें अपने निवास पर बुलाया। घर के भीतर प्रवेश कर उन्होंने सीता देवी के प्रति आभार व्यक्त किया और देवी ने अपने चरणकमल उनके मस्तक पर रख दिये।

सीता देवी के नेत्रों से निरंतर अश्रुधारा बह रही थी और रुंधे स्वर में उन्होंने श्रीनिवास से कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास! मैं तुम्हारे आने की ही प्रतीक्षा कर रही थी। तुम्हारा आना ही मात्र मेरे आनन्द का कारण है। इस भूमि पर नित्य निवास करने वाले प्रेम के अधिकारी तुम्हारी उपस्थिति से अत्यधिक आशीष प्राप्त करेंगे। उस सर्वोच्च भगवदीय व्यक्तित्व के आध्यात्मिक प्रेम का वितरण करो और उन शास्त्रों का प्रवचन करो जो अध्यात्म विज्ञान का प्रतिपादन करते हैं। इसी समय में तुम किसी से मिलोगे और उनका संग तुम्हारे कष्ट कम करेगा। तुम्हारे अनेकों शिष्य होंगे और तुम सदा संकीर्तन रूपी सागर में तैरते रहोगे। सीधे श्रीवृन्दावन जाओ, जहाँ तुम दीक्षा ग्रहण करोगे और तुम्हारी इच्छाएं पूर्ण होंगी।'

इसके बाद सीता देवी ने अपने सेवित **श्रीमदन गोपाल के श्रीविग्रह श्रीनिवास को प्रदान किये** और अपने सेवकों और बालकों का परिचय उनसे करवाया। उन्होंने श्रीनिवास पर जो कृपा बरसायी वह अवर्णनीय है। भाँति-भाँति से सांत्वना देकर और निर्देश देकर उन्होंने शांतिपुर से प्रस्थान की आज्ञा प्रदान की।

शांतिपुर के निवासियों के प्रति आभार व्यक्त कर श्रीनिवास खड़दह में श्रीनित्यानन्द के निवास की ओर निकल पड़े। हालांकि श्रीपरमेश्वरी दास बहुत दयनीय अवस्था में जीवन व्यतीत कर रहे थे परन्तु श्रीनिवास को देखकर वे अत्यंत प्रसन्न हो गये। यद्यपि आन्तरिक रूप से वे उन्हें पहचान गये थे फिर भी बालक से परिचय पूछा।

सम्पूर्ण खड़दह गांव में यह समाचार फैल गया कि चाखण्डी से श्रीनिवास पधारे हैं और लोग उत्सुकतावश उनसे मिलने आने लगे। परमेश्वरी दास श्रीनिवास

को श्रीनित्यानन्द के निवास पर ले गये। अपने ही अश्रुओं में पूरी तरह भीगे हुए श्रीनिवास ने श्रीनित्यानन्द की पत्नी वसुधा और जाह्नवा देवी के चरणकमलों में प्रणाम किया।

जब श्रीवसुधा देवी, श्रीजाह्नवा देवी और श्रीवीरभद्र प्रभु श्रीनिवास से मिले तो बहुत प्रसन्न हुए। यद्यपि श्रीनित्यानन्द के वियोग में उन्होंने अत्यधिक कष्ट सहा था परन्तु श्रीनिवास को देखकर सभी ने अत्यधिक आनन्द का अनुभव किया।

खड़दह दर्शन

श्रीनिवास खड़दह में चार या पांच दिवस तक रहे क्योंकि कोई भी उन्हें जाने नहीं देता था। श्रीसूर्यदास, पंडित गौरीदास, श्रीमहेश पंडित और अन्य भक्तजनों ने उदारतापूर्वक उन पर अपनी कृपा बरसायी। अंततः श्रीमतीजाह्नवा देवी, श्रीवीरभद्र प्रभु और अन्य भक्तों ने श्रीनिवास को श्रीवृन्दावन जाने का सुझाव दिया। श्रीवसुधा देवी और श्रीजाह्नवा देवी ने प्रेम से उन्हें बताया कि सर्वप्रथम उन्हें श्रीअभिराम ठाकुर के घर जाना चाहिए।

उनके नेत्रों में अश्रु भर आये और श्रीनिवास ने दोनों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए विदा ली। श्रीनित्यानन्द प्रभु के अत्युत्तम गुणों का स्मरण करते हुए वे मुग्ध हो जाते और प्रभु की कृपा से उन्हें कई चमत्कारी वस्तुओं के दर्शन हुए। दिव्य दृष्टि से श्रीनित्यानन्द प्रभु की लीलाओं का साक्षात् दर्शन करते हुए जैसे ही श्रीनिवास ने खड़दह में अभिराम ठाकुर के निवास पर जाने को प्रस्थान किया वे उल्लास के सागर में तैरने लगे।

अभिराम ठाकुर दर्शन

जैसे ही उत्सुकतावश उन्होंने यात्रा प्रारम्भ की तो मार्ग में एक पथिक भी श्रीनिवास के साथ यात्रा करने लगे। वे कन्कुला नामक गांव के एक वृद्ध ब्राह्मण थे और उन्होंने उत्सुकतावश श्रीनिवास से पूछा, 'मेरे प्रिय पुत्र तुम्हारा नाम क्या है? तुम कहाँ जा रहे हो?'

श्रीनिवास ने वृद्ध को सम्मान व्यक्त किया और बता दिया कि वह कौन है और कहाँ जा रहा है। ब्राह्मण अत्यधिक प्रसन्न हो गये और श्रीनिवास को बताया कि उन्होंने पहले से ही उनके बारे में सुन रखा है, जब वे खड़दह गांव में रहते थे।

उन्होंने कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र श्रीनिवास, कृपया मेरे साथ आओ।' ब्राह्मण ने श्रीनिवास को आलिंगन किया और उन्हें अश्रुओं से भिगो दिया। तब ब्राह्मण ने श्रीनिवास को सूचना दी कि श्रीअभिराम ठाकुर उत्तमोत्तम गुणों के कोश हैं और वे निश्चित ही उन पर अपनी करुणा बरसायेंगे।

उन्होंने कहा, 'अभिराम ठाकुर अत्यधिक प्रफुल्लित व्यक्तित्व हैं। उन्हें देखकर नास्तिक असुर भयभीत होकर काँपने लगते हैं। श्रीनित्यानन्द प्रभु के प्रभाव के फलस्वरूप आनन्द उत्साह में वे बिलकुल उत्तेजित से हो गये थे, फिर भी उनकी अद्भुत करुणा सम्पूर्ण विश्व में विदित है।'

'मेरे प्रिय श्रीनिवास तुम्हें उनके बारे में क्या बताऊँ? मानव जाति को नरक के दण्ड से निवृत्त करने के लिये वे ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए।'

वे न केवल सभी शास्त्रों के ज्ञाता हैं बल्कि नृत्य, संगीत और हर प्रकार के वाद्य यंत्रों को बजाने में निपुण हैं। नित्यानन्द प्रभु की इच्छानुसार अभिराम ने एक दक्ष ब्राह्मण की पुत्री से विवाह रचाया। **श्रीमती मालिनी देवी** श्री अभिराम की पत्नी थी और उनके गुणों का वर्णन नहीं किया जा सकता।

मेरे प्रिय श्रीनिवास, श्रीअभिराम ठाकुर पूर्व में वृन्दावन लीला में भगवान् कृष्ण के मित्र श्रीदामा थे। श्रीअभिराम ठाकुर दिव्य प्रेम की छवि हैं और सम्पूर्ण जगत के इष्ट हैं।

श्रीवेदगर्भ आचार्य (श्रीअभिराम ठाकुर के शिष्य) द्वारा रचित गद्य में उन्होंने कहा है, 'श्रीदामा वही व्यक्ति हैं जो वृन्दावन लीला में भगवान् श्रीकृष्ण के गोप सखा थे, वही श्रीअभिराम ठाकुर अब मालिनी के पति हैं और दिव्य प्रेम की अभिव्यक्ति हैं। मैं श्रीअभिराम ठाकुर के चरणकमलों में अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।'

मेरे प्रिय श्रीनिवास अपने प्रभु की आराधना में श्रीअभिराम ठाकुर की गतिविधियां और अत्यधिक उत्सुकता बहुत ही अद्भुत हैं। एक बार भगवान् श्रीगोपीनाथ श्रीअभिराम ठाकुर के स्वप्न में प्रकट हुए और उस स्थान की ओर इंगित किया जिस स्थान पर वे गुप्त रूप से छिपे हुए थे। उस स्थान पर खुदाई कर श्रीअभिराम ने श्रीगोपीनाथ जी के सुन्दर विग्रह को बाहर निकाला।

सभी दिशाओं से लोग श्रीविग्रह के दर्शनों को आने लगे जिसके बाद उनके सारे कष्ट जड़ सहित दूर हो गये। लोगों ने उस तालाब के जल को पिया और स्नान किया, जिसमें श्रीगोपीनाथ जी प्रकट हुए थे। वह तालाब रामकुण्ड के नाम से विख्यात हुआ और रोगी कष्टमुक्त होने के लिए वहाँ आने लगे।

श्री मालिनी देवी, श्रीअभिराम ठाकुर और उनके पार्षदों ने उत्साहित हो भगवान् श्रीगोपीनाथ जी की सेवा आरम्भ कर दी। समय-समय पर श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षद अभिराम ठाकुर के निवास पर आते रहते।

एक बार प्रभु-प्रेम में अभिभूत हो श्रीअभिराम ठाकुर ने उन्मत्त होकर नृत्य करना आरम्भ कर दिया उनके नृत्य की शोभा अवर्णनीय थी। भगवान् श्रीकृष्ण से मित्रता के उत्तमोत्तम प्रभाव से दूर वातावरण में श्रीअभिराम बांसुरी बजाना चाहते थे परन्तु उत्सुकता के कारण वे बाँसुरी को नहीं ढूँढ सके।

तब श्रीअभिराम ठाकुर को एक विशाल लट्ठा दीखा जिसे सौ व्यक्ति मिलकर भी नहीं उठा सकते थे। उन्होंने उस लट्ठे को सरलता से अपने हाथों में बांसुरी की तरह उठा लिया।

इस प्रकार अभिराम ठाकुर ग्रामवासियों को अपनी उत्तमोत्तम लीलाऐं दिखाकर चमत्कृत कर देते थे। यद्यपि श्रीनित्यानन्द प्रभु की अनुपस्थिति में श्रीअभिराम ठाकुर अकेले हो जाते। वे गहरी-गहरी सांसें भरते और किसी से भी बात नहीं करते। श्रीअभिराम ठाकुर की गतिविधियों को समझना कठिन था। यद्यपि अत्यधिक भाग्यशाली लोग ही उन्हें समझ सकते थे। प्रिय पुत्र मैं जानता हूँ तुम व्यक्तिगत रूप से सब समझोगे, परन्तु कृपया सावधान रहना।

ब्राह्मण, श्रीअभिराम ठाकुर के निवास की ओर जाते हुए श्रीनिवास से बहुत प्रेम से बोल रहा था। श्रीनिवास ने ब्राह्मण के चरणकमलों के प्रति आभार व्यक्त किया और श्रीनित्यानन्द प्रभु को याद किया।

श्रीमती जाह्नवा देवी के निर्देशों को स्मरण करते हुए श्रीनिवास श्रीअभिराम ठाकुर के निवास की ओर बढ़े। घर के मुख्य द्वार के बाहर खड़े होकर उन्होंने सम्मान व्यक्त किया। वहाँ उपस्थित हर कोई श्रीनिवास के आने का साक्षी बना। श्रीनित्यानन्द प्रभु के वियोग में श्रीअभिराम ठाकुर प्रभु के दिव्य प्रेम भाव में लीन रहते और कभी किसी से बात नहीं करते थे। यह जानकर कि श्रीनिवास का आगमन हुआ है श्रीअभिराम ठाकुर स्वयं पर मुस्कुराये और बालक की परीक्षा लेने का विचार किया। उन्होंने बालक को दस कौड़ी (प्राचीन कालीन सबसे छोटी मुद्रा) प्रदान की ताकि वे अपना भोजन बना सकें और श्रीनिवास आवश्यक सामग्री ले आये। श्रीनिवास सामग्री को द्वारकेश्वर नदी के तट पर ले गये और कुछ भोजन पकाया, जिसे उन्होंने भगवान् को निवेदित किया।

निवेदन के समय श्रीअभिराम ठाकुर ने चार व्यक्तियों को श्रीनिवास के पास भेजा और श्रीनिवास ने उनका खूब आदर-सत्कार किया। उन्होंने चारों के प्रति सम्मान व्यक्त किया और उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के प्रसाद का अंश प्रदान किया। उन्होंने भी कुछ महा-प्रसाद पाया। बाद में चारों व्यक्ति श्रीनिवास के व्यवहार से पूर्णतः सन्तुष्ट होकर अभिराम ठाकुर के पास वापिस लौट आये।

जयमंगल चाबुक

श्रीअभिराम ठाकुर ने श्रीनिवास की परीक्षा मात्र अन्य लोगों द्वारा अनुसरण कराने के लिये ही ली थी। तब उन्होंने श्रीनिवास को अपने साथ बैठने के लिये आमंत्रित किया। श्रीअभिराम ठाकुर के पास **जयमंगल नाम** का एक चाबुक था, जिससे उन्होंने श्रीनिवास के शरीर को तीन बार स्पर्श किया।

अपने भावावेश में उन्होंने श्रीनिवास पर चाबुक से प्रहार किया और बोलते हुए जोर से हंसने लगे। जब उन्होंने श्रीनिवास के स्पर्श कराने के लिये पुनः

चाबुक उठाया तो मालिनी ने उन्हें रोकने के लिये शीघ्रता से उनका हाथ पकड़ लिया।

मालिनी ने कहा, 'हे मेरे प्रभु, स्वयं पर नियंत्रण कीजिये। आपने पहले ही श्रीनिवास पर अपनी करुणा बरसा दी है। वह एक छोटा बालक है। यदि प्रभु-प्रेम के भावावेश में आकर उसने अपना नियंत्रण खो दिया तो वह अपना कर्तव्य कैसे पूर्ण करेगा।'

मालिनी और श्रीअभिराम दोनों ही श्रीनिवास से पूर्णतः संतुष्ट थे और दोनों ने अपना हाथ उनके शीश पर रख दिया। श्रीनिवास दोनों के चरणकमलों में जा गिरे। उन दोनों ने उन्हें उठाया और अपने अश्रुओं से भिगो दिया। उन्होंने श्रीनिवास पर जो करुणा बरसाई, मैं उसका वर्णन करने में असमर्थ हूँ।

श्रीनिवास को श्रीराधा-गोपीनाथ के चरणकमलों में समर्पित कर श्रीअभिराम ठाकुर और उनकी पत्नी ने उन्हें श्रीवृन्दावन जाने का निर्देश दिया। वैष्णवजनों से विदा लेकर श्रीनिवास व्यग्र हृदय से श्रीखण्ड लौट आये। नरहरि ठाकुर, श्रीरघुनन्दन और अन्य सभी श्रीनिवास को देखकर अति प्रसन्न हो गये और उन्हें आलिंगन कर अत्यधिक स्नेह प्रदान किया। उन्होंने श्रीनिवास से उन स्थानों के बारे में पूछा, जहाँ-जहाँ वे गये थे और श्रीनिवास ने रुदन करते हुए अपने सारे अनुभव बता दिये।

श्रीवृन्दावन यात्रा

कुछ समय बाद श्रीनरहरि ठाकुर और श्रीरघुनन्दन ठाकुर ने श्रीनिवास को वृन्दावन जाने की आज्ञा प्रदान कर दी। श्रीनरहरि ठाकुर ने श्रीनिवास को गोद में उठा लिया और रोने लगे क्योंकि वे नहीं जाने देना चाहते थे। उन्होंने श्रीनिवास को बताया कि कैसे श्रीवृन्दावन जाया जाये परन्तु अंततः वे अत्यन्त दुखी हो गये।

श्रीनरहरि और श्रीरघुनन्दन के प्रति आभार व्यक्त कर श्रीनिवास ने एक शुभ समय को चुना और तब श्रीवृन्दावन के लिये निकल पड़े। जिस ढंग से श्रीनिवास ने यात्रा की, उसे सही तरह से वर्णित नहीं किया जा सकता। श्रीवृन्दावन के मार्ग में वे याजिग्राम में अपनी माता से मिलते हुऐ आगे बढ़े। सब कुछ अपनी माता को बता कर उन्होंने उनसे वृन्दावन जाने की आज्ञा मांगी।

यद्यपि वे उनके बार-बार आज्ञा मांगने से अत्यधिक दुःखी हो गयीं पर वे मना नहीं कर सकती थीं। अत्यधिक स्नेह करते हुए उन्होंने एक सप्ताह तक उन्हें अपने साथ रखा। अंततः अपनी माता को सांत्वना देकर श्रीनिवास ने विदा ली। वे बार-बार अपनी माता के चरणों में झुके। गांव के सभी लोगों से मिलकर श्रीनिवास, **अग्रहण मास की अमावस्या के दूसरे दिवस** श्रीवृन्दावन के लिये निकल पड़े।

मार्ग में एकचक्रादि स्थान दर्शन

अग्रद्वीप गांव के सब लोगों से मिलकर श्रीनिवास कंटकनगर गये जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण किया था। प्रेमावेश में उनके अश्रु निकल आये। यहाँ से वे मौड़ेश्वर गये जहाँ भगवान् शिव के दर्शन कर वे अत्यधिक प्रसन्न हुए। मौड़ेश्वर के लोगों ने बताया कि एक बार गांव में अत्यधिक सांपों ने आक्रमण कर दिया तो श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उनके प्राणों की रक्षा की। इसके बाद उस स्थान का नाम कुण्डलीदमन पड़ गया। कुण्डली अर्थात् सांप का फन और दमन अर्थात् नियंत्रण। इस प्रकार उस स्थान को श्रीनित्यानन्द प्रभु द्वारा सांपों के दमन करने वाले स्थान के रूप में याद किया जाने लगा।

जब श्रीनिवास श्रीनित्यानन्द प्रभु के पिता श्रीहाड़ाई पंडित के निवास पर गये तो एकचक्रा के सभी लोगों के हृदय को आकर्षित करने लगे। उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु के जन्म स्थान को अपने हृदय में आत्मसात कर लिया। प्रेमावेश से पूर्ण श्रीनिवास उस स्थान पर गये जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीबलराम रूप में लीलाएं की थीं। उन्होंने दोनों भुजाऐं ऊपर उठाकर विलाप करते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु का गुणगान किया। वे धरती पर रज से धूसरित होकर लोटने लगे। अंततः प्रभु की इच्छा से वे गहरी निद्रा में सो गये।

स्वप्न में श्रीनित्यानंद प्रभु दर्शन

उस रात श्रीनित्यानन्द प्रभु अपने पार्षदों सहित श्रीनिवास के स्वप्न में प्रकट हुए। श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षदों को देख श्रीनिवास का उत्साह बढ़ गया और उनके नेत्र और मस्तिष्क संतुष्ट हो गये। प्रभु ने उन्हें श्रीवृन्दावन जाने का निर्देश दिया परन्तु जब श्रीनिवास जागे तो बहुत उदास हो गये। श्रीनिवास ने एकचक्रा गांव के प्रति सम्मान व्यक्त किया और श्रीनित्यानन्द के चरणकमलों का ध्यान करते हुए श्रीवृन्दावन के लिये निकल पड़े।

जैसे-जैसे वे वृन्दावन की यात्रा के मार्ग में आगे बढ़े तो आस-पास के गांव के लोग उनसे मिलने आ जाते। हर कोई उनकी देखभाल करता और श्रीनिवास भी इस प्रकार प्रतिक्रिया देते कि सब प्रसन्न हो जाते। कुछ दिवसों के बाद श्रीनिवास **गया पहुँचे** और भगवान् श्रीविष्णु के चरणकमलों के दर्शन कर वे अत्यधिक उत्साह और आध्यात्मिक प्रेम से भर उठे। वह गया तीर्थ ही था जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु श्री ईश्वर पुरी से मिले थे। उन आनन्दमय लीलाओं का स्मरण कर श्रीनिवास के नेत्रों से अश्रु धारा बह निकली।

जो भी नर या नारी श्रीनिवास को निरंतर रोते हुए देखता वह व्यग्र हो जाता और जो भी उनके सुन्दर रूप रंग को देखता वह उनका संग न छोड़ सकता था। मार्ग में मिलने वाले हर किसी का चित्त आकर्षित करते हुए अंततः श्रीनिवास

काशी पहुँचे जहाँ उन्होंने श्रीचन्द्रशेखर आचार्य का घर देखा। श्रीचन्द्रशेखर आचार्य का एक शिष्य हर्षित हृदय से श्रीनिवास का अभिवादन करने आया। जब उसे श्रीनिवास का परिचय मिला तो वह शिष्य उत्साहित हो गया और श्रीनिवास का आलिंगन कर उसके नेत्रों में अश्रु भर आये। श्रीनिवास को वह स्थान दिखाकर जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु रहते थे, उसने अनेक दिवसों तक उनकी देखभाल की।

काशी दर्शन

श्रीनिवास श्रीचैतन्य महाप्रभु के उन पार्षदों से मिले जो काशी में रहते थे। श्रीनिवास ने अयोध्या और प्रयाग इन दो स्थानों की यात्रा की जिन्होंने उन्हें गहराई तक प्रभावित किया था। प्रयाग से श्रीनिवास श्रीवृन्दावन की ओर आगे बढ़े और चलते हुए उनके पूर्व पुरुषों के कष्टों का स्मरण हो आने के कारण उनका हृदय भर आया। श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की स्मृतियों को अपने हृदय में सँजोये उन्होंने मथुरा में प्रवेश किया। वे सर्वप्रथम **विश्राम घाट** की ओर गये जहाँ भगवान् श्रीकृष्ण ने कंस को मार कर विश्राम किया था।

उस समय कुछ ब्राह्मण श्रीवृन्दावन के बारे में बातचीत करते हुए विश्राम घाट से गुजर रहे थे। उन्हें यह कहते सुना गया कि, 'उनके लिये इतना अधिक कष्ट सहन करना सम्भव नहीं है। वे जीवित रहने के लिये क्या करें?'

दूसरे ने कहा, 'कोई भी प्रभु की इच्छा को नहीं समझ सकता। धीरे-धीरे श्रीवृन्दावन अपने रत्नों से विहीन होता जा रहा है।'

श्रीमहाप्रभु-अप्रकट समाचार

'नीलाचल में श्रीचैतन्य महाप्रभु इस संसार से विदा हो गये। यह सुनने के बाद श्रीकाशीश्वर गोस्वामी भी विदा हो गये। भागवत के इन महान् कथावाचक ने भी अपने प्राण त्याग दिये जब उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु के गमन के बारे में ज्ञात हुआ। कुछ दिवस बाद श्रीसनातन गोस्वामी भी इस संसार को छोड़ कर चले गये और श्रीरूप गोस्वामी भी अब हमारे साथ नहीं रहे। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी निरंतर उनके विरह की अग्नि में जल रहे थे।'

जब उन्होंने ब्राह्मणों को इस तरह विलाप करते हुए देखा तो श्रीनिवास ठाकुर ने उनके दुःख का कारण पूछा। फूट-फूट कर रोते हुए उन्होंने श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी के अन्तर्धान होने की कथा कह डाली। जब यह सुना तो श्रीनिवास भी अत्यधिक रुदन करते हुए बेसुध हो भूमि पर गिर गये।

सचेत होने पर श्रीनिवास उठे और रोते हुए कहने लगे, 'ओह! ये मैंने क्या सुना! ये मैंने क्या सुना!' और दोबारा वे अचेत होकर भूमि पर जा गिरे। कुछ

समय बाद वे पुनः रुदन करने लगे, 'मेरे प्रिय प्रभु रूप गोस्वामी। मेरे प्रिय प्रभु सनातन गोस्वामी, आप मेरे जैसी अभागी आत्मा के प्रति इतने निर्दयी क्यों हो? मैं कभी भी आपके चरणकमलों के दर्शन नहीं कर पाऊँगा इस प्रकार मेरी अभिलाषाएं कभी पूर्ण नहीं होंगी।'

इस प्रकार विलाप करते हुए श्रीनिवास ने अपने वक्षस्थल की त्वचा अपने हाथों के नाखूनों से छील डाली। श्रीनिवास की दयनीय हालत देखकर मथुरा के एक ब्राह्मण आये और उनके प्राणों की रक्षा के लिये उनके हाथों को पकड़ उन्हें विविध प्रकार से सांत्वना देने लगे। मथुरा के कई अन्य निवासी भी श्रीनिवास को सांत्वना देने आये परन्तु कुछ लाभ न हुआ।

वापिस जाने लगे

श्रीनिवास ने सभी ब्राह्मणों के चरणों में सम्मान व्यक्त किया और वापिस बंगाल जाने वाले मार्ग पर अपनी यात्रा आरम्भ कर दी। 'बंगाल के वैष्णवों ने मुझे यथाशीघ्र श्रीवृन्दावन जाने को कहा था।' उन्होंने सोचा, 'अब मुझे समझ आया कि क्यों वे चाहते थे कि मैं बिना विलम्ब किये यहाँ आऊँ। परन्तु मैं इतना सौभाग्यशाली नहीं था कि समय पर यहाँ पहुँचता। यद्यपि निर्दयी भाग्य ने ही इस प्रकार का पापयुक्त जीवन जीने के लिये मुझे बाध्य किया है।'

अपनी दयनीय अवस्था की परवाह किये बिना श्रीनिवास लगातार अश्रु बहा रहे थे और समय-समय पर वे वेदना से चीत्कार कर उठते, 'मेरे प्रिय श्रीसनातन, मेरे प्रिय श्रीरूप, श्रीरघुनाथ भट्ट, श्रीकाशीश्वर पंडित, आप सभी आध्यात्मिक गुणों के भण्डार थे, तो आप मुझ अधम आत्मा के प्रति इतने निर्दयी क्यों हो?'

रोते हुए श्रीनिवास ने अपने जीवन को समाप्त करने का निर्णय लिया। वे अपनी अवस्था की परवाह किये बिना भूमि पर जा गिरे। कुछ दूर की यात्रा करने पर जब अंधकार हुआ तो उन्होंने एक वृक्ष के नीचे विश्राम किया। उनका विलाप इतना करुणामय था कि पत्थर या काष्ठ का एक टुकड़ा भी उसे सुनकर चटक जाये। आस पास के गांव के निवासी श्रीनिवास के निरंतर विलाप से उदास हो गये। पूरी रात तब तक वे सिसकियां भरते रहे जब तक प्रभु की इच्छा से वे गहरी निद्रा में सो नहीं गये।

स्वप्न में श्रीरूप-सनातन दर्शन

श्रीरूप गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी और अन्य कृपालु गोस्वामीगण तब श्रीनिवास के स्वप्न में प्रकट हुए। सभी गोस्वामीजन बहुत सुन्दर थे और उन्हें देखकर श्रीनिवास का हृदय उत्साह से भर गया। उनके नेत्रों में अश्रु भर आये और वे भक्तजनों के चरणकमलों में झुक गये। प्रति उत्तर में उन सबने अपने

चरणकमल श्रीनिवास के मस्तक पर रख दिये और विविध प्रकार से सांत्वना प्रदान कर उनका आलिंगन कर लिया। उन्होंने श्रीनिवास के क्षीण शरीर का प्रेमपूर्वक स्पर्श किया और उसे अपने अश्रुओं से भिगो दिया।

श्रीगोपाल भट्ट से दीक्षा का आदेश

श्रीनिवास के मुख को निहारते हुए सनातन गोस्वामी ने उत्साहपूर्वक प्रेमभाव में उनसे कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र श्रीनिवास, यह तुम्हारे लिये विलाप करने का समय नहीं है। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी मुझसे पृथक् नहीं है। जाओ और उनसे दीक्षा ग्रहण करो।'

श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीनिवास को निर्देश दिया कि वे गोस्वामी जी की पुस्तकें बंगाल ले जायें और विस्तारपूर्वक उनका वितरण करें। इस प्रकार विविध प्रकार से श्रीनिवास को निर्देश देकर गोस्वामी जी ने उन्हें आशीष प्रदान किया और तब वे श्रीचैतन्य महाप्रभु का स्मरण करते हुए अन्तर्धान हो गये। गोस्वामी जी को निहार कर और उनके अमृतमय निर्देशों को सुनकर श्रीनिवास उत्साह से भर गये। अगली प्रातः वे वापिस मुड़े और वृन्दावन की ओर यात्रा आरम्भ कर दी।

उस रात्रि श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीजीव के स्वप्न में प्रकट हुए और उन्हें कुछ निर्देश दिये। उन्होंने कहा, 'मैंने तुम्हें पूर्व में बताया था कि वैशाख मास के 20वें दिवस तुम एक अद्‌भुत सान्निध्य प्राप्त करोगे। वह भक्त आज श्रीवृन्दावन पहुँचेगा और उसे मिलकर तुम बहुत प्रसन्न हो जाओगे। गोविन्द आरती के समय जब भीड़ कुछ कम होगी तुम उसकी खोज करना। उसका रंग रूप स्वर्णिम चंपक पुष्प के समान है और वह बहुत दुर्बल है। वह युवा है और उसके नेत्रों से निरंतर अश्रुधारा बहती है।'

अत्यधिक कष्ट में उसने बंगाल छोड़ा और उसे पहले से ही हमारे गमन का समाचार मिल गया है। उसने अपने जीवन को समाप्त करने का निश्चय किया था परन्तु हम उसे सांत्वना देने के लिए उसके सम्मुख प्रकट हुए थे। हम उसके उत्साह का वर्णन नहीं कर सकते परन्तु जब तुम उसे देखोगे तब तुम स्वयं समझ जाओगे। तुम श्रीगोपाल भट्ट से उनकी दीक्षा का प्रबंध करो और जब उनकी शिक्षा पूर्ण हो जाये तब उन्हें सभी पुस्तकें दे देना। उन्हें गौड़ देश भेज देना जहाँ वे अति उत्तम साहित्य को जन मानस में वितरित करेंगे। उनके बारे में और अधिक हम तुमसे क्या कह सकते हैं? श्रीनिवास के माध्यम से श्रीचैतन्य महाप्रभु अनेकों गतिविधियां करायेंगे।

श्रीजीव गोस्वामी को निर्देश देकर श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी श्रीगोपाल भट्ट के स्वप्न में ये कहते हुए प्रकट हुए, आपका श्रीनिवास बंगाल से

आ गया है परन्तु उसका कष्ट अवर्णनीय है। उसे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार करो।

यह कहकर श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी अन्तर्धान हो गये। अगली प्रातः बहुत सवेरे श्रीगोपाल भट्ट जागे और रुदन करते हुए श्रीरूप और श्रीसनातन का नाम लेकर पुकार करने लगे। उसी समय श्रीजीव गोस्वामी वहाँ आ गये तो श्रीगोपाल भट्ट ने स्वयं पर नियंत्रण कर लिया। श्रीजीव गोस्वामी ने रोते हुए झुककर श्रीगोपाल भट्ट के चरणों में नमस्कार किया। श्रीगोपाल भट्ट ने अत्यंत भावुक होकर उनका आलिंगन कर लिया। वास्तव में उन्होंने श्रीजीव को अपने अश्रुओं से भिगो दिया और दोनों ही अत्यंत भावुक होकर अत्यधिक रुदन करने लगे। वे स्वप्न में प्राप्त निर्देशों पर चर्चा करने लगे परन्तु उस समय उनकी जो मनोदशा थी उसका वर्णन करना मेरी योग्यता से बाहर है।

श्रीगोपालभट्ट-दर्शन

कुछ समय बाद श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने स्वयं को शांत किया और श्रीजीव को जितनी सांत्वना दे सकते थे, प्रदान की। तब श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीगोपाल भट्ट का आभार व्यक्त किया और अपने घर वापिस आ गये। श्रीनिवास की अधीरतापूर्वक प्रतीक्षा करते हुए श्रीगोपाल भट्ट मिलने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उनके आने की सूचना देते थे। वास्तव में वे समय-समय पर उत्सुकता से श्रीनिवास की प्रतीक्षा करते हुए उनके आने की आशा में मार्ग की ओर देखते रहते थे।

श्रीधाम शोभा वर्णन

इसी समय श्रीनिवास ने बहुत प्रसन्नता से श्रीधाम के सौन्दर्य, भंवरों को इधर-उधर मंडराते हुए, मोर और मोरनी को नृत्य करते हुए, कोयल और अन्य पक्षियों को चहचहाते और कलरव करते हुए, हिरण और अन्य पशुओं के स्वतंत्र विचरण का अवलोकन करते हुए वृन्दावन में प्रवेश किया। हर तरफ विविध प्रकार के वृक्ष और लतायें दिखाई दे रही थीं। वृन्दावन के जंगलों को देखकर श्रीनिवास के नेत्रों से निर्झर अश्रु बहने लगे।

श्रीनिवास ने श्रीगोविन्द के मन्दिर की ओर जाते हुए श्रीवृन्दावन के वैष्णवजनों की झोपड़ियाँ देखी। सन्ध्या समय श्रीगोविन्द के विग्रह को देखकर उनके हृदय में उत्साह भर आया और वे प्रसन्नता से रोने लगे। अत्यधिक उत्साह में वे भूमि पर लोटने लगे और प्रभु की इच्छा से एक एकांत स्थान पर शांत चित्त से प्रतीक्षा करने लगे। संध्या आरती के समय वहाँ बहुत भीड़ थी परन्तु श्रीजीव, श्रीनिवास को ही खोज रहे थे।

अंततः श्रीजीव ने उन्हें खोज लिया, उन्होंने देखा श्रीनिवास एक कोने में जमीन पर लेटे हुए थे। श्रीनिवास की भाव अवस्था को देखकर श्रीजीव उनकी पहचान को लेकर आश्वस्त हो गये। श्रीजीव कुछ देर शांत होकर खड़े रहे तब श्रीनिवास कुछ सीमा तक शांत हुए। वे गये और स्नेहपूर्वक उन्हें भूमि से उठा लिया। उनके अश्रुओं में भीग कर श्रीनिवास, श्रीजीव गोस्वामी के चरणकमलों में झुक गये और उनका सम्मान व्यक्त किया। श्रीजीव ने प्रेमपूर्वक उन्हें पकड़ लिया और हृदय से लगा कर मृदु स्वर में उनसे बात की।

उन्हें दृढ़ता से आलिंगन में लेकर श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें अपना मित्र कहकर सम्बोधित किया। बिना उनके बारे में जाने पहचाने श्रीजीव जानते थे कि वे कौन थे। एक दूसरे से मिलने का उल्लास सब बंधनों से परे था। श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद **श्रीकृष्ण पंडित**, श्रीनिवास से मिलकर प्रसन्न थे।

श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह के पुजारी के रूप में उनके उत्कृष्ट गुणों का वर्णन अकथनीय है। उन्होंने श्रीगोविन्द के महाप्रसाद का कुछ भाग श्रीनिवास को दिया और श्रीगोविन्द जी का प्रसादी पान और पुष्प माला भी प्रदान की। श्रीकृष्ण पंडित ने जो स्नेह श्रीनिवास पर बरसाया उसका वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीजीव गोस्वामी श्रीनिवास को अपनी कुटिया में ले गये। उस समय श्री श्रीराधा-दामोदर जी शयन को जा चुके थे इस कारण वे उनके श्रीविग्रह का दर्शन न प्राप्त कर सके। श्रीनिवास को अत्यधिक आनन्द प्रदान करने के लिये श्रीजीव ने उन्हें शांत सा स्थान प्रदान किया। वैशाख मास के पूर्णिमा की रात्रि का सौन्दर्य उत्कृष्ट था और विविध प्रकार के खिले हुए पुष्पों की सुगन्ध से सम्पूर्ण वातावरण सुरभित हो रहा था। श्रीनिवास सम्पूर्ण रात्रि वृक्षों और लताओं के सौन्दर्य दर्शन में लीन रहे और प्रातः उषा काल तक जाग रहे थे। वे उठे और नित्य कर्म स्नान आदि से निवृत्त होकर श्रीजीव के प्रति सम्मान व्यक्त करने पहुँचे।

श्रीराधादामोदर दर्शन

श्रीजीव ने श्रीनिवास के साथ मित्रवत् व्यवहार किया और उन्हें श्रीश्रीराधा-दामोदर जी के दर्शन कराने ले गये। श्रीनिवास की खुशी का कोई ठिकाना न रहा और वे बार-बार धरती पर झुक कर श्रीजीव का आभार व्यक्त कर रहे थे। उन्होंने श्रीश्रीराधा-दामोदर, जो कि श्रीजीव गोस्वामी के जीवन धन और प्राण थे, के दर्शनों को हृदय में आत्मसात कर लिया।

श्रीरूप गोस्वामी ने उन श्रीश्रीराधा-दामोदर के श्रीविग्रह की उपस्थिति का आह्वान किया था और उन्हें स्वप्न में श्रीजीव गोस्वामी को सौंप दिया था। कोई भी श्रीजीव गोस्वामी के चरित्र का वर्णन नहीं कर सकता। उनका जीवन एवं उनकी आत्मा और सर्वस्व श्रीरूप गोस्वामी के चरणकमलों में समर्पित था। यह

सुसज्जित प्रकार से संस्कृत में एक महान् कवि द्वारा उनकी पुस्तक 'साधन-दीपिका' में वर्णित है।

श्रीदामोदर विग्रह

साधन-दीपिका में यह वर्णित है, 'श्रीजीव गोस्वामी की जय जयकार हो। जो सदा श्रीरूप गोस्वामी के चरणकमलों में लीन रहते हैं। वे ब्रजवासी थे, जिन्होंने अपने तार्किक दर्शन से अतार्किक व्यक्तियों को पराजित कर दिया था।'

श्रीश्रीराधा-दामोदर, श्रीरूप गोस्वामी की करुणा के कारण प्रत्यक्ष दर्शनीय हो गये थे। करुणासिन्धु श्रीरूप गोस्वामी ने ये श्रीदामोदर श्रीविग्रह अपने हाथ से बनाकर सेवा करने के लिये श्रीजीव को प्रदान कर दिये। मैंने केवल जीवों के प्राणधन श्रीराधा-दामोदर के प्राकट्य का संक्षिप्त वर्णन किया है।

श्रीश्रीराधा-दामोदर की लीलाओं का अवलोकन करते हुए श्रीजीव गोस्वामी सदा भाव जगत में ही रहते थे। कभी-कभी प्रभु प्रसाद पाने का आग्रह करते तो श्रीजीव प्रभु को प्रसाद पाते निहारते रहते। एक दिवस प्रभु चेहरे पर मुस्कान लिये वंशी बजा रहे थे, उन्होंने श्रीजीव को बुलाया कि वे आयें और उनका दर्शन करें। श्रीदामोदर बहुत युवा थे और वे अनेकानेक मनमोहक आभूषणों से श्रृंगारित थे। उनका दर्शन करते ही श्रीजीव गोस्वामी को तत्क्षण मूर्छा आ गयी।

जब श्री जीव सचेत हुए तो उनका हृदय, प्रेम और भावावेश से परिपूर्ण था और कमल नयनों से अश्रुपात हो रहा था। मैंने केवल एक लघु प्रसंग का वर्णन किया है परन्तु श्रीश्रीराधा-दामोदर की ऐसी अनेक लीलाऐं हैं जिन्होंने प्रत्येक को श्रीजीव की ओर आकर्षित किया है।

श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास पर अपार करुणा बरसाई और श्रीश्रीराधा-दामोदर के चरणकमलों में स्थान दिया। तब वे श्रीनिवास को श्रीरूप गोस्वामी के समाधि स्थल ले गये। श्रीनिवास समाधि स्थल को देखते ही रुदन करने लगे और सम्मान व्यक्त करने के लिये वे भूमि पर लेट गये।

श्रीनिवास को सांत्वना देकर श्रीजीव गोस्वामी उन्हें श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी से मिलवाने ले गये। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी एक एकान्त स्थान पर बैठकर बहुत विलाप कर रहे थे। श्रीनिवास ने स्वयं पर नियंत्रण खो दिया और श्रीगोपाल भट्ट के सामने भूमि पर जा गिरे। जैसे ही श्रीजीव ने श्रीगोपाल भट्ट को उनका परिचय दिया और जैसे ही वे सम्मान व्यक्त करते हुए झुके, वे निरंतर रुदन कर रहे थे। यद्यपि श्रीगोपाल भट्ट विरह की अग्नि में जल रहे थे तथापि वे श्रीनिवास को देखकर प्रसन्न हो गये। उन्होंने बहुत स्नेह से अपने चरणकमल श्रीनिवास के शीश पर रख दिये और उन्हें बैठने को कहा।

श्रीगोपाल भट्ट ने कुशलक्षेम पूछा और श्रीनिवास ने आरम्भ से अंत तक जो भी अनुभव किया था वह सब कुछ विस्तार से बता दिया।

यद्यपि यह समाचार सुनते हुए श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी एक बार पुनः उदास हो गये। उन्होंने रूप गोस्वामी और सनातन गोस्वामी द्वारा स्वप्न में प्रदत्त निर्देशों के बारे में श्रीनिवास को बताया और उनके सौभाग्य की प्रशंसा की।

तब श्रीजीव गोस्वामी, श्रीनिवास के बारे में बताने लगे। उन्होंने श्रीगोपाल भट्ट को बताया कि श्रीनिवास उनसे दीक्षा लेने को बहुत उत्सुक हैं। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने स्वीकृति प्रदान कर दी और कहा कि दीक्षा **अमावस्या के दूसरे दिवस** को होगी।

श्रीजीव गोस्वामी प्रसन्न होकर श्रीनिवास को श्रीश्रीराधारमण के दर्शन करवाने ले गये। श्रीराधारमण जू का श्रीविग्रह अत्यंत सुन्दर है और बहुत सौभाग्यशाली व्यक्ति ही उनका दर्शन प्राप्त करने योग्य है। श्रीराधारमण जू की अत्यंत सुन्दर भाव-भंगिमा विश्व भर में प्रसिद्ध हो गई है। वृन्दावन के नागरिक श्रीविग्रह की स्थापना के समय अत्यधिक प्रसन्न थे।

श्रीराधारमण प्राकट्य

अब मैं संक्षेप में बताऊँगा कि कैसे श्रीगोपाल भट्ट के श्रीराधारमण प्रकट हुए। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीगोपाल भट्ट को अपने 'शालिग्राम' में ही हरि दर्शन करने का आदेश दिया। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने श्रीरूप गोस्वामी को श्रीगौरांग महाप्रभु के निर्देश के बारे में बताया और श्रीरूप गोस्वामी ने बहुत स्नेह से उत्तर दिया, 'श्रीगोविन्ददेव आपके सब कुछ हैं फिर भी उनकी इच्छा है कि आप उनकी अलग रूप में ही सेवा करें।'

कुछ दिवस बाद श्रीहरि स्वयं, श्रीगोपाल भट्ट के राधा-रमण के रूप में प्रकट हो गये। श्रीगोपाल भट्ट के सौभाग्य को कौन समझ सकता है, जिसके कारण अत्यधिक सुन्दर श्रीराधा-रमण जू स्वयं प्रकट हुए।

श्रीराधा-रमण जू के सुन्दर श्रीविग्रह का मुख श्रीगोविन्ददेव के समान, वक्षस्थल श्रीगोपीनाथ जी के समान और चरण कमल श्रीमदनमोहन जी के समान हैं। श्रीराधा-रमण के प्राकट्य से पूर्व जिन तीनों प्रभु के दर्शन, श्रीगोपाल भट्ट में बहुत उत्साह भर देते थे, वे सब एक साथ श्रीराधा-रमण के रूप में प्रकट हो गये।

श्रीगोपाल भट्ट जिस प्रकार से श्रीराधा-रमण जू की सेवा करते थे, उसे देखकर सनातन गोस्वामी, भूगर्भ गोस्वामी और अन्य गोस्वामी बहुत संतुष्ट होते।

वैशाख मास की पूर्णिमा के दिवस श्रीराधा-रमण जू को उनके सिंहासन पर पधराया गया। श्रीविग्रह की प्रतिष्ठापना के उपलक्ष्य में महोत्सव का आयोजन किया गया और उसी समय से श्रीराधा-रमण जू सम्पूर्ण विश्व में ऐसे विख्यात हो गये जैसे वे श्रीगोपाल भट्ट के प्रेम में बंधे थे।

इन स्वयंभू ठाकुर श्रीराधा-रमण जू का वर्णन संस्कृत ग्रन्थ 'साधन-दीपिका' में किया गया है जो यहाँ वर्णित है, 'मैं श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी का वंदन करता हूँ जिनके प्राणधन वृन्दावन के श्रीगोविन्ददेव के चरणकमल थे परन्तु जिसने श्रीरूप गोस्वामी के निर्देशानुसार उनकी अलग रूप में सेवा स्वीकार कर ली थी। उनके पृथक् रूप में पूजनीय श्रीविग्रह ही श्रीराधा-रमण थे। गोविन्ददेव जी के श्रीविग्रह जो श्री रूप गोस्वामी के अगाध प्रेम वश प्रकट हुए थे, वे श्रीराधा-रमण ही हैं। श्रीगोपाल भट्ट द्वारा पृथक् सेवा का कारण विभिन्न विश्वसनीय जनों से ज्ञात हुआ था।'

मैं ब्रज के निवासी श्रीवैंकट भट्ट के सुपुत्र श्रीगोपाल भट्ट का वंदन करता हूँ, जो श्रीप्रबोधानन्द जी के भतीजे हैं। यदि किसी को श्रीश्रीमदनगोपाल के श्रीराधिका के साथ, श्रीगोविन्द के श्रीवृन्दावनेश्वरी के साथ और श्रीगोपीनाथ के श्रीवृषभानु कुमारी के साथ दर्शन प्राप्त हो जाऐं, उसका जीवन निश्चित ही सफल है।

पृथक् रूप से श्रीविग्रह की सेवा करते हुए श्रीगोपाल भट्ट की उत्कंठा में वृद्धि होने लगी और उन्हें ज्ञात हुआ कि पृथक् रूप से सेवा करवाना, यह प्रभु की इच्छा ही थी। एक दिवस श्रीराधा-रमण स्वयं को श्रीगोपाल भट्ट के सम्मुख प्रकट करना चाहते थे, श्रीश्रीराधा-रमण ने उन्हें दिखाया कि वे और श्रीगोविन्ददेव वास्तव में एक ही हैं।

श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के निकटस्थ पार्षदों ने श्रीश्रीराधारमण के अभिषेकोत्सव की विधि पूर्ण की और इस प्रकार श्रीविग्रह की प्रतिष्ठा हुई। श्रीविग्रह ने स्वयं अपने मन्दिर की निर्माण व्यवस्था की और श्रीगोपाल भट्ट को अपनी पूजा करने में सहायता की। जिस तरह श्रीश्रीराधा-रमण जू प्रकट हुए, हमने संक्षिप्त रूप से उसका वर्णन किया है।

रहस्य पूर्ण ज्ञान सभी प्रकार के आनन्द का स्रोत है। श्रीश्रीराधा-रमण, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी की आत्मा और प्राणधन थे। सोते जागते उन्हें अपने प्रभु की सेवा के अलावा और कुछ नहीं सूझता। श्रीगोपाल भट्ट ने श्रीश्रीराधा-रमण के सौन्दर्य को अपने हृदय में आत्मसात कर लिया था। वृन्दावन में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं में श्रीगोपाल भट्ट, अनंग मञ्जरी या गुण मञ्जरी के रूप में प्रकट हुए थे।

'गौरगणोद्देश दीपिका' ग्रन्थ में यह वर्णित है कि भगवान् श्रीकृष्ण की वृन्दावन लीला के अनंग मञ्जरी, श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं में श्रीगोपाल भट्ट के रूप में प्रकट हुए। भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं से जुड़े अन्य प्रमाण भी बताते हैं कि श्रीगोपाल भट्ट पूर्व में गुण मञ्जरी थे।

श्रीविग्रह के सौन्दर्य से मुग्ध हो श्रीगोपाल भट्ट ने श्रीराधा-रमण के पसंद के पुष्पों के सुन्दर आभूषणों से उनका शृंगार किया। श्रीराधा-रमण की सेवा

करते-करते श्रीगोपाल भट्ट का उत्साह पल-पल बढ़ने लगा और वे सदा श्रीगौरचन्द्र की सेवा का स्मरण करते रहते। वे बहुत कठिनता से धैर्य रख पाते और सदा अपने आवास पर श्रीगौरचन्द्र की सेवा विधि का स्मरण करते रहते जो उनके पिता जी द्वारा बताई गई थी। वे उस सेवा को स्मरण करते हुए रो पड़े और अपने श्रीराधा-रमण के अत्यधिक सुन्दर श्रीविग्रह के दर्शन कर बहुत अश्रु बहाने लगे, जो श्रीगोपाल भट्ट के प्रेम-पाश में बंधे हुए थे और उनके सम्मुख श्रीगौरचन्द्र के रूप में प्रकट होकर आनन्दित होते। वे युवा के रूप में और इतने सुन्दर परिधान पहने हुए प्रकट हुए कि उन्होंने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को आकर्षित कर लिया। उनका सौन्दर्य मदन (कामदेव) से भी उत्कृष्ट था। श्रीगौरचन्द्र के सौन्दर्य के दर्शन कर श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी का हृदय उमंग से भर गया और वे यह चिल्लाते हुए कि 'यह मैंने क्या देख लिया' अचेत हो भूमि पर जा गिरे।

श्रीराधारमण भये गौर

नेत्रों से अश्रु बहाते हुए श्रीगोपाल भट्ट आनन्दपूर्वक श्रीश्रीराधा-रमण और श्रीगौरचन्द्र की स्तुति करने लगे। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के हृदय में जो भी इच्छा प्रकट होती, श्रीराधा-रमण तत्क्षण उसे तृप्त कर देते। श्रीगोपाल भट्ट के प्राणधन श्रीराधा-रमण की गतिविधियां सम्पूर्ण जगत को विदित होने लगीं।

श्रीनिवास ने श्रीराधारमण जू के सम्मुख भूमि पर दण्डवत् लेटकर प्रणाम किया। उनके मुख से शब्द निकल रहे थे परन्तु मानसिक रूप से विकल अवस्था में होने के कारण वे पूर्ण रूप से उनका उच्चारण नहीं कर पा रहे थे। अपने आप को पूर्णतः श्री श्रीराधा-रमण के चरणकमलों में समर्पित कर श्रीनिवास निष्कपट भाव से बैठ गये और श्रीविग्रह को निहारने लगे।

श्रीश्रीराधा-रमण को प्रणाम कर श्रीजीव गोस्वामी श्रीनिवास को श्रीलोकनाथ गोस्वामी और श्रीभूगर्भ गोस्वामी से भेंट करवाने ले गये और उनका उनसे परिचय करवाया। हालांकि वे विरह के भाव में अत्यधिक व्याकुल थे तथापि वे श्रीनिवास को देखकर अत्यधिक प्रसन्न हुए।

श्रीलोकनाथ-भूगर्भ मिलन

श्रीनिवास ने श्रीलोकनाथ गोस्वामी और श्रीभूगर्भ गोस्वामी के चरणकमलों में वन्दन किया और दोनों ने बहुत भाव से उन्हें आलिंगन किया। वास्तव में अपने प्रेममय उत्साह के कारण उन्होंने श्रीनिवास को अपने आलिंगन से मुक्त नहीं किया और उन्हें अपने अश्रुओं से सिंचित कर दिया। उन्होंने श्रीनिवास को श्रीश्रीराधा-विनोद के चरणकमलों में समर्पित कर दिया और अपनी अपार करुणा प्रदान की। श्रीनिवास को श्रीराधा-विनोद के दर्शन कर जो आनन्दातिरेक का अनुभव हुआ उसका वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीगोपीनाथ दर्शन

आगे श्रीजीव, श्रीनिवास को श्रीगोपीनाथ के दर्शन कराने ले गये। श्रीगोपीनाथजी को निहारते हुए श्रीनिवास उल्लसित हो गये और उनके नेत्रों से अश्रुपात होने लगा। श्रीपरमानन्द पुरी और श्रीमधु पण्डित, श्रीनिवास को देखकर अत्यधिक प्रसन्न हो गये। उन्होंने श्रीनिवास पर जो करुणा बरसाई उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वहाँ से श्रीजीव, श्रीनिवास को श्रीमदन-मोहन के दर्शन करवाने ले गये।

श्रीमदनमोहन दर्शन

श्रीनिवास श्रीमदन-मोहन के सम्मुख स्वयं पर नियंत्रण नहीं कर पाये क्योंकि उनका हृदय प्रभु प्रेम से ओत-प्रोत हो गया। वे अत्यधिक रुदन करते हुए बारम्बार श्रीमदन-मोहन को प्रणाम करने लगे। जब श्रीनिवास ने स्वयं को शांत किया तो श्रीजीव गोस्वामी ने उनकी भेंट अन्य भक्तजनों से कराई। श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी और अन्य भक्त जो आनन्दातिरेक में डूबे हुए थे, उन्होंने श्रीनिवास को भुजाओं में जकड़ कर आलिंगन कर लिया।

सनातन-समाधि दर्शन

श्रीनिवास ने सभी गौरवान्वित भक्तजनों को प्रणाम किया और उन्होंने अपनी हार्दिक करुणा उन पर बरसाई। श्रीनिवास कई अन्य भक्तों के साथ श्रीसनातन गोस्वामी की समाधि स्थल के दर्शन करने गये। जब वे समाधि स्थल पर पहुँचे तो श्रीनिवास धरती पर लोट गये। वे इतने भावविभोर हो गये कि रुदन करने लगे और अन्य लोगों ने भी उनके साथ रोना आरम्भ कर दिया। तब भक्तजनों ने बहुत मृदु स्वर में श्रीनिवास को सांत्वना दी।

दीक्षा-क्रम

अंत में श्रीजीव गोस्वामी प्रसन्नचित्त होकर श्रीनिवास के साथ वापिस अपने निवास पर लौट आये। यह सबको विदित हो गया कि अगली प्रातः श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी श्रीनिवास को दीक्षा प्रदान करेंगे। श्रीनिवास ने अपने सौभाग्य को सराहा और उस दिवस के शेष पलों को भक्तजनों के साथ विभिन्न भगवद् विषयों की चर्चा में व्यतीत किया।

अगली प्रातः स्नान के पश्चात् श्रीनिवास श्रीजीव गोस्वामी के साथ श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के निवास पर गये, जो श्रीराधा-रमण जू की पूजा-अर्चना में व्यस्त थे। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी को प्रणाम किया और उन्हें श्रीनिवास के आध्यात्मिक चरित्र का वर्णन श्रवण कराया। श्रीनिवास ने

श्रीगोपाल भट्ट के चरणकमलों में प्रणाम किया जो उनके ऐसे व्यवहार से पूर्णत: संतुष्ट हो गये।

श्रीराधा-रमण जू की उपस्थिति में बहुत मधुर उत्सव में श्रीगोपाल भट्ट ने श्रीनिवास को अपना शिष्य बनाया। उन्होंने श्रीनिवास को श्रीराधा-रमण और श्रीगौरचन्द्र की सेवा में समर्पित कर दिया और उन्हें विरक्त भक्त की सेवा विधि की शिक्षा दी।

श्रीनिवास विनम्रतापूर्वक अश्रु बहाते हुए श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के चरणकमल में लोट गये। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने भी उत्साह से अश्रु बहाते हुए श्रीनिवास को आशीष दिया और उनके अध्यात्म के क्षेत्र में सफल होने की कामना की। उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी से श्रीनिवास की विशेष देखभाल करने की प्रार्थना की। श्रीनिवास और श्रीजीव गोस्वामी दोनों ही श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के चरणकमल में झुक गये। तब श्रीजीव ने श्रीनिवास को भावपूर्ण आलिंगन प्रदान किया और दोनों आनन्दातिरेक में अश्रुपात करने लगे। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी द्वारा श्रीनिवास को दीक्षा प्रदान करने का समाचार फैल गया और हर कोई इस बालक के प्रति प्रीति अनुभव करने लगा। बहुत से वैष्णव श्रीराधा-रमण के दर्शन को और साथ ही श्रीनिवास से भेंट करने आने लगे। एक महोत्सव का आयोजन किया गया और हर कोई श्रीनिवास से मिलकर बहुत संतुष्ट हुआ।

श्रीरघुनाथदास मिलन

एक दिवस श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास को श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी से मिलने श्रीराधाकुण्ड भेज दिया। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी श्रीनिवास को देखकर बहुत प्रसन्न हुए और श्रीराघव, श्रीकृष्णदास कविराज और अन्य वैष्णवजनों ने बहुत प्रसन्नता से अपना सान्निध्य प्रदान किया।

श्रीनिवास तीन दिवस तक श्रीराधाकुण्ड और गोवर्धन गिरिराज क्षेत्र में रहे और उसके बाद वैष्णवजनों की आज्ञा से वृन्दावन वापिस लौट आये। सभी वैष्णवों की आज्ञा से एक शुभ दिवस पर श्रीनिवास ने अपनी शिक्षा प्रारम्भ की। उन्होंने बहुत ही सहजता से श्रीमद्भागवत और गोस्वामीजनों के साहित्य में निपुणता प्राप्त करके हर किसी को हर्षित कर दिया।

एक दिवस श्रीजीव ने रुचि लेते हुए 'श्रीउज्ज्वल नीलमणि' नामक ग्रन्थ से निम्न पद का वर्णन किया, 'अपनी सखियों को सम्बोधित करते हुए श्रीराधिका बोलीं कि एक बार कमल नयनधारी श्रीकृष्ण ने मात्र दो पत्तों वाले कदम्ब के एक पौधे को गोकुल के प्रवेश द्वार के निकट रोपित कर दिया। वह वृक्ष अब विकसित होकर असंख्य लता पताओं से घिर गया है। उन्होंने शिकायत की कि

वह पूर्ण-विकसित कदम्ब वृक्ष उन गोपियों के संताप का कारण बन गया जो पहले से ही श्रीकृष्ण के विरह की पीड़ा झेल रही हैं।'

आचार्य उपाधि

ऐसा प्रतीत हो रहा था कि श्रीजीव इस पद का पर्याप्त रूप से वर्णन करने में असमर्थ थे और इस कारण उन्होंने श्रीनिवास से इसका अर्थ बताने का निवेदन किया। श्रीनिवास के हृदय में श्रीरूप गोस्वामी ने स्फुरित कराया और इस कारण उन्होंने भली प्रकार से पद का वर्णन कर दिया। जो भी इस वर्णन को सुनता वह प्रसन्न और संतुष्ट हो जाता। वास्तव में हर कोई श्रीनिवास की विद्वत्ता से अचम्भित था और उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगा। प्रत्येक उपस्थित जन से आज्ञा लेकर श्रीजीव ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीनिवास को **आचार्य की उपाधि** प्रदान की। हालांकि श्रीजीव देख सकते थे कि श्रीनिवास इस प्रकार सम्मान देने से कुछ लज्जित अनुभव कर रहे थे परन्तु उन्होंने उस विनम्रता को अनदेखा करके श्रीनिवास को आचार्य कहकर सम्बोधित किया।

श्री नरोत्तम ठाकुर

श्रीजीव गोस्वामी की आज्ञा से आचार्य श्रीनिवास ने ब्रज के वैष्णवजनों को पढ़ाना आरम्भ कर दिया। एक दिवस श्रीनिवास एकान्त स्थान पर बैठे थे कि अचानक उनके मस्तिष्क में एक विचार आया। यद्यपि उन्होंने कभी श्रीनरोत्तम का नाम भी नहीं सुना था और कभी उनसे मिलने का सौभाग्य भी नहीं बना था। फिर भी उन्होंने निश्चय किया कि जब भी वे श्रीनरोत्तम से मिलेंगे तो उन्हें कभी भी अपना सान्निध्य छोड़कर नहीं जाने देंगे।

इन विचारों में मग्न श्रीनिवास रुदन करने लगे क्योंकि वे नहीं जानते थे कि शायद कभी उन्हें श्रीनरोत्तम के दर्शन का सुअवसर प्राप्त होगा भी या नहीं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से उस रात श्रीनिवास गहरी निद्रा में सो गये और श्रीरूप गोस्वामी उनके स्वप्न में प्रकट हुए। श्रीरूप गोस्वामी ने उन्हें सूचित किया कि अगले दिवस वे श्रीनरोत्तम से भेंट करेंगे। इतना कहकर वे अन्तर्धान हो गये।

श्रीनिवास आनन्द से अभिभूत हो गये और अगले दिवस वास्तव में श्रीनरोत्तम उनसे मिलने आये। एक-दूसरे को निहारते हुए वे भावावेश में आ गये और इस कारण रुदन करने लगे।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम को बताया कि वे उनके सर्वोत्तम सान्निध्य को पाकर सौभाग्यशाली हो गये हैं। इसी भाव में श्रीनरोत्तम ने श्रीनिवास से मधुर वार्तालाप किया और हर सुनने वाले के कानों में आनन्द ध्वनि भर गई।

श्रीनिवास ने श्रीनरोत्तम का बहुत भाव से आलिंगन कर लिया और लगा कि वे अपने हाथों के बन्धन से उन्हें मुक्त नहीं करेंगे।

अचानक श्रीनिवास को माता सीता के कहे शब्दों की स्मृति हो उठी और तत्क्षण श्रीनिवास ने स्वयं के भावों पर नियंत्रण किया। श्रीनरोत्तम ने विनयपूर्वक श्रीनिवास के चरणकमलों में प्रणाम किया। श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम के मध्य उत्पन्न स्नेह और भावपूर्ण सम्बन्ध की सम्पूर्ण श्रीवृन्दावन धाम में चर्चा होने लगी।

श्रीलोकनाथ द्वारा श्री नरोत्तम दीक्षा

श्रीनरोत्तम अगाध आनन्द से अभिभूत हो गये और उन्होंने स्वयं को श्रीलोकनाथ प्रभु के चरणों में समर्पित कर दिया। श्रीलोकनाथ प्रभु श्रीनरोत्तम की निष्कपटता से अत्यधिक प्रसन्न हुए और स्वेच्छा से उन्हें दीक्षा प्रदान कर दी। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य भक्तजनों ने श्रीनरोत्तम पर अपार करुणा बरसाई और श्रीजीव गोस्वामी ने इनकी शिक्षा प्रारम्भ की। कुछ ही समय में श्रीनरोत्तम ने धर्मग्रन्थों की अपनी शिक्षा पूर्ण कर ली। भक्तजन उनके समझने की शक्ति से अचम्भित से थे और उन्होंने एक महान् विद्वान् के रूप में उनका आदर करना प्रारम्भ कर दिया। क्योंकि उनके सीखने की क्षमता औरों से बहुत अधिक थी इस कारण श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें **ठाकुर महाशय** की उपाधि प्रदान की।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तमदास ठाकुर, श्रीजीव गोस्वामी के अति प्रिय वैष्णव हो गये थे।

श्रीवृन्दावन में हर किसी ने बहुत स्नेह से यह देखा कि श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर पर बहुत प्रेम बरसाया। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास, श्रीजीव गोस्वामी के साथ इतनी घनिष्ठता से रहते थे कि ऐसा प्रतीत होता मानों वे दोनों श्रीजीव गोस्वामी के दो हाथ बन गये हों। श्रीरूप और श्रीसनातन की स्मृतियों को सजीव रखते हुए श्रीजीव गोस्वामी, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तमदास ठाकुर के साथ प्रभु सेवा से सम्बन्धित चर्चा करते हुए व्यतीत करते थे।

जो कोई भी इस चर्चा को निष्कपट होकर गम्भीरता से श्रवण करता है उसे निश्चित ही भगवान् विश्वम्भर का अनुग्रह प्राप्त होता है। एकमात्र श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का आश्रय लेकर नरहरिदास को भक्ति-रत्नाकर ग्रन्थ की रचना का आनन्द प्राप्त हुआ है।

पंचम प्रवाह

मथुरा मण्डल परिक्रमा-विवरण

श्रीगौर गोविन्द की जय जयकार हो, जो कि सब के प्रभु हैं। श्रीनित्यानन्द प्रभु की और प्रभु प्रेम का सर्वप्रथम वितरण करने वाले श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। प्रभु प्रेम के भण्डार श्रीगदाधर पण्डित की जय जयकार हो। दीन दु:खियों के मित्र श्रीवास पण्डित की जय जयकार हो। करुणा के साकार स्वरूप श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की जय जयकार हो। श्रीचैतन्य महाप्रभु के सभी भक्तवृन्दों की जय जयकार हो। कृपया हम पर अनुकम्पा वृष्टि कीजिए क्योंकि हम पूर्णत: आपकी कृपा पर आश्रित हैं। 'भक्ति रत्नाकर' के सभी पाठकवृन्द जो कि अत्युत्तम गुणों के भण्डार हैं उनकी जय जयकार हो। अब कृपया मेरी कथा का श्रवण जारी रखिए क्योंकि आगे श्रीरूप गोस्वामी के श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम महाशय के प्रति स्नेहमय चरित्र का वर्णन है।

एक दिवस श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास महाशय से वृन्दावन के सभी पवित्र स्थलों की यात्रा करने का निवेदन किया। उस समय उन्हें अचम्भा हुआ कि उन्हें मार्ग दिखाने में कौन सहायता करेगा। वे अभी इस बारे में सोच ही रहे थे कि गोवर्धन पर्वत से **श्रीराघव पण्डित** वहाँ आ पहुँचे। श्रीजीव गोस्वामी उन्हें देखकर अत्यधिक प्रसन्न हुए और उन्होंने उनका कुशल क्षेम पूछा।

राघव पण्डित ने उन्हें बताया कि, 'मैं यहाँ ज्यादा समय नहीं रहूँगा कारण कि मैंने ब्रजयात्रा का निर्णय लिया है।' श्रीजीव गोस्वामी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने श्रीराघव पण्डित को श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास महाशय को साथ ले जाने को कहा। श्रीराघव पण्डित ऐसा प्रस्ताव सुनकर बहुत प्रफुल्लित हो गये।

इसी मध्य श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास वहाँ आ गये और उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी और श्रीराघव पण्डित के चरणकमलों में प्रणाम किया। श्रीराघव पण्डित ने हार्दिक रूप से उनका आलिंगन कर लिया और दोनों बालक इतना प्रेम पाकर आनन्दित हो गये। श्रीजीव गोस्वामी ने बताया कि कैसे श्रीराघव पण्डित ने उन्हें ब्रज की यात्रा पर ले जाने के लिये सहमति प्रदान की है।

अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने भक्तजनों से जाने की अनुमति मांगी। श्रीजीव गोस्वामी ने प्रसन्नता से उन्हें विदाई दी।

श्रीराघव पण्डित ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को मथुरा ले जाकर वहाँ से यात्रा आरम्भ की। वे पहले श्रीकेशवदेव मन्दिर गये जहाँ श्रीसुबुद्धि

राय ने एक बार निवास किया था। उन सब ने मिलकर श्री सुबुद्धि राय की प्रशंसा में स्तुति गान किया और सायंकाल में प्रसन्नता से नाम संकीर्तन किया। श्रीराघव पण्डित जो सदैव प्रभु के प्रेम और करुणा के भाव सागर में मग्न रहते हैं, उनके आध्यात्मिक चरित्र का पर्याप्त रूप से वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीराघव पण्डित

एक महान् वैष्णव के रूप में श्रीराघव पण्डित की गतिविधियों का पर्याप्त वर्णन कौन कर सकता है? वे दक्षिण भारत के एक कुलीन ब्राह्मण परिवार से सम्बन्ध रखते थे और वे निर्धनों से बहुत विनम्र व्यवहार करते थे। उन्होंने उत्तमोत्तम ग्रन्थों की रचना की जैसे कि भक्ति रत्न प्रकाश। एक महान् विद्वान् के रूप में श्रीराघव पण्डित ने सदैव गोवर्धन में ही वास किया, जो स्थान उन्हें अत्यन्त प्रिय था। गौर गणोद्देश दीपिका में यह वर्णित है, 'ब्रज में श्रीराधा जू की अतिप्रिय सखी, चंपकलता सखी अब गौर लीला में गोवर्धन पर्वत वासी श्रीराघव पण्डित के रूप में प्रकट हुई हैं।

समय-समय पर श्रीराघव पण्डित श्रीवृन्दावन के पवित्र स्थलों की यात्रा करते रहते थे अन्यथा वे श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के साथ रहते थे। कभी-कभी वे दोनों साथ में श्रीवृन्दावन के भक्तजनों से मिलने जाते। श्रीराघव पण्डित सदैव श्रीश्रीराधा-कृष्ण और श्रीचैतन्य महाप्रभु का स्तुति गान करते रहते और ऐसा करते हुए वे स्वयं के ही आँसुओं में भीग जाते। प्रायः वे श्रीवृन्दावन की रज में लोट जाते थे और उन्हें कभी भी भूख-प्यास की सुध न रहती। वास्तव में उनकी सांसारिक आनन्द के प्रति अनासक्ति को कौन समझ सकता है?

श्रीराघव पण्डित जानते थे कि श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास दोनों समान मानसिकता वाले हैं और इस कारण वे उन्हें अत्यन्त प्रिय थे। उषा-काल के समय श्रीराघव पण्डित ने श्रीकृष्ण की मथुरा मण्डल में उत्तमोत्तम लीलाओं का वर्णन प्रारम्भ किया।

मथुरा के राजा वज्रनाभ ने अनेक गांव स्थापित किये और जिनका नामकरण श्रीकृष्ण की लीलाओं के आधार पर रखा। भगवान् श्रीकृष्ण के अनेकों श्रीविग्रह स्थापित कर और अनेकों कुण्डों का निर्माण कर राजा वज्रनाभ ने अपनी दीर्घ-अभिलषित इच्छा पूर्ण की। समय के साथ ब्रज के ये पवित्र स्थल विस्मृत हो गये। ऐसा होने पर न तो किसी ने भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा यहाँ रचाई लीलाओं की चर्चा की और न ही उनका स्मरण किया। बहुत बाद में श्रीकृष्ण चैतन्य जो स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण थे, ने मथुरा आकर भगवान् श्रीकृष्ण की लीला स्थलियों को पुनः खोजा। तब उन्होंने यह सब श्रीसनातन गोस्वामी और श्रीरूप गोस्वामी को बताया।

यद्यपि इस प्रकार श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी को उन पवित्र स्थलों की जानकारी हो गयी थी तथापि उन्होंने अपने निष्कर्ष के समर्थन में शास्त्रों से बहुत विस्तृत साक्ष्य एकत्र किये। ऐसा करने के बाद उन्होंने श्रीवृन्दावन के कई पवित्र स्थलों की पुनः स्थापना की ताकि लोग उनके वास्तविक महत्व को समझ सकें। उन्होंने श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण की उपासना और स्तुतियों का और उनके दिव्य प्रेम के ज्ञान का भी प्राकट्य किया।

श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीचैतन्य महाप्रभु को अति प्रिय थे और ऐसा मथुरा और श्रीवृन्दावन के पवित्र स्थलों को खोजने के उनके निष्कपट प्रयासों के कारण था ताकि लोग अब उनकी कीर्त्ति को सराह सकें।

मथुरा मण्डल माहात्म्य

जो कोई भी मथुरा-मण्डल में कहीं भी स्नान करेगा वह समस्त पापों से मुक्त हो जायेगा। 'आदि वाराह पुराण इस वर्णन की पुष्टि करता है, 'जैसे सूर्य के उदय होने से अंधकार परास्त होता है, जैसे पर्वत, तूफान के भय के कारण कंपन करते हैं, जैसे सांप, गरुड़ से भयभीत होते हैं, जैसे पवन के वेग से मेघ हट जाते हैं, जैसे ज्ञान के संवर्धन से दु:ख-दरिद्रता का नाश हो जाता है, जैसे सिंह के भय से हिरण काँपता है, जैसे घास का ढेर अग्नि में जल जाता है- ऐसे ही मथुरा-मण्डल के दर्शन करके मनुष्य के सभी पाप नष्ट किए जा सकते हैं।'

भगवान् शिव और उनकी पत्नी गौरी के संवाद में ऐसा पाया गया कि पद्म पुराण के पाताल खण्ड में भी यही वर्णन प्राप्त होता है, '**मथुरा के बाईस योजन** में रखा गया प्रत्येक पग वही फल देता है जो एक अश्वमेध यज्ञ करने से प्राप्त होता है।'

यदि कोई भी जान बूझकर या अनजाने में कोई पाप करता है तो मथुरा के अन्तर्गत किसी भी पवित्र स्थल की यात्रा कर उसके प्रभाव से मुक्त हो सकता है।

पद्म पुराण के अनुसार मथुरा में यदि कोई पाप किया गया हो तो वह मथुरा के ही सम्पर्क में रहकर खंडित हो सकता है। मथुरा में वास कर कोई भी मानव जीवन के चार लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है।

पद्म पुराण के पाताल खण्ड में भगवान् शिव कहते हैं, 'हे महादेवी जिस किसी भी पाप के प्रभाव से मनुष्य मथुरा से बाहर रहकर दस वर्षों तक परिणाम भोगता है, मथुरा में वास करने वाले के वे पाप दस दिवस में ही नष्ट हो जाते हैं।'

आदि वाराह पुराण में भी यह वर्णित है, 'हे पृथ्वी की देवी इस ब्रह्माण्ड के भीतर मथुरा के अलावा कोई भी अन्य स्थान मुझे प्रिय नहीं है।'

स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में नारद मुनि द्वारा बोला जाने वाला एक पद यह भी है। भारतवर्ष में तैंतीस हजार वर्ष रहने का जो परिणाम है वह केवल मथुरा की महिमा के स्मरण से ही प्राप्त हो जाता है।

पद्म पुराण के पाताल खण्ड में यह कहा गया है कि, 'यदि कोई मथुरा जाने की इच्छा रखता है परन्तु कभी यह सौभाग्य प्राप्त नहीं करता या **यदि कोई मथुरा के बाहर मथुरा आने की इच्छा लिये मृत्यु प्राप्त करता है, वह अगला जन्म मथुरा में ही प्राप्त करता है।'**

आदि वाराह पुराण में यह भी वर्णित है, 'हे देवी मैंने यह सूचित किया है कि मथुरा मण्डल में छः सौ साठ अरब पवित्र स्थल हैं।'

स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में यह कहा गया है, 'हे राजा, समय के घटनाचक्र में धरती पर उपलब्ध रज कणों को गिनना शायद सम्भव हो जाये परन्तु मथुरा मण्डल में पवित्र स्थलों का अनुमान नहीं लगाया जा सकता।'

स्कन्द पुराण के पाताल खण्ड में यह वर्णन पाया गया है कि, 'मथुरापुरी में वास करने का प्रयासभर कीजिये, जहाँ तीन लोकों के रचयिता भगवान् गोविन्द अपनी गोपियों के साथ अनन्तकाल तक रहे। हे भौतिक सम्पदा के प्रेमी, यह बात याद रख लो। यदि तुम अनन्तकाल तक सुख चाहते हो तो केवल मथुरा में वास करो। '

आदि वाराह पुराण के एक अन्य पद में वर्णन है, 'यदि कोई मथुरा का त्याग करता है और किसी अन्य स्थान पर वास करता है या केवल **मथुरा के बाहर वास करने के अपने प्रेम को प्रकट करता है वह बहुत मूर्ख व्यक्ति है।** मेरी माया के प्रभाव से वह जन्म-जन्मान्तर तक इस भौतिक संसार में ही व्यतीत करेगा।'

यह पद स्कन्द पुराण में भी है। आदि वाराह पुराण भी बताता है, 'मधुपुरी उन सब का आश्रय स्थल है जिन्हें उनके मित्रों और परिवार ने त्याग दिया है और जिनका और कोई सहारा नहीं है। मथुरा उन लोगों का एकमात्र लक्ष्य है जो भगवान् की परम सत्ता में वास चाहते हैं।'

पुनः आदि वाराह पुराण में वर्णित है, 'हे देवी तीनों लोकों में मथुरा के समान और कोई पवित्र स्थान नहीं है। मैंने वहाँ दीर्घकाल तक वास किया है।'

श्रीमद्भागवत (4.8.42) में नारद मुनि महाराज ध्रुव से कहते हैं, 'मेरे प्रिय बालक, इसलिये यह विनती करता हूँ कि तुम्हें सौभाग्य की प्राप्ति हो। तुम यमुना जी के तट पर जाओ जहाँ मधुवन नामक एक पवित्र वन है और विशुद्ध हो जाओ। केवल वहाँ जाकर ही वह मनुष्य, देवत्व की महान् विशिष्टता की ओर खिंचा चला जाता है जो कि सदैव वहाँ वास करता है।'

विष्णु पुराण में यह पद गाया गया है, 'श्रीशत्रुघ्न ने एक शक्तिशाली राक्षस मधु के पुत्र लवण राक्षस का वध करने के बाद मथुरा नगर को खोजा था।

मधुवन में प्रभु श्रीहरि के महानतम भक्त महादेव का वास है। मथुरा में, जो कि वह पावन स्थान है जो सर्व पाप नष्ट कर सकता है, महादेव वहां ध्यान में लीन रहते हैं।'

पद्म पुराण में यह पद मिला है, 'मथुरा चालीस योजन क्षेत्र में फैला हुआ है। भगवान् के भी भगवान् श्रीहरि अनन्तकाल तक यहाँ रहे।'

आदि पुराण में वाराह भगवान् ने कहा है, 'मात्र धर्म पारायण गतिविधियां करके, दान-पुण्य आदि करके, तपस्या करके, मंत्र जाप करके, अनगिनत त्याग करके मथुरा में वास करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता परन्तु मेरी अनुकम्पा से यह प्राप्त किया जा सकता है। मथुरा में वास करना भगवान् कृष्ण के अनुग्रह से ही सम्भव हो सकता है और बिना मेरे अनुग्रह के कोई भी मथुरा में एक पल भी नहीं रह सकता।'

पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में यह वर्णित है, 'मथुरा के प्रति आसक्ति उन सौभाग्यशाली आत्माओं में जागती हैं जिनकी श्रीहरि के चरणों में अटल निष्ठा है और जिन्हें उनकी करुणा प्राप्त हो गयी है।'

पुनः पद्म पुराण के निर्वाण खण्ड में यह वर्णन है, 'हे ब्राह्मण श्रेष्ठ, जब भी कोई ध्यान करके, धर्म पारायण गतिविधियों और तपस्या में संलग्न होकर विशुद्ध हो जाता है केवल वह मेरे मंगलमय मथुरा के दर्शन लाभ प्राप्त कर सकता है। अन्य कोई सहस्र कल्पों में मथुरा को देख भी नहीं सकता।' सम्पूर्ण पुराणों से यह प्रमाणित होता है कि मथुरा सब प्रकार मुक्ति प्रदान करता है।

आदिवाराह पुराण में आगे वर्णन है, 'जो योग करता है, जो ब्रह्म को जानता है और जो विचारशील दार्शनिक है उसका जो अंतिम लक्ष्य है वह उसके द्वारा सरलता से प्राप्त कर लिया जाता है जो मथुरा में अपनी देह का त्याग करता है। हे देवी, जो कोई भी मथुरा के भीतर कहीं भी किसी पवित्र स्थल पर, एक घर में और यहाँ तक कि आँगन में मृत्यु प्राप्त करता है वह निस्संदेह मोक्ष प्राप्त करता है। इस संसार में काशी से आरम्भ होकर जितने भी पवित्र स्थल हैं, मथुरा उन सब में श्रेष्ठ है। जो कोई पूर्ण निष्कपटता से ब्रह्मचर्य का पालन करता है मथुरा में मृत्यु प्राप्त करता है और वहीं उसका दाह संस्कार किया जाता है, वह चार प्रकार की मुक्ति में से एक प्राप्त करता है। **वही मुक्ति कीड़े, मकोड़े, पक्षियों और अन्य जीवों को मथुरा में प्राण त्यागने पर प्राप्त होती है** और यहाँ तक कि वह वृक्ष जो यमुना जी के तट पर गिरते हैं उन्हें भी मुक्ति प्राप्त होती है।'

पद्म पुराण के पाताल खण्ड में अन्यत्र कहीं यह भी वर्णन हैं, 'यदि निम्न जाति में जन्मे व्यक्ति जैसे चाण्डाल शूद्र, महिला, पशु वध करने वाले का पिण्डदान संस्कार मथुरा में किया जाये तो वे बार-बार जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। हे देवी यदि कोई जीव मथुरा के एक नाले, ईट पत्थरों,

पद्म पुराण के यमुना माहात्म्य में वर्णन हैं, 'बहुत पहले अप्सराओं के इस रमणीक स्थान में एक **यायावर नामक उन्मत्त ब्राह्मण** रहता था। काम-वासना के अभिभूत हो ब्राह्मण ने इन्द्र का अपमान कर दिया और इस कारण घृणा योग्य हो गया। दीर्घकाल तक इन्द्र के अभिशाप की अग्नि को सहते हुए, शांति पाने के लिये तप करने के बावजूद वह केवल वहाँ के जल की बूँद को स्पर्श करने मात्र से अपने पाप से मुक्त हो गया। तब ब्राह्मण ने शौकर-पुरी पहुँचने तक पूर्व की ओर चलना आरम्भ किया जहाँ वाराह भगवान् ने पूर्व काल में धरती को बचाने के लिये स्वयं को प्रकट किया, जब वह सार्वभौम विनाश (प्रलय) के समय पर डूब गयी थी।'

मथुरा की सीमा यायावर से शौकरी तक फैली है, जिसकी आपस में दूरी बीस योजन बताई जाती है। मथुरा मण्डल के बीस योजन में अनेक पवित्र स्थल हैं। पुराणों में मथुरा मण्डल के भीतर के इन सभी पवित्र स्थलों को वर्गीकृत किया गया है जहाँ श्रीकृष्ण और श्रीबलराम खेला करते थे, यह बताते हुए कि वे पूरे 20 योजन में खेलते थे। यही वाक्य मथुरा खण्ड को भी प्रमाणित करता है।

आदि वाराह पुराण में यह बताया है, 'मथुरा-मण्डल पूरे 24 कोस में फैला है और द्वादश-वनों से सुसज्जित है जहाँ सर्वकार्य सिद्धि प्रदान करने वाली मथुरा देवी का वास है। हे वसुन्धरे, कमल आकृति समान मथुरा सभी को मुक्ति प्रदान करने वाला है। मथुरा रूपी कर्णिका के भीतर आदि केशव का वास है जो मनुष्य को भौतिक संसाधनों से उत्पन्न दुःख से मुक्ति देते हैं। जो कोई भी उस कर्णिका के भीतर या पत्तियों में प्राण त्यागता है वह मोक्ष प्राप्त कर सकता है।'

आदि पुराण में यह वाक्य है, 'हे मन तुम महादेव के पूजनीय भगवान् हरिदेव जो श्रीविग्रहों के भी श्रीविग्रह हैं और जो कमल के पश्चिम दल पर विराजमान हैं, को देखकर विलाप क्यों करते हो?' यदि किसी ने श्रीगोविन्ददेव के दर्शन किये हों, जो कमल के उत्तरी दल पर विराजमान हैं, वे कभी भी इस भौतिक संसार में दोबारा नहीं गिरते। विश्रांति नाम के भगवान् पूर्वी दल पर विराजमान हैं, उन्हें देखकर कोई भी इस दुखी संसार में दोबारा जन्म लेने के चक्कर से मुक्ति पा लेता है, इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है।

दक्षिणी दल पर श्रीवाराहदेव विराजमान हैं। इनके अनुग्रह से किसी को भी सब प्रकार की दक्षता प्राप्त होती है। वास्तव में उन्हें देखने मात्र से कोई भी ब्रह्मलोक में पूजनीय व्यक्तित्व हो जाता है।

एक अन्य स्थान पर यह वर्णन है, 'अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित करके और मथुरा में स्नान करके जो ज्येष्ठ मास के कृष्ण पक्ष के बारहवें दिवस पर श्रीआदि केशव के दर्शन करता है उसे सर्वोच्च पद की प्राप्ति होती है। हे

वसुन्धरे मेरे शयन काल में विश्व के सभी पवित्र स्थल, सागर और कुण्ड मथुरा में आ जाते हैं।'

स्कन्द पुराण में वर्णन है, 'वास्तविक रूप से मथुरा मधु राक्षस का वन था जो कि सर्वशक्तिमान श्रीहरि द्वारा मारा गया। हे राजा! मधुवन के भीतर कुछ भी असम्भव नहीं। मैं यहाँ स्थित सभी पवित्र स्थलों के नाम लेने में असमर्थ हूँ।'

पुराणों से संदर्भ लेकर मथुरा की स्तुति का वर्णन करते हुए श्रीराघव पंडित उत्साह से उल्लसित और विह्वल हो जाते और स्वयं पर धैर्य न रख पाते थे। प्रात:काल के कार्यों से निवृत्त होकर श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के साथ अपनी मथुरा यात्रा आरम्भ कर दी। वे पहले संन्यासियों और ब्राह्मणों के निवास पर गये जहाँ श्रीकृष्णचैतन्य ने दान मांगा था। ब्राह्मण, श्रीमाधवेन्द्र पुरी गोस्वामी के शिष्य थे और उन्होंने भगवान् श्रीचैतन्य की उत्तमोत्तम लीलाओं का अवलोकन किया था।

श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास से कहा, 'श्रीगौरचन्द्र यहाँ भावोन्मत्त होकर नृत्य किया करते थे। बहुत से लोग उनके नृत्य का दर्शन करने आते और वे सब भी उन्मत्त हो जाते थे। जब उन्हें ज्ञात होता था कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ही स्वयं ब्रजेन्द्र नन्दन हैं तो वे रो पड़ते। जैसे ही वे प्रभु भक्ति के प्रेम में हिलोरें मारते वे एक पल भी उनकी शरणागति न छोड़ते। यहाँ पर ही श्रीचैतन्य महाप्रभु की आश्चर्यजनक लीलाऐं हुयी थीं।'

गौरचन्द्र की लीलाओं का स्मरण करते हुए श्रीराघव पंडित ने गहरी सांस ली और श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास आचार्य भावोन्मत्त होकर रुदन करने लगे। वे रुदन करते हुए धरा पर लोटने लगे जिससे उनका पूरा तन रज से ढक गया। बहुत देर बाद वे शांत हुए।

अयोग्य ब्राह्मण पर कृपा

श्रीराघव पंडित ने बोलना जारी रखा, 'एक विद्वान् व्यक्ति ने एक बार मुझे बताया कि अपनी तीर्थयात्रा के अन्तर्गत श्रीअद्वैत आचार्य मथुरा के सौन्दर्य के कारण यहाँ रहे। उस समय मथुरा में एक अयोग्य ब्राह्मण रहता था जो कि प्रत्येक वैष्णव से सर्वदा बुरा भला बोलता रहता। यह उसकी सबसे बुरी आदत थी। वह एक अहंकारी विद्वान् था और दुष्ट व्यक्ति था अत: इस कारण मथुरा के लोग उनसे डरते थे।

एक बार उन ब्राह्मण ने श्रीअद्वैत प्रभु के सामने वैष्णवों के प्रति अपशब्द कहे। श्रीअद्वैत प्रभु इतने उग्र हो गये कि उनके ओंठ कांपने लगे और नेत्र लाल हो गये। वे ब्राह्मण पर चिल्लाये, 'ओ दुष्ट व्यक्ति, आज तुम मुझसे नहीं बचोगे। मैं इस चक्र से तुम्हारा सिर धड़ से अलग कर दूंगा।' तब श्रीअद्वैत आचार्य ने चतुर्भुज रूप प्रकट किया और ब्राह्मण भय से कांपने लगा। उसने हाथ जोड़े और

श्रीअद्वैत आचार्य को शांत करते हुए बोला, 'हे प्रभु आप जैसा चाहें मुझे वैसा दण्ड दीजिये। दुर्भाग्य से मेरी सद्बुद्धि खो गयी है और मैं वैष्णवतत्त्व को नहीं समझ पा रहा हूँ। मैंने अनगिनत पाप किये हैं। मुझ पर दया कीजिए और इन पापों से मुझे बचाइये।'

ब्राह्मण फूट-फूटकर रोने लगा और श्रीअद्वैत आचार्य ने अपना चतुर्भुज रूप सम्वरण कर लिया। ब्राह्मण की दयनीय दशा देखकर श्रीअद्वैत आचार्य को उन पर करुणा आ गई और उन्होंने उसे आशीष देने का निर्णय किया। श्रीअद्वैत आचार्य मृदु भाषा में बोले, 'जो पाप तुमने किए हैं वो तुम्हें नर्क ले जायेंगे पर मैं तुम्हें बताता हूँ कि तुम्हें अब क्या करना चाहिये। अपनी दोषी मानसिकता को स्वीकार करो, सभी भौतिक सुख साधनों का त्याग करो और स्वयं को नाम-संकीर्तन में व्यस्त कर लो। वैष्णव जनों की हृदय से और भाव से सेवा करो और उनसे आचरण व व्यवहार करते समय बहुत सावधान रहो। शुद्ध भक्ति के मानदण्डों के अनुसार स्वयं को पूजा-पाठ में व्यस्त रखो और किसी से मत कहना कि आज तुमने क्या देखा।'

ब्राह्मण से ऐसा कहकर श्रीअद्वैत प्रभु तीर्थयात्रा को निकल गये। ब्राह्मण ने स्वयं को नाम-संकीर्तन में डुबा दिया और नेत्रों में अश्रु भरकर मथुरा के प्रत्येक घर में जाकर स्वयं को विनम्र सिद्ध करने लगा। उसके निष्कपट प्रयासों को देखकर वैष्णव जन संतुष्ट हुए और उसे शुभ कामनाएं दी। वैष्णव आश्चर्यचकित थे कि उसके व्यवहार में यह परिवर्तन कैसे हुआ?

एक व्यक्ति जो इसका कारण जानता था, बोला, 'एक ब्राह्मण मथुरा आया था जिसका तेज सूर्य के समान था। ऐसा प्रतीत होता है वे मनुष्य के रूप में भगवान् थे। उन्होंने इस पापी ब्राह्मण का हृदय परिवर्तन किया है।'

हे श्रीनिवास, देखो यह स्थान कितना मनोरम है। यमुना के इस अर्ध-चन्द्राकार भाग में स्नान की फलश्रुति सर्वविदित है। आदि वाराह पुराण में इसकी फलश्रुति है। 'जो कोई भी इस अर्ध-चन्द्राकार स्थान पर रहते हैं, निश्चित ही उन्हें मुक्ति प्राप्त होती है। जो कोई यहाँ अपना **आहार नियंत्रित** रखता है और **स्नान करता है** उसे यहाँ स्थायी वास मिलता है। इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं। हे देवी जो भी इस अर्ध-चन्द्राकार क्षेत्र में अपनी देह का त्याग करता है वह मेरे पास वैकुण्ठ को जाता है। वो लोग, जो यहाँ स्नान करते हैं अथवा कोई अन्य धार्मिक गतिविधियां करते हैं, यहाँ तक कि कोई किसी अन्य स्थान पर शरीर त्याग करता है और संस्कार विधि भी पूर्ण विधि-विधान से न हो वह भी मुक्ति प्राप्त करने के योग्य है। जो यहाँ मृत्यु को प्राप्त होता है चाहे अपराधी ही क्यों न हो जब तक उसकी अस्थियाँ यहाँ हैं, वह ब्रह्मलोक में भी पूज्यनीय हो जाता है।

यह बताकर श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य का हाथ पकड़ लिया और सुखद आनन्द के साथ धीरे-धीरे बोलने लगे, मधुवन के भीतर मथुरा महिमापूर्वक स्थापित हैं। शुभ समय में परिक्रमा करने पर किसी को भी असामान्य परिणाम प्राप्त होते हैं।

पुनः आदि पुराण में यह वर्णन है: 'यदि ब्राह्मण का वध करने वाला, मदिरा पान करने वाला, गौवंश का वध करने वाला, और वह व्यक्ति जो ब्रह्मचर्य के व्रत को भंग करने वाला हो, वह भी मथुरा का भ्रमण करता है तो वह अपने पापों के फल से मुक्त हो जाता है। एक तीर्थयात्री जो सुदूर देश से आया हो और मथुरा में भ्रमण करे, वह दर्शन करने वाले को भी निर्मल करता है और उन्हें उनके पापों से मुक्ति दिलाता है।'

श्रीकृष्णजन्मस्थान

यह देवकीजी और श्रीवसुदेव का कक्ष है जहाँ सर्वोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण का प्राकट्य हुआ। स्कन्द पुराण के अनुसार, 'जो व्रत रखता है, नाम जप करता है और फिर भगवान् श्रीकृष्ण की जन्मभूमि का दर्शन करता है उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं और वह भी मुक्त हो जाता है।' पद्म पुराण में भी यह वर्णन आता है कि जो कोई भी श्रीकेशव के जन्म गृह (जन्मस्थान) में कार्तिक मास में प्रवेश करता है वह परम सत्य भगवान् श्रीकृष्ण की प्राप्ति करता है।

हे श्रीनिवास! श्रीकेशवदेव को देखो। इस स्थान पर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने भावोन्मत्त होकर नृत्य किया था। जिन्होंने उन्हें नृत्य करते देखा, वह यही सोचते थे कि वे स्वयं श्रीकेशव ही थे। श्रीकेशवदेव की महिमा का वर्णन कौन पर्याप्त रूप से कर सकता है? जो कोई भी मथुरा में श्रीकेशव देव के जन्म स्थान का भ्रमण करता है उसे पूरी पृथ्वी और उसके सातों महाद्वीपों के भ्रमण का फल प्राप्त होता है। भगवान् केशव का स्तुति गान इस जन्म में किये गये और आने वाली अवस्था के पाप नष्ट कर देगा।

दीर्घ विष्णु

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है, 'सुन्दर मथुरा की ओर देखो जहाँ दीर्घ विष्णु, पद्मनाभ और स्वयंभू के श्रीविग्रह स्थापित हैं।'

हे श्रीनिवास, भगवान् श्रीकृष्ण के सम्बंधियों जैसे एकांशा देवी (योगमाया), यशोदा देवी, देवकी देवी और महाविद्येश्वरी देवी आदि के दर्शन व्यक्ति को ब्रह्महत्या के पाप से मुक्त करते हैं। यह आदि पुराण में बताया है, 'मथुरा में अपार करुणामय भगवान् **भूतेश्वर के श्रीविग्रह** का वास है। क्षेत्रपाल महादेव के दर्शन किसी को भी भगवान् श्रीकृष्ण के धाम तक पहुंचाने में सहायक होंगे।

आदि वाराह पुराण में भगवान् वाराह कहते हैं। 'भगवान् भूतेश्वर जो कि पापियों को भी मुक्ति देते हैं, वे मथुरा में रहते हैं। वे मुझे अत्यंत प्रिय हैं। यदि कोई भगवान् शिव की आराधना नहीं करता जो कि मेरे सबसे उच्च भक्त हैं, वह पापी कैसे मेरी भक्ति प्राप्त करेगा?' जो मनुष्य निम्न है और प्राणों में बेसुध है केवल वही श्रीभूतेश्वर को प्रणाम और स्मरण नहीं करेगा।

विश्रामघाट

मथुरा की यात्रा को जारी रखते हुए और कुछ समय तक चलने के बाद श्रीराघव पंडित ने कहा, 'हे श्रीनिवास, इस श्रीविश्रांति नामक अद्‌भुत स्थान को देखो। यहीं पर श्रीकृष्ण ने कंस का वध करने के बाद विश्राम किया था। संन्यासियों में चूड़ामणि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने भी यहाँ अनेक दिव्य लीलाएं रचायीं। सब तरह के लोग-महिलाएं, पुरुष, वृद्ध, युवा और यहाँ तक कि बालक भी यहाँ भगवान् के दर्शनों को एकत्र हो गये थे। सैकड़ों हजारों की संख्या में लोग आए और प्रत्येक ने देखा सर्वोत्तम संन्यासी मथुरा में आया है और वे अपनी भुजाएं फैलाकर और रुदन करते हुए श्रीहरि के पावन नाम का उच्चस्वर में उच्चारण करने लगे।

भगवान् श्रीगौरचन्द्र के उत्कृष्ट सौन्दर्य ने सम्पूर्ण विश्व को इस प्रकार मोहित कर दिया कि लोग उनसे अपने नेत्र ही नहीं हटा पा रहे थे। इस प्रकार भगवान् ने सब की इच्छाऐं पूर्ण की, भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीविश्रांति तीर्थ में अनेक विस्मयकारी लीलाएं की। श्रीविश्रांति तीर्थ की महिमा सम्पूर्ण विश्व में विख्यात है। कोई भी श्रीविश्रांति तीर्थ की अनुकम्पा से अपूर्व निपुणता प्राप्त कर सकता है।

स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में यह बताया है। 'प्रतिष्ठित पवित्र स्थल श्रीविश्रांति मथुरा में स्थित है। इस स्थान पर आकर यात्री को परम विश्राम प्राप्त होता है। यहाँ स्नान कर भगवान् अच्युत की आराधना करने से अमरता प्राप्त होती है और स्वतः ही संसार के भौतिक कष्टों से मुक्ति प्राप्त होती है।'

एक अन्य पुराण में यह वर्णित है। 'तीर्थ के लिये पवित्र स्थल विश्रांति तीर्थ सब प्रकार के पापों को नष्ट कर इस संसार रूपी मरुस्थल में जन्म मरण चक्र में बार-बार भटकने वालों को विश्राम देता है। जो वहाँ स्नान करता है और भगवान् अच्युत की आराधना करता है वह बार-बार के जन्म मरण से छूट जाता है और मोक्ष प्राप्ति के योग्य हो जाता है।'

पद्‌म पुराण के यमुना माहात्म्य में यह वर्णन है। 'कालिन्दी नदी कलिन्द पर्वत से प्रारम्भ होती हैं और मथुरा से बहती हुई जाती हैं। शुक्रताल में गंगा नदी पश्चिम की ओर बहती हैं। यमुनाजी और भागीरथी का मिलन 'संगम' के नाम से जाना जाता है। इनमें से किसी भी स्थान पर स्नान करने से मनुष्य को पवित्रता

प्राप्त होती है परन्तु यमुनाजी में स्नान करने से इन परिणामों का सौ गुना फल मिलता है और प्रामाणिक वर्ग के अनुसार श्रीविश्रांति तीर्थ इससे लाख गुना फल प्रदान कर सकता है।'

आदि वाराह पुराण में यह बताया है। 'हे देवी, विश्रांति तीर्थ तीनों लोकों में विख्यात है। यदि कोई यहाँ स्नान करता है तो वैकुण्ठ धाम में आराध्य हो जाता है। सर्वोत्तम भगवान् इस सुन्दर स्थल पर विराजमान हैं। उनके दर्शन करने वालों को अन्य स्थलों पर जाने और स्नान करने का फल प्राप्त होता है।' देखो! गतश्रम देव यहां विराजमान हैं।

जैसे-जैसे उन्होंने मथुरा-मण्डल के पवित्र स्थलों की अपनी यात्रा जारी रखी, राघव पण्डित रुके और बोले, 'हे श्रीनिवास इस अर्धचन्द्राकार स्थान पर यमुना के निकट **चौबीस तीर्थ** हैं।'

पहला तीर्थ कहलाता है **अविमुक्त तीर्थ**। आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है कि जो यहाँ स्नान करता है वह मुक्ति पाता है और जो यहाँ मृत्यु प्राप्त करता है वह निस्संदेह विष्णुलोक को जाता है।

अगला स्थान कहलाता है – **गुह्य तीर्थ जो प्रयाग तीर्थ** के नाम से भी जाना जाता है। पुनः आदि पुराण में बताया है कि जो इस स्थान पर स्नान करता है वह भौतिक कष्टों से मुक्ति प्राप्त करता है और विष्णुलोक को जाता है।

एक अन्य पुराण के अनुसार अगले स्थल **प्रयाग तीर्थ** पर देवता गण भी बहुत कम आ पाते हैं। यहाँ स्नान करने से वही फल प्राप्त होता है जो अग्निष्टोम यज्ञ करने से मिलता है।

यह पवित्र स्थल कहलाता है **कनखल तीर्थ**। आदि वाराह पुराण के अनुसार यहाँ स्नान करने से सर्वोच्च सम्पत्ति और दिव्य आनन्द की प्राप्त होती है। अगले तीर्थ **तिन्दुक तीर्थ** पर स्नान करने से विष्णुलोक की प्राप्ति होती है।

यह स्थल **सूर्य तीर्थ** हर प्रकार के पापों को नष्ट करता है। यहीं पर विरोचन के पुत्र बलि ने तप किया था। सूर्य ग्रहण, चन्द्र ग्रहण, संक्रान्ति या रविवार को यहाँ स्नान करने से वही फल प्राप्त होता है जो राजसूय यज्ञ करने से प्राप्त होता है। यह वचन आदि वाराह पुराण से पुष्ट किये जा सकते हैं।

एक अन्य पुराण में यह वर्णन है। **वटस्वामी तीर्थ** सर्वोच्च स्थान कहलाता है। जो भी रविवार के दिवस पूर्ण भक्ति व निष्ठा से इस स्थान की सेवा करता है वह किसी भी तरह के रोग से मुक्ति पाता है, जीवन में धन पाता है और मृत्यु के उपरान्त सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य प्राप्त करता है।

अगला स्थान कहलाता है– **ध्रुव तीर्थ**। इसी स्थान पर ध्रुव महाराज ने तपस्या की थी। आदि वाराह पुराण कहता है कि यहाँ पर स्नान करने से जीव को निश्चित ही ध्रुवलोक में स्थान मिलता है। जो कोई भी यहाँ श्राद्ध करता है

(विशेष कर पितृपक्ष में) उसके पिता के परिवार के पूर्वजों को मुक्ति प्राप्त होती है।

स्कन्द पुराण कहता है। ध्रुवतीर्थ में पूर्वजों को दान आदि देने वाले मनुष्य को गया में दान करने का सौ गुणा फल प्राप्त होता है। जो भी यहाँ जप, तप, पूजन, हवन आदि करता है वह किसी अन्य स्थान पर यह सब करने का सौ गुणा फल प्राप्त करता है।

यह अगला स्थान, जो ध्रुव तीर्थ के दक्षिण में है, वह ऋषि तीर्थ कहलाता है जो भगवान् श्रीकृष्ण को अतिप्रिय है। यहाँ स्नान करने से विष्णुलोक तो मिलता ही है साथ ही मिलती है श्रीकृष्ण भक्ति व भगवान् की सेवा भक्ति। इसकी पुष्टि आदि वाराह पुराण और स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में होती है।

आदि वाराह पुराण में निम्न वर्णन प्राप्त होता है। 'ऋषि तीर्थ के दक्षिण में **मोक्ष तीर्थ** है। यहाँ पर स्नान से मुक्ति निश्चित है। आगे आता है **कोटि तीर्थ**, वह स्थान जहाँ देवगण भी प्रायः कम ही आ पाते हैं। यहाँ स्नान करने और दान-पुण्य करने वाला विष्णुलोक का आराध्य निवासी बन जाता है।'

बोधि तीर्थ जहाँ देवता भी कम ही आ पाते हैं यहाँ पर भिक्षा आदि देने से जीव को पितृलोक प्राप्त होता है। विश्रांति तीर्थ के दक्षिण में अगला है **द्वादश तीर्थ**। इस स्थान का केवल स्मरण मात्र करने से ही जीव के सब प्रकार के पाप नष्ट हो जाते हैं। अगला तीर्थ है **नव तीर्थ** जो अस्सी कुण्ड के उत्तर में है। न तो अब और न ही भविष्य में इस विश्व में नव तीर्थ जैसा कोई तीर्थ कभी होगा।

अगले पवित्र स्थल **संयमन तीर्थ** में स्नान करने से विष्णुलोक की प्राप्ति होगी। अगला तीर्थ स्थल कहलाता है **धारापतन तीर्थ**। यहाँ स्नान करने से वह परम आनन्द प्राप्त होता है जो कि स्वर्ग में भी प्राप्त नहीं और यहाँ मृत्यु होने पर विष्णुलोक की प्राप्ति होती है।

यह उत्कृष्ट स्थान कहलाता है **नाग तीर्थ** और यह सभी पवित्र तीर्थ स्थलों में सर्वश्रेष्ठ है। यहाँ स्नान करने से स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है और यहाँ मृत्यु होने से मनुष्य को भौतिक संसार में जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा मिल जाता है।

अगला स्थल कहलाता है **घण्टाभरण तीर्थ**। यहाँ स्नान करने से सर्व पाप नष्ट हो जाते हैं और मृत्यु के उपरान्त वह सूर्यलोक में आराध्य हो जाता है।

अगला स्थान है **ब्रह्म तीर्थ**, यह बहुत विख्यात स्थान है। जो कोई भी यहाँ स्नान करता है, यहाँ के जल को पीता है और शान्त चित्त से यहाँ बैठता है वह मृत्यु के बाद ब्रह्मा जी की आज्ञा से भगवान् श्रीविष्णु के वास वैकुण्ठ को जाता है।

यह स्थान **सोम तीर्थ** कहलाता है। यदि कोई अपने यथायोग्य वर्ण और आश्रम में स्थित होकर यहाँ यमुना जी के पवित्र जल में स्नान करता है तो वह निस्संदेह सोमलोक (चन्द्रलोक) में वास करने के आनन्द को प्राप्त करता है।

अगला स्थान **सरस्वती पतन तीर्थ** के नाम से जाना जाता है। यहाँ स्नान करने से संन्यासी के गुण प्राप्त हो सकते हैं चाहे वह संसार के किसी भी वर्ण में हो। तीन दिवस तक उपवास करने के बाद जो **चक्रतीर्थ** में स्नान करता है वह ब्राह्मण वध के और अन्य दुष्कर्मों के पाप से भी मुक्त हो जाता है।

दशाश्वमेध तीर्थ में पहले अनेक संत आराधना करते थे। यदि कोई यहाँ संतुष्ट भाव से स्नान करता है वह सरलता से स्वर्ग को जांता है।

अगला स्थान **विघ्नराज तीर्थ** के नाम से जाना जाता है। जो कोई यहाँ स्नान करता है उसे सब प्रकार की शुभता प्राप्त होती है और साथ ही सभी प्रकार के भौतिक कष्टों और पापों से मुक्ति प्राप्त होती है।

जो स्थान **कोटि तीर्थ** कहलाता है वह सर्वोत्तम शुद्ध और शुभ है। जो कोई यहाँ स्नान करता है वह वही फल पाता है जो गंगा जी में दस लाख बार स्नान करने से प्राप्त होता है।

मथुरा खण्ड में यह बताया गया है। 'हे युधिष्ठिर! श्रीविश्रांति के उत्तर और दक्षिण में चौबीस तीर्थ स्थल हैं। बारह उत्तर दिशा में दशाश्वमेध तक फैले हैं और बारह दक्षिण दिशा में मोक्ष तीर्थ तक फैले हुए हैं।

हे श्रीनिवास, श्रीचैतन्य महाप्रभु ने आनन्दित होकर यमुना के सम्पूर्ण चौबीस घाटों पर स्नान किया। उनकी लीलाएँ जो उन्होंने एक घाट पर भी की हों, उनका वर्णन केवल अनन्त शेष के सामर्थ्य में हैं।' सैंकड़ों सहस्रों लोगों ने प्रभु के साथ स्नान किया और प्रभु के प्रेम और भक्ति की लहरों में गोते लगाये। सभी भक्त परिकर भी सामान्य लोगों के साथ घुलमिल गये ताकि श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का अवलोकन कर सकें। सभी ने श्रीकृष्ण चैतन्य की महिमा का गुणगान किया। इस प्रकार प्रभु ने अपनी सर्वाधिक अनोखी लीलाऐं मथुरा में कीं।

श्रीनिवास, अब हम कुछ अन्य पवित्र स्थलों की यात्रा करेंगे। पुराणों में यह कहा गया है। 'श्रीविश्वनाथ (महादेव) के स्थान को **गौकर्ण-तीर्थ** के नाम से जाना जाता है। यह तीनों लोकों में विख्यात है और भगवान् विष्णु को अतिप्रिय है।

अगला स्थान **कृष्ण-गंगा** के नाम से जाना जाता है। आदि वाराह पुराण में बताया है कि पांच तीर्थों-विश्रांति, शौकर, नैमिष, प्रयाग और पुष्कर में स्नान करने का जो भी फल प्राप्त होता है उसका दस गुणा फल प्रतिदिवस कृष्ण-गंगा में स्नान करने से प्राप्त होता है।

अगला तीर्थ स्थल कहलाता है-**वैकुण्ठ तीर्थ**। यहाँ स्नान करने से आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त होते हैं और सब प्रकार के पापों के प्रभाव से मुक्ति प्राप्त होती है। वास्तव में यहाँ स्नान करने से विष्णुलोक की प्राप्ति होती है।

हे श्रीनिवास अगला तीर्थ स्थान **असि कुण्ड** तीर्थ कहलाता है। यहाँ स्नान करने वाले को कई तरह के लाभ होते हैं, यह बात आदि वाराह पुराण पुष्ट करता है। यदि कोई यहाँ स्नान करने के बाद चार श्रीविग्रह वाराह, नारायणी, वामन और अति शुभ लांगलि (बलराम) के दर्शन करता है उसे वही फल प्राप्त होता है जो सम्पूर्ण धरती की और इसके चार सागरों की परिक्रमा करने पर प्राप्त होता है। उसे मथुरा के सभी पवित्र स्थलों की यात्रा का फल भी प्राप्त होता है।

यह चतुः सामुद्रिक कूप हैं। यहाँ स्नान करने वाले को जल्दी ही अंशावतारों का सान्निध्य प्राप्त होता है।

हे श्रीनिवास श्रीयमुना जी के असंख्य गुणों की महिमा का कौन बखान कर सकता है। मथुरा में श्रीयमुना जी में स्नान का गंगा जी में स्नान करने से सौ गुणा ज्यादा फल प्राप्त होता है। यह बात आदि वाराह पुराण में पुष्ट होती है। मेरे मथुरा मण्डल के भीतर यमुना जी गंगा जी से सौ गुणा श्रेष्ठ हैं। किसी को इस बारे में तर्क नहीं करना चाहिये। हे पापरहित देवी। यमुनाजी के निकट मेरे अनेकों गुप्त पुण्य स्थान हैं। जो कोई भी यहाँ स्नान करता है वह मेरे धाम में पूजित हो जाता है।

मत्स्य पुराण में महाराज युधिष्ठिर और नारद मुनि के बीच संवाद में यह वर्णन है। जो कोई भी यमुना जल में स्नान करता है, जल को पीता है और यमुना जी की महिमा का गुणगान करता है वह पवित्र हो जाता है। यहाँ तक कि यमुना जी का दर्शन भी शुभ फल प्रदान करता है। जो यमुना जी में स्नान करता है व यमुना जल का पान करता है निस्संदेह उसके परिवार की सात पीढ़ियों का मंगल होता है। जो कोई भी श्रीयमुना जी के तट पर प्राण त्यागता है उसे प्रभु के धाम में अनन्त काल तक वास प्राप्त होता है।

विष्णु धर्मोत्तर में यह वर्णन है। 'हे राजा! जो भी श्रीयमुना जी के तट पर श्राद्ध कर्म करता है उसे अमरता प्राप्त होती है और वह स्वर्ग में आनन्द प्राप्त करता है। पद्म पुराण के पाताल खण्ड में प्रजापति मरीचि की सृष्टि के समय का वर्णन है।' 'वह जो सभी जीवों का आधार है, सभी कारणों का निमित्त है, अनन्त है, सर्वज्ञ आनन्दमय भगवान् है, उपनिषदों में ब्रह्मा ने जिसकी महिमा का गान किया है, वह परम भगवान्, वह रसस्वरूप श्रेष्ठ स्वयं श्रीकृष्ण ही यमुना जी के रूप में विराजित हैं।'

पुराणों के अनुसार शुभ समय में श्रीयमुना जी में स्नान करने से सर्वोच्च लाभ प्राप्त होता है। हे श्रीनिवास ये सभी को पता है कि श्रीयमुना जी के अनुग्रह से जीव की सभी इच्छाऐं पूर्ण हो जाती हैं। जैसे लोहा पारस पत्थर के स्पर्श से स्वर्ण में परिवर्तित हो जाता है वैसे ही एक पापी व्यक्ति भी यमुना जल के स्पर्श से पवित्र हो जाता है।

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। यदि दो ब्राह्मण हों, एक जो मथुरा में रहता हो और उसे वेदों का कोई ज्ञान न हो और दूसरा जो चारों वेदों का ज्ञाता हो और मथुरा के बाहर रहता हो- तुम्हें विद्वान् का परित्याग करके मथुरा के अशिक्षित ब्राह्मण की सेवा करनी चाहिये। यद्यपि मथुरा का एक किसान दुष्ट और अधर्मी हो सकता है तथापि वह मुझे पूजनीय है क्योंकि मथुरावासी सदा मेरा ही विस्तृत रूप है। हे वसुंधरे! सभी मथुरावासी मेरे अवतार हैं। अगर तुम मथुरा के ब्राह्मण की सेवा करते हो तो तुम्हें लाखों अन्य ब्राह्मणों की सेवा का फल प्राप्त होगा। जब मथुरा का एक निवासी तृप्त होता है तो मैं भी तृप्ति का अनुभव करता हूँ। इसमें कोई संदेह नहीं। वह स्थान जहाँ वे रहते हैं निश्चित ही पवित्र है और उनके घर मंगल से परिपूर्ण हैं।

हे श्रीनिवास, मथुरा निवासियों की महिमा का बखान वेदों और पुराणों में अनेक स्थानों पर हैं। आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। मथुरा के निवासियों को मेरी अनुकम्पा से सर्वोच्च पद मिलता है। इस बात में कोई संशय नहीं है। मथुरा में कीड़े, मकोड़े, पक्षी, पशु और अन्य प्राणधारी सभी मुक्ति प्राप्त करने योग्य हैं। यहाँ तक कि वे मनुष्य भी जिनका अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण नहीं है और पराई-स्त्रियों के प्रति वासना है वे भी मनुष्य के रूप में देवता ही हैं। - आदि वराह पुराण।

पद्म पुराण के निर्वाण खण्ड में यह बताया गया है कि वे पापी लोग जो मथुरा के नागरिकों में कमी खोजते हैं और अपनी कमियों को नहीं खोज सकते उन्हें सहस्र-सहस्र बार जन्म और मृत्यु झेलनी पड़ेगी।

सुदामा माली

हे श्रीनिवास! अब मथुरा नगर का अवलोकन करो जहाँ श्रीकृष्ण ने अनेक लीलाएं कीं। **यह माली सुदामा का निवास** है जो श्रीकृष्ण को अतिप्रिय है। उसकी गतिविधियां सर्वविदित हैं। श्रीकृष्ण ने इस स्थान पर कंस के धोबी को मारा था और तब उन्होंने और ग्वाल बालों ने उनके सुन्दर वस्त्रों को धारण किया था। यह वह मार्ग है जिसपर चलकर जब श्रीकृष्ण कंस से मिलने गये थे तो मथुरा के नागरिकों ने उनकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर उनके दर्शन किये। तब श्रीकृष्ण ने बलि के धनुष को खेल-खेल में तोड़ डाला। और उन्होंने अपने मित्रों के साथ मथुरा में बहुत ठाठ से भ्रमण किया। कुवलयापीड हाथी ने यहाँ श्रीकृष्ण का मार्ग रोका था। श्रीकृष्ण ने सरलता से उसे मार दिया और उसका दांत उखाड़ लिया।

इस **रंगभूमि** को देखो जहाँ दंगल हुआ था। यहाँ वह उभरा हुआ स्थान है। जहाँ श्रीकृष्ण बैठे थे और यहाँ पर श्रीनन्द की अगुआई में ग्वाल बालकों ने बैठकर श्रीकृष्ण का दंगल देखा था। अति आनन्द में श्रीकृष्ण ने यहाँ कंस के

प्राणों का हरण किया था। इस कारण इस स्थान का नाम हैं **कंस-किला**। वह स्थान जहाँ कंस मुक्त हुआ था।

इस स्थान पर कुब्जा का घर होता था। इस कुब्जा कूप को देखो, जिसके बारे में सबको पता है। कुब्जा के साथ श्रीकृष्ण की अद्‌भुत लीला तीनों लोकों में विख्यात है।अगले दो स्थल **बलदेव-कुण्ड** और **कृष्ण-कूप** वह स्थान हैं जहाँ श्रीकृष्ण और बलराम अपने मित्रों के साथ खेलते थे।

हे श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम जिस परम सुख का उन्होंने यहाँ अनुभव किया उसका वर्णन असम्भव है। यही वह स्थान है जहाँ पर मथुरा यात्रा के बाद श्रीकृष्णचैतन्यचन्द्र बैठे और लोग उन्हें घेर लेते। लोग श्रीचैतन्य महाप्रभु की भावावेश अवस्था को देखकर ठगे से रह जाते थे।

मथुरा के ब्राह्मण एक दूसरे से बात करते हुए बोले। यह कथित संन्यासी निश्चित ही स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण हैं। यह सबसे अद्‌भुत हैं। कौन उनकी उत्तमोत्तम लीलाओं को समझ सकता है? उन्होंने अपनी पहचान को यह स्वर्णिम रूप पाकर गुप्त कर लिया था। किसी ने कहा, हम सब भगवान् के मथुरा आने के साक्षी होकर कितने सौभाग्यशाली हैं। इस प्रकार कहते हुए भगवान् के सुन्दर स्वरूप को निहारते हुए आनन्द के भाव में हिलोरें मारने लगे।

यह लीला बताते हुए श्रीराघव पंडित श्रीचैतन्य महाप्रभु की महिमा का स्मरण करते हुए इतने भाव में आ गये कि स्वयं पर नियंत्रण न रख पाये। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास भी अत्यधिक उल्लसित हो गये और श्रीचैतन्य महाप्रभु का नाम उच्चारण करते हुए भूमि पर जा गिरे। कुछ समय बाद उन्होंने स्वयं को शांत किया और श्रीराघव उन्हें मथुरा के अन्य पवित्र स्थलों पर ले गये।

श्रीराघव पंडित ने मृदु स्वर में श्रीनिवास आचार्य से कहा। 'यह वह स्थान है जहाँ गोपालजी का श्रीविग्रह एक मास तक रहा। इस अवसर का लाभ उठाने के लिये श्रीरूप गोस्वामी और उनके पार्षद यहाँ आये और श्रीगोपाल के दर्शन कर भाव सागर में डूब गये। मथुरा के निवासी गोस्वामी जी को अपने मध्य पाकर भावावेश में इस तरह डूब गये कि उन्हें ध्यान ही नहीं रहा कि कब दिवस बीता और कब रात हुई।'

देखो श्रीनिवासजी यह वह प्राचीन वृक्ष है, जिसके नीचे रोहिणीजी के पुत्र श्रीबलराम खेला करते थे। अपनी तीर्थ यात्रा के दौरान वही श्रीनित्यानन्द प्रभु के रूप में मथुरा आये और यहाँ कुछ समय के लिये रुके। वे इस स्थान का अवलोकन करके, जहाँ वे पूर्व में प्रकट हुए थे, भाव से भर उठे और उसी भाव में यहाँ वहाँ घूमने लगे। मथुरा के नागरिक, अवधूतचन्द्र श्रीनित्यानन्द को देखकर अपना कष्ट विलाप आदि सब भूल गये।

इस स्थान के दर्शन करने से किसी की भी बाधा दूर हो जाती है और श्रीनित्यानन्द के चरणों में उसकी भक्ति की वृद्धि होती है। जो कोई मथुरा के इस वर्णन का श्रवण करेगा वह सरलता से अपनी इच्छाऐं पूर्ण कर लेगा।

द्वादशवन

मथुरा चहुँ ओर से बारह पावन वनों से घिरा है जो प्रत्येक को मुक्ति प्रदान करते हैं। भगवान् केशव के द्वादश वन अति शुभ हैं और सब गुणों को प्रदान करने वाले हैं।

यमुना के पश्चिम छोर पर मधु, ताल, कुमुद, बहुला, काम्य, खदिर और श्रीवृन्दावन हैं। यमुना के पूर्वी छोर पर भद्र, भाण्डीर, बिल्व और श्री, लौह और महावन हैं।

हे श्रीनिवास यह **मधुवन** है। इसके दर्शन सब इच्छाओं को संतुष्ट करते हैं। इस वन में बिलकुल साफ जल और नीले कमलों से युक्त एक कुण्ड है। यदि कोई इसके जल में स्नान करता है और दान पुण्य करता है उसकी सभी इच्छाऐं पूरी होती हैं।

तालवन का वर्णन स्कन्द पुराण में हैं। यादवों की भलाई के लिये और अपने सुख के लिये श्रीकृष्ण ने ताल फल से युक्त वन के रक्षक राक्षस का वध किया।

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। 'हे देवी यह तीसरा वन **कुमुदवन** सर्वोच्च है। जो यहाँ इस वन में आता है वह मेरे धाम में पूजित और आराध्य हो जाता है।'

'हे श्रीनिवास मथुरा के पश्चिम में इस स्थान को देखो जहाँ श्रीकृष्ण ने दन्तवक्र का वध किया था। वज्रनाभ ने इस स्थान का नाम **दतिहा** रखा था। पद्म पुराण में यह **दति-उपवन** के नाम से जाना जाता है। मैं अब आपको दन्तवक्र से सम्बन्धित एक कथा सुनाऊँगा। यह कथा सुनने वाले के सब कष्ट दूर होते हैं।'

दन्तवक्र-वध

एक बार श्रीवृन्दावन से श्रीनन्द महाराज के नेतृत्व में ब्रजवासीगण श्रीकृष्ण का कुशलक्षेम जानने कुरुक्षेत्र गये। श्रीकृष्ण वहाँ सबसे मिले और सभी को सब प्रकार से तृप्त किया। श्रीकृष्ण ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वह शीघ्र ही उनसे श्रीवृन्दावन में मिलेंगे। श्रीकृष्ण के अमृतमय वचन सुनकर वृन्दावन वासी विदा लेकर यमुना के तट पर आकर उनके आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। हर किसी ने सोचा कि वह श्रीकृष्ण को अपने घर ले जायेगा।

श्रीवृन्दावन वासियों को विदा कर कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण श्रीवृन्दावन लौटने के लिये अत्यधिक अधीर हो गये। वे शिशुपाल का वध करने द्वारका गए और फिर छिपकर दन्तवक्र का वध करने मथुरा आये। वे यमुनाजी को पार कर शीघ्रता से श्रीनन्द महाराज और अन्य लोगों से मिलने पहुँचे।

श्रीकृष्ण को देखकर ग्वाल बाल स्वागत है! स्वागत है! चिल्लाते हुए उनकी ओर भागे। श्रीकृष्ण ब्रज में अपने घर वापिस आ गये और गोपी-गोप आदि के साथ पहले की तरह आनन्दमग्न हो गये। गाँव वासियों के आयो रे आयो रे चिल्लाने के कारण इस स्थान का नाम 'राया' पड़ गया।

यहाँ एक अन्य गांव है-**गौरई नाम** से। श्रीराघव पंडित ने उस गाँव की भी कथा बताई। 'एक विशाल गांव था-ढाणा। जहाँ बहुत ही नामी जमींदार रहते थे जिनकी श्रीनन्द महाराज से घनिष्ठ मित्रता थी। जब श्रीनन्द महाराज कुरुक्षेत्र से लौटे तो जमींदार ने बहुत उत्साह से उनका स्वागत किया। जमींदार द्वारा श्रीनन्द महाराज के रहने की व्यवस्था के कारण उनको दिये गये **गौरव और सम्मान** की कोई सीमा न थी। इस कारण गांव का नाम गौरवाई पड़ा परन्तु वर्तमान में यह नाम गौरई है। यह गांव ढाणा और राया के निकट है।

गोपाल-चम्पू में यह कथा इस प्रकार है। 'स्यमन्तपंचक से कुरुक्षेत्र की ओर आते हुए ब्रजेश्वर श्रीनन्द और ग्वाल सखा गोकुल में अपने घरों को लौट गये। जब वे मथुरा पहुँचे तो यद्यपि उनकी घर लौटने की कोई इच्छा नहीं थी। उन्होंने यमुनाजी पार की और गौरई नामक इस विख्यात स्थान पर आ गये जो गोकुल से बराबर की दूरी पर है। यह स्थान संस्कृत में **गोकुलपति** के नाम से और परम्परागत तौर पर गौरवाई के नाम से विख्यात है। हालांकि स्थानीय लोग इसे गौरई कहते हैं।'

जैसे पुरुषोत्तम का निवास स्थान पुरुषोत्तम के नाम से विख्यात है, वैसे ही गोकुलपति के स्थान का नाम भी **गोकुलपति** पड़ा।

इन सभी गांवो में भगवान् श्रीकृष्ण ने लीलाऐं रचाईं जो बहुत भाव से उन लोगों द्वारा देखी गईं जो बहुत भाग्यशाली थे।

बहुत आनन्द पूर्वक इस कथा को सुनाते हुए श्रीराघव पंडित ब्रज में भ्रमण करते हुए परिक्रमा पथ पर आगे बढ़े। श्रीराघव पंडित ने बताया कि जिस पथ पर वे चलेंगे वह वास्तव में वैसा नहीं है जैसा आदि वाराह पुराण में वर्णित है। कुछ समय वे परिक्रमा पथ पर आगे चले और तब उन्होंने **शष्टिकरा (छटीकरा)** नामक स्थान देखने का निर्णय किया।

उन्होंने अन्य मार्ग पर जाने के लिये परिक्रमा मार्ग का त्याग किया और श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास को बताया कि हमने शष्टिकरा नामक स्थान में प्रवेश किया है। हालांकि पूर्व में यह स्थान षष्ठीकराटवी के नाम से जाना जाता था, वर्तमान में लोग इसे शकटाग्राम के नाम से बुलाते हैं। आजकल छटीकरा।

यहाँ देखो श्रीनिवास, यह स्थान **शकट रोहण** है। यह बहुत सुन्दर और रमणीय स्थान है और श्रीकृष्ण को अतिप्रिय है। भंवरे यहां पुष्पों के वन में सदा गुंजन करते रहते हैं। इस कुण्ड में स्नान करने पर परम सुख की प्राप्ति होती है।

शकट रोहण का वर्णन आदि वाराह पुराण में है। 'मथुरा के डेढ़ योजन में मेरा शकट रोहण नाम का सर्वोच्च्य निवास है। अनेकों सहस्र भँवरे वहाँ रहते हैं। जो कोई भी एक रात्रि का उपवास रखता है और फिर वहाँ स्नान करता है वह निश्चित ही विद्याधर लोक में रहने का सुख प्राप्त करता है।

श्रीराघव पंडित ने एक और स्थान की ओर इंगित किया जो **गरुड़ गोविन्द** के नाम से जाना जाता है। एक बार खेल-खेल में श्रीदामा ने स्वयं को गरुड़जी के रूप में और श्रीकृष्ण को कन्धे पर आरुढ़ करके उन्हें चतुर्भुज रूप में परिवर्तित कर दिया। इस प्रकार इस स्थान पर अति सुन्दर लीला के कारण स्थान का नाम गरुड़-गोविन्द पड़ा। यह **कथा लघु भागवतामृत** में है।

श्रीराघव पंडित पवित्र स्थलों का वर्णन करते हुए वापिस परिक्रमा मार्ग पर आ गये और **गन्धेश्वर** नामक स्थान पर पहुँचने तक चलते रहे। इस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण ने सुगन्धित तेल का लेपन किया था। इस कारण यह नाम प्रदान किया गया।

सतोहा ग्राम वह स्थान है, जहाँ शांतनु मुनि ने तप किया था। इस स्थान पर कुण्ड स्वच्छ जल से लबालब भरा है। सतोहा को छोड़कर श्रीराघव पंडित के नेतृत्व में श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास अन्य सुन्दर स्थानों की ओर गये।

जब वे **बहुलावन** आये तो राघव पंडित ने उन्हें बताया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु वृन्दावन के वनों की यात्रा करते हुए यहाँ आये थे और प्रेम भाव में डूब गये थे। उन्हें देख कर लाखों गायों ने उन्हें घेर लिया और प्रेम से उनके दर्शन किये। श्रीगौरचन्द्र ने उनमें से प्रत्येक को वैसे ही स्पर्श किया, जैसे श्रीवृन्दावन में उन्होंने श्रीकृष्ण के रूप में स्पर्श किया था।

अनेकों पशु जैसे हिरण, मोर, कोयल आदि ने उनके शीश पर मण्डरा कर या उनके आस पास घूम फिर कर आनन्द की अभिव्यक्ति की। लोग यह देखकर आश्चर्यचकित रह गये कि वृक्षों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के शीश पर पुष्पवर्षा की।

सभी ने कहा, 'वह संन्यासी के रूप में श्रीकृष्ण हैं। उन्होंने मात्र लोगों को धोखा देने के लिये अपने श्याम वर्ण को स्वर्ण आभा से ढक लिया है।'

श्रीराघव पंडित ने आगे श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को सुन्दर कमल पुष्पों से भरे **संकर्षण-कुण्ड** और **मान-सरसी** नामक सरोवर के दर्शन करवाये।

आदि वाराह पुराण के अनुसार बहुला सर्वश्रेष्ठ वन है। जो भी इस वन में प्रवेश करता है, मृत्यु के बाद अग्नि लोक को प्राप्त होता है। स्कन्द पुराण के

मथुरा खण्ड में बताया है। 'श्रीहरि की पत्नी बहुला, सदैव इस वन में वास करती हैं। हे राजन्! यह स्थान शुभ है क्योंकि श्रीविष्णु और लक्ष्मी जी यहाँ अनन्तकाल तक रहते हैं। बहुला वन में संकर्षण कुण्ड और मान-सरोवर है। कमल के वन को यहाँ देखकर जीव को पवित्र फल प्राप्त होता है। जो कोई भी यहाँ चैत्र मास (मार्च-अप्रैल) में स्नान करता है वह श्रीहरि और लक्ष्मीजी के दर्शन करने योग्य हो जाता है।'

आगे श्रीराघव पंडित **मयूर ग्राम** की ओर गए जहाँ श्रीकृष्ण ने नृत्य करते मोर देखे थे। अपनी प्रिया के साथ सहस्रों मोरों को राधा-कृष्ण के लिये पंख फैलाकर नृत्य करते देखना अद्‌भुत दृश्य था। क्या अद्‌भुत आनन्द छा गया जब श्रीराधा और श्रीकृष्ण मोर के साथ नृत्य करने लगे। सखियां चारों ओर खड़ी हो गयीं और सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित कर देने वाले इस दृश्य को देखकर करतल ध्वनि करने लगीं।

श्रीराघव पंडित ने इंगित कर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को दक्षिण ग्राम दिखाया। इस पूरे स्थान पर श्रीकृष्ण ने अपनी प्रणयलीला का आनन्द लिया था।

दक्षिण ग्राम में दक्षिणा नायिका के भाव को मुख्य रूप से प्रकट किया गया है। दक्षिणा नायिका का उज्ज्वल नीलमणि में इस प्रकार से वर्णन है। 'एक गोपी जो नारी सुलभ क्रोध को सहन नहीं कर सकती, जो नायक के प्रति अनुकूल शब्द बोलती है और उसके मृदु स्वर से तृप्त हो जाती है वह दक्षिणा या दक्षिणपंथी गोपी है।'

ग्रन्थकार ने यहां उज्ज्वलनीलमणि ग्रन्थ से अनेकानेक नायिका आदि के भावों का वर्णन किया है, जिसे प्रकाशित मूल ग्रन्थ में देखना चाहिये।

यहाँ **बस्ती** नाम से एक अन्य गाँव है, जहाँ एक बार राजा वृषभानु रहे थे। महाराज नन्द षष्ठिकरा और राल की सीमा तक रहे थे। वर्तमान में रौउल को **राल** नाम से जाना जाता है। बस्ती नगर के निकट श्रीकृष्ण और श्रीबलराम ने अति आनन्द में अपने मित्रों के साथ खेलकर कुछ समय व्यतीत किया। बस्ती संभवतः **बाटी ग्राम** है।

श्रीराधा-श्याम कुण्ड

कुछ दूर चलने के बाद श्रीराघव पंडित ने बोलना प्रारम्भ किया। 'आगे **अरिट्** नामक गांव हैं। श्रीकृष्ण की लीलाओं की यहाँ एक आकर्षक कथा है। एक बार श्रीकृष्ण ने बैल के रूप में एक असुर अरिष्टासुर का वध कर दिया। कुछ समय बाद जब उन्होंने श्रीराधारानी को स्पर्श करना चाहा तो वे मुस्कुराते हुए बोलीं। 'चाहे अरिष्टासुर एक राक्षस था पर उसने बैल (नर गाय) का रूप लिया था। इस कारण उसका वध करने से आप पाप के प्रभाव से दूषित हो गये

हो। यदि आप सभी पवित्र स्थलों पर स्नान करेंगे तभी उसको मारने के पाप से मुक्ति पा सकेंगे।' श्रीकृष्ण ने बहुत प्रेम से उत्तर दिया, 'मैं सभी पवित्र स्थलों को यहाँ बुलाकर उनमें स्नान करूँगा।'

'ऐसा कहकर श्रीकृष्ण ने पृथ्वी को अपने चरणों से खोद कर एक गड्डा बना दिया जो तुरंत पवित्र स्थलों के जल से भर गया। प्रत्येक पवित्र स्थल के देवता ने श्रीकृष्ण के सम्मुख प्रकट होकर अपना परिचय दिया और पूजा अर्पित की। श्रीराधारानी और सब गोपियों के सामने श्रीकृष्ण ने सब पवित्र स्थलों का नाम लेकर उस जल में स्नान किया। उन्होंने मध्यरात्रि से कुछ समय पूर्व स्नान समाप्त किया। आज भी लोग उसी विधि को अपनाकर पवित्र कुण्डों में स्नान करते हैं।'

श्रीकृष्ण को कार्यसिद्ध करता देख श्रीराधारानी ने शीघ्रता से अपनी सखियों के साथ अपना एक कुण्ड खोद दिया। श्रीराधारानी द्वारा खोदा गया कुण्ड अति सुन्दर था और उसे देखकर श्रीकृष्ण को अत्यधिक प्रसन्नता हुई। राधारानी ने सोचा कि वह अपने कुण्ड को मानसी-गंगा के जल से भरेंगी जो सभी पवित्र स्थलों का मूलतत्त्व है। श्रीराधारानी की इच्छा जानकर श्रीकृष्ण ने आदेश दिया और श्रीश्यामकुण्ड से सभी तीर्थों का जल श्रीराधा-कुण्ड में प्रवेश कर गया। तब पवित्र स्थलों के देवताओं ने श्रीराधारानी की महिमा का गुणगान किया और स्वयं को सौभाग्यशाली जानकर वे सब अति प्रसन्न हो गये।

उस समय के बाद दोनों ही कुण्ड जो कि सुन्दर वृक्षों और वनस्पतियों से घिरे हुए हैं वे श्रीराधा-कृष्ण की प्रणय लीला का स्थान बन गये।

स्तवावली और ब्रज विलास नामक ग्रन्थों में निम्नलिखित वर्णन है। 'मैं श्रीराधा-माधव के परस्पर मिलन के अतिप्रिय और उनकी प्रणय लीला के स्थान श्रीराधा-कुण्ड और श्रीश्याम-कुण्ड का आश्रय लेता हूँ। यह बहुत ही सुहावना और कदम्ब, चम्पक और अति युवा और सुन्दर अशोक, आम, पुन्नाग (श्वेत कमल) और बकुल वृक्षों से और साथ ही लवण्य और वासन्ती की लताओं से घिरा हुआ स्थान है।'

'श्रीराधा-कुण्ड, ललिता सखी के कुंज से आरम्भ होकर बहुत ही सुन्दर अष्टसखियों के कुंजों से घिरा है। श्रीश्यामकुण्ड सुबल के कुंज से प्रारम्भ होकर अष्टसखाओं के कुंजों से घिरा है।' वे देखने में अत्यंत सुन्दर और मनमोहक हैं। मैंने एक गीत की रचना की है जो श्रीराधा-कुण्ड की सुन्दरता का वर्णन करता है।

'श्रीकृष्ण राधा-कुण्ड की सुन्दरता का आनन्द ले रहे हैं। कुण्ड स्वच्छ जल और कमल पुष्पों से भरा हुआ है। भंवरे पुष्पों पर मण्डरा रहे हैं और धीमी-धीमी बहती पवन जल में छोटी-छोटी तरंगें उत्पन्न कर रही हैं। जलचर

जल में स्वच्छन्द विचरण कर रहे हैं। कुण्ड के तट विभिन्न प्रकार के सुन्दर रत्नों से सुसज्जित हैं। तट के निकट छतदार बरामदा सुन्दर चित्रों से सजा हुआ है। कामदेव अपने आप को तुच्छ समझकर शीश झुकाये हुए हैं। श्रीराधा और श्रीकृष्ण वृक्ष पर लटके स्वर्ण झूले पर विराजमान हो झूला झूल रहे हैं और पक्षी तथा मोर आदि नृत्य और गान कर रहे हैं।'

इस गीत का आनन्द लेते हुए नरहरि चक्रवर्ती अपने हृदय के भावों में श्रीश्रीराधा-कृष्ण की लीलाओं का अवलोकन कर रहे हैं। श्याम-कुण्ड अरिष्ट-कुण्ड के नाम से भी जाना जाता है। श्रीराधा-कुण्ड और श्रीश्याम-कुण्ड में स्नान करने वाले को वही फल प्राप्त होता है जो कि राजसूय या अश्वमेध यज्ञ करने वाले को प्राप्त होता है। यह बात आदि वाराह पुराण में पुष्ट होती है।

श्रीराघव पंडित बताते हैं कि पुराणों के अनुसार श्रीराधा-कुण्ड की महिमा का कोई अंत नहीं है। आदि वाराह पुराण के मथुरा खण्ड में यह वर्णन है। 'यदि भगवान् विष्णु का भक्त कार्तिक मास के दौरान श्रीराधा-कुण्ड में दीप-दान करता है वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के दर्शन के योग्य हो जाता है।'

पद्म पुराण के कार्तिक माहात्म्य में वर्णन है। 'श्रीराधा-कुण्ड श्रीहरि को अतिप्रिय है और यह गोवर्धन पर्वत के निकट स्थित है। श्रीराधा-कुण्ड में कार्तिक मास में चन्द्र घटाव के आठवें दिवस (बहुला अष्टमी) को स्नान करने पर कोई भी श्रीहरि को अत्यधिक प्रसन्न करता है, वह वहाँ उनकी लीलाओं का दर्शन पाता है। यह कुण्ड श्रीकृष्ण जी के साथ ही श्रीराधा जू को भी अतिप्रिय है। सभी गोपियों में केवल वे ही श्रीकृष्ण को अतिप्रिय हैं। यह सभी भक्तों का कर्तव्य है कि राधा-कुण्ड में कार्तिक मास में स्नान करने के बाद जनार्दन भगवान् की पूजा करें। यह साधारण पूजा भगवान् श्रीकृष्ण को इतना प्रसन्न करती है जितनी देव उत्थान एकादशी पर स्वयं उनकी पूजा भी उन्हें प्रसन्न नहीं कर पाती।'

श्रीराघव पंडित अनवरत बोलते रहे। 'इन दो कुण्डों, **श्रीश्यामकुण्ड और श्रीराधा-कुण्ड** को देखो जो सुन्दर वनों से घिरे हुए हैं और संतों तथा अंश अवतारों को भी आकर्षित करते हैं। वृन्दावन के सभी वनों की यात्रा कर श्री चैतन्य महाप्रभु यहाँ आये और इस तमाल वृक्ष के नीचे बैठ गये। उन्होंने अरिष्ट ग्राम के वासियों से पूछा कि दोनों कुण्ड कहाँ हैं? परन्तु कोई भी इसका उत्तर न दे सका। मथुरा से उनके साथ आये ब्राह्मण भी इसके बारे में नहीं जानते थे।'

भगवान् के सर्वोच्च अन्तर्यामी अवतार होने के कारण भगवान् चैतन्य महाप्रभु ने सफलतापूर्वक इसे खोजा और धान के खेतों में उन दोनों कुण्डों को ढूँढ़ लिया। उन्होंने जितना भी उसमें जल था उसमें स्नान किया और भिन्न-भिन्न प्रकार से कुण्डों की महिमा का गान करने लगे। तब कुण्डों की रज से अपने मस्तक पर तिलक किया।

श्रीराधाकुण्ड पर महाप्रभु

गांव के लोग भगवान् का व्यवहार देखकर अत्यधिक आश्चर्यचकित हुए। उनमें से एक ने पूछा, 'अचानक यह संन्यासी कहाँ से आ गया?' किसी ने कहा, 'हे भ्राते, मैं नहीं समझ सकता कि इसे देखकर मेरे शरीर में क्या हो रहा है।' दूसरा व्यक्ति बोला, 'यह कोई प्रचण्ड संन्यासी नहीं हो सकता। मैं नहीं बता सकता कि इसे देखकर मेरे मन में क्या हो रहा है।'

तब किसी ने कहा, 'कौन कहता है कि यह संन्यासी हैं? यह स्वयं श्रीकृष्ण हैं जो इन वस्त्रों और रूप में प्रकट हुए हैं। मात्र साक्ष्य को देखो। कितनी प्रकार के पक्षी इनके दर्शन करने आ रहे हैं। कोयल और तोते कितने भाव से इन्हें कृष्ण कहकर पुकार रहे हैं ओर मोर आनन्द में नृत्य कर रहे हैं। पक्षियों का कलरव कानों को कितना प्रिय लग रहा है। वृक्षों पर सुन्दर प्रस्फुटन का अवलोकन करो।'

हे भ्राते! देखो लताएं इस व्यक्ति पर पुष्प वर्षा कर रही हैं जो संन्यासी के गुप्त रूप में है। हिरण उसकी तरफ आ रहे हैं और उसके मुखमण्डल को एकटक निहार रहे हैं। सभी ओर से ये सब गायें अपनी पूँछ उठाकर भागती हुई उसकी ओर आ रही हैं और उनकी दृष्टि उसके मुख पर ही टिकी हुई है। भावावेश में उन जन्तुओं के नेत्रों से बहते अश्रुओं को देखकर हम समझ सकते हैं कि वे बहुत समय बाद उनसे मिल रहे हैं।'

हे भ्राते! मैं निरंतर इन जन्तुओं के सौभाग्य की महिमा का गुणगान कर रहा हूँ जिन्होंने श्रीकृष्ण को इस वेश और रूप में देखा है। हे भ्राता जनो, आओ उन चरणकमलों में प्रणाम करें जिनका अवतरण इस संसार के लोगों को ज्ञान देने के लिये हुआ है। उनके अनुग्रह से अब हम समझ गये हैं कि ये काली और गोरी नाम से पुकारे जाने वाले धान के खेत असल में पवित्र कुण्ड हैं। इस प्रकार अपने आप से बोलते हुए लोग, इस पवित्र स्थान पर श्रीचैतन्य महाप्रभु की अमृतमयी झलक पाकर पागल से हो गये। यहाँ तक कि भगवान् ब्रह्मा भी श्रीचैतन्य महाप्रभु के उस भावावेश का एक अंश भी वर्णन नहीं कर पाये जब उन्होंने इन कुण्डों को खोजा।

श्रील दासगोस्वामी वांछा पूर्ति

हे श्रीनिवास, वर्तमान में ये धान के खेत जल से लबालब भरे दो कुण्डों के रूप में दिखते हैं। कृपया ध्यान से सुनो, मैं इन दो धान के खेतों के दो सुन्दर कुण्ड में परिवर्तित होने का विस्तार से वर्णन करता हूँ।

एक दिवस श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने स्वयं से यह सोचना आरम्भ किया कि यदि यह दो कुण्ड जल से भर जायें तो यह कितनी अच्छी सेवा होगी। यह

जानकर कि इसके लिये धन की आवश्यकता होगी रघुनाथ दास जी ने इस विचार को उस समय के लिये त्याग दिया। वास्तव में वे बार-बार स्वयं से क्षुब्ध होने लगे कि क्यों उन्होंने कभी ऐसी इच्छा के बारे में सोचा। अंततः शांत होने पर उन्होंने निर्णय लिया कि एकांत में रहेंगे और कुछ समय तक सावधानी पूर्वक व्यवहार करेंगे। यद्यपि जब एक भक्त की कोई इच्छा होती है तो वह उससे वंचित नहीं रह सकता क्योंकि श्रीकृष्ण सदैव अपने भक्तों की कामना पूर्ति करते हैं।

प्रत्येक ने निर्णय लिया कि निश्चित दिवस पर श्यामकुण्ड के तट पर कुछ पुराने वृक्षों को काटा जायेगा। उस रात श्रीरघुनाथ दास के स्वप्न में युधिष्ठिर महाराज ने उन्हें बताया, 'मैं और मेरे भाई इन वृक्षों में वास कर रहे हैं। कल प्रातः मानस पावन घाट पर जाना और उन पांच वृक्षों को पहचान कर उन्हें कटने से बचाना।' इसी मध्य एक धनी व्यक्ति भगवान् के दर्शन करने बदरिकाश्रम गया। वहाँ उसने नारायण भगवान् को एक विशाल धनराशि समर्पित की। उस रात स्वप्न में भगवान् ने उसे आदेश दिया, 'इस धन को ब्रज के अरिष्ट ग्राम ले जाओ। वहाँ तुम्हें श्रेष्ठ वैष्णव श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी मिलेंगे।'

'उन्हें मेरा नाम कहकर धन दे दो। यदि रघुनाथ दास धन लेने से मना करें तो तुम उन्हें स्नान के लिये दो कुण्डों के निर्माण की उनकी इच्छा याद दिलवाना।'

ऐसा कहकर भगवान् अन्तर्धान हो गये और वह निष्ठावान भक्त यहाँ अरिष्ट ग्राम में आ गया। रघुनाथ दास गोस्वामी के सम्मुख आकर उस भक्त ने धरती पर लेटकर साष्टांग प्रणाम किया और उन्हें धन दे दिया। उसने स्वप्न में भगवान् द्वारा बताये निर्देशों का भी वर्णन किया। रघुनाथ दास कुछ समय के लिये चकित से हो गये। अंत में जब वे शांत हुए तो रघुनाथ दास जी ने बार-बार अपने सौभाग्य की प्रशंसा की और उस धनी व्यक्ति से बिना विलम्ब उन कुण्डों को खोदने की प्रार्थना की। यह सुनकर वह सौभाग्यशाली व्यक्ति भाव से भर उठा और कई लोगों को अपने साथ जोड़ने लगा। जल्दी ही कुण्ड खोद लिये गये। अब सुनो कि क्यों श्यामकुण्ड को अनियमित आकार में खोदा गया।

श्यामकुण्ड पर पाण्डव

हर किसी ने निर्णय लिया कि अगली प्रातः श्यामकुण्ड के तट पर पुराने वृक्षों को काटा जायेगा। उस रात रघुनाथ दास जी को एक स्वप्न आया जिसमें युधिष्ठिर महाराज ने उन्हें बताया कि 'मैं और मेरें भाई इन वृक्षों में रह रहे हैं। कल प्रातः मानस पावन घाट पर जाकर इन वृक्षों की पहचान करना और इन्हें कटने से बचाना। अपने स्वप्न से जागकर रघुनाथ दास अगली प्रातः जल्दी ही घाट पर वृक्षों की पहचान करने चले गये और उन्होंने लोगों को आदेश दिया कि उन वृक्षों को न काटें। इस कारण से वे श्यामकुण्ड को वर्गाकार न बना सके।

तब दोनों कुण्डों को स्वच्छ जल से भरा गया और श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी संतुष्ट हो गये।'

दिवस रात श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी एक वृक्ष के नीचे रहते। उन्हें कुटिया की कोई इच्छा नहीं थी। एक दिवस श्रीवृन्दावन से श्रीसनातन गोस्वामी श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के निवास पर गये। मानस पावन घाट पर स्नान के लिये जाते हुए उन्होंने देखा कि एक बाघ वहाँ पानी पीने आ रहा था। पानी पीने के बाद जंगल वापिस जाते हुए बाघ उनके बहुत निकट से गया। कुछ समय बाद जब श्रीरघुनाथ दास जी अपने ध्यान से बाहर आये तो उन्होंने देखा कि श्रीसनातन गोस्वामी स्नान के लिये आये हैं।

श्री दासगोस्वामि कुटिया

श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने श्रीसनातन गोस्वामी को धरती पर साष्टांग प्रणाम किया जिन्होंने बहुत प्रेम भाव से उठाकर उन्हें आलिंगन कर लिया। बहुत प्रेम से श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीरघुनाथ गोस्वामी को वृक्ष के नीचे रहने के बजाय कुटिया में वास करने के लिये कहा। इस प्रकार श्रीरघुनाथ दास जी को निर्देश देकर श्रीसनातन गोस्वामी स्नान करने चले गये। उसी दिवस से श्रीरघुनाथ दास की कुटिया का कार्य प्रारम्भ हो गया। तब से श्रीरघुनाथ दास जीवों के हित के लिये, श्रीसनातन गोस्वामी के आदेश के सम्मान स्वरूप कुटिया में रहने लगे।

हे श्रीनिवास मैं एक मुख से कैसे श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की गतिविधियों का सम्पूर्ण वर्णन कर दूँ। श्रीरघुनाथ दास के हृदय में एक दास नाम के ब्रजवासी के प्रति विशेष लगाव था। एक दिवस यह दास सखीस्थली नाम के गांव गया और पलाश वृक्ष का एक विशाल पत्ता ले आया। वह जान रहा था कि कैसे श्रीरघुनाथ दास विरह के कारण अन्न का एक दाना भी नहीं पा रहे हैं। क्योंकि श्रीरघुनाथ दास एक दिवस में एक पत्ते के पात्र में मात्र छाछ पीते थे। दास ने सोचा कि बड़ा पत्ता होने के कारण वे कुछ ज्यादा सकेंगे। यह सोचकर दास घर वापिस आ गया और पत्ते का पात्र बनाकर उसमें छाछ डालकर श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी को दिया।

चन्द्रावली का स्थान

विशाल पात्र को देखकर गोस्वामी जी ने पूछा कि यह कहाँ से आया। दास ने जवाब दिया कि वह गाय चराने सखीस्थली गये थे जहाँ उन्हें यह सुन्दर पत्ता मिला जिसे वे साथ ले आये। सखीस्थली का नाम सुनकर श्रीरघुनाथ दास नाराज हो गये और उन्होंने छाछ सहित पात्र को दूर फेंक दिया। जब वे शांत हुए तो उन्होंने दास को फिर कभी सखीस्थली न जाने का आदेश दिया क्योंकि वह चन्द्रावली का निवास था। यह सुनकर दास शुद्ध भक्तों की कुछ आध्यात्मिक

गतिविधियों को समझ सकता था कि कैसे वे सदैव अपने चिरकालिक आध्यात्मिक रूप में दृढ रहते हैं। जो भी इसमें संशय करता है वह इस संसार में सबसे पापी व्यक्ति है।

एक दिवस श्रीरघुनाथ दास ने **मानसिक रूप** से कुछ चावल प्रसाद और दूध पा लिया जिसके बाद वे भारीपन के साथ अपच का अनुभव करने लगे।

कोई भी इसका कारण न समझ सका। उनके हालात के बारे में सुनकर श्रीविट्ठलनाथ श्रीवल्लभपुर से दो वैद्यों को ले आये। वे श्रीरघुनाथ की नब्ज देखकर बार-बार कहने लगे की भारीपन दूध और चावल लेने के कारण हुआ है। आश्चर्यचकित श्रीविट्ठलनाथ ने कहा कि यह सम्भव नहीं हो सकता क्योंकि श्रीरघुनाथ दास ने कभी चावल और दूध ग्रहण ही नहीं किया। श्रीरघुनाथ ने उत्तर दिया। 'निश्चित ही यह सत्य है क्योंकि मैंने मानसिक रूप से कुछ चावल और दूध ग्रहण किया है।' यह सुनकर हर कोई आश्चर्यचकित रह गया। ऐसी थीं श्रीरघुनाथदास गोस्वामी की गतिविधियां। इससे अधिक क्या कहा जा सकता है?

श्रीराधाकुण्डवास-योग्यता

हे श्रीनिवास यह निश्चित है कि श्रीरघुनाथ दास की अनुकम्पा से ही कोई श्रीराधा-कुण्ड में वास कर सकता है। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की श्रीराधा-कुण्ड, श्रीगोवर्धन-शिला और गुञ्जा-माला की सेवा बहुत विख्यात है।

अत्यन्त आकर्षक श्रीराधा-कुण्ड और श्याम-कुण्ड जो मोतियों की माला की अद्भुत लीला वाले माल्यहारि कुण्ड से जुड़े हैं उनको घेरे हुए वृक्षों और लताओं को देखो। रघुनाथ दास ने बहुत अनुग्रह से इस घटना का वर्णन अपने ग्रन्थ 'मुक्ता चरित' में किया है। यहाँ दो कुण्ड है **शिव-खोर** और **भानु-खोर**।

ऐसा कहते हुए श्रीराघव पंडित भावावेश में आ गये। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को कुछ और कुण्ड व लीला स्थली के दर्शन करवा कर वे उन्हें श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी से मिलवाने ले गये। श्रीराघव पंडित ने अपनी सभी गतिविधियों का वर्णन श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी को दिया जो मन ही मन बहुत प्रसन्न हुए। बहुत भाव से श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने भूमि पर साष्टांग होकर प्रणाम किया।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास से मिलकर श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी अत्यधिक प्रसन्न हुए। यद्यपि ज्यादा अवस्था होने के कारण वे थोड़ा कमजोर हो गये थे फिर भी उन्होंने उठकर दोनों का आलिंगन किया। तब उन्होंने धीरे से श्रीनिवास से कुछ कहा। श्रीकृष्णदास कविराज भी वहाँ आ गये। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने उन्हें सादर प्रणाम किया और उन्होंने भी प्रति उत्तर में उनकी बात का उत्तर दिया।

श्रीनिवास आचार्य की अद्भुत आध्यात्मिक गतिविधियों के कारण श्रीकृष्णदास कविराज उन्हें प्राणों से भी अधिक प्रेम करते थे।

ब्रजवासी दास जो श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी को अतिप्रिय थे, वे भी वहाँ उनसे मिलने आये। अन्य सभी वैष्णव जो कुण्डों के तट पर रहते थे वे भी श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास से मिलने आये। उन सबने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें स्नान करने की आज्ञा प्रदान की और फिर उनके लिये विभिन्न प्रकार के भोजन की व्यवस्था करने लगे। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास तब स्नान करने गये और उनके नेत्रों में कुण्डों का अपूर्व सौन्दर्य भर उठा।

सुबल-कुंज श्याम-कुण्ड के उत्तर में है जहाँ मानस पावन घाट स्थित है। यह स्थान जहाँ पांडव वृक्ष के रूप में रहते हैं वह श्रीमती राधिका को अतिप्रिय है। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने बहुत प्रेम भाव से वहाँ स्नान किया और बाद में श्रीगोपाल भट्ट की कुटीर में लौट आये और महा-प्रसाद ग्रहण किया। उन्होंने बहुत भाव से वह दिवस व्यतीत किया और अगली प्रातः पुनः अपनी यात्रा आरम्भ की।

मुखरा नानी

आगे श्रीराघव पंडित उन्हें मुखराई गांव के दर्शन को ले गये जो श्रीराधा-कुण्ड के दक्षिण में है। सब जानते हैं कि इस स्थान पर श्रीराधा की नानी मुखरा रहती थी। यह बहुत रोचक था कि स्वयं मुखरा श्रीराधा-कृष्ण के परस्पर मिलन का प्रबन्ध करने में अत्यधिक आनन्द का अनुभव करती थीं।

गोवर्धन गिरिराज दर्शन

इसके बाद श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को गोवर्धन पर्वत के निकटवर्ती स्थानों पर ले गये जहाँ भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी लीलाएं रचायीं थीं और उन्होंने उन सबका एक-एक करके वर्णन किया। **कुसुम सरोवर** नाम का कुण्ड श्रीराधा-कृष्ण के लिये सर्वाधिक विख्यात स्थान था। **नारद-कुण्ड** नाम के एक अन्य स्थान पर श्रीनारद मुनि ने वृन्दा देवी के आदेश पर तपस्या करके अपनी इच्छाऐं पूर्ण की थीं।

रत्न-सिंहासन नामक स्थान पर श्रीराधा एक सिंहासन पर विराजमान होती थीं और श्रीकृष्ण ने भी शंखचूड़ का वध इसी स्थान पर किया था। इस कथा का वर्णन श्रीमद्भागवत में है।

पालि ग्राम एक रमणीय बाग है जहाँ पालिता-यूथेश्वरी का वास था।

श्रीकृष्ण स्वयं और अपने मित्रों के साथ **अट्टा ग्राम** नामक पवित्र स्थान पर बहुत आनन्द करते थे। **इन्द्र-ध्वज-वेदी** स्थान पर श्रीनन्दराजा ने इन्द्र की

पूजा की थी। इसी स्थान पर अपनी गायों के साथ जाकर भगवान् श्रीकृष्ण अपनी मुरली की धुन पर गोपियों को उनको अपने सम्मुख बुलाते थे।

ऋणमोचन जो **पापमोचन** के नाम से भी जाना जाता है, यह स्थान अपनी पवित्रता के लिये विख्यात है। यदि कोई व्यक्ति यहाँ स्नान करता है तो अपने सभी पापों से मुक्त हो जाता है। फिर यहाँ **संकर्षण कुण्ड** के नाम से सरोवर है। जो भी अपनी कामनाओं को पूर्ण करना चाहता है, उसे यहाँ स्नान करना चाहिये।

परासौली ग्राम में श्रीराधा-कृष्ण वसंत ऋतु में रास-नृत्य करते थे। **चन्द्र सरोवर** पर श्रीकृष्ण रास के दौरान विश्राम किया करते थे। उसके बाद वहाँ सुन्दर **गन्धर्व-कुण्ड** है जहाँ पर गन्धर्व श्रीकृष्ण के मधुर गीतों से भावविभोर हो गये थे। कोई भी वसंत ऋतु के अन्तर्गत गोवर्धन पर की गई श्रीराधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन नहीं कर सकता।

स्तवावली के गोवर्धन-आश्रयदशक में यह वर्णन है। 'यह रास-स्थली है जहाँ वसंत ऋतु के समय श्रीमती राधा-रानी जो कि माधव-प्रिया के नाम से जानी जाती हैं, ने श्रीकृष्ण के साथ नृत्य किया था। वे चहुँ ओर से सुन्दर सखियों से घिरी थीं जिनमें से प्रत्येक की पूजा सैकड़ों लक्ष्मी मिलकर करती थीं और उनका कंठ श्रीकृष्ण के मधुर सुगन्धमय हाथों से सुशोभित था। कौन सौभाग्यशाली इस असाधारण गोवर्धन रास-स्थली का आश्रय नहीं लेना चाहेगा?'

यहाँ **पैंठा** नाम से एक अन्य गांव हैं जहाँ एक बार श्रीकृष्ण ने स्वयं को गोपियों से छिपा लिया था और गोपियों ने उन्हें इधर-उधर खोजा। श्रीकृष्ण गोपियों के सम्मुख अपने चतुर्भुज रूप में प्रकट हुए परन्तु श्रीराधारानी के आने पर उनके दो हाथ अप्रकट हो गये। श्रीराधारानी का प्रेम इतना प्रबल था कि श्रीकृष्ण अपने चतुर्भुज रूप की स्मृति न रख सके। यह वृतांत उज्ज्वल नीलमणि के नायिका-प्रकरण में वर्णित है। पैंठा माने पैंठ गये। घुस गये।

पैंठा से इन सब आकर्षक स्थलों के दर्शन करवा कर श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के साथ **गौरी-तीर्थ** वापिस लौट गए।

श्रीराघव पंडित ने बताया कि इस स्थान को **नीप कुण्ड** कहते हैं क्योंकि यह सुन्दर नीप या कदम्ब के वृक्षों से घिरा है।

आन्यौर

आन्यौर नाम से एक अन्य पवित्र स्थल है। इसी स्थान पर श्रीकृष्ण के आदेश पर श्रीनन्दराज और अन्य गोप जनों ने इन्द्र की पूजा रोक दी थी और विभिन्न भोज्य पदार्थों का भोग लगाकर श्री गोवर्धन की पूजा के लिये व्यवस्था की। गोवर्धन पर्वत की आकाशवाणी गूँज उठी। **आनि और आनि और** (मुझे

और दो मुझे और दो)। इस कारण से यह स्थान आन्यौर नाम से जाना जाता है। अन्नकूट स्थान की यात्रा करने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं।'

ब्रज-विलास-स्तव में यह लिखा है। 'जब सर्वश्रेष्ठ ग्वाल श्रीनन्द महाराज ने श्रीगोवर्धन को विशाल भोग निवेदन किया तब अघासुर के संहारक श्रीकृष्ण ने विराट रूप धारण किया और यह घोषित किया कि वह स्वयं गोवर्धन पर्वत हैं। यहाँ तक कि श्रीराधा रानी से छल कर उन्होंने सारा निवेदित भोग पा लिया। मुझे इस अन्नकूट नामक स्थान का आश्रय लेने दो।'

गोविन्द कुण्ड

'गोविन्द-कुण्ड' नामक यह स्थान बहुत उत्तम है क्योंकि इस स्थान पर इन्द्र ने भगवान् श्रीकृष्ण का अभिषेक किया था। पुनः ब्रज-लीला-स्तव में यह लिखा है। 'श्रीकृष्ण के भय से सुरभि के साथ इन्द्र ने मन्दाकिनी का पवित्र जल लाकर उनका अभिषेक किया। गोविन्द-कुण्ड जो कि अभिषेक के जल से निर्मित हुआ मेरे नेत्रों के सम्मुख सदैव प्रकट रहे।'

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। 'गोविन्द कुण्ड में स्नान करने या तप करने से जीव को मुक्ति प्राप्त होती है या सौ यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है। गोविन्द-कुण्ड के पास इस घने वन को देखो। यहाँ पर श्रीगोपाल छिपते थे। यहाँ पर एक अत्यंत गोपनीय स्थल **दान-निवर्तन-कुण्ड** है। भक्तजनों के अलावा इस स्थान को कोई नहीं जान सकता।'

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'दान-निवर्तन-कुण्ड का नाम दान-केलि लीला के कारण पड़ा जिसका श्रीकृष्ण ने यहाँ पर आनन्द लिया था। यह स्थान उन लोगों के लिये अनभिज्ञ है जो निश्छल आध्यात्मिक सेवा के प्रतिकूल हैं। जो आध्यात्मिक कार्यों में दक्ष हैं केवल वे ही इस स्थान को जान सकते हैं। मैं यह प्रार्थना करता हूँ कि मैं इस कुण्ड पर वास कर सकूँ और दान कर सकूँ (इस लीला में दान का अर्थ कर से है)।'

माधवेन्द्र पुरी यहाँ एक वृक्ष के नीचे रहे थे और गोपालजी ने उनके लिये दूध लाकर उन्हें दर्शन दिये थे।

बाद में गोपालजी पर्वत पर वास करने लगे और कभी-कभी आते। गोवर्धन कुण्ड के अंत में **अप्सरा-कुण्ड** है। जो लोग यहाँ स्नान करते हैं वे बहुत सौभाग्यशाली हैं। यहाँ पुराने पलाश के वृक्ष देखो। लोग इसे **श्याम-ढाक** नाम का बहुत निर्जन स्थान कहते हैं।

इन सब स्थानों का वर्णन करके श्रीराघव पंडित उन दो शिष्यों को अपनी गुफा में ले गए। उन्होंने उन्हें बताया कि यहाँ रहते हुए वो नित्य-मनमोहक गोवर्धन पर्वत के दर्शन कर अत्यधिक आनन्द का अनुभव करते हैं। राधा-कृष्ण सदा यहाँ अपनी लीलाओं का आनन्द लेते हैं। जैसा कि ब्रज-विलास-स्तव में

वर्णन है। 'कृष्ण और उनके स्नेही सखा यहाँ पाये जाने वाले रंगीन खनिज वर्णकों से सुशोभित हो खूब हास-परिहास के उत्सव पूर्ण वातावरण में गोवर्धन पर्वत पर लीलाओं का आनन्द लेते हैं। पर्वतों की गुफाओं में श्रीकृष्ण ने श्रीमती राधारानी के साथ अनेक लीलाओं का आनन्द लिया। मुझे इस पर्वत श्रेष्ठ की पूजा करने दो।'

राघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा। 'यहाँ ऐरावत के पदचिह्नों को देखो। पराजित होने के बाद इन्द्र ने यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण की करुणा की महिमा का वर्णन किया था। यह **सुरभि-कुण्ड** है, जिसकी महिमा असीमित है। यहाँ घटित विविध लीलाओं का वर्णन कौन कर सकता है? इस सुन्दर निर्जन वन में **रुद्र-कुण्ड** है, जहाँ बैठकर श्रीमहादेव जी ने श्रीकृष्ण में ध्यान लगाया था। **कदम्ब-खण्डी** में श्रीकृष्ण ने उस मार्ग को निहारा था जिस पर श्रीमती राधारानी यात्रा करती थीं। **दान-गढ़ी** में रास के राजा श्रीकृष्ण ने श्रीराधारानी से दुग्ध पदार्थों का एक अंश लिया था जब उनके सखाओं ने श्रीराधारानी का मार्ग रोका था।'

जब श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ आये तो उन्होंने सनाढ्य ब्राह्मणों से इस स्थान के बारे में पूछा। जब उन्होंने दान लीला के बारे में सुना तो भगवान् चैतन्य आनन्द में हल्का सा मुस्कुरा दिये। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीहरिदेव जी के दर्शन किये तो भावावेश में मग्न होकर अद्‌भुत नृत्य करने लगे। जब सबने श्रीगौरहरि को भावपूर्ण अवस्था में नृत्य करते देखा तो सबके नेत्रों में अश्रु आ गये। कुछ लोगों ने उन्हें नृत्य करते देखकर कहा कि वास्तव में वे श्रीहरिदेव के अवतार ही हैं। गोवर्धन पर्वत पर भगवान् ने जो लीलाऐं रचाईं उनका वर्णन कौन कर सकता है?

दान घाटी

दान-घाटी नाम से एक निर्जन स्थान है जो कुछ लोगों द्वारा कृष्ण-वेदी नाम से भी जाना जाता है। आजकल अति प्रसिद्ध है।

ब्रज-विलास में इसका कुछ इस प्रकार वर्णन है। 'एक दिवस रसिक युवाओं के युवा राजा भगवान् श्रीकृष्ण दान-केलि लीला करने के लिये अधीर हो उठे। मार्ग रोककर उन्होंने प्रेम के राजा द्वारा नियुक्त कर- एकत्र करने वाले के रूप में श्रीमती राधारानी को बाध्य किया कि वे आगे जाने के लिये अपने साथ लाये गये दुग्ध पदार्थों का एक अंश कर के रूप में दें। मैं **कृष्ण-वेदी** स्थान की महिमा का गुणगान करता हूँ, जहाँ भगवान् ने इस लीला का आनन्द लिया।'

यह अनोखी लीला श्रील रूप गोस्वामी द्वारा अपने ग्रन्थ दान-केलि-कौमुदी में वर्णित की गयी है। **ब्रह्मकुण्ड** भी गोवर्धन पर्वत पर स्थित है, जिसका वर्णन

मथुरा-खण्ड में है। 'यहाँ स्नान कर ब्रह्माजी ने भगवान् श्रीहरि को तृप्त किया था। इन्द्र और अन्य ग्रहों के शासकों ने आस पास अन्य सरोवर बना लिए।'

आदि वाराह पुराण में यह भी वर्णन है। 'हे मंगलकारी, यह सरोवर चहुँ ओर से वृक्षों और लताओं के कुञ्जों से और चौदह शुभ पवित्र स्थानों से घिरा है। इसके पूर्व में **इन्द्र-तीर्थ** है, दक्षिण में **यम-तीर्थ** है, पश्चिम में **वरुण-तीर्थ** है और उत्तर में **कुबेर-तीर्थ** है। मैं इन स्थानों में जैसे चाहूँ लीलाओं का आनन्द लूँगा।'

मानसी गंगा

श्रीराघव पंडित ने आगे **मानसी गंगा** की ओर इंगित किया। इस स्थान पर श्रीकृष्ण ने भावमयी नौका-विहार लीला का आनन्द लिया। ब्रज-विलास-स्तव में मानसी-गंगा का यह वर्णन है। 'गोवर्धन पर्वत की ओर मानसी गंगा की लहरों ने उत्कृष्ट पाषाण खण्डों को अपने किनारे खींच लिया। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मानसी-गंगा जहाँ गन्धर्व-मुरारी ने उल्लसित नौका-विहार लीला का आनन्द लिया, वह मुझे आश्रय प्रदान करें।'

मानसी-गंगा का जल सर्वाधिक पवित्र है। यहाँ स्नान करने पर प्राप्त होने वाले फल का वर्णन कौन कर सकता है?

मानसी-गंगा की महिमा का गुणगान करने के बाद श्रीराघव पंडित दोनों शिष्यों को **श्रीहरिदेव** के दर्शन करवाने ले गये। तब अत्यधिक आनन्द में उन्होंने उत्तमोत्तम परम सुख से परिपूर्ण गोवर्धन पर्वत की महिमा का गुणगान किया। मथुरा के पश्चिम में आठ कोस (सोलह मील) में स्थित श्रीगोवर्धन के मात्र दर्शन ही जीव को भौतिक कष्ट से मुक्ति प्रदान कर देते हैं। जो कोई भी मानसी-गंगा में स्नान करता है, श्रीहरिदेव के दर्शन करता है और श्रीगोवर्धन की परिक्रमा लगाता है वह इस भौतिक संसार में आवागमन के चक्र में पड़ा नहीं रहता।

गिरि गोवर्धन

गोवर्धन पर्वत श्रीकृष्ण को असीम सुख देता है, जिस पर्वत को इन्द्र के मान का मर्दन करने और ब्रजवासियों की रक्षा के लिये प्रभु ने अपने बाँयें हाथ से उठा लिया था।

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। 'मथुरा के दो योजन पश्चिम में गोवर्धन नाम से बहुत ही पावन स्थान है। जो भी इस अन्न-कूट नामक स्थान की परिक्रमा लगाता है वह कभी इस भौतिक संसार में लौटकर नहीं आता है। हे देवी, मैं अब आपको इस स्थान के बारे में बताऊँगा। मानसी-गंगा में स्नान के बाद, गोवर्धन पर्वत पर श्रीहरिदेव के दर्शन करने के बाद और अन्न-कूट की परिक्रमा लगाने

के बाद कौन-सा हृदय अप्रसन्न रह सकता है?' इन्द्र की घनघोर वर्षा से पीड़ित गायों को बचाने के लिये मैंने गोवर्धन पर्वत को उठाया था।'

स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में यह वर्णन है 'गोवर्धन पर्वत सर्वोच्च शक्तिशाली भगवान् का अवतार है। जब भगवान् ने पर्वत को उठाया तो ब्रजवासीगण इन्द्र की वर्षा से बच गये थे। भगवान् श्रीविष्णु सदैव गोवर्धन पर्वत पर निवास करते हैं। ब्रह्मा, लक्ष्मी और शिव भी यहाँ निवास करते हैं। इसमें कोई संशय नहीं है।'

आदि वाराह पुराण में यह वर्णन है। 'श्रीहरिदेव के श्रीविग्रह के दर्शन करने के बाद और गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा करने पर जीव को एक राजसूय और एक अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है। इस बात में कोई संदेह नहीं है।'

बलदेव भक्त ब्राह्मण

राघव पंडित ने तब एक सुन्दर कथा सुनाई। 'हे श्रीनिवास, एक ब्राह्मण गोवर्धन पर्वत के निकट रहता था जिसे हर कोई जानता था। वह सदैव भगवान् बलराम के प्रेम में अभिभूत रहता था और उनका मन उनके चरित्र के विचारों में ही मग्न रहता था। उसे विश्वास था कि एक दिवस करुणामय श्रीबलदेव उसे दर्शन जरूर देंगे और इस कारण से वे सदैव गोवर्धन पर्वत के आस-पास विचरण करते रहते थे। कोई भी उस ब्राह्मण के सौभाग्य का वर्णन नहीं कर सकता जिसे ज्ञात हुआ कि श्रीबलदेव उसे दर्शन देंगे।'

श्रीनित्यानन्द का गिरिराज दर्शन

अपने इस भक्त की मात्र कामना पूर्ति के लिये श्रीनित्यानन्द गोवर्धन पर्वत की तीर्थ यात्रा पर गये। श्रीनित्यानन्द निर्जन स्थान पर वास करते थे पर जो भी उनके दिव्य तन को देखता वह आश्चर्यचकित रह जाता था क्योंकि उनकी सुन्दरता कामदेव को भी लज्जित कर रही थी।

जब ब्राह्मण ने श्रीनित्यानन्द को देखा तो आश्चर्यचकित होकर सोचा कि यह अवधूत कहाँ से आया है। श्रीनित्यानन्द की प्रभा देख कर वह समझ सकते थे कि वह कोई साधारण मनुष्य नहीं। ब्राह्मण बहुत से पदार्थ जैसे दही, दूध, पनीर और मक्खन लेकर श्रीनित्यानन्द के सम्मुख उपस्थित हुआ। प्रणाम करने के बाद उन्होंने कहा। 'हे अवधूत कृपया मेरी भेंट स्वीकार कीजिये। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप अपनी करुणा मुझ पर बरसाइये ताकि मैं श्रीरोहिणी-नन्दन के दर्शन कर सकूँ।'

यह शब्द सुनकर श्रीनित्यानन्द प्रभु मुस्कुरा दिये और अत्यधिक आनन्द के साथ ब्राह्मण द्वारा निवेदित भेंट स्वीकार कर ली। तब ब्राह्मण ने भगवान् का

प्रसाद पाया और घर वापिस लौट आया जहाँ उसने महा-प्रसाद का सत्कार किया और भगवद् प्रेम में बावला सा हो गया।

श्रीनित्यानन्द ही श्रीबलराम

ब्राह्मण पुनः जाकर भगवान् नित्यानन्द से मिलने में सक्षम नहीं था और जैसे ही सांझ ढली वह गहरी निद्रा में सो गया। उस रात प्रभु श्रीनित्यानन्द उस सौभाग्यशाली ब्राह्मण के स्वप्न में आये। श्रीनित्यानन्द प्रभु को देखकर ब्राह्मण अत्यधिक प्रसन्न हो गया। अगले ही क्षण श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपने भगवान् श्रीबलदेव के रूप को प्रकट कर दिया और ब्राह्मण उनके चरणकमलों में लोटपोट हो गया।

भगवान् बलदेव ने सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित करते हुए कितने अद्भुत रूप को प्रदर्शित किया! विभिन्न आभूषणों से सज्जित उनके अंग-अंग जगमगा रहे थे। ब्राह्मण को आशीर्वाद देकर भगवान् अन्तर्धान हो गये और ब्राह्मण की नींद टूट गयी। वह बैचेन हो उठे और उस स्थान पर वापिस जाने लगे जहाँ वे नित्यानन्द प्रभु से मिले थे। उस समय उन्हें एक स्वर सुनाई दिया जो उनसे कह रहा था कि धैर्य रखो और प्रातःकाल तक प्रतीक्षा करो। उन्होंने मान लिया कि अंततः उनकी कामना पूर्ण हो गयी। उन्होंने सोचा। 'अब जब मैंने भगवान् को प्राप्त कर लिया है, तो मैं उन्हें नहीं छोडूँगा। मैं उनके चरणों में गिरकर सर्वस्व अर्पित कर दूँगा। जब रात्रि छँट जायेगी तो मैं एक स्वर्णकार से आभूषण बनवाकर उन्हें प्रभु को निवेदित करूँगा।' इस प्रकार सोचते हुए पुनः निद्रा ने उन्हें घेर लिया।

पुनः ब्राह्मण के स्वप्न में नित्यानन्द प्रभु आये। प्रभु को अद्भुत आभूषणों से सुसज्जित देख ब्राह्मण श्रेष्ठ ने अनेक प्रार्थनाऐं कीं। 'पूर्व की भांति प्रभु के अन्तर्धान होने पर ब्राह्मण की निद्रा टूट गयी।'

जल्दी ही प्रातःकाल होने पर ब्राह्मण श्रीनित्यानन्द प्रभु के सम्मुख गये। पूर्व रात्रि के स्वप्न का सम्पूर्ण वृत्तांत वर्णन कर दिया। प्रभु मन्द-मन्द मुस्कुराये और ब्राह्मण का हाथ पकड़ते हुए उन्हें सब प्रकार के सत्य के बारे में निर्देशित करने लगे। ब्राह्मण ने प्रभु से पूछा। 'ये आभूषण किसने बनाये, जो मैंने अपने स्वप्न में देखे?' भगवान् जो कि अपने भक्तों की कामनाओं के वश में होते हैं, उन्होंने उत्तर दिया, 'एक दिवस मैं वैसा ही सुशोभित होऊँगा जैसा तुमने देखा था। अभी के लिये इस गोवर्धन शिला को लो और इसे स्वर्ण से ढक दो। तब मैं इसे अपने कण्ठ में धारण करुँगा।'

ब्राह्मण ने आदेश का पालन किया और अवधूत श्रेष्ठ ने वह शिला लेकर अपने कण्ठ में धारण की। भगवान् ब्रह्मा के लिये भी ऐसी लीलाऐं गोपनीय हैं। नित्यानन्द प्रभु ने ब्राह्मण को इस वृत्तांत के बारे में किसी को भी बताने के लिये

मना कर दिया। यद्यपि अपने भक्त के अनुरक्ति भाव में बंधकर आपने कुछ दिवस वहाँ वास किया। यह उत्तमोत्तम अनुरक्ति मात्र इस स्थान के दर्शन करके प्राप्त की जा सकती है।

चक्रतीर्थ

अपनी यात्रा में आगे बढ़ते हुऐ श्रीराघव पंडित रुके और बोले। 'हे श्रीनिवास यहाँ **चक्रतीर्थ** हैं, जो किसी की भी सभी कामनाऐं पूर्ण कर सकता है। गोवर्धन में चक्रतीर्थ बहुत विख्यात है। श्रीराधा-कृष्ण ने यहाँ अपनी झूलन लीला की थी।'

ब्रज-विलास स्तव में इसका वर्णन है। 'संकर्षण-कुण्ड, ब्रह्म-कुण्ड, कदम्ब-खण्डी, कुसुम-सरोवर, रुद्र-कुण्ड, अप्सरा-कुण्ड, गौरी-तीर्थ, चन्द्र-सरोवर, दो अन्य पाप-मोचन कुण्ड, मल्हार-कुण्ड, अरिष्ट-कुण्ड और इन्द्र-ध्वज-वेदी आदि अन्य पवित्र स्थल जैसे चक्र-तीर्थ, गोवर्धन पर्वत और रत्न सिंहासन उत्कृष्ट स्थल प्रकट हुए। मुझे इन स्थलों को साष्टांग प्रणामपूर्वक वन्दन करने दीजिए।

बसंत के समय गोपियाँ श्री श्रीगन्धर्व-गिरधारी को एक झूले पर ले जाती हैं। दिव्य युगल के मुखारविन्द इस झूलन लीला के अमृत का आनन्द लेते हुए प्रसन्नता से खिल उठते हैं। गोविन्द-स्थल जहाँ इन दिव्य युगल ने ये लीलाऐं रचाईं, उसकी मैं आराधना करता हूँ।

श्रीराघव पंडित बोलते रहे कि 'हे श्रीनिवास, चक्र तीर्थ के आदेश पर श्रीसनातन गोस्वामी ने इस स्थान पर वास किया था।'

चक्रतीर्थ पर श्री सनातन

यहाँ वन में उनकी कुटिया है। प्रतिदिवस दृढ़ निश्चय के साथ वे बारह कोस (चौबीस मील) की गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा लगाते थे।

सनातन गोस्वामी को वृद्ध अवस्था के कारण चलने में होने वाली कठिनाई को देख भगवान् गोपीनाथ उनके सम्मुख एक ग्वाल बाल के रूप प्रकट हुए। सनातन गोस्वामी नेत्रों में अश्रु लिये बालक से अपनी थकी हुई अवस्था छिपाने का प्रयत्न करने लगे। श्रीगोपीनाथ ने मृदु स्वर में सनातन से कहा। 'इस वृद्ध आयु में तुम्हें इतना कष्ट नहीं उठाना चाहिये। आदरणीय बाबा! आप मेरी सलाह मानिये।' सनातन गोस्वामी ने कहा, 'जो तुम कहोगे वो मैं निश्चित ही करुँगा।' तब वह बालक गोवर्धन पर्वत पर चढ़कर अपने चरण चिह्न की छाप वाली एक शिला ले आया। मृदु स्वर में उसने सनातन गोस्वामी से निवेदन किया कि वे भगवान् श्रीकृष्ण के चरण-चिह्न छाप वाली इस शिला को स्वीकार करें। 'आज से केवल इस शिला की परिक्रमा करो और तुम्हारी नित्य की परिक्रमा की

प्रतिज्ञा की पूर्ति होगी' यह कहकर उन्होंने शिला श्रीसनातन गोस्वामी को दी और अन्तर्धान हो गये।

श्रीसनातन गोस्वामी बालक को ज्यादा देर न देख पाये तो बैचेन हो उठे। श्रीसनातन गोस्वामी की अवस्था देखकर श्रीगोपीनाथजी ने बहुत स्नेह से अपनी पहचान प्रकट कर दी। अपने ही अश्रुओं में भीगे, लज्जित भाव से श्रीसनातन गोस्वामी सोचने लगे। 'मैंने अपने प्रभु को क्यों नहीं पहचाना?' इस प्रकार श्रीसनातन गोस्वामी श्रीब्रजेन्द्रनन्दन के तीव्र प्रेम के प्रभाव में मग्न रहने लगे जो कि श्रीवृन्दावन के पुष्पों लताओं में क्रीड़ा करते हैं।

इसी स्थान पर श्रीमती राधिका अपनी सखियों के साथ आयीं और नौका लेकर इस घाट से मानसी-गंगा को पार किया। इस प्रकार श्रीललिता सखी के साथ सभी सखियों की कामना श्रीमती राधारानी द्वारा तृप्त की गई।

श्रीस्तवावली के श्रीगोवर्धन-आश्रयदशक में बताया गया है। गोवर्धन पर्वत का आश्रय 'कौन नहीं लेगा, जहाँ पर दिव्य युगल ने मानसी-गंगा में नौका-विहार लीला का आनन्द लिया था?' मानसी-गंगा में नाविक की भूमिका श्रीकृष्ण ने निभाई और अति सुन्दर राधारानी को अपनी नाव में ले गये। उस समय श्रीराधारानी एक भयंकर तूफान से भयभीत हो गई और श्रीकृष्ण से उन्हें बचाने को कहा।' श्रीकृष्ण प्रणयशील कामना की पूर्ति की शर्त पर मान गये।

श्रीराघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा। 'यह बहुत चित्ताकर्षक **सोंकराई** ग्राम है, जहाँ सखियों ने श्रीकृष्ण को प्रतिज्ञा दिलवाई। ब्रजभाषा में सों का अर्थ है कसम या प्रतिज्ञा। सों कराई से बना सोंकराई। प्रतिज्ञा लेने के बाद श्रीकृष्ण ने बार-बार कहा कि वह श्रीमती राधिका रानी के बिना कुछ भी जिम्मेदारी नहीं ले सकते। और हे श्रीनिवास, यह **सखिस्थली** ग्राम है जहाँ चन्द्रावली सखी रहती हैं। यह **सखीखरा** भी कहलाता है। श्रीउद्धव यहाँ बैठे थे और उन्होंने गोपियों को श्रीकृष्ण की द्वारिका में गतिविधियों के बारे में बताया था। गोवर्धन के निकट इस स्थल पर श्रीकृष्ण ने आमोद-प्रमोद में ग्वाल बालकों के साथ अनेक लीलाओं का आनन्द लिया था। केवल मात्र दोनों भाई श्रीकृष्ण और श्रीबलराम यहाँ अपने मित्रों से घिरे बैठे हैं।'

इस प्रकार बोलते हुए श्रीराघव पंडित उल्लसित भावों को हृदय में संजोये श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास को अपने साथ श्रीराधा-कुण्ड के किनारे ले गये। स्नान के उपरान्त उन्होंने यह कहा कि **गोविन्द घाट** भगवान् श्रीगोविन्द को अतिप्रिय है।

श्रीजी की वेणी सर्प जैसी

उसी दिवस बाद में, श्रीराघव पंडित ने कहा, 'हे श्रीनिवास, मैं अब इस वृक्ष के नीचे जो अद्भुत लीला हुई, उसका वर्णन करुँगा। एक दिवस श्रीसनातन

गोस्वामी श्रीरूप गोस्वामी और श्रीरघुनाथ गोस्वामी के दर्शन करने गोवर्धन से यहाँ आये। श्रील रूप गोस्वामी एक पद की रचना कर रहे थे जिसमें वे राधारानी की केश लटों (वेणी) की तुलना काले सांप से कर रहे थे। जब श्रीसनातन गोस्वामी ने इसे पढ़ा तो पूछा कि क्या यह उत्प्रेक्षा उपयुक्त है?'

यह कहकर कुण्ड में स्नान करने लगे तो देखते हैं एक बालिका की चुटिया पर नाग चढ़ रहा है, वे विस्मित होकर चिल्लाने लगे और कन्या को चेतावनी देने का प्रयास करने लगे। कन्या श्रीसनातन गोस्वामी की अधीरता देखकर मुस्कुराई, चुटिया को आगे पीछे किया और अन्तर्धान हो गई। श्रीसनातन गोस्वामी इस घटना से अभिभूत हो गये। बाह्य होने पर वे श्रीरूप गोस्वामी के पास लौट आये और बताया। 'तुमने जो भी लिखा है वह बिलकुल सही है!'

इस प्रकार श्रीरूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी के भावों को समझ गये। उत्तमोत्तम परमानन्द का अनुभव करते हुए तब श्रीरूप गोस्वामी गोवर्धन लौट आये।

श्रीराघव पंडित बोलते रहे। 'श्रीरूप गोस्वामी श्रीवृन्दावन में रह रहे थे, परन्तु यहाँ वे एक कारण से आये थे। अब मैं बताऊँगा। एक दिवस श्रीरूप गोस्वामी ने अपना नाटक 'ललित माधव' श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी को दिया। यह ग्रन्थ विरह में प्रेम के गहन भाव का वर्णन करता है। इस ग्रन्थ को पढ़कर श्रीरघुनाथ दास दिन-रात आवेश में रोने लगे और वियोग से विक्षिप्त से हो गये। कभी-कभी वे ग्रन्थ को छोड़ कहीं दूर चले जाते थे और कभी ग्रन्थ को अपनी छाती से लगाये भूमि पर जा गिरते। जो लोग श्रीरघुनाथ दास को अपनी चेतना खोते हुए भिन्न-भिन्न स्थितियों के उत्साह को देखते वे चिंतित और चकित हो जाते।'

श्रीरघुनाथ दास की स्थिति के उपचार के बारे में सोचते हुए श्रीरूप ने शीघ्रता से 'दान-केलि-कौमुदी' का लेखन पूर्ण किया। तब श्रीरूप ने श्रीरघुनाथ दास को नवीन ग्रन्थ दिया और निवेदन किया कि इसके विषय-वस्तु का रसास्वादन करें और ललित-माधव को सम्पादन के लिये वापिस लौटा दें। यद्यपि श्रीरघुनाथ दास ललित-माधव को लौटाने के अनिच्छुक थे पर जब उन्हें पता चला कि रूप उसका सम्पादन करना चाहते हैं तो वे नरम पड़ गये।

'दान-केलि-कौमुदी' को लेकर और पढ़कर श्रीरघुनाथ दास ने अलग तरह की विषय-वस्तु के परमानन्द का रसास्वादन किया और इस प्रकार प्रेम के सागर में विलीन हो.गये। हे श्रीनिवास, मैं श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी और श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की गतिविधियों के बारे में क्या कह सकता हूँ?

इस विवरण को समाप्त करने के बाद श्रीराघव पंडित दोनों का मार्गदर्शन करते हुए प्रफुल्लित अनुभव कर रहे थे। शीघ्र ही उन्होंने श्रीराधा-कुण्ड के निकट सभी स्थानों की यात्रा पूर्ण कर ली। तब श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास

आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को **नीम-ग्राम** नामक स्थान दिखाया। तब गोवर्धन से विदा लेकर उन सभी ने भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना की जिन्हें वे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय समझते थे।

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'उन्हें अपने प्राणों से अधिक प्रिय जानकर वात्सल्य से परिपूर्ण एक वृद्ध गोपिका भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों के पसीने की एक बूँद की भी दीर्घकाल तक आराधना करती है, उनके मस्तक को चूमती हैं जो कि घुंघराले केशों से सुसज्जित हैं।' मैं उन गोपियों की चरणरज की आराधना करता हूँ।

पाटल आदि ग्राम

श्रीराघव पंडित ने कहा 'यह पाटल ग्राम है। क्रीड़ा में श्रीमती राधारानी और उनकी सखियों ने इस स्थान पर गुलाबी गुलाब के पुष्प चुने (पाटल अर्थात् गुलाब)। यहाँ पर **डेरावली ग्राम** है। शष्टिकरा से आते हुए नन्द जी नन्दीश्वर जाते हुए यहाँ रुके थे। सामने की ओर देखो यह कुंज **नवग्राम** कहलाता है। यह राधा-कुण्ड की सीमा पर स्थित है। वर्तमान में लोग इसे **कुन्जरा** कहते हैं और यह श्रीराधा-कृष्ण की अद्वितीय लीलाओं का स्थल है। यहाँ **सूर्य-कुण्ड-ग्राम** है। केवल मात्र सूर्यदेव के श्रीविग्रह का अवलोकन करो जो इस वन के भीतर स्थित सूर्य मन्दिर में स्थित है। अत्यधिक आनन्द में श्रीमती राधारानी अपनी सखियों के साथ सूर्यदेव की आराधना करने आती थीं। कृष्ण स्वयं पुजारी बनते थे और पूजा करने का आनन्द प्राप्त करते थे। सूर्यदेव का ये श्रीविग्रह अति करुणामय है और वे श्रीकृष्ण प्रेम प्रदान करते हैं। उनकी महिमा का गुणगान कौन कर सकता है और उनकी आराधना कौन नहीं करेगा?

मैं भगवान् श्रीसूर्यदेव की आराधना करता हूँ जो यमुना महारानी के पिता और सभी रोगों के विनाशकर्ता हैं। वे भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों के प्रति आसक्ति प्रदान करते हैं और इस कारण वे सभी प्रकार की शुभता के आधार हैं।

सामने देखो, केउनाई नाम का नगर जहाँ घनश्याम, श्रीराधा की अनुपस्थिति में अधीर हो गये थे। श्रीकृष्ण ने राधा के सेवक से पूछा कि राधा यहाँ (केउनाई) क्यों नहीं आईं? इस कारण इस स्थान का नाम केउनई पड़ा और बाद में यह **कौन्हई** नाम से जाना जाने लगा। यहाँ देखो भद्रा ग्राम जहाँ **भदायर** यूथेश्वरी ने लीलाऐं रचाईं। यह **मगहेरा** ग्राम है। यहाँ हर कोई उस मार्ग को देखता है जिस पर श्रीकृष्ण ने यात्रा की। लोग उनके दर्शनों के लिये कितने व्याकुल होते थे, इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। वर्तमान में यह **मघेरा** के नाम से जाना जाता है।

इस प्रकार भगवान् की कुछ अन्य लीला स्थलियों की यात्रा कर तीनों आनन्द के भाव में श्रीराधा-कुण्ड वापिस लौट आये। जो कोई भी इन स्थानों की यात्रा का वर्णन सुनेगा या यात्रा करेगा वह सरलता से कठिन परिस्थितियों से

मुक्त हो जायेगा। तब श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास के साथ सुबह होने तक कृष्ण-कथा की चर्चा करते हुए राधा-कुण्ड के तट पर रात्रि व्यतीत की।

गांठौली

अगले दिवस अपनी गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा जारी रखते हुए तीनों प्रसन्न भाव में **गांठौली** ग्राम में आ गए। राघव पंडित ने प्रेम भरी वाणी से श्रीनिवास आचार्य को समझाया कि गांठौली नाम कैसे पड़ा।

होली खेलते हुए श्रीराधा और श्रीकृष्ण एक सिंहासन पर बैठे थे। सखियों ने अवसर का लाभ उठाकर गोपनीय विधि से युगल जोड़ी के वस्त्र में गाँठ बांध दी। जब श्रीराधा और श्रीकृष्ण खड़े हुए तो उन्होंने पाया कि उनके वस्त्रों में गाँठ लगी हैं तो सखियों के परिहास का पात्र बनने के कारण वे लज्जित अनुभव करने लगे। इस कारण से नगर का नाम गन्थली **(गांठौली)** पड़ा। यह लाल रंग की धूलि लोगों द्वारा बसंत ऋतु में गुलाल-कुण्ड में दिखाई देती है।

राघव पंडित द्वारा इस कथा के कहे जाने के बाद, तीनों गोपाल जी के दर्शन करने गये। श्रीगोपाल के स्वरूप को देखकर तीनों प्रेम में उन्मत्त हो अधीर हो गये।

श्रीविट्ठलनाथ द्वारा सेवित भगवान् ही वही गोपाल के श्रीविग्रह हैं जिन्हें देखने के उत्सुक श्रीचैतन्य महाप्रभु थे। श्रीविट्ठलनाथ, श्रीवल्लभाचार्य के सुपुत्र थे। उनके प्रेम भाव अवर्णनीय थे। कभी-कभी गोपाल गन्थुली ग्राम में रहते, इस प्रकार श्रीगोपाल अपने भक्तों की कामना पूर्ण करते थे।

गोपाल पर्वत से नीचे पधारे

संन्यासियों के चूड़ामणि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने यहाँ के पवित्र स्थलों की तीर्थयात्रा कर इस धरा को गौरवान्वित कर दिया। वह सौभाग्यशाली है जिसने उनकी लीलाओं का दर्शन करते हुए श्रीमथुरा, श्रीवृन्दावन, श्रीगोवर्धन और श्रीराधा-कुण्ड के सभी तीर्थों के दर्शन किए हों। प्रभु के मन में गोपाल के श्रीविग्रह के दर्शनों की प्रबल कामना थी यद्यपि एक भक्त के रूप में उन्होंने अनुभव किया कि वे गोवर्धन पर्वत पर नहीं चढ़ सकते। उस समय कुछ छल के बहाने गोपाल जी **गन्थुली** ग्राम में आए। गोपाल के दर्शनों के इस अवसर का लाभ उठाकर उल्लसित होकर पूर्णतः कीर्तन और नृत्य में तल्लीन हो गये। प्रभु की अद्भुत प्रेममय अभिव्यक्ति को निहार कर हर कोई अपना धैर्य खो रहा था।

इस समय गोपाल की सेवा श्रीमाधवेन्द्र पुरी के दो शिष्यों की देखरेख में हो रही थी। श्रीमाधवेन्द्र पुरी का अनुग्रह प्राप्त कर ये गौड़ीय ब्राह्मण पूर्णतः विरक्त हो चुके थे और हमेशा प्रभु प्रेम में तल्लीन रहते थे। इससे अधिक हम

और क्या कह सकते हैं? कुछ दिवस उनके दर्शन न होने पर लोग चकित होते थे कि कौन सौभाग्यशाली श्रीगोपाल को अपनी सेवाऐं दे सकता है।

श्रीरघुनाथ दास और अन्य भक्तों से सलाह लेकर श्रीविठ्ठलनाथ को गोपाल जी की सेवा की जिम्मेदारी सौंपी गई। उनके पिता श्रीवल्लभाचार्य जी के देहान्त के बाद श्रीविठ्ठलनाथ ने मथुरा में एकांत में कुछ समय व्यतीत किया। श्रीगौरचन्द्र की लीलाओं से अभिभूत वे सदा सावधानी से श्रीगोपाल की सेवा में मग्न रहते। इस प्रकार श्रीराघव पंडित ने श्रीगोपाल के गुणों का वर्णन किया और तीनों प्रसन्नतापूर्वक गांठौली से आगे बढ़ चले।

अनेकानेक ब्रज गाँव

कुछ दूर चलने के बाद श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य को बताया, 'यहाँ **रेहेजा** नगर है। यहाँ पर देवराज इन्द्र को अपने अपराध के बाद बहुत ग्लानि हुई थी और सुरभि के साथ वे श्रीकृष्ण की शरण में आये थे। एक अन्य प्रबल लीला स्थान '**देवशीर्ष-स्थान-कुण्ड**' नामक सुन्दर स्थान यहाँ स्थित है। देवताओं नेह्लप्रसन्नतापूर्वक यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण को अपनी प्रार्थनाऐं अर्पित की थीं जब वे अपनी गऊओं को झुण्ड में लेकर अपने मित्रों के साथ यहाँ आते थे। यहाँ पर अत्यधिक मनोहर **मुनिशीर्ष-स्थान-कुण्ड** को देखो जहाँ मुनियों ने तप करके श्रीकृष्ण को प्राप्त किया था। इन स्थानों पर श्रीकृष्ण और श्रीबलराम ने अपने मित्रों के साथ गऊओं की देखभाल करते हुए विविध लीलाऐं रचाईं।'

यह **प्रमोदना** ग्राम है जहाँ श्रीकृष्ण ने खेल-खेल में ब्रज की महिलाओं को आनन्द (प्रमोद) प्रदान किया था। इस कारण से गांव का नाम प्रमोदन नाम से जाना जाता था हालांकि अब लोग इसे प्रमोदरा के नाम से जानते हैं। यह बहुत चित्ताकर्षक स्थान **सेतुकन्दरा** है। यहाँ अति कृपालु **आदि बद्री-नारायण** के दर्शन करो। उनकी सेवा अद्वितीय विधि से वनों के मध्य इस मनमोहक पर्वत पर सुगन्धित पाषाण पर होती है। श्रीकृष्ण ने श्रीनंद महाराज और अन्य ग्वालों को यहाँ लाकर भगवान् नारायण के दर्शन करवा कर उनको विलाप से मुक्त किया था।

आगे पावन **कदम्ब कानन** के दर्शन करो जहाँ श्रीराधा और श्रीकृष्ण ने सखियों के साथ अनेकों लीलाओं का आनन्द लिया था। श्रावण मास के दौरान उन्होंने अपनी झूलन लीला का आनन्द लिया।

यह नगर **इन्द्रोली** कहलाता है। इस स्थान पर इन्द्र ने श्रीकृष्ण का ध्यान किया था। हे श्रीनिवास **कयोनारो-ग्राम** को देखो जहाँ कण्व मुनि ने तप किया था। अब वनों में सर्वोत्तम **काम्यवन** का अवलोकन करो। जो भी यहाँ आता है वह विष्णुलोक में पूजित हो जाता है।

काम्यवन-कामां

आदि वाराह पुराण में वर्णन हैं। 'चौथा वन है काम्यवन जो सबसे उत्तम है। हे देवी, जो यहाँ की यात्रा करेगा वह मेरे आवास में गौरवान्वित होगा।'

काम्यवन सभी कामनाओं को पूर्ण करता है। यहाँ स्नान करने पर कोई भी सभी कठिनाईयों से मुक्त हो सकता है। स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड में यह बताया है। 'काम्यवन जहाँ प्रभु श्रीहरि अपनी बाल्यावस्था में रहे थे। यहाँ स्नान करने मात्र से ही जीव की सभी कामनाऐं पूर्ण होती हैं।'

श्रीराघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा। 'श्रीकृष्ण ने यहाँ अनेक अद्भुत लीलाऐं रचाईं। कई कुण्डों का मात्र अवलोकन करो। हे श्रीनिवास, यहाँ **विष्णु सिंहासन** और **चरण-कुण्ड** है जहाँ श्रीकृष्ण ने अपने चरण धोये थे। मैं कैसे इन स्थानों की महिमा का गुणगान करूँ जबकि पितामह ब्रह्मा भी इनकी असीमित महिमा को नहीं समझ पाये।'

भगवान् शिव के श्रीविग्रह के दर्शन करो जोकि **कामेश्वर** के नाम से जाने जाते है और श्रीगरुड़ जी का अत्यधिक सुन्दर बैठक स्थान है।

यहाँ एक **धर्म-कुण्ड** है जहाँ भगवान् नारायण ने धर्म के रूप में अवर्णनीय लीलाऐं रचाईं थीं। मात्र इस चबूतरे के दर्शन करो जो **विशोक** के नाम से जाना जाता है और यहाँ **पंच-पांडव-कुण्ड** है।

विमलकुण्ड

हर कोई इस स्थान को **मणि-कर्णिका** के नाम से जानता है क्योंकि भगवान् विश्वनाथ (भगवान् शिव) ने अपनी क्षमताओं से इस स्थान को विभूषित किया था। यहाँ **विमल-कुण्ड** है। यहाँ पर स्नान करने से किसी के भी सारे पाप नष्ट होते हैं। जो यहाँ अपने शरीर का त्याग करता है वह विष्णुलोक को जाता है।

आदि वाराह पुराण में यह बताया है। 'विमल-कुण्ड में स्नान करने से कोई भी सभी पापों से मुक्त होता है और शरीर का त्याग करने के बाद मेरे सर्वोच्च धाम को जाता है।

विमल-कुण्ड की महिमा का बखान पर्याप्त रूप से नहीं किया जा सकता। विमलादेवी इस पावन स्थान पर अनन्तकाल से रह रही हैं। यहाँ पर सर्वोच्च पावन **यशोदा-कुण्ड** है जहाँ उल्लसित हो श्रीकृष्ण अपनी गऊओं को चराते थे। देखो यह **नारद-कुण्ड** है जहाँ नारद मुनि ने श्रीकृष्ण की लीलाओं का गान कर अपना धैर्य खो दिया था। **कामना-कुण्ड** के बारे में सब को पता है और ये किसी की भी हृदयस्थ कामनाऐं पूर्ण करता है। यहाँ **सेतुबन्ध-कुण्ड** है जहाँ श्रीकृष्ण ने (श्रीराम के रूप में) सेतुबन्धन किया था।

यह स्थान **लुकलुकानि-मीचली** के नाम से विख्यात है जहाँ पर श्रीराधा-कृष्ण ने अनेक लीलाऐं रचायीं। मीच ली अर्थात् नेत्र बन्द। जैसे-जैसे वे इस स्थान पर छुपन-छुपाई खेलते, उनकी प्रसन्नता बढ़ती जाती। यहाँ पर इस अति घने और अन्धकारमय वन के बीच रमणीय लुकलुकानि-मीचली-कुण्ड स्थित है। निर्जन और रमणीय **काशी-कुण्ड**, गया, प्रयाग, पुष्कर, गोमती एवं **द्वारका-कुण्ड** के दर्शन करो। तप-कुण्ड पर मुनियों ने तपस्या की थी। ध्यान-कुण्ड पर श्रीकृष्ण ने श्रीराधा जी का ध्यान किया था। यहाँ पर पर्वत की चोटी पर श्रीकृष्ण के श्रीचरण-चिह्न हैं। यहाँ **क्रीड़ा-कुण्ड** में श्रीकृष्ण ने जल में क्रीड़ा की थी।

यहाँ पर पाँच रमणीय **गोप-कुण्ड** हैं जो कि श्रीदामा के कुण्ड से आरम्भ होते हैं। इस अति सुन्दर **घोषराणी-कुण्ड** के दर्शन करो। घोषराणी ग्वालों के राजा की पुत्री है। यहाँ उसने अपनी पुत्री के विवाह का प्रबन्ध किया था। **विह्वल-कुण्ड** के दर्शन करो जहाँ श्रीराधा, श्रीकृष्ण की मुरली की धुन सुनकर उल्लसित हो गयी थीं। **श्याम-कुण्ड** पर आनन्द के भण्डार श्रीश्यामसुन्दर ने श्रीराधारानी के यात्रा मार्ग का अवलोकन किया था। यहाँ पर **ललिता-कुण्ड** और **विशाखा-कुण्ड** हैं जहाँ ललिता और विशाखा की कामनाओं को पूर्णरूपेण तृप्त किया था। यहाँ **मान-कुण्ड** के दर्शन करो। श्रीकृष्ण ने यहाँ अपने हास-परिहास से श्रीराधारानी के क्रोध को शांत किया था। यहाँ **मोहिनी-कुण्ड** है जहाँ श्रीकृष्ण ने अपने उसी मोहिनी रूप के दर्शन करवाये जो पूर्व में देवताओं को अमृत बांटते हुए दर्शन दिए थे। मोहिनी-कुण्ड, **गौदोहनी-स्थान** (वह स्थान जहाँ गौओं से दुग्ध का दोहन किया जाता है) और **बलभद्र कुण्ड** जो भगवान् बलराम द्वारा बनाया गया था, उसके दर्शन करो।

फिसलनी शिला

चन्द्रसेन पर्वत पर **फिसलनी शिला** है। इस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण अपने मित्रों के साथ खेलते थे। शिला पर बैठकर अपने शरीर को झुकाकर वे बार-बार पत्थरों से लुढ़क कर नीचे आते। **गोपिका रमण काम सरोवर** के दर्शन करो। कौन इन लीलाओं के चित्ताकर्षक स्थलों का वर्णन कर सकता है?

स्कन्द पुराण के मथुरा खण्ड के अनुसार। 'इस स्थान पर (काम्यवन में) गोपिका रमण सरोवर है जो **काम सरोवर** के नाम से भी जाना जाता है और यहाँ अन्य कई सरोवर व सहस्रों पावन स्थल हैं।'

'**सुरभि-कुण्ड**' के दर्शन मात्र करो जहाँ श्रीकृष्ण ने अपने मित्रों और गायों के साथ लीलाओं का आनन्द लिया था। यहाँ पर **चतुर्भुज-कुण्ड** है। **भोजन-स्थली** के दर्शन करो, जहाँ भगवान् ने ग्वाल सखाओं के संग बैठकर भोजन किया था। **बाजनी शिला** के दर्शन करो जो ठोकर मारने पर विविध

ध्वनियां उत्पन्न करती है, जिसका हर कोई आनन्द लेता है। यहाँ **भगवान् परशुराम** का स्थान है जहाँ भगवान् नारायण सिंहासन पर विराजमान हुए थे। यहाँ पर **सन्तन-कुण्ड, वेद-कुण्ड, दामोदर-कुण्ड, गन्धर्व-कुण्ड, पृथूदक-कुण्ड और अयोध्या कुण्ड** है। साथ ही यहाँ पर **श्रीनरसिंह-कुण्ड, अर्घ्य-कुण्ड** और आनन्ददायक **मधुसूदन-कुण्ड** हैं। **रोहिणी-कुण्ड, गोपाल-कुण्ड गोदावरी** और प्रिय **देवकी-कुण्ड** के भी दर्शन करो। **चौर्यखेला** पर्वत है जहाँ व्योमासुर ने ग्वाल बालकों को छिपा लिया था तथा बाद में श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया। **प्रह्लाद-कुण्ड** और **लक्ष्मी-कुण्ड** के दर्शन करो। काम्यवन में बहुत सारे पवित्र स्थल हैं जिनमें से सबका वर्णन करना संभव नहीं। इस पर्वत के शिखर पर श्रीकृष्ण का क्रीड़ा-स्थल है। चारों ओर का दृश्य देखने वाले को मंत्रमुग्ध कर देता है।

हे श्रीनिवास, धुलाउड़ा ग्राम के दर्शन करो। जहाँ का आकाश गौओं के चलने से उड़ती धूल से भर गया है (धूल-उड़ी)। अगला गांव **उद्धव ग्राम** कहलाता है। नन्द महाराज के घर जाते समय उद्धव जी यहाँ रुके थे। यह अति सुन्दर **अटोर-ग्राम** बहुत ही शांत और निर्जन है। कृष्ण यहाँ अष्ट पहर तक खेल में मग्न हो गये थे (अष्ट प्रहर या चौबीस घण्टे)। **कदम्ब-खण्डी, स्वर्णहरा-ग्राम, रत्न-कुण्ड** और **चतुर्मुख** अति उत्कृष्ट स्थान हैं। कृष्ण ने स्वर्णहरा जो कि सोनर और सौनहेड़ा दोनों नामों से जाना जाता है वहाँ पर अनेक लीलाऐं कीं। इस पर्वत के चारों ओर गौचारण करते हुए श्रीकृष्ण को जो आनन्द प्राप्त हुआ वह अवर्णनीय है।

बरसाना

यहाँ पर **वृषभानु-पुर** जो बरसाना नाम से भी जाना जाता है, स्थित है। पर्वत के निकट वृषभानु महाराज का निवास है। इस मोहक पर्वत पर ब्रजेन्द्रनन्दन ने औरों से छिपकर 'दान-लीला' रचायी थी। यहाँ राधारानी ने बहाने से प्रदर्शित क्रोध को शांत किया था और यहाँ श्रीकृष्ण अपनी विविध लीलाऐं रचा कर मस्त हो गये थे। दो पर्वतों के मध्य इस संकरे मार्ग पर उन्होंने जो आनन्द प्राप्त किया वह अद्भुत है। यह स्थान **सांकरी-खोर** कहलाता है।

यहाँ पर तीन पर्वत **दान, मान और विलास** पर्वत हैं। हे श्रीनिवास, श्रीराधारानी ने अपने बाल्यकाल की लीलाओं में मग्न होकर अपनी सखियों के साथ विविध खेल खेले थे। जैसे-जैसे वे बाल्यकाल से तरुणाई को बढ़ीं, उन्हें अपनी सखियों के साथ खेलने में आनन्द प्राप्त होता था।

राघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा, 'मैं इस तमाल-कुंज के बारे में क्या कहूँ? सखियों ने यहाँ श्रीराधा और श्रीकृष्ण के मिलन का प्रबन्ध किया था। यह गांव पूर्व में चिकसौली-ग्राम कहलाता था जो अब **चिकसौली** कहलाता है

(बरसाना के निकट बरसाना-परिक्रमा मार्ग पर)। राधारानी ने बहुत निपुणता से यहाँ बहुत सुन्दर वेश धारण किया था। पर्वत पर घने जंगल का अवलोकन करो। यह उचित रूप से **गहवरवन** कहलाता है। यहाँ कई वृक्षों से घिरा **शीतल-कुण्ड** है। दोहनी-कुण्ड पर गौओं को दुहा जाता है। **डभरारो-ग्राम** वह है जहाँ श्रीमती राधारानी को देखकर कृष्ण की आँखों में अश्रु भर आये थे। डभरारो अर्थात 'अश्रुपूर्ण नेत्र'। अब यह गांव डाभारो नाम से विख्यात है। देखो यहाँ **मुक्ता-कुण्ड** है जहाँ श्रीकृष्ण से झगड़े के बाद राधारानी ने मोती की खेती की थी।

वृषभानु पुर के पूर्व में **भानुखोर** है जो कि ताजे शीतल जल से भरा है। उत्तर में **पियाला**-सरोवर है जहाँ राधा और कृष्ण ने विविध खेल रचाये थे। इस स्थान पर दिव्य युगल अपने पार्षदों के साथ पियाला वन को देखकर प्रसन्न हुए थे। यह **पीलू-खोर** है जहाँ राई और कन्नु (राधा और कृष्ण) ने पीलू फल का चयन करते हुऐ सखियों के साथ खेलों का आनन्द प्राप्त किया था। पूर्व में भानु-खोर और पीलू-खोर, भानु सरोवर और पीलू सरोवर के नाम से जाने जाते थे।

त्रिवेणी नदी

बरसाना के निकट त्रिवेणी नदी है जहाँ श्रीकृष्ण ने विविध लीलाऐं रचायी थीं जिनका मैं वर्णन नहीं कर सकता। मात्र उन सुन्दर स्थलों का दर्शन करो जहाँ श्रीकृष्ण ने लीलाऐं रचायीं। ब्रज में भिन्न-भिन्न स्थानों पर ग्राम स्थापित किये यद्यपि उसमें कुछ भुला दिये गये हैं।

यह **प्रेम सरोवर** है। हे श्रीनिवास, इस स्थान पर 'प्रेम-वैचित्य-भाव' का प्राकट्य हुआ था (प्रेम-वैचित्य वह शब्द है जिससे प्रेम की अधिकता को दर्शाया जाता है जो विरह के भय के दु:ख को दर्शाता है, यद्यपि प्रेमी उपस्थित होता है) यहाँ **विह्वल-कुण्ड** के दर्शन करो जहाँ श्रीकृष्ण, श्रीराधा का नाम सुनकर अभिभूत हो गये थे। यह **संकेत-कुंज** है जहाँ गोपियाँ संकेत के माध्यम से श्रीराधा और श्रीकृष्ण का मिलन करवाती हैं।

एक शुभ घड़ी में श्रीराधा और श्रीकृष्ण गोपनीय तरीके से पूर्व राग के भाव में अल्पकाल के लिये यहाँ मिले। पूर्व में एक दूसरे को सुनकर एक दूसरे के प्रति अनुरक्ति स्थापित की थी। यह पूर्व राग कहलाता है और यह उज्ज्वल नीलमणि में इस प्रकार वर्णित हैं। 'जब प्रेमी और प्रेमिका में मिलने से पहले देखकर, सुनकर, और इसी प्रकार से ही अनुरक्ति उत्पन्न होती है वह चार तत्वों जैसे कि वैभव और अनुभव के मिश्रण से, अत्यधिक सुहावनी होती है, वह पूर्व राग कहलाता है।'

संकेत

यहाँ मनमोहक **कृष्ण कुण्ड** के दर्शन करो। यहाँ **संकेत** में अनगिनत लीलाऐं रचायी गयी थीं जिन्हें कोई नहीं समझ सकता। नन्दग्राम और बरसाना के लोग इस मार्ग से आया जाया करते हैं। इसी मार्ग से श्रीराधारानी अपने ससुराल **जावट** को जाया करती थीं। यह वन बहुत सुहावना और सदा हरा भरा रहता है। पक्षियों के चहचहाने की ध्वनि और साथ ही भंवरों की गुंजन यहाँ सुनी जा सकती है।

हे श्रीनिवास, श्रीनन्द महाराज के नन्दीश्वर कहे जाने वाले निवास को देखो। यहाँ पर श्रीकृष्ण और श्रीबलराम ने मानव रूप में खेलते हुए लीलाओं का आनन्द लिया था।

श्रीमद्भागवत (10.44.13) में यह वर्णन है। 'स्वयं को मानवीय लक्षणों के छद्म वेश में ढाल कर, पथिक बनकर अनेक लीलाओं का प्रदर्शन करते हुए अपने मौलिक व्यक्तित्व के प्रभु द्वारा किये गये प्रदर्शन के कारण ब्रज की भूमि का क्षेत्र कितना पवित्र है! विभिन्न अद्भुत वन मालाओं से सुशोभित ये वही हैं जिनके चरणकमलों की पूजा स्वयं भगवान् शिव और देवी रमा द्वारा की जाती है। तथा जब वे बलराम के संग गौ चारण करने जाते हैं तब उनकी वंशी में अनेक स्वर उत्पन्न होते हैं।'

महाराज नन्द के निवास की सीमा को देखो। नन्द भवन के पूर्व में अद्भुत बाग हैं। जावट की ओर से आते हुए श्रीराधारानी अपनी सखियों के साथ यहाँ आती थीं। हे श्रीनिवास, जो **पावन-सरोवर** में स्नान करता है और **नन्दीश्वर पर्वत** पर श्रीकृष्ण, श्रीनन्द और यशोदा जी के श्रीविग्रह के दर्शन करता है, तत्काल उसकी कामना पूर्ण होती है।

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'स्वच्छ जल को लेने के बहाने से कमलनयन वाली गोपियां, श्रीकृष्ण को अत्यधिक प्रसन्नता और प्रेम से बार-बार पावन-सरोवर पर मिलती थीं। वे श्रीकृष्ण को पावन-सरोवर में विविध जल क्रीड़ाओं से अभिभूत करती थीं। यह अनेकों भंवरों की सुहावनी गुंजन से युक्त अनेकों कदम्ब वृक्षों से घिरा है। पावन-सरोवर हमारी रक्षा करें।'

नन्दगाँव

नन्दीश्वर पर्वत के दर्शन मात्र करो। पर्वत के ऊपर गुफा में श्रीनन्द महाराज और यशोदा देवी के साथ उनके बालक कृष्ण के दर्शन करो। श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ आये थे और गुफा में प्रवेश करके उन्होंने श्रीविग्रह के दर्शन किये थे। चमत्कृत नेत्रों से उन्होंने श्रीनन्द महाराज और यशोदा मैया के मध्य श्रीकृष्णचन्द्र को निहारा। उल्लसित हो उन्होंने श्रीनन्द और यशोदा जी के चरणकमलों में

उपासना अर्पित की, उन्होंने श्रीकृष्ण के अंगों को स्पर्श किया और तब वे उल्लसित प्रेम भाव में जप और नृत्य करने लगे। जब लोगों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की उन्मादपूर्ण अभिव्यक्ति को देखा तो वे आश्चर्य से एकटक हो गये।

किसी ने कहा, 'वे साधारण व्यक्ति नहीं है। ऐसा प्रदर्शन मानव के लिये संभव नहीं है।' किसी अन्य ने कहा, 'यह वास्तव में नारायण होंगे जो ब्रज का भ्रमण करने मानव रूप में वैकुण्ठ से आये हैं।' एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'मेरे विचार से ऐसा प्रतीत होता है कि यह नन्द का बालक है जो पुनः किसी और रूप में प्रकट हुआ है, अन्यथा इसमें नन्द बाबा और यशोदा मैया के प्रति इतनी भक्ति कैसे होती? उसके नेत्रों से निर्झर अश्रु बह रहे थे। मैं नहीं समझ पा रहा कि वे धीरे से हाथ जोड़कर श्रीनन्द और यशोदा जी से क्या कह रहे हैं। इससे ज्यादा मैं और क्या कहूँ मेरे प्रिय भ्राता? उन्हें देखकर मैं मान गया हूँ कि वह श्रीकृष्ण ही हैं।' यह शब्द बोलकर और हरिबोल का उच्चारण कर वे सब प्रभु के साथ नृत्य करने लगे और श्रीकृष्ण-प्रेम की लहरों में तैरने लगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु सभी संन्यासियों के भूषण हैं। मैं इस स्थान पर उनके प्रेम के प्राकट्य का वर्णन नहीं कर सकता।

यहाँ **तड़ाग-तीर्थ** है जो कि सर्वविदित है। यह सुन्दर वृक्षों और लताओं से घिरा बहुत ही सुन्दर स्थान है। हे श्रीनिवास, मैं इस स्थान के बारे में कुछ अधिक कहूँगा। देवमीढ़ के पुत्र पर्जन्य यहाँ रहते थे। श्रीनारद मुनि नन्दीश्वर आये और पर्जन्य को लक्ष्मी-नारायण-मन्त्र प्रदान कर अपना अनुग्रह प्रदान किया। तब पर्जन्य ने यहाँ तड़ाग-तीर्थ में तप किया और जब उनके उपनन्द, अभिनन्द, नन्द, सुनन्द और नन्दन नाम से पांच पुत्र हुए तो उनकी कामना पूर्ण हो गयी। उस स्थान तड़ाग-तीर्थ के दर्शन करो जो भगवान् श्रीकृष्ण को अतिप्रिय है और जिसकी भक्त हमेशा कामना करते हैं कि वे इसकी सेवा कर सकें।

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'पर्जन्य ने एक गुणवान पौत्र की कामना से एक सरोवर के तट पर जाकर उपवास रखा, तप किया और भगवान् नारायण की आराधना की। इस इच्छा की पूर्ति के लिये सर्वगुणों के भण्डार और असुरों के शत्रु श्रीगिरधारी महाराज पर्जन्य के पौत्र और ब्रज के राजा नन्द के पुत्र के रूप में प्रकट हुए। वह स्थान जहाँ पर्जन्य महाराज ने उपवास किया वह स्थान **क्षुण्णाहार-सरोवर** (उपवास का सरोवर)के नाम से जाना जाता है। मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे इस पावन स्थान का आश्रय प्राप्त हो।'

हे श्रीनिवास मैं इससे अधिक और क्या कहूँ? यहाँ क्षुण्णाहार-सरोवर पर श्रीकृष्ण ने अनेक लीलाऐं रचायीं। नन्दीश्वर के उत्तर-पूर्व में **दोहनी-कुण्ड** स्थित है। यह वह स्थान है जहाँ दही के पात्रों को धोया गया था। कृष्ण-कुण्ड और कदम्ब वन के दर्शन करो जहाँ श्रीब्रजेन्द्रनन्दन ने अपनी लीलाओं का आनन्द लिया था। **ललिता-कुण्ड** पर ललिता सखी कुछ योजना से श्रीराधारानी

को श्रीकृष्ण से मिलवाने लायी थीं। अति-अद्‌भुत **सूर्य-कुण्ड** पर सूर्यदेव श्रीकृष्ण के दर्शनों के बाद प्रेम में व्यथित हो गये थे।

यहाँ **विशाखा-कुण्ड** है जहाँ राई और कन्नु अति आनन्द में मिलते थे। यहाँ देखो, इस अति निर्जन स्थान पर **पौर्णमासी-कुण्ड** है। पौर्णमासी यहाँ झोपड़ी में वास करती थीं। जब श्रीराधा और श्रीकृष्ण मिलकर अपनी लीलाओं का आनन्द लेते थे तो वे अति प्रसन्न होती थीं। किसमें सामर्थ्य है कि उनकी गतिविधियों को समझ सके। (राई माने राधा, कन्नु माने कृष्ण)।

पौर्णमासी

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'मैं अति सौभाग्यशाली पौर्णमासी की आराधना करता हूँ, जो सब प्रकार के शुभत्व प्रदान करती हैं। वे बहुत निपुणता से श्रीराधा और श्रीकृष्ण के मिलन का प्रबन्ध करती थीं अतः वे सभी के लिये आराध्य हैं। वे राधा और माधव के सम्मिलन और विरह का प्रबन्ध कर निरंतर अमृतमयी कृपा का आनन्द लेती थीं।'

श्रीराघव पंडित ने बोलना निर्बाध रूप से जारी रखा, 'यहाँ पर सुन्दर **नान्दीमुखी का निवास** है जहाँ पर श्रीराधा और श्रीकृष्ण ने उत्तमोत्तम लीलाओं का आनन्द लिया। नान्दीमुखी के चारित्रिक गुण बहुत विस्तृत रूप से भगवान् के भक्तों द्वारा वर्णित किये गये हैं। उनका वर्णन 'ब्रज-विलास-स्तव' में इस प्रकार है। 'नान्दीमुखी देवी दिव्य युगल की महिमा सुनकर और उनसे मिलने की तीव्र इच्छा को संजोये सदैव मंत्रमुग्ध अनुभव करती थीं। वे अवन्ती (उज्जैन) का त्यागकर ब्रज में आ गयी थीं जहाँ वे आनन्दपूर्वक श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण की प्रेमपूर्ण लीलाओं की प्रसन्नता बढ़ाती थीं। मैं अनन्तकाल तक नान्दीमुखी-देवी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।'

'यहाँ वहाँ इन उत्तमोत्तम कुंजों के दर्शन करो। इन स्थानों पर श्रीकृष्ण की लीलाओं का कोई अन्त नहीं है। देखो! यहाँ **यशोदा-कुण्ड** है जहाँ माता यशोदा ने श्रीकृष्ण और श्रीबलराम को अपने ग्वाल सखाओं के साथ खेलते हुए देखा था। हे श्रीनिवास, श्रीकृष्ण उत्तमोत्तम परमानन्द के भण्डार हैं। यहाँ उन्होंने अपनी विभिन्न अवस्थाओं में अगणित लीलाओं का आनन्द लिया।'

'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' में श्रीकृष्ण की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन है। 'श्रीकृष्ण की अवस्था को तीन काल चक्रों में समझा जा सकता है। उनके जन्म से उनके पांच वर्ष की अवस्था की समाप्ति तक कौमार्य, छठे वर्ष के प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति तक के काल को पौगण्ड कहा जाता है और ग्यारह वर्ष से पन्द्रह वर्ष की समाप्ति को किशोर; सोलहवें वर्ष के प्रारम्भ होने के बाद श्रीकृष्ण को एक तरुण या युवा कहा जाता है और यह बिना परिवर्तन के आगे तक चलता रहता है।'

जहाँ तक श्रीकृष्ण की उत्तमोत्तम लीलाओं का सम्बन्ध है वे कौमार्य, पौगण्ड और किशोर अवस्था में घटित हुईं। उनकी अपने माता-पिता के साथ स्नेहमय लीलाऐं कौमार्य अवस्था में घटित हुईं। उनकी ग्वाल बालकों के साथ मित्रता पौगण्ड अवस्था में हुई और गोपियों के साथ उनकी मित्रता उनकी किशोर अवस्था में प्रदर्शित हुई। श्रीकृष्ण की श्रीवृन्दावन में लीलाऐं उनकी पन्द्रह वर्ष की अवस्था के अंत तक समाप्त हो गयीं और उसके बाद वे मथुरा और द्वारका स्थानान्तरित हो गये जहाँ उनके द्वारा शेष सभी लीलाऐं की गयीं।

पनिहारी कुण्ड

करेला वन में **करेल-कुण्ड** के दर्शन करो। श्रीकृष्ण प्रायः इस स्थान के सौन्दर्य का अवलोकन करते हुए यहाँ रहते थे। नन्दीश्वर पर्वत पर भगवान् श्रीकृष्ण का एक चरण चिह्न है। लोगों ने दीर्घ-काल से इस स्थान का अति प्रभाव देखा है। इस पुष्पों के वन में **मधुसूदन-कुण्ड** पर श्रीकृष्ण भ्रमरों की गुंजन सुनकर अत्यधिक प्रसन्न हो गये थे। अति पावन **पनिहारी-कुण्ड** के दर्शन करो। श्रीकृष्ण ने भोजन करते समय इसका जल ग्रहण किया था।

हे श्रीनिवास, यहाँ रन्धनागार (रसोई) के दर्शन करो जहाँ श्रीराधारानी ने रोहिणी मैया के साथ अति प्रसन्न होकर भोजन पकाया था। श्रीकृष्ण अपने सखाओं के संग यहाँ आकर भोजन पाते थे और सौ कदम की दूरी पर आराम किया करते थे। तब श्रीराधिका घर के भीतर जाकर आराम से बैठ जाती और श्रीकृष्ण को निवेदित भोजन की भोग प्रसादी पातीं। गोपनीय रूप से एक सखी श्रीकृष्ण को श्रीराधा से मिलवाने लातीं। उनकी लीलाओं के आनन्द का कोई अंत नहीं हैं। यहाँ पर मां यशोदा ने श्रीकृष्ण और बलराम का शृंगार किया था और उन्हें वन में भेजते हुए उनका हृदय रुदन कर उठता था। श्रीकृष्ण और श्रीबलराम अपने ग्वाल सखाओं के साथ इसी मार्ग से गौचारण के लिये जाते थे। इस दृश्य की सुन्दरता की तुलना किससे हो सकती है?

इस स्थान पर श्रीराधा को अपनी गोद में लेने के बाद माँ यशोदा ने सजल नेत्रों से उन्हें वापिस जावट भेज दिया था। माँ यशोदा के ललिता सखी के साथ अन्य सखियों के प्रति स्नेह का वर्णन एक मुख से कौन कर सकता है? यशोदा मैया और रोहिणी मैया, राधारानी और सखियों को विदा करने के बाद धैर्य न रख पाती थीं।

यहाँ **'दधि-मंथन'** (दही मंथन का स्थान) के दर्शन करो। साथ ही श्रीविग्रह के दर्शन करो जो कि अत्यधिक प्रभावशाली हैं। पौर्णमासी यहाँ आतीं और माँ यशोदा से बात करने के बाद इस मार्ग से अपने निवास को लौट जाती थीं।

इस स्थान से कुछ ही दूरी पर एक निर्जन स्थान पर श्रीवृन्दा देवी मन में यह विचार करती थीं कि कैसे वे दिव्य युगल का मिलन करवाऐं। उनके मिलन का

प्रबन्ध करवा कर वे प्रसन्नता के सरोवर में उतर जातीं। कौन श्रीवृन्दा-देवी के गुणों की महिमा का बखान करने में सहमत न होगा ?

ब्रज-विलास-स्तव में यह बताया है। 'अतिशय प्रेम से परिपूर्ण वृन्दा-देवी श्रीश्रीराधा और कृष्ण के अपने मित्रों के साथ उत्तमोत्तम लीलाओं का आनन्द लेने के लिये निरंतर खिले रहने वाले श्रीवृन्दावन के कुंजों को विविध प्रकार के सुगन्धित पुष्पों से सजाती थीं। मुझे वृन्दा-देवी पर समर्पित होने दीजिये।'

मुक्ता की खेती

इस साहसी-कुण्ड के दर्शन करो। इस स्थान पर सखियों ने वीरता से श्रीराधारानी और श्रीकृष्ण के मिलन का प्रबन्ध किया था (साहसी अर्थात् निडर)। इस वृक्ष पर सखियों ने एक अद्‌भुत झूला बनाया और अत्यधिक आनन्द से श्रीराधा और श्रीकृष्ण की झूलन लीला का आनन्द लिया। ये **मुक्ता-कुण्ड** है जहाँ नन्द महाराज के पुत्र ने भव्य क्रीड़ा में मोतियों को बाग में उगाया था।

हे श्रीनिवास यह अक्रूर का स्थान है। अक्रूर को कंस ने मथुरा से श्रीकृष्ण को अपने साथ वापिस लाने के लिये भेजा था। वे अपने विचारों में कुछ विचलित से थे क्योंकि उन्हें श्रीकृष्ण और श्रीबलराम को मथुरा लाने के लिये भेजा गया ताकि श्रीकृष्ण किसी तरह उसका (कंस का) वध कर सकें। श्रीकृष्ण के चरणकमलों के चिह्न उस स्थान पर देखकर अक्रूर उत्तमोत्तम प्रेम भाव में विभोर हो गये। **अक्रूर-स्थान** नामक यह स्थान लोगों द्वारा क्रूर कहलाता है।

यहाँ **योगी-स्थान** के दर्शन करो। यहाँ उद्धव ने विविध योगों के बारे में उपदेश किया था। **ऊधो-क्रिया**-स्थान पर गोपियों की गतिविधियाँ देखकर उद्धव ने स्वयं को सौभाग्यशाली अनुभव किया था। उद्धव जो यहाँ श्रीनन्द जी के साथ ग्वाल गोप आदि को सांत्वना देने आये थे, वे उनके प्रेम भावों के अद्‌भुत प्रदर्शन को देखकर अधीर हो उठे थे। इस स्थान के दर्शन कर जीव को अपनी हर गतिविधि में निपुणता प्राप्त होती है।

उद्धव कुण्ड

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है 'भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमल उद्धवजी को स्वयं के प्राणों से करोड़ गुणा अधिक प्रिय थे। उद्धव जी हमेशा उनकी अमृतमयी भक्ति में तल्लीन रहते थे। उन चरणकमल को पीछे छोड़ उद्धवजी प्रसन्नतापूर्वक दस मास तक ब्रज में रहे। पल-पल वे वृन्दावन के निवासियों के समक्ष श्रीकृष्ण की लीलाओं का वर्णन कर उन्हें पुनः जीवंत करते रहे।' वे उनसे कहते, 'देखो! श्रीकृष्ण वापिस आ गये!' मैं उद्धव की चरणरज को अपने मस्तक पर धारण करता हूँ।'

हे श्रीनिवास, इस **गौशाला-स्थान** पर श्रीकृष्ण अपने सखाओं के संग अपनी गौऐं चराते थे। उनके मस्तिष्क में आनन्द भर आया। कृष्ण, सुबल और अन्यों के साथ इस मार्ग से वनों की ओर जाते हुए बहुत सुन्दर लगते थे।

इन खूँटों को देखो जहाँ श्रीकृष्ण बछड़ों को बांधते थे। वे आज तक ब्रज की महिलाओं द्वारा पूजे जाते हैं। नन्दीश्वर में कई स्थान हैं जहाँ श्रीकृष्ण ने लीलाऐं रचायीं। किस में इतनी सामर्थ्य है कि उन सब का वर्णन करे? इस परिक्रमा मार्ग के दाँयीं और बाँईं ओर श्रीकृष्ण की लीलाओं के अनगिनत स्थान हैं। **नन्दीग्राम** और आस-पास के स्थानों की यात्रा कर हम इस मार्ग पर वापिस लौट आयेंगे।

श्रीराघव पंडित ने बोलना समाप्त करने के बाद अपने दो सहभागियों के साथ नन्दीग्राम से विदा ली और चारों ओर देखकर उनकी प्रसन्नता बढ़ गयी। श्रीनिवास ने उल्लास वचनों में कहा कि उन्होंने इतना सुन्दर स्थान कभी नहीं देखा था।

राघव पंडित बोलते रहे, 'यहाँ नन्दीश्वर के उत्तर-पश्चिम छोर पर **गेंदोखर** है। यहाँ पर श्रीकृष्ण और बलराम ने अपने सखाओं के साथ गेंद के खेल का आनन्द लिया था। यहाँ हम अति सुन्दर **कदम्ब-कानन** को देखते हैं जहाँ पर श्रीबलराम विविध क्रीड़ाओं में मग्न रहे थे। जब बलराम लेट जाते थे तो कृष्ण उनके चरणकमलों को दबाते (अंग-मर्दन किया करते) थे।

श्रीमद्भागवत (10.15.14) के शब्दों के अनुसार। 'जब उनके अग्रज भ्राता खेल कर थक जाते थे तो वे ग्वाल बालों की गोद में सिर रख कर भूमि पर लेट जाते और भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं उनका अंग मर्दन कर और अन्य सेवाओं के माध्यम से उन्हें विश्राम प्रदान करवाते।'

गुप्त कुण्ड

यह **गुप्त-कुण्ड** है, जहाँ श्रीकृष्ण और सुबल के साथ उनके सखा वन में इधर-उधर विचरण करते हुए गुप्त रूप से विविध खेल खेलते थे। आगे **मेहेराना-ग्राम** के दर्शन करो जहाँ पर अभिनन्द गोप की अपनी गौशाला थी।

हे श्रीनिवास चित्ताकर्षक याओ-ग्राम के दर्शन करो जो **आवट** नाम से भी जाना जाता है। यह अभिमन्यु गोप का निवास है जहाँ राधारानी अपनी सखियों के साथ खेलने का आनन्द लेती थीं।

स्वयं राधारानी के बारे में क्या कहूँ, यहाँ तक कि योगमाया के प्रभाव से अभिमन्यु गोप राधारानी की परछाईं को भी स्पर्श नहीं कर सकते थे। वे अपने ग्वाल-सखाओं के संग में रहते जबकि जटिला और कुटिला गृह कार्यों में मग्न रहतीं। गोपियां बहुत चतुराई से श्रीकृष्ण को यहाँ लाती थीं और दिव्य युगल की लीलाओं को देख उनका हृदय आनन्द से भर जाता था। अभिमन्यु, कुटिला और

जटिला को ठगने के बाद श्रीकृष्ण उत्सुकतापूर्वक यहाँ श्रीराधा के साथ अनगिनत लीलाओं का आनन्द लेने आते थे। जब मुखरा ने अपनी पौत्री राधा को प्रसन्न होते देखा तो ज़टिला के कान में अनेक गोपनीय बातें बता दीं। यहाँ पर कुटिला को भी राधारानी के व्यवहार में त्रुटियाँ खोजने में अत्यधिक आनन्द आता था।

राधा जी इस मार्ग से सूर्यदेव की आराधना करने जाती थीं और वे इस कदम्ब वृक्षों के वन में अपने प्रियतम श्रीकृष्ण की झलक पाने की प्रतीक्षा करती थीं। जैसे ही श्रीकृष्ण आते वे उनके वस्त्रों को पकड़ लेते और दोनों अति आनन्द में मग्न हो जाते थे।

यहाँ पर अनेकों वट वृक्षों से घिरा **कृष्ण कुण्ड** है। यहाँ पर श्रीकृष्ण की लीलाऐं विशेषकर अति मधुर हैं। ग्रीष्मकाल के दौरान सखियां राधारानी को **मुक्ता-कुण्ड** पर मोतियों के आभूषणों से सजाती थीं। कदम्ब वृक्षों के वन के भीतर **पीवन-कुण्ड** पर श्रीराधा और श्रीकृष्ण अपनी सखियों के साथ मिलकर खेलते थे। सखियों से संकेत पाकर श्रीकृष्ण, श्रीराधा के होठों से अमृत पान कर प्रमत्त हो जाते थे। यहाँ पर लाड़ली-कुण्ड है जहाँ पर ललिता सखी गोपनीय तरीके से राई और कन्नु के मिलन का प्रबन्ध करती थीं।

नारद कुण्ड

हे श्रीनिवास **नारद-कुण्ड** के दर्शन करो। यहाँ स्नान करने से जीव की सभी मनोकामनायें पूर्ण हो जाती हैं। इस स्थान पर एक मुनि ने श्रीमती राधिका को यह वरदान दिया था कि वे जो भी पकायेंगी, वह अमृत हो जायेगा। हर किसी को इस बात का पता चल गया। राधा यहाँ पर अपनी सखियों के साथ खड़ी हो जातीं और श्रीकृष्ण को गौचारण करते जाते हुए देखतीं। श्रीकृष्ण बांसुरी बजाते हुए मार्ग पर आगे चलते जाते थे। ग्वाल बालकों के साथ आगे बढ़ते समय श्रीकृष्ण जो तीनों लोकों को आकर्षित करते हैं वे और श्रीराधारानी चुपके से आंखों-आंखों में एक-दूसरे को निहारते थे।

हे श्रीनिवास, यह जावट ग्राम है जहाँ श्रीकृष्ण, श्रीराधा जी से मिलकर लीलाओं का आनन्द लेते थे। उनकी ननद कुटिला और सासू माँ जटिला श्रीकृष्ण को, जो कि अति चतुर हैं, देख नहीं पाती थीं। उनकी लीलाओं के आनन्द की कोई सीमा न थी। जो अत्यधिक सौभाग्यशाली थे वे इन लीलाओं का विभिन्न प्रकार से आस्वादन करते थे।

हे श्रीनिवास और नरोत्तम, मैं क्या कह सकता हूँ? श्रीकृष्ण की चित्ताकर्षक लीलाएं भगवान् ब्रह्मा के लिये भी गोपनीय हैं। रस के अवतार श्रीकृष्ण जो सभी भाषाऐं बोल सकते हैं, बहुत निपुणता से कोयल पक्षी के स्वर में कूक कर अपनी प्रेमिका को संकेत करते हैं। परन्तु एक दिवस दिव्य व्यवस्था के कारण वे उनसे नहीं मिल सके।

पद्यावली से यह वर्णन प्राप्त होता है। 'जब श्रीकृष्ण राधा जी के आंगन में अपने मिलन के लिये आते तो उनके खनखनाते आभूषण कोयल की कूक और अन्य पक्षियों के जैसा स्वर उत्पन्न करते। वे अचानक द्वार के खुलने का स्वर सुनते और वे शंख सीप से निर्मित कंगन के निरंतर छनकने का स्वर भी सुनते। जब वे अंहकारी जटिला को 'कौन हैं वहाँ?' ऐसा चिल्लाते हुए सुनते तो उनके हृदय में पीड़ा भर उठती थी। वे वह सम्पूर्ण रात्रि आंगन के कोने में वृक्ष के पीछे छिपकर व्यतीत करते।

कोकिलावन

जावट के पश्चिम में वन है जहाँ किसी को भी सैकड़ों सहस्रों कोकिलाओं के गाने का स्वर सुनाई दे सकता है। एक दिवस श्रीकृष्ण ने इस वन में प्रवेश किया और प्रसन्नतापूर्वक कोकिला के समान स्वर निकाला। प्रति उत्तर में सभी पक्षियों ने इतने उच्चस्वर में गाना आरम्भ कर दिया कि जावट में भी स्वर सुनाई दिया। कोकिलाओं का गान स्वर सुनकर जटिला ने विशाखा से कहा कि उन्होंने पूर्व में कभी कोकिलाओं का ऐसा स्वर नहीं सुना। विशाखा ने उत्तर दिया कि यदि जटिला आज्ञा दे तो वे वन में जाकर कोकिलाओं को देख आते हैं। जटिला ने उन्हें बताया कि वे जा सकते हैं और पक्षियों के गान को सुन सकते हैं इस प्रकार राधारानी और उनकी सखियों ने वन में प्रवेश किया। असीमित आनन्द में वे वहाँ आये और इस प्रकार राधारानी और श्रीकृष्ण का मिलन संभव हुआ, जो कोकिला के जैसे स्वर गान करने में मग्न थे। इस कारण से इस वन का नाम **कोकिलावन** पड़ा।

आंजनक

हे श्रीनिवास, **आंजनक ग्राम** के दर्शन करो, जहाँ राधारानी और श्रीकृष्ण ने अपनी लीलाऐं रचायीं। एक बार श्रीराधा निर्जन स्थान पर वस्त्र धारण कर रही थीं। उन्होंने विभिन्न आभूषणों से स्वयं को सजाया और केश बाँध लिये और जैसे ही वे अपने नेत्रों में अंजन (काजल) लगा रही थीं कि अचानक श्रीकृष्ण की मुरली का स्वर उनके कानों में प्रवेश कर गया। उसी क्षण राधारानी सब छोड़कर अपनी सखियों के साथ यहाँ श्रीकृष्ण से मिलने आ गयीं। जैसे ही राधारानी श्रीकृष्ण के पास आयीं वे अत्यधिक उल्लसित हो गयीं। उन्होंने श्रीराधा को पुष्पों से शोभित आसन पर बिठाया, जिसका प्रबन्ध वृन्दा-देवी द्वारा किया गया था। राधारानी के सौन्दर्य को निहारते हुए श्रीकृष्ण ने देखा कि राधारानी के नेत्र अंजन से सुशोभित नहीं है। जब उन्होंने इसका कारण पूछा तो सखियों ने सब कुछ बता दिया। इस अवसर का आनन्द प्राप्त करने के लिये

श्रीकृष्ण अंजन लाये और अत्यधिक उल्लास में राधारानी के नेत्रों में लगा दिया। इस कारण से इस स्थान को आंजनक नाम से जाना जाता है।

यह विद्युद्वारी ग्राम है जो कि **'विजोआरि'** भी कहलाता है। किसका हृदय इस स्थान के वर्णन को सुनकर नही पिघलेगा? जब अक्रूर जी ब्रज आये तो ये बात फैल गयी कि वे बलराम और कृष्ण को लेने आये थे। प्रेम में उल्लसित उन्होंने वह रात्रि नन्द महाराज के निवास पर व्यतीत की। अगली प्रात: अक्रूर, नन्द जी और अन्य लोगों के साथ मथुरा के लिये चल पड़े और ब्रज बलराम व श्रीकृष्ण के जाने से रिक्त हो गया।

विजौली

इससे अधिक और क्या कहूँ? केवल वही जिन्होंने यह दृश्य देखा वही समझ सकते हैं। ब्रज की सारी किशोरियाँ नदी की तरह अश्रु बहाते हुए, भागते हुए श्रीकृष्ण के दर्शन को आयीं। यह दृश्य देखकर काष्ठ और पाषाण भी पिघल जायेंगे। कोई भी इस पीड़ा का वर्णन लाखों मुख से भी नहीं कर सकता।

जैसे ही श्रीकृष्ण रथ पर सवार हुए, उनकी प्रियतमा गोपियां विरह से कातर हो उठीं और उन्हें घेर लिया। उन्होंने अपने नेत्रों को श्रीकृष्ण के कमल समान मुखमण्डल पर समर्पित कर दिया और रुदन कर चिल्लाने लगीं, 'हे हमारे प्राणधन!' और अचेत होकर गिर पड़ीं। मानों कड़कड़ाती बिजली भूमि पर आ गिरी हो उसी प्रकार गोपियां धरती पर जा गिरीं। हर कोई यह देखने के लिए आने लगा कि भूमि पर बिजली कैसे गिरी। इस कारण से इस स्थान का नाम विजोआरि **(बिजौली)** पड़ा।

यहाँ देखो, यह **पलसों-ग्राम** है। जब श्रीकृष्ण रथ पर सवार होकर मथुरा गये थे, वे गोपियों की दशा देकर बहुत व्याकुल हो गये थे। मात्र उन्हें शांत करने के लिये वे बोले, 'कल या परसों मैं वापिस आ जाऊँगा और सब से मिलूँगा।' इस कारण से नगर का नाम पलसों पड़ा। पलसों के निकट **शी-ग्राम** नाम का नगर है। मैं विस्तार से बताता हूँ कि इसका यह नाम कैसे पड़ा। यहाँ गोपियों का दशा देखकर श्रीकृष्ण अत्यधिक अधीर हो उठे थे और वे बार-बार गोपियों को समझा रहे थे कि वे यथाशीघ्र (शी शब्द शीघ्र से आता है) मथुरा से लौट आयेंगे।

तब श्रीकृष्णचन्द्र ने रथ पर सवार हो मथुरा के लिये विदा ली और गोपियां, श्रीकृष्ण के अभाव में मृत प्राय: सी हो गयीं। असंख्य गोपियों के अश्रु, नेत्रों के काजल के संग वक्ष स्थल से लुढ़कते हुऐ भूमि पर गिर रहे थे। अत्यधिक आँसुओं ने एक नदी का रूप ले लिया जिसे सब ने कहा कि यह यमुना नदी के समान है। यही वह स्थान है जहाँ गोपियां प्रेमोन्मत्त होकर रोयी थीं। अत्यधिक सौभाग्यशाली व्यक्ति ही इस स्थान का दर्शन कर सकता है।

चन्द्रावली परिचय

यहाँ दो गांव **कमई और कराला (करहला)** को देखो। कमई में विशाखा का जन्म हुआ था और कराला, ललिता का नगर है। लुधावनी-ग्राम अनेकों अन्य ब्रजवासियों का निवास है और यहाँ कराला-ग्राम में चन्द्रावली अपने पति गोवर्धन, अपनी माता इन्दुमति और अपनी अग्रज बहन राधारानी के साथ रहती है (आजकल भी ममेरे चचेरे भाई बहन को आम बोलचाल की भाषा में भाई बहन ही बोला जाता है)। चन्द्रावली के पिता, पांच भाइयों में से एक थे। उन पांचों में से अग्रज थे राजा वृषभानु। अन्य चार थे चन्द्रभानु, रत्नभानु, सुभानु और श्रीभानु। उनका शारीरिक तेज सूर्य के समान था। गोवर्धन मल्लाह के साथ चन्द्रावली कभी सखी स्थली और कभी कराला में रहती थीं। पद्मा के सान्निध्य में यूथेश्वरी इस स्थान पर रहती थीं। श्रीकृष्ण से मिलने पर उनके आनन्द का कोई अंत न होता था।

यहाँ **पियासो-ग्राम** के दर्शन करो, जहाँ श्रीकृष्ण अत्यधिक प्यासे हो गये थे। बलदेव यहाँ जल लेकर आये थे और श्रीकृष्ण की प्यास बुझाई थी।

हे श्रीनिवास, **साहार-ग्राम**, उपनन्द जी का निवास है। वे सलाह देने में अनुभवी और वयोवृद्ध थे। उपनन्द का वर्णन 'ब्रज-विलास-स्तव' में है। 'सफेद दाढ़ी में उनका चेहरा अति सुन्दर लगता है और उनका रूप-रंग सांवला है। धर्मात्मा उपनन्द ब्रजवासियों के साथ पंचायत करने में निपुण हैं। वे ब्रज के राजा की पंचायत सभा के एक स्थायी सदस्य थे। अपने प्राणों से लाख गुणा प्रिय जानकर वे अपने भतीजे कृष्ण को बहुत आनन्दित करते थे।' मैं प्रार्थना करता हूँ कि साहार-ग्राम के निवासी उपनन्द, सदा ब्रज भूमि की रक्षा करें।

उपनन्द का लेन-देन व्यवहार स्नेहमय था। उनके पुत्र सुभद्र, कृष्ण के अग्रज भ्राता थे, जो कि नन्द बाबा को अतिप्रिय थे। कोई भी पर्याप्त रूप से सुभद्र के गुणों का वर्णन नहीं कर सकता, जो कि नन्द जी को अत्यन्त प्रिय थे। वे एक विद्वान् पंडित थे और श्रीकृष्ण के परम स्नेही थे। उनका वर्णन ब्रज-विलास-स्तव में है। 'उपनन्द के पुत्र सुभद्र एक सांवले रूप-रंग वाले, युवा, दयालु और बुद्धिमान थे। वे ज्योतिष में सर्वश्रेष्ठ थे। अपने बृहत् ज्ञान के कारण उन्होंने बृहस्पति को भी परास्त कर दिया था। वे ब्रज के राजा के बाँयें हाथ के सम्मुख वास करते थे। अच्छी सलाह से वे श्रीकृष्ण की रक्षा करते, जो उन्हें अपने प्राणों से लाख गुणा अधिक प्रिय है।'

कुन्दलता-सुभद्र

आइये अत्यधिक हर्ष के साथ सुभद्र की महिमा का गुणगान करें और उनके चरण में प्रणाम और सत्कार निवेदन करें।

सुभद्र की पत्नी कुन्दलता के प्राण और आत्मा थे श्रीकृष्ण। वे भी राधारानी की सहभागियों में से एक थीं। ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'ब्रज की रानी के आदेश पर भोजन पकाने के लिये जब श्रीमती राधारानी को वहाँ लातीं तो कुन्दलता राधारानी को अति उल्लास में बैठाकर प्रसन्नता से भर उठतीं, और मार्ग पर चलते हुए निरंतर श्रीकृष्ण की नवीनतम जानकारी उन्हें बताती रहतीं। मैं कुन्दलता-देवी की आराधना करता हूँ।'

उस असीमित उत्साह का वर्णन कौन कर सकता है, जो दिन-रात सहार-ग्राम में अनुभव होता है। यहाँ **साँखी-ग्राम** में श्रीकृष्ण ने राक्षस शंखचूड़ का वध किया था। श्रीकृष्ण ने शंखचूड़ के मस्तक से मणि निकाल ली और प्रसन्नतापूर्वक बलराम को दे दी। बलराम **राम तालाब** पर रहते थे जो कि पूर्व में राम-कुण्ड के नाम से जाना जाता था। वह इस स्थान के अति निकट था। अति प्रसन्नता से श्रीबलदेव ने वह आभूषण मधुमंगल के द्वारा राधारानी को दे दिया, हे श्रीनिवास और नरोत्तम, इस स्थान पर श्रीमती राधारानी अपनी सखियों के साथ अत्यंत प्रसन्न हो गयी थीं।

छत्र वन की रस-लीला

छतरवन में श्रीकृष्ण राजा की भूमिका निभा कर अपने सखाओं को आदेश देते थे और वहाँ उस स्थान पर अपना राज्य स्थापित किया करते थे। मधुमंगल के संग सब सखा, एक वन से दूसरे वन में श्रीकृष्ण के साम्राज्य के समर्थन में उद्घोषणा करते, 'नन्द महाराज के पुत्र, श्रीकृष्ण इस भूमि के राजा हैं। इस साम्राज्य में और किसी को अधिकार नहीं। जो कोई भी पुष्प तोड़ेगा उसे राजा के सम्मुख प्रस्तुत करके दण्ड दिया जायेगा।'

ललिता और सखियां क्रोध में उत्तर देतीं, 'ये कौन है जो श्रीराधारानी के साम्राज्य को चुनौती दे रहा है।' ऐसा बोलते हुए ललिता और सखियां तत्क्षण राधारानी को (उमराव अर्थात धनी या राजकुमार) एक राजकुमार के लिये उपयुक्त सिंहासन पर बैठा देते, अपनी सखियों से कहतीं, 'वह व्यक्ति जो मेरे साम्राज्य पर अपना अधिकार जताता है उसे परास्त करना चाहिये और तत्काल मेरे सम्मुख लाया जाना चाहिये।' यह निर्देश सुनकर सखियां, वृन्दा द्वारा निर्मित पुष्प छड़ियाँ लेकर युद्ध के लिये तत्पर होती हैं।

कुछ दूरी पर सुबल और अन्य सखाओं ने देखा कि सहस्रों सखियां चहुँ ओर से उनकी ओर आ रही हैं। अपना बचाव करते हुए मधुमंगल एक सखी द्वारा पकड़े गये, जिसने उनके हाथों को पुष्प माला से बाँधने का प्रयास किया। उन्हें शीघ्रता से राधारानी के सम्मुख लाया गया। मधुमंगल को देख राधारानी ने बार-बार पूछा, 'किसे इस राज्य पर राज करने का अधिकार है? वह शासक तुम्हें दण्ड देगा ताकि तुम दोबारा कभी ऐसा आचरण न कर पाओ। यह सुनकर

मधुमंगल अपना सर झुका लेते और उत्तर देते, 'मुझे कुछ ऐसी सजा दीजिये जिससे मेरा पेट भर जाए' राधारानी जवाब देती, 'इस ब्राह्मण को मुक्त कर दो। इसे मात्र अपने पेट भरने में ही रुचि है। इसे राजा के पास जाने दो।' सखियों ने मधुमंगल को मुक्त कर दिया और वे दौड़ पड़े जबकि हाथ अभी भी बंधे थे।

श्रीकृष्ण जो कि गर्व पूर्वक सिंहासन पर विराजमान थे, ने मधुमंगल से पूछा, 'तुम इस दशा में कैसे आये?' दुखी हृदय से मधुमंगल ने उत्तर दिया, 'यह उसका परिणाम है जो मैंने तुम्हें राजा घोषित किया। राधारानी असीमित शक्तियों से पूर्ण राजकुमारी हैं। तुम उनकी सत्ता के विरुद्ध क्या कर सकते हो? वही कामदेव जो सम्पूर्ण संसार का धैर्य चुराता है, उनके (राधारानी के) नेत्रों के संकेत के सामने काँप जाता है। मेरी तुम को यही सलाह है कि तुम उनकी सत्ता को स्वीकार कर लो और स्वयं को समर्पित कर उनका आश्रय ले लो।' श्रीकृष्ण बोले, 'जो भी तुमने कहा, वह सही है मधु, पर मैं तुम्हें इस प्रकार बंधन में नहीं देख सकता।' मधु ने जवाब दिया, 'मुझे कोई दुख नहीं चाहे मेरा अपमान भी हो जाये। पर मैं तुम्हारे भले की सोचता हूँ।' इस प्रकार बोलते हुए उसने श्रीकृष्ण का हाथ पकड़ा और वहाँ ले गया जहाँ राधारानी विराज रही थीं।

अपने प्रियतम को आता देख प्रसन्नतावश राधा अधीर हो गयीं और अत्यन्त घबरा गयीं। राधारानी अपने राजकुमारी के वेश को त्यागना चाहती थीं पर उनकी सखियों ने कहा, 'इसी वेश में रहो यहाँ।' दूर से राधिका जी को उस वेश में देखकर श्रीकृष्ण अस्थिर हो गये और अपना धैर्य न रख सके। मधुमंगल, श्रीकृष्ण को इस दशा में देख परमानन्दित हो गये और वे शीघ्रता से उन्हें राधारानी के निकट ले आये। उन्होंने श्रीकृष्ण को दाँईं तरफ बैठाया और राधारानी को श्रीकृष्ण के बाँईं ओर बैठाया। कितना अद्‌भुत और सुन्दर दृश्य है!

मधुमंगल बार-बार बोलने लगे, 'अब लो' श्रीकृष्ण को और दिखाओ अपनी सत्ता। कृष्ण तुम्हें बहुमूल्य आलिंगन भेंट करेंगे। कृपया इसे सावधानी से स्वीकार करना। यह मृदु शब्द सुनकर ललिता प्रसन्नता से मुस्कुराई और एक मिठाई मधुमंगल के मुख में डाल दी। मधु ने कहा, 'तुमने मुझे बांध कर कदाचित् गलत किया है। यदि तुम मुझे एक लक्ष लड्डू खिलाओगे तो ही इस अपराध से मुक्ति मिलेगी।' ऐसा कहकर और सखियों से घिरे भव्य दिव्य युगल को निहार कर मधुमंगल ने लड्डू खाते हुए व्यंगात्मक मुद्रा बनायी। लड्डू खाते हुए मधु ने बहुत मृदु स्वर में कहा, 'मुझे बहुत से काम हैं।' और प्रसन्नतापूर्वक विदा ली।

राजकुमारी और राजा तब प्रसन्नतापूर्वक अपने निकुंज वन में प्रवेश कर गये और सुरत समय में दोनों अति श्रमित हो गये। तब सखियों ने विविध प्रकार से उन्हें चिन्तामुक्त किया।

हे श्रीनिवास, इस लीला के बारे में मैं और क्या कहूँ। इस कारण से इस नगर का नाम उमरावो पड़ा।

किशोरी कुण्ड

अति सुन्दर किशोरी-कुण्ड, वृषभानु की पुत्री, किशोरी जी को अति-प्रिय है। इस स्थान को देखकर श्रीलोकनाथ गोस्वामी को अति आनन्द हुआ और उन्होंने यहाँ रहना प्रारम्भ कर दिया। उनके आत्मत्याग के बारे में वर्णन का कोई अंत नहीं है। श्रीराधा-विनोद ने उन पर यहाँ अपनी करुणा बरसाई थी। जब भी उन्हें फल, कन्द, मूल, भात और चावल प्राप्त होता तो श्रीलोकनाथ गोस्वामी उसे बहुत भक्ति-भाव से श्रीराधा-विनोद को निवेदित कर देते थे।

वर्षा ऋतु और शरद ऋतु के दौरान श्रीलोकनाथ मात्र एक रजाई और एक बहिर्वास के साथ इस वृक्ष के नीचे रहते। वर्षा ऋतु के दौरान श्रीलोकनाथ गोस्वामी अपने प्रभु को एक वृक्ष के कोटर में पधराते और स्वयं बाहर रहकर भीगते रहते। अन्य समय में वे अपने श्रीराधा-विनोद को प्रसन्नतापूर्वक अपने गले में लटके पुराने झोले में पधराते। श्रीगौरचन्द्र की लीलाओं का स्मरण कर वे परमानन्दित हो जाते और इस स्थान पर रुदन करते थे।

यह सब बताकर श्रीराघव पंडित अधीर हो उठे और अश्रु बहाने लगे। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर भूमि पर गिर गये और रज में लोटने लगे। वे गहरी सांस लेने लगे तथा उत्तमोत्तम प्रेम भाव में अपने अश्रुओं में भीग गये।

श्यामसुन्दर बने किन्नरी

श्रीराघव पंडित ने कहा, 'यह नगर **नरीसेमरी** है, पूर्व में यह **स्यामरी-किन्नरी** के नाम से जाना जाता था। श्रीराधारानी के कोप को दूर करने का कोई उपाय न पाकर श्रीकृष्ण ने श्यामा-सखी का रूप धर लिया। जब वीणा बजाते हुए श्यामा-सखी के रूप में श्रीकृष्ण वहाँ, श्रीराधारानी के सम्मुख पधारे तो वे चिल्ला उठी, 'हर प्रकार से वो किन्नरी प्रतीत होती है।' वीणा का स्वर सुनकर अत्यधिक आनन्दित होते हुए श्रीराधारानी ने अपना कंठ हार श्यामा-सखी के गले में डाल दिया। किन्नरी ने कहा, 'अपने कोप का आभूषण मुझे दे दो और मुझे अपना जानकर स्वीकार कर लो।' यह सुनकर श्रीराधा जी ने अपने मान का त्याग कर दिया और अत्यधिक प्रसन्नता से आनन्दित होकर मुस्कुरा दी। इस प्रकार इनका यह नाम पड़ा। इस स्थान पर देवी का भी अत्यधिक गहरा प्रभाव है।

हे श्रीनिवास, देखो हम किस प्रकार **छत्रवन** में आ रहे हैं। इस स्थान पर श्रीनन्द के पुत्र राजा बने थे। श्रीकृष्ण के राजा बनने के कुछ दिवस बाद

पौर्णमासी ने प्रसन्नता में विह्वल हो श्रीराधारानी को श्रीवृन्दावन की रानी का मुकुट पहना दिया। 'राधा-स्थली' पर आयोजित श्रीराधारानी के अभिषेक का वर्णन करने का प्रयास कौन कर सकता है।

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'ब्रह्माजी के आदेश पर, जो कि आकाश वाणी के रूप में बोला गया था, पौर्णमासी देवी ने श्रीमती राधारानी को उनके शीश पर मानसी गंगा और अन्य पवित्र नदियों का जल छिड़ककर, सावित्री देवी और अन्य अति प्रसन्न अर्धदेवियों के सान्निध्य में अति सुन्दर वन श्रीवृन्दावन की रानी का मुकुट पहनाया। मैं प्रार्थना करता हूँ कि पावन 'उन्मत्त-राधा-स्थली' (वह स्थान जहाँ श्रीमती राधारानी प्रसन्ता से अभिभूत हो गयी थी) मुझ पर उत्तमोत्तम प्रसन्नता का प्रसाद प्रदान करें।

आदि-वाराह-पुराण में यह वर्णन है। 'सातवाँ वन **खदिरवन** के नाम से जाना जाता है। हे भद्रे! जो भी व्यक्ति यहाँ जाता है, वह मेरे धाम वास की ओर बढ़ जायेगा।'

हे श्रीनिवास इस स्थान के दर्शन करो जहाँ श्रीकृष्ण ने अपने सखाओं के साथ गौ चारण करते हुए अनेक खेल खेले। यह अत्यधिक मनमोहक स्थान **'संगम-कुण्ड'** कहलाता है। जहाँ श्रीकृष्ण और गोपियां प्रसन्नता से मिलते। अति विशिष्ट निर्जन स्थान होने के कारण लोकनाथ गोस्वामी भूगर्भ गोस्वामी के साथ कभी-कभी यहाँ रहते थे।

यह **कदम्ब खण्डी** है जो कि बहुत सुन्दर रूप से स्थित है। नन्द के पुत्र ने यहाँ विस्मयकारी लीलाऐं रचाईं। यावट के निकट **बकथरा** है जहाँ श्रीकृष्ण ने बकासुर का वध किया था।

हे श्रीनिवास यह स्थान **नेओछाक** स्थान कहलाता है। श्रीकृष्ण ने यहाँ भोजन की लीलाऐं रचाईं। ब्रज-धाम में भोज्य पदार्थों को छाक कहा जाता है। जब श्रीकृष्ण को भूख लगती तो माँ यशोदा भोज्य पदार्थ भेज देतीं। अन्य ग्वाल बाल माताओं से भोजन प्राप्त करके वन को जाते।

यहाँ पर **भाण्डागोर**-ग्राम है। हे श्रीनिवास, श्रीकृष्ण ने यहाँ अद्‌भुत लीलाऐं रचाईं थीं। लोग इस नगर को अब **भादालि** कहते हैं। जो जीव यहाँ स्नान करता है वह भक्ति में पूर्ण निपुणता प्राप्त करता है।

भादालि

आदि-वाराह-पुराण में यह बताया है। 'हे भूमि, भाण्डागोर-ग्राम के नाम से जाना जाने वाला तीर्थ मेरा गोपनीय तीर्थ है। लोगों को निसन्देह भाण्डागोर में निपुणता प्राप्त होगी। हे पावन जीव, सरोवर चहुँ ओर से वृक्षों और लताओं के कुञ्जों से घिरा है। जो जीव यहाँ पर एक दिवस और रात उपवास करता है और यहाँ स्नान करता है, वह विद्याधर लोक को जाता है, जहाँ वह अत्यधिक

प्रसन्नता का अनुभव करता है। हे भूमि, मैं अब एक अद्‌भुत रहस्य बताऊँगा। इस स्थान पर द्वादशी पर मेरे भक्त अर्धरात्रि तक जागरण करते हैं और मेरे कानों को सुख प्रदान करने वाले मेरे भजनों को श्रवण करते हैं।'

इस प्रकार बोलते हुए राघव पंडित और उनके दो सहभागी अन्य स्थानों की यात्रा करते हुए सुखद भाव में फिर नन्दीश्वर (नन्दीग्राम) वापिस लौट आये। नन्द महाराज और अन्य ब्रजवासियों के चरित्र का गुणगान करते हुए वे पावन-सरोवर के तट पर आ गये।

पावन सरोवर पर श्री सनातन

पावन-सरोवर पर श्रीसनातन गोस्वामी के भजन कुटीर के दर्शन मात्र से ही श्रीराघव पंडित, श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास आचार्य भाव से व्यथित हो गये और उनके नेत्रों से अश्रुपात होने लगा। श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास से कहा, 'अब मुझे श्रीसनातन गोस्वामी के इस स्थान पर निवास के बारे में वर्णन करने दो। श्रीवृन्दावन से इस निर्जन वन की ओर आते हुए वे भगवान् श्रीकृष्ण की बारम्बार आराधना करते हुए उत्साह से आनन्दमग्न हो गये थे।'

श्रीसनातन गोस्वामी वैरागी की भांति भोजन के लिये प्रयास किये बिना यहाँ रहते थे। किसी को नहीं पता था कि वे इस स्थान पर रहते हैं। तब श्रीकृष्ण एक ग्वाल बाल के वेश में दूध का कटोरा लिये श्रीसनातन गोस्वामी के पास आये। और बोले, 'आप एक निर्जन स्थान पर रहते हो और कोई नहीं जानता कि आप यहाँ रहते हो। गौचारण करते हुए मैंने तुम्हें देखा। मेरी बात सुनो। इस दूध को बिना संकोच के ग्रहण करो। पात्र खाली कर दो और मुझे वापिस दे दो।' यदि तुम इस कुटीर में रहोगे तो हम सब प्रसन्न होंगे परन्तु ब्रजवासियों को तुम्हें इस दशा में देखकर अति दु:ख होगा।

यह कहकर गोपाल श्रीसनातन को मंत्रमुग्ध कर चले गये और उन्होंने दूध ग्रहण किया। वास्तव में दुग्ध पान करते ही वे प्रेम के रोमांच से व्यथित हो गये। अपने अश्रुओं से भीगे वे विलाप करने लगे। अदृश्य भगवान् ने ब्रजवासियों के द्वारा उनके लिये भजन-कुटीर बनाकर-सांत्वना दी। इस प्रकार सनातन गोस्वामी के भजन कुटीर का निर्माण हुआ। रूप गोस्वामी भी समय समय पर यहाँ आते रहते थे।

खीर का प्रसंग

एक दिवस श्रील रूप गोस्वामी सोच रहे थे कि वे श्रीसनातन गोस्वामी को कुछ मीठे चावल निवेदन करेंगे। हालांकि ऐसा सोचते हुए वे थोड़ा संकोच कर रहे थे परन्तु श्रीमती राधारानी ने उनके मनोभाव को समझ लिया। एक ग्वाल सखी के वेश में वे प्रसन्नता के भाव में घी, दूध और शक्कर लेकर वहाँ आयीं।

उन्होंने श्रीरूप गोस्वामी से कहा, 'कृपया ये वस्तुऐं स्वीकार करें और भगवान् श्रीकृष्ण के लिये भोजन पकाऐं, तत्पश्चात् आप इसे प्रसाद रूप में प्राप्त करेंगे। मेरी माँ ने आपसे ये कहने को कहा है, तो कृपया लज्जा का अनुभव न करें।' यह कहकर श्रीराधारानी ने विदा ली।

श्रीरूप गोस्वामी ने तत्क्षण भोजन पकाना शुरू कर दिया। अति उत्साह से भगवान् श्रीकृष्ण के लिये भोग निवेदन कर उन्होंने श्रीसनातन गोस्वामी को कुछ प्रसाद दिया। श्रीसनातन गोस्वामी नहीं समझ पाये कि वे उस प्रसाद की सुगन्धि पाकर कैसे इतने प्रसन्न हो गये।

प्रसाद के एक या दो कौर ग्रहण करके श्रीसनातन गोस्वामी व्यथित हो उठे और अपने आँसू न रोक पाए। तब उनके द्वारा श्रीरूप गोस्वामी से प्रसाद में उपयुक्त सामग्री के बारे में पूछने पर श्रीरूप गोस्वामी ने सारा वृत्तांत सुना डाला। यह सुनकर श्रीसनातन गोस्वामी ने भविष्य में इस प्रकार की वस्तुओं की इच्छा करने के लिए श्रीरूप को निषेध किया। इस प्रकार श्रीसनातन गोस्वामी ने प्रसाद ग्रहण कर लिया परन्तु श्रीरूप गोस्वामी कुछ खिन्न थे।

तब श्रीमती राधारानी श्रील रूप गोस्वामी के स्वप्न में प्रकट हुईं और उन्हें सांत्वना दी। श्रीसनातन गोस्वामी को इस बात का पता चल गया।

श्रीरूप-विरह

हे श्रीनिवास इस प्रकार श्रीरूप गोस्वामी के अद्भुत गुणों का वैष्णव समुदाय को बोध हो गया। एक दिवस श्रीराधा और श्रीकृष्ण की विरह लीलाओं की चर्चा करते हुए सभी वैष्णव रुदन करने लगे और अचेत होकर धरती पर जा गिरे। श्रीरूप गोस्वामी का हृदय अग्नि के समान जल रहा था फिर भी उन्होंने यह तथ्य उजागर नहीं किया। जैसे ही श्रीरूप गोस्वामी ने श्वास छोड़ा तो, उनकी श्वास एक भक्त से स्पर्श कर गयी तो उस ताप से जले के घाव और शरीर पर छाले हो गये। यह देखकर हर कोई अचंभित हो गया। श्रील रूप गोस्वामी की इस प्रकार की गतिविधियां थीं। इससे अधिक मैं क्या कह सकता हूँ। नन्दीश्वर में जो असीमित प्रसन्नता प्राप्त हुई उसका वर्णन करना कठिन है।

वृत्तांत समाप्त करने के बाद श्रीराघव पंडित, श्रीसनातन गोस्वामी की भजन कुटीर की ओर गये। उस स्थान पर श्रीसनातन गोस्वामी के पुजारी के गोपाल मिश्र नाम के पुत्र रहते थे। जिनमें सभी श्रेष्ठ गुण थे। वे श्रीसनातन गोस्वामी के शिष्य थे और बहुत सुन्दर थे। उन्हें देखकर हर कोई आनन्दित हो जाता था।

श्रीउद्धव दास, श्रीमाधव दास और अन्य जो वहाँ थे, एक दूसरे से मिलकर अति उत्साहित हुए। शीघ्रता से सभी वैष्णव प्रसन्नतावश उनके लिये विविध प्रकार का भोजन ले आए। उस दिवस भक्तों ने महोत्सव का आनन्द लिया।

सम्पूर्ण रात्रि भगवान् के पावन नामों का उच्चारण करते हुए व्यतीत हुई। जो कोई भी इस अद्‌भुत लीला का श्रवण करता है उसे शीघ्र ही श्रीकृष्ण-प्रेम प्राप्त होता है। श्रीगोपाल दास और अन्य विद्वत् जन उल्लसित हो गये।

बठैन गाँव

प्रातः श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को लेकर परिक्रमा मार्ग पर चल पड़े। राघव पंडित, श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम से बोले, '**बठैन** नामक इस गांव के दर्शन करो। जब भी गोप ग्वालों की कोई बैठक होती तो हर कोई इस स्थान पर आता और बैठ जाता। क्योंकि वे यहाँ बैठते थे, इस कारण इस स्थान का नाम बैठाना पड़ा।(बैठक या बैठने का स्थान)। अब लोग इस स्थान को छोटा बठैन और बड़ा बठैन कहते हैं। ब्रजवासियों के प्रेम में बंधे सनातन गोस्वामी प्रसन्नतापूर्वक यहाँ रहे। सभी को पावन करने के लिये मैं सनातन गोस्वामी के चरित्र का संक्षेप में वर्णन करुँगा जो कि ब्रजवासियों को अपने प्राणों से भी अधिक स्नेह करते थे। जब सनातन गोस्वामी ब्रज की परिक्रमा पर जाते वे नगर नगर जाते और उनकी प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं थी।'

एक नगर में ठहरने के बाद जब श्रीसनातन गोस्वामी दूसरे नगर में जाते तो लोग उनके साथ हो लेते थे। कोई भी हो चाहे युवा, बुजुर्ग या बच्चे, सभी अपना धैर्य खो देते और श्रीसनातन गोस्वामी के विदा लेने पर रोने लगते। श्रीसनातन गोस्वामी स्वयं भी लोगों को शान्त करवा कर घर वापिस भेजते हुए रो पड़ते थे। जब सब लोग वापिस घर पहुँच जाते और शान्त होकर रोना बन्द कर देते तभी श्रीसनातन गोस्वामी दूसरे गांव को प्रस्थान कर जाते।

जब श्रीसनातन गोस्वामी दूसरे गांव में पहुँचते तो लोग दूर से ही उन्हें आता देख लेते। जवान, बुजुर्ग, पुरुष हो या महिलाऐं- सब कहते, 'ये रहे रूप, सनातन।' ब्रजवासी उनके प्रति अद्‌भुत स्नेह का भाव प्रदर्शित करते। लोग एक स्थान पर बैठने की बजाय श्रीसनातन गोस्वामी का स्वागत करने चल देते। जैसे एक निर्धन व्यक्ति को एक बहुमूल्य आभूषण प्राप्त होने पर असीमित प्रसन्नता अनुभव होती है वैसे ही ब्रजवासियों को असीमित प्रसन्नता श्रीसनातन गोस्वामी के दर्शन करने से होती थी।

पुत्र स्नेह

यहाँ तक कि सर्वाधिक वृद्ध पुरुष और महिलाओं ने भी श्रीसनातन को अपने पुत्र समान माना। किसी ने कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र, तुमने हमें भुलाकर इतने दिवस व्यतीत किये? तुम्हारे बारे में सोचते हुए हम मृत समान हो जाते हैं।' ऐसा बोलते हुए वे श्रीसनातन गोस्वामी के मुख को निहारते। अपने स्वागत के विविध प्रबन्ध देखकर श्रीसनातन गोस्वामी भाव-विभोर हो गये। उस गांव में

जन्मे पुरुष, महिलाऐं और बच्चे, सभी श्रीसनातन गोस्वामी से स्नेहमय भाव रखते थे।

किसी ने कहा, 'मेरे प्रिय भ्राता, कैसे हो तुम? तुम पूर्ण रूप से हमें भूल गये होंगे। तुम इतने निर्दयी क्यों हो गए हो' इस प्रकार बोलते हुए उनके नेत्रों में अश्रु भर गये। सभी बालक और बालिकाऐं, श्रीसनातन गोस्वामी के चरणकमल स्पर्श करने आये। यद्यपि उन्होंने (सनातन) प्रयास किया पर वे उन्हें रोक नहीं पाये। दूर खड़े होकर संकुचित विवाहित महिलाओं ने भी श्रीसनातन गोस्वामी के दर्शन किये।

हे श्रीनिवास, श्रीसनातन गोस्वामी को देखकर हर कोई प्रणाम करना और अन्य औपचारिकताऐं भूल जाता था। जो कोई भी उनका स्वागत करने दौड़ता आता, उन्हें आलिंगन कर लेता, उनका हाथ पकड़ता और मार्ग में आगे ले जाता। गाँव के लोग प्रसन्नतावश उन्हें एक पावन वृक्ष के नीचे बैठाते और फिर चारों ओर से उन्हें घेर कर बैठ जाते। वे सब अपने घरों से श्रीसनातन गोस्वामी के लिये दही, घी और दूध लेकर आते।

अद्‌भुत-स्नेह ब्रजवासियों का

जब श्रीसनातन गोस्वामी प्रसाद पा लेते तब लोग प्रसन्न होकर उनके पास आकर बैठ जाते। वे बहुत स्नेह से प्रत्येक से हाल-चाल पूछते। वे पूछते कि उनके कितने लड़के, लड़कियां या बच्चे हैं, वे विवाहित हैं या अविवाहित, उनके नाम क्या हैं, उनकी शिक्षा कहाँ तक हुई है। वे पूछते कि प्रत्येक के पास कितनी गाय या बैल हैं। उनकी खेती की क्या दशा है। वे कितना अन्न उपजाते हैं और उनकी नित्य दिनचर्या क्या है। वे ये भी पूछते थे कि उनका स्वास्थ्य और मनोभाव कैसे हैं?

इस तरह के प्रश्न पूछने पर हर कोई प्रसन्नता का अनुभव करता था। हर कोई पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देता। जब श्रीसनातन गोस्वामी किसी के दु:ख की बात सुनते तो वे भी दु:खी हो जाते थे। उनके शांति प्रदायक वचनों को सुनकर वे अपने दु:ख की दशा से शान्ति का अनुभव करते। इस प्रकार कभी-कभी वे पूरी रात व्यतीत कर देते थे।

अगली प्रात: जैसे ही वे स्नान आदि नित्य कर्म निपटाते, हर कोई उनके दर्शनों को आ जाता। वे दही और दूध लेकर आते और श्रीसनातन गोस्वामी से स्वीकार करने का निवेदन करते। सब को प्रसाद पवाकर फिर वे स्वयं प्रसाद ग्रहण करते थे।

अन्य जनों को प्रसन्न देखकर श्रीसनातन गोस्वामी भी प्रसन्न हो जाते थे। जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है जब वे गाँव से बाहर जाते जो हर कोई व्यथित होकर रोने लगता। कौन उनके स्नेहमय व्यवहार का वर्णन कर सकता

है? वे प्रत्येक को विविध प्रकार से सांत्वना देते। लोग कुछ दूरी तक उनके साथ चलते जब वे उन्हें आश्वासन देते तो वे सब लोग घर लौट जाते थे।

श्रीसनातन गोस्वामी नगर नगर भ्रमण करने के बाद बठैन-ग्राम पहुँचे। उन को देखकर सभी गांव वासी इतने प्रसन्न हुए कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। श्रीसनातन गोस्वामी सभी से कुशल-क्षेम पूछते और इसी प्रकार आनन्दित होकर दिन रात व्यतीत करते। सभी को पता था कि वे एक स्थान पर मात्र एक रात्रि के लिये रुकते थे, इस कारण सब दुखी होकर उनसे बोलते, 'अगर आप कुछ दिवसों के लिये यहाँ रुकें तो ये हमारे लिये शुभ होगा। इसलिये इसको स्वीकार कर लीजिये और हमारे प्रति इतने निर्दयी मत बनिए। कृपया अपनी बहुत सवेरे विदा होने की आदत त्यागकर हमारे प्राणों की रक्षा कीजिये।' इस प्रकार बोलते हुए सभी ग्राम वासी रोने लगे। सभी को प्रसन्न करने के लिये श्रीसनातन गोस्वामी रुकने के लिये मान गये। इस प्रकार बठैन और आस पास के लोग सदा उनके अद्‌भुत गुणों में मग्न रहने लगे।

हे श्रीनिवास यह **नीप-वन** है, जिसका सौन्दर्य प्रत्येक को आकर्षित करता है। यहाँ **श्रीकृष्ण-कुण्ड** पर भगवान् ने उत्तमोत्तम सुखों का आनन्द लिया। **कुण्डल-कुण्ड** पर श्रीकृष्ण अपने केश की सज्जा करते थे। **बेड़ोखोर-कुंज** में श्रीराधा और श्रीकृष्ण कुंज के बन्द द्वारों के भीतर लीलाऐं रचाते थे।

'**चरण-पहाड़ी**' पर श्रीकृष्ण ने प्रसन्नता से अनेक लीलाऐं रचायीं। एक बार श्रीकृष्ण और उनके ग्वाल सखा केवल मात्र गौ चारण के सुन्दर दृश्य का अवलोकन करने हेतु इस पर्वत पर चढ़ गये। सुन्दर वेशभूषा धारण किये हुए श्रीकृष्ण, वंशी वादन करते हुए एक वृक्ष के नीचे अपनी त्रिभंग मुद्रा में जा खड़े हुए। जैसे ही उनकी वंशी का स्वर सुनाई दिया, सभी दिशाओं से लोग उनके निकट आ गये और मधुर स्वर सुनते हुऐ निष्क्रिय से खड़े हो गये। क्या इस भूमि पर इस दिव्य संगीत की कोई तुलना की जा सकती है? यहाँ तक कि पर्वत भी इनकी वंशी के स्वर से पिघल जाते हैं।

श्रीकृष्ण के चरण चिह्न और जो भी उनकी वंशी सुनने आता, उनके भी चरण चिह्न इस पर्वत पर हैं, इस कारण इसका नाम **चरण पहाड़ी** (पहाड़ी अर्थात् पर्वत) है।

यहाँ पर **हारोयाल-ग्राम** में श्रीकृष्ण-कुण्ड है जहाँ श्रीबलराम और श्रीघनश्याम ने अपनी लीलाओं का आनन्द लिया। राधिका जी से चौपड़ के खेल में हारने पर श्रीकृष्ण अत्यधिक लज्जित हो गये थे। (हारोयाल शब्द हार अर्थात् पराजय से आया) ललिता सखी ने राधिका जी से कहा, 'तुमने सरलता से इस चौपड़ के खेल में अपने प्राण प्रिय स्वामी को पराजित कर दिया परन्तु हम देखेंगे के प्रेम के खेल में कौन जीतता है।' राधारानी की सखियों ने तब दिव्य युगल का मार्गदर्शन किया और उन्हें 'निकुंज-मन्दिर' की ओर ले गईं तथा

गोपनीय रूप से उन्हें निहारने लगीं। श्रीकृष्ण और श्रीराधा के मध्य दिव्य प्रेम सम्बन्ध को देखकर सखियां स्वयं को अत्यधिक सौभाग्यशाली अनुभव करने लगीं।

सतोहा-ग्राम में श्रीशांतनु मुनि ने भगवान् कृष्ण की आराधना की थी। श्रीकृष्ण स्वच्छंद रूप से **सूर्य-कुण्ड**, **नन्दन-कूप** और **वाद्य-शिला** पर विचरण करते थे। यह **पाई ग्राम** (पाई अर्थात् पाना, प्राप्त करना) ही था जहाँ श्रीराधिका और उनकी सखियों ने श्रीकृष्ण को खोजते हुऐ पकड़ा था। इस **चलन-शिला** स्थान पर प्रेम के भाव से बाहर आ पाने में असमर्थ कृष्ण बैठ गये थे।

कामरी-ग्राम में (काम) कृष्ण ने कामुकता के भाव में राधा की प्रतीक्षा की थी। **विछोर-ग्राम** में चन्द्रमुखी और उनकी सखियां, श्रीकृष्ण से मिली थीं। (विछौड़ा विच्छेद शब्द से आया है अर्थात् विरह)। देखे जाने पर श्रीराधा और श्रीकृष्ण एक दूसरे से विरह के भाव में अपने-अपने घर लौट आये। इस कारण इस स्थान का नाम विछोड़ा पड़ा।

तिलोयार-ग्राम में श्रीकृष्ण एक पल के विश्राम के बिना खेले थे (तिलयोरा, तिल शब्द से आया है अर्थात् मात्र एक पल)। यह **शृंगार-वट** है जहाँ श्रीकृष्ण ने राधिका जी को विविध प्रकार से सजाया था। आगे श्रीकृष्ण की लीलाओं के सुन्दर स्थानों के दर्शन करो। लोग वर्तमान में इस स्थान को **ललापुर** कहते हैं। यहाँ **वासोसी-ग्राम** है जो कि श्रीकृष्ण के तन की सुगन्धि से महकता है। (यह नाम वास शब्द से आया, अर्थात् महक)। भंवरों की उत्तेजना और सम्पूर्ण विश्व के धैर्य का नाश करने वाली इस महक के बारे में क्या कहा जाये।

यहाँ वह स्थान है जहाँ राधारानी और श्रीकृष्ण ने अपने सखाओं के साथ होली खेली थी। **पय-ग्राम** में श्रीकृष्ण ने अपने सखाओं के संग पय (दूध) का पान किया था और **दधि-ग्राम** में उन्होंने गोपियों से दही झपटी थी। उन्होंने अपना विनोदी समय कोटरवन में व्यतीत किया जो अब **कोटवन** कहलाता है।

एक बार श्रीकृष्ण क्षीर समुद्र में अनंत शेष पर लेटे हुए थे और राधिका जी उनके चरणकमल दबा रही थीं। उनके दिव्य सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्रज-विलास-स्तव में लिखा है- 'जब श्रीकृष्ण शेष शैय्या पर लेटे थे तब राधिका जी उनके चरणकमल अपने वक्ष स्थल पर रखना चाहती थीं परन्तु उन्हें लगा कि कहीं उनका कठोर वक्ष-स्थल, उनके चरणकमलों को कष्ट न दे, उन्होंने अपने आप को रोक लिया। मैं उस शेषशायी से प्रार्थना करता हूँ कि वे मुझे इस सुन्दर ब्रजधाम में वास प्रदान करें।'

श्रीराघव पंडित ने बताया कि श्रीकृष्ण चैतन्यचन्द्र यहाँ **शेषशायी** के दर्शन करने आये थे। शेषशायी के सौन्दर्य के दर्शन कर उनका उत्साह बढ़ गया और उस उत्साहित प्रेम भाव में वे भाव-विभोर हो उठे। वे सौभाग्यशाली थे

जिन्होंने भगवान् की प्रभा के दर्शन किये वे उत्साह से व्यथित हो गये और उनके नेत्रों से अश्रु बहने लगे। अंततः उन्होंने माना कि वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं, बल्कि उस संन्यासी के वेश में स्वयं शेषशायी भगवान् हैं। ऐसा बोलते हुए वे निरंतर श्रीचैतन्य महाप्रभु के चन्द्र समान मुख को निहार रहे थे।

'हे श्रीनिवास' श्रीराघव पंडित ने कहा, 'श्रीचैतन्य महाप्रभु का चरित्र अगाध है और उनकी अनुकम्पा से ही कोई उन्हें समझ सकता है।'

तब श्रीराघव पंडित ने कदम्ब वृक्ष के बाग की ओर इशारा किया जहाँ श्रीकृष्ण विचरण किया करते थे। इसके बाद वे **खम्बहरा** में **खानी-ग्राम** गये जहाँ श्रीकृष्ण और श्रीबलराम अपनी गायें चराते थे। खानी-ग्राम, ब्रज की एक सीमा पर स्थित है और अन्य सीमा पर **वनचारी** है, जो कि श्रीकृष्ण की लीलाओं के लिये ही विख्यात है।

खररो में श्रीबलराम ने अपने ग्वाल सखाओं का कुशल-क्षेम पूछा था। **उज्जानी** (उजाना अर्थात् जलमार्ग) में यमुना जी ने अपना मार्ग बदला था और श्रीकृष्ण की बांसुरी के मधुर स्वर को सुनकर धारा के विपरीत बहने लगी थी। **खेलनवन** में, जो अब खेला-तीर्थ कहलाता है, श्रीकृष्ण और श्रीबलराम अपनी भूख प्यास तक भूलकर दीर्घकाल तक खेलते रहे, जब तक उनकी मैया भोजन करवाने नहीं आगईं।

श्री बलराम लीला स्थल रामघाट

हे श्रीनिवास, यह **राम-घाट** है, रोहिणी के पुत्र श्रीबलराम ने यहाँ अपनी रास-लीला रचायी थी। यह स्थान उस स्थान से काफी दूर है जहाँ पर श्रीकृष्ण ने अपनी रास-लीला रचायी थी।

श्रीबलराम स्वयं श्रीकृष्ण का ही दूसरा तन हैं और वे सर्वोच्च सज्जन और सहिष्णु हैं। उनके वास्तविक स्वरूप की गहराई मानो लाखों समुद्र के समान है। ब्रजवासियों से मिलने को अधीर वे द्वारका से ब्रज आये और चैत्र और वैशाख (मार्च मध्य से मई मध्य) तक श्रीनन्द, यशोदा मैया और अन्य लोगों को सांत्वना देने के लिये यहाँ रहे। उनके प्रेममय विनम्र व्यवहार के कारण रोहिणी के पुत्र ने अपने सखाओं को विविध प्रकार से तृप्त किया।

यहीं पर श्रीबलराम ने श्रीकृष्ण की प्रिय गोपियों और सखाओं को भी सांत्वना दी और अपनी प्रिय गोपियों का भी मन प्रसन्न कर दिया, जिनके साथ उन्होंने पूर्व में बसंत काल में लीलाओं का आनन्द लिया था। उस समय श्रीकृष्ण ने शंखचूड़ का वध किया था तब अपनी प्रिय गोपियों के साथ होली का त्यौहार मनाकर रंग का वर्धन किया था।

विद्वान् भक्तों ने इन लीलाओं के सौन्दर्य का वर्णन किया है। 'श्रीकृष्ण चैतन्य चरित' में श्रीमुरारी गुप्त ने कहा है, 'इस स्थान को देखो! स्वर्ण और अन्य

आभूषणों से सुशोभित और बसन्त के अनुकूल वेशभूषा धारण कर अपनी गोपियों के साथ प्रणय भाव में श्रीकृष्ण और बलराम अनेक लीलाओं में मग्न थे। वे उत्साह से उन्मादित हो गोपियों और सखाओं के साथ नृत्य और गायन में मग्न हो रहे थे।'

भगवान् बलराम की सहभागी गतिविधियां अद्भुत थीं और तनाव मुक्त उत्तमोत्तम भाव से परिपूर्ण थीं। उनके स्नेही प्रियतमों की कोई सीमा न थी। उन्होंने उन गोपियों की प्रीति में वृद्धि कर दी जो उस समय कम अवस्था के कारण उनका संग पाने योग्य सौभाग्यशाली नहीं थीं, जब श्रीकृष्ण रास-लीला रचाते थे। श्रीबलराम इन लीलाओं में लीन रहते, इनका वर्णन नहीं किया जा सकता।

श्रीमद्भागवत (10.65.17) में यह वर्णन है। प्रभु के अभिन्न व्यक्तित्व भगवान् श्रीबलराम यहाँ पर मधु और माधव के दो मास में रहे थे और रात्रि में वे अपनी ग्वाल सखियों को दाम्पत्य आनन्द प्रदान करते थे।

श्रीराघव पंडित रास-लीला के दौरान श्रीबलराम के सौन्दर्य का वर्णन करते रहे। हे श्रीनिवास, यह जानकर कि वे अपने प्रियतमों के साथ रास-लीला रचायेंगे, श्रीबलराम प्रसन्न होकर इस स्थान पर चले आते थे। यमुना तट के निकट स्थित यह सुहावना स्थान सुगन्धित पवन से सुवासित रहता है। बाग के पुष्प पूर्ण रूप से खिले हुए थे, आकाश पूर्ण चन्द्रमा के साथ चमक रहा था। भंवरों के गुंजन और अन्य पक्षियों के संगीतमय स्वर से वातावरण ऊर्जावान हो रहा था। बाग में लाखों मोर और मोरनियाँ नृत्य कर रहे थे और हिरण खेल रहे थे। जैसे ही श्रीबलराम विश्राम करने एक वृक्ष के नीचे बैठते, आकाश में देवता रोहिणी नन्दन, जिनका सौन्दर्य और रूप सम्पूर्ण जगत को आकर्षित करता है, उनकी महिमा का गुणगान करते।

हे श्रीनिवास, श्रीबलदेव के तेज को देखकर कौन अपने धैर्य पर नियंत्रण रख सकता है? यहीं पर श्रीबलराम उत्सव पोशाक से सज्जित यहाँ सुशोभित सिंहासन पर बैठे थे। श्रीबलदेव का सौन्दर्य कोटि कामदेव को जीतने वाला था और वे हर पल मुनियों और इन्द्र आदि को आकर्षित कर रहे थे। उनके उत्तमोत्तम तन की महिमा, जो कि तीनों लोक को चमक प्रदान कर रही थी, कोटि चन्द्रमाओं के गर्व का मर्दन कर रही थी। उनके शीश पर रेशमी, काले, घुंघराले केश, रत्न जड़ित मुकुट से शोभित थे और उन्होंने पुष्प माला धारण कर रखी थी। उनके होंठ बिम्बा फल के समान लाल थे और दांत मोतियों की तरह सफेद थे। उन्होंने अपने सशक्त कंठ में वैजयंती माला धारण कर रखी थी।

उनके शीश के ऊपर घुंघराले लहरदार चमकदार केश और मस्तक पर चमकदार तिलक युवतियों का हृदय चुराने वाला था। उनके नयन आतुर थे और उनकी भौंहे उनके कान के निकट काले भंवरे के समान नृत्य करती प्रतीत होती

थीं। नुकीली नाक जो कि गरुड़ की चोंच को भी परास्त करने वाली थी और उनका मुख चन्द्रमा की चमक को भी जीतने वाला था।

ऐसा प्रतीत होता है उनके शरीर से अमृत की बूँदे बरस रही हैं। उनकी कलाइयां कंगनों से सजी हुई थीं और रत्न जड़ित कण्ठहार उनके विशाल वक्ष को सज्जित कर रहा था। उनकी पतली कमर, सिंह के गर्व का मर्दन कर रही थी। उन्होंने नीले वर्ण की अत्युत्तम पोशाक धारण कर रखी थी और उनके सुडौल घुटने देखने वाले को आनन्दित कर रहे थे।

उनके चरणकमलों में तलवों की लालिमा सूर्य को पराजित कर रही थी और नख अंधकार को जीत रहे थे। मैं पर्याप्त रूप से श्रीबलदेव के सौन्दर्य का वर्णन करने में असमर्थ हूँ क्योंकि इस संसार में उनकी कोई तुलना नहीं है। इस प्रकार पुराणों में श्रीबलदेव का वर्णन किया गया है।

इस स्थान पर रोहिणी-नन्दन बलराम ने अपने त्रिभंग रूप में खड़े होकर तुरही बजाई, जिसके स्वर ने ब्रह्मा और अन्य के हृदय को विचलित कर दिया। हे श्रीनिवास मात्र एक मुख से मैं श्रीबलराम की लीलाओं का वर्णन कैसे करुं? यहाँ चन्द्रमा की चांदनी से प्रकाशित यमुना-उपवन में श्रीबलराम कोटि गोपियों से घिरे अनेकों लीलाओं में मग्न रहें।'

श्रीबलराम का रासस्थल

इसका वर्णन श्रीमद्भागवत (10.65.18-20) में इस प्रकार है। 'असंख्य महिलाओं के संग में भगवान् बलराम ने यमुना के निकट बगीचे में आनन्द लिया। यह बगीचा पूर्णिमा के चन्द्रमा के प्रकाश में नहाया हुआ और रात्रि में खिलने वाले कुमुद पुष्प की सुगन्धि युक्त पवन से महका हुआ था।'

वरुण देवता द्वारा भेजा गया दिव्य पेय वारुणी वृक्ष के कोटर से बह रहा था और सम्पूर्ण वन को अपनी मीठी सुगन्ध से और अधिक महका रहा था। पवन उस पेय की सुगन्ध को बलराम तक ले गयी और जब उन्होंने उसे सूँघा तो बलराम उस वृक्ष के निकट गये। वहाँ उन्होंने और उनकी सखियों ने उसका पान किया।

उस पेय का पान करने के बाद रोहिणी-नन्दन मदमस्त हो गये और अपनी गोपियों के संग रास-नृत्य करने लगे। कुछ गोपियों ने मृदंग, पिनाक, वीणा और अन्य वाद्य यन्त्र बजाये और अन्य गोपियों ने सुरीले गीत गा कर श्रीबलदेव की महिमा का गुणगान किया। भगवान् ब्रह्मा भी इस संगीत से विचलित हो उठे। श्रीबलराम स्वयं नृत्य, गान और संगीत से आनन्दित हो गये और शीघ्र ही रास-मन्दिर प्रसन्नता से भर गया।

अपनी प्रियतमाओं के साथ जल-क्रीड़ा करने के लिये श्रीबलराम अपने हल से यमुना को निकट खींच लाये और उनके जल में क्रीड़ा करने लगे। स्नान

करने के बाद श्रीबलराम ने अपनी पोशाक बदली, मधु और पेय का पान किया और वह रात्रि अपनी सखियों के साथ व्यतीत की। अगली प्रात: शीघ्र ही गोपियां, श्रीबलदेव जी से विरह सहन न कर सकीं और घर वापिस नहीं जाना चाहती थीं। बलराम जी ने विविध प्रकार से उन्हें सांत्वना दी और घर वापिस भेज दिया। श्रीबलदेव के भय से यमुना ने उनकी प्रार्थना की और हाथ जोड़कर उनके चरणों में जा गिरीं।

यह वर्णन ब्रज-विलास-स्तव में प्राप्त होता है। 'जब यमुना जी अपने शांत स्वभाव में दक्षिण सागर की ओर बह रही थीं तो उन्होंने बलराम के आदेश का कोई उत्तर नहीं दिया और इस कारण उन्हें हल से खींच लिया गया। इस स्थान पर उन्हें ऐसे देखा जा सकता है। मैं इस स्थान का भावात्मक हृदय से गुणगान करता हूँ।'

श्रीराघव पंडित ने अपने शिष्यों को बताया कि बलराम जी की रास-स्थली सम्पूर्ण विश्व में विख्यात है और भक्त सदैव इस सुन्दर राम-घाट नामक स्थान पर अपनी प्रार्थनाऐं निवेदित करते हैं।

(बल) राम-घाट

जो कोई भी राम-घाट की महिमा का श्रवण करता है वह सहजता से भौतिक जीवन से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। अपनी तीर्थ यात्रा के दौरान श्रीरास-विलासी राम और श्रीनित्यानन्द राय इस स्थान पर कुछ दिवस रुके थे। वे ग्वाल सखाओं संग खेलते और भूख लगने पर दही, दूध, कन्द-मूल और फल आदि ग्रहण करते थे। वे विकल हो रहे थे और श्रीबलदेव के रूप में असफलतापूर्वक अपनी पहचान छिपाने का प्रयास कर रहे थे। स्थानीय लोगों ने कहा, 'निश्चित ही ये अवधूत के रूप में ब्रज में विचरण कर रहे श्रीरोहिणी-नन्दन हैं। श्रीनित्यानन्द की दिव्य लीला देख कर क्या युवा क्या बुजुर्ग, सब चकित रह गये।'

श्रीराघव पंडित ने शाकट का वृक्ष दिखाया जिसके काष्ठ से नित्यानन्द प्रभु अपने दांतों का मार्जन करते थे। राम-घाट पर एक ब्राह्मण रहता था जो श्रीबलदेव के बिना रहने की एक पल की भी कल्पना नहीं कर सकता था। अपने भक्त को तृप्त करने के लिये श्रीनित्यानन्द प्रभु ने भगवान् बलदेव के रूप में उसे दर्शन दिये। यहीं पर कालिन्दी ने श्रीनित्यानन्द प्रभु के श्रीरास-विलासी राम के रूप से प्रार्थना की थी। देवता भी श्रीनित्यानन्द प्रभु को इस स्थान पर खेलता देख अपने भावपूर्ण अश्रुओं को नहीं रोक पाये।

जब श्रीनित्यानन्द प्रभु एक वृक्ष के नीचे धूल के आसन पर सोये तो वे बार-बार अपने स्वप्न में पुकार रहे थे, 'कब इस आत्मा को मुक्ति प्राप्त होगी?

कब नवद्वीप के प्रभु अवतार लेंगे। मैं जाऊँगा और अपने नेत्रों से उन्हें देखूँगा' कोई भी उनके शब्दों के अर्थ को नहीं समझ सकता था।

राम-घाट के निकट **कच्छवन** नामक स्थान है जहाँ बच्चे कच्छप (कछुऐ) के रूप में खेला करते थे। **भूषणवन** में सखाओं ने श्रीकृष्ण को पुष्पों के आभूषण धारण करवाये थे। ये सभी स्थान श्रीकृष्ण की लीलाओं के कारण विख्यात हैं। इन स्थानों के दर्शन करने से भौतिक जीवन की धधकती अग्नि से आराम प्राप्त होता है। इन पवित्र स्थानों का वर्णन करते हुए श्रीराघव पंडित और उनके शिष्य एक वन से गुजरे जिसके सौन्दर्य ने उनके हृदय को अधीर कर दिया। **भाण्डीर** के मार्ग पर यात्रा करते हुए उन्हें आन्तरिक रूप से अत्यधिक प्रसन्नता अनुभव हुई। वर्तमान में लोग इसे **अक्षय-वट** (एक बरगद का वृक्ष) के नाम से पुकारते हैं। मृदु स्वर में बोलते हुए श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास से कहा, '**भाण्डीर-वट** नाम के इस सुन्दर स्थान को देखो। इस स्थान पर श्रीबलराम और श्रीकृष्ण अपने खेल का आनन्द लेते थे। जब वे अपने सखाओं के साथ खेल रहे थे तो प्रलम्बासुर छद्म वेश में वहाँ आया और उनमें घुल-मिल गया। बलराम जी ने हास-परिहास में प्रलम्बासुर का वध कर दिया और इस प्रकार यहाँ भाण्डीर में सखाओं के साथ श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं का आनन्द लिया।'

एक दिवस भाण्डीर में जब श्रीकृष्ण एक वृक्ष के नीचे बैठे थे, उन्होंने अपनी बाँसुरी आकर्षित करने वाले कुछ इस राग से बजायी जो कि सम्पूर्ण विश्व को उन्मत्त कर दे। जब राधारानी ने बांसुरी का स्वर सुना तो वे व्यथित हो गयीं और अपनी सखियों के साथ श्रीकृष्ण से मिलने के लिये भागी। अति उत्साह में उन्होंने सखियों के साथ यहाँ अनेक खेल लीलाओं का आनन्द लिया।

भाण्डीरवन में कुश्ती

श्रीराधा ने अपने मंद स्वर में श्रीकृष्ण से पूछा, 'तुम इस स्थान पर अपने मित्रों के साथ कैसे खेलते हो?' श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया, 'मैं पहलवान की वेश-भूषा धारण करता हूँ और अपने मित्रों के साथ कुश्ती करता हूँ। कोई मेरी तरह कुश्ती नहीं जानता और मैं सरलता से जीत जाता हूँ।' ललिता मुस्कराई और श्रीकृष्ण से अपनी कुश्ती की वेश-भूषा में कुश्ती दिखाने का निवेदन किया। तब सभी की वेशभूषा कुश्ती की वेश-भूषा में परिवर्तित कर दी गयी परन्तु श्रीकृष्ण को अपनी वेश-भूषा पर गर्व था। श्रीकृष्ण की कुश्ती वाली वेश-भूषा देख कर राधारानी मंद-मंद मुस्कुरा दीं और दोनों ही कुश्ती के अखाड़े में प्रवेश कर गये। इस कुश्ती के मुकाबले में हार-जीत का कोई प्रश्न नहीं था और प्रेम के देवता कन्दर्प खेल को देख कर तृप्त हो गये।

इस लीला का वर्णन ब्रज-विलास-स्तव में है। मैं भाण्डीर की महिमा गाता हूँ जहाँ सौम्य राधारानी श्रीकृष्ण से कुश्ती लड़ने को आतुर हैं, सखियों के साथ कुश्ती की वेश-भूषा धारण किये हुए हैं। मदन की प्रसन्नता के लिये तब वे बकासुर के शत्रु बकारि के साथ खुशी से कुश्ती लड़ती हैं। जो स्वयं भी कुश्ती की वेश-भूषा में है।

इस प्रकार अनेक अद्‌भुत लीलाऐं भाण्डीरवन में रचायी गयी। कौन उन सबका वर्णन कर सकता है? भाण्डीर के निकट **आरा-ग्राम और मुञ्जाटवी** के दर्शन करो जहाँ श्रीकृष्ण ने गौओं और गोपगणों की रक्षा के लिये अग्नि को निगल लिया था। भाण्डीर-ग्राम यमुना के दूसरे छोर पर है। तपोवन में ग्वालों की बेटियों ने तपस्या की थी। **गोपी-घाट** पर उन्होंने यमुना में स्नान किया था। **चीर-घाट** पर गोपियों ने प्रसन्नतापूर्वक कात्यायनी देवी की आराधना की थी। यमुना में स्नान के लिये प्रवेश करते समय उन्होंने अपने वस्त्र यहाँ तट पर रख दिये थे। श्रीकृष्ण ने चुपके से उनके वस्त्र चुराये और आनन्द लेने के लिये कदम्ब के वृक्ष पर चढ़ गए। जब गोपियों को पता लगा कि उनके वस्त्र नहीं है तो वे बहुत लज्जित हुईं और जल में रहकर ही उन्हें लौटाने का निवेदन करने लगीं। अपने मन की बात उजागर कर श्रीकृष्ण ने प्रसन्नतापूर्वक उनके वस्त्र लौटा दिये। गोपियों ने स्वयं को श्रीकृष्ण को पूर्णत: समर्पित करने के पश्चात् ही अपने वस्त्र धारण किये।

यहाँ **नन्द-घाट** पर नन्द और अन्य गोप-ग्वालों ने यमुना नदी में स्नान किया। एकादशी व्रत करने के बाद नन्द जी ने द्वादशी पर स्नान करने के लिये कालिन्दी में प्रवेश किया। स्नान करते समय वरुण देव के एक सेवक ने उनका अपहरण कर लिया परन्तु श्रीकृष्ण ने सरलता से उन्हें छुड़ा लिया। नन्द महाराज इस स्थान पर अत्यधिक भयभीत हो गये तो श्रीकृष्ण के प्रपौत्र और अनिरुद्ध के पुत्र वज्रनाभ ने इस स्थान का नाम **भय** रखा। भय को पीछे छोड़ श्रीराघव पंडित ने मथुरा के आस-पास पवित्र स्थलों की यात्रा जारी रखी।

वत्स-हरण स्थल

यहाँ **वत्सवन** को देखो जहाँ ब्रह्मा जी ने बछड़ों को चुराया था। ब्रज-विलास-स्तव यह वर्णन देता है। मैं वत्स-हरण-स्थली की महिमा का गुणगान करता हूँ जहाँ ब्रह्मा जी ने भगवान् श्रीकृष्ण की महिमा के कौतूहलवश बछड़ों और गोप-ग्वालों को चुरा लिया था। बछड़ों और गोप-ग्वालों की माताओं की चिरकालिक कामना को पूर्ण करने के लिये श्रीकृष्ण तब बछड़ों और गोप-ग्वालों के रूप में प्रकट हो गये ताकि उनकी माताओं द्वारा दिया भोजन ग्रहण कर सकें।

'**उनाई ग्राम** में श्रीकृष्ण और उनके सखाओं ने मिलकर सब प्रकार के भोज्य पदार्थ ग्रहण किए। **बलहारा** में ब्रह्मा जी गोप-ग्वालों को चुराकर आनन्दित

हो गये थे (बलहारा शब्द बल अर्थात् लड़के और हारा अर्थात् चुराना से बना)। परखम में ब्रह्मा जी, श्रीकृष्ण की शक्ति की परीक्षा लेना चाहते थे। इस स्थान पर **सेई** (सेई अर्थात् यह) जो कि सर्वविदित है ब्रह्मा जी, श्रीकृष्ण की माया के कारण बेसुध हो गये थे। गोप-ग्वालों और बछड़ों को चुराकर उन्हें छिपा दिया परन्तु जब वे श्रीकृष्ण के पास लौटे तो उन्हीं गोप-ग्वालों को देखा। अभिभूत होकर वे बार-बार बोलने लगे, 'ये वही है या वे यही है' इसी कारण से ही इस स्थान का नाम सेई पड़ा।

चौमुहाँ-ग्राम में ब्रह्मा जी ने श्रीकृष्ण से आग्रह किया और अपनी धृष्टता के प्रति पछतावा करते हुए भगवान् से प्रार्थना का निवेदन किया।

ब्रज-विलास-स्तव कहता है। 'मैं भीरुचतुर्मुख नामक स्थान की महिमा का गुणगान करता हूँ। ये वही स्थान है जहाँ ब्रह्मा जी ने अपने गोप-ग्वाल और गौओं को चुराने के अपराध का पछतावा किया था और धरती पर गिर कर महाराज नन्द के पुत्र मुकुन्द जो मन्द-मन्द मुस्कुरा रहे थे, उनके चरणकमलों में जा गिरे थे।' अपने अश्रु भरे नेत्रों से उन्होंने प्रभु की महिमा का गुणगान किया था।

अघवन में श्रीकृष्ण ने अघासुर का वध किया था परन्तु लोग इस स्थान को अब **सपौली** (सांपों का स्थान) कहते हैं।

ब्रज-विलास-स्तव में यह लिखा है। 'सर्प-स्थली मेरी रक्षक बने क्योंकि यही वह स्थान है जहाँ शक्तिशाली मुरारी ने अपने मित्रों को देखा था जब वे पापी अघासुर के जलते हुए, जहरीले पेट में प्रवेश कर गये थे। उन्होंने अपने सखाओं का पीछा किया, जो उन्हें अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय थे और राक्षस पर क्रोधित होकर उन्हें (मित्रों को) बचाने के लिये विशालकाय सर्प को मार दिया।'

जयेत-ग्राम (जैंत) में देवताओं ने श्रीकृष्ण की यह कह कर स्तुति की, 'जय जय देवताओं के सर्वोच्च व्यक्तित्व' और उन पर पुष्प बरसाये। श्रीकृष्ण ने अघासुर को बहुत चतुराई (सयानेपन) से मारा। इस कारण गांव का नाम **स्यानो** और कभी-कभी **सेहोना** पड़ा। **तरौली** और **बरौली** इन दो गांव को देखो, जिनका नाम गोपों ने रखा।

आगे श्रीराघव पंडित, श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास आचार्य को एक **कृष्ण कुण्ड टीला** नाम के छोटे से पर्वत के ऊपर ले गये और जब उन्होंने सभी दिशाओं में देखा तो उन्हें अगाध आनन्द का अनुभव हुआ। श्रीराघव पंडित ने उन्हें **मघेरा-ग्राम** के दर्शन करवाये, जो पूर्व में मगहेरा नाम से जाना जाता था और **तमाल वन** वह स्थान है जहाँ श्रीराधा और श्रीकृष्ण मिला करते थे।

आटस-ग्राम में अष्टावक्र मुनि ने तपस्या की थी। **शक्र स्थान** का नाम बाद में **सकराया** पड़ा। यह स्थान इसलिये विख्यात है क्योंकि यहाँ पर शक्र

(इन्द्र) ब्रज में भयंकर वर्षा करने के बाद भयभीत हो गया था। **वराहर** गांव में श्रीकृष्ण अपने सखाओं के साथ वाराह का रूप रचकर खेले थे। **हरासली-ग्राम** के दर्शन करो जहाँ कृष्ण ने अपना रास-नृत्य रचाया था।

ब्रज-विलास-स्तव में यहाँ ये वर्णन है। 'ये रास-स्थली जो कि तीनों लोक में अनमोल रत्न है, ये हमारी रक्षक बने। श्रीकृष्ण ग्वाल-गोप की पत्नियों के साथ प्रफुल्लित रूप से रास रचाते हुए, राधा के साथ एकान्त स्थान पर राधा का पुष्पों से शृंगार करने के लिये चले जाते और उनके साथ दिव्य प्रेममयी लीलाओं में मग्न हो जाते।'

इन सब पावन स्थलों का वर्णन करने के बाद श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के साथ नन्द-घाट पर लौट आये।

नन्दघाट पर श्रीजीव

राघव पंडित ने कहा कि **नन्द-घाट** पर एकान्त स्थान पर श्रीजीव कुछ समय तक एकान्त वास में रहे। एक बार श्रीरूप गोस्वामी वृन्दावन में एकान्त स्थान पर एक ग्रन्थ लिख रहे थे। गर्मी बहुत थी, और श्रीरूप गोस्वामी के तन का पसीना सुखाने के लिये श्रीजीव गोस्वामी निकट खड़े होकर उन्हें पंखा झल रहे थे। श्रीरूप गोस्वामी और श्रीजीव गोस्वामी दोनों का सौन्दर्य दीप्तिमान था। उस समय श्रीवल्लभ भट्ट, श्रीरूप गोस्वामी से मिलने आये।

वल्लभाचार्य-जीव-चर्चा

जब उन्होंने श्रीरूप गोस्वामी के ग्रन्थ 'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' का मंगलाचरण देखा तो उन्होंने कहा, 'मैं इसका संशोधन कर दूँगा।' जब श्रीवल्लभ भट्ट यमुना जी में स्नान करने गये तो श्रीजीव गोस्वामी यमुना जी से जल भरने उनके पीछे-पीछे चले गये।

यद्यपि वे व्यक्तिगत रूप से श्रीवल्लभ भट्ट को नहीं जानते थे, तो भी श्रीजीव गोस्वामी ने पूछा, 'मंगलाचरण में क्या त्रुटि है?'

जब श्रीवल्लभ भट्ट ने वो सारे बिन्दु बताये जो उन्हें लगा कि ठीक हो सकते हैं तब श्रीजीव गोस्वामी ने अपने शास्त्रों के ज्ञान के आधार पर उनका खण्डन किया।

श्रीजीव गोस्वामी को चर्चा में पराजित न कर सकने के कारण श्रीवल्लभ भट्ट श्रीरूप गोस्वामी के पास जाकर उनका परिचय पूछने लगे। श्रीरूप गोस्वामी ने श्रीवल्लभ भट्ट को बताया कि वह युवा वैष्णव उनका भतीजा है और कुछ दिवस पूर्व ही वह अपने गाँव से आया है। तब श्रीवल्लभ भट्ट ने श्रीजीव गोस्वामी की प्रशंसा की और श्रीरूप गोस्वामी को ग्रन्थ के बारे में हुई चर्चा के बारे में बताया। उसके बाद श्रीवल्लभ ने विदा ली।

जब श्री जीव गोस्वामी नदी से वापिस आये तो श्रीरूप गोस्वामी ने उन्हें शांत स्वर में डांट लगायी 'ये श्रीवल्लभ भट्ट की दीनता थी कि वे मेरे भले के लिये आये थे। वे मेरे ग्रन्थ का संपादन करना चाहते थे। तुम ये वैष्णव कृपा सहन नहीं कर सकते? अपने घर लौट जाओ और तब वृन्दावन वापिस आना जब अत्यधिक धैर्यवान बन जाओ।'

तत्क्षण श्रीजीव गोस्वामी ने स्थान त्याग दिया और पूर्व दिशा में अपने घर की ओर चल दिये। जब उनका चित कुछ शांत हुआ तब उन्होंने वन में ही एकान्त स्थान पर रहने का निश्चय किया क्योंकि उन्हें श्रीरूप के संग में जाने की आज्ञा नहीं थी। वे पत्तों से बनी झोपड़ी में रहे। कभी-कभी दुःख और विलाप में अपना समय व्यतीत करते हुए वे कुछ खा लेते और कभी कुछ न खाते। उन्होंने सोचा कि यदि वे अपने प्राण त्याग देंगे तो उन्हें भगवान् के चरणकमलों की सेवा प्राप्त होगी।

अपनी यात्रा के दौरान श्रीसनातन गोस्वामी उस गांव में आये। गाँव के लोग उनका स्वागत करने आये और उनके कुशल-क्षेम के बारे में पूछा। उन्होंने बताया कि एक अति सुन्दर युवा संन्यासी दीर्घकाल से केवल फल और कन्द-मूल आदि अल्प आहार और आटा युक्त जल लेते हुए रह रहा है।

मिल गये जीव

यह सोचकर कि वह संन्यासी निश्चित ही श्रीजीव गोस्वामी होंगे, श्रीसनातन गोस्वामी अति वात्सल्य में उन्हें देखने चले गये। श्रीजीव गोस्वामी को छप्पर वाली झोपड़ी में देखकर श्री सनातन गोस्वामी खुद पर धैर्य न रख पाये और भूमि पर उनके चरणकमलों में लोट गए। गांववासी यह देखकर अत्यन्त चकित थे।

सनातन गोस्वामी ने श्रीजीव गोस्वामी से उनकी कठिनाइयों के बारे में पूछा तो श्रीजीव गोस्वामी ने प्रसन्नतापूर्वक सब कुछ बता दिया। गांववालों को सान्त्वना देकर श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीजीव को उनकी कुटिया में छोड़ विदा ली और श्रीरूप गोस्वामी से मिलने श्रीवृन्दावन चले गये।

श्रीसनातन गोस्वामी के वृन्दावन आने की बात सुनकर श्रीरूप गोस्वामी उनसे मिलने गये। सनातन गोस्वामी ने उनसे अपने ग्रन्थ 'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' के बारे में पूछा और श्रीरूप गोस्वामी ने कहा कि उन्होंने उनके ग्रन्थ का लेखन पूर्ण कर लिया है परन्तु श्रीजीव गोस्वामी की अनुपस्थित के कारण उसका संपादन अपूर्ण है।

सनातन गोस्वामी ने श्रीरूप गोस्वामी को सारी स्थिति से अवगत कराया। 'जीव गोस्वामी जीवित हैं परन्तु वे इतने दुर्बल हो गये हैं कि हवा का झोंका भी उनके तन को हिला देता है।'

तत्क्षण श्रीरूप गोस्वामी, श्रीजीव गोस्वामी को वृन्दावन वापिस ले आये और बहुत भाव से उनकी देख-रेख की। हर कोई श्रीजीव गोस्वामी के स्वास्थ्य लाभ से प्रसन्न था और श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी ने उन्हें दायित्व प्रदान कर दिए। उनकी अनुकम्पा से श्रीजीव गोस्वामी के ज्ञान की महत्ता सम्पूर्ण विश्व में फैल गयी।

एक दिग्विजयी एक बार वृन्दावन आया और श्रीजीव गोस्वामी को चुनौती दी। 'अगर तुम मेरे साथ तर्क-वितर्क का मुकाबला नहीं करोगे तो मेरे जयपत्र पर हस्ताक्षर कर दो।'

विजय पत्र से पराजय

श्रीजीव गोस्वामी ने उसे जयपत्र भेज दिया परन्तु दिग्विजयी ने उसे पढ़कर पराजय स्वीकार कर ली। श्रील जीव गोस्वामी की महिमा अवर्णनीय है। श्रीराघव गोस्वामी ने अपने दोनों अनुचरों को श्रीजीव गोस्वामी की कुटिया दिखाई। उसके बाद उन्होंने यमुना जी को पार कर **सुरूखुरू गांव** में रात्रि व्यतीत की। श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास आचार्य को ज्ञात हुआ कि यहाँ श्रीकृष्ण, देवताओं से प्रसन्न हो गये थे। यहाँ से श्रीराघव पंडित ने कुछ दूरी के गांवों की ओर इंगित किया और विस्तार से उन स्थानों पर हुई लीलाओं का वर्णन किया।

भद्रवन

प्रात:काल सुरूखुरू से विदा होकर तीनों **भद्रवन** में आ गये। आदि-वाराह-पुराण में यह लिखा है कि जो भी छठे वन भद्रवन में जाता है वह भगवान् श्रीकृष्ण का भक्त बन जाता है। इस वन की अनुकम्पा से वह स्वर्ग को जाता है।

भाण्डीरवन

यह भाण्डीरवन है जहाँ श्रीबलराम और श्रीकृष्ण अपने सखाओं के साथ विविध खेल खेलते थे। आदि-वाराह-पुराण में यह वर्णन है। ग्यारहवाँ वन है भाण्डीरवन यह सुन्दर स्थान है जो योगियों को अतिप्रिय है। इस वन को देखने मात्र से ही जीव अगला जन्म लेने से बच जाता है। वनों में सर्वोत्तम इस वन में भगवान् वासुदेव के दर्शन अगला जन्म होने से बचाते हैं। जो कोई व्यक्ति यहाँ स्नान करता है, व्रत करता है, अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण करता है तो वह सब अपराधों से मुक्त हो जाता है और इन्द्रलोक को जाता है।

भाण्डीर वन में श्रीकृष्ण और उनके सखा खेलने के बाद छाया में बैठकर विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थों का आनन्द लेते थे। इस कारण इस नगर का नाम भगवान् की लीला के **बाद छाँहरी पड़ा**। (यह नाम छाया से आया)

माँट-ग्राम में राम और कृष्ण अपने सखाओं संग खेला करते थे। माठा नामक मिट्टी का विशालकाय पात्र, जिसमें ब्रजवासी दही से माठा (छाछ) बनाते थे, इसी के आधार पर इस पवित्र स्थान का नाम माठा पड़ा।

बिल्ववन

वह **बिल्ववन** है जहाँ बलराम और श्रीकृष्ण पके हुए बेल फल ग्रहण करते थे। आदि-वाराह-पुराण के अनुसार यह बिल्व वन सभी अंश अवतारों द्वारा पूजा जाता है। जो भी यहाँ आता है, वो ब्रह्मलोक में पूजा जाता है।

बिल्व वन में **कृष्ण-कुण्ड** में स्नान करने पर जीव अपने पापों से मुक्त हो सकता है। पूर्व में यमुना जी एक ही धारा के रूप में प्रवाहित होती थी और मान-सरोवर, नदी से बहुत दूरी वाले छोर पर था। अब यमुना जी ने स्वयं को दो भागों में विभाजित कर लिया है और दूसरे स्थान पर मिलकर मान-सरोवर के चारों ओर घेरा बना दिया। ये सभी स्थान श्रीकृष्ण की लीलाओं के क्षेत्र हैं। (बिल्व वन को श्रीवन नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि लक्ष्मी जी ने यहाँ तप किया था।)

लौहवन

लौहवन में श्रीकृष्ण गौचारण किया करते थे। लोहजंग नाम के राक्षस का वध इसी स्थान पर हुआ था। आदि-वाराह-पुराण बताता है कि यह नौंवा वन, लोहवन जो कि लोहजंग द्वारा रक्षित था, वह सब पापों का नाशक है।

श्रीराघव पंडित ने अपने अनुचरों को वह सुहावने स्थान दिखाये जहाँ नन्द-कुमार विचरण किया करते थे। कृष्ण, बलराम नृसिंह और अन्यों के श्रीविग्रह देखने के बाद श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को यमुना जी के निकट ले गये, जहाँ श्रीराधा-कृष्ण की नौका-लीला हुई थी।

श्रीराघव पंडित बता रहे थे, 'एक बार राधारानी और उनकी सखियाँ अपने दूध पात्रों के साथ यहाँ पर यमुना जी को पार जाने के लिये आयी थीं। उनका सौन्दर्य श्रीकृष्ण को उत्साहित कर रहा था, जो एक टूटी हुई नौका लेकर उनकी नदी पार करवाने में सहायता करने के लिये प्रतीक्षा कर रहे थे। जब राधारानी ने श्रीकृष्ण को देखा, जो कि गहरी निद्रा में सोने का बहाना बना रहे थे तो वे बार-बार उन्हें नदी के पार ले जाने के लिये उन्हें पुकारने लगीं। कुछ समय बाद श्रीकृष्ण उन्हें अपनी नाव में बिठा कर परम आनन्द में कुछ दूरी तक ले गये। इसके परिणाम स्वरूप जो आनन्द उत्पन्न हुआ, उसका वर्णन करना मेरे लिये संभव नहीं, परन्तु कवियों ने अपनी रचनाओं में अति सुन्दर रूप से इसका वर्णन किया है।'

अग्रलिखित वर्णन पद्यावली से है। राधारानी ने चिन्तित होकर श्रीकृष्ण से पूछा, 'यह नौका टूटी हुई है और यहाँ नदी बहुत गहरी है। हम युवा कुमारियां हैं और ये परिस्थितियाँ हमारे पक्ष में नहीं हैं। हमारे बचने का एकमात्र उपाय नाविक के रूप में केवल आप हो। हे यदुनन्दन, आपके कहने पर मैंने अपने दूध पात्रों को, अपने कंठ हार को और अपने दुपट्टे को गिरा दिया है फिर भी दूसरा छोर कहीं नजर नहीं आ रहा है। इस नौका में लगातार जल भर रहा है और ये किसी भी क्षण जल भंवर की तूफानी लहरों से घिर कर डूब जायेगी। ओह, ये कैसा अप्रत्याशित संकट है! कृष्ण इतने पर भी तुम खुशी से ताली बजा रहे हो। मेरे हाथ नौका से जल निकालते नहीं थक रहे और तुम हास-परिहास को रोक नहीं सकते। हे कृष्ण, यदि इस बार मैंने अपनी रक्षा कर ली तो मैं फिर कभी तुम्हारी नौका में पैर भी नहीं रखूँगी।'

महावन

महावन पहुँचने पर श्रीराघव पंडित ने अत्यधिक हर्षोन्माद में मृदु भाषा में श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास से कहा, 'नन्द बाबा और यशोदा मैया के घर के दर्शन करो। इस स्थान की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है? भगवान् **श्रीकृष्ण के जन्मस्थान** के दर्शन करो। अपने पुत्र का मुख देखकर नन्द जी और अन्य गोप ग्वाल अत्यधिक प्रसन्न हो जाते थे। गोप-ग्वाल और ग्वालिन भी उनके दर्शन करने आये और नन्द जी ने अपने पुत्र का जन्मदिवस, लोगों में बहुत सी वस्तुऐं बांट कर मनाया। उस समय सम्पूर्ण विश्व अद्भुत प्रसन्नता से भर गया था।'

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन प्राप्त होता है। 'मैं महावन के प्रति श्रद्धा प्रकट करता हूँ जहाँ ब्रजराज श्रीनन्द ने श्रीकृष्ण का जन्मदिवस 18 लाख गायें वितरित करके मनाया, हर गाय एक मोतियों का हार और स्वर्ण आभूषण धारण किये हुए थी। उन्होंने ब्राह्मणों को भी अत्यधिक आभूषण और अनाज दिया'

स्तव माला के नन्दोत्सव के पहले गीत में यह लिखा है। 'यशोदा मैया ने बहुत सुन्दर पुत्र को जन्म दिया और गोप आदि प्रसन्नता से अभिभूत हैं। कुछ गोप-ग्वाल भेंट लाये, अन्य गोप निरन्तर नृत्य कर रहे थे, जबकि अन्य लोग गीत गा रहे थे। उनमें से कुछ ने दही और मक्खन वितरित किया, कुछ ने अन्य भक्तों की कामना पूर्ति करी और कुछ ने केवल श्रीकृष्ण के अनादि अनूप रूप के दर्शन किये।'

गीतावली के एक अन्य गीत में यह कहा गया है 'ब्राह्मणों को गाय भेंट कर पूर्णतः तृप्त कर दिया गया। हे ब्रजेश्वर कृपया शीघ्रता से गायों को तृप्त कीजिये। हे नन्दराज आपको सुन्दर पुत्र प्राप्त हुआ है इसलिए अपने उत्सव के लिये कृपया गोप-ग्वालों को उपयुक्त भेंट देकर उनके निवेदन को स्वीकार

कीजिये। मेरा हृदय आपके पुत्र के मुख के दर्शन कर आनन्द से परिपूर्ण है और इसकी कामना है कि इसे वह प्राप्त हो जो आपने किसी को न दिया हो। मुझे आपके पुत्र में तल्लीन होने दीजिये, जो श्रीसनातन के हृदय रूपी जलाशय में क्रीड़ा करते हुए श्याम वर्ण राजहंस के समान विराजमान है।

श्रीराघव पंडित ने पवित्र स्थलों का वर्णन करना अनवरत रखा। यहीं पर श्रीनन्द ने श्रीकृष्ण के जन्म के सभी धार्मिक संस्कारों का निर्वाह किया था। एक गौशाला में नन्द जी ने गर्गाचार्य के सम्मुख अपना भाव रखा और कंस के भय को स्वीकारा। गर्ग ने गौशाला में ही श्रीराम और श्रीकृष्ण की नाम-करण विधि को पूरा किया।

विभिन्न कृष्ण लीला स्थलियां

ब्रजेन्द्र कुमार श्रीकृष्ण ने **पूतना का वध** यहीं पर किया। श्रीकृष्ण ने एक बार यहाँ **छकड़ा-गाड़ी** को धरती पर रखते हुए तोड़ा था। पद्यावली में श्रीकृष्ण के बाल्यकाल का यह वर्णन है। बालक कृष्ण की महिमा देखो, जिसकी चमकीली लाल हथेली हैं और चरणकमल गौरोचन तिलक से शोभित हैं। अपनी पीठ के बल लेटते हुए उन्होंने छकड़ा-गाड़ी को तोड़ दिया।

यहाँ पर श्रीकृष्ण अपनी माँ की गोद में लेट गये थे ताकि वे स्तनपान कर सकें। अपने पुत्र के मुख के सौन्दर्य से अभिभूत यशोदा मैया ने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें दूध पान करवाया। पुनः पद्यावली से अपनी माँ की गोद में अध-खुले नेत्रों से लेटे हुए श्रीकृष्ण एक स्तन का पान कर रहे हैं और दूसरे पर हाथ फेर रहे हैं, जो कि दुग्ध से भरा है।

उनकी माँ भी उन पर अपनी उंगलियाँ फेरकर दुलार कर रही हैं। श्रीकृष्ण निरन्तर मुस्कुराते हुए अपनी चमकदार दन्तावली दिखा रहे हैं, जो दूध के कारण श्वेत हो गये हैं। ये सभी दांत हमारी रक्षा करें।

श्रीराघव पंडित ने उस स्थान की ओर इंगित किया जहाँ श्रीकृष्ण रेंग-रेंग कर चलकर माँ यशोदा को आनन्द प्रदान करते थे। यह पद्यावली के इस पयार में वर्णित है। 'ब्रजेश्वरी की चिंताओं के प्रति सचेत, श्रीकृष्ण अधीर नेत्रों से और अपने मधुर होठों से अमृतमयी मुस्कान बिखेरते हुए, धरती पर रेंगते थे। उनका चमकदार रंगरूप, गहरे तमाल के पत्ते के समान था। मैं इस बालक से प्रार्थना करता हूँ।'

जब गोपियाँ, श्रीकृष्ण को अपने नेत्र, कान, नाक, चेहरे और बालों की कलंगी खोजने को कहतीं तो वे अपनी छोटी सी उंगली से संकेत करते और उन्हें अत्यंत प्रसन्नता प्रदान करते। यहीं पर श्रीकृष्ण अपने तन पर मिट्टी पोत लेते। माँ यशोदा फिर उन्हें स्नेह से झिड़कतीं, 'मैंने तुम्हें अभी स्नान करवाया और इत्र लगाया था और तुमने तत्क्षण स्वयं को मिट्टी पोत ली!'

श्रीराघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा, 'यहीं पर भगवान् कृष्ण दुग्धपान के लिये माँ के पास जाते थे। एक बार **तृणावर्त**, श्रीकृष्ण को आकाश में ऊंचा ले गया, जहाँ श्रीकृष्ण ने इस दृश्य का आनन्द लिया और यहीं कंस के राज्य में तृणावर्त का वध कर दिया। श्रीकृष्ण ने एक बार **ब्रजरज खा ली** और ब्रजवासियों को सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के दर्शन अपने मुख में करवाये। इसलिये इस स्थान को **ब्रह्माण्ड-घाट** कहा जाता है। यहाँ पर ही यशोदा मैया और उनकी गोपी सखियों ने घर के आंगन में बैठकर अपने पुत्र के सौन्दर्य का आनन्द लिया।'

यह वर्णन भी पद्यावली से लिया गया है। 'जब नन्द-नन्दन पांच वर्ष के थे, वे नन्द जी के घर के आंगन में खेल कर अधीर हो जाते थे। उनके नेत्र, घुंघराले बालों के गुच्छे से ढके हुऐ थे। वे चूड़ियों, नूपुर और कंठ हार से सुशोभित थे।'

गोपियां उनके होंठो पर चुम्बन कर, अपनी गर्दन उन पर दबाकर, उनके सुन्दर नेत्रों में देखकर, अपने मस्तक से उनका मस्तक स्पर्श कर उत्सुकता वश दीर्घकाल तक अपने वक्ष स्थल से लिपटा कर रोते समय उन्हें चुप करवाने का प्रयास करतीं। भगवान् श्रीकृष्ण जो इस अवस्था में प्रेम के भाव में मग्न रहते, जिनका तन गतिहीन है, रोमांच से ढका हुआ है और मृदु मुस्कान से शोभित है, वे हमारे रक्षक बनें।

हे चौरी (चोर) तुम कहाँ जा रहे हो? हम सरलता से देख सकते हैं कि आप असीम आनन्द के भाव में हो। तुम मेरी गेंद कुर्ती में छिपा कर ले जा रही हो। लाओ मुझे वापिस दो! यह कह कर कृष्ण जबरदस्ती नव-विवाहिता गोपी के वक्ष स्थल को मसल देते। वह भगवान् केशव, जिनका तन अत्यधिक आकर्षक दिखता है, उनके केश एक तरफ बड़े सुसज्जित हो रहे हैं, वे इस प्रकार गोकुल को परास्त कर रहे हैं।

मैं भगवान् कृष्ण के बाल्यकाल की लीलाओं का गुणगान करता हूँ। एक दुग्ध से भरे पात्र की ओर रेंगते हुए, वे अपनी माता के हाथों पकड़े जाने के भय से बार-बार इधर-उधर देखते।

नींद में डूबे श्रीकृष्ण देवताओं को पुकारते और ये बात माँ यशोदा को चिन्तित कर देती। हे शिव, स्वागत है! कृपया यहाँ विराजिये। हे ब्रह्मा, मेरे बाईं ओर बैठिये, हे कार्तिकेय, तुम स्वस्थ होओ? हे इन्द्र, तुम प्रसन्न होओ? तुम कहाँ थे कुबेर? मैंने तुम्हें यहाँ नहीं देखा। जब माँ यशोदा ने अपने पुत्र को नींद में ऐसे बोलते हुऐ सुना तो उन्होंने कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र, तुम ये सब अलौकिक बातें क्यों कह रहे हो?' तब उन्हें बुरी आत्माओं से बचाने के लिये उन्होंने बालक कृष्ण की नजर उतार ली।

श्रीराघव पंडित बोलते रहे, 'यहाँ पर ही यशोदा माँ, कृष्ण को सुलाते समय श्रीरामचन्द्र की कथाऐं सुनाया करती थीं। यशोदा कहतीं, 'एक राम नाम के राजा थे।' 'हां' कृष्ण उत्सुकतापूर्वक उत्तर देते। 'उनकी पत्नी का नाम सीता था।' 'जब अपने पिता के आदेश पर वे पंचवटी के वन में गये तो रावण ने उनकी पत्नी का अपहरण कर लिया।' अपने पूर्व की लीला की कथा सुनकर श्रीकृष्ण अधीर हो उठे और बोले, 'हे लक्ष्मण मेरे धनुष और बाण कहाँ हैं?'

जब श्रीकृष्ण जाग रहे होते तो माँ यशोदा कहती, 'संध्या समय समाप्त होने वाला है प्रिय। तुम सो क्यों नहीं रहे हो?'

'हे माँ, मैं नहीं सो सकता' श्रीकृष्ण उत्तर देते। यशोदा कहतीं, 'ठीक है, प्रिय एक कथा सुनो, जिससे तुम्हें नींद आ जायेगी।' कृष्ण उत्तर देते, 'हां मुझे सुनाओ।'

यशोदा माँ कहतीं, 'हिरण्यकश्यपु राक्षस का वध करने के लिये एक स्तंभ से भगवान् नृसिंह प्रकट हुए।' जब यह अद्भुत कथा सुनी तो देवकी-नन्दन का मुख एक मृदु मुस्कुराहट से चमक उठा।

यहाँ माता यशोदा ने श्रीकृष्ण को ऊखल से बांधा था जिसे उन्होंने बहुत आनन्द से स्वीकार किया था। यह पावन स्थान '**यमलार्जुन-भंजन-तीर्थ**' कहलाता हैं। यहाँ स्थित अद्भुत कुण्ड में बहुत पवित्र जल है। इस कुण्ड में स्नान करने और उपवास करने से जीव को असीमित फल प्राप्त होता है और वह इन्द्रलोक में पूजनीय हो जाता है। यह गोपेश्वर का मन्दिर है, जिसके दर्शन करने से अत्यधिक जघन्य पाप भी नष्ट हो जाते हैं।

यह महावन श्रीकृष्ण को अति प्रिय है, यहाँ उन्होंने अनेकों लीलाऐं रचायी थीं। यहाँ सप्त-समुद्र-कूपों के दर्शन करो। पुराणों में यह बताया गया है कि यहाँ पिण्ड-दान करने से जीव की सभी कामनाऐं पूर्ण होती हैं।

आदि-वाराह-पुराण में यह वर्णित है। **आठवाँ वन, महावन** सदा मेरा प्रिय है। जो यहाँ आता है, वह इन्द्र के निवास में पूज्य हो सकता है। इस पवित्र तीर्थ पर श्रीकृष्ण ने बालक के रूप में दूध और दही के पात्रों को तोड़ते हुए एक छकड़ा-गाड़ी को लुढ़का दिया था। यहाँ उपवास और स्नान करने से असीमित फल प्राप्त होता है। सभी पापों के विनाशक **गोपेश्वर महादेव** यहाँ महावन में रहते हैं।

महावन में महाप्रभु

श्रीराघव पंडित ने कहा, 'हे श्रीनिवास, यहीं पर श्रीकृष्ण के जन्मोत्सव स्थान को देखकर श्रीचैतन्य महाप्रभु उत्तमोत्तम प्रेम भाव में परम आनन्दित हो गये थे। अत्यधिक प्रेम मे लीन प्रभु नृत्य और गान में मग्न हो गये और अपनी अनुकम्पा बरसा कर उन्होंने सब के हृदय को मुग्ध कर दिया। सभी दिशाओं से

लोग आकर श्रीचैतन्य महाप्रभु के दर्शन पाकर उत्साह से भगवान् श्रीहरि के नाम का जप करने लगे। हर किसी के नेत्रों से अश्रु बहने लगे जैसे ही वे चिल्लाते कि यह बालक संन्यासी नहीं स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण हैं।' भगवान् के प्रेममय उत्साह के प्रभाव स्वरूप लोग उत्तेजित से हो गये और उत्साहवश धरती पर जा गिरे। किसमें इतनी क्षमता है कि वह श्रीगौरचन्द्र की गतिविधियों को समझ सके।

इस कारण महावन परम आनन्द का एक विशाल सागर बन गया था। प्रेम में उत्तेजित श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीमदन-गोपाल के श्रीविग्रह के दर्शन करते हुए यहाँ रहे। श्रीचैतन्य महाप्रभु की दिव्य लीलाओं का वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीसनातन के श्रीमदनगोपाल

श्रीराघव पंडित इसके बाद अपने दो अनुचरों को उस पवित्र स्थान पर ले गये जहाँ श्रीसनातन गोस्वामी एक बार रहे थे। महावन के निवासी, श्रीसनातन गोस्वामी को अपने मध्य पाकर अति गौरवान्वित हुए। जब श्रीसनातन गोस्वामी महावन में रह रहे थे तब मदन-गोपाल के नित्य दर्शन पाकर अति प्रसन्न होते थे।

श्रीमदन-गोपाल, यमुना किनारे, रेतीले तट पर रमणक में क्रीड़ा किया करते थे। एक दिवस मदन-गोपाल, महावन के अन्य बालकों के साथ ग्वाले के भेष में लीलाऐं करने आये। जब श्रीसनातन गोस्वामी ने उन बालकों को विविध प्रकार से खेलते हुए देखा तो उन्होंने सोचा कि यह बालक कोई सामान्य ग्वाल बालक नहीं हो सकता। जब खेल समाप्त हो गया तब श्रीसनातन गोस्वामी ने बालक का घर तक पीछा किया। उन्होंने देखा कि बालक मन्दिर में प्रवेश कर गया, परन्तु जब श्रीसनातन गोस्वामी मन्दिर के भीतर गये तो वहाँ उन्होंने ग्वाल बाल के बजाय केवल मदन-गोपाल के श्रीविग्रह को देखा। श्रीसनातन गोस्वामी ने श्रीविग्रह के आगे झुककर प्रणाम किया और किसी से बिना कुछ बोले घर वापिस आ गये। मदन-गोपाल, श्रीसनातन गोस्वामी के प्रेममय भक्ति के पूर्णतः वशीभूत थे।

गोपकूप

श्रीराघव पंडित ने कहा, 'इस कूप के दर्शन करो, जिसे हर कोई **गोप-कूप** के नाम से बुलाता है। यह गोकुल और महावन स्थान दोनों एक ही हैं और समान हैं। इन स्थानों का सौन्दर्य इतना चित्ताकर्षक है कि उपनन्द और अन्य गोप यहीं के निवासी हो गये। भगवान् कृष्ण द्वारा बाल्यकाल में की गई अनेक लीलाऐं पुरुषों और महिलाओं के चित्त को हर्षित करती हैं। हे श्रीनिवास इस प्राचीन वृक्ष के दर्शन करो, जिसके सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता है।'

गोकुल के निवासी इस वृक्ष के नीचे बैठकर अपनी थकान से विश्राम पाते हैं। गौरांग प्रभु भी यहाँ बैठे थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के इस स्थान पर पधारने का वर्णन कौन कर सकता है? श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रयाग से **अग्रवन (आगरा)** पहुँचे और फिर वहाँ से जमदग्नि मुनि के आश्रम के दर्शन करने गये। प्रभु **रेणुका-ग्राम** गये, जिसका नाम जमदग्नि मुनि की पत्नी **रेणुका के नाम** पर रखा गया था। यह परशुराम जी का जन्म स्थान है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु **रेणुका** से गोकुल, **राजग्राम** के रास्ते से आये और वृक्ष के नीचे बैठ गये।

गोकुल में श्रीचैतन्य महाप्रभु के आगमन का 'चैतन्य-चरितामृत' में इस प्रकार वर्णन है। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने प्रयाग में श्रीबिन्दुमाधव के दर्शन किये और फिर अपने शिष्यों के साथ उन्मत्त प्रेम के भाव में नृत्य किया। अक्षय-वट के दर्शन करने के बाद उन्होंने एक मस्त हाथी की भांति त्रिवेणी में स्नान किया। उनके नेत्रों में प्रेम अश्रु भर गये, उनके रोंगटे खड़े हो गये और स्थान छोड़ते हुए गंभीरता से उन्मत्त होकर चिल्लाने लगे।

तब प्रभु ने यमुना पार की और आगरा आ गये जहाँ पर महान् शूरवीर अवतार परशुराम की जन्मस्थली है। यमुना जी के दर्शन करने के बाद, जो कि वृन्दावन की ओर बहती हैं, श्रीचैतन्य महाप्रभु राज-ग्राम चले गये। अंततः श्रीचैतन्य महाप्रभु ने गोकुल में प्रवेश किया और उन्मत्त प्रेमभाव से आनन्दित हो उठे।

यहाँ आकर श्रीचैतन्य महाप्रभु संकीर्तन करते हुए उन्मत्त प्रेम भाव से पागल से हो गये। जैसे ही वे श्रीकृष्ण जन्मस्थली की ओर गये, अपार जनसमूह उनके पीछे चलने लगा। हे श्रीनिवास, जहाँ कृष्ण का जन्मोत्सव सम्पूर्ण रीति-रिवाज से मनाया गया, यह स्थान अत्यन्त आनन्द का वास स्थान है। सभी वृद्ध गोपियां श्रीकृष्ण के हित के लिये यहाँ अत्यंत प्रसन्नता से मंगल गीत गाती थीं। नन्द महाराज और अन्य गोप यहाँ बैठते और विभिन्न विषयों पर चर्चा करते। यद्यपि असंख्य संकट उत्पन्न होने के बाद उन सबने वृन्दावन आने का निर्णय लिया।

राघव पंडित ने आगे उस मार्ग की ओर संकेत किया जिस पर से ये गोप, गोकुल और रावल से वृन्दावन गये। अपनी यात्रा के दौरान उन्होंने भाण्डीरवन में यमुना जी के पार जाते हुए बहुत आमोद-प्रमोद किया। **सकरौली-ग्राम** में उन्होंने गाय और बछड़ों को संग्रहीत किया और एक साथ ले आये।

श्रीराधारानी प्राकट्य

तब उन्होंने कहा, 'हे श्रीनिवास, **रावल** के दर्शन करो, वह गांव जहाँ वृषभानु प्रसन्नतापूर्वक रहे थे। श्रीराधिका जी यहाँ प्रकट हुईं और उनके मंगलमय प्राकट्य से सम्पूर्ण विश्व आनन्द से भर उठा।'

ब्रज-विलास-स्तव में निम्नांकित प्रार्थना है। 'मुझ में वृषभानु पुर के रावल के प्रति प्रेम भर जाए। यहाँ श्रीराधा रूपी अनमोल रत्न कीर्तिदा के गर्भ से प्रकट हुई, जिसकी स्तुति अवतारों, रसिकों और जीवमात्र ने की।'

जब राधारानी, कीर्तिदा के गृह में प्रकट हुई तब श्रीवृषभान के निवास में व्याप्त अत्यंत आनन्द को कौन समझ सकता है? श्रीराधा के दीप्तिमान रूप से दसों दिशाऐं प्रकाशमान हो गयीं। जो भी राधा जी के एक बार दर्शन कर लेता वह त्रिगुण आपदाओं से मुक्त हो जाता। उनका तन अत्यंत कोमल था और उनका रूप-रंग द्रवित स्वर्ण के समान था। आह! उनके श्रीअंगों की उत्कृष्ट चाल का वर्णन कैसे संभव है? उनके सौन्दर्य को देख कर उनके माता-पिता अपने प्रेमावेश पर नियंत्रण नहीं रख पाते थे और निरंतर उनके चन्द्र समान मुख का अवलोकन करते रहते थे। सभी वृद्ध गोपियाँ मंगल गीत गाती थीं और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जय! जय! के स्वर से भर उठा था। विभिन्न वाद्य यन्त्रों का स्वर हर किसी को मोहित कर रहा था और लोगों ने 'बहुत सुन्दर' का उद्‌घोष करते हुए नृत्य करना प्रारम्भ कर दिया। उत्सव के लिये हल्दी, दही और दूध आंगन में बिखरा हुआ था और गोप ग्वाल हँस रहे थे और अपने हाव-भाव से औरों को भी हँसा रहे थे। ब्राह्मणों और गायकों को अमूल्य भेंट प्रदान की गई और घनश्याम (श्रीनरहरि का दूसरा नाम, जिन्होंने इस गीत की रचना की) इस दृश्य को देखकर मानों अपनी प्रसन्नता को व्यक्त करने में असमर्थ थे।

श्रीराधा के प्राकट्य पर उनके सौन्दर्य के दर्शन कर उनके माता-पिता प्रेम में अधीर हो उठे और उनसे अपना चित्त हटा पाने में असमर्थ थे। उन्होंने अपनी पुत्री के मंगल के लिये अनेक भेंट दान की। कौन इस दृश्य का वर्णन कर सकता है? केवल सौभाग्यशाली जीव ही इसे देख सकते हैं। श्रीराधा अपनी सखियों के साथ विचरण करतीं और उनकी माता उन्हें देखकर प्रसन्नता का अनुभव करती थीं। श्रीवृषभानु अपने पार्षदों के साथ एक स्थान पर बैठ जाते थे और इस प्रकार रावल में आनन्द की कोई सीमा नहीं थी।

राघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा। 'हे श्रीनिवास, गोकुल से लौटते समय गौरचन्द्र और उनके पार्षद कुछ समय के लिए यहाँ रुके थे। वे उन्मत्त प्रेम से भर उठे जब उन्होंने रावल के दर्शन किये। औरों का क्या कहूँ, स्वयं अनंत शेष भी अपने पूर्ण पर्याप्त रूप से अपने उन्मत्त प्रेम भाव को व्यक्त नहीं कर सकते।'

सभी दिशाओं से लोग भागते हुए और पावन हरि नाम जप करते हुए, चिल्लाते हुए चले आते थे, 'हे भाई, संन्यासियों में इस रत्न को देखो!' हर कोई भगवान् के चन्द्र-समान मुख के दर्शनों का अमृत पान कर व्यथित हो उठता था। अत्यंत प्रसन्नतावश वे एक-दूसरे से बोलते। 'मैंने ये मान लिया है कि ये

निश्चित ही श्रीकृष्ण हैं। अपनी इच्छा से ब्रज में इस रूप में विचरण कर रहे हैं। कोई अन्य कहता। 'भगवान् के इस स्वर्णिम रूप-रंग वेश को देख मैं कुछ कहना चाहता हूँ परन्तु निःशब्द हूँ।'

इस प्रकार बोलते हुए, श्रीचैतन्य महाप्रभु की अनुकम्पा से लोग प्रेम में अधीर हो उठे और उनके नेत्रों से अश्रुपात होने लगा। उनकी उत्तमोत्तम लीलाओं को प्रकट कर सनोड़िया ब्राह्मण के साथ महाप्रभु मथुरा चले गये। हे श्रीनिवास यह स्थान जहाँ राधारानी ने अपने चित्ताकर्षक बाल्यकाल लीलाओं को प्रदर्शित किया वह अत्यंत निर्जन है।

इस प्रकार चर्चा करते, भगवान् श्रीकृष्ण की महिमा रूपी अमृत का पान करते हुए तीनों ने रावल में रात्रि व्यतीत की। श्रीराघव पंडित, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर प्रेम के उत्तमोत्तम भावों का जो अनुभव कर रहे थे उसका वर्णन कौन कर सकता है? जो भी इस कथा का ध्यानपूर्वक श्रवण करेगा उसे श्रीश्रीराधा-कृष्ण और श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की प्राप्ति होगी।

प्रातःकाल तीनों ने यमुना जी को पार किया और **मथुरा** में प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने वसुदेव, उग्रसेन और कंस के निवास स्थान और जहाँ कंस ने यशोदा जी से उनकी पुत्री को छीना था, उस स्थान के दर्शन किये। उसने कारागार की कोठरी में ही उसका वध करने का प्रयास किया। जहाँ वसुदेव जी को कैद कर रखा था उन्होंने उस स्थान के भी दर्शन किये जहाँ पर वसुदेव जी ने पत्थर पर मूत्र त्याग किया था, वह मार्ग जहाँ से वसुदेव जी, कृष्ण को गोकुल ले गये थे और श्रीकृष्ण को वहाँ सुरक्षित छोड़कर सुरक्षित ही लौट आये थे। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को इन स्थानों के दर्शन करवा कर श्रीराघव पंडित ने विस्तार से इनकी व्याख्या की।

विश्राम-तीर्थ में स्नान करने के बाद तीनों आनन्दपूर्वक कृष्ण-गंगा के किनारे **अम्बिका-कानन** आ गये। अम्बिका देवी और गौकर्णाख्य शिव जी के दर्शन कर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास उत्साह से भर उठे।

कृष्ण-गंगा के किनारे एक सुन्दर स्थान की ओर इंगित करते हुऐ राघव पंडित विनम्रता से बोले, 'इसी स्थान पर नन्द महाराज और अन्य गोप गण उत्तम वस्त्र धारण कर श्रीविग्रह के दर्शन करने तीर्थ यात्रा पर आये थे। नन्द महाराज और अन्य गोपों ने **गौकर्णाख्य महादेव** और अम्बिका की विविध रूप से आराधना की थी। नन्द महाराज इस सुन्दर स्थल पर विश्राम कर रहे थे तब अचानक एक विशालकाय काले सर्प ने उन्हें निगलना प्रारम्भ कर दिया।

सुदर्शन-सर्प रूप में

अपने पिता को सांप द्वारा निगलता देख श्रीकृष्ण मंद-मंद मुस्काये और सांप को अपने चरणकमल से स्पर्श किया। श्रीकृष्ण के स्पर्श करने से सांप का शरीर विलुप्त हो गया और उसके स्थान पर एक दिव्य रूप प्रकट हुआ। उस व्यक्ति ने बताया कि कैसे वह पूर्व में **सुदर्शन नामक विद्याधर** था, परन्तु वह ब्राह्मण द्वारा शापित होने के कारण सांप बन गया। सुदर्शन ने तब भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना की और अपने धाम लौट गये। नन्द महाराज के नेतृत्व में अन्य गोप श्रीकृष्ण के प्रति आकर्षित होकर अत्यधिक प्रसन्न हो गये और श्रीकृष्ण को बलराम और उनके सखाओं के साथ वापिस घर ले आये।

हे श्रीनिवास यहाँ तीर्थों में सर्वश्रेष्ठ **श्रीअक्रूर-तीर्थ** के दर्शन करो। यह विख्यात स्थान श्रीकृष्ण को अति प्रिय है। यहाँ पर पूर्णिमा तिथि पर विशेषकर कार्तिक मास में स्नान करने पर जीव भौतिक संसाधनों से मुक्त हो जाता है। जो भी फल जीव को सभी पावन स्थलों में स्नान करने से प्राप्त होता है वह मात्र यहाँ स्नान करने से प्राप्त होता है। जो भी यहाँ सूर्य-ग्रहण के अवसर पर स्नान करता है उसे राजसूय यज्ञ अथवा अश्वमेध यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है। यह विवरण आदि-वाराह-पुराण से पुष्ट होता है।

हे श्रीनिवास, श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ अक्रूर-वन में एकान्त स्थान पर रहने आये थे। वृन्दावन में जन-समुदाय से बचकर वे प्रसाद पाने यहाँ आते। श्रीचैतन्य महाप्रभु सम्पूर्ण जगत के तारक हैं इस कारण उनके मनोभावों को कौन समझ सकता है?

इस मनमोहक स्थान के दर्शन करो श्रीनिवास, जहाँ अंगिरा मुनि के नेतृत्व में मुनियों ने तप किया। श्रीकृष्ण ने अपने सखाओं को यहाँ फल लाने के लिये भेजा परन्तु ब्राह्मण, गोप बालकों के निवेदन से नाराज हो गये। जब बालक लौटे और श्रीकृष्ण को सारा वृत्तांत बताया तो उन्होंने उन्हें उन मुनियों की पत्नियों के पास भेज दिया।

इस अवसर से प्रसन्न होकर मुनियों की पत्नियाँ इस स्थान पर श्रीकृष्ण और उनके मित्रों के लिये भोजन लायी थीं। श्रीकृष्ण और उनके सखाओं ने यहाँ भोजन पाया और लीलाओं का अनन्त आनन्द लिया। हर कोई अत्यधिक तृप्ति अनुभव करने लगा और इस कारण से इस स्थान का नाम **भोजन-स्थल** पड़ा।

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन मिलता है। 'यह वह स्थान है जहाँ त्यागी ब्राह्मणों की पत्नियों ने अत्यधिक प्रेम और भक्ति भाव से श्रीकृष्ण और बलराम को विविध प्रकार के भोज्य पदार्थों को निवेदित किया। मैं इस स्थान और उन ब्राह्मण पत्नियों की महिमा का वर्णन करता हूँ।'

श्रीवृन्दावन

श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को श्रीवृन्दावन की महिमा का वर्णन सुनाया। आदि-वाराह-पुराण में यह वर्णन है। 'हे पृथ्वी! ये द्वादशवाँ वन **वृन्दावन** सब पापों का विनाश करने वाला है और वृन्दा-देवी द्वारा रक्षित है। निश्चित ही यह मेरा प्रिय स्थान है। मैं गोपजनों और गोपियों के साथ यहाँ इस सुन्दर स्थान पर लीलाऐं रचाऊंगा जो कि देवताओं की भी पहुँच से बाहर होंगी।'

श्रीवृन्दावन का वर्णन स्कन्द पुराण के मथुरा-खण्ड में इस प्रकार है। 'श्रीवृन्दावन पूर्ण रूप से वृन्दा-देवी के अनुग्रह में हैं। श्रीहरि स्वयं इस उत्तम स्थान पर रहते हैं जो कि ब्रह्मा और शिव के नेतृत्व में अवतारों द्वारा सेवित हैं। विशाल क्षेत्र में फैला हुआ श्रीवृन्दावन श्रीतुलसी के वनों और महान संतो के आश्रमों से सुशोभित है। श्रीवृन्दावन गोविन्द को इतना प्रिय है जैसे विष्णु जी को लक्ष्मी जी प्रिय हैं। गोप बालकों और गऊओं से घिरे गोपाल बलराम जी के साथ श्रीवृन्दावन में क्रीड़ा करते थे। हां! श्रीवृन्दावन कितना सुन्दर स्थान है जहाँ गोवर्धन पर्वत और भगवान् विष्णु द्वारा निर्मित अन्य पवित्र स्थल हैं।'

पद्म पुराण में यह वर्णित है। 'श्रीवृन्दावन उत्तमोत्तम आनन्द से परिपूर्ण है। यह बड़े से बड़े पापों और अपराधों का विनाश करने वाला है। यहाँ निवास करने मात्र से ही जीव को मुक्ति प्राप्त होती है।'

श्रीवृन्दावन का वर्णन श्रीमद्भागवत (10.11.28) में भी है। 'नन्देश्वर और महावन के मध्य एक वृन्दावन नामक स्थान है। यह स्थान बहुत उपयुक्त है क्योंकि यह गाय और अन्य जन्तुओं के लिये प्रचुर घास, पौधे और लताओं आदि से परिपूर्ण है।'

इसमें बगीचे और ऊँचे-ऊँचे पर्वत हैं जो कि सभी गोप बालकों और गोपियों और जन्तुओं की प्रसन्नता के लिये सब प्रकार की सुविधाओं से परिपूर्ण है।

श्रीमद्भागवत में एक और पद (10.21.10) है, जिसमें एक गोपी कहती है, 'हे सखी! श्रीवृन्दावन देवकी के पुत्र श्रीकृष्ण के चरणकमलों के खजाने को प्राप्त कर जो, पृथ्वी की महिमा को चतुर्दिक फैला रहा है। मोर जब गोविन्द की मुरली की धुन सुनते हैं तब आनन्दित होकर नृत्य करते हैं और जब अन्य जीव उन्हें पर्वत के शिखरों से देखते हैं तब वे सब निस्तब्ध रह जाते हैं।'

श्रीराघव पंडित ने आगे अपने अनुचरों को 'गौतमीय-तंत्र' से एक अंश बताया जहाँ श्रीकृष्ण, नन्दबाबा से कहते हैं, इस सुन्दर स्थान का हर अंग मेरा धाम है। हर जीव और अवतार जो इस स्थान पर रहता है, वह मृत्यु के बाद **मेरे धाम को** प्राप्त करेगा। जो ग्वाल बालिकाऐं मेरे धाम में रहती हैं वे योगिनियाँ हैं।

श्रीवृन्दावन के पांच योजन मेरे शरीर के समान हैं और श्रीकालिन्दी नदी मेरे शरीर का मेरुदण्ड है जो अमृतमय जल के साथ बहती हैं। श्रीविग्रह और अदृश्य शरीर में रहने वाली अन्य जीव आत्माऐं और मैं हर किसी के भीतर वास करने वाला, कभी इस स्थान को नहीं त्यागते। मेरा प्राकट्य और तिरोभाव हर उम्र में अभिनीत होता है। इस स्थान का दिव्य और आनन्दमय प्रकाश भौतिक दृष्टि से परे है।

वृन्दावन की महिमा किसी की भी परिकल्पना से परे है। लोग कहते हैं कि श्रीवृन्दावन सोलह कोस में फैला है और शास्त्रों में यह बताया है कि श्रीवृन्दावन पांच योजन में फैला है। जो कोई भी श्रीवृन्दावन में गोविन्द के दर्शन कर लेता है वह कभी यमालय नहीं जाता बल्कि धर्मनिष्ठ आत्मा का सौभाग्य प्राप्त करता है। श्रीगोविन्ददेव जी का मन्दिर श्रीवृन्दावन में स्थित है और भक्तजनों से घिरा है। एक सौभाग्यशाली व्यक्ति ही उनके दर्शन कर सकता है।

स्कन्द पुराण में श्रीनारद मुनि कहते हैं, श्रीवृन्दावन में श्रीगोविन्ददेव जू का मन्दिर आराधक भक्तों से घिरा है। मैं वहाँ वास करने को महत्व देता हूँ। हे राजन्, इस विश्व में श्रीवृन्दावन, श्रीगोविन्द का वैकुण्ठ है। वृन्दा और वहाँ श्रीकृष्ण की अन्य सखियाँ भी यहाँ वास करती हैं। हे महीपाल, वे महान आत्माऐं जो श्रीवृन्दावन में श्रीगोविन्ददेव के दर्शन करती हैं वे विश्व में सर्वाधिक गौरवान्वित हैं।

श्रीविग्रह के रूप में स्वयं ब्रजेन्द्र के पुत्र श्रीगोविन्ददेव ने अपनी इच्छाओं के अनुसार बहुत सी विविध लीलाऐं रचाईं। भौतिक लोग उन्हें मात्र एक विग्रह के रूप में देखते हैं परन्तु उनके भक्त उन्हें स्वयं श्रीगोविन्द ही मानते हैं। यद्यपि एक श्रीविग्रह के रूप में उन्होंने मौन स्वीकार कर लिया तथापि उन्होंने अपने पार्षदों को उत्तमोत्तम आनन्द प्रदान किया। श्रीवृन्दावन में वे स्वयं अपनी गोपियों के साथ कर्णिका के कमल के आठ पत्तों के मध्य (कर्णिका अर्थात् कमल पुष्प की कलियां) आनन्द मनाते थे।

अथर्ववेद के गोपाल तापिनी में भगवान् गोविन्द का इस प्रकार वर्णन है, श्याम वर्ण, पीताम्बरधारी, दो-भुज गोविन्द, इनके मस्तक पर मोर-मुकुट है, अपने कर कमलों में बांसुरी पकड़े हुए हैं और हाथों में छड़ी है। वे निर्गुण हैं परन्तु साथ ही सगुण भी हैं। वे निराकार हैं परन्तु साथ ही साकार हैं। वे निरीह हैं साथ ही सचेत भी हैं। मथुरा-मण्डल के गोकुल में श्रीवृन्दावन है, जहाँ गोविन्द, सहस्रों पत्तों वाले कमल, जिसके सोलह पत्तों वाले गुच्छे हैं, और आठ केसर गुच्छ हैं, उनके मध्य खड़े हैं। उनके दोनों ओर श्रीराधा और चन्द्रावली खड़ीं हैं।

श्रीयोगपीठ

सम्मोहन तंत्रवाक्य में वर्णन है। 'मैं नित्य श्रीमती राधारानी के चरणों में प्रणाम करता हूँ जो योगपीठ की देवी हैं और जो अपने सुन्दर हाव-भाव और मुद्रा से श्रीगोविन्द के साथ खड़ी हैं।' योगपीठ श्रीवृन्दावन में सर्वोच्च और अद्भुत है। इस स्थान पर श्रीगोविन्द का सौन्दर्य विस्मयकारी है।

पद्म पुराण के वृन्दावन माहात्म्य में पार्वती जी ने भगवान् शिव से पूछा, 'हे करुणासिन्धु, कृपया श्रीगोविन्द की असाधारण अमृतमय सुन्दरता का वर्णन कीजिये। मैं इसके बारे में श्रवण करना चाहती हूँ।'

भगवान् शिव ने उत्तर दिया, 'वृन्दावन के मध्य में मन्दार वृक्षों से घिरा एक स्थान है। इस वृक्ष की शाखाऐं और पत्ते एक योजन तक फैले हैं। यह स्थान शांति का धाम है। पुष्पों की मधुर सुगन्ध से आकर्षित होकर भँवरे यहाँ गुंजन करते हैं।'

श्रीगोविन्द का अनन्त स्थान सिद्धपीठ है जो कि सात आवरणों से ढँका है। यह अनन्तकाल से श्रुतियों के द्वारा महिमामंडित है जो कि वेदों का साकार रूप है। उस स्थान पर स्वर्ण जड़ित मण्डप के मध्य प्रकाशमान और सुन्दर योगपीठ स्थित है। यह अष्टकोणीय पीठ उज्ज्वल और मनमोहक है। चमकदार रत्नों से जड़ित एक स्वर्णिम सिंहासन यहाँ स्थित है। सिंहासन पर एक अष्ट-दल कमल है। इस कमल का मध्य स्थान श्रीगोविन्ददेव को अतिप्रिय है। मैं पर्याप्त रूप से इस स्थान की महिमा कैसे कहूँ? मैं श्रीगोविन्द से प्रार्थना करता हूँ जो कि इस कमल के मध्य में रहते हैं, जो सदैव गोपियों द्वारा सेवित हैं और अपने पुष्पित यौवन के कारण अत्यधिक मधुर हैं। वे श्रीवृन्दावन के भगवान् गोकुलपति हैं और उन्होंने अपनी समृद्धि को असीमित रूप से फैला रखा है। भगवान् गोविन्द युवा और सुन्दर हैं और ब्रज की युवतियां उन्हें सबसे प्रिय हैं।

श्रीवृन्दावन के भगवान् श्रीगोविन्ददेव जो कि उत्तमोत्तम प्रेम के धाम हैं उस सिंहासन पर अनन्तकाल तक श्रीराधारानी के साथ आनन्द लेते हैं। अष्ट किनारों वाला योगपीठ चहुँ ओर से प्राकृतिक सुन्दरता से घिरा है और वहाँ स्थित आभूषित सिंहासन अवर्णनीय है। कमल की कर्णिका के मध्य श्रीकृष्ण महा-लीला रचाते हैं। महा-लीला के बारे में क्या कहा जा सकता है? श्रीकृष्ण जो कि श्रीवृन्दावन के नित्य गृहपति हैं उन्होंने उस महा-लीला-रास के पर्वत पर अपनी गोप बालक की छवि को अपनाया। कमल की तीसरी मनोहारी पंखुड़ी अत्यधिक चमकदार और सभी इच्छा योग्य वस्तुओं से श्रेष्ठ है।

वाराह-तंत्र में यह वर्णन है। कर्णिका भगवान् श्रीगोविन्ददेव का सर्वप्रिय स्थान है। मैं इसकी महिमा का क्या बखान करूँ? मैं श्रीगोविन्ददेव को प्रणाम करता हूँ जो कि गोपियों को अतिप्रिय हैं और अपनी युवा अवस्था और आकर्षक

चाल-ढाल के कारण उत्कृष्ट सौन्दर्यवान हैं। वे सदैव गोपियों के प्रेम का वर्धन करते हैं यद्यपि वे गोकुल के भगवान् हैं फिर भी वे यहाँ सावधानीपूर्वक अपनी तेजोमय समृद्धि को गुप्त रख लेते हैं।

वाराह-तंत्र में पृथ्वी, विषयों के भी विषय, परम तत्त्व, श्रीवृन्दावन के अनंतकालिक गृहपति और निर्गुण ब्रह्म के स्रोत श्रीकृष्ण की वास्तविक पहचान के बारे में पूछती हैं। वे श्रीगोविन्द के रूप में जाने जाते हैं। भगवान् वाराह ने उत्तर दिया 'मैं श्रीगोविन्द के प्रति अपना सम्मान व्यक्त करता हूँ जो राधा जी के संग स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान होते हैं और बहुत सुन्दरता से दिव्य आभूषणों से शोभित हैं।'

वे बहुत कोमल हैं और वे गोपियों के नेत्रों के आकर्षण-बिन्दु हैं। वे अपनी त्रिभंग मुद्रा में खड़े हैं। योगपीठ के भीतर अपने स्वर्णिम सिंहासन पर भगवान् श्रीकृष्ण दिव्य वस्त्र धारण किये अपनी प्रियतमा और प्राथमिक प्रकृति श्रीराधा और उनके संग ललिता, उत्तर में मधुमति, उत्तर-पूर्व में धन्या, कृष्ण प्रिय विशाखा पूर्व में, शैव्या दक्षिण-पूर्व में, पद्मा दक्षिण में और भद्रा दक्षिण-पश्चिम में विराजमान हैं। कोने में अति सुन्दर चन्द्रावली खड़ी हैं। ये आठ मुख्य प्रकृतियाँ श्रीकृष्ण को अतिप्रिय हैं, परन्तु श्रीमती राधारानी सर्वोच्च देवी हैं और श्रीकृष्ण की प्रकृति का आश्रय हैं। चित्रवसा, चन्द्रा, मदन-सुन्दरी, सुप्रिया, मधुमती, शशिरेखा और हरिप्रिया भी वहाँ योगपीठ के आसपास हैं। वृन्दावनेश्वरी श्रीराधा, सभी सोलह प्रकृतियों की मुखिया हैं। ललिता जी श्रीकृष्ण को उतनी ही प्रिय हैं जितनी कि श्रीराधा।

गौतमीय-तंत्र में एक भक्त प्रार्थना करता है, 'मैं भगवान् श्रीकृष्ण से प्रार्थना करता हूँ जो कि कल्प वृक्षों से घिरे स्वर्णिम मंच पर एक रत्नजड़ित सिंहासन पर विराजमान हैं।'

श्रीराघव पंडित ने कहा कि सम्पूर्ण विश्व श्रीगोविन्ददेव के सौन्दर्य को देख कर व्यथित सा हो गया। जो कोई भी उन्हें एक बार देख ले वह आश्चर्यचकित सा हो जाए और सब कुछ भूल जाए।

श्रील रूप गोस्वामी ने 'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' में लिखा है। 'मेरे प्रिय मित्रो, यदि अब भी आप में अपने मित्रों के संग इस भौतिक संसार का आनन्द लेने की कामना है तब श्रीकृष्ण की ओर मत देखो जो कि केशी-घाट पर खड़े हैं। वे गोविन्द के नाम से जाने जाते हैं और उनके नेत्र बहुत आकर्षक हैं। वे अपनी बांसुरी बजा रहे हैं और उनके मस्तक पर मोर पंख है। उनका पूरा तन, नभ के चन्द्रमा के प्रकाश से जगमगा रहा है।'

श्रीगोविन्ददेव पूर्ण ज्ञान और आनन्द का चिरकालिक रूप हैं। वे अपने दोभुज रूप में इतने मनोहर लगते हैं कि प्रत्येक का हृदय आकर्षित कर लेते हैं।

'गोपाल-तापिनी' में यह वर्णन है। 'कोई भी जीव भौतिक उलझनों से मुक्त हो जाता है यदि वह हृदय से श्रीकृष्ण का ध्यान करता है। श्रीकृष्ण, यमुना जी की लहरों द्वारा निर्मित शीतल हवाओं द्वारा आराध्य हैं। वे गऊओं और गोपियों से घिरे, दिव्य आभूषणों से शोभित हैं और कल्पवृक्ष की जड़ पर खड़े हैं जो कि रत्नजड़ित कमल के मध्य स्थित है। बिजली के समान चमकदार और साफ वस्त्रों में सज्जित, दोभुज वनमाली रूप में और जिनके कमल नयन अति सुन्दर हैं और रूप-रंग वर्षा के काले मेघ के समान हैं, वे सब के स्वामी हैं।'

श्रीराघव पंडित ने कहा 'हे श्रीनिवास वृन्दावन में **श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ** और **श्रीमदनमोहन** के चरणों में कौन प्रणाम नहीं करेगा ? इन तीनों श्रीविग्रह के चरणकमल वृन्दावन में सभी के प्राण हैं। श्रीमदन-गोपाल संसार में श्रीमदन-मोहन के नाम से विख्यात हो गये हैं।'

श्रीपार्वती ने श्रीमहादेव जी से श्रीगोविन्ददेव की उत्तमोत्तम प्रकृति और महिमा के बारे में पूछा। श्रीमहादेव ने कहा, 'गोपाल ही स्वयं गोविन्द हैं और वे अनंतकाल से प्रकट और अप्रकट लीला रचाते हैं। वे अनंतकाल से श्रीवृन्दावन के योगपीठ में विद्यमान हैं और केवल वे ही चारों युगों में श्रीवृन्दावन के भगवान् हैं। वे वात्सल्य-रस में नन्द जी और गोप-ग्वालों द्वारा आराध्य हैं। यहाँ तक कि स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण भी आकर्षण से अभिभूत हैं और स्वयं अपने मृदु रूप गोविन्द की महिमा कहते हैं। उन्होंने गोपियों के वस्त्र चुरा लिये और इस प्रकार उनके वचनों के उद्देश्य को पूरा किया। वे आध्यात्मिक आनन्द के धाम हैं और वे सदा ही एक नित्य किशोर के रूप में वृन्दावन में वास करते हैं। वे श्रीराधिका के प्राणधन हैं। उनका मुख पान के चर्वण के कारण लाल है।'

ब्रह्मकुण्ड

राघव पंडित ने बोलना अनवरत रखा। 'यहाँ **ब्रह्म-कुण्ड** नाम से एक कुण्ड है जो कि हंसों और कमलों से भरा हुआ है और सब तरफ से रत्नों से शोभित है। दक्षिण में एक रत्नजड़ित मण्डप है जो कि मन्दार वृक्षों से घिरा है। इस स्थान पर श्रीकृष्ण पूर्ण रूप से गर्वीली मुस्कान लिये वृन्दावनेश्वरी श्री राधिका के प्रेम में मुग्ध थे और उनके पूर्ण नियंत्रण में थे।'

श्रीवृन्दादेवी, श्रीकृष्ण की सुन्दरतम अभिव्यक्ति हैं। वे अभिनय कला में और श्रीकृष्ण को प्रसन्न करने में अत्यन्त निपुण हैं। वे लीलावती के नाम से जानी जाती हैं और सदा-सर्वदा योगपीठ के पूर्व में रहती हैं।

दक्षिण में श्रीकृष्ण-केलि-विनोदिनी श्यामा (जो कृष्ण की लीलाओं का आस्वादन करती) रहती हैं। पश्चिम और उत्तर में भगिनीदेवी और सिद्धेशीदेवी ससम्मान स्थित हैं। साथ ही पूर्व में पंचमुखी भगवान् शिव, दक्षिण में संकर्षण

जिन्होंने दस रूपों में अवतार लिया विराजमान हैं। पश्चिम में चतुर्मुख ब्रह्मा और उत्तर में सहस्र शीशधारी भगवान् अनंतदेव हैं।

श्रीराधिका की प्रिय मित्र मदन-उन्मादिनी जो सदा एक स्वर्णिम छड़ी लिये रहती हैं और बहुत निपुणता से कामकाज का प्रबन्धन करती हैं, श्रीकृष्ण जो कि प्रेम में अभिभूत हैं, उन्हें कल्पतरु के नीचे ले जाती हैं। मदन-उन्मादिनी जो कि कामदेव में प्रेम भाव को बढ़ाती हैं, वे कामदेव के गर्व से और भगवान् हरि के दीप्तिमान नीलवर्ण की दीप्ति से एक प्रेम-भवन का निर्माण करती हैं। यह दीप्ति उस नीलम के समान है जिससे, यह प्रेम के देवता मदन कामुकता की वृद्धि करते हैं।

द्वादशाक्षर मन्त्र

समय आने पर श्रीगोविन्द का द्वादशाक्षर-मन्त्र (बारह अक्षरों वाला मन्त्र) प्रेम की अत्यंत अनुभूति का वर्षण करता है। पहले दो अक्षर काम-बीज और फिर आगे श्री-कृष्णाय है। आगे है गोविन्दाय और फिर अंत में स्वाहा। धीरे-धीरे इस द्वादश अक्षर-मंत्र का जप करने से जीव को प्रेम के देवता की अनुभूति होती है।

आगे मैं युगलात्मक-गोविन्द-मंत्र का वर्णन करूँगा। पहले आता है लक्ष्मी-बीज, फिर काम-बीज, और फिर राधा गोविन्दाभ्यां नमः। इस मंत्र का ज्ञान हो जाने पर जीव श्रीश्रीराधा-कृष्ण को प्रसन्न कर सकता है। इस मंत्र के छः तत्त्व हैं: राशि-कामदेव, छंद-विराट्, देवता-गोविन्द एवं राधागोविन्द, शक्ति-योगपीठ की देवी राधा तथा काम-बीज।

श्रीगोविन्द का ध्यान इस प्रकार है। गोविन्द की जय हो, जो एक नवीन पुष्प के समान सुन्दर हैं और जो अविनाशी लीलाओं के साधक हैं, जो शक्तिशाली बलिष्ठ पुरुषों जैसे वस्त्र धारण करते हैं। श्रीगोविन्द की जय हो जो एक हाथ में मुरली धारण करते हैं और दूसरे में रत्नजड़ित छड़ी। उनका सुडौल और चौड़ा कंधा पवित्र और चमकदार पीले रेशम के वस्त्र से ढका है। वे सम्पूर्ण विश्व को मन्त्र-मुग्ध करते हैं। वे अपने त्रिभंग रूप में खड़े होकर अपना बायां पैर दायें पैर के ऊपर रखते हैं।

नाम कितना ?

अपने मौन ध्यान को समाप्त कर जीव को श्रीहरि का नाम चार लाख बार लेना चाहिये। तब तिल के साथ यज्ञ आदि करने के बाद जीव को चम्पक, अशोक, तुलसी, कल्हार और कमल के पुष्प श्रीश्रीराधा-गोविन्द की आराधना में निवेदन करने चाहियें। ये सब करने से जीव को श्रीराधा-गोविन्द के दर्शन प्राप्त होंगे।

श्रीमन् मदन-गोपाल वृन्दावन में भी विद्यमान हैं। चिरकाल से श्रीगोपाल एक बालक के रूप में और श्रीगोविन्द एक किशोर के रूप में विद्यमान हैं। इन दोनों श्रीविग्रह की तुलना में श्रीगोपीनाथ अत्यधिक सुन्दर हैं। गोपाल जी एक धीरोद्धत नायक हैं (जो ईर्ष्यालु है, गर्वित है, सरलता से क्रोधित होने वाला है, अधीर है, असावधान है) गोविन्द धीरोद्दात नायक हैं (सामान्यतः बहुत बड़ा, विनीत, दयालु, कृपालु, नियत, नम्र, सर्व गुण सम्पन्न, उदार और शारीरिक रूप से आकर्षक हैं) और गोपीनाथ धीर-ललित नायक हैं (सामान्यतः बहुत विनोदी, सदा तरुणावस्था में रहने वाले, हास-परिहास में निपुण और सब चिंताओं से मुक्त)।

श्रीगोपाल, सिंह के समान गठन वाले हैं जबकि श्रीगोविन्द त्रिभंग रूप में खड़े होने वाले हैं और श्रीगोपीनाथ चौड़े सीने के साथ विषयासक्त होने वाले हैं। श्रीगोपीनाथ जो कि बाल्यकाल से अभी उभर कर आये हैं और पुष्पों से सुशोभित हैं वे गोवर्धन पर्वत की सीमा पर एक गुफा में रहते हैं, जहाँ वे संध्या के तीन प्रहर में क्रीड़ा करते हैं। इसके बाद श्रीगोविन्द जो कि परिपक्व हैं और मदन द्वारा अलसाये हुए हैं, इस भव्य रीति से सज्जित इस योगपीठ का आनन्द लेते हैं। पर कई वर्षों के बाद विभिन्न पीठों पर प्राप्त किये गये पुण्य, वृन्दावन में योगपीठ में एक दिवस में प्राप्त हो सकते हैं।

योगपीठ में प्रातःकाल, उदय होते सूर्य के समान प्रतीत होता है जबकि अगले तीन मुहूर्त्त में वह अत्यधिक सफेद चमकदार हो जाता है। दोपहर में यह चौंधियाने वाले दोपहर के सूर्य के समान दिखता है, दोपहर के बाद यह कमल के पत्तों के समान लगता है और सायंकाल में सिन्दूर के ढेर की लालिमा के समान लगता है। पूर्णिमा की रात योगपीठ पूनम के शांत चन्द्रमा के समान लगता है और अन्धेरी (अमावस की) रात में यह घने नीले नीलम के समान चमकदार कालिमा लिये लगता है। वर्षा के दिवसों में यह हरी घास पर उगते हुए आभूषण के समान लगता है। पतझड़ के दौरान माणिक के समान लगता है और शीतकाल में यह हीरे की तरह चमकता है।

बसंत में यह नवीन पत्ते के समान लगता है और ग्रीष्म काल में ये अमृत के बहाव के समान लगता है। योगपीठ असीमित मधुरता से भरा हुआ है। यह चारों ओर से अशोक व अन्य वृक्षों से घिरा हुआ है और विविध प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित है।

योगपीठ के आठ नाम

ऊर्ध्वाम्नाय तंत्र में यह वर्णन है। 'हे पार्वती, योगपीठ के ये आठ नाम हैं- चन्द्रावली-दुराधर्ष, राधा-सौभाग्य-मन्दिर, श्रीरत्न-मण्डप, शृंगार-मण्डप, सौभाग्य- मण्डप, महा मार्धुय-मण्डप, साम्राज्य-मण्डप और सुरत-मण्डप।

जो भी योगपीठ के नामाष्टक का प्रातःकाल जप करता है वह श्रीगोविन्द को आकर्षित कर लेता है और श्रीकृष्ण प्रेम प्राप्त करता है।'

सुनरख

अन्तरंग विषयों पर चर्चा करने के बाद श्रीराघव पंडित भोजन-टीला को पीछे छोड़ श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को प्रसन्नतापूर्वक अन्य पवित्र स्थानों पर ले गये। उन्होंने **सनोरख** नामक स्थान की ओर इंगित किया जहाँ सौभरि मुनि ने तप किया था। **कालिय ह्रद** की ओर आकर श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास को बताया कि श्रीकृष्ण ने अपनी अनोखी लीलाओं में से एक यहाँ रचाई थी। एक कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर, कालिन्दी में छलांग लगाई और कालिय सर्प को परास्त किया। हर किसी ने श्रीकृष्ण द्वारा सर्प के फैले हुए फण पर नृत्य का आनन्द लिया जिसके बाद श्रीकृष्ण ने उस सर्प पर अपनी करुणा बरसाई और उसे रमणक द्वीप भेज दिया। जो कोई भी इस सरोवर में स्नान कर ले वह सब पापों से मुक्त हो जाता है और यदि यहाँ मृत्यु प्राप्त करता है तो विष्णुलोक में भगवद् धाम प्राप्त करता है।

यह **आदि-वाराह**-पुराण में पुष्ट होता है। श्रीमद्भागवत (10.16.62) में यह वर्णन है। 'यदि कोई मेरी लीलाओं के इन स्थानों पर स्नान करता है और इस सरोवर का जल देवगण और अन्य आराध्य व्यक्तित्व को अर्पण करता है या उपवास करता है और यथायोग्य मेरी आराधना और स्मरण करता है वह निश्चित ही पाप के प्रभावों से मुक्त हो जाता है।'

जिस कदम्ब वृक्ष से श्रीकृष्ण सरोवर में कूदे थे उसके सौन्दर्य का वर्णन आदि-वाराह-पुराण आदि ग्रन्थों में इस प्रकार है। 'हे विशालाक्षी, पण्डितों ने इस स्थान पर उत्तमोत्तम वस्तुओं का मानसिक चित्रण किया है। कदम्ब वृक्ष जो कि कालिय सरोवर के पूर्व में स्थित है, इसकी अनेकों सुगंधमय शाखाऐं हैं। हे विशालाक्षी, यह मनमोहक और मंगलकारी वृक्ष वर्ष के बारह मास खिला-खिला रहता है और सम्पूर्ण विश्व को प्रसन्न करता है।'

पुराणों में यह वर्णन है, 'यह कालिय-तीर्थ नामक पाप-नाशक पवित्र स्थान वह है जहाँ श्रीकृष्ण ने कालिय के शीश पर नृत्य किया था। जो कोई भी यहाँ स्नान करता है और इस स्थान पर वासुदेव की आराधना करता है वह भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा प्राप्त करता है जो कि अधम व्यक्तियों को अप्राप्य है।'

द्वादश आदित्य टीला

तब श्रीराघव पंडित ने **द्वादशादित्य-तीर्थ** की ओर इंगित किया जो कि पुराणों के अनुसार सभी पुरुषों की कामनाऐं पूर्ण करता है। आदि-वाराह-पुराण

में यह वर्णन है। 'हे वसुन्धरे! जो कोई भी **सूर्य-तीर्थ** में स्नान करता है वह भगवान् आदित्य के दर्शन प्राप्त करता है और सभी कामनाऐं पूर्ण होने पर सूर्यलोक को जाता है। यहाँ कोई सन्देह नहीं कि जो कोई भी इस पवित्र स्थान पर रविवार के दिवस स्नान करता है, जो कि सप्ताह का अन्तिम दिवस होता है, उसे अपनी कामनाऐं तृप्त करने की सन्तुष्टि प्राप्त होती है।'

एक पर्वत की ओर इंगित करते हुए श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि कालिय को कालिय दह में विशुद्ध करने के बाद श्रीकृष्ण इस स्थान पर आये थे। जब सूर्यदेव ने जाना कि श्रीकृष्ण अति शीतल हो गये हैं तो उन्होंने श्रीकृष्ण को ऊष्मा प्रदान करने के लिये अपने ताप में वृद्धि कर दी।

ब्रज-विलास-स्तव इस लीला को इन शब्दों में वर्णित करता है, 'मैं चिरकाल तक इस **द्वादश सूर्य स्थान** का आश्रय प्राप्त करता हूँ जहाँ महामना मुरारी को शीत ने जकड़ लिया था। वह जो सदा अद्‌भुत लीलाओं में मग्न रहते हैं, स्नेहमय पुरुषों और गऊओं से घिरे रहते हैं और सदैव बारह सूर्यों द्वारा सेवित होते हैं, जो कि अत्यधिक आध्यात्मिक और उत्साह से पूर्ण ऊष्मा देने के लिये गहन ऊष्मा प्रदान करता है।'

श्रीसनातन के स्वप्न में महाप्रभु

श्रीराघव पंडित ने कहा, 'हे श्रीनिवास, श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर श्रीसनातन गोस्वामी श्रीवृन्दावन में रहने के लिये आये। जब श्री सनातन गोस्वामी ने सुना कि श्रीचैतन्य महाप्रभु आयेंगे तो उन्होंने उनके रहने के लिये एक निर्जन स्थान का प्रबन्ध किया। श्री सनातन गोस्वामी की उत्कण्ठा को जानकर गौरहरि ने इस स्थान पर स्वप्न में उन्हें दर्शन दिये। श्री चैतन्य महाप्रभु एक अद्‌भुत आसन पर विराजमान थे। प्रभु को देखकर श्री सनातन गोस्वामी उनके चरणों में जा गिरे। तब प्रभु ने उन्हें दृढ़ता से आलिंगन किया और उन्हें हर प्रकार से सांत्वना देने के बाद अन्तर्धान हो गये।' प्रभु की अद्‌भुत लीलाओं को कौन समझ सकता है? अपनी इच्छा से वे सदा श्रीधाम वृन्दावन में आनन्दित होते हैं।

प्रस्कन्दन तीर्थ

प्रस्कन्दन-क्षेत्र के मात्र दर्शन करो। यहाँ स्नान करने से जीव के पाप नष्ट हो जाते हैं और यहाँ प्राण त्यागने से जीव को विष्णुलोक प्राप्त होता है।

आदि-वाराह-पुराण में वर्णन है। 'हे वसुन्धरे! कृपया अन्य पवित्र स्थानों के बारे में श्रवण करो। यहाँ प्रस्कन्दन-क्षेत्र नामक मंगलकारी धाम है जो सब पापों का विनाशक है। जो कोई भी यहाँ स्नान करता है वह पापों से मुक्ति पाता है और जो कोई यहाँ अपने शरीर का त्याग करता है वह निश्चित ही मेरे धाम को जाता है।'

हे श्रीनिवास, द्वादश सूर्यों की ऊष्मा के कारण भगवान् का शीतल शरीर गर्म हो गया और पसीना बहने लगा। पसीना बह कर यमुना जी में प्रवेश करने लगा इस कारण से इस स्थान का नाम **प्रस्कन्दन-तीर्थ** पड़ा।

ब्रज-विलास-स्तव यह वर्णन देता है कि 'यह महान तीर्थ द्वादश सूर्यों की अत्यधिक ऊष्मा के कारण गोविन्द के पसीने से प्रकट हुआ था। मैं आदर सहित अपनी प्रार्थना इस प्रस्कन्दन-क्षेत्र को निवेदन करता हूँ जो सुगन्धित जल से भरा हुआ है जो कि प्रभु के कोमल सुन्दर शरीर से प्रकट हुआ।'

प्रस्कन्दन-तीर्थ के दर्शन करवाने के बाद श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास से मृदु भाषा में बोलना अनवरत रखा। 'श्रील अद्वैत प्रभु जो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु से बिलकुल भिन्न नहीं थे वे यहाँ वन में कुछ दिवस ठहरे थे। वे इस वट वृक्ष के नीचे भगवान् श्रीकृष्ण की उपासना किया करते थे। उनकी आन्तरिक इच्छाओं को कौन समझ सकता है? कृपया श्रवण करें और मैं आपको विस्तार से श्रील अद्वैत प्रभु के प्राकट्य और गतिविधियों के बारे में बताऊंगा।'

श्रीअद्वैत प्रभु

श्रीमाधवेन्द्र पुरी, श्रीईश्वर पुरी, श्रीशची माता और श्रीजगन्नाथ मिश्र, श्री अद्वैत आचार्य के साथ प्रकट हुए थे। श्री अद्वैत प्रभु असीमित रूप से जीवों के प्रति करुणाशील थे। पूरा बंगाल उनके यहाँ प्रकट होने से गौरवान्वित हो गया था।

बंगाल में श्रीहट्ट के पास नव-ग्राम नामक गाँव था जहाँ श्रीनृसिंह के पुत्र कुबेर पंडित रहते थे। कुबेर पंडित अध्यात्म के पथ पर अग्रसर थे। वे भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानते थे।

उसी समान स्तर पर उनकी विशुद्ध पत्नी और सर्वपूज्य अद्वैत की माता श्रीमती नाभादेवी थीं। वे गंगा के निकट शांतिपुर में बस गये और वहाँ सदा श्रीकृष्ण-कथा में मग्न रहने लगे।

एक दिवस श्रीकुबेर पंडित और उनकी पत्नी वैष्णव निन्दा सुनकर प्राण त्यागना चाहते थे। उनकी दशा देखकर भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से एक सौभाग्यशाली सन्त ने उन्हें सांत्वना दी। इसके बाद भी वे अप्रसन्न ही थे और इसी स्थिति में दोनों गहरी निद्रा में सो गये। कुछ देर बाद उन्होंने एक अद्भुत स्वप्न देखा। एक सुन्दर दीप्तिमान व्यक्ति जिसकी शारीरिक कान्ति द्रवित स्वर्ण के पर्वतों की सुन्दरता को भी परास्त कर रही थी, वे उनके सामने प्रकट हुए। उस व्यक्ति ने एक अन्य अत्यधिक सुन्दर व्यक्ति का हाथ थाम रखा था और उसने बहुत मृदु स्वर में उनसे कहा, 'तुम उन जीवों की अप्रसन्नता दूर करने के लिये जल्दी ही अवतार लोगे जो कलि-युग के आक्रमण से ग्रस्त हैं। तुम्हारे

स्नेहमय निमन्त्रण से, मेरा यहाँ रहना असंभव होगा। मैं अपने अग्रज भ्राता के साथ प्रकट होऊँगा।'

यह शब्द सुनने के बाद दूसरा व्यक्ति अत्यधिक प्रसन्न हो गया और एक मंगल वेला में वे श्रीनाभादेवी के गर्भ में प्रवेश कर गये। यह देखकर श्रीकुबेर पंडित जाग कर बहुत आनन्दित हो गये, उनका हृदय उत्साह और प्रेम से अभिभूत हो गया।

श्रीअद्वैत-गर्भ में पधारे

श्रीकुबेर पंडित जो कि सभी शास्त्रों के एक विद्वान् पंडित थे उन्होंने विचार किया कि भगवान् कलि-युग में गुरु के रूप में प्रकट होंगे। इस प्रकार विचार करते हुए वे अपनी पत्नी के संग पुनः उल्लसित लक्षणों से अभिभूत हो उठे और स्वंय के आँसुओं पर नियंत्रण न रख पाये।

उस दिवस से श्रीमती नाभादेवी ने गर्भ धारण करने के लक्षण प्रकट किये और इस कारण से वे नव-ग्राम लौट आयीं। शीघ्र ही श्रीअद्वैत प्रभु के नव-ग्राम में प्रकट होने से सम्पूर्ण विश्व में आनन्द फैल गया।

अचानक एक स्वर उनके हृदय से उत्पन्न हुआ, 'श्रीकृष्णचैतन्य श्रीनित्यानन्द राम के संग इस संसार में प्रकट होंगे। अपने पार्षदों के साथ मिलकर वे अद्भुत लीलाओं का आनन्द लेंगे। वे प्रत्येक घर में प्रेममयी आध्यात्मिक सेवाओं का वितरण करेंगे उसके कारण जीवों की अप्रसन्नता एवं विलाप का नाश होगा।'

संकीर्तन आन्दोलन से उत्पन्न आनन्द के सागर का अतिप्रवाह होगा और वह हर किसी को बिना चाह के उसमें डुबो देगा। यह कलि-युग अत्यधिक आनन्ददायक है।

यह वाणी सुनकर हर कोई प्रसन्न हो उठा। श्रीकुबेर पंडित का घर शुभता से भर गया। सौभाग्यशाली व्यक्ति जिन्होंने श्रीअद्वैत आचार्य को दिवस-प्रतिदिवस बढ़ते देखा था वे उल्लास से भर उठे। कभी-कभी श्रीअद्वैत आचार्य खुद को गुप्त कर लेते और केवल श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से खोजे जाते। श्रीअद्वैत आचार्य को अपने गांव में पाकर नव-ग्राम के निवासी सब अप्रसन्नता और विलाप भुलाकर आनन्द के सागर में तैर जाते थे।

यद्यपि भगवान् के दो नाम थे- कमलाक्ष और अद्वैत परन्तु हर कोई उन्हें अद्वैत के नाम से पुकारता। श्रीअद्वैत आचार्य की बाल्यकाल की लीलाऐं अद्भुत थीं- सौभाग्यशाली व्यक्ति ही उनका दर्शन कर सकते थे। किसमें सामर्थ्य है कि उसका वर्णन करें। श्री अद्वैत प्रभु हर किसी की आँखों के तारे थे। सब सोते जागते उनके गुण गाते थे। बार-बार मैं यह कहता हूँ कि उनका प्रत्येक शिष्य बंगाल की धरती पर उनका अवतार होने के कारण आनन्द में मग्न है।

श्रीकुबेर पंडित जो कि अत्यंत गंभीर और प्रेममयी भक्ति से परिपूर्ण थे उन्होंने सब को बता दिया, 'हम गंगा के किनारे जाकर रहेंगे।' तब अपने मित्रों और अन्य गांव वालों के साथ वे नव-ग्राम से शांतिपुर आ गये। शांतिपुर में प्रसन्नतापूर्वक रहते हुए वे कभी-कभी नवद्वीप में अपने मित्रों से मिलने चले जाते। श्रीकुबेर पंडित ने बहुत सावधानी से प्रभु की शास्त्रीय शिक्षा का प्रबन्ध किया। जल्दी ही पतितों को मुक्ति देने वाले प्रभु अपनी विद्वत्ता के कारण पंडित के नाम से भी विख्यात हो गये।

अद्भुत व्यक्तित्व-अद्वैत

यद्यपि श्रीअद्वैत आचार्य के माता पिता उनकी वास्तविकता के बारे में जानते थे फिर भी पैतृक भाव के कारण वे सब कुछ भूल गये। शान्तिपुर के विद्वान् श्रीअद्वैत आचार्य की गतिविधियों के कारण अचंभित थे। किसी ने कहा, अद्वैत आचार्य मनुष्य नहीं हो सकते क्योंकि कोई मनुष्य हर किसी का हृदय आकर्षित नहीं कर सकता जैसे वे करते हैं?

श्रीकुबेर पंडित तेजस्वी व्यक्तिव के स्वामी थे क्योंकि उनका ऐसा पुत्र था जिसके कारण हर किसी का हित हुआ। इस प्रकार लोग बोलते कि श्रीअद्वैत आचार्य हर किसी के प्राणधन हैं। कौन उनकी इच्छा को जान सकता है जिन्होंने अपने माता-पिता को विविध प्रकार से प्रसन्नता प्रदान की।

श्रीमाधवेन्द्र पुरी से दीक्षा

कुछ समय बाद अद्वैत आचार्य प्रभु के माता-पिता इस संसार से अन्तर्धान हो गये और वे उनका श्राद्ध तर्पण करने गया गये। इस अवसर का लाभ उठाकर उन्होंने मार्ग में पड़ने वाले प्रत्येक पवित्र स्थान की यात्रा की। उस समय उन्होंने श्रीमाधवेन्द्रपुरी से मन्त्र दीक्षा प्राप्त की। किसमें सामर्थ्य है कि वे श्रीअद्वैत आचार्य की गतिविधियों को समझ सके जो यात्रा करते समय सदा प्रभु के प्रेम में उल्लसित रहते थे?

यात्रा करते हुए जब श्रीअद्वैत प्रभु मथुरा-मण्डल में आये तो ब्रज की सुन्दरता देख कर वे उल्लास से अभिभूत हो गये। सभी स्थानों के दर्शन करने के बाद वे श्रीवृन्दावन आये जहाँ सभी ब्रजवासियों ने सावधानी पूर्वक उनके रहने का प्रबन्ध किया। केवल कुछ फल, कन्द-मूल और दुग्ध-पान करने मात्र से ही उनकी छटा को देखकर लोग दंग रह जाते। उल्लसित प्रेम में व्यथित प्रभु चिल्लाते और रोते हुए बोलते, 'क्या मैं श्रीकृष्ण के दर्शन करुँगा?'

इस प्रकार श्रीअद्वैत आचार्य समय-समय पर विविध भाव दशाओं का अनुभव करते। प्रभु श्रीयमुना जी के निकट श्रीकृष्ण की आराधना करते। तब यह जानकर कि श्रीचैतन्य महाप्रभु का प्राकट्य हो गया है, उन्होंने श्रीवृन्दावन

का त्याग कर दिया और बंगाल आ गये। श्रीअद्वैत आचार्य की लीलाऐं अमृत के समान हैं परन्तु कोई सौभाग्यशाली ही इसका आस्वादन कर सकता है।

हे श्रीनिवास जिस वृक्ष के नीचे श्रीअद्वैत आचार्य रहा करते थे वह **अद्वैत-वट** के नाम से विख्यात हो गया। अद्वैत-वट के दर्शन मात्र से ही जीव के पापमय प्रभाव स्थानान्तरित हो जाते हैं और प्रेम भक्ति की अति दुर्लभ भेंट प्राप्त होती है।

इमलीतला

कालिन्दी के तट पर पौधों और लताओं को देखो जो सदा सर्वदा ताजा और सुन्दर हैं। यह बहुत प्राचीन तिंतड़ी वृक्ष है(तिंतड़ी वृक्ष **इमली-तला** के नाम से जाना जाता है।) जहाँ श्रीराधा और श्रीकृष्ण ने अपने पार्षदों के संग लीलाओं का आनन्द लिया था। अपनी पुरानी गतिविधियों को स्मरण करते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ आकर असीमित प्रसन्नता में बैठ गये।

उल्लसित प्रेम से अभिभूत श्रीराघव पंडित ने श्रीनिवास को श्रीचैतन्य महाप्रभु का चरित्र बताना आरम्भ किया। '**श्रीचैतन्य महाप्रभु देवत्व के चिरकालिक सर्वोच्च स्वरूप हैं**। वे नवद्वीप के प्रभु हैं और वे नन्द महाराज के पुत्र **श्रीब्रजेन्द्र-नन्दन** हैं। वे श्रीअद्वैत आचार्य के हृदय से पुकारने पर नवद्वीप में शची माता और श्रीजगन्नाथ मिश्र के घर प्रकट हुए। श्रीगौरांग प्रभु की अद्‌भुत लीलाऐं अनन्त-शेष द्वारा अपने सहस्रों मुखों से भी नहीं वर्णित की जा सकतीं।'

ईश्वर पुरी को मन्त्रदान

अपने पिता के अन्तर्धान होने के कुछ दिवस बाद प्रभु श्राद्ध करने **गया** गये। उस समय अति सौभाग्यशाली श्रीईश्वरपुरी ने गौरसुन्दर के दर्शन कर पुनः जीवन प्राप्त किया था। गौरसुन्दर जो कि भक्तों के प्राण हैं, उन्होंने श्रीईश्वरपुरी के प्रति अत्यन्त अनुराग दिखाया। **चैतन्य महाप्रभु ने श्रीईश्वरपुरी के कान में दीक्षा मंत्र** का उच्चारण किया और ईश्वरपुरी से मंत्र सुनकर वे धरती पर जा गिरे और सम्मान व्यक्त किया। श्रीईश्वरपुरी को अपना गुरु धारण कर चैतन्य महाप्रभु निरंतर अपने आँसुओं में भीगते रहे। ईश्वरपुरी विश्व के मुक्तिदाता भगवान् विश्वम्भर को अपने शिष्य के रूप में धारण कर उल्लास से विक्षिप्त से हो गये।

तुम ये कह सकते हो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु सम्पूर्ण विश्व के आध्यात्मिक गुरु हैं फिर भी उन्होंने आध्यात्मिक गुरु को धारण किया। यह निश्चित रूप से जटिल है। इसलिये मैं ये कहता हूँ कि सामान्य तौर पर लोगों को निर्देश देने के लिये प्रभु ने अपने ही उदाहरण से धर्म के सिद्धांतों की स्थापना की। कौन प्रभु की उत्तमोत्तम लीलाओं का स्मरण कर सकता है? उन्होंने इस प्रकार स्वयं गौड़ीय-सम्प्रदाय को महिमा मण्डित किया।

(एक प्रामाणिक सम्प्रदाय से मंत्र धारण कर जीव सफल हो जाता है। यदि कोई अनधिकृत स्रोत से मंत्र प्राप्त करता है तो वह निश्चित ही निरर्थक होता है। सम्प्रदायों की विशद् विवेचना हेतु मण्डल द्वारा प्रकाशित 'ब्रज के छः सम्प्रदाय' ग्रन्थ का आस्वादन किया जा सकता है। किसी समय चार ही सम्प्रदाय थीं। आजकल (सन् 2018) कुल छः भाष्य उपलब्ध हैं एवं छः सम्प्रदाय हैं। बिना प्रामाणिक भाष्य के भी अनेकानेक सम्प्रदाय अस्तित्व में हैं)- सम्पादक।

श्रीकृष्ण चैतन्य वांछा कल्पतरु हैं और वे ही श्रीनारायण के रूप में हैं। वे ही समस्त सम्प्रदायों के गुरु हैं। विशेषतः गौड़ीय सम्प्रदाय के प्रवर्तक वे ही हैं। मूल ग्रन्थ बंगला में सम्प्रदाय एवं परम्परा का विस्तार से वर्णन है, जिसे ग्रन्थ विस्तार भय से यहां वर्णन नहीं किया गया है।

यहां पर ग्रन्थकार ने माध्व आदि सम्प्रदायों की विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित गुरु परम्पराऐं लिखी हैं, जिनका सार 'ब्रज की छः सम्प्रदाय' ग्रन्थ में देखना चाहिये।

राघव पंडित ने वर्णन किया कि कैसे श्रीचैतन्य महाप्रभु वृन्दावन आये थे। 'ब्रज-मण्डल के अन्य वनों की यात्रा करने के बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु मथुरा के मार्ग से वृन्दावन आये थे। यदि मेरे कोटि मुख होते तो भी यात्रा के दौरान यमुना जी के तट पर प्रभु के उल्लसित भावों का वर्णन मैं नहीं कर सकता। समस्त दिशाओं से असंख्य लोग आये और प्रभु को देखकर और महिमा मण्डित कर उल्लसित प्रेम भाव में व्यथित हो गये। अपार जन समुदाय से विक्षुब्ध हो प्रभु अपने भजन के लिये अक्रूर-घाट के निर्जन स्थान पर आ गये। कभी-कभी वे तिंतड़ी (इमली-तला) वृक्ष के नीचे बैठ जाते और उत्साह में नेत्रों से आँसू बहाते। इमली-तला एक उत्तमोत्तम आनन्द का स्थान है जहाँ प्रभु ने श्रीकृष्ण दास राजपूत पर अपनी करुणा बरसाई।'

'हे श्रीनिवास यहाँ से प्रभु अपने भक्तों की कामनापूर्ति के लिये नीलाचल की ओर गये। जो कोई भी इमली-तला के दर्शन करता है निश्चित ही उसकी सभी अभिलाषाऐं पूर्ण होती हैं।'

'यमुना के किनारे इस सुन्दर वट वृक्ष के दर्शन करो, हर कोई इसे **श्रृंगार-वट** कहता है। इस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण ने सुबल और अन्य सखाओं के आनन्द के लिये विविध वस्त्र धारण किये थे। कुछ अन्य लोग इसे **नित्यानन्द-वट** भी कहते हैं। यह भी सही है क्योंकि श्रीनित्यानन्द प्रभु ने इस स्थान की यात्रा की थी।'

श्रृंगार वट

श्रीनित्यानंद प्रभु ने जिस प्रकार यहां आगमन किया, वह कथा कहता हूँ। श्रीचैतन्य की ही दूसरी देह हैं श्रीनित्यानंद राम। राठ देश में उनका जन्मस्थान एकचक्रा ग्राम है। श्रीहाड़ाई पण्डित पिता एवं माता श्रीमती पद्मावती हैं। दोनों

ही पुत्र को प्राण समान मानते हैं। पद्मावती-पुत्र एक चक्रा गांव में नाना लीलायें करते हैं। एक बार अनेक अवतारों की लीला करते हुए इनको आवेश हो गया। सभी ग्रामवासियों ने उस आवेश के दर्शन किये। समस्त ग्रामवासी प्राणपण से इनको प्रिय थे। धीरे-धीरे आप 12 वर्ष के हो गये। इनकी हृदयगत अवस्था को श्रीचैतन्य के अतिरिक्त कौन जान सकता है।

एक दिन श्रीनिताई ने सोचा कि श्रीचैतन्य नवद्वीप में प्रकट हो चुके हैं। बालरूप में अभी छिपे हुए हैं, जब बड़े हो जायेंगे, तब मैं जाकर उनसे मिलूंगा। अब मुझे तीर्थाटन के लिये जाना चाहिये- जब ये विचार मन में आया तभी एक संन्यासी साधु हाड़ाई पंडित का घर पूछते पूछते द्वार पर आ गये। पंडित ने उनकी खूब आवभगत की और उनके समक्ष विविध सामग्री आरोगने हेतु रखी।

संन्यासी ने कहा- पहले एक वचन दो, तब प्रसाद पाऊँगा और उस वचन के रूप में श्रीनित्यानंद को मांग लिया। श्रीनित्यानंद वचन की रक्षा करते हुए, माता-पिता को समझाकर उस संन्यासी के साथ हो लिये। नित्यानंद तो तीर्थाटन का विचार ही कर रहे थे। उनके मन की पूरी हो गयी- वे उस संन्यासी के साथ तीर्थाटन करते रहे। जैसे श्रीबलराम रूप में द्वापर में तीर्थाटन किया-वैसे ही अब भी घूमते घामते पण्ढरपुर पहुँचे। यहां श्रीविट्ठलनाथ जी के दर्शन किये। उस ग्राम में एक निरीह ब्राह्मण रहता था। वे श्रीमाधवेन्द्र पुरी के गुरु भाई थे। श्री नित्यानंद को ये अपने घर लाये-भोजन प्रसाद से इनकी सेवा की।

अकस्मात् एक दिन ब्राह्मण ने देखा कि उसके गुरुदेव श्री लक्ष्मीपति पुरी जी अपने अनेक शिष्यों सहित इधर ही आ रहे हैं। लक्ष्मी पति जी की महिमा कौन नहीं जानता। श्रीमाधवेन्द्र पुरी जैसे उनके शिष्य हैं और श्रीमाधवेन्द्र पुरी प्रेमभक्तिरसमय हैं, उनके नाम स्मरण से ही सर्व सिद्धि हो जाती है। ईश्वरपुरी, रंगपुरी आदि जितने भी इनके शिष्य हैं, सभी भक्ति रस में मत्त हैं। लक्ष्मीपति जी ने उस शिष्य के घर कृष्ण कथा चर्चा की और प्रसाद-भिक्षा की।

श्रीलक्ष्मीपति ने उस शिष्य से कहा- मैं अनेक बार तुम्हारे घर आया हूँ, लेकिन, जैसा आनन्द मुझे आज मिला है, पहले कभी नहीं मिला। शिष्य ने कहा- ये सब आप ही की कृपा है। नित्यानंद की इच्छा से वे उनकी अवस्थिति को नहीं जान पाये। श्रीलक्ष्मीपति को श्री बलराम बहुत प्रिय थे। रात दिन, घर में, वन में, बलराम! बलराम! पुकारते हुए करुण क्रन्दन करते थे। रात्रि-रात्रि भर क्रन्दन करते हुए जागते रहते।

एक दिन स्वप्न में श्रीनित्यानन्द ने बलराम रूप में दर्शन दिये। उनकी शोभा अद्भुत, नील परिधान युक्त देखते ही आँखें चौंधिया गयीं। श्रीनित्यानंद प्रभु ने कहा- सुनो! लक्ष्मीपति! तुम श्रीकृष्ण को बहुत प्रिय हो, प्रत्येक जन्म में तुम उनके किंकर बनते हो। उन बलराम जू ने कहा- इस गांव में एक विप्र

कुमार आया हुआ है। वह अवधूत वेश में है, उसे अपना शिष्य बनाओ। और सुनो! उसे इस मन्त्र द्वारा दीक्षित करना। श्रीबलराम ने उन्हें मन्त्र सुनाया और वे आनंदित हो गये। श्रीबलराम जी अन्तर्हित हो गये।

प्रातः काल उठकर लक्ष्मीपति श्रीनित्यानंद का चिन्तन कर ही रहे थे कि वह विप्रकुमार मुझे कहां कैसे मिलेगा? इतने में ही श्रीनित्यानन्द प्रभु उनके सम्मुख उपस्थित हो गये। श्रीनित्यानंद के तेज एवं सौन्दर्य राशि को देखकर लक्ष्मीपति अधीर होकर पृथ्वी पर लोटपोट होने लगे। प्रभु ने उन्हें उठाया और अतीव विनय पूर्वक उनसे प्रार्थना की, कि आप मुझे कृपाकर मन्त्र दीक्षा प्रदान कीजिये। इस प्रकार प्रभु की मंत्र दीक्षा हुयी।

जैसा कि स्पष्ट है- प्रभु ने स्वप्न में पहले स्वयं उन्हें मन्त्र दिया और वही मंत्र लक्ष्मीपति पुरी ने श्रीनित्यानंद प्रभु को दिया। ये भी निश्चित है कि जो मन्त्र था, उससे लक्ष्मीपति अपरिचित थे। अर्थात् यहां से गौड़ीय सम्प्रदाय का प्रवर्तन प्रारंभ हुआ। भले ही पूर्व में लक्ष्मीपति पुरी किसी अन्य या माध्व सम्प्रदाय के रहे हों अब वे श्रीबलराम/श्रीनित्यानंद द्वारा पुनर्दीक्षित हुए वैष्णव मन्त्र के द्वारा और वही मंत्र लीलाधारी बलराम स्वरूप श्रीनित्यानंद को दिया।

श्रीलक्ष्मीपति द्वारा श्रीनित्यानंद को दीक्षा देने से उनका हृदय प्रफुल्लित हो गया, हृदय में आनंद की लहरें उतराने लगीं। विरह में विह्वल होकर चीत्कार करने लगे- उनकी दशा अष्ट सात्विक विकारों से युक्त हो गयी, हे बलराम! हे बलराम पुकारते रहे। तब स्वप्न में श्री बलराम ने दर्शन दिये और देखते-देखते ही बलराम, नित्यानंद रूप में परिवर्तित हो गये और श्रीलक्ष्मीपति पुरी चरणों में गिर गये और बार-बार दैन्य प्रकाशित करने लगे और समझ गये कि मेरे प्रभु श्रीबलराम ने ही श्रीनित्यानंद रूप में मुझसे दीक्षा लेकर मुझे अपनाया है।

श्रीनित्यानंद ने कहा- मेरी आज्ञा है कि तुम इस रहस्य को रहस्य ही रखोगे- किसी को भी बताओगे नहीं। और अन्तर्ध्यान हो गये। प्रभु के अदर्शन से लक्ष्मीपति बहुत अधीर रहने लगे। नींद-चैन सब भाग गया और इसके बाद से लक्ष्मीपति ने अपने आप को छिपा लिया।

पाण्डु ग्राम या पण्ढरपुर का यह सौभाग्य था कि श्रीनित्यानंद प्रभु ने लक्ष्मीपति पुरी पर कृपा की एवं अपनी दीक्षा लीला यहीं इस ग्राम में सम्पन्न की। पण्ढरपुर में आज भी भक्ति भागीरथी बह रही है- इनकी कृपा से।

कुछ दिन आपने श्रीमाधवेन्द्र पुरी के साथ व्यतीत किये। जो कि इनके गुरुभाई थे, श्रीनित्यानंद, श्रीमाधवेन्द्र पुरी से सखा जैसा भाव रखते थे, जबकि श्रीनित्यानंद में श्रीमाधवेन्द्र गुरुबुद्धि रखते थे। श्रीमाधवेन्द्र पुरी के शिष्य श्रीईश्वरपुरी आदि भी श्रीनित्यानंद में गुरुबुद्धि रखते थे। कुछ दिन यहां रहकर श्रीनित्यानंद ने पुरी के लिये प्रस्थान किया। सेतुबन्ध गये। रामेश्वर दर्शन को गये। सरयू तीर्थ पर सभी को विदा करके प्रभु मथुरा नगर को आये।

यहां बाल्यावेश में बच्चों के साथ क्रीड़ा करते रहते। जो भी श्रीनिताईचांद को एक क्षण के लिये भी देख लेता, वह इनका संग नहीं छोड़ता था। नित्यानंद के दर्शन हेतु भीड़ उमड़ती थी, लेकिन प्रभु एक स्थान पर नहीं रुकते थे। व्रज के स्थानों के दर्शनों को कभी महावन जाते, गोकुल जाते। नन्दालय में जाकर आप बच्चों की तरह रोने लगते। तब वहां विराजित श्रीमदनगोपाल के दर्शन कर आप हस्तिनापुर की ओर चल दिये। वहां से आप श्रीवृन्दावन आ गये। श्रीवृन्दावन में यमुना पुलिन पर क्रीड़ाऐं करते रहे। यहां वट वृक्ष के नीचे नाचते कूदते और धूलि धूसरित हो पृथ्वी पर रज में लोटने लगे। कभी कहते मेरा कन्हैया कहां है- वह श्रीवृन्दावन में भी नहीं है। इस प्रकार रुदन करते करते श्रीवृन्दावन में विहार करते रहे।

एक दिन उन्हें श्रीनवद्वीप की स्मृति आयी और समझ गये कि अब श्रीचैतन्य अपने स्वरूप में प्रकाशित हो गये हैं और यहां से श्री नित्यानंद ने श्रीनवद्वीप के लिये प्रस्थान किया।

बीस वर्ष की आयु तक तीर्थाटन किया और यहीं इसी शृंगारवट पर आपने वास किया- यहाँ पर ही रहकर उन्होंने वृन्दावन में विचरण किया। आज भी शृंगारवट में श्रीनित्यानंद प्रभु के वंशज अपने परिवारों सहित विराजमान हैं।

'हे श्रीनिवास यह **चीरघाट** है जो कि कुछ लोगों द्वारा चयन घाट भी कहलाता है। एक दिवस रास-लीला करने के बाद श्रीराधा और श्रीकृष्ण अपनी सखियों के संग यहाँ स्नान करने आये थे।'

अपने वस्त्र और आभूषण इस नीम वृक्ष के नीचे रख वे केवल अपने अंग वस्त्र धारण किये यमुना जी के जल में प्रवेश कर गये। विभिन्न क्रीड़ाऐं करने के फलस्वरूप वे थक गये थे परन्तु यमुना जी के जल को स्पर्श कर उनकी थकावट परास्त हो जाती थी और वे पुनः तरोताजा हो जाते थे। अपनी जलक्रीड़ा में अति आनन्द का अनुभव कर वे कमल के झुण्ड में जा विराजे।

तब श्रीकृष्ण, गोपियों से अगोचर होकर तट पर आ गये, गोपियों के वस्त्र छिपाये और पुनः जल में वापिस आ गये। अपनी जलक्रीड़ा समाप्त करके वे तट पर वापिस आ गये और अपने-अपने वस्त्र वहाँ न पाकर सब चिंतित हो गये। इस समय इस अति अद्‌भुत और सुन्दर दृश्य को देखकर श्रीकृष्ण ने उनके साथ हास-परिहास करके उन गोपियों के वस्त्र लौटा दिये।

देखो यह **केशी-तीर्थ** है। इस स्थान की महिमा का पुराणों में वर्णन है। आदि-वाराह-पुराण में वर्णन है। 'केशी-तीर्थ वह स्थान है जहाँ केशी मारा गया था वह स्थान गंगा जी से सौ गुणा पावन है। केशी-तीर्थ पर पिण्ड-दान करने से जीव को गया में पिण्ड-दान करने का फल प्राप्त होता है।'

ब्रज-विलास-स्तव में यह वर्णन है। 'अपनी तेज हंसी से केशी ने तीनों लोकों को कंपकपा दिया और अपने प्रचण्ड नेत्रों को घुमाते हुए उसने सम्पूर्ण

ब्रह्माण्ड में आग लगा दी। श्रीकृष्ण ने उस राक्षस को इतनी सरलता से मार दिया जैसे किसी ने घास को गंडासे से काट दिया हो और फिर अपने हाथों से रक्त को उस स्थान पर धोया जिसे आज लोग केशी-तीर्थ के नाम से जानते हैं। मैं इस पावन स्थल की आराधना करता हूँ।

धीर समीर

हे श्रीनिवास इस **धीर-समीर** नाम के स्थान पर वृक्षों के नीचे श्रीकृष्ण ने अनंत लीलाऐं रचाईं। इस स्थान पर श्रीकृष्ण और श्रीराधा के अद्‌भुत मिलन का उनके प्रिय पार्षदों ने आनन्द लिया।' यह मूल स्थान है। इस नाम के आधार पर मेरी कुटिया का नाम भी 'धीर समीर' है, जहां बैठकर मैं इस ग्रन्थ की सेवा कर रहा हूँ। छटीकरा रोड पर श्रीकृष्णा ग्रीन में डी 7 नम्बर से अवस्थित है। यहाँ भी 'वसति सदा वनमाली' की भावना में सेवा करता हूँ।- सम्पादक

यहाँ **मणिकर्णिका** है। इस वन में श्रीकृष्ण ने अनेक लीलाऐं रचाईं। इस स्थान पर श्रीकृष्ण ने राधारानी को शांत किया जब वे क्रोधित हुईं। यमुना जी के तट पर अद्‌भुत सौन्दर्य पूर्ण **वंशी-वट** के दर्शन करो। वंशी-वट के वृक्षों की छांव सम्पूर्ण विश्व के तनाव को दूर करती है। भगवान् गोपीनाथ अनन्तकाल से यहाँ लीलाओं का आनन्द लेते हैं। उनकी आकर्षक वेशभूषा ब्रजगोपिकाओं को आकर्षित करती है और उनकी चाल अति आकर्षक है। उनकी बांसुरी की धुन भी गोपियों को आकर्षित करती है।

श्रीचैतन्य-चरितामृत में भी वर्णन है। 'श्री श्रील गोपीनाथ जिन्होंने उत्तमोत्तम आनन्द सहित रास-नृत्य का प्रारम्भ किया था, उन्होंने वंशी-वट पर खड़े होकर अपनी बांसुरी की धुन से गोपाङ्गनाओं को आकर्षित किया था। वे सब हम पर अपना आशीर्वाद बरसायें।'

वंशीवट

यह स्थान **वंशी-वट** यमुना जी के जल में जलमग्न होकर अदृश्य हो गया था। गोस्वामी गणों ने मूल वृक्ष की एक शाखा को एकत्र कर मूल वृक्ष के स्थान पर ही आरोपित कर दिया। हे श्रीनिवास यह स्थान सर्वोच्च आकर्षक है और यहाँ शीतल पवन सदा बहती रहती है।

अत्यधिक उत्साह में सब कुछ पीछे छोड़कर वंशी की धुन सुनने के बाद गोपियां यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण से मिलने आती थीं। वे श्रीकृष्ण के सौन्दर्य में डूब जातीं और श्रीकृष्ण उनके प्रेम को देखकर धैर्य न रख पाते थे। कौन समझ सकता है कि कैसे भगवान् श्रीकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक गोपियों से उनका कुशलक्षेम पूछते थे? इस प्रकार श्रीकृष्ण इस स्थान पर गोपियों को विविध प्रकार से घर लौट जाने का निर्देश देते हुए उनके प्रेम में यहाँ विश्राम करते थे।

जैसे ही रास-नृत्य आरम्भ होता तो श्रीकृष्ण विभिन्न श्रेणियों की गोपियों को छोड़ने का निश्चय कर राधारानी को अपने साथ ले जाते। श्रीकृष्ण द्वारा अकेला छोड़े जाने पर गोपियाँ वृक्षों और लताओं से ठौर-ठिकाना पूछती थीं। तब गोपियाँ श्रीमती राधारानी की सौभाग्यशाली अवस्था का गुणगान करती हुईं श्रीकृष्ण की लीलाओं का अनुकरण करतीं।

राधारानी की कामनाओं को परिपूर्ण कर श्रीकृष्ण उन्हें इस स्थान पर छोड़ गये। राधारानी को इस अवस्था में देखकर अन्य गोपियों ने हृदय से उल्लसित होकर उन्हें विभिन्न प्रकार से शांत करने का प्रयास किया। वे सब श्रीकृष्ण के दर्शनों की उत्कंठा लिये एकत्र हो गईं और उनके उत्तमोत्तम गुणों की महिमा का अनंतकाल तक गुणगान करने लगीं।

'गोविन्द-घाट' के नाम से विख्यात इस स्थान पर श्रीकृष्ण गोपियों के सम्मुख पुनः प्रकट हुए थे और इस कारण उत्तमोत्तम आनन्द में डूब गये। गोपियों ने सावधानीपूर्वक श्रीकृष्ण को यहाँ बैठाया और उन सबके मध्य विस्तार-पूर्वक चर्चा हुई।

यमुना-पुलिन

हे श्रीनिवास यहाँ यमुना जी के तट के दर्शन करो। इस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपना महा-रास प्रारम्भ किया। लाखों गोपियों से घिरे श्रीकृष्ण उत्सुकतापूर्वक अपनी रास-नृत्य लीला का आनन्द लेते। जिस रात वे रास-नृत्य का आनन्द लेते वह सम्पूर्ण रात्रि एक कल्प तक रहती। श्रीव्यास देव और अन्य कवियों ने इसका स्पष्ट रूप से वर्णन किया है। नारियों में श्रेष्ठ और उत्तमोत्तम उल्लासयुक्त उच्चतम निपुणता से घिरे श्रीकृष्ण जो कि हर किसी को आकर्षित करते वे निपुणता से रास-नृत्य का आनन्द लेते।

श्रीकृष्ण सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित करने वाले और श्रीराधिका के प्राणधन हैं और रास-नृत्य का आनन्द लेने वाले हैं। श्रीराधिका सम्पूर्ण विश्व को मोहित करने वाली और श्रीकृष्ण की प्राणधन हैं और गोपियों में अलंकार स्वरूप हैं। उनका मुख्य वचन श्रीकृष्ण को सुख प्रदान करना है और कुछ नहीं। राधारानी अपनी सखियों के साथ सदा श्रीवृन्दावन में रास-नृत्य का आनन्द लेते हुए उत्साह में भाव-विभोर रहतीं।

एक दिवस इस स्थान पर कुछ अद्‌भुत लीलाऐं हुई जिनका वर्णन करने के लिये मैं उत्सुक हूँ। वृन्दा देवी ने सोचा कि वे और अन्य श्रीराधा और श्रीकृष्ण की लीलाओं का दर्शन कैसे करेंगी। इस प्रकार सोचते हुए वृन्दा देवी और उनके अनुयायियों ने रास-नृत्य का प्रबन्ध करना आरम्भ कर दिया। उनके द्वारा किया गया अद्‌भुत प्रबन्ध यहाँ तक कि नृत्य-शास्त्र से भी गोपनीय था।

नृत्यशाला को चमकदार चन्द्रमा के समान दीप्तिमान और अत्यधिक आकर्षक बनाया गया। निकटवर्ती बाग भी चन्द्रमा के प्रकाश से सौन्दर्यवान हो रहे थे। बैठने वाले के अनेक स्थान जो कि चारों दिशाओं में स्थित थे उनको श्वेत पुष्पों से सजाया गया और मध्य में एक श्वेत सिंहासन को बहुत सावधानी से व्यवस्थित किया। पान, ताम्बूल और अन्य मसाले जो कि एक रत्नजड़ित थाल में रखे गये थे वे सभी को अपनी अद्‌भुत महक से आकर्षित कर रहे थे। विभिन्न सुसज्जित पुष्पों की सुगन्ध, चन्दन और अन्य वस्तुओं का वर्णन नहीं किया जा सकता।

वहाँ उन्होंने लाखों चंवर रखे हुए थे जो मनमोहक थे। मृदंग और अन्य वाद्ययन्त्र पंक्तिबद्ध तरीके से रखे हुए थे। तोते और कोयल को श्रीराधा और श्रीकृष्ण की महिमा का गुणगान करने का निर्देश दिया गया। मोर को नृत्य करने का और भंवरों को गुंजन करने का निर्देश दिया गया।

रासलीला-आयोजन

इस समय वृन्दा देवी के एक अनुयायी ने धीमे स्वर में उनसे कहा, 'आपके निर्देश पर मैं देखने गया था कि प्रभु को विलम्ब क्यों हो रहा है। पौर्णमासी ने श्रीकृष्ण को पुष्पवन में राधारानी की प्रतीक्षा करने को कहा है। अपने घर से सखियों के साथ आते हुए राधिका तब श्रीकृष्ण से इस स्थान पर मिली थी। पौर्णमासी उनके मिलन को देखकर प्रसन्न हो गयीं और उन्हें आप के प्रबन्धों के बारे में सूचित कर दिया। यह सुनकर श्रीराधा और श्रीकृष्ण वहाँ से यहाँ आने के लिये प्रस्थान कर चुके हैं।'

एक दूसरे के कन्धे पर हाथ रख कर आगे बढ़ते हुए उनके चरणकमल कितने आकर्षक लग रहे थे। उन्होंने एक दूसरे को गहन प्रेम भरी दृष्टि से निहारा। इस चित्ताकर्षक दृश्य के सौन्दर्य की कोई सीमा न थी। इसे देखकर किसी भी जीव के नेत्र पलकें नहीं झपका पाते थे।

श्रीकृष्ण ने एक मानसून की वर्षा से भरे मेघ को पुनः स्थापित किया और राधा ने चमकती विद्युत तरंग को पुनः स्थापित किया। उनके सौन्दर्य की चमक तीनों लोकों को प्रकाशित कर रही थी। वे ललिता आदि अन्य सखियों से घिरे हुए थे और वहाँ उपस्थित इन सबके मिश्रित भौतिक प्रकाश का पुंज निश्चित ही चित्ताकर्षक था। इस प्रकार अद्‌भुत मुद्राओं में लगातार बज रहे घुंघरूओं के स्वर के साथ उन्होंने वन कुंज में प्रवेश किया।

वृन्दा देवी द्वारा किये गये प्रबन्ध को देखकर राधारानी और श्रीकृष्ण अपनी सखियों के साथ उल्लसित हो गये। मण्डप के मध्य उस उत्कृष्ट सिंहासन पर विराजमान होकर वे अति तृप्त भाव से मुस्कुरा रहे थे। सभी ओर सखियाँ प्रसन्नता में अपना सब कुछ भूल बैठी थीं।

लाखों दासियां अपने प्रभु को चंवर से पंखा झल रही थीं। तोते और कोयल उनकी महिमा का गान कर रहे थे। भँवरे गुंजन कर रहे थे और मोर नृत्य कर रहे थे। वे सभी वृन्दा देवी के निर्देश पर अपनी नियत सेवा दे रहे थे और इस प्रकार वृन्दा देवी ने अपने हृदय की कामना को उजागर कर दिया। उल्लसित प्रेम के अवतार श्रीकृष्ण ने मुस्कुराते हुए तिरछी नजर वृन्दा देवी पर डाली और वृन्दा देवी से कुछ बोले।

वृन्दा देवी द्वारा श्रीकृष्ण को पुष्प और चन्दन लेप अर्पित करते समय निरंतर वृद्धि करते हुए आनन्द का जो अनुभव हुआ उसका वर्णन कौन कर सकता है? ललिता सखी ने पान का थाल उठाकर प्रसन्नता पूर्वक राधारानी के हाथ में थमा दिया, जिन्होंने पान उठाया और अति आनन्द से श्रीकृष्ण के मुख में डाल दिया। अपनी लीला को प्रकट करते हुए धीमे से मुस्कुराते हुए पान चबाते हुए श्रीकृष्ण का हृदय प्रेम में व्यथित हो गया। रास नृत्य का आनन्द लेने का विचार करते हुए उन्होंने प्रेम से राधारानी के मुख पर दृष्टि डाली।

भगवान् श्रीकृष्ण आनन्द के अवतार हैं, रस के धाम हैं। उनके द्वारा लाखों कामदेव को परास्त किया गया है। अपने अधरों पर बांसुरी रख, एक आकर्षक परिधान धारण कर और मोर पंख धारण कर उनका सौन्दर्य असीमित रूप से वृद्धि को प्राप्त हो रहा था।

अनन्त सखी-गोपीजन

इसके पश्चात् वृन्दा देवी की कामना पूर्ण करने के लिए भगवान् श्रीकृष्ण ने अपनी रास-नृत्य लीला का इस स्थान पर आनन्द लिया।

असंख्य गोपियों के मध्य श्रीराधिका सर्वोच्च हैं। वे अकेले ही श्रीकृष्ण की सभी कामनाऐं पूर्ण कर सकती हैं। उनकी सज्जा के सौन्दर्य का कौन वर्णन कर सकता है? ललिता सखी के साथ अन्य गोपियों का सौन्दर्य भी अतुलनीय है। यहाँ राधिका जी के पार्षदों की कोई कमी नहीं। इसी प्रकार ललिता सखी के पार्षद और विशाखा जी के पार्षद भी असंख्य हैं।

सभी वाद्य यन्त्र रास नृत्य में प्रवृत्त होने के कारण अति सौभाग्यशाली हैं। हे श्रीनिवास कितना अद्भुत प्रबन्ध है! रास-लीला में विविध वाद्य यन्त्र बजाये गये, जो जीव मात्र को आकर्षित कर रहे थे। सभी का चित्त चुराने वाले मनोहारी संगीत के बारे में मैं क्या कह सकता हूँ?

प्रेमी पार्षदों से सदा घिरे रहने वाले महाराज नन्द के पुत्र लाखों कामदेव को मंत्रमुग्ध करते हैं। वह सब प्रकार के वाद्य यन्त्र बजाने में अति निपुण हैं। जिस प्रकार वे मुरली बजाते हैं उसकी तुलना तीनों लोकों में नहीं की जा सकती। श्रीकृष्ण की मुरली की धुन सुनकर भगवान् शिव आनन्दित हो उठते हैं।

उत्तमोत्तम रस अवतार, गोविन्द की जादूगर, श्रीराधिका निपुणतापूर्वक **अलावनी** (तम्बूरा के समान) नाम से विख्यात वाद्य यन्त्र को बजाती हैं। वे वादन और गायन में तीनों स्वरों-षड्ज, मध्यम और गांधार में स्वरों को स्पंदित करती हैं।

श्रीललिता अति निपुणता से श्रुतियों (चौबीस विभिन्न ध्वनियाँ) से प्रारम्भ कर **ब्रह्म वीणा** बजाती हैं। अति सुन्दर विशाखा कच्छपी वीणा नामक वाद्ययन्त्र को विभिन्न मधुर स्वरों में बजाती हैं।

अति सुन्दर सुचित्रा **रुद्र वीणा** बजाती हैं जो कि विभिन्न स्वर, जाति और प्रभेद को प्रकट करने में निपुण हैं। चम्पकलता एक अलग मुर्चंग और ताल में विपंची (एक प्रकार की वीणा) बजा रही हैं। रंगदेवी **यन्त्रक विलास** बजाती हैं, जिससे अद्भुत धमक प्रकाशित होती है। सुन्दर सुदेवी विभिन्न रागों में **सांरगी** बजा रही थीं। तुंगविद्या **किन्नरी** वीणा बजाते हुए रास मण्डल में अमृत बरसा रही थीं। इन्दुलेखा **स्वर-मण्डल** (सन्तूर के समान वाद्य यन्त्र) बजा रही थीं और सरलता से विविध स्वर प्रकट कर रही थीं।

राधिका जी की सखियां और उनके अनुयायी इस प्रकार विविध वाद्य यन्त्रों का वादन करने में मग्न थे। कोई **करताल** बजा रहा था और कोई **मृदंग** की ऐसी अद्भुत **ताल** बजा रहा था जो इस विश्व में श्रवण नहीं की गयी थी। कोई **मुरज** (एक प्रकार की लम्बी बांसुरी) बजा रहा था, कोई **उपंग** बजा रहा था जिसे सुनकर कोई भी अपना धैर्य खो बैठता। कोई बहुत निपुणता से **डमरू** का वादन करता था जो कि भगवान् शिव को अतिप्रिय है। अन्य करताल आदि अन्य वाद्य यन्त्र का वादन कर रहे थे और इस प्रकार रास-मण्डल विभिन्न वाद्य यन्त्रों के स्वर से भर उठा था। पर्याप्त रूप से श्रीराधिका एवं उनकी सखियों द्वारा बजाये गये वाद्य यन्त्रों के उत्कृष्ट स्वरों का वर्णन कौन कर सकता है?

अनन्त सखी गण

विविध वाद्य यन्त्रों का स्वर मिश्रित हो गया और ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे रास मण्डल के भीतर अमृत बरस रहा हो। वृन्दा देवी ने शास्त्र से अनभिज्ञ अद्भुत वाद्य यन्त्रों का परिचय करवाया। वाद्य यन्त्रों की स्वर लहरियों द्वारा निर्मित मधुर वातावरण में पूर्णतः मग्न श्रीराधा और श्रीकृष्ण ने नृत्य करना आरम्भ कर दिया। इसी प्रकार सखियों ने भी ललिता सखी के नेतृत्व में परम आनन्द का अनुभव करते हुए नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

हे श्रीनिवास, अपने पार्षदों के साथ राधारानी ने इसी मार्ग से वन में अपनी कुटीर में प्रवेश किया। राधारानी के अनुयायियों का कोई अंत नहीं। राधारानी ललिता सखी के नेतृत्व में अपने पार्षदों के साथ बहुत सुन्दर लग रही हैं। ललिता सखी सभी उत्तमोत्तम गुणों से ओत-प्रोत हैं।

वे रत्नप्रभा के नेतृत्व में आठ अंतरंग पार्षदों से घिरी हुई हैं। अन्य सखियों के अनुयायियों के साथ उन सबका वर्णन 'वृहत्-कृष्ण- गणोद्देश-दीपिका' में इस प्रकार है। 'रत्नप्रभा, रतिकला, सुभद्रा, भद्ररेखिका, सुमुखि, धनिष्ठा, कलहंसी और कलापिनी, **ललिता सखी की आठ अनुयायी** हैं।'

माधवी के नेतृत्व में अपने आठ अंतरंग पार्षदों से घिरी विशाखा का सौन्दर्य अतुलनीय है। माधवी, मालती, चन्द्रलेखा, कुंजरी, हरिणी, चपला, सुरभि और शुभानना, **विशाखा जी की आठ अनुयायी** हैं।

सुचित्रा सब प्रकार के कार्यों में निपुण है। उनका चरित्र अच्छा है और आठ अंतरंग पार्षदों से घिरी हुई हैं। कुरंगाक्षी, सुचरिता, मण्डली, मणिकुण्डला, चंद्रिका, चन्द्रलतिका, कुन्दकाक्षी और सुमिन्दरा, **सुचित्रा जी की आठ अनुयायी** हैं।

चम्पकलता के प्रेम प्रसंग अद्भुत हैं। वे आठ पार्षदों से घिरी हुई हैं। रसालिका, तिलकिनी, सौरसेनी, सुगन्धिका, रामिनी, कामनगरी, नागरी, और नागवेणिका, **चम्पकलता जी की आठ अनुयायी** हैं।

रंगदेवी के सुन्दर रूप को देखकर कौन धैर्य रख सकता है? मंजुमेधा के नेतृत्व में उनकी आठ अनुयायी सभी का हृदय चुराती हैं। मंजुमेधा, सुमधुरा, सुमध्या, मधुरेक्षणा, तनुमध्या, मधुसान्द्रा, गुणचूड़ा और वरांगदा, **रंगदेवी जी की आठ अनुयायी** हैं।

श्रीराधिका के लिये अपने प्रेम के कारण सुदेवी सदा आनन्दित रहती थीं। उनकी आठ पार्षद सर्व विख्यात हैं। तुंगभद्रा, रसोत्तुंगा, रंगवारी, सुसंगता, चित्रलेखा, विचित्रांक्षी, मेदिनी और मदनालसा, **सुदेवी की आठ पार्षद** हैं।

तुंगविद्या अति सुन्दर हैं। उनकी आठ पार्षद कलकंठी की अगुवाई में हैं। कलकंठी, शशिकला, कमला, मधुरा, इन्द्रिरा, कन्दर्पसुन्दरी, कामलतिका, और प्रेम-मञ्जरी, **तुंगविद्या जी की आठ पार्षद** हैं।

इन्दुलेखा जी निपुणता से सभी का हृदय चुराती हैं। उनकी आठ पार्षद कावेरी के आनुगत्य में हैं। कावेरी, चारुकवरा, सुकेशी, मन्जुकेशिका, हारहीरा, महाहीरा, कंठी और मनोहरा, **इन्दुलेखा की आठ पार्षद** हैं।

हे श्रीनिवास जैसे ही ललिता सखी अपनी सखियों और पार्षदों के संग इस कुंज में दिव्य युगल के मिलन का दर्शन करतीं, हर पल उनका आनन्द बढ़ता जाता। ललिता के नेतृत्व में सखियों की गतिविधियां अत्यधिक अद्भुत थीं।

सखियों की लीला सेवा

श्रीराधा और श्रीकृष्ण की सेवा में सखियों द्वारा जो गतिविधियाँ की गयीं उनका वर्णन उज्ज्वल नीलमणि में इस प्रकार है: (1) नायक के उत्तमोत्तम प्रेम और गुणों की महिमा नायिका को बताना और इसी प्रकार नायिका के उत्तमोत्तम

प्रेम और गुणों की महिमा नायक को बताना। (2) एक के प्रति दूसरे के अनुराग में वृद्धि करना। (3) (कुछ दूरी पर) पहले से नियत समय पर मिलन का प्रबन्ध करना। (4) अन्य सखियों को सेवा में लगाना। (5) हास-परिहास और उपहास करना। (6) एक प्रेमी का दूसरे को धीरज देना। (7) नायक और नायिका को वस्त्र धारण करवाना। (8) निपुणता से उनकी आंतरिक कामनाओं को पूर्ण करवाना। (9) नायिका के दोषों को गुप्त रखना (छिपाना)। (10) कृष्ण से मिलने के लिये अपने पति से छल करना। (11) निर्देश देना। (12) उन दोनों को नियत समय पर (उनकी इच्छानुसार) एक साथ लाना। (13) चँवर आदि द्वारा सेवा निवेदन करना। (14/15) नायक और नायिका को देश काल परिस्थिति के अनुसार दण्ड देना। (16) सन्देश प्रसारण करना। (17) नायिका के जीवन की रक्षा करना। यह सत्रह विविध सेवाऐं सखियों द्वारा की जाती हैं।

(यहां भी ग्रन्थकार ने अनेकानेक गीतों, सुर, संगीत, नृत्य, गान, राग, रागनियों आदि का विशद् वर्णन किया है। ग्रन्थ विस्तार भय से छोड़ दिया गया है। ये सब रस ग्रन्थों में सहज उपलब्ध है।- सम्पादक)

गोपेश्वर महादेव

हे श्रीनिवास मैं भगवान् श्रीकृष्ण के आनन्द के लिये यहाँ बनाये गये पुष्प आवास के असंभव वर्णन का अर्थ नहीं खोज पाया। देखो यह वन कैसे इतना मनमोहक है! यहाँ स्थापित है गोपेश्वर महादेव, जो कि उत्तमोत्तम भौतिक स्वभाव के साधन हैं। भगवान् सदाशिव का ध्यान करते हुए जो श्रीवृन्दावन में वास करता है वह सब प्रकार की गतिविधियों में सफलता प्राप्त करता है। सभी गोपियाँ भी श्रीकृष्ण का संग प्राप्त करने के लिये विविध सामग्री से उनकी आराधना करती हैं। मैं गोपेश्वर की असीमित महिमा का वर्णन नहीं कर सकता। वह गोपियों द्वारा पूजनीय हैं इस कारण गोपेश्वर कहलाते हैं। इन्द्र के नेतृत्व में देवगण उनकी कृपा प्राप्त करने के लिये और श्रीवृन्दावन में श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम में वृद्धि के लिये सदा उनकी प्रार्थना करते रहते हैं।

मैं **गोपेश्वर महादेव** की आराधना करता हूँ जो कि अति कृपालु हैं। वे हर किसी की विपदा दूर करके श्रीकृष्ण से अनुराग प्रदान करते हैं।

ब्रह्म-कुण्ड के दर्शन करो जो कि एक अत्यधिक निर्जन और अनेकों लताओं और पौधों द्वारा सुसज्जित सुन्दर स्थान है। ब्रह्म-कुण्ड की महिमा का वर्णन पुराणों में है।

वाराह पुराण में वर्णन है। 'जो जीव सम्पूर्ण रात्रि उपवास करता है और सुन्दर ब्रह्म कुण्ड में स्नान करता हैं जो कि अनेक वृक्षों और लताओं से घिरा है वह गन्धर्व और अप्सराओं के साथ लीला का आनन्द लेता है। जब कोई यहाँ अपने शरीर का त्याग करता है तो वह मेरे धाम को जाता है। इस स्थान के उत्तर

में श्वेत अशोक के वृक्ष हैं जो कि वैशाख मास (अप्रैल-मई) में शुक्ल द्वादशी पर दोपहर में अचानक कोंपल के रूप में फूट जाते हैं। मेरे प्रिय भक्तों के अलावा कोई नहीं समझ सकता कि यह कैसे होता है।'

वेणुकूप

इस स्थान पर वृन्दा-देवी ने अपना एक विचार प्रकट कर नारद मुनि की कामना पूर्ण की। हे श्रीनिवास, यह **वेणु-कूप** है। भगवान् कृष्णचन्द्र ने यहाँ अत्यधिक आनन्द लिया था। यह जानकर कि उनके सखा प्यासे हैं, उन्होंने धरती पर देख कर अपने हाथ में बाँसुरी उठा ली। जब उन्होंने बांसुरी वादन किया तो वह स्वर पाताललोक में प्रवेश कर गया और अचानक वहाँ जल से भरा कुआँ प्रकट हो गया। श्रीकृष्ण के सखाओं ने जल ग्रहण किया और उनकी प्रशंसा की। इस कारण इस स्थान का नाम वेणु-कूप विख्यात हो गया।

दावानल कुण्ड

हे श्रीनिवास, उसी दिवस कालिय को दण्डित करके श्रीकृष्ण ने यहाँ वन-अग्नि का भक्षण किया। जो भी **दावानल-कुण्ड** नाम से विख्यात इस स्थान को देखता है वह भौतिक अस्तित्व की अग्नि से शान्ति पा जाता है।

पुराणों में यह कहा गया है। 'गोविन्द-स्वामी तीर्थ के दर्शन करो जो कि सभी पवित्र स्थानों में सर्वश्रेष्ठ है। इस स्थान के अद्भुत सौन्दर्य की कोई तुलना नहीं। इस स्थान पर स्नान करने से जीव की सभी कामनाऐं पूर्ण होती हैं। श्रीगोविन्ददेव ने यहाँ पर अपनी अनेक लीलाऐं रचायीं।'

निम्नलिखित कथन ब्रज-विलास-स्तव से है। 'न ही ब्रह्मा जी, नारद जी, शिव जी, और न ही श्रीकृष्ण प्रेम से परिपूर्ण महान भक्त ब्रजभूमि की मधुरता को उचित प्रकार से समझ सकते हैं। केवल भगवान् बलराम और उनकी माता रोहिणी दोनों उत्तमोत्तम प्रेम से परिपूर्ण हैं, वे ही ब्रजभूमि को समझ सकते हैं। मेरे लिये ब्रजभूमि का वर्णन करना कैसे संभव है?'

अनेकों विशालकाय सरोवरों, पर्वत और नदियों तथा अभिलषित वृक्ष और अभिलषित लताओं और भ्रमरों की विशाल सेना द्वारा रौंदे गये पुष्पों और मधुर मादक सुगन्ध से परिपूर्ण श्रीवृन्दावन के बारह वन अत्यधिक सुन्दर हैं।

मैं हर पल इन **बारह वनों** के प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिये झुकता हूँ, जो कि भगवान् श्रीकृष्ण को अति प्रिय हैं।

व्रजवास निष्ठा

यदि मैं पवित्र श्रीकृष्ण प्रेम के इस अमृत सिन्धु में स्नान कर पाऊँ और यदि उन अचूक भगवत् व्यक्तित्व के विशुद्ध भक्त मेरे पार्षद हो जायें तो भी मैं

एक पल भी ब्रजभूमि के अलावा किसी अन्य निर्जन स्थान पर रहने की अनुमति नहीं दूँगा। यदि ब्रज के नागरिक सामान्य हों और यदि वे व्यर्थ प्रवञ्चनाओं से मेरे कान भर दें तब भी मैं प्रार्थना करूँगा कि मैं चिरकाल तक यहाँ ब्रज में उनके साथ वास करूँ।

अत्यधिक विनम्रता के साथ मुझे भगवान् के सर्वोच्च पवित्र प्रिय भक्तजन जो कि ब्रज में वास करते हैं, उनके प्रति सम्मान व्यक्त करने दीजिये। यद्यपि भगवान् ब्रह्मा प्रभावशाली दायित्वों का निर्वाह करने वाले महानतम अंश अवतार हैं। वे निष्ठापूर्वक ब्रज की लता पताओं के साथ जन्म लेने के लिये व्याकुल हैं।

ब्रज में घास, लता, पता, कीट, पतंगे और अन्य सभी जीव श्रीकृष्ण को अति प्रिय हैं। वे भगवान् को उनकी लीलाओं में सहायता करते हैं। वे परम आनन्द से परिपूर्ण हैं। शास्त्र बारम्बार ब्रह्मा जी और अन्य देवों की ब्रज में वास करने की उत्सुक प्रार्थना का वर्णन करते हैं। इस कारण से मैं ब्रज में वास करने वाले जीवों के प्रति झुककर सम्मान व्यक्त करता हूँ।

गोवर्धन पर्वत के निकट बिना किसी उद्देश्य के विचरण करते हुए बार-बार पागलों की भांति हे राधे! हे कृष्ण! का उद्घोष करते हुए और चलते हुए ठोकर खाने पर मैं भगवान् की लीलाओं के स्थान को कब अपने अश्रुओं से अभिषिक्त करूँगा?

हे श्रीनिवास, मैं सदैव अपने नेत्रों में श्रीवृन्दावन की मधुरता भर लेना चाहता हूँ। तुम दोनों को ब्रज की यात्रा करवाना अति उन्मादपूर्ण है। मेरे विचार से यह दोबारा संभव नहीं। जन्म-जन्म से तुम दोनों प्रभु के दास हो।

इस प्रकार कहकर श्रीराघव पंडित अत्यधिक अधैर्य हो उठे। श्रीनरोत्तमदास और श्रीनिवास आचार्य अपने अश्रुओं में भीगकर अपना धैर्य खो बैठे। वे श्रीराघव पंडित के चरणों में जा गिरे और उन्होंने उनके चरणों को अपनी गोद में उठाकर अपने अश्रुओं से भिगो दिया।

श्रीगोविन्द देव

वे सब स्वयं को भुलाकर श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीराधा-कृष्ण के महिमा का जप करने में मग्न हो गये। तब वे बारम्बार वृन्दावन की भूमि के प्रति सम्मान व्यक्त करने लगे तथा प्रार्थना करने लगे जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

इस प्रकार तीनों एक एकान्त स्थान पर बैठ गये और धीरे-धीरे शांत होने लगे। तब वे श्रीगोविन्ददेव के दर्शन करने गये, जिनका सौन्दर्य और मधुरता का वर्णन ज्ञानी भक्तों ने किया है। **श्रीगोविन्ददेव** के दर्शन कर तीनों भक्त आनन्दातिरेक से भर उठे और उनके नेत्र और भाव पूर्णतः तृप्त हो गये। तीनों भक्तों को देखकर श्रीकृष्ण पंडित आनन्दित हो उठे। उन्होंने उन्हें प्रसादी माला और भोग प्रसाद दिया और उनके कुशलक्षेम के बारे में पूछा।

आनन्दातिरेक में श्रीराघव पंडित ने ब्रज के स्थानों के दर्शन के बारे में सब तथ्यों की समीक्षा की। तब उन्होंने शीघ्रता से श्रीजीव गोस्वामी के आवास की ओर प्रस्थान किया और वहाँ उन्हें अत्यधिक आनन्द में मग्न पाया। श्रीराघव पंडित ने अपने अनुभवों का श्रीजीव गोस्वामी के समक्ष वर्णन किया, जो कि सारा वृत्तांत सुनकर बहुत प्रसन्न थे। एक-दो दिवस श्रीवृन्दावन में रहने के बाद राघव पंडित वापिस गोवर्धन लौट आये।

हे पाठकजन, इस प्रकार मैंने संक्षेप में मथुरा-मण्डल परिक्रमा की महिमा का वर्णन किया है। जो कोई भी सावधानीपूर्वक इस महिमा का पठन अथवा श्रवण करेगा वह सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करेगा और अपने पूर्वजों को मुक्ति प्रदान करेगा।

ब्रज महिमा

यह तथ्य **आदि-वाराह-पुराण** में पुष्ट होता है। हे सौभाग्यशाली जो कोई मथुरा की महिमा का पठन अथवा श्रवण करता है वह सर्वोच्च धाम को जाता है। मथुरा की महिमा का श्रवण करने वाले श्रोता अपने परिवार के दोनों ओर के दो सौ कुलों को मुक्ति दिलवाते हैं। इसमें कोई संशय नहीं।

यद्यपि जो पावन धाम के प्रति आसक्त हैं उनके द्वारा ब्रज मण्डल परिक्रमा की असीमित प्रसन्नता को जाना जा सकता है इसलिये कृपया ब्रज की लीला स्थलियों की महिमा का जप कीजिये आपकी सभी मनोकामनाऐं पूर्ण होंगी।

भक्तों के संग में इन लीलाओं का रसास्वादन कीजिये। उनकी कृपा से आप को विशुद्ध आध्यात्मिक सेवा प्राप्त होगी। भक्तों का संग करते हुए सदा सचेत रहें कभी भी अपने हृदय में कोई बुरा भाव न आने दें।

भक्तों के हृदय में बुरे भाव डालने से किसी जीव को अपने मार्ग में बाधाओं का ही अनुभव होगा। इस सन्दर्भ में मैं एक घटना का वर्णन करूँगा।

एक वैष्णव द्वारा श्री रूप के प्रति भ्रम

एक दिवस श्रीवृन्दावन में श्रीरूप गोस्वामी ने प्रसन्न भाव में कुछ विचार करते हुए अपनी सखियों द्वारा सुसज्जित श्रीमती राधारानी को देखा। उस समय श्रीकृष्ण, राधारानी के पीछे छिपकर उन्हें देख रहे थे। यद्यपि श्रीमती राधारानी, श्रीकृष्ण की उपस्थिति से अनभिज्ञ थीं, परन्तु सब सखियाँ जानती थीं और अत्यधिक उत्सुकता से इस रहस्य को राधारानी के सम्मुख खोलना चाहती थीं। राधारानी के केशों को भली प्रकार से सुसज्जित कर उन्होंने उनके सम्मुख दर्पण रखा। जैसे ही राधारानी ने अपने मुख के सौन्दर्य दर्शन के लिये ऊपर देखा तब ही उन्हें श्रीकृष्ण के चन्द्र समान मुख के भी दर्शन हुए।

राधारानी लज्जित हो गयीं और कुछ विकल हो उठीं तथा तत्क्षण स्वयं को अपने वस्त्रों से ढक लिया। सभी सखियां हँसने लगी और श्रीरूप गोस्वामी भी उनके साथ हँसने लगे।

उस समय श्रीरूप गोस्वामी के दर्शनों की उत्कण्ठा लिये एक वैष्णव वहाँ पधारे। श्रीरूप गोस्वामी को हँसता हुआ देख उस वैष्णव का हृदय विदीर्ण हो गया और वह वैष्णव बिना कुछ बोले श्रीसनातन के दर्शन करने चला गया। उस वैष्णव ने श्रीसनातन गोस्वामी से कहा, 'जब मैं श्रीरूप गोस्वामी के दर्शन करने गया तो उन्होंने मुझे देखकर हँसना प्रारम्भ कर दिया। मन में क्षोभ आ जाने के कारण मैंने कुछ नहीं कहा परन्तु मैं आपसे पूछने चला आया हूँ।'

श्रीसनातन गोस्वामी ने वैष्णव को श्रीरूप गोस्वामी के हँसने का कारण समझाया और वैष्णव ने कारण को जानकर अत्यन्त पश्चाताप अनुभव किया। वह विलाप करने लगा, 'मैं उस समय वहाँ क्यों गया? श्रीरूप गोस्वामी के भाव को जाने बिना मैंने उनके प्रति अपराध कर दिया है। इस प्रकार सोचते हुए वैष्णव व्याकुल हो गया। यद्यपि श्रीसनातन गोस्वामी ने उसे शांत किया।'

उसी समय श्रीरूप गोस्वामी जो कि लीला में मग्न थे अचानक उनका उल्लास का भाव विलुप्त हो गया। अति व्याकुल होकर श्रीरूप गोस्वामी ने अपने आस पास देखा, यह जानते हुए कि वहाँ कोई आया था। 'मैंने किसी को उपयुक्त सम्मान न देकर अपराध किया है' इस प्रकार चिंतन करते हुए वे श्रीसनातन गोस्वामी के दर्शन करने चले गये।

श्रीरूप गोस्वामी को आता देख वह वैष्णव उनका अभिवादन और धरती पर लेटकर सम्मान करने लगा। अत्यधिक दैन्यता से उसने श्रीरूप गोस्वामी से कहा, 'मैंने अपराध किया है इसलिये मुझे क्षमा कर दीजिये।'

कुछ समय पूर्व मैं आपके दर्शन करने आया था और आप के मानसिक भाव को बिना समझे मेरे मस्तिष्क में भ्रम उत्पन्न हो गया। इस कारण मैं यहाँ श्रीसनातन गोस्वामी के पास आया था, जिन्होंने अति करुणा से सारे भ्रम दूर कर दिये। अब यदि आप अपनी करुणा भी मुझ पर बरसा दें तो मेरा चित्त शांत हो जायेगा।

यह शब्द सुनकर श्रीरूप गोस्वामी शोक में डूब गये और हाथ जोड़कर वैष्णव का सम्मान करने धरती पर लेट गये। 'मैं नहीं बता सकता कि मैंने आपके प्रति कितना बड़ा अपराध किया है। कृपया मुझे क्षमा करें।' इस प्रकार दैन्यता और समर्पण दिखाते हुऐ दोनों ने एक-दूसरे को क्षमा कर दिया और हृदय में शांति का अनुभव किया। श्रीसनातन गोस्वामी के पास आकर वे सब दीर्घकाल तक श्रीकृष्ण की चर्चा में मग्न हो गये। जब सब ने श्रीरूप गोस्वामी की इस घटना के बारे में सुना तो सब आश्चर्यचकित हो उठे।

मेरे प्रिय भाईयो, वैष्णवों के प्रति सदैव अति सचेत रहें। अपने हृदय और आत्मा से उनके प्रति किये अपराधों की क्षमा मांगें। वैष्णवों में किसी प्रकार की बुराई देखने की चेष्टा न करें और सदा उनकी महिमा का गुणगान करें। पूर्व के सभी आचार्य कहते हैं कि एक ज्ञानी व्यक्ति भी वैष्णवों का व्यवहार नहीं समझ सकता। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने ये तथ्य अपने प्रिय भक्तों के माध्यम मे प्रस्तुत किये हैं। भक्तों के चरणकमल शिरोधार्य कर सदा समर्पण और प्रेम भक्ति के सिन्धु में डूबे रहो।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का ध्यान करते हुए नरहरिदास इस प्रकार भक्ति-रत्नाकर का वर्णन करता है।

षष्ठ प्रवाह

श्रीश्यामानन्द चरित्र

सब प्रकार के गुणों के भण्डार श्रीगौर-गोविन्द की जय जयकार हो। उत्तमोत्तम प्रेम के भण्डार श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो। अनुग्रह के सिन्धु श्रीअद्वैताचार्य की जय जयकार हो और सभी जीवों के प्रिय मित्र श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो।

सभी के प्रति दयालु सखा श्रीश्रीवास पंडित की जय जयकार हो, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और श्रीहरिदास ठाकुर की जय जयकार हो।

श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीरूप गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी की जय जयकार हो और श्रीगौरचन्द्र के अनुयायियों की जय जयकार हो। इस ग्रन्थ का पठन करने वाले पाठकों की जय जयकार हो। कृपया मेरे कथन को ध्यानपूर्वक श्रवण कीजिये।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर ने प्रसन्नतापूर्वक वृन्दावन में अपना समय व्यतीत किया। एक दिवस श्रीनिवास आचार्य ने मधुर भाषा में बोलते हुए नरोत्तम ठाकुर से कहा, 'आज मुझे बार बार शुभ लक्षण दिखाई दिये। मेरे दायें हाथ की मांसपेशियाँ और नेत्र फड़क रही हैं। अचानक मेरे चित्त में आनन्द का भाव उत्पन्न हुआ जिससे मुझे आभास हुआ कि मैं आज निश्चित ही किसी परम वैष्णव का संग प्राप्त करूँगा।'

श्रीनरोत्तम दास ने सोचा, 'शायद दुखी कृष्णदास आज यहाँ आये।' और इस प्रसन्न भाव में वे श्रीजीव गोस्वामी से मिलने चले गये। उसी समय श्यामानन्द (दुखी कृष्णदास) श्रीजीव गोस्वामी के आवास पर आ गये जो उन्हें देखकर अति प्रसन्न हुए।

यद्यपि श्रीश्यामानन्द ने पहले ही बता दिया था, जो मैं अब बताऊँगा। यह सबके लिये शुभ होगा। श्रीश्यामानन्द चैत्र की पूर्णिमा के दिवस पैदा हुए थे। उनका बाल्यकाल और शैशव अतिप्रसन्नता से व्यतीत हुआ परन्तु उनके यौवनकाल के प्रारम्भ में वे भौतिक विषयों के प्रति उदासीन हो गये थे।

फागुन मास में श्रीश्यामानन्द ने गृह त्याग करने का निश्चय किया। इस प्रकार वे अपने माता-पिता को दण्डेश्वर गांव में छोड़ आये और अम्बिका गांव में आ गये। वहाँ वे श्रीहृदय चैतन्य ठाकुर के शिष्य बन गये और स्वयं को अपने गुरु के चरणकमलों की सेवा में समर्पित कर दिया। उन्होंने फागुन की पूर्णिमा के दिवस शुभ समय पर दीक्षा ग्रहण की।

तब अपने दीक्षा गुरु की आज्ञा से वे श्रीवृन्दावन चले गये। श्रीश्यामानन्द ने मार्ग में अनेक तीर्थ स्थलों की यात्रा करते हुए अंत में अति उत्साह में ब्रजमण्डल में प्रवेश किया। वे गोवर्धन गये और फिर श्रीराधा कुण्ड के तट पर गये। श्रीराधा-कुण्ड और श्रीश्याम-कुण्ड का सौन्दर्य देखकर वे सांसारिक कार्यों को पूर्णतः भुलाकर अपने आप में खो गये।

ब्रजवासी दास नामक व्यक्ति श्रीश्यामानन्द की स्थिति देखकर आश्चर्य चकित हो गया और उनसे पूछताछ की। वे श्रीश्यामानन्द को श्रीदास गोस्वामी के पास ले गये और उनका परिचय करवाया। श्यामानन्द ने भूमि पर साष्टांग प्रणाम कर उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया और उनके नेत्रों से अश्रु बह निकले। श्रीदास गोस्वामी ने उन्हें आशीष दिया और अपने निकट बैठाकर उनके बारे में पूछा।

श्रीश्यामानन्द ने अपनी सम्पूर्ण कथा उन्हें सुनाई, और वे यह सुनकर अति प्रसन्न हुए। श्रीश्यामानन्द ने वह दिवस श्रीदास गोस्वामी के साथ व्यतीत किया और अगले दिवस उन्हें एक मार्गदर्शक के साथ श्रीवृन्दावन भेजा गया। जो व्यक्ति श्रीश्यामानन्द के साथ आया था, उसने श्रीजीव गोस्वामी को उनका परिचय दिया।

अति विनम्र होकर श्रीश्यामानन्द अपने नेत्रों में अश्रु लिये श्रीजीव गोस्वामी के चरणकमलों में जा गिरे। श्रीजीव गोस्वामी ने अति स्नेह से श्रीश्यामानन्द को आलिंगन प्रदान करके उन्हें बैठने को कहा। श्रीजीव गोस्वामी ने भक्तजनों से श्रीचैतन्य महाप्रभु के विषय में संदेश पूछा और यह भी पूछा कि किस प्रकार से श्रीगौर और श्रीनित्यानन्द के श्रीविग्रह की आराधना होती थी। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीहृदय चैतन्य की गतिविधियों के बारे में पूछा और श्रीश्यामानन्द ने उन्हें सब कुछ बता दिया।

श्रीश्यामानन्द ने श्रीजीव गोस्वामी के प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया परन्तु अपने बारे में बात करने को सावधानीपूर्वक टालते रहे। तब श्रीश्यामानन्द ने पूछा कि कैसे वे भक्ति ग्रन्थों का श्रेष्ठतम अध्ययन कर सकते हैं।

श्रीजीव गोस्वामी ने उत्तर दिया, 'चिंता मत करो, तुम श्रीनिवास और नरोत्तम के साथ ग्रन्थों का रसास्वादन करोगे।' श्रीनिवास और नरोत्तम का नाम सुनकर ही श्यामानन्द के चित्त और मस्तिष्क में उत्तमोत्तम आनन्द भर आया। उन्होंने श्रीजीव से प्रार्थना की कि उन्हें जाकर उनसे मिलने दिया जाये।

उसी समय श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर, श्रीजीव गोस्वामी के आवास पर आ गये। श्रीजीव गोस्वामी ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीनिवास आचार्य का परिचय श्रीश्यामानन्द से करवाया जिनका उपनाम दुखी था, उन्होंने उन्हें बताया कि वे अभी बंगाल से लौटे हैं।

श्रीहृदय चैतन्य के शिष्य

श्रीश्यामानन्द, श्रीहृदय चैतन्य ठाकुर के एक शिष्य थे, जिनमें अनेकों असाधारण विलक्षणताऐं थीं। श्रीश्यामानन्द अभी श्रीराधा-कुण्ड से आये थे और श्रीजीव को अपने गुरु के बारे में सब कुछ सूचित कर दिया था। 'वे आप दोनों से मिलने को अत्यधिक उत्सुक हैं। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीश्यामानन्द का परिचय उनसे करवाते हुए उनसे कहा।'

श्रीश्यामानन्द ने भूमि पर झुकते हुए श्रीनिवास आचार्य के प्रति सम्मान व्यक्त किया और प्रति उत्तर में श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें दीर्घकाल तक आलिंगन किए रखा। जब श्रीश्यामानन्द ने श्रीनरोत्तम दास के प्रति सम्मान व्यक्त किया तो ठाकुर ने उनके प्रति वापिस सम्मान कर उन्हें अतिस्नेह से आलिंगन कर लिया। दोनों को श्रीश्यामानन्द से मिलकर सहज प्रेम भाव की अनुभूति हुई। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीश्यामानन्द के अद्‌भुत आपसी सम्बन्धों का वर्णन कौन कर सकता है?

पूर्ण रूप से सन्तुष्ट होकर श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीश्यामानन्द की भक्ति शास्त्रों की शिक्षा आरम्भ की। उन्हें श्रीनिवास आचार्य की देखरेख में रखा गया और समय बीतने पर श्रीश्यामानन्द भक्ति ग्रन्थों में पूर्णतः दक्ष हो गये और स्वयं अध्यापक बन गये।

श्रीश्यामानन्द समय समय पर अम्बिका को समाचार भेजते रहते थे। अन्य भक्तजन उनके आध्यात्मिक गुणों से अचम्भित थे। श्रीश्यामानन्द की कामना थी कि वे श्रीराधिका रानी की एक सेविका की तरह श्रीकृष्ण की आराधना करें। अपने गुरु की कृपा से उनकी कामना श्रीजीव गोस्वामी के निवास पर पूर्ण हो गयी। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीश्यामानन्द को इच्छानुसार मानसी सेवा करने की अनुमति प्रदान कर दी। असल में श्री श्रीराधा-श्यामसुन्दर उनकी आराधना पद्धति से अतिप्रसन्न थे। इसलिए श्रीजीव गोस्वामी ने उनका नाम श्यामानन्द रखा।

दिवस प्रति दिवस उनकी निष्ठा उन्नत होती गयी और यह देखकर ब्रजवासियों के आनन्द में वृद्धि होती गयी। श्रीश्यामानन्द ने श्रीजीव गोस्वामी के प्रति विशुद्ध समर्पण भाव को प्रदर्शित किया और श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास ठाकुर के साथ निरंतर साहचर्य सम्बन्ध को बनाये रखा।

अपनी आवश्यकताओं से अनभिज्ञ वे अन्यों के साथ श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा गाने में मग्न रहते।

श्रीश्यामानन्द, श्रीयमुना के तट पर हाथ उठाकर नृत्य करना और अपने गुरुदेव श्रीहृदय चैतन्य की महिमा का गान करना पसन्द करते थे। एक परिपक्व भक्त के व्यवहार को न समझ, एक अज्ञानी व्यक्ति ने श्रीश्यामानन्द के प्रति कुछ अभद्र टिप्पणी की जिसके परिणाम स्वरूप उन्हें कष्ट झेलना पड़ा। श्रीश्यामानन्द भक्ति के अमृत में मदमस्त रहे, जिसका रसास्वादन किसी के भी आनन्द को परिवर्तित कर सकता है।

श्रीश्यामानन्द प्रायः श्रीश्रीराधा-गोविन्द, श्रीश्रीराधा-मदनमोहन और श्रीश्रीराधा- गोपीनाथ के दर्शनों को जाया करते थे। इन तीनों श्रीविग्रहों के सौन्दर्य का एक साथ दर्शन करने पर कौन स्वयं पर नियंत्रण रख सकता है? ये तीनों श्रीविग्रह के दर्शन सदा एक साथ नहीं हो सकते। प्रथानुसार ये तीनों चन्द्रमा के घटते और बढ़ते पक्ष के ग्यारहवें दिवस पर एक साथ आते हैं। इन तीनों के एक साथ एक वेदी पर विराजमान होने पर जो सुन्दरता निर्मित होती है, उसका वर्णन कौन कर सकता है।

जब श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह प्रकट हुए थे तब उनके साथ श्रीराधिका जी का कोई श्रीविग्रह नहीं था। भगवान् मदन-मोहन भी अकेले प्रकट हुए थे। किस प्रकार उन्होंने अपनी कान्ता श्रीराधा को प्राप्त किया, आगे उसका संक्षेप में वर्णन होगा।

श्रीराधा विग्रह आगमन

राजा प्रतापरुद्र के पुत्र थे पुरुषोत्तम जाना। वे विद्यासम्पन्न और सुन्दर व्यक्ति थे। जब उसे ज्ञात हुआ कि दोनों श्रीविग्रह की श्रीराधा के बिना आराधना हो रही है तो उन्होंने श्रीराधारानी के दो श्रीविग्रह बहुत देखभाल से और सावधानी से भेज दिये।

जब श्रीविग्रह वृन्दावन पहुँचे तो ब्रजवासी अति प्रसन्न हो गये। **श्रीमदनमोहन** ने प्रसन्नतापूर्वक अपने पुजारी से एक स्वप्न में कहा, 'श्रीराधारानी के दो श्रीविग्रह भेजे गये हैं परन्तु भेजने वाला वास्तव में यह नहीं जानता कि एक श्रीराधारानी है और दूसरी श्रीललिता सखी। बिना विलम्ब किए जाओ और दोनों श्रीविग्रह ले आओ। छोटे श्रीविग्रह श्रीराधारानी हैं तो उन्हें बाईं ओर स्थापित करो और बड़े वाली श्रीललिता हैं तो उन्हें दाईं ओर स्थापित करो।'

प्रभु के निर्देश सुनते ही पुजारी ने प्रस्थान किया। वे दोनों श्रीविग्रहों को ले आये और जैसे बताया गया था वैसे स्थापित कर दिये। श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ने अपने ग्रन्थ 'स्तव-माला-लहरी' में कहा है, 'हे मदनगोपाल, तुम यमुना के तट पर कदम्ब वृक्ष की छाया के नीचे स्थित रत्नमण्डित मन्दिर में वास कर रहे हो, जहाँ निरंतर ललिता द्वारा आपकी आराधना हो रही है, वह जो श्रीराधिका को आनन्द प्रदान करती हैं। मुझे भी इस मन्दिर में वास करने दीजिये।'

जब श्रीमदनगोपाल की लीलाऐं विख्यात हो गयीं तो इसने वैष्णव जनों में अत्यधिक अनुराग उत्पन्न कर दिया। जब पुरुषोत्तम जाना ने यह अद्भुत कथा सुनी तो वह प्रसन्नतावश अभिभूत हो उठे। वे श्रीगोविन्द की पत्नी स्वरूप श्रीविग्रह भेजना चाहते थे परन्तु यह प्रयास निष्फल हो गया। वे चिंतित मन से एक दिवस गहरी निद्रा में सो गये और श्रीराधिका उनके स्वप्न में आयीं।

उन्होंने बहुत कोमलता से पुरुषोत्तम जाना को निर्देश दिया, 'यथाशीघ्र मुझे श्रीगोविन्द के पास भेज दो। चक्रेश्वर में श्रीजगन्नाथ देव की पत्नी के श्रीविग्रह ही श्रीराधिका हैं। मैं दीर्घकाल से चक्रेश्वर में लक्ष्मी ठाकुरानी के रूप में रह रही हूँ, परन्तु यह बात कोई नहीं जानता।'

यह भेद बताकर कि वे श्रीराधिका हैं, लक्ष्मी ठकुरानी नही हैं, वे अन्तर्धान हो गयीं। स्वप्न पूरा होते ही पुरुषोत्तम जाना स्वयं ये सब देखने के लिये चक्रेश्वर की ओर दौड़े। अब मैं बताऊँगा कि श्रीराधिका चक्रेश्वर में कैसे रह रहीं थीं। मैं यह भी बताऊँगा कि कैसे श्रीगोपाल, गोविन्द के स्थान से चलकर दक्षिण की ओर गये।

साक्षी गोपाल

साधन-दीपिका ग्रन्थ में यह वर्णन है कि करुणा के सिन्धु श्रीगोपाल, केवल उत्कल के युवा ब्राह्मण के लिये गवाही देने श्रीगोविन्द के धाम वृन्दावन में वास करने आये। गोपाल जो कि अपने भक्तों के हितैषी हैं, वे अब भी उत्कल में वास करते हैं। भगवान् सब कुछ करने में समर्थ हैं और कुछ न करने में भी बाध्य नहीं, वे निश्चित ही चलकर यात्रा करने में सक्षम हैं।

श्रीगोपाल की यात्रा का अन्यत्र स्थान पर विस्तार से वर्णन किया गया है। अब मैं श्रीराधिका की यात्रा का वर्णन करूँगा। एक बार श्रीराधिका अपने निष्ठावान भक्तों को आशीष देने श्रीवृन्दावन से उत्कल आयीं।

उत्कल के राधानगर गांव (जो अब ओडिशा है) में दक्षिण भारत मूल के एक ब्राह्मण वास करते थे।

उनका नाम था बृहद्भानु और एक गम्भीर भक्त के रूप में वे अपनी पंडिताई के लिये विख्यात थे। बृहद्भानु श्रीराधिका को अपनी पुत्री मानकर उनकी आराधना करते थे।

'साधन-दीपका' में वर्णन है कि इस घटना से सम्बन्धित आज भी अनेक कथाऐं बतायी जाती हैं। यहाँ ये बताते हैं कि उत्कल के राधानगर में बृहद्भानु नाम के एक गम्भीर वैष्णव वास करते थे। कुछ वर्षों तक अपनी करुणा के उदाहरण स्वरूप उन्होंने श्रीराधिका की अपनी पुत्री के रूप में आराधना की। श्रीबृहद्भानु द्वारा प्रदर्शित उत्तमोत्तम प्रेम का वर्णन करने का मैं अधिकारी नहीं हूँ। श्रीराधारानी के देखे बगैर उनका एक क्षण भी असह्य रूप से दीर्घ हो जाता था क्योंकि श्रीराधा उनके लिये सब कुछ थीं।

वृद्धावस्था में उन ब्राह्मण देव की मृत्यु हो गयी और राजा ने स्थानीय लोगों से यह समाचार सुना। पुरुषोत्तम-क्षेत्र के राजा जो कि भगवान् श्रीजगन्नाथ के प्रति विनम्रता से समर्पित थे, वे श्रीविग्रह के दर्शन करने राधानगर गये। राजा सोच ही रहे थे कि क्या किया जाये, तभी श्रीराधिका उनके स्वप्न में प्रकट हुईं।

उन्होंने कहा, 'तत्काल मुझे श्रीजगन्नाथ जी के मन्दिर ले चलो और वहाँ विराजमान करो।'

राजा ने प्रसन्नतापूर्वक आदेश का पालन किया। उसने बहुत सावधानी से चक्रेश्वर में श्रीजगन्नाथ जी के मन्दिर में, जो कि अत्यधिक सुन्दर था, उसमें श्रीराधिका के श्रीविग्रह को स्थापित कर दिया। क्योंकि वे दीर्घकाल तक चक्रेश्वर में रही थीं तो सबने यह सोचना आरम्भ कर दिया कि वे लक्ष्मी थीं। क्योंकि उनकी आराधना लक्ष्मी जी की तरह होती थी। श्रीराधिका ने स्वयं को पूर्णरूप से लक्ष्मी के रूप में ढाल लिया। कौन श्रीराधिका की लीलाओं को समझ सकता है जो चक्रेश्वर में लक्ष्मी की तरह वास करती थीं?

जब श्रीवृन्दावन जाने का समय आया तो उन्होंने पुरुषोत्तम जाना को अपनी इच्छा के बारे में सूचित कर दिया। स्वप्न में उनका आदेश पाकर राजकुमार ने बहुत आदर और सावधानी से बहुत से लोगों के साथ श्रीविग्रह को श्रीवृन्दावन भेज दिया। बंगाल और ओड़िशा में सबको पता चल गया कि श्रीराधिका रानी श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्र से श्रीवृन्दावन प्रस्थान कर गयी हैं।

जिस दिवस श्रीराधिका जी ने श्रीवृन्दावन में प्रवेश किया मानों प्रसन्नता का सिन्धु, तट तक उच्छलित होने लगा।

उन्हें श्रीगोविन्द के वाम भाग में स्थापित किया गया, जो कि बहुत सुन्दर दृश्य बन रहा था। श्रीराधिका के संग श्रीगोविन्द के सौन्दर्य का वर्णन किसी के भी वर्णन से दूर था। इस प्रकार श्रीराधिका श्रीवृन्दावन आयीं। यह धारावाहिक प्रारम्भिक कवियों द्वारा वर्णन किया गया है। इस घटना का विस्तार से वर्णन 'साधन-दीपिका' और अन्य ग्रन्थों से प्राप्त किया जा सकता है और जो कोई भी इस कथा का श्रवण करता है वह प्रेम भक्ति के पद को प्राप्त कर सकता है।

श्रीगोविन्द गोपीनाथ मदनमोहन

गौड़ीय वैष्णव जनों को श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ और श्रीमदन-मोहन के श्रीविग्रह अतिप्रिय हैं। **गौड़ीय वैष्णव** तीनों श्रीविग्रह को अपना प्राण और आत्मा मानते हैं। श्रीचैतन्यचरितामृत बताता है कि ये तीन श्रीविग्रह, बंगाल के वैष्णव जनों के प्राण और आत्मा हैं।

जब कभी श्रीश्यामानन्द इन विग्रहों के दर्शन करते वे अभिभूत हो जाते और स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख पाते। श्रीराधा-विनोद, श्रीराधा मदनमोहन और श्रीराधा-दामोदर के श्रीविग्रहों का स्पर्श करके उनके नेत्र तृप्त हो जाते थे। श्रीलोकनाथ गोस्वामी, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य सभी श्रीश्यामानन्द के प्रति अति कृपालु थे।

जब श्रीश्यामानन्द, गोस्वामी गणों की समाधि के दर्शन करने गये तो उन्होंने जो भाव अनुभव किये वे अवर्णनीय हैं। कभी-कभी वे श्रीराधा-कुण्ड और श्रीश्याम-कुण्ड जाते और श्रीदास गोस्वामी से मिलते। वृन्दावन में श्रीश्यामानन्द की गतिविधियों का वर्णन कौन कर सकता है?

उन्होंने वह समय प्रसन्नतापूर्वक श्री श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय के साथ व्यतीत किया। श्रीनिवास श्रीश्यामानन्द के असाधारण प्रयत्नों को देखकर अति संतुष्ट हो गये। श्रीनिवास आचार्य की मधुर स्थिति का वर्णन कौन कर सकता है? वे सदा प्रभु की लीलाओं में ध्यान लगाते जैसे कि वे श्रीनवद्वीप और श्रीवृन्दावन में प्रकट की गयीं। श्रीनवद्वीप में प्रभु की लीलाओं में उनके ध्यान लगाने की स्थिति का वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीनिवासाचार्य द्वारा महाप्रभु लीला स्मरण

एक दिवस श्रीनिवास आचार्य एक निर्जन स्थान में श्रीचैतन्य महाप्रभु की श्रीनवद्वीप में लीलाओं का ध्यान कर रहे थे। श्रीनवद्वीप एक आनन्दमय स्थान है जो कि ब्रह्मा जी के नेतृत्व में अंश अवतारों को भी प्रिय है। सभी छः ऋतुऐं एक साथ वहाँ प्रस्तुत थीं। श्रीनवद्वीप विविध पुष्पों, पुष्पित पौधों और लताओं से सुशोभित है और वहाँ कोयल की कूक और अन्य पक्षियों के चहचहाने वाला स्वर सुनने में अति रिझाने वाला था।

श्रीनवद्वीप के भीतर मायापुर नाम से विख्यात एक सुन्दर स्थान था, जो जीवन के सब शोक दूर कर सकता था। श्रीनिवास आचार्य प्रभु गौरचन्द्र को अपने अतिप्रिय अनुयायियों से घिरे एक सुन्दर सिंहासन पर बैठा हुआ देखने का अनुभव कर सकते थे।

जैसे ही वे प्रभु के उस अद्भुत दृश्य में मग्न हो गये तब उनके पार्षद, श्रीनिवास आचार्य ने कुछ सुगन्धित चन्दन की लकड़ियों का लेप प्रभु के तन पर

लगाया। उन्होंने प्रभु को विविध पुष्पों की माला से और समर्पित हृदय से सुसज्जित किया, उन्होंने चँवर से प्रभु को पंखा झलना आरम्भ कर दिया।

प्रभु गौरचन्द्र के चन्द्र समान मुख से अमृत पान कर श्रीनिवास आचार्य अभिभूत हो गये और अपने आप में खो गये। वे सीधा खड़े नहीं रह सकते थे तो उनके विशाल नेत्रों से पवित्र प्रेम के अश्रु बहने के कारण उन्होंने हिलना आरम्भ कर दिया। अंतत: भावावेश के विक्षोभ में अपना मानसिक संतुलन खो दिया और यह देखकर प्रभु अपने भक्त की निष्ठा से अतिप्रसन्न हो गये। प्रभु ने अपनी माला श्रीनिवास आचार्य को दे दी और उन पुष्पों के स्पर्श ने श्रीनिवास को आनन्दातिरेक के सागर में तैरने को भेज दिया।

जब श्रीनिवास आचार्य भौतिक संसार के प्रति सचेत हुए तो उन्होंने देखा कि प्रभु द्वारा प्रदान की गयी माला उनके कण्ठ में विद्यमान थी। उस माला की सुन्दरता और सुगन्ध का वर्णन नहीं किया जा सकता। सब ओर से भ्रमर केवल उसको सूँघने के लिये आने लगे।

श्रीनिवास आचार्य ने शीघ्रता से माला को छिपाने का प्रयास किया परन्तु किसी ने उसे देख लिया। श्रीनिवास नवद्वीप में पूरा दिवस और रात्रि पर्यन्त प्रभु की लीलाओं में मग्न रहते थे। वे इसे गुप्त रखना चाहते थे। यद्यपि इसी प्रकार वे श्रीवृन्दावन में श्रीकृष्ण की लीलाओं में प्रसन्नतापूर्वक डूब जाते थे।

होली लीला आत्मसात्

एक दिवस बसंत में श्रीनिवास आचार्य श्रीकृष्ण की होली नाम से विख्यात विशिष्ट लीला का ध्यान कर रहे थे। यहाँ फाल्गुनस्थ-लीला नाम का एक स्थान है, जो अब फागुटोला के नाम से जाना जाता है। यहाँ निरंतर बहने वाली शीतल पवन से युक्त एक निर्जन और सुन्दर स्थान है। इस स्थान को घेरे युवा कदम्ब के वृक्ष कोयल के कुहू-कुहू स्वर और तोते के चहचहाने से गूँज उठते थे। भँवरे एक पुष्प से दूसरे पुष्प पर मण्डराते और असंख्य मोर और मोरनी वहाँ नृत्य करते रहते थे। मृग और मृगी यहाँ स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करते थे और श्रीराधा-कृष्ण अपनी सखियों के साथ उन्हें देखते थे।

श्रीराधा की वृन्दा नाम की सखी अन्य असंख्य सखियों की सहायता लेती और होली के लिये आवश्यक साज-समान की व्यवस्था करती। उन्होंने विभिन्न रंगों के गुलाल एकत्र किये और वीणा और वाद्य यंत्रों को समस्वरित किया। श्रीकृष्ण, राधा और सखियों ने वन-उपवन के कुंजों में तब होली का एक रोमांचक खेल खेला। दिव्य आनन्द में भरकर श्रीराधा और उनकी सखियों ने रंगीन गुलाल श्रीकृष्ण के तन पर उछाल दिया।

सखियों की सांकेतिक सहमति से श्रीनिवास आचार्य ने एक दासी की भूमिका की कल्पना की और श्रीराधा रानी के संग खड़े होकर उन्हें गुलाल की

आपूर्ति की। श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण की प्रेम क्रीड़ा द्वारा निर्मित सुन्दरता सैकड़ों कामदेवों को बेसुध कर सकती थी।

आकाश में उछाले गये गुलाल से सूर्य ढँक गया था और पृथ्वी की ध्वनि वाद्य यन्त्रों के स्वर में दब गयी थी। दिव्य लीलाओं के राजा श्रीकृष्ण ने भी प्रत्येक पर गुलाल डाला। गोपियों को कस्तूरी और केसर मिश्रित रंग में पूर्णतः डुबोने के बाद, उन्होंने विविध बहाने बनाने शुरु कर दिये ताकि वे उन्हें आलिंगन और चुम्बन प्रदान कर सकें।

ललिता और अन्य सखियाँ विशिष्ट होली उत्सव को देखकर आनन्द में उल्लसित हो गयी थीं। अंत में जब खेल समाप्ति की ओर अग्रसर हुआ तो गोपियों ने श्रीराधा और श्रीकृष्ण को सिंहासन पर पधरा दिया।

तन गुलाल से रंग गया

दासी श्रीनिवास ने चँवर उठाया और श्रीराधा और श्रीकृष्ण की थकान दूर करने के लिये उन्हें पंखा करने लगे और इस प्रकार उनकी इच्छा पूर्ण हुई। जब उनकी सेवा समाप्त हुई तो श्रीनिवास आचार्य को अपने बाहरी स्वरूप का आभास हुआ और उन्होंने पाया कि उनका तन गुलाल से रंगा हुआ है और वहाँ उसे गुप्त रखने का कोई साधन नहीं है।

श्रीनिवास के तन पर गुलाल चमक रहा था और इसकी दिव्य सुगन्धि सभी को उन्मत्त कर रही थी। इस प्रकार श्रीनिवास नित्य ध्यान किया करते थे। उनके उत्तमोत्तम प्रेम का वर्णन कौन कर सकता है?

जब श्रीनरोत्तम दास श्रीनिवास की प्रेममयी गतिविधियों के साक्षी बनते तो बहुत कठिनता से उस आनन्द को हृदय में समेट पाते थे।

श्रीनरोत्तम ठाकुर की श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण के प्रति उत्तमोत्तम सेवा का वर्णन कौन कर सकता है?

एक दिवस श्रीराधा, श्रीकृष्ण और सखियाँ उपवन में क्रीड़ा कर रहे थे। मात्र हास-परिहास के लिये श्रीराधा ने अपनी एक सेविका से वहाँ अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थ शीघ्रता से लाने को कहा। ललिता जी और अन्य सखियों ने प्रसन्नतापूर्वक विभिन्न प्रकार के भोज्य पदार्थ तैयार कर दिये। सखियों से संकेत पाकर दासी के रूप में श्रीनरोत्तम दास ने दूध उबालना आरम्भ कर दिया। जब उन्होंने देखा कि दूध उबलने लगा है तो शीघ्रता से नंगे हाथों से ही दूध को अग्नि से उठा लिया। यद्यपि उनकी उँगलियां और हाथ झुलस गये पर उन्होंने इस ओर ध्यान नहीं दिया और उन्होंने सखियों के हाथों में दूध पकड़ा दिया।

झुलस गये हाथ

सखियों ने दूध श्रीराधा और श्रीकृष्ण को दिया और जो भी बच गया वह वापिस श्रीनरोत्तम दास को दे दिया। जैसे ही उन्हें दूध वापिस मिला उन्हें अपने बाहरी स्वरूप का आभास हो आया। तब उन्होंने अपने झुलसे हुए हाथों को देखा और यद्यपि उन्होंने इसे छिपाने का प्रयास किया परन्तु निकट ही किसी ने यह देख लिया। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की दिव्य गतिविधियों का वर्णन कौन कर सकता है? उनका मन निरंतर नवद्वीप और श्रीवृन्दावन में विचरण करता रहता था और वे निरंतर स्वयं को श्रीनिवास आचार्य के संग में रखते थे।

कभी-कभी श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास गोवर्धन जाया करते थे। एक दिवस गोवर्धन पर्वत पर एक निर्जन गुफा के पास चलते हुए, उन्होंने बाँसुरी की ध्वनि सुनी जो कि इतनी मधुर थी कि तीनों लोकों को मुग्ध कर दे। श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास बाँसुरी बजने से अभिभूत हो गये और अधिक देर स्वयं पर नियंत्रण न रख पाये और प्रेमावेश में काँपने लगे। जब उन्होंने गोवर्धन पर्वत पर उस गुफा में प्रवेश किया तो उनकी नासिका में श्रीकृष्ण के तन की सुगन्धि प्रवेश कर गयी। उस अंतहीन सुगन्धि ने उन दोनों को अचेत कर दिया।

जब वे सचेत हुए तो श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने अपने सामने एक ग्वाल बालक को खड़े पाया। उस सुन्दर बालक का तन आकर्षक था और वह बालक हाथ में छड़ी लिये था तथा उसने सिर पर सुन्दर पगड़ी धारण कर रखी थी।

श्रीनिवास आचार्य ने बालक को दुलारा और स्नेहमय हृदय से उससे पूछा, 'मेरे प्रिय पुत्र, तुम यहाँ क्या कर रहे हो?'

ग्वाल बालक ने उत्तर दिया, 'मैं तुम दोनों की रक्षा के लिये यहाँ आया हूँ। तुम नहीं जानते। यहाँ बहुत खतरे हैं परन्तु हम ग्वाल बाल सब जानते हैं। मैंने दूर से देखा कि आप दोनों भूमि पर बेसुध पड़े हो। मैंने अपने साथियों को छोड़ा और शीघ्रता से यहाँ आ गया और मैं यहाँ बहुत देर से खड़ा हूँ।'

यह कह कर बालक अचानक अन्तर्धान हो गया। श्रीनिवास आचार्य को आश्चर्य हुआ कि वह ग्वाल बालक कहाँ चला गया। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास एक वृक्ष की छाया में बैठते हुए और कभी-कभी रोते हुए और गहरी सांसें भरते हुए इस घटना पर चर्चा करते रहे। उन्होंने अद्भुत मनोभाव से दिवस व्यतीत किया और रात्रि में श्रीकृष्ण के अनुग्रह से गहरी नींद में सो गये।

उनके स्वप्न में श्रीकृष्ण अपने गहरे नील वर्ण में प्रकट हुए जो सम्पूर्ण विश्व को मुग्ध करने वाला है। वे एक हाथ में बांसुरी लिये नर्तक के वेश में थे और उनके मुख का सौन्दर्य प्रेम के देवता को लज्जित कर देने वाला था। वे

मधुरता से मुस्कुराये और बोले, 'तुम मेरी बाँसुरी के स्वर से मंत्रमुग्ध थे और मेरे तन की सुगन्धि से तुम अचेत हो गये थे तो मैं तत्क्षण वहाँ से चला गया। एक ग्वाल बाल के वेश में मैंने तुम्हें अपने दर्शन दिये और जब तुमने अपने आप को शांत कर लिया तो मैं अन्तर्धान हो गया। मेरे जाने पर तुम दोनों बहुत निराश हो गये थे तभी मैं तुम दोनों को तृप्ति देने आया हूँ।'

यह कहकर प्रभु अन्तर्धान हो गये और दोनों का स्वप्न टूट गया और दोनों नेत्रों से आँसू बहाते हुऐ जाग गये। कुछ समय बाद श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास ने स्वयं को शांत किया और क्योंकि उषाकाल हो चुका था तो दोनों ने अपने नित्य कर्म पूर्ण किये।

श्रीराधाकुण्ड वास

श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर अनेक लीलाऐं रचायीं और इनका अनुस्मरण करने से किसी का भी हृदय आनन्द से प्रफुल्लित हो उठता है। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर कभी-कभी श्रीराधा-कुण्ड जाया करते थे जहाँ वे श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी से मिलकर आनन्दित होते थे। श्रीरघुनाथ दास उनके प्रति कितना अनुग्रह करते थे यह मेरी वर्णन शक्ति से बाहर की बात है। श्रीकृष्णदास कविराज और अन्यों द्वारा उनके प्रति अनुरक्ति दिखाना भी अवर्णनीय है। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम को जो अनुरक्ति प्राप्त होती थी वे इससे अभिभूत थे और वे कुण्ड के सौन्दर्य का दर्शन करने पर स्वयं को सौभाग्यशाली समझते थे।

एक दिवस सूर्य के सिर पर आ जाने पर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास सूर्य देव के मन्दिर में पूजा करने गये। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम को वह मार्ग दिखाया जिस पर पूर्व में चलकर श्रीराधारानी सूर्य देव की आराधना करने आयी थीं। श्रीनिवास आचार्य ने यह शब्द बोले ही थे कि तभी उन्होंने घुंघरूओं की ध्वनि सुनी। उस स्वर से जो उत्तमोत्तम आनन्द उनमें उत्पन्न हुआ वह पूर्ण रूप से वर्णित नहीं किया जा सकता!

अत्यधिक आनन्द में उन्होंने नन्दग्राम, यावट, बरसाना और अन्य स्थानों की यात्रा की। इन पवित्र स्थलों की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता। वे वृन्दावन में उत्तमोत्तम आनन्द के सिन्धु में तैर गये और उन्हें जो रहस्यपूर्ण ईश्वरावेश प्राप्त हुआ इसका वर्णन मेरे व्याख्यान के क्षेत्र से दूर है। मैं इस भय से कि यह ग्रन्थ अति विशाल न हो जाये, आगे नहीं बताऊँगा कि किस प्रकार वृन्दावन के गोस्वामीगणों ने श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर पर करुणा बरसायी।

ग्रन्थ बंगाल ले जाना

श्रीवृन्दावन के गोस्वामी गणों ने यथा शीघ्र श्रीनिवास आचार्य को बंगाल भेजने का निश्चय किया। शीघ्र ही यह सर्वविदित हो गया कि श्रीनिवास आचार्य गोस्वामी गणों के ग्रन्थ बंगाल ले जायेंगे। यह निश्चय लिया गया कि श्रीनिवास आचार्य बंगला मास अग्रहायण (अगहन) (नवम्बर-दिसम्बर) की पूर्णिमा को वृन्दावन छोड़ देंगे और बंगाल में अलग-अलग स्थानों पर ग्रन्थ वितरण करेंगे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद श्रीनिवास से विरह किस प्रकार सह सकते थे? 'कैसे हमारा हृदय शांत होगा?' नेत्रों से अश्रु बहाते हुए वे कहने लगे। यहाँ तक कि ज्ञानी ब्रजवासी भी स्वयं पर नियंत्रण न रख पाये क्योंकि श्रीनिवास आचार्य उनके जीवन क़ा प्रकाश थे। क्या वहाँ कोई ऐसा भी था जिसे श्रीनिवास से प्रेम न हो? यहाँ तक कि अति दुर्भाग्यशाली व्यक्ति भी उन्हें अपने जीवन का प्रकाश समझते थे। उनका समर्पण श्रीजीव गोस्वामी को गहन आनन्द प्रदान करता था।

एक दिवस श्रीजीव गोस्वामी और श्रीवृन्दावन के अन्य गोस्वामी गण गोविन्द मन्दिर में एकत्र हुए। उन्होंने श्रीगोविन्द से प्रार्थना की। 'हे प्रभु श्रीनिवास आचार्य पर सामर्थ्य शक्ति की वर्षा करें जो उन्हें ग्रन्थ वितरण में विशेष रूप से चाहिये।'

जिस क्षण उन्होंने अपनी प्रार्थना समाप्त की उसी समय श्रीगोविन्द के गले से श्रीनिवास के लिये माला गिर पड़ी। अपने नेत्रों में प्रेम अश्रु भर पुजारी ने शीघ्रता से वह माला उठायी और आदर सहित श्रीनिवास को सौंप दी। उन्होंने आदर सहित और प्रभु के प्रति अति अनुराग से उस माला को प्राप्त किया जैसे ही उन्होंने श्रीगोविन्द के सुन्दर मुख का दर्शऩ किया वे अधीर हो उठे। उन्होंने भूमि पर लेट कर बार-बार श्रीविग्रह की आराधना की और वे अपने नेत्रों से बहते आँसुओं पर नियंत्रण नहीं रख सके थे।

हर कोई जिसने श्रीगोविन्द द्वारा श्रीनिवास पर कृपा बरसाते देखा उसने भगवान् और उनके भक्त दोनों की प्रशंसा की। तब श्रीजीव गोस्वामी और अन्यों ने एक दिवस निश्चित किया कि कब श्रीनिवास गौड़ देश के लिये प्रस्थान करेंगे। सर्वसम्मति से तय हुआ कि अग्रहायण मास के चन्द्र पक्ष का पाँचवां दिवस यात्रा के प्रारम्भ के लिये उपयुक्त है।

श्रीरघुनाथ दास से विदा

तब श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य को श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के पास विदा लेने भेज दिया। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के हृदय में विरह के

पूर्वानुमान से ही पीड़ा होने लगी और उनकी अवस्था दयनीय हो गयी। श्रीस्वरूप, श्रीरूप और श्रीसनातन का नाम जोर-जोर से पुकारते हुऐ वे अश्रु बहाते हुए भूमि पर लोटने लगे। वे अति निर्बल हो गये थे क्योंकि वे केवल हर तीन-चार दिवस में भोजन कर रहे थे। अपने बुरे स्वास्थ्य के कारण वे बहुत मुश्किल से पवन के झोंके को झेल पाते फिर भी वे नित्य अपने धार्मिक अनुष्ठान पूरे करते थे।

श्रीरघुनाथ दास इतने कमजोर हो गये थे कि श्रीविग्रह के सामने झुक कर फिर खड़े ही न हो पाते थे। भक्तों ने उन्हें भूमि पर न झुकने की प्रार्थना की परन्तु वे मौन रहे। जब कोई उनकी सहायता करता तो वे अति उपकार मानते थे और उनके समर्पण ने देवगणों को भी आकर्षित किया था। अति आनन्द के साथ वे श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदान किये गये गोवर्धन-शिला और गुंजा-माला की आराधना करते थे। आराधना में मग्न होकर वे अपने अस्तित्व को भूल जाते थे।

श्रीनाम-संकीर्तन का गान करते समय श्रीरघुनाथ दास प्राय: दिवस रात बीत जाने के प्रति बेपरवाह हो जाते थे, उन्होंने कई रातें आनन्दातिरेक में अश्रु बहाते हुए व्यतीत कीं। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की निष्ठा को कौन समझ सकता है जो कि हर समय श्री श्रीराधा और श्रीकृष्ण और श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के ध्यान में मग्न रहते थे।

जब श्रीनिवास आचार्य गोवर्धन आये तो उन्होंने पाया कि श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी एक निर्जन स्थान पर पठन कर रहे थे। अपने आप को सौभाग्यशाली मानते हुए वे श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के चरणकमलों में जा गिरे। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने श्रीनिवास का आलिंगन किया, अपने साथ बैठने का स्थान दिया और उनके कुशलक्षेम के बारे में जाना।

नरोत्तम : श्यामानन्द : श्रीनिवास

उस समय श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द भी वहाँ आ गये और श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के चरणकमलों में प्रणाम किया। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने उनका कुशलक्षेम जाना और श्रीनिवास आचार्य की ओर मुड़ गये। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें गोस्वामी जनों और अन्य भक्तों के द्वारा उनके गौड़ देश जाने के निश्चय किये जाने के बारे में बताया और श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने प्रसन्नतापूर्वक निर्णय को स्वीकार किया। उन्होंने श्रीनिवास को सुझाव दिया कि सेवा करते समय बहुत सावधानी रखें और फिर अश्रु बहाते हुए उनका आलिंगन कर लिया। उन्होंने श्रीश्यामानन्द प्रभु और श्रीनरोत्तम दास का भी आलिंगन किया जो अति आदर सत्कार से उनके चरणकमलों में झुके।

तब तीनों भक्तों ने श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी से विदा ली, जिनका उनके प्रति स्नेह अवर्णनीय था। गोवर्धन से उनके विदा होने के समय तीनों भक्तों की

मानसिक अवस्था अति मार्मिक थी कि कोई भी अपने अश्रुओं को नियंत्रित नहीं कर सका।

श्रीकृष्णदास कविराज और अन्य उच्चकोटि के भक्त रक्षार्थ उनके साथ वापिस श्रीवृन्दावन तक आये। उनके विदा होने का समाचार प्राप्त कर अन्य वैष्णव जन श्रीवृन्दावन में एकत्र हो गये। श्रीजीव गोस्वामी ने सब वैष्णव जनों का स्वागत किया और उनके रहने का प्रबन्ध किया।

श्रीजीव गोस्वामी ने मथुरा के एक सौभाग्यशाली युवक को अनुग्रहीत किया और उसे आदेश देते हुए कहा कि, 'तीन-चार दिवस में श्रीनिवास आचार्य अपने साथ अनेकों शास्त्र लेकर गौड़ देश के लिये प्रस्थान करेंगे।' उनकी यात्रा का अपने विचार से श्रेष्ठतम प्रबन्ध करो। यह सेवा प्राप्त करने के बाद उस व्यक्ति ने स्वयं को अति सौभाग्यशाली माना।

यात्रा की योजना

मथुरा के उन सज्जन ने चार छकड़ा गाड़ी और एक अनुभवी व्यक्ति को पथ प्रदर्शक के रूप में लगा दिया। उन्होंने कुछ धनराशि पथ प्रदर्शक को यात्रा के व्यय के रूप में दे दी और जब सब कुछ व्यवस्थित हो गया तो उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी को सूचित कर दिया।

ग्रन्थों को वर्षा से बचाने के लिये चार लकड़ी के बक्सों में रख दिया गया। बक्सों के भीतर गोस्वामी गणों के अमूल्य ग्रन्थ रूपी रत्न थे, जिनके दर्शन मात्र ही सभी दुख दूर कर सकते थे। बक्से में रखते समय प्रत्येक ग्रन्थ का नाम उच्चस्वर में बोला गया।

श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि उन्होंने उसमें कुछ अपने लेख भी सम्मिलित किये हैं परन्तु उन्हें अन्यों से अलग कोने में रखा है, जिसे वे बाद में भेजेंगे जब उनका सम्पादन पूर्ण हो जायेगा। तब श्रीजीव गोस्वामी श्रीनिवास आचार्य को श्रीमदन गोपाल के पास ले गये, श्रीमदन गोपाल के श्रीविग्रह के दर्शन कर श्रीनिवास अपने भावों पर नियंत्रण न रख पाये और उनका हृदय अति प्रेम के कारण पुलकित हो गया। वे प्रभु से विदा होने की प्रार्थना करते समय अपने आँसुओं को रोक नहीं पाये। श्रीमदन-मोहन ने कुछ मुद्रा के माध्यम से उन्हें विदाई दी। पुजारी ने श्रीनिवास को प्रभु की ओर से एक माला प्रदान की और असंख्य लोगों ने आकर उन्हें सांत्वना दी।

इसके बाद श्रीनिवास आचार्य श्रीसनातन गोस्वामी की समाधि स्थल पर गये। श्रीनिवास आचार्य के उस स्थान पर उत्पन्न भावों का वर्णन कौन कर सकता है? हे सनातन प्रभु, आप सब दुर्भाग्यशाली व्यक्तियों के सखा हो। रोते हुए श्रीनिवास आचार्य भूमि पर लोट गये। श्रीनिवास आचार्य श्रीसनातन के पावन चरित्र से गहन रूप से प्रभावित थे यद्यपि उनका चरित्र अन्यों के लिये

एक रहस्य ही बना रहा। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने नीलाचल में श्रीरामानन्द राय से आदर सहित श्रीसनातन गोस्वामी के बारे में बताया था।

श्रीचैतन्य-चरितामृत में यह कहा गया है कि वे श्रीरूप गोस्वामी अग्रज भ्राता थे और इस विश्व में उनके जैसा कोई महान पण्डित नहीं था। उन्होंने सभी भौतिक सुखों को अपनाने से मना कर दिया और वे अति विन्रम, कृष्ण भक्ति में आसक्त थे और हमेशा शिक्षा में मग्न रहते थे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने अनुयायियों से प्राय: कहते थे कि श्रीसनातन गोस्वामी उनके प्रिय शिष्य हैं। प्रेम और करुणा के सागर के रूप में श्रीसनातन गोस्वामी की अनुकम्पा से अन्य शिष्य अमंगल स्थिति वाली परिस्थति से आगे बढ़ गये थे।

अपने ग्रन्थ 'श्रीविलाप-कुसुमाञ्जलि' में श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी ने कहा है कि श्रीसनातन गोस्वामी करुणा के सागर हैं और दीन जनों के सखा हैं। 'मैं एक अज्ञानी और अयोग्य व्यक्ति हूँ और श्रीसनातन गोस्वामी ने वैराग्य पर आधारित भक्ति-रस पान करने में मेरी सहायता की है। मैं अपने प्रभु श्रीसनातन गोस्वामी का आश्रय ग्रहण करता हूँ।'

श्रील रूप गोस्वामी

श्रील रूप गोस्वामी श्री सनातन गोस्वामी की शाखा से सम्बन्धित हैं और इस शाखा में अन्य हैं श्रीराजेन्द्र गोस्वामी, श्रीकृष्णाख्या ब्रह्मचारी, श्रीकृष्ण मिश्र गोस्वामी, श्रीभगवत दास गोस्वामी और अन्य।

श्रीनिवास आचार्य, श्रीसनातन गोस्वामी के गुणों के प्रशंसक हैं। जैसे ही वे श्रीसनातन गोस्वामी की समाधि के पास बैठे वे अपने नेत्रों से बहते अश्रुओं को नहीं रोक पाये। किसी प्रकार श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें शांत किया और वापिस घर ले आये।

इसके बाद श्रीनिवास आचार्य स्वयं पर अत्यन्त नियंत्रण करते हुए श्रीरूप गोस्वामी की समाधि दर्शन करने गये। वे अश्रु बहाते हुए श्रीरूप गोस्वामी की समाधि के सामने भूमि पर झुके और प्रणाम किया। श्रीरूप गोस्वामी के असाधारण चरित्र का ध्यान करते हुए श्रीनिवास आचार्य का हृदय स्पंदन करने लगा।श्रील रूप गोस्वामी की महिमा अंतहीन है और जो कोई भी उनका किसी भी रूप में वर्णन करता है वह प्रशंसा योग्य है।

'चैतन्य-चन्द्रोदय' में श्रीकवि-कर्णपूर गोस्वामी बताते हैं कि श्रील रूप गोस्वामी श्रीराधा के विश्राम के सर्वश्रेष्ठ स्थान हैं। श्रील रूप गोस्वामी सत्य प्रेम और समर्पण का रूप हैं। श्रील चैतन्य महाप्रभु ने श्रीलरूप गोस्वामी को अध्यात्म के विज्ञान सेवा के वर्णन को सम्पूर्ण विश्व में फैलाने के लिये समर्थ

बना दिया था। वास्तव में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपनी ही लीलाओं को श्रील रूप गोस्वामी के माध्यम से प्रकट किया था।

'साधन-दीपिका' ग्रन्थ में यह वर्णन है। 'भक्ति पथ के अनुयायियों को निश्चित ही उनका पार्षद नहीं बनना चाहिये जिन्होंने श्रील रूप गोस्वामी के प्रेम भक्ति के सिद्धांत से स्वयं को अलग कर लिया हो। ये श्रीजीव गोस्वामी का अनुग्रह ही है जिसके कारण कोई उनके दर्शन को समझ सकता है। मैं बारम्बार श्रीलरूप गोस्वामी के चरणकमलों की आराधना करता हूँ।'

श्रीरूप न होते तो?

प्रेम-भक्ति-चन्द्रिका में श्रीनरोत्तम दास ठाकुर कहते हैं कि श्रील रूप गोस्वामी ने श्रीकृष्ण चैतन्य के हृदय में स्थान प्राप्त कर लिया था। 'हे रूप प्रभु कब आप मुझे अपने चरणों में स्थान देंगे?'

'साधन-दीपिका' भी कहता है। 'हे जिह्वा, सदा श्रील रूप गोस्वामी का नाम गाओ। हे मस्तिष्क सदा दया के अवतार श्रील रूप गोस्वामी का स्मरण करो। हे शीश, सदा दयालुता के मूर्त रूप श्रील रूप गोस्वामी के समक्ष झुको। साथ-साथ श्रील रूप गोस्वामी के अभिन्न अंग श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की आराधना का भी स्मरण रखो।'

श्रील रूप गोस्वामी के अद्‌भुत गुण विविध विद्वानों द्वारा विभिन्न प्रकार से वर्णित किये गये हैं। यदि श्रील रूप गोस्वामी कलियुग में प्रकट नहीं होते तो कौन सम्पूर्ण विश्व में श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम का वितरण करता? कौन सब भौतिक साधनों का त्याग कर वृन्दावन की आराधना करता, और भक्ति पथ के ग्रन्थों की चर्चा करता? केवल हंस ही दूध से जल को अलग कर सकते हैं। अन्य कौन श्रीवृन्दावन में श्रीकृष्ण की लीलाओं को समझता और श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण के प्रेम को समझाता? श्रीकृष्ण उससे प्रसन्न हो जाते हैं जो उन्हें श्रील रूप गोस्वामी की शिक्षाओं से प्रसन्न करने का प्रयास करता है। साधारण व्यक्ति ही नहीं स्वयं श्रीकृष्ण चैतन्य भी श्रील रूप गोस्वामी के अद्‌भुत गुणों की प्रशंसा करते हैं। यह सर्वविदित है कि श्रील रूप गोस्वामी प्रभु के पार्षदों के प्राण और आत्मा थे।

बहुत बड़ी संख्या में प्रभु के पार्षदों ने भी श्रील सनातन गोस्वामी और श्रील रूप गोस्वामी की महिमा गाने का प्रयास किया परन्तु पूर्ण रूप से उनका वर्णन नहीं कर सके। मेरे जीवन श्रीसनातन गोस्वामी और श्रीरूप गोस्वामी जिन्होंने असंख्य लोगों को दिशा दी है उनकी जय जयकार हो। मात्र वे ही जन थे जो वैष्णव रीति को भली प्रकार से जानते थे।

वृन्दावन में वे प्राकृतिक प्रेम और दया के कोश थे। वे करुणा के सिन्धु और दीनों के मित्र थे। वे भक्तों में अग्रगण्य थे।

केवल श्रील रूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी ने बताया कि कैसे भागवत और अन्य भक्ति ग्रन्थों की शिक्षाओं के अनुसार व्यवहार किया जाता है। तीनों लोक में सभी उनके चरित्र की प्रशंसा करते थे। उनके चरणों की धूलि पृथ्वी को कलि के सूर्य की झुलसाने वाली किरणों से शीतलता प्रदान करती थी। वे निरंतर श्रील व्यासदेव गोस्वामी और श्रीराधा के पावन चरणकमलों की आराधना करते थे।

सभी तपस्वियों के शिरोमणि श्रील रूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की जय जयकार हो जिनका श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण के प्रति सम्पूर्ण समर्पण है। सभी भौतिक सुखों का त्याग कर वे वृन्दावन के कुंजों और श्रीश्रीराधा के चरणकमलों की महिमा का गान करते हैं। करुणा के सिन्धु ये दो भाई श्रीचैतन्य महाप्रभु की ओर से उपहार हैं, और उनकी अनुपस्थिति में, मैं अनाथ हो गया हूँ।

कौन पर्याप्त रूप से श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की गतिविधियों का वर्णन कर सकता है? मैंने केवल संक्षेप में उनका वर्णन किया है। कौन वर्णन कर सकता है कि कैसे श्रीनिवास आचार्य ने श्रील रूप गोस्वामी की समाधि पर प्रार्थना की? श्रीनिवास आचार्य ने श्रील रूप गोस्वामी की करुणा प्राप्त की और वहाँ से विदा ली।

आगे श्रीनिवास श्रीजीव गोस्वामी के प्राण श्रीराधा-दामोदर से विदा लेने उनके मन्दिर गये। श्रीनिवास आचार्य ने दिव्य रस के स्रोत श्रीराधा-दामोदर का अनुग्रह प्राप्त किया। कितनी दयालुता से श्री श्रीराधा-दामोदर ने उन्हें जाने की आज्ञा प्रदान की, इसका वर्णन करना किसी के भी वश में नहीं। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास को श्रीविग्रह की प्रसादी माला प्रदान की। जब उन्हें श्रीश्रीराधा- दामोदर की श्रीनिवास पर अनुकम्पा का ज्ञान हुआ तो श्रीजीव गोस्वामी का हृदय आनन्दातिरेक से भर उठा।

कुछ समय श्रीनिवास के साथ व्यतीत करने के बाद श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द प्रभु को साथ लेकर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के दर्शन करने भेजा। उन्होंने कहा, 'यहाँ से मैं श्रीगोविन्द मन्दिर जाऊँगा, जहाँ मुझे कुछ दायित्व पूर्ण करने हैं।'

कुछ घण्टों के बाद मैं वहाँ पुनः जाऊँगा और सबसे तुम्हें आज विदा होने देने की प्रार्थना करूँगा।

द्विज हरिदास

अपनी योजना समझाकर श्रीजीव गोस्वामी श्रीगोविन्द मन्दिर को चले गये और वहाँ ग्रन्थों को ले जाने के लिये छकड़ा गाड़ी का प्रबन्ध करने का आदेश दिया। शीघ्रता से अपने अन्य दायित्व पूरे करके श्रीजीव गोस्वामी श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी से मिलने गये। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द

प्रभु भी वहाँ श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी से विदा लेने चले गये। मार्ग में वे निर्जन स्थान पर एक वृक्ष के नीचे नेत्रों से अश्रु बहाते बैठे द्विज हरिदास आचार्य से मिले। उनका शरीर क्षीण हो चुका था और जीवन भी क्षीयमान हो गया था। वे निरंतर रुदन करते हुए गहरी सांस भरते हुए श्रीकृष्ण चैतन्य के नाम का उच्चारण कर रहे थे।

श्रीनिवास आचार्य उनके चरणों में झुके और बदले में श्रीहरिदास आचार्य ने उनका दृढ़ता से आलिंगन कर लिया। हरिदास ने कोमलता से और विनम्रता से श्रीनिवास से कहा, 'मैं जानता हूँ कि तुम प्रातः जल्दी ही गौड़-देश के लिये विदा होने वाले हो। जो मैं बताने वाला हूँ तुम उसका अवश्य पालन करना।'

श्रीदास और गोकुलानन्द मेरे दो पुत्र हैं। जन्मों-जन्मों से वे तुम्हारे शिष्य हैं। जब तुम बंगाल जाओ तो उन्हें दीक्षा अवश्य देना और उन्हें भक्ति ग्रन्थ की अति अनमोल शिक्षा देना।

श्रीनिवास आचार्य हरिदास का आदेश सुनकर आश्चर्यचकित रह गये परन्तु हरिदास ने उन्हें विविध प्रकार से आश्वस्त किया। 'तुम्हें अपने सामर्थ्य का ज्ञान नहीं हैं परन्तु मेरे निर्देश मानने के प्रति अनिच्छुक मत बनो। तुम्हें मेरे आदेश मानने का कोई अपराध नहीं होगा।'

इस प्रकार द्विज हरिदास ने श्रीनिवास आचार्य को सहानुभूतिशील शब्दों से प्रोत्साहित किया। श्रीहरिदास आचार्य के अद्भुत गुण थे। मैं वर्णन करूँगा कि कैसे वे श्रीवृन्दावन गये। श्रीचैतन्य महाप्रभु के स्वयं प्रकटीकरण के समय अनेक भक्त बंगाल, नीलाचल और ब्रज से आये और गये।

श्रीजगदानन्द पंडित श्रीवृन्दावन आये और श्रीचैतन्य महाप्रभु से मिलने बंगाल के मार्ग से नीलाचल लौट गये। बंगाल, नीलाचल और ब्रज में महाप्रभु के शिष्य नित्य आनन्द के सागर में तैरते रहते थे, यद्यपि श्रीअद्वैत प्रभु की इच्छा से श्रीचैतन्य महाप्रभु सम्पूर्ण विश्व को दुख के गहरे सागर में डुबोकर अन्तर्धान हो गये थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के विरह को न सह पाने के कारण श्रीहरिदास आचार्य ने अपने भौतिक शरीर को त्यागने का निर्णय किया। वास्तव में वे प्रभु के अन्तर्धान होने पर इतना कठिन विलाप करने लगे कि वे स्वयं को नियंत्रित न कर पाये और निरंतर सिसकते रहे। कोई भी उन्हें शांत नहीं कर सकता था और उनका हृदय निरंतर विरह की अग्नि में जलता रहता था। वे भूमि पर लुढ़क जाते और चिल्लाते, 'हे भगवान् आप कहाँ चले गये? प्रभु गौरचन्द्र के बिना मेरा जीवन निरर्थक बन गया है। मैं कल प्रातः अग्नि में प्रवेश कर आत्मदाह कर लूँगा।'

स्वप्न में श्री चैतन्य

अंतिम निर्णय लेने के बाद श्रीहरिदास आचार्य गहरी निद्रा में सो गये और गौरचन्द्र प्रभु उनके स्वप्न में प्रकट हुए। श्रीचैतन्य महाप्रभु का अद्भुत सौन्दर्य

सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित करने वाला था और उनकी प्रभा पृथ्वी को चकाचौंध करती थी। स्वर्ण और रजत की उनके कांतिमय सौन्दर्य के सम्मुख कोई तुलना नहीं थी। वह सहस्रों देवताओं के सौन्दर्य को भी लज्जित करने वाला था। उनका सुन्दर मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा की चमक को परास्त करने वाला था और उनकी सौम्य मुस्कान से अमृत प्रकट होता था। उनकी भुजाऐं, वक्षस्थल, और उनके विशाल नेत्र कितने सुन्दर थे! उनकी चाल गज को भी लज्जित कर देती थी।

आनन्द से अभिभूत श्रीहरिदास, प्रभु के चरणकमल अपने शीश पर धारण कर भूमि पर लुढ़क गये। अपने भक्तों के अति प्रेमी प्रभु अधिक देर तक स्वयं पर नियंत्रण न कर पाये तो उन्होंने श्रीहरिदास को अपनी भुजाओं में भर लिया और कोमलता से उनसे बोले, 'तुम्हारा विलाप देखकर मेरा हृदय व्यथित हो गया, परन्तु तुम्हारा निर्णय सही नहीं है। अतिप्रिय श्रीनिवास जो मेरे प्रेम के अवतार हैं, वह गौड़-देश में भक्ति ग्रन्थों का प्रचार करेंगे। निःसन्देह ये तुम पहले से जानते हो परन्तु फिर भी तुम उनसे मिलना और अपनी करुणा प्रदान करना। तुम सब प्रयास कर के अपने पुत्रों की दीक्षा श्रीनिवास आचार्य से करवाना। श्रीनिवास आचार्य के अनुग्रह से तुम्हारे पुत्रों की कामनाऐं पूर्ण होंगी और उनका नाम भक्ति के क्षेत्र में विख्यात हो जायेगा। तुम श्रीनिवास आचार्य से श्रीवृन्दावन में मिलोगे परन्तु कोई समय व्यर्थ मत गंवाना तत्काल श्रीवृन्दावन जाओ। मैं सदा तुम्हारे संग रहूँगा और कभी-कभी तुम्हें मेरे दर्शन भी प्राप्त होंगे।'

पुत्र भी भाग्यशाली

स्नेहमय प्रभु ने अपने भक्त हरिदास आचार्य का आलिंगन किया और फिर अन्तर्धान हो गये। जब उनकी नींद टूटी तो श्रीहरिदास कुछ चिंतित हो गये परन्तु उषा-काल हो गयी थी तो उन्होंने अपने नित्य-कर्म पूर्ण किये। तब उन्होंने अपने पुत्रों को बुलाया और प्रेम से कहा कि वे उसी दिवस ही श्रीवृन्दावन जायेंगे।

तुम दोनों बहुत ही सौभाग्यशाली हो क्योंकि चैतन्य महाप्रभु का तुम्हारे प्रति अपूर्व स्नेह है। हरिदास ने कहा। कुछ समय बाद तुम अवश्य ही प्रभु के अतिप्रिय परिकर श्रीनिवास आचार्य से दीक्षा ग्रहण कर लेना। श्रीनिवास आचार्य वृन्दावन चले जायेंगे और बाद में वे गोस्वामी गणों की अनमोल पुस्तकों का वितरण करने बंगाल लौट कर आयेंगे। उनके दर्शन मात्र से ही तुम उनकी महिमा जान जाओगे और उनसे तुम अध्यात्म का अनमोल रत्न ग्रहण करोगे जो कि अंश अवतारों के लिये भी अप्राप्य है।

अपने पुत्रों से बात करने के बाद हरिदास आचार्य ने गृह त्याग दिया जैसा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने आदेश दिया था। अंततः यद्यपि उन्होंने दयनीयता के सागर में डूबना प्रारम्भ कर दिया था। इन घटनाओं के विचार आने से ही मेरे

हृदय में पीड़ा हो उठती है। श्रील रूप गोस्वामी और श्रील सनातन गोस्वामी के गुणों का स्मरण करते हुए श्रीहरिदास रोने लगते और उनकी स्थिति देखकर लोगों को तरस आ जाता था।

श्रीहरिदास आचार्य की गतिविधियों का वर्णन निश्चित ही करना चाहिये ताकि जीव उनके नाम का स्मरण कर शुद्ध समर्पण प्राप्त कर सके। यद्यपि वृन्दावन में उनके जीवन का वर्णन विस्तृत रूप से इसलिये नहीं किया गया ताकि यह ग्रन्थ अति विशाल न हो जाये।

श्रीहरिदास ने श्रीनिवास आचार्य का आलिंगन किया, बारम्बार उन पर अपनी करुणा बरसायी। यद्यपि श्रीनिवास आचार्य को विदा करते समय वे अत्यन्त व्यग्र हो गये और अपने ही अश्रुओं में तैर गये। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास का आलिंगन किया और उन्हें विभिन्न सलाह प्रदान कीं। श्रीहरिदास ने श्रीश्यामानन्द प्रभु का भी आलिंगन किया और उन्हें परम सौभाग्य का आशीष प्रदान किया।

कनाई ब्रजवासी

श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों ने श्रीहरिदास आचार्य से अश्रुपूर्ण विदा ली। यमुना के तट पर सुन्दर वृक्षों से युक्त एक निर्जन स्थान था। एक वृक्ष के नीचे कनाई नाम का ब्रजवासी भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा करता था।

जब श्रीनिवास आचार्य वहाँ प्रकट हुए और कनाई के प्रति प्रणाम स्वरूप झुके तो ब्रजवासी ने दीर्घकाल तक उनका आलिंगन किए रखा। उन्होंने उदासीपूर्वक श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख स्वीकार किया शायद ये उनकी अंतिम भेंट है। उन्होंने कहा, 'अभिव्यक्ति के अवतार के रूप में तुम बंगाल में अनुपम भक्ति साहित्य पढ़ाओगे और उनके माध्यम से सरलता से मनुष्य को उनके दुराचरण के दुष्प्रभावों से मुक्त कर दोगे। तुम्हें श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की करुणा प्राप्त हुई है। तुम कितने सौभाग्यशाली हो!'

जब वे श्रीरूप गोस्वामी के चरित्र की चर्चा कर रहे थे तो कनाई अधीर हो उठे। श्रीरूप गोस्वामी के प्रति कनाई के प्रेम और आदर का विस्तार से वर्णन होना चाहिये। कनाई की माता अनुरक्ति का धाम थीं। जिनके मन में श्रीरूप और श्रीसनातन गोस्वामी के प्रति अगाध प्रेम था। कनाई की गतिविधियों को कौन समझ सकता है क्योंकि वे अपना समय श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी के साथ व्यतीत करते थे। वे बहुत प्रेम से श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी को अपने निवास पर लाते और उन्हें भिक्षा देते। भोजन, फल, और सब्जियां-जो भी उपलब्ध होता, वे आदर सहित श्रीरूप और श्रीसनातन को दे देते।

एक बार जब श्रीसनातन गोस्वामी, कनाई के निवास पर भिक्षा मांगने गये। स्वयं श्रीकृष्ण ने कनाई के रूप में उन्हें भिक्षा प्रदान की। कनाई सब जगह विख्यात हो गये क्योंकि स्वयं भगवान् ने श्रीसनातन गोस्वामी को प्रसन्न करने के लिये उनका रूप धारण किया था। हर कोई कनाई का संग साथ पसन्द करता था और वे श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी के प्रिय सखा बन गये थे।

जब श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी धराधाम से प्रस्थान कर गये तो कनाई ने अत्यंत दु:ख से अपना जीवन त्यागने का निर्णय लिया। दोनों भाइयों की इच्छा से उनके प्राण बच गये और गृह त्यागने के बाद उन्होंने सम्पूर्ण ब्रज की यात्रा की। अंतत: उन्होंने यमुना जी के तट पर एक वृक्ष के नीचे रहने का निर्णय लिया, जहाँ वे निरंतर श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी के लिये रोते रहते थे, कभी-कभी भूमि पर लोट-लोट कर रोते थे। क्योंकि वे अपने दो मित्रों के विरह को सहन नहीं कर पाये थे अत: वे अपने जीवन के प्रति पूर्णत: उदासीन हो गये थे।

श्रीनिवास आचार्य कनाई की दयनीय स्थिति के कारण विचलित हो गये और अपने नेत्रों में आँसू लिये उन्होंने विदा होने की अनुमति मांगी। इसके बाद श्रीनिवास आचार्य, श्रीभूगर्भ गोस्वामी से मिलने गये और साष्टांग प्रणाम कर उनके चरणों में झुक गए।

श्रीभूगर्भ गोस्वामी

भूगर्भ गोस्वामी ने स्नेह से श्रीनिवास आचार्य का आलिंगन किया और श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें बताया कि वे किन-किन भक्तों से मिलकर आये हैं।

कुछ वार्तालाप के बाद श्रीभूगर्भ गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों को यह कहकर जाने की आज्ञा प्रदान की, 'मैं कल श्रीगोविन्द मन्दिर जाऊँगा और तुम्हें वहीं मिलूँगा।'

श्रीभूगर्भ गोस्वामी ने सोचा 'मैं उन्हें विदाई दूँगा परन्तु मेरा हृदय विदीर्ण होने वाला है।' और उनके कपोलों पर अश्रु बह निकले। जो अगाध प्रेम श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द प्रभु के प्रति श्रीभूगर्भ गोस्वामी का था उसका वर्णन कौन कर सकता है? उन्होंने उन सब को श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया।

तीनों बारम्बार श्रीभूगर्भ गोस्वामी के चरणों में झुके और भारी हृदय से प्रस्थान कर गये। आगे श्रीनिवास आचार्य श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी से मिलने गये परन्तु मार्ग में वे कुछ अन्य वैष्णव जनों से मिले। श्रीनिवास, श्रीनरोत्तम और श्रीश्यामानन्द ने उन वैष्णवों से आशीष देने को कहा और उनकी आज्ञा से उन्होंने आगे चलना प्रारम्भ कर दिया।

श्रीगोपाल भट्ट

मार्ग में श्रीनिवास आचार्य और उनके सहभागी श्रीजीव गोस्वामी से मिले और वे सब मिलकर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के निवास की ओर गये। जब वे पहुँचे तो उन्होंने देखा श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी एक निर्जन कोने में बैठे हुए श्रीराधारमण के ध्यान में पूर्णतः मग्न थे। कभी-कभी वे उन पदों को पढ़ते जिनकी उन्होंने रचना की थी और ये पद हर किसी को मंत्रमुग्ध करते थे।

वे कहते, 'हे भाण्डीर के प्रभु, आप मोर पंख से शोभित हो और आपका तन चन्दन लेप से सुवासित है। आप श्रीवृन्दावन के नायक हो और आप का रंग- रूप पुष्पित होते नीलकमल के समान नीलवर्ण का है। आपने विशालकाय कालिय सर्प को पालतू बना लिया था और नन्द के पुत्र के रूप में आप भक्तिमय आनन्दातिरेक के अवतार हो। हे कमल-नयन गोविन्द, मुकुन्द, आप अति सुन्दर हो। कृपया मुझ जैसे निर्धन मनुष्य के प्रति दया दिखाईये।'

श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी का व्यवहार अवर्णनीय है। यह जानकर कि श्रीजीव गोस्वामी पधारे हैं, वे उत्सुकतावश मार्ग की ओर देखने लगे।

श्रीजीव गोस्वामी, श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्तगण शीघ्र ही उनके निवास पर पहुँच गये। वे सब प्रणाम करने श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के सामने झुके और श्रीजीव गोस्वामी ने प्रार्थना की, 'कृपया श्रीनिवास में अपनी पूरी सामर्थ्य उड़ेल दीजिये। अपने चरणकमल श्रीनिवास के मस्तक पर पधरा दीजिये ताकि वे सरलता से गौड़-देश पहुँच जायें। उन्हें आशीष दीजिये कि विधर्मियों के घमण्ड का नाश करते हुए वे सहजता से बंगाल में ग्रन्थों का वितरण कर सकें।'

श्रीजीव गोस्वामी के निवेदन पर विचार करते हुए श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी ने श्रीश्रीराधारमण से प्रार्थना की। यह पूर्ण रूप से वर्णन नहीं किया जा सकता कि कैसे श्रीश्रीराधारमण ने श्रीनिवास आचार्य पर अपनी करुणा बरसायी और उन्हें प्रस्थान करने की अनुमति प्रदान की। श्रीश्रीराधारमण की श्रीनिवास पर करुणा को देखकर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी श्रीविग्रह की प्रसादी माला ले आये और उन्हें दे दी।

नेत्रों में आँसू लिये श्रीनिवास बारम्बार श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के चरणों में झुके। श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी ने सौम्य स्वर में उन्हें शांत किया और फिर उन्हें श्रीश्रीराधारमण को समर्पित कर दिया। श्रीनिवास आचार्य पर असीमित अनुकम्पा बरसा कर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी ने उनकी सफलता की शुभकामना दी। मधुरता से उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को यह कहते हुए आशीष दिया, 'श्रीश्रीराधारमण तुम्हारी सभी कामनाऐं पूर्ण करें।'

उन्होंने अति स्नेह से श्रीनिवास आचार्य से कहा, 'श्रीश्रीराधारमण तुम्हारे प्रति दयालु हों। उन्होंने हर भक्त का आलिंगन किया और वे सब प्रणाम करने उनके चरणकमलों में झुके। श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी श्रीजीव गोस्वामी की ओर मुड़े और कहा, 'कल प्रातः मैं श्रीगोविन्द मन्दिर जाऊँगा।'

श्रीलोकनाथ गोस्वामी

श्रीजीव गोस्वामी और अन्य भक्त बारम्बार प्रणाम करने श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी के चरणकमलों में झुके और फिर श्रीलोकनाथ गोस्वामी से मिलने गये। जब वे पहुँचे तो श्रीलोकनाथ गोस्वामी श्रीराधा-विनोद के सुन्दर मुख के दर्शन से मंत्रमुग्ध अवस्था में बैठे हुए थे। जब श्रीजीव गोस्वामी पहुँचे तो श्रीलोकनाथ गोस्वामी स्नेहवश अति विचलित हो उठे। श्रीजीव गोस्वामी ने झुक कर श्रीलोकनाथ गोस्वामी को प्रणाम किया और विनम्रता से कहा, 'कल प्रातः श्रीनिवास आचार्य गौड़-देश के लिये प्रस्थान करेंगे।'

श्रीलोकनाथ गोस्वामी श्रीराधा-विनोद की ओर मुड़े, एक प्रार्थना निवेदन की और फिर श्रीविग्रह से एक पुष्प माला श्रीनिवास आचार्य को भेंट की। अति स्नेह से उन्होंने श्रीनिवास आचार्य से ऐसा बहुत कुछ कहा जिनका यहाँ वर्णन नहीं किया जा सकता। तीनों भक्त श्री लोकनाथ गोस्वामी को प्रणाम करने भूमि पर झुके। नेत्रों में अश्रु लिये और भारी हृदय से लोकनाथ गोस्वामी ने हर किसी का आलिंगन किया।

तब अपने आप को शांत करने के बाद श्रीलोकनाथ गोस्वामी ने श्रीजीव गोस्वामी से कहा, 'ये सब तुम्हारी देखरेख में हैं।' अति दैन्यता के साथ श्रीजीव गोस्वामी अन्य भक्तों के साथ श्रीलोकनाथ गोस्वामी के चरणकमलों में झुके और फिर प्रस्थान कर गये। आगे वे श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह के दर्शन करने गये। श्रीगोपीनाथ के सुन्दर अंग-विन्यास ने सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित किया हुआ था वास्तव में भक्तों के हृदय में श्रीगोपीनाथ के सौन्दर्य को निहार कर परिवर्तन आया और उनकी भावनाऐं वर्णन की सीमा से परे थीं।

श्रीमधु पंडित

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीमधु पंडित और अन्य भक्तगणों से उनकी सुरक्षित यात्रा की प्रार्थना करने के लिये निवेदन किया। मधु पंडित ने श्रीगोपीनाथ जी से प्रार्थना की और श्रीविग्रह की एक माला प्रभु की अनुमति प्रदान करने के चिह्न के रूप में श्रीनिवास आचार्य को भेंट की। सम्मान व्यक्त करते हुए अपने नेत्रों में अश्रु लिये श्रीनिवास आचार्य ने विदा लेने के लिये श्रीविग्रह के सम्मुख दण्डवत् प्रणाम किया।

भक्तों ने श्रीनिवास आचार्य को शांत किया और उन्हें यथाशीघ्र श्रीवृन्दावन लौटकर आने का निवेदन किया। उन्होंने श्रीश्यामानन्द प्रभु और श्रीनरोत्तम दास पर भी अपनी करुणा बरसायी परन्तु वास्तव में उन्होंने जो कहा वह मेरी अवधारणा के सामर्थ्य से बाहर है। श्रीगोपीनाथ के भक्तों ने श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों का अति स्नेह से आलिंगन किया और भूमि पर दण्डवत् लेटकर उनके चरणों में प्रणाम किया।

श्रीगोपेश्वर मंदिर

श्रीमधु पंडित और अन्य भक्तों ने श्रीजीव गोस्वामी को आश्वासन दिया कि अगली प्रातः विदाई के समय वे श्रीगोविन्द मन्दिर में मिलेंगे। श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य को गोपेश्वर मन्दिर जाने को कहा। श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्त गोपेश्वर मन्दिर गये परन्तु श्रीजीव गोस्वामी श्रीगोविन्ददेव जी मन्दिर गये।

श्रीगोपेश्वर के श्रीविग्रह की उपस्थिति में श्रीनिवास आचार्य ने प्रार्थना आरम्भ की। श्रीगोपेश्वर, श्रीनिवास आचार्य से प्रसन्न हो गये और ब्राह्मण के रूप में उन्हें विदा करने आये।

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभु की श्रीगोपेश्वर के सम्मुख की गई प्रार्थना ऐसी थी जो किसी को भी विचलित कर दे। श्रीगोपेश्वर शंकर को प्रणाम करके श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्त धीरे-धीरे प्रस्थान करने लगे। आगे वे श्रीकाशीश्वर गोस्वामी की समाधि पर गये जहाँ उन्होंने सम्मान सहित अपना आदर व्यक्त किया।

श्रीकाशीश्वर गोस्वामी की महिमा का गान कौन कर सकता है जिन्होंने गौर-गोविन्द श्रीविग्रह को यथार्थ में श्रीवृन्दावन में स्थापित किया। उन्होंने श्रीगौर के श्रीविग्रह को श्रीगोविन्द के दायीं तरफ स्थापित किया, इससे जो सौन्दर्य उत्पन्न हुआ उसने हर किसी को मंत्रमुग्ध कर दिया। श्रीकाशीश्वर के प्रेम और समर्पण से नियंत्रित श्रीचैतन्य महाप्रभु देश के पश्चिमी भाग में आये थे।

श्रीकाशीश्वर

श्रीसाधन दीपिका में वर्णन है- 'मैं श्रीकाशीश्वर गोस्वामी की आराधना करता हूँ जिनका प्रेम बल और समर्पण श्रीचैतन्य महाप्रभु को श्रीविग्रह रूप में पश्चिम भारत में ले आया।'

यह सर्वविदित है कि श्रीकाशीश्वर, श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय पार्षद थे और श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी सदा उनके गुणों की प्रशंसा करते थे। काशीश्वर गोस्वामी के अद्‌भुत गुणों का स्मरण करते हुए श्रीनिवास

आचार्य अधीर हो उठे। वे बारम्बार भारी हृदय से भूमि पर लेटकर श्रीकाशीश्वर गोस्वामी की समाधि पर प्रणाम करने लगे।

श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी

आगे श्रीनिवास आचार्य आँखों में अश्रु भर कर श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामी की समाधि पर गये। जीव की उदासी की यथार्थता का पता श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामी के उत्तमोत्तम गुणों के मात्र श्रवण से चल सकता है। वे सभी शास्त्रों के ज्ञाता थे और उन्होंने सब कुछ केवल पवित्र ग्रन्थों को सुनकर ही सीखा था। यहाँ तक कि इस गुण के कारण वे देवताओं के धर्मगुरु बृहस्पति के भी सम्माननीय थे।

भागवत का उनका अनुवाद अद्वितीय था और यहाँ तक कि महान ऋषि जैसे व्यासदेव जी भी इसे सुनकर आनन्दित होते थे। उनका समर्पण देवगणों को भी अचंभित करने वाला था। इस प्रकार श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामी की महिमा की प्रशंसा की।

श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी की समाधि के समक्ष भूमि पर दण्डवत् प्रणाम करने के पश्चात् श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्त श्रीगोविन्द मन्दिर के लिये प्रस्थान कर गये। श्रीगोविन्ददेव के श्रीविग्रह का स्पर्श करके श्रीनिवास आचार्य आनन्दातिरेक से अभिभूत हो गये। उसके बाद वे अपने हृदय में प्रेम भरकर और अपने आपको भुलाकर श्रीजीव गोस्वामी के साथ निवास पर लौट आये और वे भजन गुनगुनाने लगे जो उन्होंने रचे थे।

श्रीगोविन्द शोभा

एक भजन में श्रीराधा ने श्रीगोविन्द के सौन्दर्य को देखा और वे इसका वर्णन अपनी सखियों से कर रही हैं। 'किसने इनके चन्द्र समान मुख को गढ़ा है, और किसने इन दो नेत्रों को गढ़ा है? केवल मेरा हृदय जानता है कि मैं इनके चन्द्र समान मुख को देखकर कैसा अनुभव करती हूँ। किसने सावधानीपूर्वक रत्नों को काट छाँट कर उनके कुण्डलों का निर्माण किया है? मेरा ध्यान उन पर अटक गया है। उनकी नासिका पर स्वर्ण में मण्डित एक मोती है। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे प्रकाश से घिरा और बादलों के पीछे से मुस्कुराता हुआ कोई श्वेत चन्द्र समान पुष्प हो।

उनका मस्तक चन्दन के लेप से निर्मित तिलक और सुन्दर चित्रकारी से सुसज्जित है। वे मेरे हृदय के भीतर प्रकाशमान हैं परन्तु फिर भी मेरे हृदय में पीड़ा होती है क्योंकि मैं उस सुन्दर मुख को अपनी पूर्ण तृप्ति से नहीं निहार सकती। भगवान् ने मुझे केवल सामर्थ्य दी होती कि मैं निरंतर उनकी मधुर वाणी श्रवण कर आनन्दित होती रहूँ। उनकी भुजायें हाथी की सूँड़ से भी ज्यादा

मजबूत हैं और उनकी उंगलियाँ चिन्मय रंग से रंगी हुई हैं। मेरा किशोर तन उन उंगलियों का स्पर्श पाने को लालायित है! उनकी सुन्दर गति हाथी की चाल को भी परास्त करती है। श्रीनिवास के विनम्र विचार के अनुसार वे विधाता द्वारा रचे गये करुणा के सिन्धु हैं।

श्रीनिवास आचार्य अधिक देर तक स्वयं को नियंत्रित न कर सके और व्याकुल होकर रोने लगे। 'मैंने कैसा सौन्दर्य देखा!' अति स्नेह और देखभाल से श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य को शांत किया और उन्हें घर ले गये। श्रीनिवास आचार्य अपने ही निवास पर रहे जबकि नरोत्तम दास और श्यामानन्द प्रभु अपने अपने घर चले गये। श्रीनिवास आचार्य ने पूरा दिवस अनेक लोगों से मिलकर व्यतीत किया। अनेक वैष्णव जनों और अनेक श्रीविग्रहों के दर्शन किये परन्तु रात्रि में उन्होंने विलाप करना प्रारम्भ कर दिया।

अपने हाथ आकाश की ओर उठाकर वे चिल्लाने लगे, 'विधाता ने मुझे इस आनन्द से वंचित कर दिया है! मैं एक अयोग्य व्यक्ति क्या पुनः श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदन-मोहन, श्रीराधा-विनोद, श्रीराधारमण और श्रीराधा-दामोदर के श्रीविग्रह के दर्शन कर पाऊँगा?'

वृन्दावन-विरह

क्या श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी मुझे वापिस वृन्दावन ले आयेंगे और पुनः मुझे अपने चरणकमलों की सेवा का सौभाग्य देंगे? क्या अनुकम्पा के अवतार श्रीलोकनाथ गोस्वामी एक बार पुनः मुझ पर अपना अनुग्रह बरसायेंगे? इस पापी के केश पकड़ कर कृपालु भूगर्भ गोस्वामी क्या पुनः वापिस लायेंगे? क्या करुणा के अवतार श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी मेरी कामना पुनः पूर्ण करेंगे? श्रीजीव गोस्वामी निर्धनों और अभागे व्यक्तियों के प्रकाश हैं। क्या मैं पुनः उनके चरणकमलों के दर्शन करुँगा? हे श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदो, क्या आप कभी मेरे जैसे अभागे व्यक्ति को पुनः श्रीवृन्दावन लाओगे और अपने सान्निध्य में आनन्द प्राप्त करने का अवसर दोगे?

श्रीनिवास आचार्य का स्वर विलाप के कारण बन्द होने लगा और उनके नेत्रों से अश्रु बह निकले। श्रीनरोत्तम दास का विलाप स्वर लकड़ी और पत्थर को भी पिघलाने वाला था। श्रीश्यामानन्द प्रभु के विलाप का वर्णन कौन कर सकता है? निकट भविष्य में होने वाले विरह के विचार ने इनमें से हर असाधारण भक्त को अधीर कर दिया था और इस कारण वे सो नहीं सके।

श्री गोविन्द जू द्वारा स्वप्नादेश

वह उत्कण्ठा जिसने श्रीनिवास आचार्य का हृदय विदीर्ण कर के रख दिया उसे केवल श्रीगोविन्द ही जान सकते हैं। श्रीगोविन्द की इच्छा से श्रीनिवास

आचार्य रात्रि के अंतिम प्रहर में गहरी निद्रा में सो गये। उनके सपने में श्रीगोविन्द, निज मन्दिर का प्रांगण त्याग कर हाथी की सी चाल से श्रीनिवास आचार्य के पास पहुँच गये। कमल पुष्प के सौन्दर्य को परास्त करते हुए श्रीगोविन्द का सौन्दर्य सैंकड़ों देवताओं के सौन्दर्य को लज्जित कर रहा था। वे दिव्य आभूषणों से सुशोभित थे और उन्होंने अपने सिर पर एक मोर पंख धारण कर रखा था। उनके विशाल नेत्र थे और वे सब प्रकार की परिपूर्णता के अवतार प्रतीत हो रहे थे। उनके मुख का सौन्दर्य पूर्णिमा के सैंकड़ों चन्द्रमा के सौन्दर्य को परास्त कर रहा था।

अपने आनन्द के लिये श्रीगोविन्ददेव ने श्रीनिवास आचार्य को मुस्कुराते हुए बताया, 'हे श्रीनिवास, विलाप करना बंद करो क्योंकि यह मुझे अत्यधिक पीड़ा दे रहा है। क्या तुम ये नहीं जानते कि तुम मेरे प्रेम के अवतार हो और यह कि मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ? मैंने अपनी इच्छा श्रीरूप गोस्वामी और सनातन गोस्वामी के माध्यम से व्यक्त कर दी है। तुम्हारे द्वारा उन ग्रन्थों के वितरण करने से, मैं असंख्य लोगों के दुःख दूर कर दूँगा और उन्हें प्रभु के प्रेम की सम्पत्ति प्रदान करूँगा।'

मैं वचन देता हूँ कि मैं किसी को भी स्वीकार करूँगा जो तुम्हारा आश्रय ग्रहण करेगा। जो कोई भी तुम्हारा शिष्य बनेगा वह अति सौभाग्यशाली हो जायेगा। तुम अपने शिष्यों को साथ ले जाओ और संकीर्तन करो। कभी किसी बात की चिंता मत करना। समय समय पर तुम मुझे इसी प्रकार देखोगे।

श्रीगोविन्द भये श्रीचैतन्य

इस प्रकार श्रीनिवास आचार्य को सांत्वना देकर श्रीगोविन्द ने तब स्वयं को श्रीचैतन्य महाप्रभु में परिवर्तित कर लिया। श्रीनिवास आचार्य प्रभु के इस रूप के अच्छे से दर्शन करने के लिये सैंकड़ों नेत्रों को मांगते हुए अपने भावों पर नियंत्रण न रख सके। उन्होंने भूमि पर लेटते हुए प्रभु के चरणकमलों की आराधना की और श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने चरणकमल उनके मस्तक पर पधरा दिये। तब प्रभु ने श्रीनिवास आचार्य का आलिंगन किया और उन्हें गौड़-देश की यात्रा के लिये शुभ कामनाऐं दी। अंततः उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के अपने रूप को त्याग दिया और मन्दिर में प्रवेश कर गये।

श्रीगोविन्द के अन्तर्धान होने पर श्रीनिवास आचार्य भावनात्मक तौर पर विदीर्ण हो गये और जब उनकी निद्रा टूटी तो उन्होंने देखा कि उषाकाल हो चुका है। अपने प्रातःकालीन नित्य कर्म पूर्ण कर शोक में डूबे हुए श्रीनिवास आचार्य ने अपने धैर्य को परखा और एक निर्जन स्थान पर बैठ गये।

इसके बाद शीघ्र ही श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभु वहाँ आ गये। साथ मिलकर वे सब श्रीजीव गोस्वामी से मिलने श्रीगोविन्द मन्दिर चले

गये। उच्चकोटि के अनेक वैष्णव वहाँ एकत्र थे। पाठकों के मंगल के लिये यहाँ उनके नाम दिये गये हैं: अति कृपालु श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी, सभी श्रेष्ठ गुणों के भण्डार श्री भूगर्भ गोस्वामी और श्रीलोकनाथ गोस्वामी। श्रीमाधव, श्रीपरमानन्द भट्टाचार्य और श्रीमधु पंडित जिन सबका चमत्कृत करने वाला चरित्र है। प्रेम और समर्पण के स्वामी प्रेमी श्रीकृष्णदास, श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी और श्रीराघव पंडित, श्रीयादव आचार्य सौभाग्यशाली नारायण, श्रीपुण्डरीकाक्ष, श्रीगोविन्द, श्रीईशान, श्रीगोविन्द, वाणी हितैषी श्रीकृष्णदास और श्री उद्धव जो कि कभी-कभी गौड़-देश की यात्रा करेंगे। द्विज हरिदास, श्रीकृष्णदास कविराज और श्रीगोपाल दास जिनकी उपलब्धि अद्‌भुत थी। इत्यादि अनेक वैष्णव भक्त समुपस्थित थे।

जो भी वैष्णव जन वहाँ आये थे, उन सब का नाम यहाँ देना संभव नहीं। अनेक ब्रजवासी भी प्रसन्नता के धाम उस स्थान पर उपस्थित थे।

अत्यधिक स्नेह से श्रीजीव गोस्वामी, कृष्ण पंडित और अन्य भक्तगण बहुमूल्य रत्न समान ग्रन्थों को सब की उपस्थिति में आगे लाये। सब भक्तों की आज्ञा पाकर उन्होंने ग्रन्थों को छकड़ा गाड़ी पर पधराया। जब ग्रन्थों के बक्सों को सुरक्षित कर लिया गया तब सब ने छकड़ा गाड़ियों को आगे बढ़ाने की अनुमति प्रदान की।

गाड़ियों के परिचालकों ने शुभ समय पर गाड़ियों को चलाना आरम्भ किया और जो लोग गाड़ियों के पीछे थे या आगे थे वे अति सौभाग्यशाली थे। एक निपुण व्यक्ति को छकड़ा गाड़ियों की सुरक्षा के लिये साथ चलने का आदेश दिया गया। इस प्रकार गाड़ियाँ मथुरा की ओर बढ़ीं और गोस्वामी गण कुछ दूर तक साथ चले। अंततः भारी हृदय से उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को विदा किया।

श्रीनिवास आचार्य ने गोस्वामी गणों के प्रति सम्मान व्यक्त किया और भारी हृदय और उत्कण्ठित विचारों से यात्रा आरम्भ की। श्रीजीव गोस्वामी और कुछ अन्य विद्वान् भक्त मथुरा तक उनके साथ गये। शेष उच्चकोटि के भक्त अपने-अपने घर वापिस लौट आये। उनकी विरह की अगाध भावनाओं का वर्णन कौन कर सकता है?

चल पड़ीं छकड़ा गाड़ियां

मथुरा के लोग छकड़ा गाड़ियों के वहाँ पहुँचने पर प्रफुल्लित हो उठे परन्तु इस घटना का वर्णन नहीं किया जा सकता क्योंकि यह ग्रन्थ अति विशाल हो जायेगा। उस दिवस वहाँ मथुरा में क्या आनन्द छाया था वह अवर्णनीय है!

भक्तों ने रात और दिवस श्रीकृष्ण की महिमा का गान करने में व्यतीत कर दिया और अगली प्रातः मथुरा से प्रस्थान कर गये। श्रीजीव गोस्वामी कुछ दूर तक साथ चले परन्तु विदा होने के समय पर दुःख के सागर में डूब गये।

श्रीनिवास आचार्य ठाकुर का आलिंगन करते समय वे भावुक होकर रोने लगे। श्यामानन्द प्रभु और नरोत्तम दास को श्रीनिवास को सौंपते हुए श्रीजीव गोस्वामी ने भारी हृदय से उनसे विदा ली। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास का आलिंगन किया पर उनकी चर्चा का वर्णन नहीं किया जा सकता।

अनुराग पूर्ण हृदय से उन्होंने श्रीश्यामानन्द को श्रीनिवास आचार्य को समर्पित कर दिया परन्तु श्रीश्यामानन्द का आलिंगन करते हुए श्रीजीव गोस्वामी अपने धैर्य को बनाए न रख सके।

श्रीकृष्णदास कविराज, पंडित रघुनाथ, श्रीगोपाल, और अन्य भक्त भी अपने धैर्य पर नियंत्रण न रख पाये और श्रीनिवास आचार्य और सभी भक्तों को अपने अश्रुओं से भिगो दिया। उनका आपस में परस्पर प्रेम और आदर का आदान-प्रदान अवर्णनीय है।

वैष्णव गृहस्थ और मथुरा के अन्य सत्पुरुष भी विरह के दृश्य के साक्षी बनकर रोने लगे। अपने नेत्रों में अश्रु लिये श्रीनिवास आचार्य ने प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सम्मान व्यक्त किया। अंततः सभी भक्तों से विदा माँगकर श्रीनिवास आचार्य ने अपनी यात्रा आरम्भ की। हर किसी ने उन्हें विदा किया और अपने घर लौट आये।

श्रीजीव गोस्वामी और अन्य भक्तगण श्रीनिवास आचार्य की सुरक्षित यात्रा के लिये निष्ठापूर्वक प्रार्थना करते हुए श्रीवृन्दावन लौट आये। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द प्रभु गोस्वामी गणों के उत्तमोत्तम साहित्य को लेकर सावधानीपूर्वक बंगाल के लिये आगे बढ़ने लगे।

जो कोई भी श्रीनिवास आचार्य की गौड़-देश की इस यात्रा की कथा को श्रवण करेगा, उसे भक्ति रूपी रत्न की प्राप्ति होगी।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का स्मरण करते हुए नरहरि दास 'भक्ति-रत्नाकर' का वर्णन करता है।

सप्तम प्रवाह

ग्रन्थों की चोरी एवं पुनः प्राप्ति

निर्धनों के सखा श्रीकृष्ण चैतन्य की जय जयकार हो। करुणा के सिन्धु श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो, सभी सद्गुणों के भण्डार श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। उत्तमोत्तम प्रेम के धाम श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो। प्रेम के वितरक श्री श्रीनिवास पंडित की जय जयकार हो, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और श्रीहरिदास ठाकुर की जय जयकार हो।

श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य, श्रीकाशी मिश्र और श्रीरमणराय की जय जयकार हो। श्रीवासुदेव घोष, श्रीमाधव घोष और श्रीमुकुन्द दत्त की जय जयकार हो। श्रीधनंजय, श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीनरहरि, श्रीगौरीदास और श्रीकाशीश्वर की जय जयकार हो। श्रीगदाधर दास, श्रीधर और श्रीविजय की जय जयकार हो और श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी और श्रीसंजय की जय जयकार हो।

श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की जय जयकार हो। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी की जय जयकार हो जो कि दीनों के मित्र हैं। श्रीभूगर्भ गोस्वामी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी और श्रीराघव पंडित की जय जय जयकार हो। श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामी और श्रीयादव आचार्य की जय जयकार हो। सभी कामनाओं के कारण के धाम श्रीजीव गोस्वामी की जय जयकार हो और अति कृपालु हृदय वाले श्रीकृष्णदास कविराज की जय जयकार हो।

श्रीनिवास आचार्य ठाकुर की जय जयकार हो और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की जय जयकार हो जिनकी कृपालुता अनन्त थी। श्रीश्यामानन्द प्रभु की जय जयकार हो जिनका पूर्व में नाम दु:खी कृष्णदास था और जिनका चरित्र तेजस्वी था।

कृपा के धाम सभी वैष्णव जनों की जय जयकार हो, जिनके अनुग्रह से सब कामनाऐं पूर्ण होती हैं। सभी पाठकों की जय जयकार हो क्योंकि वे सभी सद्गुणों के भण्डार हैं। अब जो मैं बताना आरम्भ कर रहा हूँ कृपया ध्यान से सुनें।

श्रीगौरांग के नाम का जप करते हुए श्रीनिवास आचार्य ने गोस्वामीजनों के ग्रन्थों के साथ गौड़-देश की ओर यात्रा की। उनके साथ श्रीनरोत्तम दास ठाकुर थे जो किसी भी प्रकार से श्रीनिवास आचार्य से अलग नहीं थे और उनके साथ उनके अतिप्रिय श्रीश्यामानन्द प्रभु भी थे।

श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने साथ-साथ बिना किसी कष्ट के प्रसन्नतापूर्वक यात्रा की। समय समय पर वे नीलाचल जाने वाले तीर्थ यात्रियों से मिलते और इस कारण जंगलों में उनके साथ यात्रा करते। श्रीनिवास आचार्य उसी मार्ग पर चले जिस पर चलकर श्रीचैतन्य महाप्रभु नीलाचल गये थे।

श्रीनिवास आचार्य ने विभिन्न तीर्थ यात्रियों से उन स्थानों के बारे में प्रार्थना की जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षद ठहरते थे। तब वे व्यक्तिगत रूप से उन स्थानों पर गये। वनों से गुजरना उनके लिये आनन्द का विषय था और दल को किसी भी प्रकार की कोई कठिनाई नहीं होती थी।

चोरों ने लगाई सेंध

यद्यपि किसी तरह यह समाचार फैल गया कि कोई अमीर व्यक्ति अपने साथ अपरिमित धन लिये नीलाचल की ओर जा रहा है। राजा वीर हम्वीर द्वारा पोषित लुटेरों के एक दल को एक ज्योतिषी से ज्ञात हुआ कि छकड़ा गाड़ियां

अनमोल रत्नों से भरी हैं। उन्होंने राजा को बताया कि एक अमीर व्यक्ति अपने साथ छकड़ा गाड़ियों में अनमोल रत्न ले जा रहा है। राजा लुटेरों के दल से यह समाचार सुनकर अति प्रसन्न हो गया। अब उस राजा की गतिविधियों का संक्षेप में वर्णन होगा।

वीर हम्वीर और उसके चोर, विष्णुपुरा के लोगों के लिये सदा भय का स्रोत बने रहते थे। जैसा कि हमें अन्य इतिहासकारों से ज्ञात हुआ है उनकी असंख्य क्रियाऐं थीं। राजा हम्वीर ने अपने लुटेरों के दल को गाड़ियों पर आक्रमण करने की तैयारी करने को और गुप्त रूप से उस धन को महल में लाने को कहा। राजा ने आदेश दिया, 'उन्हें भयभीत करना परन्तु किसी का वध नहीं करना।'

राजा के आदेश पर लुटेरे विशाल संख्या में निकल पड़े जिससे विष्णुपुरा की अबोध जनता के हृदय में भय व्याप्त हो गया। राजा की तरह ही लुटेरों के दल को भी यात्रियों के साथ लूट-मार करने में आनन्द आता था। विष्णुपुरा के वन से बहुत दूर लुटेरों ने श्रीनिवास आचार्य के दल को देखा और कुछ दूर से उनका पीछा किया। उस समय श्रीनिवास आचार्य ने पंचकुटी के मार्ग से विष्णुपुरा में प्रवेश करने का निर्णय लिया।

श्रीनिवास आचार्य प्रसन्न हुए कि वे बिना किसी कठिनाई के अपने देश पहुँच गये। उन्हें कोई अनुमान नहीं था कि विष्णुपुरा का राजा एक चरित्रहीन व्यक्ति है। वे राजधानी में वन के निकट एक विशाल गांव में रुके जिसका नाम वन विष्णुपुर था। दिवस के समय उन्होंने अपना भोजन पकाया और पाया और अर्ध रात्रि तक का समय सामूहिक रूप से श्रीकृष्ण के पावन नामों का जप करते हुए व्यतीत किया।

राजा ही चोर है

जब उस रात वे लेट गये तो गहरी निद्रा में सो गये। निष्ठावान गांव वाले आश्चर्य में सोचने लगे कि श्रीकृष्ण उन अमीर व्यक्तियों को कैसे बचायेंगे। गाँव वालों ने कहा, 'वे सब निश्चिंत होकर राजा के भय से भयभीत हुऐ बिना गहरी नींद में सो रहे हैं। हम उन्हें चेतावनी नहीं दे सकते। हमारा राजा एक चरित्रहीन व्यक्ति है जो अपने लुटेरों को मामूली धन के लिये इधर-उधर भेजता रहता है।'

गांव वाले अचंभित हुए कि कोई अमीर व्यक्ति कैसे इतनी दूर तक धन से भरी गाड़ियों के साथ सुरक्षित यात्रा कर सकता है। किसी ने सुझाव दिया, 'यह अमीर व्यक्ति धर्मनिष्ठ है, इस कारण से लुटेरे इन्हें स्पर्श भी नहीं कर सकते।'

किसी ने विरोध में कहा, 'नहीं, लुटेरे निश्चित ही इनका पीछा कर रहे होंगे। कौन जानता है वे कहाँ हमला करें?'

गांव के लोगों ने धीमे स्वर में बात की और अपने अपने घरों में ही रहे। उस समय लुटेरे गाड़ियों को लूटने की योजना बना रहे थे। एक चोर ने कहा, 'मेरे लुटेरे मित्रो, क्यों न हम एक उत्तम योजना बनायें और उसी का अनुसरण करें। अगर हम कार्य में असफल हो गये तो चोरों की संगति में हमारा उपहास किया जायेगा।'

अंततः उन्होंने तमरग्राम के निकट आक्रमण करने का निर्णय लिया परन्तु उनका पहला प्रयास असफल हो गया। उन्होंने पुनः उस रात को रघुनाथपुर के पास प्रयास किया परन्तु उनके दुर्भाग्य ने उन्हें पुनः असफल कर दिया। यद्यपि जब श्रीनिवास आचार्य वन विष्णुपुर पहुँचे तो चोरों ने अपनी योजना के क्रियान्वन के लिये पर्याप्त उत्साह का अनुभव किया क्योंकि यह उन लोगों घर के बहुत निकट था।

एक चोर ने दूसरे चोर से कहा, 'अगर आज हम ये गाड़ियाँ चुरालें और राजा को दे दें तो राजा प्रसन्न हो जायेगा अन्यथा हमें मार देगा। वे सब एकत्र होकर बकरी, भेड़ और भैंस निवेदन कर चण्डी देवी की आराधना करने लगे।'

उनके चरणों में झुककर उन्होंने प्रार्थना की, 'कृपया हमें सफलता प्रदान करें और हमारी रक्षा करें।'

लुट गये ग्रन्थ

तब उन्होंने गाड़ियों का अता-पता लगाने और श्रीनिवास आचार्य के शिविर में सुरक्षा के इंतजामों का पता लगाने के लिये एक गुप्तचर को भेजा। गुप्तचर ने सब को सोता हुआ पाया तो उसने अन्य लुटेरों को बताया कि आक्रमण करने के लिये ये सबसे उचित समय है। लुटेरे छद्म वेश में वहाँ आये और सरलता से गाड़ियों को वन में दूर तक ले गये। रात्रि के समाप्त होने पर वे वन विष्णुपुर पहुँच गये और राजा को वह धन सौंपते हुए पूरी कहानी सुना दी।

लूट का समाचार फैलते ही विष्णुपुरा के भक्त लोग आपस में घटना की चर्चा करते हुए विलाप करने लगे। 'हमारे चरित्रहीन राजा ने एक महान् अपराध किया है।' एक व्यक्ति ने छिपकर दूसरे व्यक्ति से कहा। 'ये यात्री श्रीवृन्दावन से अपने धन के साथ भगवान् श्रीजगन्नाथ के दर्शन करने नीलाचल जा रहे थे। चरित्रहीन राजा ने धर्मनिष्ठ व्यक्ति को कष्ट दिया है तो वह निश्चित ही दण्ड भुगतेगा।'

राजा चोर प्रजा ईमानदार

एक अन्य व्यक्ति आने वाली प्रत्याशित विपत्ति के भय से चुपके से सुबकने लगा जो कि निश्चित ही वन विष्णुपुर को चारों ओर से निगलने वाली

थी। वह बोला, 'भारत की भूमि पर इस राजा के समान कोई चरित्रहीन नहीं है। कौन इस पापी को दण्ड देगा?'

एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'उसकी बुरी आदतों की वजह से, राजा निश्चित ही नर्क में कष्ट भुगतेगा और कभी नहीं बच पायेगा। इस व्यक्ति के बारे में सब कुछ बुरा है। मुझे आश्चर्य है कि कौन इसे बचायेगा? केवल भगवान् नारायण ही ऐसे व्यक्ति का कुछ भला कर सकते हैं। देखो वे इस कलियुग में कैसे घृणित व्यक्तियों पर अनुग्रह करते हैं! यद्यपि जगाई और मधाई का श्रीनवद्वीप में ब्राह्मण परिवार में जन्म हुआ था, परन्तु उनकी गतिविधियां कुख्यात थीं। अपनी नदिया लीला में भगवान् नारायण ने इन दो भाइयों को मुक्ति प्रदान की, जो पूर्व में भयानक प्रेत थे।

लोगों और देवताओं दोनों ने इन दोनों भाइयों की मुक्ति के लिये गौरांग प्रभु की प्रशंसा की। जगाई और मधाई महान भक्त में परिवर्तित हो गये। भगवान् की उत्तमोत्तम गतिविधियों का वर्णन कौन कर सकता है? भगवान् श्रीकृष्ण चैतन्य स्वयं प्रभु हैं और उन्होंने हर किसी को वह आभूषण प्रदान कर रखा है जो ब्रह्मा जी भी खोजते हैं। यद्यपि प्रभु गौरांग नीलाचल में अन्तर्धान हो गये थे। तो अब कौन इस चरित्रहीन व्यक्ति को मुक्ति प्रदान करेगा।'

किसी ने कहा, 'सुनो भाइयो, यह चरित्रहीन राजा प्रभु के किसी सच्चे भक्त द्वारा ही मुक्ति प्राप्त करेगा।' यद्यपि एक अन्य व्यक्ति ने उत्तर दिया, 'नहीं, यहाँ पर ऐसे भक्त के दर्शन होना सर्वथा असंभव है। क्यों ऐसा व्यक्ति पापियों की इस भूमि पर आएगा?'

एक विद्वान् ने उत्तर दिया, 'शास्त्र कहते हैं कि सच्चे भक्त सर्वदा भक्तों और अधर्मियों की भूमि पर यात्रा करने के लिये तत्पर रहते हैं और अपनी उदारता से वे मानवजाति को नरकवास से मुक्ति दिलवाते हैं। प्रभु अपने भक्तों के माध्यम से अपनी कामना पूर्ण करते हैं– एक भी कामना ऐसे सच्चे भक्त की दयालुता के बिना पूर्ण नहीं हो सकती।'

राजा के कल्याण की कामना

'मैं आशा करता हूँ कि कोई सच्चा भक्त विष्णुपुर आये,' एक आशावान व्यक्ति ने कहा। 'केवल मात्र उनके अनुग्रह से ही राजा के उत्पाती तौर-तरीके बदल जायेंगे। जब वीर हम्वीर वैष्णव बन जाएगा, इस स्थान से दुःख हट जाएगा।'

इस प्रकार धार्मिक लोगों ने भगवान् से राजा की दुष्टता नष्ट करने की प्रार्थना की। जब ईमानदार लोग राजा के उद्धार के लिये प्रार्थना कर रहे थे, राजा सफलतापूर्वक चुराये गये सामान को ग्रहण कर रहा था। लुटेरों की साहसिक

उपलब्धि की प्रशंसा करते समय राजा ने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें वस्त्र और आभूषण पुरस्कार रूप में प्रदान किये।

चोरी में ज्योतिषी भी शामिल

राजा हम्वीर समझ गया था कि छकड़ा गाड़ियाँ पश्चिम भारत से आयी हैं। उसने अपने आप से अनुमान लगाया, 'अनेकों अवसरों पर मैंने अति धन-दौलत प्राप्त की है परन्तु आज तक कभी इसके प्रति ऐसी तृप्ति का अनुभव नहीं हुआ। निश्चित ही ये गाड़ियां अनमोल भूषणों से भरी हुई हैं। गाड़ी के भीतर उसे वृन्दावन के गोस्वामी गणों के भूषणों के समान अनमोल ग्रन्थ मिले। यह अद्‌भुत दृश्य राजा के ध्यान में अटक गया और उसका हृदय परिवर्तित होने लगा। विस्मित होकर राजा ने अपने ज्योतिषी को बुलवाया और पूछा, 'तुमने इन गाड़ियों के आने की गणना कैसे की?''

ज्योतिषी ने उत्तर दिया, 'मेरे प्रिय राजा, मेरी गणना के अनुसार मैंने पाया कि गाड़ियों में अनमोल खजाना ही होना चाहिए था।'

'आप भयभीत न हों।', राजा ने कहा, 'आप की गणना सही है। वे गलत नहीं हैं क्योंकि इसमें कोई संशय नहीं कि ये ग्रन्थ सभी प्रकार से अनमोल आभूषणों के समान हैं। इन ग्रन्थों की प्राप्ति निश्चित ही मेरे लिए सौभाग्यशाली है।'

राजा तब लुटेरों की ओर मुड़ा और उत्सुकतावश उनसे पूछा, 'क्या तुमने किसी का वध किया? मुझे सत्य बताओ!'

लुटेरों ने कहा, 'सभी लोग सो रहे थे और उनमें से किसी को पता नहीं लगा कि हमने गाड़ियां चुरा ली हैं।' 'आपने हमें आदेश दिया था कि किसी का वध नहीं करना और वास्तव में हमें किसी का वध करने की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि हमने बिना किसी के ज्ञात हुए गाड़ियां चोरी कर ली थीं।'

राजा का हृदय परिवर्तन

जब राजा ने यह सुना तो वह चिन्तित हो गया। वह अपने ब्राह्मणों की ओर मुड़ा और उनसे बोला, 'अपने सभी कुकर्मों का फल मैं भुगतने वाला हूँ। मैंने कुछ महान् व्यक्तियों को दु:ख दिया है और मैं निश्चित ही इनके क्रोध की अग्नि में जलूँगा। अगर मुझे उस व्यक्ति से मिलने का सौभाग्य मिल जाये जो इन ग्रन्थों का स्वामी है तो मैं उनके चरणकमलों में शरणागत हो जाऊँगा। यद्यपि मैं एक पापी हूँ, किन्तु मुझे विश्वास है कि वे मुझे क्षमा कर देंगे।'

ग्रन्थों का प्रभाव महल में

राजा ने अनेक लोगों को उन धर्मनिष्ठ व्यक्तियों की खोज में भेज दिया जो छकड़ा गाड़ियों के साथ यात्रा कर रहे थे और इसी दौरान अत्यधिक जिम्मेदारी

से उन गाड़ियों और ग्रन्थों की सुरक्षा की। जब रानी ने पुस्तकों के बारे में सुना तो वह उन्हें देखने के लिए अत्यधिक उत्सुक हो गयी। महल के भीतर पुस्तकों की उपस्थिति ने वातावरण में एक प्रकार की आभा उत्पन्न कर दी थी। वास्तव में विष्णुपुरा में उज्ज्वल और प्रसन्नता भरे दिवसों का आरम्भ हो गया था और दुष्टात्माओं के हृदय में सकारात्मक परिवर्तन आ गया था।

राजा हम्वीर दिवस भर व्यक्तियों से मिलने को लालायित रहा जो कि उन पुस्तकों के स्वामी थे। एक समय जब राजा उन ग्रन्थों के बारे में विचार कर रहा था कि निद्रा की देवी उसके नेत्रों में उतर आयी। तब अपने स्वप्न में राजा ने एक स्वर्णिम रूप-रंग और तेजस्वी लक्षणों वाले व्यक्ति को देखा। अपने चन्द्र समान चेहरे पर मुस्कान लिए व्यक्ति ने राजा को बताया वह चिंता न करें क्योंकि उनकी कामना जल्दी ही पूर्ण होगी। जिस व्यक्ति के बारे में तुम सोच रहे हो वह तुमसे प्रसन्न होगा क्योंकि तुम जन्म जन्मान्तर से उसके समर्पित सेवक हो, व्यक्ति ने स्वप्न में कहा।

अब नींद खुली

स्वप्न तिरोहित हो गया और व्यक्ति अन्तर्धान हो गया और जब राजा नींद से जागा तब वह रोने लगा। वह बार-बार चिल्लाने लगा, 'मैनें यह क्या देख लिया?' और अपने आस-पास देखने लगा। कोई भी उसके व्यवहार को नहीं समझ सकता था। जब लुटेरे ग्रन्थों को दूर ले गये तो अचानक श्रीनिवास आचार्य की नींद टूट गयी।

उषाकाल में श्रीनिवास और अन्य भक्तगण ग्रन्थों को इधर-उधर खोजने लगे। छकड़ा-गाड़ियों को ढूंढ़ने में असफल होने पर वे अत्यधिक विलाप करके रोने लगे। श्रीनरोत्तम दास ने आत्मदाह करने का निश्चय किया और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने घोषणा कर दी कि वे धधकती अग्नि में प्रवेश करेंगे। मैं श्रीनिवास आचार्य के कष्ट का वर्णन कैसे कर सकता हूँ?

दल में यात्रा कर रहे अन्य व्यक्तियों ने निर्णय किया कि वे अब कभी घर वापिस नहीं जायेंगे। लूट का समाचार सब तरफ फैल गया। श्रीनिवास आचार्य और अन्य सभी दु:ख के सागर में डूब गए। जब वे प्रारम्भिक आघात से उबरे तो वे चर्चा करने लगे कि अब क्या करें।

अचानक एक रहस्यमय आकाशवाणी ने श्रीनिवास को बताया कि उन्हें राजा के महल में ग्रन्थ मिल जायेंगे तो तत्क्षण वे जायें और राजा से मिलें। इस पर श्रीनिवास आचार्य आनन्दित हो गये और साथ ही उन्हें अपने चारों ओर शुभ लक्षण अनुभव होने लगे। यह मानकर कि ये लक्षण स्वयं श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रकट किये गये हैं, श्रीनिवास आचार्य ने श्रीलोकनाथ गोस्वामी द्वारा दिये

निर्देशों के आधार पर श्रीनरोत्तम दास को खेतुड़ी भेजा था। उन्होंने श्रीश्यामानन्द प्रभु को अम्बिका के मार्ग से ओड़िशा भेजा था।

श्रीनिवास आचार्य ने निर्देश दिया, 'यदि ग्रन्थ मिल जाऐंगे तो मैं तुम्हें सूचित कर दूँगा और हम पुनः मिलेंगे। चिंता मत करो।'

श्रीनिवास आचार्य ने अपने दोनों मित्रों को विदा किया। विदा होने के समय पर उनकी उत्कंठा का वर्णन कौन कर सकता है? श्रीनिवास आचार्य के आदेश पर वे उत्कंठित हृदय से खेतुड़ी की ओर अग्रसर हुए। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की गतिविधियों को कौन समझ सकता है? उन्होंने पूर्व में ही श्रीसंतोष में आध्यात्मिक सामर्थ्य संचारित कर दी थी। श्रीनरोत्तम दास से मिलने पर खेतुड़ी के लोगों ने अपना दु:ख त्याग दिया।

श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द प्रभु के निर्जन स्थान पर रहने का प्रबन्ध किया गया। जब खेतुड़ी के प्रज्ञ व्यक्तियों ने ग्रन्थ चोरी होने के बारे में सुना तो वे बहुत लज्जित हुए।

अपने दो घनिष्ठ मित्रों को विदा कर श्रीनिवास आचार्य उदास हो गये। अपने सहयात्रियों को एक स्थान पर छोड़कर वे अकेले वन विष्णुपुर चले गए। कौन उस उत्कृष्ट हृदय के भाव को समझ सकता है जिसने ग्रन्थों की खोज में अकेले यात्रा की?

जिन लोगों ने उन्हें देखा वे आश्चर्यचकित हुए, 'इतना सुन्दर व्यक्ति विष्णुपुर क्यों आ गया है, क्या वह उपदेवता है या परम प्रभु का अवतार? हर कोई उनके आकर्षण से द्रवित हो गया।'

उत्सुकता के भाव में लोग श्रीनिवास आचार्य से मिलने आने लगे। एक ब्राह्मण के पुत्र श्रीकृष्ण वल्लभ ने जब श्रीनिवास आचार्य को देखा तो उसे दिव्य-प्रेम के लक्षण अनुभव हुए। वह श्रीनिवास आचार्य को दनौली गांव में अपने घर ले आया और स्वयं को उनके चरणकमलों में समर्पित कर दिया।

श्रीनिवास आचार्य ने अनेक प्रश्न पूछे और श्रीकृष्ण वल्लभ ने अपनी ओर से उचित उत्तर दिए। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि राजा नित्यप्रति श्रीमद्भागवत के पाठ का श्रवण करता है, श्रीनिवास आचार्य और श्रीकृष्ण वल्लभ राज दरबार में गए।

जब राजा ने श्रीनिवास को देखा तो वह अनायास ही अपने स्थान से उठे और अपने आपको सौभाग्यशाली मानकर श्रीनिवास को आदर रूप में सामने भूमि पर स्पर्श किया। राजा ने श्रीनिवास आचार्य को बैठने के लिये एक उत्कृष्ट स्थान का निवेदन किया परन्तु श्रीनिवास ने उनसे कहा कि अभी कोई प्रश्न न पूछे।

उन्होंने कहा, 'हे राजन्, जब भागवत का पाठ समाप्त हो जाए तो तुम मुझसे कोई भी प्रश्न पूछना और मैं उनका उत्तर दूंगा।'

पहुंच गये चोर राजा के पास

मन में यह सोचते हुए कहा कि यह व्यक्ति पुस्तकों का स्वामी है, राजा ने कहा, 'हम वैसा ही करेंगे जैसी आप की इच्छा होगी।' उसने स्वयं से कहा, 'ये मेरा सौभाग्य है कि यह व्यक्ति मेरे पास आया है तो मैं स्वयं को इनके चरणकमलों में समर्पित कर दूंगा।'

राजा का हृदय श्रीनिवास आचार्य के दर्शन मात्र से ही विशुद्ध हो गया था। अपने ब्राह्मणों से ग्रन्थों की चर्चा सुनने के बाद उसकी भागवत की शुद्ध टीका सीखने की इच्छा हुई तो उसने श्रीनिवास आचार्य से निवेदन किया, 'श्रद्धेय श्रीमान् मैं आप से टीका श्रवण करने की कामना रखता हूँ।'

श्रीनिवास तत्क्षण समझ गए कि राजा की बुरी इच्छाओं का शोधन हो गया है। श्रीनिवास ने पूछा, 'तुम भागवत का कौन सा अंश श्रवण करना पसंद करोगे?' राजा ने उत्तर दिया, 'कृपया भ्रमर-गीत का वर्णन करें।'

श्रीनिवास आचार्य राजा के सुझाव से प्रसन्न हो गए और राजा का एक सेवक उनके लिए ग्रन्थ ले आया। श्रीनिवास आचार्य ने बहुत सावधानी से भागवत का वर्णन किया और कुशलतापूर्वक उसके वास्तविक अभिप्राय को प्रकट कर दिया। श्रवण करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के गालों तक अश्रु बह निकले और राजा भी उत्साह के भाव में अभिभूत हो गया।

महल में भागवत पाठ हुआ प्रारंभ

राजा के पंडित श्रीदास चक्रवर्ती भी भागवत श्रवण करते हुए भावुक हो गए। जिसने भी वर्णन को सुना उसने एक-दूसरे से अपने प्रेम भावों को साझा किया। श्रीनिवास आचार्य स्वयं उत्साह की समाधि में खो गए।

तब राजा हम्वीर गए और श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में गिर गए। यद्यपि वर्णन समाप्त हो गया परन्तु राजा अपने भावों पर नियंत्रण न रख पाया। जब उसे धैर्य प्राप्त हुआ तो राजा ने विचार किया, 'मैंने इस व्यक्ति के प्रति महान अपराध किया है।'

दीनतापूर्वक वह अति दयनीय ढंग से रोते हुए अधीर हो गया। तब हम्वीर ने श्रीनिवास आचार्य के लिये निर्जन स्थान पर रहने का प्रबन्ध किया और सायंकाल में उनसे मिलने गया।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में झुककर राजा हमवीर ने अपने हाथ जोड़े और पूछा, 'हे गुरुदेव, कृपया मुझे बताएं कि आप किस कारण से यहाँ आए आये हैं।'

उत्तर देते समय श्रीनिवास आचार्य का हृदय हर्ष से झूम उठा, 'मैं तुम्हें कारण बताता हूँ उसे कृपया ध्यानपूर्वक सुनो। ब्रज के राजकुमार भगवान्

श्रीकृष्ण ने श्रीवृन्दावन में अपनी लीलाऐं पूर्ण कर ली हैं परन्तु एक उद्देश्य से वे अपने पार्षदों के साथ श्रीनवद्वीप में पुनः प्रकट हुए हैं। जो लीलाऐं प्रभु ने श्रीनवद्वीप में प्रकट कीं, उनका वर्णन शिव जैसे अंश-अवतारों द्वारा भी नहीं किया जा सकता।

वह शास्त्रों के सत्य के साकार रूप हैं और उन्होंने सम्पूर्ण विश्व को अपने संकीर्तन से मंत्र-मुग्ध कर दिया है। अपने अनेक पार्षदों के साथ उन्होंने कुछ समय तक गृहस्थ का जीवन बिताया और फिर श्रीकेशव भारती से संन्यास ग्रहण कर लिया। वे श्रीकृष्ण चैतन्य के नाम से विख्यात हो गए और मानव मात्र को नरकवास से मुक्ति दिलवाने के लिये उन्होंने सारे पवित्र स्थलों की तीर्थ यात्रा की।

अपने भक्तों के आनन्द के लिए प्रभु, भगवान् श्रीजगन्नाथ के धाम नीलाचल में रहे। प्रभु के दो प्रिय शिष्य गौड़-देश के राजा के मन्त्री थे। वे धनवान और अति विद्वान् व्यक्ति थे। उनका नाम था श्रीरूप और श्रीसनातन। सब कुछ त्यागकर वे श्रीवृन्दावन में वास करने चले गए। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर वे श्रीवृन्दावन में रहे और शास्त्रों के निर्देशों के अनुसार उन्होंने ब्रज के पावन स्थलों की पुनः खोज की। उन्होंने भगवान् कृष्ण के जीवन और लीलाओं पर अनेक ग्रन्थों की रचना की और उन ग्रन्थों में उन्होंने उनकी वृन्दावन लीलाओं को प्रकट किया। उन्होंने श्रीमद्भागवत और अन्य ग्रन्थों की टीका की भी रचना की।

अपने गुरु के आदेश पर मैं, गौड़-देश में जन्मा सबसे अयोग्य व्यक्ति, श्रीवृन्दावन गया। मैं श्री **गोपाल भट्ट गोस्वामी का शिष्य** बन गया और गोस्वामी गणों के ग्रन्थों का पठन किया। श्रीजीव गोस्वामी और अन्य उत्कृष्ट वैष्णवों ने मुझे बंगाल में ग्रन्थों का प्रचार करने का कार्य सौंप दिया। यद्यपि मैं ग्रन्थों के साथ सुरक्षित इस देश में पहुँच गया, परन्तु यहाँ निकट ही रात्रि के अन्धकार में वे चोरी हो गये। हमने ग्रन्थों को खोजने के सारे प्रयास किये और धैर्यपूर्वक सब स्थानों पर खोजा।

मेरे दल में श्रीनरोत्तम दास नाम का राजकुमार था, जो कि न केवल अति विद्वान् था परन्तु भौतिक संसार के प्रति सच्चा वैरागी भी था। मेरे दल में एक श्यामानन्द नाम का ज्ञानी व्यक्ति भी था। मैंने उन दोनों को अपने अपने गाँव भेज दिया। यहाँ से कुछ ही दूरी पर मैंने अपने शेष दल को रखा है, जो कि सभी ब्रजवासी हैं।

मैंने सब स्थानों पर ग्रन्थों की खोज की और जब मुझे ज्ञात हुआ कि तुम्हें श्रीमद्भागवत के पद श्रवण करना अतिप्रिय है तो मैं तुम्हारे महल में आ गया। अब मैंने तुम्हें सब बता दिया है जो मुझे ज्ञात है। ग्रन्थों के चोरी होने के विषय में इससे अधिक और मैं क्या कहूँ? मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है।

वो लुटेरा मैं ही हूँ

श्रीनिवास आचार्य के मृदु स्वर को सुनकर राजा उनके चरणकमलों में जा गिरा और अत्यधिक पश्चाताप के भाव से रोने लगा। राजा ने सिसकते हुआ कहा, 'मैं लुटेरों का राजा हूँ और मैंने असंख्य अपराध किये हैं। हे मेरे स्वामी, मुझे एक सन्देशवाहक से समाचार प्राप्त हुआ कि आप वनों में यात्रा कर रहे हो। यात्रियों से धन प्राप्त करने की संभावना सदैव मेरे हृदय को हर्षित करती है। आप के पास कितनी सम्पत्ति है यह मैंने अपने ज्योतिषी से जाना और उसकी गणना सही थी।

उसने कहा था, 'एक धनी व्यक्ति के पास बहुमूल्य आभूषण हैं और तुम बहुत कम प्रयास से उन्हें चुरा लोगे। मैंने अपने लुटेरों को गाड़ियों को चुराने भेजा परन्तु उन्हें आदेश दिया था कि किसी का वध न करें। चोर सरलता से गाड़ियों को ले आए और जब मैंने गाड़ियों को देखा तो प्रसन्नता से भर गया। मैंने गाड़ियों को खोला और जब मैंने भूषण समान ग्रन्थों को देखा तो मेरा हृदय परिवर्तित हो गया। मैं इन ग्रन्थों के स्वामी से मिलने को उत्सुक हो गया था इस कारण मैंने एक व्यक्ति को आपको खोजने के लिए भेजा।'

हे मेरे स्वामी, आप स्वयं भगवान् के स्वरूप हैं और दीनजनों के रक्षक हैं। किसी प्रकार से आप यहाँ इस कुपात्र को आशीर्वाद देने पधारे हैं। जिस क्षण मैंने आपके दर्शन किये, मैंने स्वयं को आपके चरणकमलों में समर्पित कर दिया।

हे स्वामी, कृपया मेरे अपराधों को क्षमा कर दीजिए और मुझ पर करुणा कीजिए। मेरे महान अपराधों के कारण कृपया मुझसे घृणा मत कीजिए और मुक्ति के मार्ग की व्यवस्था कीजिए।

यह कहकर राजा, श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में जा गिरा और अपने आँसुओं से उन्हें भिगो दिया। राजा की उत्कण्ठा को समझते हुए श्रीनिवास आचार्य ने तत्क्षण उन्हें आशीर्वाद प्रदान किया।

इसके बाद उन्होंने विभिन्न विषयों पर चर्चा करते-करते रात व्यतीत की और उत्तमोत्तम प्रेम का सागर सीमा के बन्धन से मुक्त हो अधिप्रवाहित हो गया। राजा, श्रीनिवास आचार्य के साथ आये व्यक्तियों को विष्णुपुर ले आए और उनके सुविधापूर्ण आवास की व्यवस्था कर दी। श्रीनिवास आचार्य ने स्नान किया और राजा के निष्कपट निवेदन पर वे ग्रन्थों का दर्शन करने गए।

वापिस मिल गये समस्त ग्रन्थ

ग्रन्थों को वापिस पाकर, श्रीनिवास आचार्य असीम आनन्द की अनुभूति से भर गए। राजा ने ग्रन्थों के पूजन का प्रबन्ध किया और फिर श्रीनिवास आचार्य

को महल के अंत:पुर में ले गये। उन के दर्शन पाकर रानी भी अत्यधिक प्रसन्न हो गईं। वे श्रीनिवास आचार्य के चरणों में झुकीं और अपने सौभाग्य के कारण भावुक होकर अश्रु बहाने लगीं। रानी को आशीर्वाद देकर श्रीनिवास आचार्य और राजा एक साथ निर्जन स्थान पर श्रीनिवास को प्रदान किए गए घर की ओर चल पड़े।

श्रीनिवास आचार्य के चरणों में गिर कर राजा बारम्बार विलाप करने लगा, 'पूर्व में किए गए अपराधों के कारण मेरी मनोदशा अतिव्याकुल है।'

श्रीनिवास आचार्य राजा की मन:स्थिति समझ गए और उसे यह कह कर आश्वस्त किया, 'चिन्तित मत हो। मैंने तुम्हें श्रीकृष्ण चैतन्य के चरणों में समर्पित कर दिया है। सदैव प्रभु के चरणकमलों की आराधना करो। स्वयं को महा अपराधी मान कर तुम्हें सदैव भगवान् के पावन नामों का गान करते हुए संकीर्तन करना चाहिए।'

महाप्रभु द्वारा प्रचारित महामन्त्र

इस प्रकार श्रीनिवास आचार्य ने **हरे कृष्ण महामन्त्र** उसके कानों में बोलकर राजा के दु:ख का निवारण किया। श्रीनिवास आचार्य ने मृदु स्वर में कहा, 'सदैव प्रभु के पावन नाम को सुनने और जप करने के प्रति सचेत रहो। विश्व के रक्षक **श्रीकृष्ण चैतन्य ने मानव-जाति को यह महा-मन्त्र उनके कल्याण के लिए प्रदान** किया है। प्रिय राजन्, जब तुम गोस्वामी गणों के ग्रन्थ पढ़ोगे तो उसके बाद मैं तुम्हें श्रीराधा-कृष्ण मन्त्र जप करने की दीक्षा दूंगा।'

इसके बाद श्रीनिवास आचार्य आध्यात्मिक सेवा की विभिन्न विधियां बताकर राजा को शांत करते रहे। आनन्दित हृदय से राजा और उसके परिवार ने स्वयं को श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में समर्पित कर दिया।

शीघ्र ही चोरी हुए ग्रन्थों की पुनर्प्राप्ति और राजा वीर हम्वीर की मुक्ति की गाथा सर्वविदित हो गई। श्रीकृष्ण वल्लभ, चक्रवर्ती दास और अन्य भक्तों ने भी श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का आश्रय ग्रहण किया। वास्तव में प्रसन्नता की एक नदी विष्णुपुर में बहने लगी और हर घर में भक्ति देवी प्रकट हो गईं। अन्य सब कार्यों का त्यागकर विष्णुपुर के सभी लोगों ने स्वयं को श्रीकृष्ण चैतन्य, श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य के विचारों में मग्न कर लिया।

वे सब भगवान् के महान पार्षदों श्रीगदाधर पंडित और श्रीवास ठाकुर आदि के नाम और गुणों से मंत्र-मुग्ध हो गए, वैष्णवजनों से मिलने की उनकी पिपासा में वृद्धि होती गई और वे श्रीनवद्वीप और श्रीवृन्दावन के दर्शन करने की प्रतीक्षा करने लगे। श्रीनिवास आचार्य की महिमा का गान करने में उन्हें जो आनन्द प्राप्त होता था वह मेरे वर्णन करने के सामर्थ्य से बाहर है। उन्हें अत्यधिक सौभाग्यशाली मानते हुए लोगों ने निरंतर हरि-नाम-संकीर्तन किया।

भावोद्रेक के क्षणों में राजा हाथ जोड़कर श्रीनिवास आचार्य के पास गए और कहा, ' हे स्वामी, आप ने हमारे सब दु:ख दूर कर दिए और हमें वह भूषण प्रदान किया है जो कि देवगणों के लिए भी विरल है।'

धाम में सूचित करो

अब तक सब को पता चल गया था कि ग्रन्थ चोरी हो गए हैं तो कृपया वृन्दावन में गोस्वामी गणों को पत्र लिखकर सूचित कर दीजिए कि ग्रन्थ मिल गए हैं और चोर पकड़ा गया है। यह मेरा विनम्र निवेदन है। गोस्वामी गणों को यह भी कह दीजिए कि इस अपराधी को क्षमा कर दें। ऐसा ही पत्र श्रीनरोत्तम ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभु को भी भेज दीजिए, जहाँ भी वे हैं।

राजा का निवेदन सुनने के बाद श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें बताया कि वे पहले से ही पत्र लिख चुके हैं और पत्र की प्रतिलिपि उन्हें दिखाई। राजा पत्रों से सन्तुष्ट हो गया और श्रीनिवास आचार्य ने आगे उनसे कहा कि जो व्यक्ति गाड़ियों के साथ आए थे वे शीघ्र ही वृन्दावन लौट जाएंगे। श्रीनिवास आचार्य ने उन व्यक्तियों को पत्र सौंपा और उनकी यात्रा के लिये सुझाव दिए। राजा ने उन व्यक्तियों के सामने दण्डवत् प्रणाम करके उनके प्रति सम्मान प्रदर्शित किया।

राजा बन गया परम भक्त

जिनमें ग्रन्थ आए थे राजा ने उन गाड़ियों में श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ और श्रीमदनमोहन के लिए असंख्य उपहार बँधवा दिए। उसमें भक्तों के लिए भी उपहार थे। इन सब भेटों को लेकर उन व्यक्तियों ने प्रत्येक से विदा ली और वृन्दावन के लिए यात्रा आरम्भ कर दी। वे उपहारों से भरी गाड़ियां लेकर वृन्दावन लौट आए और सर्वप्रथम श्रीजीव गोस्वामी को पत्र देने गए।

जब लोगों ने सम्पूर्ण वृत्तान्त विस्तार से बताया तो वृन्दावन में जो अंधकार व्याप्त हो गया था वह तत्क्षण हट गया। श्रीजीव गोस्वामी को श्रीनिवास आचार्य के पत्र से कुछ अतिरिक्त जानकारी प्राप्त हुई और तब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य एवं अन्य लोगों के सौभाग्य के लिए प्रार्थना की। उन्होंने राजा वीर हम्वीर द्वारा प्रदत्त भेंट उनके वास्तविक प्राप्तकर्ता को वितरित कर दीं। श्रीनिवास आचार्य द्वारा उस पत्र की प्राप्ति ने श्रीजीव को निरंतर आनन्द के भाव में बांधे रखा।

श्रीनरोत्तम एवं श्रीश्यामानन्द को सूचित किया

राजा हम्वीर ने अपने धर्मगुरु श्रीनिवास आचार्य के पत्र को खेतड़ी भेजने का प्रबन्ध किया। एक दिवस जब दु:ख से पूर्णत: पराजित श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय और श्रीश्यामानन्द प्रभु एक निर्जन स्थान पर बैठे थे उस समय

राजा के सन्देशवाहक खेतड़ी आए और पूछा, 'श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय कहाँ है? तत्काल उन्हें सूचित कर दीजिये कि वन विष्णुपुर से एक सन्देशवाहक श्रीनिवास आचार्य की ओर से एक पत्र लेकर आया है।'

कोई भागता हुआ श्रीनरोत्तम दास के पास ये समाचार लेकर आया, 'वन विष्णुपुर से एक व्यक्ति श्रीनिवास आचार्य का एक पत्र लेकर आया है।'

कहा नहीं जा सकता कि उन शब्दों ने नरोत्तम दास में कितना आनन्द भर दिया! जब सन्देशवाहक को श्रीनरोत्तम दास के सम्मुख प्रस्तुत किया गया तो श्री ठाकुर महाशय ने उसका कुशलक्षेम पूछा। सन्देशवाहक ने उत्तर दिया कि विष्णुपुर में सब ठीक है।

प्रसन्नतावश अश्रु बहाते हुए श्रीश्यामानन्द प्रभु ने सन्देशवाहक का आलिंगन कर लिया और सन्देशवाहक ने उत्सुकतापूर्वक वह पत्र उन्हें अर्पित कर दिया और फिर उन दोनों पुण्यात्मा भक्तों के चरणों में झुककर प्रणाम किया। पत्र के माध्यम से श्रीनरोत्तम और श्रीश्यामानन्द को जो भी घटना घटित हुईं थीं, उन सबका पता लग गया और परिणामस्वरूप वे बहुत प्रसन्न हुए।

नरोत्तम दास गए और अपने चचेरे भाई, राजा सन्तोष को बताया, 'वन विष्णुपुर में ग्रन्थ मिल गए हैं और श्रीनिवास आचार्य ने राजा हम्वीर को अपना अनुग्रह प्रदान किया है।'

सन्तोष ने किया उत्सव

ग्रन्थों की पुनर्प्राप्ति और राजा वीर हम्वीर की मुक्ति के समाचार ने श्री सन्तोष के चित्त को अत्यधिक तृप्त कर दिया। विद्वान् राजा सन्तोष ने विष्णुपुर के राजा के सन्देशवाहक के प्रति उपयुक्त सम्मान प्रदर्शित किया। सन्देशवाहक से सब कुछ विस्तृत रूप से जानने के बाद इस अवसर का आनन्द प्राप्त करने के लिये एक विशाल धार्मिक महोत्सव का प्रबन्ध किया। राजा सन्तोष के व्यवहार ने सबको आश्चर्यचकित और नरोत्तम दास को अत्यधिक प्रसन्न कर दिया।

श्रीश्यामानन्द प्रभु की उपस्थिति में श्रीनरोत्तम दास ने श्रीनिवास आचार्य को उत्तर लिखा। पत्र में उन्होंने अपनी ओर से शुभकामना व्यक्त की और श्रीश्यामानन्द को सूचित किया कि श्यामानन्द ओड़िशा जायेंगे। उन्होंने एक दूसरा पत्र राजा हम्वीर को उनके सौभाग्य के लिये बधाई के रूप में लिखा।

जब सन्देशवाहक वापिस विष्णुपुर लौट आया तो उसने दो पत्र राजा हम्वीर को दिए और जो भी सुना और देखा था उसका सारा वर्णन कर दिया। सन्देशवाहक के सौभाग्य की प्रशंसा करते हुए राजा, श्रीनिवास आचार्य के पास चले गए। उस समय श्रीनिवास आचार्य अपने शिष्यों को गोस्वामी गणों के

ग्रन्थों में से कुछ पढा रहे थे। वे ऐसे बैठे हुए थे मानों सूर्य अनेक ग्रहों से घिरा हुआ हो। यह दृश्य देखने में अत्यन्त सन्तोषजनक था।

दौड़ गयी खुशी की लहर

राजा हम्वीर श्रीनिवास आचार्य के पास गए और उनके सम्मान में भूमि पर प्रणिपात कर दिया। तब खड़े होकर श्रीनिवास आचार्य के सामने हाथ जोड़ते हुए राजा ने सूचित किया कि कैसे उस प्रातः दो पत्र खेतड़ी से आए हैं। राजा ने कहा 'श्रीनरोत्तम दास ठाकुर ने इस अधम पर अपनी करुणा बरसाई है और मुझे एक पत्र लिखा है।' श्रीनिवास आचार्य को प्रसन्नतापूर्वक एक पत्र देते हुए राजा ने कहा, 'आपके लिए भी एक पत्र है।'

श्रीनिवास आचार्य ने उच्चस्वर में अपना पत्र पढ़ा और जिस किसी ने भी श्रवण किया वह रोये बिना न रह सका। जब पत्र पढ़ लिया गया तब राजा ने श्रीनिवास आचार्य को वह समाचार बताया जो उसे सन्देशवाहक से प्राप्त हुआ था। उसने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि किस **उत्साह से राजा सन्तोष ने धार्मिक महोत्सव** रचाया और ब्राह्मणों को उपहार देकर ग्रन्थों के पुनः प्राप्ति की खुशियां मनाईं। हर कोई यह समाचार सुनकर प्रसन्न था और सबने राजा के सौभाग्य की प्रशंसा की क्योंकि उसे श्रीनरोत्तम दास ठाकुर से बधाई का पत्र प्राप्त हुआ था।

कुछ समय बाद राजा ने श्रीनिवास आचार्य से विदा ली और अपने निवास पर आ गये। एक एकान्त स्थान पर उन्होंने श्रीनरोत्तम दास का पत्र पुनः पढ़ा और आनन्दातिरेक के भावों से अभिभूत हो गए। तब रानी उनके पास आई और उनसे निवेदन किया कि जो पत्र में लिखा है उसे भी श्रवण करवाया जाए। राजा ने प्रसन्नतापूर्वक वह पत्र उसे पढ़कर सुनाया। पत्र की विषय-वस्तु ने रानी को अत्यधिक प्रसन्न कर दिया और वह बारम्बार भगवान् से प्रार्थना करने लगी, 'कृपया मुझ पापी के प्रति करुणा कीजिए जिससे मुझे श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के दर्शन प्राप्त हो जाऐं।'

वह ये कहते हुए राजा के चरणों में गिर गईं, 'अब आप के जीवन का कुछ अर्थ है क्योंकि आपको सरलता से श्रीकृष्ण के चरणकमलों की भक्ति रूपी भूषण प्राप्त हो गया है।'

नहीं! यह भूषण अति दुर्लभ है। राजा ने उत्तर दिया। 'मेरे जैसा पापी कभी भी कैसे इसे प्राप्त कर सकता है? मैंने अपना जीवन व्यर्थ हो गंवा दिया और मैंने असंख्य पाप किये हैं।'

इस पीड़ा में राजा बारम्बार श्रीकृष्ण चैतन्य का नाम पुकारते हुए भूमि पर गिर गये। तब उन्होंने अपनी भुजाएं उठाईं और प्रभु श्रीनित्यानन्द और श्रीअद्वैत प्रभु का नाम पुकारने लगे। वे श्रीगदाधर पंडित, श्रीवास पंडित, श्रीस्वरूप

दामोदर, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीमुकुन्द दत्त, श्रीगौरीदास, श्रीकाशीश्वर, श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी का नाम पुकार कर रोने लगे।

राजा की ग्लानि एवं सन्तुष्टि

गहरी सांस भरते हुए वे विलाप करने लगे, 'हे रानी, इस विश्व में मेरे जैसा बुरा व्यक्ति कोई नहीं है। नवद्वीप में भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु के रूप में प्रकट हुए और अपने पार्षदों के साथ अनेक उत्तमोत्तम लीलाएं रचाईं। उन लीलाओं को श्रवण करने के बाद मेरा हृदय उनकी महिमा को नहीं समझ सकता। इसके विपरीत मैं व्यापकता से उनकी आलोचना करता हूँ। हा! वह कितना शुभ पल था जब मैंने आदेश दिया था कि ग्रन्थ चोरी हो जाएं, क्योंकि इस कार्य के कारण मुझे श्रीनिवास आचार्य का अनुग्रह प्राप्त हुआ। उनमें योग्यता है कि वे मेरे पत्थर समान कठोर हृदय को पिघला कर मुझे श्रीचैतन्य महाप्रभु की करुणा के सिन्धु में तैरा सकें।'

मेरे आध्यात्मिक गुरु, श्रीनिवास आचार्य करुणा के असीमित स्रोत हैं और जो कोई भी उनका आश्रय ग्रहण करता है उसकी सभी कामनाएं पूर्ण होती हैं, आपको निश्चित ही उनकी करुणा प्राप्त होगी।

राजा ने रानी से इस प्रकार बोलना जारी रखा परन्तु ग्रन्थ विस्तार के भय से उनकी वार्ता का विस्तृत वर्णन नहीं किया जा सकता। अपना पत्र भेजने के बाद नरोत्तम दास श्रीनिवास आचार्य से एक बार पुनः भेंट करने के लिए उत्सुक हो गए।

अति स्नेह से श्रीनरोत्तम दास ने विचार किया, 'मैं श्रीनिवास आचार्य के संग के बिना कैसे जीवित रह सकता हूँ? कल प्रातः श्रीश्यामानन्द ओड़िशा के लिए प्रस्थान करेंगे।'

इस प्रकार सोचते हुए श्रीनरोत्तमदास की आँखों में अश्रु भर आए। नरोत्तम दास ठाकुर स्नेह के धाम हैं तो इस कारण उनके भावों का वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीनरोत्तम दास ने श्यामानन्द प्रभु को बताया, 'मैं जानता हूँ कि तुम कल प्रातः जल्दी ही प्रस्थान करोगे परन्तु मैं तुम्हें यथा शीघ्र नीलाचल में मिलना चाहता हूँ। मैं तुम्हारा पत्र प्राप्त होते ही यथा शीघ्र वहाँ चला आऊँगा।

श्रीनरोत्तम दास के आश्वासन के बाद श्रीश्यामानन्द का दुःख कम हो गया। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने वह दिवस और रात्रि उत्तमोत्तम प्रेम की भाव समाधि में व्यतीत की। अपने भावों का पुनर्प्रारम्भ करते हुए नरोत्तम दास ने श्रीश्यामानन्द को विदा किया और उत्कल चले गए।

श्रीनरोत्तम दास ने श्रीश्यामानन्द के साथ एक व्यक्ति को भेजा और उन्हें यात्रा के लिये कुछ धन प्रदान किया। प्रस्थान के समय श्रीनरोत्तम दास अत्यन्त अधीर हो गए। श्रीश्यामानन्द ने झुक कर श्रीनरोत्तम दास के समक्ष भूमि पर दण्डवत् प्रणाम किया और श्रीनरोत्तम दास ने भी वैसे ही उन्हें आँसुओं में भिगोकर आलिंगन कर झुक के प्रणाम किया। वास्तव में श्रीश्यामानन्द को जाता देख श्रीनरोत्तम दास का हृदय विदीर्ण हो रहा था।

खेतड़ी के सभी लोग श्रीश्यामानन्द को विदा करने आए। राजा सन्तोष और उनके सेवक विनम्रतापूर्वक श्रीनरोत्तम दास के समक्ष झुक गए। श्रीश्यामानन्द ने नेत्रों में प्रेम अश्रु भरकर राजा का आलिंगन किया। राजा पद्मावती नदी के तट तक चल कर गए और श्यामानन्द प्रभु की नाव में बैठने में सहायता करते हुए रोने लगे। श्रीश्यामानन्द प्रभु ने अपने भावों पर नियंत्रण किया परन्तु उन्होंने भारी हृदय से पद्मावती को पार किया।

नदी के दूसरी ओर श्रीश्यामानन्द ने स्नान किया और कुछ देर विश्राम किया। पद्मावती के प्रति आभार व्यक्त कर उन्होंने अपनी यात्रा पुनः आरम्भ की। वे कंटकनगर में श्रीगौरांग के श्रीविग्रह के दर्शन करने गए और उसके बाद नवद्वीप के मार्ग से शान्तिपुर गए। जिन जिन भक्तों पर उन्होंने करुणा बरसाई, उनका नाम यहाँ नहीं लिखा जा सकता।

अम्बिका दर्शन

अम्बिकानगर में वे आनन्दातिरेक से परिपूर्ण प्रेम के भाव में सीधा अपने आध्यात्मिक गुरु के निवास पर गए। वहाँ श्रीश्यामानन्द प्रभु ने श्रीनित्यानन्द प्रभु के श्रीविग्रह के दर्शन किए जिनकी उपासना श्रीगौरीदास पंडित द्वारा की जाती थी। अपने गुरु श्री हृदय चैतन्य के चरणकमल के दर्शन कर श्रीश्यामानन्द को जो आनन्द प्राप्त हुआ वह वर्णनातीत है।

श्रीहृदय चैतन्य ने स्नेहपूर्वक श्रीश्यामानन्द को श्रीकृष्णचैतन्य और प्रभु नित्यानन्द के श्रीविग्रह के दर्शन करवाए। दोनों प्रभु के दर्शन कर श्यामानन्द प्रभु आनन्दातिरेक से अभिभूत हो गये और उनके कपोलों पर अश्रु लुढ़क आए।

दोनों श्रीविग्रहों ने श्रीश्यामानन्द को अपनी महान करुणा प्रदान की। इन दोनों प्रभु की लीलाओं का वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ, जिन्हें श्रीगौरीदास पंडित ने अपनी सेवाऐं दी हैं?

पण्डित गौरीदास के साक्षात् विग्रह

श्रीगौरीदास विश्व भर में विख्यात थे क्योंकि भगवान् उनके प्रेम मे बँध चुके थे। श्रीगौरीदास प्रभु, श्रीवृन्दावन में श्रीकृष्ण के सखा सुबल के जैसे ही

प्रेम के धाम थे। श्रीकृष्ण के सखा सुबल अत्यधिक सुन्दर थे और उनके गुणों का आचार्यों ने गान किया है।

गौरीदास पंडित ही सुबल हैं

'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' में यह कहा गया है, 'उनका रंग-रूप स्वर्ण से भी अधिक चमकदार है, वे श्रीकृष्ण के परम मित्र हैं, वे एक दिव्य कण्ठ हार और पीताम्बरी धारण करते हैं, उनके नेत्र कमल के समान हैं और वे अपने मित्र को परम आनन्द प्रदान करते हैं। ऐसे श्रीसुबल की मैं आराधना करता हूँ।'

स्तवावली में यह कहा गया है, 'श्रीसुबल, श्रीराधिका के प्रेम रूपी फुहार में भीगे हुए हैं और कभी भी, यहाँ तक कि स्वप्न में भी श्रीगोकुलचन्द्र का हाथ नहीं छोड़ते।'

सख्यभेद में 'उज्ज्वल नीलमणि' ग्रन्थ में यह वर्णन है, 'क्या श्रीकृष्ण का कोई ऐसा प्रसंग है जिसमें सुबल का हस्तक्षेप नहीं हैं? उनमें ये योग्यता भी थी कि जो गोपी अपने प्रेमी से झगड़ कर अलग हो जाए तो उसे वापिस ले आते थे। वे वन के निकुंजों के भीतर श्रीकृष्ण की वैवाहिक लीलाओं के लिये यथोचित सेज तैयार करते थे। जब भगवान् थके हुए होते और पसीना बहाते हुए अपने प्रेमी के वक्षस्थल पर अपना शीश रखकर विश्राम करते तो वे श्रीकृष्ण को पंखा करते थे।'

यह सर्वविदित है कि गौरीदास सुबल के अलावा और कोई नहीं थे और वे श्रीकृष्ण चैतन्य और श्रीनित्यानन्द प्रभु के प्रिय पार्षद थे।

गौर-गणोद्देश-दीपिका कहती है कि **गौरीदास पंडित** और श्रीकृष्ण के सखा श्रीसुबल एक ही हैं और समान हैं। ग्रन्थ के अन्य भाग में यह वर्णन है कि श्रीकृष्ण की लीलाओं के सुबल वर्तमान में भगवान् चैतन्य की लीलाओं में श्रीगौरीदास के रूप में प्रकट हुए हैं और यह कि वे श्रीकृष्ण चैतन्य और श्रीनित्यानन्द के प्रिय पार्षद हैं। मैं उन गौरीदास की आराधना करता हूँ। सरखेल सूर्यदास एक विद्वान् थे और बहुत ही उदार भक्त थे। श्रीगौरीदास पंडित उनके भाई थे।

वे शालग्राम में रहते थे परन्तु अपने अग्रज की अनुमति लेने के बाद श्रीगौरीदास गंगा के तट पर अम्बिका आ गए थे। एक अंतर्मुखी भक्त के रूप में वे सदैव एकांत में रहते थे। प्रभु उनके विचार भली-भांति समझते थे। एक दिवस श्रीचैतन्य महाप्रभु शांतिपुर से गंगा को पार कर अम्बिका गए। उन्होंने पंडित को बताया, 'मैं शांतिपुर गया था और वहाँ से मैं नाव के द्वारा हरिनदी गांव गया। मैंने एक चप्पू के द्वारा नौका में नौकायन कर गंगा को पार किया। ये चप्पू है-लो-मैं इसे तुम्हें सौंपता हूँ। इस चप्पू से मानव जाति भौतिक संसाधनों के सागर को पार कर सकती है।'

यह कहकर प्रभु ने श्रीगौरीदास का आलिंगन कर लिया। तब प्रभु पंडित को अपने साथ नदिया ले गए और उन्हें अनेक अद्भुत गतिविधियों में व्यस्त कर दिया। श्रीगौरचन्द्र की योजना को कौन समझ सकता है? उन्होंने पंडित को एक गीत की धुन दी जो उन्होंने स्वयं रची थी।

कुछ दिवस बाद पंडित वापिस अम्बिका लौट आए, जहाँ वे प्रायः उस गीत को गाते थे जो उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु ने प्रदान किया था। गीत की हस्तलिपि में प्रभु के सुलेख के दर्शन करने मात्र से ही पंडित को अत्यधिक आनन्द प्राप्त होता था। अम्बिका जाने वाले सौभाग्यशाली यात्री श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा लिखित गीत की हस्तलिपि और उस चप्पू के दर्शन आज भी कर सकते हैं।

पंडित के सौभाग्य का वर्णन कौन कर सकता है जिनके लिये श्रीकृष्ण चैतन्य और प्रभु नित्यानन्द आत्मा और प्राण थे? वे निरंतर श्रीनिताई और श्रीनिमाई की स्तुति गान में लीन रहते थे और उनके चरणकमलों के अलावा और कुछ नहीं जानते थे। श्रीचैतन्य प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु उनके नेत्रों के प्रकाश थे। उनके पूर्ण भक्ति भाव को कौन समझ सकता है? प्रभु की एक झलक उन्हें अत्यधिक आनन्द प्रदान करती थी और विरह का एक भी पल उन्हें दुःख के अपार सागर में डुबो देता था।

विग्रह और साक्षात् गौर निताई

श्रीगौरीदास पंडित के मन को समझ कर प्रभु श्रीगौरहरि ने एक बार उन्हें नवद्वीप से नीम का एक पेड़ लाने को और उससे अपना और श्रीनित्यानन्द का श्रीविग्रह बनाने को कहा। उन्होंने गौरीदास को आश्वस्त किया कि काष्ठ पर उन्हें उभारने में उन्हें कोई असुविधा नहीं होगी और उनकी सभी कामनाएं पूर्ण होंगी। काष्ठ पर सावधानी पूर्वक प्रतिमा को उकेरते हुए पंडित आनन्दतिरेक में मग्न थे।

जिसने ये श्रीविग्रह बनाए हैं वह निश्चित ही प्रभु की करुणा ग्रहण करने वाला है। श्रीविग्रह स्वयं प्रभु की अभिव्यक्ति थी और भक्त केवल मात्र प्रभु की कामना पूर्ण करने वाले तुच्छ साधन हैं। श्रीविग्रह को निहारते हुए श्रीगौरीदास पंडित आनन्द से अभिभूत हो गए और अपने अश्रु नहीं रोक पाए। स्वयं को अत्यंत सौभाग्यशाली मानते हुए, उन्होंने श्रीविग्रह के प्रतिष्ठा उत्सव की तैयारी आरम्भ की और अपने कुछ प्रिय साथियों की सहायता ली। निर्धारित अनुष्ठान करते हुए उन्होंने स्नान किया और एक शुभ समय पर श्रीविग्रह का अभिषेक करके उन्हें सिंहासन पर पधरा दिया।

प्रभु के भक्त श्रीनित्यानन्द और श्रीचैतन्य प्रभु के श्रीविग्रहों को उपयुक्त रूप में विराजमान देखकर अति प्रसन्न हुए। दोनों श्रीविग्रह के सौन्दर्य ने सम्पूर्ण

विश्व को आनन्दित कर दिया परन्तु उनकी उपस्थिति की वास्तविक अनुभूति केवल श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुचरों के लिए सुरक्षित थी। यह सर्वविदित था कि श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीगौरीदास पंडित के प्रेम में बँधे थे। श्रीगौरीदास पंडित के आवास पर दोनों महाप्रभु ने जो लीलाऐं प्रकट कीं वे भी सर्वविदित हैं। मैं यथायोग्य तरीके से श्रीगौरीदास पंडित की गतिविधियों का वर्णन कैसे कर सकता हूँ?

प्रेम से भरे दोनों प्रभु ने एक बार मुस्कुराते हुए श्रीगौरीदास से कहा, 'आपकी गतिविधियों को कौन समझ सकता है जब आप स्वयं ही नहीं समझ सकते कि आप कैसे सदैव प्रेम और समर्पण में मग्न रहते हैं? हे सुबल, मेरे मित्र, क्या तुम्हें अपना पूर्व जन्म याद है? क्या तुम्हें याद है कि हम दोनों मिलकर आनन्दित होते हुए गायों को यमुना के तट पर ले जाते थे?'

विग्रह बने श्रीकृष्ण-बलराम

इस प्रकार कहते हुए श्रीविग्रहों ने स्वयं को श्रीकृष्ण और श्रीबलराम में परिवर्तित कर दिया। इस रूप में उन्होंने एक बैल का सींग, एक बांसुरी, एक छड़ी और एक मोर पंख पकड़ा और विविध भूषणों से शोभित वे ग्वाल बालों के वेश में अति सुन्दर लग रहे थे!

उनके सौन्दर्य को निहारते हुए श्रीगौरीदास पंडित आनन्दातिरेक के भावों में अभिभूत हो गए। केवल प्रभु की इच्छा से उन्होंने स्वयं को शांत किया और उसके बाद वे श्रीविग्रह को सिंहासन पर पधराते समय निरंतर निहारते रहे। जब दोनों प्रभु ने इस प्रकार अपनी लीलाएं प्रदर्शित कीं तो श्रीगौरीदास पंडित को उन्मादपूर्ण प्रेम की अनुभूति हुई।

एक दिवस श्रीगौरीदास ने भोजन बनाया और दोनों प्रभु को पाने के लिए निवेदित किया। श्रीचैतन्य प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीगौरीदास के मृदु निवेदन को सुना पर भोजन को स्पर्श किये बिना वे सामान्यतः शांत रहे। दोनों प्रभु के मनोभावों को देखकर श्रीगौरीदास ने दिखावटी क्रोध में कहा, 'अगर आप बिना भोजन के तृप्त हैं तो मुझे भोजन बनाने को बाध्य क्यों किया?'

यह तब था जब श्रीगौरीदास शांत रहे और तब दोनों प्रभु विनम्रता से बोले, 'गौरीदास, तुम लघु मात्रा में भोजन बनाकर कभी भी तृप्त नहीं हो सकते। तुम्हारा स्वभाव अधिक मात्रा में विविध प्रकार के भोजन बनाने का है। जब हमने तुम्हें ऐसे न पकाने का निवेदन किया तो तुमने कभी सुना ही नहीं। यद्यपि तुम्हारा अति उत्साही प्रयास था पर यह हमारे लिए देखने में बड़ा कष्टदायक था। याद रखो, जो भी अति सहजता से पकाया जा सके वही हमारे लिए पूर्ण तृप्ति प्रदान करने वाला होगा।'

'मैं पुनः कभी ऐसा नही करूँगा।' श्रीगौरीदास ने उत्तर दिया। 'आगे से मैं आपको केवल चावल और उबली हुई पालक ही निवेदन करूँगा।'

इस कथन ने दोनों प्रभु को हँसा दिया और ऐसा करने के बाद वे श्रीगौरीदास द्वारा पकाए गये भोजन को पाने लगे।

तुमने इतना स्वादिष्ट भोजन पकाया है कि हम अत्यधिक तृप्त हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीगौरीदास के पकाए भोजन की प्रशंसा में कहा।

विग्रह रूप में किया भोजन

उनके श्रीविग्रह के भोजन पाने का दृश्य श्रीगौरीदास के हृदय और नेत्रों में असीमित आनन्द भर लाया। एक दिवस श्रीगौरीदास दोनों प्रभु के विग्रहों को सुन्दर आभूषणों से शोभित करना चाहते थे। पंडित के विचार को जानकर दोनों श्रीविग्रहों ने स्वयं को विविध आभूषणों से शोभित कर लिया। जब उन्होंने मन्दिर में प्रवेश किया तो देखा कि सिंहासन पर श्रीविग्रह पहले से ही शोभित हैं। वे तत्क्षण भावोन्मत्त हो अभिभूत हो उठे और जब पुनः आत्मसंयमित हुए तो श्रीविग्रह पहले के जैसे ही साधारण वेश में थे।

मैंने पहले कभी आभूषणों को नहीं देखा था। श्रीगौरीदास ने सोचा, 'मैं अपने प्रभु के तन को आभूषणों से सुशोभित करना चाहता था, परन्तु यह नहीं जानता था कि किस प्रकार के आभूषणों का प्रयोग करूं।'

जैसे ही श्रीगौरीदास इस प्रकार से विचार कर रहे थे, प्रभु ने कहा, 'कृपया **पुष्पों से बने आभूषणों का अधिक प्रयोग किया करो।'**

तब श्रीगौरीदास ने श्रीगौर और श्रीनिताई को पुष्प आभूषणों से सुशोभित किया। प्रभु की ग्रीवा से चरणकमलों तक अद्‌भुत सौन्दर्य युक्त पुष्पों की लम्बी माला लटक रही थी। तब पंडित ने प्रभु के सामने एक दर्पण रख दिया। श्रीगौरीदास की आध्यात्मिक गतिविधियां सर्वविदित हो गई थीं, मैंने केवल संक्षेप में उनका वर्णन किया है।

श्रीहृदय चैतन्य दास

श्रीहृदय चैतन्य, श्रीगौरीदास पंडित के एक शिष्य थे। पूर्व में वे श्रीहृदयानन्द के नाम से विख्यात थे और वे भगवान् के महान् भक्त थे। मैं अब बताऊँगा कि कैसे श्रीहृदयानन्द का नाम हृदय चैतन्य पड़ा और कैसे उन्हें श्रीगौरीदास पंडित का अनुग्रह प्राप्त हुआ।

एक प्रातः श्रीगौरीदास पंडित, श्रीगदाधर पंडित से मिलने गए। एक प्रशस्त मुस्कान के साथ गदाधर पंडित ने हृदय से श्रीगौरीदास का स्वागत किया और कहा, 'क्योंकि मैंने प्रातः तुम्हें देख लिया है, मैं जानता हूँ कि ये दिवस मेरे

लिए शुभ होगा।' श्रीगौरीदास ने मधुरता से उत्तर दिया, 'नहीं ये मेरी भलाई के लिए है, जो मैं यहाँ आया हूँ।' श्रीगदाधर पंडित ने कहा, 'मैं कैसे आप को प्रसन्न करूँ?' श्रीगौरीदास ने उत्तर दिया, 'मैं अवश्य कुछ प्रार्थना करूँगा।' 'यहाँ सब कुछ तुम्हारा है।' श्रीगदाधर पंडित ने कहा। 'जो भी तुम्हें चाहिए, बेझिझक होकर ले जाओ।'

'मैं हृदयानन्द को ले जाना चाहता हूँ' श्रीगौरीदास ने कहा। जिस पर श्रीगदाधर पंडित ने हृदयानन्द को पुकारा। उल्लसित हृदय से हृदयानन्द आए और दोनों पंडितों के चरणकमलों में प्रणाम किया। श्रीगदाधर पंडित ने हृदयानन्द से बात की और उन्हें श्रीगौरीदास की देख-रेख में समर्पित कर दिया। जिस प्रकार श्रीगदाधर पंडित ने श्रीहृदय चैतन्य पर अपनी करुणा बरसाई, वह सर्वविदित है।

उन्होंने श्रीहृदय चैतन्य को बाल्यकाल से जागृत किया और उन्हें विभिन्न शास्त्र पढ़ाए। यद्यपि श्रीगदाधर पंडित गोस्वामी बालक के लिए अपने स्नेह से अभिभूत थे, फिर भी उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें श्रीगौरीदास को सौंप दिया।

भगवान् का अनुग्रह प्राप्त किये बिना कौन श्रीगदाधर पंडित और श्रीगौरीदास पंडित के लक्ष्य और गतिविधियों को समझ सकता है? श्रीगौरीदास पंडित ने श्रीगदाधर पंडित के साथ प्रभु की महिमा की चर्चा करते हुए कुछ समय व्यतीत किया। तब श्रीगदाधर पंडित से विदा लेते समय श्रीगौरीदास पंडित और श्रीहृदयानन्द घर चले गए।

दीक्षा

इसी बीच श्रीगौरीदास पंडित ने श्रीहृदयानन्द को दीक्षा मन्त्र प्रदान किया और उन्हें श्रीचैतन्य प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। श्रीहृदय चैतन्यदास ने वास्तव में स्वयं को प्रभु की सेवा में समर्पित कर दिया और इस से श्रीगौरीदास पंडित अत्यधिक आनन्दित हो उठे। श्रीगौरीदास पंडित की गतिविधियों को कौन समझ सकता है, जो सदैव उन्मादपूर्ण प्रेम की लहरों में ही मग्न रहते थे?

एक दिवस श्रीगौरीदास पंडित ने श्रीहृदयानन्द को बताया कि प्रभु का प्राकट्य दिवस आने वाला है, 'मैं अपने अनुचरों के निवास पर जाऊँगा और उत्सव के लिए सामग्री एकत्र करूँगा और शीघ्र वापिस लौट आऊँगा।' श्रीगौरीदास ने कहा। 'प्रभु की अन्तरंग सेवा में अति सावधान रहना।'

तब श्रीगौरीदास ने अपना घर त्याग दिया। उन्होंने कुछ समय एकान्त स्थान पर अन्य अनुचरों के साथ प्रभु की महिमा का गान करते हुए व्यतीत किया। उसी दौरान श्रीहृदयानन्द ने सोचना आरम्भ कर दिया, 'मेरे गुरुदेव आने में इतना

विलम्ब क्यों कर रहे हैं? उत्सव आरम्भ होने में केवल दो दिवस शेष रह गए हैं और काफी सामग्री एकत्र हो चुकी है।'

इन सभी बिन्दुओं पर चिन्तन करते हुए और अपने गुरुदेव के चरणकमलों का ध्यान करते हुए हृदयानन्द ने सर्वत्र इस महोत्सव का आमंत्रण भेजने का निर्णय किया। श्रीगौरीदास महोत्सव से मात्र एक दिवस पूर्व लौट आए और जब उन्होंने सुना कि श्रीहृदयानन्द उनकी अनुमति के बिना हर स्थान पर निमंत्रण भेज चुके हैं तो वे हृदय से प्रसन्न हो गए।

यद्यपि बाह्य रूप से उन्होंने अपनी अप्रसन्नता दिखाई और क्रोधपूर्वक श्रीहृदयानन्द को फटकार भी लगाई और कहा, 'जब अभी मैं जीवित हूँ तो तुमने स्वतंत्र रूप से कार्य क्यों किया। तुमने अपनी इच्छा से आमंत्रण पत्र भेज दिए तो मैं तुम्हारे साथ उत्सव में सम्मिलित नहीं होऊँगा।'

विशाल उत्सव

श्रीहृदयानन्द ने अपने दीक्षा गुरु के सम्मुख प्रणाम किया और गंगा के तट पर चले गए, जहाँ वे एक वृक्ष के नीचे रहने लगे। श्रीगौरीदास ने महोत्सव का प्रारम्भ किया और दूर-दूर से उच्चकोटि के विद्वान् भक्त एकत्र हो गए। एक धनी व्यक्ति ने नौका में बहुत मात्रा में खाद्य सामग्री भेजी। वह धनी व्यक्ति गंगा जी के तट पर श्रीहृदयानन्द से मिला और उन्हें सामग्री सौंप दी। तब श्रीहृदयानन्द ने श्रीगौरीदास को संदेश भेजा। बनावटी क्रोध में पंडित जी ने सन्देश वाहक से कहा कि वे श्रीहृदयानन्द से कहे कि यह खाद्य सामग्री अपने उत्सव में प्रयोग कर सकते हैं। अपने गुरु के आदेश पर श्रीहृदयानन्द ने प्रसन्नतापूर्वक उस सामग्री का प्रयोग करके उत्सव मनाना आरम्भ कर दिया।

उत्सव में पधारे श्रीविग्रह

विशाल संख्या में वैष्णव वहाँ एकत्र हुए और उनके सान्निध्य में श्रीहृदयानन्द ने अद्भुत संकीर्तन किया। जैसे ही खोल और करताल की ध्वनि आकाश में गूँजी, ऐसा प्रतीत हुआ मानो प्रसन्नता का सागर हिलोरें मार रहा हो। वैष्णवजन एक वृत्ताकार नृत्य करते हुए निरन्तर अश्रु बहा रहे थे। अचानक हृदयानन्द ने देखा कि दोनों प्रभु, श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु, दिव्य प्रेम के अवतार, वे भी वृत्त के भीतर नृत्य कर रहे हैं। उनके नृत्य करने की शैली अवर्णनीय थी और उनके सौन्दर्य ने सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित कर दिया था। दोनों प्रभु का मुख मण्डल अपने सौन्दर्य में चन्द्रमा को भी परास्त कर रहा था और हृदयानन्द यह देखकर प्रसन्नता से रो पड़े।

संकीर्तन का आनन्दपूर्ण स्वर सुनकर गौरीदास पंडित बहुत आनन्दित हो उठे, यद्यपि वे अपने स्थान पर ही थे। उन्होंने धीमे से श्रीगंगादास से कहा, 'यह पूजा का समय है, मन्दिर जाओ।'

जब श्रीगंगादास ने मन्दिर में प्रवेश किया, उन्होंने देखा कि सिंहासन पर कोई श्रीविग्रह नहीं थे। उन्होंने यह बात श्रीगौरीदास पंडित को बताई। यह जानकर कि दोनों प्रभु श्रीहृदयानन्द के प्यार में बँधे हैं, तो वे आनन्द से अभिभूत हो उठे। अपने मुखमंडल पर मुस्कान लिए श्रीगौरीदास हाथ में छड़ी लिये हुए खड़े थे। उन्होंने बाहरी क्रोध दिखाया यद्यपि वे हृदय में भीतर से प्रसन्न थे और गंगा के तट के निकट संकीर्तन सभा की ओर चल दिए। वहाँ उन्होंने अपने दोनों प्रभुओं को नृत्य करते देखा।

बनावटी क्रोध

पंडित के बनावटी क्रोध को देख दोनों प्रभु गुप्त रूप से मन्दिर को लौट गये। श्रीगौरीदास पंडित साक्षी थे कि कैसे श्रीचैतन्य महाप्रभु श्रीहृदयानन्द के हृदय में प्रवेश कर गए थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु को श्रीहृदयानन्द के हृदय में देखकर श्रीगौरीदास पंडित स्वयं के अश्रुओं पर नियंत्रण न रख पाए। वे अपलक उन्हें निहारते रहे। वे अपना बनावटी क्रोध भूल गए और अचेत अवस्था में उनके हाथों से छड़ी गिर गई। आनन्दातिरेक में प्रेम भाव से अपनी भुजाएें फैला कर श्रीगौरीदास वहाँ गए और श्रीहृदयानन्द का आलिंगन कर लिया।

'तुम कितने भाग्यशाली हो।' श्रीगौरीदास ने कहा। 'आज से मैं तुम्हें हृदय चैतन्य नाम देता हूँ, अर्थात् वह व्यक्ति जिसके हृदय में श्रीचैतन्य देव सदैव वास करते हैं।'

श्रीगौरीदास पंडित ने श्रीहृदय चैतन्य को अश्रुओं से भिगो दिया और शिष्य अपने गुरु के चरणों में विनत हो गए। तत्पश्चात वे सब मिलकर मन्दिर लौट आए। तब श्रीगौरीदास पंडित ने श्रीहृदय चैतन्य को श्रीविग्रहों की सम्पूर्ण सेवा सौंप दी।

सभी वैष्णव इस घटना से अति प्रसन्न हो गए और उन्होंने जिस महोत्सव का आयोजन किया वह वर्णन से परे था। श्रीहृदय चैतन्य पर प्रभु कृपा सर्वविदित हो गई। यही है श्रीहृदयानन्द को हृदय चैतन्य नाम प्राप्त होने की कथा।

श्रीहृदय चैतन्य श्रीश्यामानन्द प्रभु के प्राण और आत्मा थे। उनकी कृपा की एक बूँद ही जीव को अपनी इच्छाएं पूर्ण करने में सहायता कर सकती है। उन्होंने श्रीश्यामानन्द को हृदय से आशीष दिया और जब उन्होंने उत्कल के लिए प्रस्थान किया तो वे उदास हो गए। श्रीश्यामानन्द नेत्रों में अश्रु लिए अपने गुरु के चरणकमल में प्रणाम के लिए झुक गए।

श्रीश्यामानन्द श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु के सम्मुख मन्दिर की भूमि पर दण्डवत् लेट गए ताकि उनका तन रज में रम जाए। प्रभु के पार्षदों के प्रति सम्मान व्यक्त करके श्रीश्यामानन्द प्रभु अम्बिका को प्रस्थान की तैयारी करने लगे परन्तु वे अपने भावों के आधिक्य के कारण विदा लेने में असमर्थ थे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद भी भाव विभोर हो गए थे और श्रीश्यामानन्द को विविध प्रकार से शांत करने का प्रयास करने लगे। सभी ने प्रार्थना की कि आप, उत्कल में श्रीचैतन्य महाप्रभु को अपनी भक्ति का समर्पण करने के पश्चात् अम्बिका लौट आना।'

श्यामानन्द को भेजा उत्कल

तब श्रीश्यामानन्द अपने गुरु की स्मृतियों को अपने हृदय में संजोए उत्कल के लिए निकले पड़े। यात्रा के मध्य श्रीश्यामानन्द प्रभु गौर-निताई की महिमा का ही गान करते। वे प्रेम में विक्षिप्त से हो गए और अन्य यात्रियों को भी उसी प्रेममय पागलपन में उलझा दिया। यहाँ तक कि अति विधर्मियों ने भी जब श्रीश्यामानन्द को देखा तो स्वयं को अत्यन्त सौभाग्यशाली समझने लगे और इस कारण उन्होंने भी उनका आश्रय ग्रहण किया।

वहाँ गौड़-देश के मध्य में दण्डेश्वर नामक एक गांव था और पूर्व में कृष्णमण्डल का वहाँ भी निवास था। बाद में उन्होंने उत्कल जाने का निश्चय किया। दण्डेश्वर में जो अद्भुत लीलाएं रचाई गईं, मैं उनका वर्णन कैसे कर सकता हूँ? श्रीश्यामानन्द प्रभु ने अपनी यात्रा के अन्तर्गत उस गांव से होकर जाने का मार्ग चुना और हर कोई उन्हें देखकर प्रसन्न था। वहाँ से वे धारेन्दा गांव गए जहाँ उन्होंने अनुभव किया कि उन्हें श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को पत्र भेजना चाहिए। उन्होंने अपनी यात्रा का सम्पूर्ण वर्णन करते हुए दो पत्र लिखे। श्रीश्यामानन्द प्रभु ने एक सन्देशवाहक के द्वारा पत्र भेजे। पत्र में उनके प्रति प्रेम और समर्पण था और पत्रों में यह तर्क दिया कि वे अपनी उपस्थिति से उत्कल को सन्तुष्ट कर चुके थे।

जब श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को श्रीश्यामानन्द का पत्र प्राप्त हुआ, तो उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक अपने सभी पार्षदों की उपस्थिति में उस पत्र को पढ़ा। श्रीनरोत्तम दास ने तब सन्देशवाहक को श्रीनिवास आचार्य के पास भेजा, जो अभी भी विष्णुपुरा में ही थे। इसके बाद श्रीनरोत्तम दास ने नवद्वीप में अनेकों स्थानों पर जाना आरम्भ कर दिया।

विष्णुपुर से प्रस्थान

जब उन्हें श्रीश्यामानन्द द्वारा भेजा पत्र प्राप्त हुआ तो श्रीनिवास आचार्य आनन्दातिरेक के भावों से भरकर उत्साहित हो गए। उन्होंने पत्र पढ़ा, पुनः पढ़ा और उसकी विषय-वस्तु का अपने पार्षदों से वर्णन किया। राजा वीर हम्वीर ने श्रीनिवास आचार्य से श्रीश्यामानन्द प्रभु का पत्र ले लिया और अपने मस्तक से स्पर्श किया। श्रीश्यामानन्द प्रभु के गुणों का श्रवण करने मात्र से ही वे उनसे मिलने को उत्सुक हो गए। श्रीनिवास आचार्य, राजा की उत्सुकता देखकर

प्रसन्न हो गए। तब उन्होंने राजा को बताया कि वे श्रीखण्ड और याजिग्राम जायेंगे।

राजा ने कहा, 'वन विष्णुपुर आप की उपस्थिति से गरिमामय हो उठा है। आप के बिना यह पुनः वन के समान बन जायेगा।'

श्रीनिवास आचार्य ने कहा, 'चिन्ता मत करो, मैं शीघ्र विष्णुपुर लौट आऊँगा।' उत्तर में राजा ने निवेदन किया, 'इस कुपात्र को भी अपने साथ ले चलिए।'

आचार्य ने कहा, 'नहीं, अभी नहीं।'

राजा ने कहा, 'मैं जानता हूँ कि मुझे आप को रोक कर नहीं रखना चाहिए। परन्तु इस विषय में उपयुक्त व्यवहार करने में मैं असमर्थ हूँ।'

राजा विरह में अनियंत्रित होकर सुबक रहा था तो श्रीनिवास आचार्य को विविध प्रकार से उन्हें शान्त कराना पड़ा। आचार्य को छोड़ कर राजा महल में आ गए और रानी से मिले, जो व्याकुल होकर विलाप करते हुए बोलीं, 'अब सम्पूर्ण विष्णुपुर अन्धकार में डूब जायेगा।'

राजा ने उत्तर दिया, 'इस समय उन्हें जोर देकर यहाँ रोकना असम्भव है।'

रानी ने कहा, 'मैं यह जानती हूँ, परन्तु उनके बिना हम कैसे रहेंगे?'

यह कहकर रानी रोने लगी। श्रीवीर हम्वीर ने स्वयं को शान्त किया और श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख लौटने से पूर्व रानी को भी सान्त्वना दी। राजा ने श्रीनिवास आचार्य के विष्णुपुर से प्रस्थान के सारे प्रबन्ध किए। जब सब कुछ तैयार हो गया तो राजा ने श्रीनिवास आचार्य से अपने महल में पधारने का निवेदन किया। रानी की श्रीनिवास आचार्य के अन्तिम बार दर्शन करने की प्रसन्नता किसी के भी वर्णन के सामर्थ्य से बाहर थी। वे श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख भूमि पर दण्डवत् लेट गईं और उनके विदा होने के समय वे दुःख के अगाध सागर में डूब गईं।

श्रीनिवास आचार्य राजा और रानी के समर्पण भाव से अति द्रवित हो गये और उनसे विदा लेकर अपने निवास पर आ गए। जब यह समाचार फैल गया कि श्रीनिवास आचार्य याजिग्राम जायेंगे तो वन विष्णुपुर के निवासी उदास हो गए। वे सब असहाय होकर रोने लगे।

उन्होंने अपना दुःख यह कहते हुए प्रकट किया, 'दुर्भाग्य से हम उनको विष्णुपुर से जाने से रोकने के बारे में कुछ सोच भी नहीं सकते।'

श्रीनिवास आचार्य के आसपास एक विशाल जनसमुदाय एकत्र हो गया क्योंकि विष्णुपुर के प्रत्येक व्यक्ति ने स्वयं को उनके चरणकमलों में समर्पित कर दिया था। हर कोई जाते हुए अन्तिम बार उन्हें देखना चाहता था।

श्रीनिवास आचार्य ने अनेक उपहारों के साथ वन विष्णुपुर से अपनी यात्रा आरम्भ की। राजा और उनके कुछ व्यक्ति कुछ दूरी तक उनके साथ गए परन्तु तब श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें घर वापिस लौट जाने का आदेश दिया। इस विरह के कारण राजा के मनोभाव का कौन वर्णन कर सकता है?

राजा और उनके व्यक्ति वन विष्णुपुर वापिस लौट आए और श्रीनिवास आचार्य ने याजिग्राम की ओर बढ़ना जारी रखा। सम्पूर्ण क्षेत्र के लोगों को विदित हो गया कि श्रीनिवास आचार्य याजिग्राम के लिये प्रस्थान कर गए हैं। इसके बाद श्रीनिवास आचार्य के अपने घर याजिग्राम लौटने के समाचार ने उस गांव के लोगों में आनन्द भर दिया। वे लक्ष्मीप्रिया देवी को बताने के लिए दौड़े जो कि अपने पुत्र के लिये स्नेह के कारण अभिभूत हो उठीं।

याजिग्राम पहुँचे

याजिग्राम पहुँचने पर श्रीनिवास आचार्य सर्वप्रथम अपनी माँ से मिलने पहुँचे। वे उनके चरणों में झुके और लक्ष्मीप्रिया अपने पुत्र का मुख देखकर अति प्रसन्न हो गईं। उनकी प्रसन्नता बन्धन रहित थी। वे ऐसे उल्लसित हो गईं मानों एक गरीब को अचानक बहुत धन-सम्पदा प्राप्त हो गई हो।

याजिग्राम के लोग श्रीनिवास आचार्य से मिलने प्रसन्नतावश लक्ष्मीप्रिया के निवास की ओर दौड़े चले आए। श्रीनिवास आचार्य ने तब सब को अपनी मधुर मुस्कान और करुणामयी वाणी से तृप्त किया। जिसके परिणाम स्वरूप एक व्यस्त दिवस के बाद एक शान्त आनन्दित सन्ध्या घिर आई। अपने घर में बैठकर श्रीनिवास आचार्य और उनके शिष्य याजिग्राम के वातावरण को एक अद्‌भुत सौन्दर्य प्रदान कर रहे थे।

श्रीनिवास आचार्य अपने शिष्यों के साथ धार्मिक शास्त्रों की चर्चा कर रहे थे और हर कोई अति सन्तुष्ट था। वहाँ के विद्वत्जनों का श्रीनिवास आचार्य के प्रति अति स्नेह था और वे उनके निवास पर एकत्र हो गए। श्रीनिवास आचार्य ने अति उत्साह से उन सबका स्वागत किया और आदर सहित बैठने का स्थान दिया।

निपुण वैष्णवों से याजिग्राम की घटनाओं के बारे में पूछा तो वे भी श्रीनिवास आचार्य के सुहृद स्वागत से अति प्रसन्न थे। श्रीनिवास आचार्य ने वृन्दावन में अपने जीवन की घटनाओं के बारे में और स्वप्न में रूप और सनातन के अनुग्रह की उपलब्धि के बारे में उन्हें बताया। उन्होंने ये भी बताया कि कैसे श्रीगोपालभट्ट ने उन पर अनुग्रह किया और कैसे उन्होंने गोस्वामी गणों के ग्रन्थ पढ़े।

उन्होंने उन्हें बताया कि कैसे वे श्रीवृन्दावन के अनेक पावन स्थलों पर गए और कैसे वे गोस्वामी गणों के ग्रन्थों के साथ बंगाल की यात्रा पर गए। उन्होंने

इस सम्बन्ध में बताया कि कैसे वन विष्णुपुर में ग्रन्थ चोरी हो गए थे और बाद में प्राप्त हो गए थे और कैसे उन्होंने याजिग्राम लौटने का निर्णय लिया।

एक एक करके अन्तर्धान

हर वैष्णव ने श्रीनिवास आचार्य के वर्णन का श्रवण करते हुए एक अलग भाव अनुभव किया। अत्यधिक कठिनाई से उन्होंने अपने मनोभावों पर नियंत्रण किया और केवल आचार्य के मुख मण्डल की ओर देखते रहे।

जब श्रीनिवास आचार्य ने स्थानीय वैष्णव प्रभुजनों के बारे में पूछा तो गहरी सांसे लेते हुए भक्तों ने बताया, 'श्रीनरहरि ठाकुर वास्तव में मृत प्राय: प्रकट हुए। वे अर्ध-चेतन अवस्था में भूमि पर गिर गए और निरन्तर अश्रु बहाते हुए विलाप कर रहे थे। श्रीरघुनन्दन और अन्य भक्तों ने प्रभु की महिमा का निरन्तर गान किया। श्रीनरहरि ठाकुर की अवस्था देखकर कौन सहन कर सकता है? इसका जीव पर जो प्रभाव था उसके बारे में क्या बात कही जा सकती है, उनका विलाप पत्थरों को भी पिघला रहा था और काष्ठ का भी भेदन कर रहा था।'

अभी कुछ समय पूर्व ही श्रीगदाधर दास नवद्वीप से कंटक नगर आए। वे निरन्तर प्रभु की महिमा का गान करते थे और उनको ऐसे देखकर हमारा हृदय विदीर्ण हो जाता। कभी वे विलाप करते और कभी शांत हो जाते हुए श्रीगदाधर पंडित की महिमा का गान करते। कभी वे श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा का गान करते और कभी श्रीवास पंडित के नाम की। कभी वे रोते, 'हे गौरांग प्रभु, कब तक मुझे इस संसार को झेलना पड़ेगा?' इस दयनीय अवस्था में श्रीगदाधर दास मृत व्यक्ति की भांति भूमि पर गिर जाते। वे सदा एकांत में, बिना भोजन और पानी के रहते और उनका तन प्रभु के विरह की अग्नि में जलता रहता।

हे श्रीनिवास, प्रभु के श्रीनवद्वीप के पार्षद एक-एक करके इस संसार से अन्तर्धान हो गए। हम कठिनता से यह हृदय-विदारक समाचार कह रहे हैं। यहाँ तक कि विष्णुप्रिया-देवी भी संसार से अन्तर्धान हो गई हैं।

यह सुनकर श्रीनिवास आचार्य अचेत होकर भूमि पर गिर गए और उनका शरीर कठोर हो गया। वहाँ उपस्थित वैष्णव उनकी दयनीय स्थिति देखकर निराश हो गए। देर रात्रि में श्रीनिवास आचार्य सचेत हुए परन्तु उनकी ऐसी अवस्था थी कि एक पत्थर भी उनका रुदन देखकर पिघल जाए।

श्रीगोपाल दास नाम के एक व्यक्ति ने श्रीनिवास आचार्य को अपनी गोद में उठा लिया और शांत करने का प्रयास किया। श्रीनिवास धीरे-धीरे शांत हो गए। रात को स्मरण करने के लिए उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के गुणों और लीलाओं की चर्चा की। घोर रात्रि में सभी भक्त और श्रीनिवास आचार्य गहरी निद्रा में लीन हो गए।

श्रीअद्वैत द्वारा स्वप्नादेश

प्रेम की मूर्ति श्रीअद्वैत आचार्य अति सुन्दर स्वरूप में श्रीनिवास के स्वप्न में प्रकट हुए। उनके नेत्र आकर्ण फैले हुए थे और उनके मुख का सौन्दर्य कोटि चन्द्रमाओं को परास्त करने वाला था। उनकी लम्बी भुजाएं स्वर्णिम कमल पुष्प के नाल से भी श्रेष्ठ थीं और उन्होंने प्रेम से श्रीनिवास को अपनी गोद में उठा लिया। श्रीअद्वैत आचार्य ने इस प्रकार व्यवहार किया कि श्रीनिवास के हृदय के भीतर की जलती अग्नि शायद मंद हो जाए।

अपना अति स्नेह दिखाते हुए श्रीअद्वैत आचार्य ने कहा, 'तुम अनेक पतित आत्माओं को मुक्ति प्रदान करोगे। तुम्हें अवश्य ही हर जगह श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं का प्रचार करना चाहिए। अनेक विद्वान् तुम्हें सुझाव देंगे कि तुम विवाह कर लो और तुम्हें ये विवाह निःसंकोच कर लेना चाहिए।'

यह कहकर श्रीअद्वैत आचार्य अन्तर्धान हो गए और भोर हो गई। श्रीअद्वैत आचार्य द्वारा उनपर की गई कृपा का स्मरण करते हुए श्रीनिवास अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख पाए। अपने प्रातः के दैनिक नित्य कर्म पूरे करके श्रीनिवास आचार्य शीघ्रता से श्रीखण्ड के लिये चल पड़े।

श्रीखण्ड आगमन

श्रीनिवास आचार्य ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीखण्ड में प्रवेश किया और सीधा मन्दिर में श्रीगौरचन्द्र के दर्शन करने चले गए। सम्मान व्यक्त करने के लिए वे श्रीविग्रह के सम्मुख भूमि पर दण्डवत् लेट गए ताकि उनकी स्वर्णिम त्वचा रज से परिपूरित जाए। श्रीनिवास आचार्य के आगमन को सुनकर श्रीरघुनन्दन, श्रीनरहरि सरकार ठाकुर को सूचित करने चले गए।

यद्यपि श्रीनरहरि ठाकुर अति दयनीय स्थिति में थे किन्तु वे श्रीनिवास के आगमन का समाचार सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हो गए।धीरे से वे श्रीरघुनन्दन से बोले, 'श्रीनिवास को मेरे पास लाओ। वह मेरे नेत्रों की पीड़ा शांत करेंगे।'

श्रीरघुनन्दन इतने आनन्दित हो गए थे कि वे दौड़कर श्रीनिवास के पास गए, जो धैर्यपूर्वक श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में प्रतीक्षा कर रहे थे। श्रीरघुनन्दन सभी श्रेष्ठ गुणों से परिपूर्ण रत्न के समान थे और श्रीनिवास आचार्य के दर्शन कर उन्हें मानो नवीन जीवन प्राप्त हो गया था।

श्रीनिवास आचार्य श्रीरघुनन्दन के सम्मुख झुके, जिन्होंने तत्क्षण अति स्नेह से उन्हें आलिंगन में ले लिया। वास्तव में दोनों भक्त अति भावुक हो गए थे। अश्रुओं से भीगे हुए श्रीनिवास आचार्य दीर्घकाल तक श्रीरघुनन्दन के आलिंगन में बँधे रहे।

इसके पश्चात् श्रीरघुनन्दन, श्रीनिवास को श्रीनरहरि सरकार ठाकुर के पास ले गए। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरहरि सरकार ठाकुर को एक एकान्त स्थान पर बैठे पाया और यद्यपि वे अति दुर्बल हो गए थे, परन्तु वे उनके असाधारण सौन्दर्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गए। उनके मुख को देखकर लगा मानों वे चन्द्रमा से सुन्दरता ग्रहण कर रहे हों, यद्यपि वह मुख फीका पड़ चुका था मानों कमल का पत्ता पानी से वंचित हो गया हो। उनकी प्रेम मग्न आँखें अश्रुओं से पूर्ण रूप से भर गईं।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरहरि प्रभु के मुख को निहारा और तत्पश्चात भूमि पर लेट कर उनके चरणकमलों में झुक गए। श्रीनरहरि ठाकुर ने श्रीनिवास का स्वागत किया और उन्हें अपने पुत्र के रूप में सम्बोधित कर उन्होंने उन्हें अपनी गोद में उठा लिया। अपने वक्ष से उन्हें जकड़ कर श्रीनरहरि ठाकुर अश्रु बहाने लगे। श्रीनिवास आचार्य को अपने अश्रुओं से स्नान कराकर श्रीनरहरि ठाकुर ने उन्हें अपने पास बिठा लिया। तब उन्होंने श्रीनिवास के तन को सहलाया और बहुत सी बातें पूछीं।

श्रीनरोत्तम ठाकुर कहां हैं

जो भी घटित हुआ था श्रीनिवास आचार्य ने उस सबका विवरण कह सुनाया और श्रीनरहरि ठाकुर को सूचित कर दिया कि श्रीनरोत्तम दास ठाकुर नीलाचल गए हैं। उस समय श्रीनरहरि ठाकुर के मस्तिष्क में क्या चल रहा था, इसका वर्णन कौन कर सकता है? उन्होंने श्रीनिवास से कहा, 'मैं श्रीनरोत्तम के दर्शन करना चाहता हूँ। यह मेरी कामना है। उसे यहाँ आना होगा क्योंकि उन्हें यहाँ अनेक कार्य पूर्ण करने हैं। तुम्हें और श्रीनरोत्तम को संकीर्तन करना चाहिए क्योंकि यह तुम्हें प्रभु के विरह की जलन की अनुभूति से शान्ति प्रदान करेगा। यह अच्छा है कि तुम यहाँ मुझे सान्त्वना देने आये हो। मैं तुम्हारे लिये दीर्घ आयु की कामना करता हूँ ताकि तुम सब जगह आध्यात्मिक साहित्य का वितरण कर सको। शीघ्र ही एक ऐसा समय आयेगा जब लोग अपना धर्म त्याग देंगे और स्वतंत्र हो जायेंगे। उन्हें गुरु, श्रीकृष्ण और वैष्णवों के महत्व का पता नहीं होगा।'

तुम इन सब विधर्मियों को मोक्ष प्रदान करोगे और तुम भक्ति-जगत् में विख्यात हो जाओगे। क्योंकि तुम श्रीकृष्ण चैतन्य के एक चिरकालिक सेवक हो, प्रभु तुम्हारी सारी मनोकामनाऐं पूर्ण करेंगे। सौभाग्यवश तुम्हारी माँ एक महान भक्त हैं। याजिग्राम में कुछ समय व्यतीत करो और पूरी निष्ठा से उनकी सेवा करो। यह उनकी इच्छा है और यदि तुम उनका निवेदन स्वीकार करोगे तो तुम्हारा कोई समय व्यर्थ नहीं जाएगा। ये मेरा विचार है कि अब तुम्हें विवाह कर लेना चाहिए।

श्रीनरहरि सरकार ठाकुर ने तब श्रीरघुनन्दन से पूछा, 'श्रीनिवास के विवाह के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?' श्रीरघुनन्दन ने उत्तर दिया, 'मेरे विचार से भी यह अच्छी योजना है।'

श्रीनिवास को सम्बोधित करते हुए श्रीनरहरि ठाकुर ने कहा, 'हमसे असहमत मत होना।'

श्रीनिवास आचार्य मौन हो गए परन्तु श्रीनरहरि दास उनके भोलेपन को विविध रूप से दूर करने में सक्षम थे। श्रीनरहरि ठाकुर की इच्छा जानकर श्रीनिवास आचार्य को, अद्वैत प्रभु ने स्वप्न में क्या सुझाव दिया था, उसका स्मरण हो आया। अपना मौन तोड़ते हुए श्रीनिवास आचार्य ने नरहरि ठाकुर को आश्वस्त किया कि अब वे उनकी अवज्ञा नहीं करेंगे। इससे वहाँ हर कोई प्रसन्न हो गया।

तब श्रीनरहरि ठाकुर ने श्रीनिवास आचार्य को विदा किया, जो याजिग्राम वापिस लौट आए, श्रीनिवास के हाथ पकड़कर रघुनन्दन श्रीचैतन्य महाप्रभु के मन्दिर के प्रांगण तक उनके साथ आए, जहाँ वे श्रीखण्ड के अन्य वैष्णवों से मिले। तत्पश्चात श्रीनिवास आचार्य ने सब से विदा ली।

श्रीनिवास आचार्य दीर्घकाल तक याजिग्राम में नहीं रह सके और उन्होंने उत्सुकतावश कंटक नगर की यात्रा प्रारम्भ कर दी।

श्रीगदाधर दास

वहाँ उन्होंने श्रीगौरांग के श्रीविग्रह के दर्शन किए और मन्दिर की भूमि पर लोट गए। वहाँ से श्रीनिवास आचार्य, श्रीगदाधर दास से मिलने गए, जो एकान्त स्थान पर रह रहे थे। श्रीगदाधर दास बिना भोजन और पानी के रह रहे थे और उनकी स्थिति का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनका शरीर भूमि पर लेटने के कारण धूल से ढक गया था। उनके शरीर की स्वर्णिम आभा फीकी हो चुकी थी और उनमें जीवन जीने की कोई चाह नहीं थी।

वे कभी श्रीचैतन्य महाप्रभु की स्तुति का गान करते और कभी रोते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य का नाम पुकारते। कभी वे शांत हो जाते थे और कभी गदाधर पंडित का नाम पुकारते हुए विलाप करते।

वे रोते-रोते कहा करते, 'हे गदाधर, मैं आप से पहले मृत्यु की इच्छा रखता था परन्तु आप इस संसार से मुझसे पहले चले गये।'

श्रीगदाधर दास जो, श्रीगदाधर पंडित की महिमा के बारे में जानते थे, उसे कोई भी नहीं समझ सकता। कौन वर्णन कर सकता है कि कैसे श्रीगदाधर पंडित, श्रीगदाधर दास से प्रेम करते थे? जब श्रीनिवास आचार्य श्रीगदाधर दास से मिले तो उन्होंने उनके सम्मुख दण्डवत् प्रणाम किया। तब प्रभु गदाधर ने अतिस्नेह से श्रीनिवास आचार्य का आलिंगन किया।

श्रीगदाधर दास ने कहा, 'ये चैतन्य महाप्रभु का अनुग्रह है कि मेरी आप से पुनः भेंट हुई। मैं जानता हूँ कैसे तुम बंगाल से वृन्दावन गए और कैसे वहाँ शिक्षा ग्रहण की। मैं जानता हूँ कि कैसे तुमने श्रीगोपाल भट्ट से दीक्षा ग्रहण की और कैसे तुमने श्री चैतन्य महाप्रभु के पार्षदों का अनुग्रह प्राप्त किया। मैं जानता हूँ कि वहाँ तुम कैसे नरोत्तम दास से मिले और ये भी जानता हूँ कि स्वयं भगवान् गौरांग ने श्रीनरोत्तम दास को रामकेली गांव से बुलाया था। मैं जानता हूँ कि कैसे तुमने श्रीनरोत्तम के साथ मिलकर ब्रज के पावन स्थलों की यात्रा की। मैं यह भी जानता हूँ कि कैसे तुम और श्रीनरोत्तम गोस्वामी गणों के ग्रन्थों के साथ बंगाल गए और कैसे वे चोरों के राजा द्वारा चोरी हो गए और कैसे तुमने उन्हें बरामद कर लिया।'

'यह सब जानने के कारण, मैं नरोत्तम से मिलने को उत्सुक था। मैं आशा करता हूँ कि वे यहाँ शीघ्र आयेंगे।'

यह बोलने के बाद श्रीगदाधर दास ने गहरी सांस ली और मौन रह गए। इन दो उच्च सन्तों की इस चर्चा के पीछे के गहरे अर्थ को कौन समझ सकता है?

अत्यधिक भावपूर्ण लहजे में बोलते हुए तब श्रीगदाधर दास ने कहा, 'नवद्वीप दु:ख का सागर बन गया है। श्रीवास पण्डित और प्रभु के अन्य पार्षद पूर्व में ही संसार से विदा हो गए थे। मैं विष्णुप्रिया-देवी के जाने से उत्पन्न दु:ख का तो वास्तव में वर्णन ही नहीं कर सकता। सम्पूर्ण श्रीनवद्वीप अत्यधिक अंधकार में डूब गया। जो बच गये वे भी मृतप्राय स्थिति में हैं।'

इससे अधिक मैं क्या कह सकता हूँ? यद्यपि मैं अभी वहीं से आया हूँ, मैं अभागा जीव यह सब देखकर भी अभी तक जीवित हूँ। श्रीगदाधर दास को श्रवण करते हुए, श्रीनिवास आचार्य स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख सके।

श्रीगदाधर दास ने तब श्रीनिवास को शांत किया और उनके मुख को देखते हुए उन्होंने अतिस्नेह से कहा, 'दीर्घ आयु प्राप्त करो मेरे पुत्र। क्योंकि तुम और तुम्हारे पार्षदों को संसार में भक्ति को अवश्य प्रकट करना चाहिए। तुम और तुम्हारे शिष्य, श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनमोल कीर्तन के अमृत का रसास्वादन कराने के योग्य बनोगे। मेरे विचार से तुम्हें अब विवाह कर लेना चहिए और समय के साथ तुम्हारे अनेक शिष्य होंगे।'

विवाह की भूमिका

तत्पश्चात श्रीगदाधर दास ने श्रीनिवास आचार्य को सुझाव दिया कि वे अपनी माँ के पास लौट जाएँ। श्रीनिवास अपने घर वापिस आ गए और उनकी माँ अति प्रसन्न हो गईं। तब श्रीनिवास ने एक सन्देशवाहक के माध्यम से वन विष्णुपुर एक पत्र भेजा। वे याजिग्राम में रहने लगे और अपने शिष्यों को

गोस्वामी गणों के ग्रन्थ पढ़ाने लगे। श्रीनिवास आचार्य ने गोस्वामी गणों के पद चिह्नों पर चलते हुए ही गोस्वामी गणों के साहित्य को समझाया।

श्रीनिवास द्वारा प्रदान किए गए विवरण का श्रवण करने के बाद नास्तिक लोग उस स्थान से ऐसे भागे जैसे सिंह को देख श्वान भाग गए हों। पंडित जन जिन्हें भक्ति की श्रेष्ठता के सत्य का ज्ञान हुआ, उन्होंने श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का आश्रय स्वीकार किया।

जो भी इस विवरण को सुनकर प्रसन्नता का अनुभव करेगा उसे निश्चित ही भगवान् श्रीगौरचन्द्र का अनुग्रह प्राप्त होगा। वे लोग जो इन लीलाओं को सुनने के इच्छुक अन्य लोगों की सहायता करेंगे वे निश्चित ही श्रीकृष्ण-भक्ति-रस के सागर में डूब जायेंगे।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का ध्यान करते हुए, नरहरि दास को इस ग्रन्थ 'भक्ति-रत्नाकर' को लिखने में अत्यन्त आनन्द आता है।

अष्टम प्रवाह

श्रीनिवास का गृहस्थाश्रम-प्रवेश

शची के पुत्र श्रीगौरचन्द्र की जय जयकार हो। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। श्रीगदाधर पंडित और श्रीवास पंडित की जय जयकार हो। श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और श्रीहरिदास ठाकुर की जय जयकार हो। श्रीगौरीदास पंडित, श्रीस्वरूप दामोदर, और श्रीगौरचन्द्र के सभी पार्षदों की जय जयकार हो। इस ग्रन्थ के सभी पाठक जो कि सभी दिव्य गुणों से परिपूर्ण है, उनकी जय जयकार हो। अब मैं इसका अनवरत विवरण लिख रहा हूँ तो मुझे ध्यान से सुनिए।

आध्यात्मिक साहित्य के प्राध्यापक श्रीनिवास आचार्य ने व्यक्तित्व विहीन लोगों के अभिमान को मिटा दिया, जो कहते थे कि सब माया है। उन्होंने अपना समय श्रीनरोत्तम दास ठाकुर द्वारा चिह्नित मार्ग का अनुसरण करते हुए याजिग्राम में अपने शिष्यों के साथ व्यतीत किया। वे सदैव उत्सुकतावश श्रीनरोत्तम दास के साथ अपने पुनः मिलन की अपेक्षा किया करते थे।

श्री प्रभु गौरांग की यादों को हृदय में संजोए श्रीनरोत्तम दास ने श्रीनवद्वीप के लिए यात्रा प्रारम्भ कर दी। जब वे श्रीनवद्वीप के निकट पहुँचे तो उन्होंने स्वयं को याद दिलाया कि यह श्रीगौरांग महाप्रभु की लीला स्थली है, जहाँ वहाँ के नागरिक हरिनाम-संकीर्तन में अपना जीवन व्यतीत करते थे। ये यही स्थान है जहाँ भक्तों के प्रत्येक घर में उत्सव मनाया जाता है और नागरिक अपनी दिनचर्या की कुछ भी परवाह नहीं करते थे। श्रीनवद्वीप में कोई भी अप्रसन्न

व्यक्ति नहीं पाया जा सकता क्योंकि प्रतिदिन हर कोई श्रीगौरांग महाप्रभु के दर्शन करता था।

श्रीनरोत्तम दास अपने दुर्भाग्य के बारे में विलाप करने लगे क्योंकि वे उस समय जन्म न ले सके जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपनी लीलाऐं प्रकट की थीं। इनके बारे में सोचते हुए, उनका दु:ख अपनी सीमा पार कर गया और वे अत्यधिक अश्रु बहाने लगे। श्रीनवद्वीप में प्रवेश करने पर श्रीनरोत्तम दास वहाँ के अति सुन्दर वातावरण से आकर्षित हो गए। उन्होंने पाया कि वहाँ के नागरिक आनन्द से परिपूर्ण हैं और वे प्रभु का पावन नाम उच्चारण करते हुए गलियों में विचरण करते हैं। वे निरंतर श्रीगौरचन्द्र प्रभु की महिमा के बारे में बात करते थे और प्रभु के पार्षदों के सम्बन्ध में बारम्बार उनके असंख्य नामों का उच्चारण करते हुए अद्‌भुत नृत्य करते थे। नदिया के सुन्दर किनारे पर लोग आनन्द में श्रीगौरचन्द्र प्रभु के पावन नाम और महिमा का उच्चस्वर में गान करते थे।

नदिया के एक ब्राह्मण

नदिया के दिव्य सौन्दर्य को देखने मात्र से ही श्रीनरोत्तम दास आनन्दातिरेक से अभिभूत हो गए और प्रसन्नता से अश्रु बहाने लगे। तभी अचानक एक गंभीर भाव उनके हृदय में उत्पन्न हुआ व श्रीनरोत्तम दास के सम्मुख दृष्टिगत हुआ कि सम्पूर्ण नदिया कष्ट के सागर में डूबा हुआ है। वे निरंतर यह दृश्य देख के विकल हो उठे और इसके कारणों पर विचार करने लगे। वास्तव में उस विचार ने उन्हें स्तब्ध कर दिया तो वे एक सुन्दर वट वृक्ष के नीचे बैठ गए।

इस पावन वृक्ष के अद्‌भुत प्रभाव से श्रीनरोत्तम दास की थकान कम हो गई और उन्होंने अपना धैर्य पुनः प्राप्त कर लिया। जब वे स्वयं को शांत कर ही रहे थे तो उन्होंने एक वृद्ध ब्राह्मण को देखा जो उनकी ओर आ रहा था। वे ब्राह्मण से बात करने को उत्सुक थे परन्तु वे भाव में थे। ब्राह्मण नित्य इस वृक्ष के नीचे बैठकर समय व्यतीत करते थे क्योंकि यह वह स्थान था जहाँ निमाई बालक रूप में खेलते थे। जब उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को देखा तो ब्राह्मण ने सोचा कि निश्चित ही ये निमाई के कोई भक्त होंगे। यद्यपि वह वृद्ध ब्राह्मण सूर्य की झुलसाने वाली गर्मी को कठिनता से सहन कर पा रहे थे, परन्तु उनकी एक झलक ने ही उनके तन के ताप को शांत कर दिया। ब्राह्मण, उनकी सुदृढ़ आकृति से, सुन्दर रूप-रंग और विशाल नेत्र जो प्रेम अश्रु बहाते थे, उनसे आकर्षित हो गए। वे श्रीनरोत्तम दास के बारे में पूछना चाहते थे।

ब्राह्मण उनके पास गए और उनके नाम और आवास के बारे में पूछा। श्रीनरोत्तम दास अति विनम्रता से ब्राह्मण के सम्मुख झुके और उनके प्रश्नों के उत्तर दिए। ब्राह्मण ने तब उनका आलिंगन कर लिया और वे कुछ समय वृक्ष के नीचे बैठे रहे।

ब्राह्मण ने श्रीनरोत्तम दास को बताया कि जब तक उन्हें चार या पाँच मास बोलने का अवसर न दिया जाए तो वे नदिया के वातावरण में जो प्रसन्नता है, उसका वर्णन नहीं कर सकते। हालांकि दुर्भाग्यवश निमाई के जाने के प्रथम दिवस से ही नदिया एक बंजर भूमि बन चुका है। नदिया के नागरिक ये नहीं समझ सकते थे कि किस शक्ति ने केशव भारती के द्वारा निमाई को गृहस्थ जीवन त्यागने के लिए बाध्य किया था।

निमाई के संन्यासी के रूप के अस्तित्व और उनके सिर के अति सुन्दर केशों के मुण्डन का ब्राह्मण कभी सोच भी नहीं सकते थे। वे कभी निमाई को मात्र कौपीन धारण करे हुए देखना सहन नहीं कर सकते थे क्योंकि वे हमेशा निमाई को भव्य वस्त्र पहने हुए ही सोचते थे।

ब्राह्मण कहते रहे कि निमाई ने नदिया के वासियों को अपने मधुर संग से वंचित रखा। असंख्य पवित्र स्थानों की यात्रा करने के बाद निमाई ने नीलाचल में आवास ग्रहण किया और वहाँ अपने पार्षदों के साथ प्रसन्नतापूर्वक रहे। ब्राह्मण ने बताया कि कैसे नदिया के वासियों को नीलाचल से आने वाले व्यक्तियों से श्रीनिमाई का समाचार प्राप्त होता है और वह समाचार मात्र ही उन्हें उनकी एकमात्र प्रसन्नता प्रदान करता है। नीलाचल में श्रीनिमाई के अचानक अन्तर्धान होने का समाचार नदिया के लोगों के लिए असहनीय आघात था। उनके प्रिय पार्षद भी अन्तर्धान हो गए और शीघ्र ही नदिया के लोगों की दीन स्थिति अवर्णनीय हो गई। दिवस प्रतिदिवस नदिया पूर्ण अन्धकार में डूबता जा रहा था। श्रीवास पंडित और अन्य भक्तों के अन्तर्धान होने ने इस विषाद में वृद्धि कर दी।

ब्राह्मण अत्यधिक भावुक हो गए जब उन्होंने श्रीनिमाई की पत्नी विष्णुप्रिया देवी का नाम लिया जो कि साक्षात् ही लक्ष्मी थीं और उच्चकोटि के आध्यात्मिक गुणों वाली महिला थीं। कुछ दिवस पूर्व वे भी इस संसार से विदा हो गई थीं। श्रीनिमाई के अन्तर्धान होने से नदिया वासियों और जिनकी एक एक सांस भी उनके प्राकट्य से वंचित थी उनके हृदय को तप्त कर दिया।

नवद्वीप के वासी अधीर हो गए थे और वे सभी सोते जागते दोनों समय श्रीनिमाई का नाम उच्चारित करते हुए रोने लगे। वे निरंतर उनके दिव्य चरित्र की बात करते और उन्हें याद करते हुए अश्रु बहाते। यहाँ तक कि नदिया में उत्पाती व्यक्ति भी उनकी अनुपस्थिति से हतोत्साहित हो गए थे।

लोग पहचान नहीं पाये

ब्राह्मण उनकी स्थिति की यह कह कर आलोचना करने लगे कि एक कुतर्की होने के कारण वे श्रीनिमाई को नहीं पहचान पाए, जिन्हें उन्होंने जीव

समझा। वैष्णव साहित्य के अनुसार श्रीनिमाई साक्षात् भगवान् नारायण थे, जिनकी अद्‌भुत लीलाओं ने सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित कर दिया था।

यद्यपि ब्राह्मण उन्हें बाल्यकाल से ही जानते थे और उन्होंने कभी उन्हें सर्वोच्च प्रभु के रूप में माना था।

ब्राह्मण ने श्रीनरोत्तम को बरगद का वह वृक्ष बताया जिसके नीचे वे बैठे थे, श्रीनिमाई ने वहाँ अति उत्साह से शास्त्र पढ़े थे। ब्राह्मण ने श्रीनिमाई की उनके पार्षदों के साथ तुलना सितारों से घिरे चन्द्रमा से की। ब्राह्मण सुन्दर दृश्यों को स्मरण करके आनन्दित होते थे यद्यपि अब उन्हें वे यादें पीड़ा देती थीं। उन्होंने श्रीनरोत्तम को बताया कि एक दिवस उन्होंने वास्तव में अत्यधिक शिष्यों से घिरे शचीनन्दन को देखा था। आनन्द से अभिभूत ब्राह्मण बेसुध होकर भूमि पर जा गिरे और जब वे पुनः सचेत हुए तो दृष्टि लुप्त हो चुकी थी। यद्यपि यह मानकर ब्राह्मण नित्य बरगद के वृक्ष के नीचे बैठने आते थे कि श्रीनिमाई और उनके पार्षद नदिया में चिरकाल से उपस्थित हैं।

यह श्रीनिमाई की इच्छा थी कि ब्राह्मण, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर से मिलें। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को आशीर्वाद दिया और उन्हें शुभ कामनाएं निवेदित कीं ताकि वे निमाई के प्रिय भक्त बने रहें। श्रीनरोत्तम दास ब्राह्मण के मधुर और स्नेहमय वचनों से प्रसन्न हो गए और वे पुनः उनके चरणों में झुके। नेत्रों में अश्रु भर उन्होंने ब्राह्मण से निवेदन किया कि वे उस जैसे अज्ञानी को आशीर्वाद दें। ब्राह्मण ने श्रीनरोत्तम दास को हृदय से लगाकर आलिंगन किया और कुछ देर उन्हें पकड़े हुए, अपने अश्रुओं से भिगो दिया।

ब्राह्मण ने श्रीनरोत्तम दास को सूचित किया कि नवद्वीप एक विशाल नगर है जहाँ उन्हें निमाई के अनेक पार्षद मिल जाएँगे। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को मार्ग की ओर इंगित करते हुए निर्देश दिया कि पहले मायापुर जाओ। वहाँ वे शची और जगन्नाथ मिश्र का निवास देख पायेंगे जहाँ भगवान् नारायण श्रीनिमाई के रूप में प्रकट हुए थे।

मायापुर-प्रस्थान

ब्राह्मण के निर्देशानुसार श्रीनरोत्तम दास मार्ग में अनेक गाँवों से होते हुए मायापुर के लिये चल पड़े। वे बार-बार दिशा-निर्देश के लिए पूछते और अंततः जब उन्होंने मायापुर में प्रवेश किया तो उन्होंने विनम्रता से श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास पर जाने के मार्ग के बारे में पूछा। सही दिशा की ओर इंगित करते हुए, दिशा बताने वाले व्यक्ति ने अश्रु बहाने आरम्भ कर दिए और उसका दुःख श्रीनरोत्तम दास द्वारा सांझा किया गया और वे स्वयं भी रोने लगे।

जब श्रीनरोत्तम दास ने श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास में प्रवेश किया तो उन्होंने एक सहृदय ब्रह्मचारी को श्वेत वस्त्रों में देखा। जब ब्रह्मचारी ने श्रीनरोत्तम

दास को देखा तो सोचा कि यद्यपि उनका हृदय भी दु:ख से पीड़ित है, किन्तु उन्हें उस व्यक्ति को देखकर अब किसी प्रकार से शान्ति मिलेगी। ब्रह्मचारी ने तत्क्षण विचार किया कि वे व्यक्ति वास्तव में श्रीनिवास आचार्य के विश्वासपात्र, श्रीनरोत्तम दास ही हैं, जो गोस्वामी गणों के ग्रन्थों के साथ ब्रज से आए हैं। उन्हें ये भी स्मरण था कि कैसे श्रीनरोत्तम दास रामकेली में श्रीचैतन्य महाप्रभु से आकर्षित हुए थे।

ब्रह्मचारी ने श्रीनरोत्तम दास से उनके नाम और आवास के बारे में पूछा और उन्होंने उत्तर में उन्हें सारी जानकारी प्रदान कर दी। श्वेत वस्त्रधारी व्यक्ति ने अपना परिचय दिया और फिर अश्रुपूर्ण नेत्रों से उन्हें आलिंगन कर लिया। श्रीनरोत्तम दास तत्क्षण उस व्यक्ति के चरणों में गिर गये। वे अपने अश्रुओं पर नियंत्रण करने में असमर्थ होने के कारण श्रीचैतन्य महाप्रभु के निवास के आंगन में लोट-लोटकर जोर-जोर से रोने लगे और ब्रह्मचारी ने अपने सम्पूर्ण प्रयासों द्वारा उन्हें शांत करने का प्रयत्न किया। यद्यपि श्रीनरोत्तम दास अपने भावों पर नियंत्रण नहीं कर सके थे और वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय शिष्य ईशान के चरणों में पड़े रहे।

श्री ईशान ने उन्हें उठाया और अति स्नेह से उनके मुख को देखते हुए उन्हें आलिंगन प्रदान किया। उन्होंने अश्रुपूर्ण नेत्रों से नरोत्तम से कहा कि यह उनकी अति दयालुता है जो वे उस क्षण वहाँ आए। उन्होंने श्रीनरोत्तम को सूचित किया कि कैसे वे आने वाले वैष्णवों से उनके बारे में समाचार लेते रहते थे।

ईशान से मिलन

ईशान तब श्रीनरोत्तम दास को अपने कक्ष में ले गये, जहाँ उनकी भेंट श्रीदामोदर पंडित से हुई। श्रीनरोत्तम दास, श्रीदामोदर पंडित के चरणों में झुके और पंडित ने आत्मीयता से उन्हें आलिंगन प्रदान किया। उन्होंने अतिस्नेह से श्रीनरोत्तम दास को बताया कि वे सब उनसे भेंट करने की प्रतीक्षा कर रहे थे। पंडित बारम्बार उनको बता रहे थे कि वे कितने आभारी हैं कि वे उस समय वहाँ आये जब श्रीचैतन्य महाप्रभु का अन्तर्धान होना धीरे-धीरे उनके प्राण ले रहा था। उन्हें भय था कि शायद कभी उन्हें श्रीनिवास आचार्य के दर्शन नहीं होंगे।

श्रीदामोदर पंडित ने तब श्रीनरोत्तम दास की भेंट श्रीपति, श्रीनिधि और अन्य भक्तगणों से करवाई।

यहाँ तक कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के वे पार्षद जो विश्व से अन्तर्धान हो चुके थे वे भी श्रीनरोत्तम दास से स्वप्न में भेंट करने आये।

नीलाचल की ओर श्री नरोत्तम

श्रीनरोत्तम दास ने कुछ दिवस वहाँ व्यतीत किये और फिर नीलाचल चले गए, यद्यपि वे नदिया त्यागने के कारण उदास थे। वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के आवास पर गये और श्री ईशान ठाकुर से जगन्नाथ पुरी जाने की अनुमति मांगी। ठाकुर ने उन्हें शीघ्रता से नीलाचल की यात्रा करने के लिये उत्साहित किया क्योंकि वह अत्यधिक पावन स्थान भी गहन अन्धकार में उतरता जा रहा था। हाल ही में ईशान को पुरी से जानकारी प्राप्त हुई थी कि प्रभु की इच्छा से श्रीगोपीनाथ आचार्य और अन्य भक्तों की मानसिक अवस्था अति दीन हो गई थी। वे चाहते थे कि श्रीनरोत्तम दास उनसे भेंट करने के लिये यथाशीघ्र श्रीखण्ड और कर्नाटक की यात्रा करें और फिर श्रीनिवास आचार्य के साथ नदिया लौट आएँ।

ईशान, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास से एक साथ भेंट की अभिलाषा करने लगे। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास से मार्ग में शान्तिपुर और खरदह की यात्रा करने को भी कहा क्योंकि यह यात्रा भक्तों में प्राण डाल देगी। तत्पश्चात ईशान मौन हो गए और ईशान के विचारों को समझने में असमर्थ होने कारण श्रीनरोत्तम दास अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख पाए।

शान्तिपुर

श्रीनरोत्तम दास ने उत्साहित होकर नवद्वीप से विदा ली और शान्तिपुर की ओर चल दिए। अद्वैत आचार्य की लीलाओं के विचारों में मग्न होकर श्रीनरोत्तम दास विलाप करने लगे। जब वे शान्तिपुर गांव में आए तो निराशा के कारण रोने लगे क्योंकि वे जानते थे वे शान्तिपुर के प्रभु अद्वैत आचार्य के दर्शन नहीं कर पायेंगे, जिन्होंने वहाँ भौतिक संसाधनों के बिना और बिना किसी स्नेह के जीवन व्यतीत किया।

श्रीनरोत्तम दास के स्नेह से बँधे श्रीचैतन्य महाप्रभु ने एक दिवस पहले ही श्रीअद्वैत आचार्य के पुत्र को उनके आने के बारे में सूचित कर दिया था। जब श्रीअच्युतानन्द उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे तो श्रीनरोत्तम दास शान्तिपुर आ गए। वहाँ के वासी श्रीअद्वैत आचार्य के अन्तर्धान होने से दुखी हो गए थे। जब श्रीनरोत्तम दास ने किसी को रोककर श्रीअद्वैत आचार्य के आवास पर जाने के मार्ग के बारे में पूछा तो वह व्यक्ति मार्ग की ओर इंगित कर फूट-फूट कर रोने लगा।

अच्युतानन्द प्रतीक्षा में हैं

स्नेह और प्रेम से परिपूर्ण श्रीअद्वैत आचार्य अपने पार्षद श्रीनरोत्तम दास के सम्मुख प्रकट हुए, यद्यपि अन्य लोगों के लिए वे अदृश्य थे।

श्रीनरोत्तम दास उन्मत्त प्रेम में अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े किन्तु प्रभु की इच्छा से शीघ्र ही वे सचेत अवस्था में आ गए। स्वयं को शांत करके श्रीनरोत्तम दास ने मन्दिर में प्रवेश किया और पाया कि श्रीअच्युतानन्द उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

श्रीनरोत्तम दास को श्रीअच्युतानन्द से स्वयं का परिचय नहीं कराना पड़ा क्योंकि उस युवा व्यक्ति को उनके दिवंगत पिता श्रीअद्वैत आचार्य ने पहले से ही श्रीनरोत्तम दास के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्रदान कर दी थी। श्रीनरोत्तम दास ने श्रीअच्युतानन्द के प्रति सम्मान व्यक्त किया, जो अपने पिता के अन्तर्धान होने के कारण शोक में डूब गए थे और इस कारण अति दुर्बल हो गए थे। उन्होंने अधीरतापूर्वक अपने हाथ श्रीनरोत्तम दास को आलिंगन प्रदान करने के लिए आगे बढ़ा दिए और रोने लगे।

श्रीअच्युतानन्द ने अत्यन्त मधुरता और स्नेह से श्रीनरोत्तम दास को बताया कि वे उन्हें दीर्घकाल तक नहीं रख पायेंगे क्योंकि ऐसा करने से विलम्ब होगा और समय व्यर्थ होगा। उन्होंने कहा कि श्रीनरोत्तम दास यथाशीघ्र नीलाचल जाएें परन्तु वहाँ दीर्घकाल तक न ठहरें क्योंकि उन्हें और भी जिम्मेदारियां पूर्ण करनी हैं। तब श्रीअच्युतानन्द ने उनकी श्रीअद्वैत आचार्य प्रभु के अन्य प्रिय पार्षदों से भेंट करवाई। उन्होंने अति प्रेम से उनकी देख-रेख की और उन्हें तीन-चार दिवसों तक विष्णुपरा में रखा। तब उन्होंने उन्हें नीलाचल की यात्रा प्रारम्भ करने की अनुमति प्रदान की।

अम्बिका में नरोत्तम

श्रीनरोत्तम दास ने शीघ्रता से हरिनदी गांव से गंगा नदी को पार किया और अम्बिका पहुँच गए, जहाँ उन्होंने श्रीश्रीगौर निताई के श्रीविग्रह के दर्शन किए। श्रीगौरीदास पंडित इन श्रीविग्रहों के समर्पित उपासक थे और श्रीनरोत्तम दास उनकी उपासना विधि देखकर अति प्रभावित हो गए थे। श्रीनरोत्तम दास ने नेत्रों में अश्रु भरकर श्रीविग्रह के आगे झुककर प्रणाम किया। उन्होंने श्रीहृदय चैतन्य और श्रीअद्वैत प्रभु के अन्य प्रिय शिष्यों का मैत्रीपूर्ण सान्निध्य प्राप्त किया। मैं उनकी वार्ता का विस्तृत वर्णन कर विचारपूर्वक ग्रन्थ के इस भाग को विशाल नहीं करूँगा। श्रीचैतन्य महाप्रभु के शिष्यों ने स्नेहवश श्रीनरोत्तम की देख-रेख की परन्तु उन्हें शीघ्र नीलाचल की ओर प्रस्थान करने का भी सुझाव दिया। वियोग के समय वे सब रो पड़े। श्रीश्रीगौर-निताई की करुणा में स्वयं को समर्पित कर श्रीनरोत्तम दास भारी हृदय से अम्बिका से विदा हो गए।

सप्तग्राम

नरोत्तम दास उन सभी गाँवों में गए जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु के समर्पित शिष्य रहते थे। वे सप्तग्राम का सौन्दर्य देखकर रोमांचित थे और उन्होंने एक दूरस्थ स्थान से उस गांव के प्रति सम्मान व्यक्त किया। सप्तग्राम अति आध्यात्मिक महत्व वाला स्थान है क्योंकि यहाँ सात महान् संन्यासियों ने तप किया था और तीन महान् नदियां गंगा, यमुना और सरस्वती यहाँ मिलती हैं। यह श्रीनित्यानन्द प्रभु की लीला का स्थान है।

अब मैं श्रीनित्यानन्द द्वारा सप्तग्राम को अपनी लीलाओं के लिए चुनने के प्रयोजन के बारे में वर्णन करूँगा। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर, जो उस समय नीलाचल में वास कर रहे थे, श्रीनित्यानन्द प्रभु बंगाल गए। वे ओडिशा से बंगाल पधारे और उस स्थान को सभी पावन स्थानों के मुकुट भूषण के रूप में महिमा मण्डित किया।

नित्यानन्द-लीला

चैतन्य-चन्द्रोदय-नाटिका में इस स्थान के महत्व का वर्णन है। गौड़ देश सभी पावन स्थलों का मुख्य रत्न है और श्रीनवद्वीप उस गौड़ देश में स्थित है, जहाँ श्रीगौरांग प्रभु प्रकट हुए थे। श्रीनित्यानन्द प्रभु धार्मिक महत्व के अनेक स्थानों पर जाना चाहते थे और उनकी तीर्थ यात्रा श्रीचैतन्य-भागवत में वर्णित है। वे गंगा जी के दोनों ओर अनेकों पावन से भी पावन स्थलों पर गए परन्तु नदिया जाने की उनकी आशा पोषित थी ताकि वे श्रीशची माता से भेंट कर सकें।

जब श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीरामदास, श्रीगदाधर दास और अन्य पार्षदों के साथ पानीहाटी गांव पहुँचे तो वे सर्वप्रथम श्रीराघव पंडित के निवास पर गए, जहाँ उन्होंने अति उत्साह के साथ संकीर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। महान् भक्त राघव पंडित इस गाँव में जन्मेथे, जो कि पहले से ही एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक स्थान है।

श्रीचैतन्य-भागवत के अनुसार वह विशेष स्थान जहाँ एक विशुद्ध भक्त प्रकट हुआ हो, वह स्थान निश्चित ही आसपास के सैंकड़ों-सहस्रों योजन में रहने वाले जीवों को मुक्ति प्रदान करता है। श्रीनित्यानन्द प्रभु के पानीहाटी पधारने का समाचार सुनकर अनेक लोग उन्हें प्रणाम करने के लिए आ गए। श्रीचैतन्य-भागवत के अनुसार वह स्थान उच्चकोटि का पवित्र स्थान बन गया जहाँ अनेक वैष्णव रहने के लिए आए।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपने पार्षदों के साथ पानीहाटी में अनेक अद्भुत लीलाऐं रचाईं। मैं उन गतिविधियों का वर्णन करने में असमर्थ हूँ।

खरदह में पद्‌मावती के पुत्र, श्रीनित्यानन्द ने संकीर्तन में पागलों की भांति नृत्य किया और श्रीपुरंदर पंडित के स्थान की आराधना करते समय उन्होंने प्रेम भक्ति के ऐसे गुणों को प्रदर्शित किया जिनका भगवान् ब्रह्मा को भी अधिकार नहीं। गाँव में अनेक लोगों को दु:ख से मुक्ति देकर श्रीनित्यानन्द प्रभु सप्तग्राम चले गए। यही वह स्थान है जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीउद्धारण दत्त के चित्त को आकर्षित किया था।

श्रीउद्धारण दत्त

श्रीचैतन्य-भागवत के अनुसार श्रीनित्यानन्द प्रभु ने कुछ दिवस श्रीउद्धारण दत्त के यहाँ उनके निवास पर व्यतीत किए, जो कि त्रिवेणी नदी के तट पर स्थित था। श्रीउद्धारण दत्त ने पूरी निष्ठा से श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों की आराधना की। श्रीउद्धारण दत्त को अति सौभाग्यशाली माना जाता था क्योंकि उन्हें श्रीनित्यानन्द प्रभु की सेवा का अधिकार प्राप्त हो गया था और वे अपने उस सम्पूर्ण जीवनकाल में उनके सेवक बन कर रहे।

श्रीउद्धारण दत्त के कारण वहाँ के सभी व्यापारी विशुद्ध हो गए। इसमें कोई संशय नहीं। श्रीनित्यानन्द प्रभु वहाँ व्यापारियों को मुक्ति प्रदान करने गए थे। उन्होंने उन व्यापारियों को उल्लसित प्रेम और भक्ति प्राप्त करने के योग्य बनाया। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने व्यापारियों के साथ घर-घर जाकर कीर्तन लीला का आनन्द लिया। सभी व्यापारियों ने श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों का आश्रय ग्रहण किया और हर प्रकार से उनकी आराधना की।

यह देखकर कि व्यापारी, भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना कर रहे हैं, हर कोई हृदय से अचम्भित हो गया। श्रीनित्यानन्द प्रभु की करुणा का सागर ऐसा है जिसका कोई छोर नहीं। उन्होंने उन सब मूर्ख, अधम व्यापारियों को मुक्ति प्रदान की। अपने पार्षदों के संग श्रीनित्यानन्द प्रभु ने सप्तग्राम में संकीर्तन लीला का आनन्द लिया। अगर किसी के पास यह बताने के लिए सैंकड़ों वर्ष हों तो भी कोई श्रीनित्यानन्द प्रभु के सप्तग्राम में संकीर्तन की सभी लीलाओं का वर्णन नहीं कर सकता। जैसे महाप्रभु ने नदिया के गांव और नगरों में लीलाओं का आनन्द लिया ऐसे ही श्रीनित्यानन्द प्रभु ने सप्तग्राम में लीलाओं का आनन्द लिया।

श्रीवृन्दावन दास ठाकुर ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। व्यापारियों ने जो सौभाग्य प्राप्त किया है, उसे कौन समझ सकता है? श्रीउद्धारण दत्त आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में सदैव उत्तेजित रहते थे। सुखद हृदय से वे श्रीनित्यानन्द प्रभु की सेवा में मग्न हो गए। सदैव श्रीनित्यानन्द प्रभु के निकट रहकर श्रीउद्धारण दत्त, अति निर्जन त्रिवेणी घाट और सप्तग्राम में अनेक सुखद लीलाओं के साक्षी बने। वह हर स्थान, जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु गए, वह स्थान पवित्र हो गया, ऐसा

स्थान जहाँ अन्य पवित्र स्थान वास करते हैं। गौड़-देश के सभी पवित्र स्थानों की गणना कौन कर सकता है? नित्यानन्द प्रभु के सान्निध्य में श्रीउद्धारण दत्त ने इन सभी पावन स्थानों की यात्रा की।

शान्तिपुर में श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अति प्रसन्नता से श्रीअद्वैत आचार्य से भेंट की। वहाँ से वे श्रीनवद्वीप गए। श्रीनित्यानन्द प्रभु के तन पर अनेक भूषण चमक रहे थे। उनके आनन्ददायक चरणकमलों में आकर्षक नूपुर छन-छना रहे थे। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में उनके समान कोई नहीं।

शेष-खण्ड में श्रील वृन्दावन दास ठाकुर ने इसका वर्णन किया है (श्रीचैतन्य भागवत आदि: 1.176)। 'श्रीनित्यानन्द की असीमित लीलाओं को कोई भी नहीं समझ सकता। छन-छनाते नूपुर धारण कर उन्होंने मथुरा के सभी स्थानों में लीलाओं का आनन्द लिया। श्रीमथुरा और श्रीनवद्वीप अभिन्न हैं। श्रीमथुरा ही श्रीनवद्वीप है। यह निश्चित है। उनका तन अनेकों विविध आभूषणों से सुशोभित था। पद्मावती के पुत्र, श्रीनित्यानन्द ने नदिया में अनेक लीलाओं का आनन्द लिया।'

श्रीचैतन्य-भागवत में यह वर्णन है। 'श्रीनित्यानन्द प्रभु के सुन्दर चरणकमलों में रजत के नूपुर चमक रहे थे। उनके शब्द अत्यधिक मधुर थे। उनका चलना और भाव अभिव्यक्ति, गज राज के समान सुन्दर थीं।'

घर-घर से लोग अपने मित्रों के साथ एकत्र हो गए और सुखद संकीर्तन का अनन्त आनन्द लिया। श्रीनवद्वीप, राजधानी श्रीमथुरा के समान था। नवद्वीप में कितने लोग वास करते थे? मैं नहीं जानता। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीनवद्वीप में श्रीशची माता को जो सुख प्रदान किया, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता। नदिया में अपने पार्षदों के साथ विचरण करते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु ने जो लीलाऐं रचाई, उनका वर्णन कौन कर सकता है?

उद्धारण दत्त सदैव श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा जपने में मग्न रहते। वे सदैव श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों की सेवा करते। उनके समर्पित प्रेम से उल्लसित होकर श्रीनरोत्तम दास ने श्रीउद्धारण दत्त के गांव सप्तग्राम में प्रवेश किया। श्रीनरोत्तम दास ने लोगों से श्रीउद्धारण दत्त के निवास का मार्ग पूछा। रोते हुए किसी ने उत्तर दिया, 'ये गाँव यही है। हर समय श्रीनित्यानन्द प्रभु के विरह की अग्नि से दग्ध हुए, कुछ दिवस बाद श्रीउद्धारण दत्त इस विश्व से अन्तर्धान हो गए। जब श्रीनित्यानन्द प्रभु इस विश्व में और अधिक नहीं रहे, तब सप्तग्राम घनघोर अन्धकार में डूब गया।'

जब श्रीनरोत्तम दास ने ये शब्द सुने, उनके नेत्रों में अश्रुओं का ज्वार उमड़ आया। मैं श्रीनरोत्तम दास के दुःख का वर्णन नहीं कर सकता। तब उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु के प्रिय अन्तरंग पार्षदों से भेंट की।

खरदह में श्री नरोत्तम

सप्तग्राम से विदा लेकर श्रीनरोत्तम दास गंगा जी के किनारे के संग-संग चलने लगे। चलते-चलते वे भक्तों के निवास पर भी गए। श्रीनरोत्तम महाशय के अनुभव का मैं वर्णन नहीं कर सकता, जब उन्होंने खरदह में प्रवेश किया था। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीनरोत्तम दास की मनोकामना पूर्ण की। श्रीनित्यानन्द प्रभु की इच्छा से श्रीनरोत्तम दास शांत हो गए।

जैसे ही वे श्रीनित्यानन्द प्रभु के निवास का दर्शन करने गए तो श्रीनरोत्तम दास की भेंट श्रीनित्यानन्द प्रभु के अन्तरंग पार्षदों से हुई। वे भक्तजन श्रीनरोत्तम दास को श्रीनित्यानन्द प्रभु के गृह ले गए और गृह की स्वामिनी को उनके आगमन के बारे में सूचना दी।

श्रीवसुधा-जाह्नवी की कृपा

श्रीवसुधा-देवी और श्रीजाह्नवा, श्रीवीरभद्र प्रभु के साथ बैठकर नित्यानन्द प्रभु की लीलाओं के बारे में चर्चा कर रहे थे। यद्यपि वे अत्यन्त दुःख में निमग्न थे, पर जब उन्होंने सुना कि श्रीनरोत्तम आ चुके हैं तो वे हृदय से प्रसन्न हो उठे। श्रीनरोत्तम दास भीतर के कक्षों में गए और उनके चरणकमलों में प्रणाम किया।

श्रीवसुधा और जाह्नवा-देवी ने नरोत्तम पर जो करुणा बरसाई, उसका वर्णन कर सकूँ मेरे पास वह सामर्थ्य नहीं। वे दोनों सम्पूर्ण सत्य को जानती थीं। दो या चार दिवसों के लिए उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को अपने पास रखा। उन्होंने मिलकर दिन और रात, भगवान् श्रीकृष्ण की चर्चा के अमृत रस के आस्वादन में व्यतीत किए।

उल्लसित प्रेम से भरे उन्होंने श्रीनरोत्तम दास से कहा कि तुम्हारे पास ये जो महाशय (महान् आत्मा) की उपाधि है ये तुम्हारा अधिकार है।

आपस में विस्तृत चर्चा करके उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को बताया कि उन्हें नीलाचल की यात्रा जारी रखनी चाहिए। श्रीनरोत्तम दास के प्रस्थान के समय श्री जाह्नवा की स्थिति का वर्णन कैसे करूं। उनके नेत्रों से अश्रुओं की नदी बह चली। मैं वर्णन नहीं कर सकता कि कैसे श्रीवीरभद्र ने मधुर शब्द बोलते हुए श्रीनरोत्तम दास को विदा दी। श्रीपरमेश्वरी दास ने उस मार्ग का वर्णन किया, जिसका उपयोग श्रीनरोत्तम दास को करना था। अत्यधिक स्नेह से महेश दास और अन्य भक्तों ने श्रीनरोत्तम दास को विदा किया। वे शांत नहीं रह सकते थे।

भूमि पर प्रणत होकर श्रीनरोत्तम दास ने सभी के प्रति सम्मान व्यक्त किया। विषादपूर्ण हृदय से उन्होंने खरदह से प्रस्थान किया। श्रीनरोत्तम दास ने बताये गये मार्ग पर यात्रा की। जब वे एक भक्त के पास पहुँचे तो वे उनसे मिलने को रुके। शीघ्र ही वे खानाकुल-कृष्ण-नगर पहुँच गए। वहाँ उन्होंने श्रीअभिराम ठाकुर के चरणकमलों में प्रणाम किया।

श्री अभिराम ठाकुर

नित्यानन्द प्रभु के विरह की भावनाओं में बहकर श्रीअभिराम ठाकुर अपनी बाह्य चेतना में नहीं थे। उनकी पत्नी श्री मालिनी की कोई सहकर्मी नहीं थी। श्रीअभिराम और मालिनी देवी ने श्रीनरोत्तम दास पर अपार करुणा बरसाई। तब उन्होंने उन्हें शीघ्र ही नीलाचल की यात्रा जारी करने का आदेश दिया। श्रीअभिराम की अवस्था देखकर श्रीनरोत्तम दास अत्यन्त उदास हो गए। उनके नेत्रों से अश्रु बह निकले। परन्तु श्रीअभिराम द्वारा श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह की सेवा देखकर श्रीनरोत्तम दास ने अनुभव किया कि उनका हृदय उमंग से भर उठा। श्रीनरोत्तम दास ने उनसे किस प्रेममय वातावरण में विदा ली वह अवर्णनीय है।

वहाँ से जाते हुए वे प्रभु के बहुत से भक्तों एवं सहयोगियों से भी मिले। प्रभु के भक्तों के प्रेम का स्मरण करते हुए उनके नेत्रों से अनवरत अश्रुधारा बहती रही। कुछ ही दिन में वे नीलाचल पहुँच गये। गोपीनाथ आचार्य और अन्य भक्त श्रीनरोत्तम दास के आगमन की प्रतीक्षा में थे। प्रभु ने उन्हें पहले ही आदेश दे रखा था कि नरोत्तम के नीलाचल पहुँचने पर उनका ध्यान रखें। प्रभु के निकटस्थ सहयोगियों एवं भक्तों के हृदय के भावों को अभिव्यक्त करने का साहस कौन कर सकता है।

श्रीगोपीनाथ आचार्य

श्रीगोपीनाथ आचार्य ने कनाई-खुन्ती से कहा, 'मैं आशा करता हूँ कि मैं शीघ्र ही नरोत्तम को देखूँगा। उस कामना से मेरा हृदय भर उठा। प्रभु की इच्छा से मैं आज या कुछ दिवसों बाद नरोत्तम के दर्शन करूँगा। ये मेरा अपना विचार है।'

कनाई-खुन्ती ने कहा, 'अनेक लोगों के मुख से मैंने सुना है कि श्रीनरोत्तम अब प्रस्थान कर नीलाचल के मार्ग में है। मैं जानता हूँ कि वे विलम्ब नहीं करेंगे। उनकी गतिविधियों को कौन समझ सकता है?'

शिखी माहिती और अन्य भक्तों ने श्रीगोपीनाथ से कहा, 'अब श्रीजगन्नाथ जी के दर्शन का समय है।'

यह सुनने के पश्चात् श्रीगोपीनाथ आचार्य और उनके प्रिय पार्षद भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करने गए। आपस में वे श्रीनरोत्तम दास के विषय में बात करने लगे। उन्होंने चर्चा की कि कैसे भगवान् ने रामकेली में उन्हें आकर्षित किया। वे सब निरन्तर चर्चा कर रहे थे कि कैसे भगवान् ने श्रीनरोत्तम पर अपना अनुग्रह बरसाया। इस प्रकार चलते-चलते वे सिंह-द्वार के मार्ग से भगवान् जगन्नाथ के धाम आ गए।

प्रभु से विरह के कारण श्रीगोपीनाथ आचार्य अति दुर्बल हो गए थे। यद्यपि उनका तन क्षीण हो चुका था, तथापि वे सूर्य की भांति दीप्तिमान हो रहे थे। मैं क्या कहूँ? वे करुणा के अवतार थे। कोई भी उन्हें एक बार देख ले, उसके नेत्र अश्रुओं से भर जाते थे।

श्रीनरोत्तम दास ने उन्हें दूर रहकर देखा। उनके नेत्रों में अश्रुओं की बाढ़ सी आ गई। उनका हृदय अशान्त था। अपने हृदय में उन्होंने विचार किया, 'वे निश्चित ही प्रभु के अन्तरंग पार्षद होंगे।'

जगन्नाथ जी पहुंचे श्री नरोत्तम

एक ब्राह्मण के द्वारा उन्हें ज्ञात हुआ कि वे कौन थे। सिंह-द्वार पर एक भक्त ने दूसरे से कहा, 'आज श्रीनरोत्तम आयेंगे। यह विचार मेरे हृदय में आ रहा है।'

जैसे ही वे यह मंगल शब्द बोल रहे थे, हर किसी ने श्रीनरोत्तम को आते देखा। उनका सम्पूर्ण तन धूल से भरा था। उनके विशाल नेत्रों से अश्रुओं की धार बहती रहती थी। उनका आध्यात्मिक प्रेम कितना अद्‌भुत था! अस्थिर हृदय से वे भूमि पर गिर गए और प्रभु के अन्तरंग पार्षदों के प्रति सम्मान व्यक्त किया।

उल्लसित प्रेम से परिपूर्ण, हर किसी ने श्रीनरोत्तम दास का आलिंगन किया। उन्होंने उनके तन को अपने नेत्रों के अश्रुओं से भिगो दिया। यद्यपि वे सदैव अगाध विरह की अग्नि में जलते रहते थे, वहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति ने उस उमंग का अनुभव किया, जोकि अब उनके हृदय में जन्म ले चुकी थी।

अति करुणापूर्ण हृदय से वे श्रीनरोत्तम दास को अपने साथ लेकर, भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करने गए।

जय जगन्नाथ

उल्लसित प्रेम में अस्थिर हृदय से श्रीनरोत्तम दास ने भगवान् जगन्नाथ और भगवान् बलदेव की शोभा को देखा। काले रंग के भगवान् जगन्नाथ की शोभा वर्षाकाल के मेघों को और प्रचुर मात्रा में नेत्रों के काजल को भी परास्त करती थी। श्वेत बलदेव जी की शोभा चमेली के पुष्प और रजत को परास्त करती थी। उनका चन्द्रमा समान मुख तीनों लोकों को प्रकाश से भर रहा था। उनके सुन्दर कमलनयन सम्पूर्ण विश्व को चमत्कृत कर रहे थे। उनकी भुजाएें चौड़ी थीं। वे आकर्षक और सुन्दर थीं। वे अति सुन्दरता से चमकदार आभूषणों से सुशोभित थीं।

दोनों ओर दो भगवान् थे। मध्य में सुभद्रा जी थीं। भगवान् जगन्नाथ अपने सुदर्शन चक्र के साथ शोभायमान थे। श्रीनरोत्तम दास अपलक नेत्रों से श्रीविग्रहों

को निहार रहे थे। वे उल्लसित प्रेम में अस्थिर हो गए। वे अपने हृदय को शान्तिपूर्ण अवस्था में नहीं रख पाए।

श्रीनरोत्तम दास की अद्भुत स्थिति देखकर भगवान् के अन्तरंग पार्षद अचम्भित थे। वे अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख पाए। श्रीगोपीनाथ आचार्य ने एक बार पुनः श्रीनरोत्तम दास को शांत किया। तब जगन्नाथ जी के एक पुजारी ने श्रीनरोत्तम दास को श्रीविग्रहों की प्रसादी माला प्रदान की। श्रीनरोत्तम दास को अपने साथ लेकर श्रीगोपीनाथ आचार्य मन्दिर से अपने निवास पर लौट आए।

शीघ्र ही नीलाचल में भगवान् के अन्तरंग पार्षदों ने सुना कि श्रीनरोत्तम दास आ चुके हैं। यद्यपि हर क्षण वे भयानक विरह की पीड़ा की अग्नि में जल चुके थे तथापि वे सब हृदय से प्रसन्न हो गए। श्रीगोपीनाथ आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास का परिचय सब भक्तों से करवाया। उन्होंने जगन्नाथ विप्र को श्रीनरोत्तम दास की देखभाल सौंप दी।

जगन्नाथ विप्र, श्रीनरोत्तम दास को सभी भक्तों से मिलवाने ले गए। श्रीनरोत्तम दास ने कैसे भगवान् के अन्तरंग पार्षदों से भेंट की, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता। हरिदास की समाधि के दर्शन कर उन्होंने जो विलाप किया उसका कौन वर्णन कर सकता है? अति उदास श्रीनरोत्तम दास आगे श्रीगदाधर पंडित के निवास पर गए। भूमि पर प्रणाम करके उन्होंने श्रीगदाधर पंडित के प्रति सम्मान व्यक्त किया।

श्रीगदाधर पण्डित : तोटा गोपीनाथ

श्रीगदाधर पंडित के प्रिय पार्षदों की स्थिति देखकर श्रीनरोत्तम दास के नेत्रों से अश्रु बह निकले।

श्रीनरोत्तम दास, श्री मनु गोस्वामी को देखकर अधीर हो उठे और उन्हें आलिंगन कर लिया। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को अपने अश्रुओं से भिगो दिया। वे बारम्बार कहने लगे, 'प्रभु की इच्छा से, मैं अब वैष्णव जनों के आते जाते हुए तुम्हें देखूँगा। मैंने तुम्हारे बारे में सब सुन लिया है। मैं तुम्हें देखकर प्रसन्न हो गया हूँ और अब मेरी मनोकामना पूर्ण हो गई है।'

यह कहकर उन्होंने श्रीनरोत्तम दास का हाथ पकड़ा और उन्हें एक निर्जन स्थान पर ले गए और विनम्रता से कहा, 'हे नरोत्तम मैं जब तोटा गोपीनाथ (तोटा माने बगीचा) के श्रीविग्रह के दर्शन करता हूँ तो सदैव रो पड़ता हूँ। मैं स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख पाता। बाग के मध्य में इस सुन्दर स्थान को देखो। सौभाग्यशाली व्यक्ति इस स्थान पर आनन्दमय लीलाओं को देखते थे। मेरे गुरुदेव श्रीगदाधर पंडित यहाँ बैठते थे और उनका हृदय श्रीमद्भागवत के पठन से आध्यात्मिक भावों से भर उठता था।

अपने सुन्दर मुख से वे श्रीमद्भागवत के छन्दों की व्याख्या करते थे। आनन्दमय आध्यात्मिक प्रेम की कितनी नदियाँ उनकी व्याख्या से बह निकलती थीं। उनकी दिव्य व्याख्या को सुनकर कौन विषादमय प्रेम से परिपूर्ण नहीं हो सकता? जो भी उन्हें एक बार श्रवण कर लेता, उन्हें कभी नहीं भुला सकता था।

श्रीगदाधर पंडित के जीवन के गुरु श्रीगौरहरि प्रभु, उनके साथ बैठ जाते और उनकी व्याख्या की मधुरता को श्रवण करते। इस स्थान पर श्रीनित्यानन्द राय बैठते थे और इस स्थान पर श्रीअद्वैत आचार्य बैठते थे। यहाँ श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और श्रीगदाधर दास बैठते थे। यहाँ श्रीमुकुन्द और श्रीनरहरि बैठते थे। वे सब एक नेत्र के समान श्रीगदाधर पंडित के मुख को निहारते रहते थे।

राय रामानन्द और प्रभु के अन्य अन्तरंग पार्षद भी इस स्थान पर बैठते थे। वे सब सूर्य के समान दीप्तिमान थे। प्रभु गौरचन्द्र के अन्तरंग पार्षदों के तेज का वर्णन करने की सामर्थ्य किस में है। उन्हें निहारते हुऐ देवता भी लज्जित हो जाऐं। रथयात्रा के समय वे सब लीलाओं का आनन्द लेते थे। उनका विचार करते हुए मैं हृदय विदारक अनुभव करता हूँ।

हे नरोत्तम, कई बार श्रीगदाधर पंडित निर्जन स्थान पर श्रीगदाधर दास से भक्ति चर्चा करते थे। मेरे पास वह सामर्थ्य नहीं है कि उन शब्दों का वर्णन करूँ जो स्नेहवश श्रीगदाधर दास ने श्री खण्डवासी नरहरि से इस स्थान पर कहे थे। श्रीदामोदर को इस स्थान पर लाकर श्रीगदाधर पंडित ने उन विचारों का वर्णन किया जो उनके हृदय में स्थित थे।

श्रीगोपीनाथ में श्रीगौरचन्द्र

जिस समय श्रीविग्रह की सेवा होती तब श्रीगौरचन्द्र प्रभु वहाँ आकर श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह के सम्मुख खड़े हो जाते थे। श्रीविग्रह को निहारते हुए वे बार-बार वस्त्रों और आभूषणों की प्रशंसा करते। जब वे ये शब्द बोलते तो कौन जान सकता था कि श्रीगौरचन्द्र प्रभु के हृदय में क्या चल रहा है?

गदाधर पंडित की केवल दो जिम्मेदारियां थीं- श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह की सेवा करना और श्री क्षेत्र में वास करना। उनका और कोई दायित्व नहीं था। यह सोचकर कि, 'श्री गौरसुन्दर सदैव नीलाचल में रहेंगे' उन्होंने वहाँ रहने का प्रण कर लिया।' प्रभु के सान्निध्य का त्याग करना उनके लिए असहनीय था।

जब श्रीगौरांग प्रभु ने अन्य स्थानों की यात्रा करने के लिए श्री क्षेत्र से प्रस्थान किया, श्रीगदाधर पंडित अपने प्रण से पीछे हट गए और प्रभु का अनुसरण करने लगे। श्रीगौरसुन्दर ने अनेक प्रकार से उन्हें मना किया परन्तु

रत्नावती के पुत्र और अधिक उत्तेजित होते जाते थे। हे नरोत्तम, श्रीगदाधर पंडित ने इस स्थान पर कितनी लीलाओं का आनन्द लिया?

श्रीगदाधर पण्डित का क्षेत्र संन्यास

श्रीचैतन्यचरितामृत (16-130-143) में यह कहा गया है। जब श्रीगदाधर पंडित ने प्रभु के साथ चलना आरम्भ किया, उन्हें साथ आने से मना कर दिया गया था और उन्हें क्षेत्र संन्यास का प्रण न छोड़ने के बारे में कहा गया। जब उन्हें जगन्नाथ पुरी वापिस लौटने का निवेदन किया गया, श्रीगदाधर पंडित ने प्रभु को बताया, 'तुम जगन्नाथ पुरी में जहाँ भी रह रहे हो। मेरे तथाकथित क्षेत्र संन्यास के प्रण को भंग हो जाने दो।'

जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीगदाधर पंडित से जगन्नाथ पुरी में रहने और श्रीगोपीनाथ की सेवा में मग्न होने को कहा तो श्रीगदाधर पंडित ने उत्तर दिया, 'श्रीगोपीनाथ की सेवा करने वाला मात्र आपके चरणकमल के दर्शन कर कोटि बार सेवा कर लेता है।' तब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, 'अगर तुम उनकी सेवा रोकते हो तो यह मेरा अपराध होगा। उत्तम यही है कि तुम यहाँ रहो और सेवा करो। यह मेरी तृप्ति होगी।'

पंडित ने उत्तर दिया, 'सब अपराध मेरे सिर पर होंगे। मैं आपके साथ नहीं चलूँगा बल्कि मैं अकेला जाऊँगा। मैं शची माता के दर्शन करने जाऊँगा परन्तु मैं आपके कारण वहाँ नहीं जाऊँगा। मैं अपने प्रण से पीछे हटने और श्रीगोपीनाथ जी की सेवा रोकने के लिए स्वयं जिम्मेदार रहूँगा।'

इस प्रकार श्रीगदाधर पंडित ने अकेले यात्रा की परन्तु जब वे कटक पहुँचे तो श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें बुलवा लिया और वे प्रभु के संग चले गए। कोई भी श्रीगदाधर पंडित और श्रीचैतन्य महाप्रभु के मध्य प्रेमपूर्ण आत्मीयता को नहीं समझ सकता। श्रीगदाधर पंडित ने अपना प्रण और श्रीगोपीनाथ जी की सेवा का ऐसे त्याग कर दिया जैसे कोई घास का तिनका फेंक दे।

सक्रोध सेवा आदेश

श्रीचैतन्य महाप्रभु के हृदय में श्रीगदाधर पंडित के प्रति अति मधुर भाव था फिर भी प्रभु ने अपना स्नेहमय क्रोध दिखाते हुए हाथ उठाया और बोले, 'तुमने श्रीगोपीनाथ जी की सेवा रोकी है और पुरी में रहने के अपने प्रण से पीछे हटे हो। यह दोष पूर्ण है क्योंकि तुम इतनी दूर आ गए हो। तुम्हारी मुझे देखने की इच्छा मात्र एक सन्तुष्टि के भाव की कामना है। इस प्रकार तुम दो धार्मिक दायित्वों को तोड़ रहे हो और इस कारण से मैं अत्यन्त अप्रसन्न हूँ। अगर तुम मेरी प्रसन्नता चाहते हो तो कृपया नीलाचल लौट जाओ। तुम इस विषय में आगे कुछ भी कह कर मात्र मेरा विरोध करोगे।'

यह कहकर श्रीचैतन्य महाप्रभु एक नौका में सवार हो गए और श्रीगदाधर पंडित तत्क्षण अचेत हो भूमि पर गिर गए। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य को आदेश दिया कि श्रीगदाधर पंडित को अपने साथ ले जाऐं। श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य ने श्रीगदाधर पंडित से कहा, 'उठो! श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाएं ऐसी ही हैं।'

यह अद्भुत गतिविधियां देखकर प्रभु के अन्तरंग पार्षद भी अचम्भित थे। प्रभु के आदेश पर श्रीसार्वभौम और अन्य भक्तों ने श्रीगदाधर को सांत्वना दी और घर ले आए। जब तक श्रीगौरांग प्रभु श्री क्षेत्र लौट कर वापिस नहीं आए, श्रीगदाधर ने अत्यधिक कष्ट सहन किया। हर जगह सत्य प्रकट हो गया। यह सत्य है कि श्रीगदाधर पंडित अत्यधिक योग्य, ब्राह्मणों के वरिष्ठ और संन्यासियों के महान् उदार आदर्श थे।

श्रीराधा-श्रीगदाधर

अवनिसुरवरः-श्री-पंडिताख्यो-यतीन्द्रः
स खलु भवति राधा श्री-गौरावतारे
नरहरि-सरकारस्यापि दामोदरस्य
प्रभु-निज-दयितानाम तच्च सारं मतं मे

'जब श्रीगौर प्रभु इस संसार में अवतरित हुए, **श्रीराधा, गदाधर पंडित** बन गई थीं। जो कि ब्राह्मण और संन्यासियों में श्रेष्ठ हैं। यह नरहरि सरकार का, प्रभु के अनेकों प्रिय भक्तों का और मेरा स्वरूप दामोदर का भी अंतिम मत है।'

'हे नरोत्तम, श्रीगदाधर पंडित की महिमा के विषय में मैं क्या कहूँ।' प्रभु गौर उनके जीवन के गुरु थे। यह सर्व विदित है। श्रीगदाधर, प्रभु गौरांग का विरह सहन नहीं कर सकते थे। वे श्रीगौरांग को निहारते हुए सदैव परम आनन्द के सागर में तैरते रहते थे।

'जब अपने पार्षदों के संग श्रीगौरसुन्दर वापिस श्रीवृन्दावन लौटे तब श्रीगदाधर पंडित गोस्वामी ने उनके मुख को निहारा और तत्क्षण प्रेम भक्ति के आनन्दातिरेक से अभिभूत होकर अचेत हो गए। सौभाग्यशाली जीवों ने इन सब लीलाओं को देखा है।'

हे नरोत्तम, इन लीलाओं के वर्णन का कोई अंत नहीं है। गौड़-देश से यहाँ आते हुए श्रीनित्यानन्द यहाँ रुके और श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह को निहारा। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीगदाधर पंडित से भेंट की। वे सब जिन्होंने उन्हें देखा, सौभाग्यशाली हैं। यह सर्वविदित है।

श्रीचैतन्य भागवत (अन्त्य 7.116-125) में यह कहा गया है। 'जो श्रीविग्रह त्रिभंगी है, अधरों पर वंशी धारण किए हैं, इस श्रीविग्रह को देखकर श्रीनित्यानन्द प्रभु प्रसन्नता से अश्रु बहाने लगे, जिनका कोई अन्त नहीं था। यह जानकर कि

श्रीनित्यानन्द प्रभु का आगमन हुआ है, श्रीगदाधर पंडित ने श्रीमद्भागवत का पठन रोक दिया और तत्काल उनके पास गए। वे दोनों एक-दूसरे का मुख निहारने लगे। एक-दूसरे को कण्ठ से लगाकर वे रोने लगे। दोनों ने एक-दूसरे के प्रति सम्मान व्यक्त किया। दोनों ने एक-दूसरे को गौरवान्वित किया।'

वे दोनों बोले, 'अब हमारे नेत्र विशुद्ध हो गए।' उन दोनों ने कहा, 'अब मेरा जीवन सफल हो गया।' उन दोनों में बाह्य चेतना अब उपस्थित नहीं थी-वे दोनों परम आनन्द और प्रेम के सागर में बहने लगे।

श्रीगदाधर एवं श्रीनित्यानन्द

इस महान समर्पण और प्रेम के प्रदर्शन को देखकर, चारों दिशाओं में भक्त भूमि पर गिर पड़े और रोने लगे। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीगदाधर पंडित ने जो प्रेम अनुभव किया वह कितना अद्भुत था। परन्तु उन्होंने प्रेम और समर्पण के शब्द के अलावा कुछ भी नहीं कहा।

श्रीगदाधर पंडित की उन लोगों का मुख देखने की कोई इच्छा नहीं थी, जिन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु की आलोचना की हो। वास्तव में वे किसी ऐसे व्यक्ति का मुख नहीं देखेंगे जो श्रीनित्यानन्द प्रभु से प्रेम न करता हो।

'हे नरोत्तम, जब मैं इन दोनों के मिलन का स्मरण करता हूँ, मेरे प्राणों के अश्रु निकल आते हैं। अनेकों क्षणों के लिए शांतिपूर्वक बैठे श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीगदाधर पंडित, श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं को महिमा मण्डित करते हैं। श्रीगदाधर पंडित गोस्वामी ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को यह कह कर निमंत्रित किया, 'आज तुम यहाँ अपना भोजन करो।' गौड़-देश से श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीगदाधर पंडित के लिए 40 कि.ग्रा. चावल का थैला भेंट स्वरूप लाए थे।'

'श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपने हृदय में विचार किया,' मैं नहीं जानता था कि मैं और क्या लाऊं। उच्चस्वर में श्रीनित्यानन्द ने कहा, 'हे पंडित, कृपया यह चावल श्रीगोपीनाथ प्रभु को निवेदन करो और शेष प्रसाद रूप में ग्रहण करो।' इस प्रकार श्रीनित्यानन्द प्रभु ने चावल श्रीगदाधर पंडित को दिए। चावल को देखकर श्रीगदाधर पंडित ने अनेक बार उनकी प्रशंसा की।''

श्रीगोपीनाथ जू का भोग

'श्रीगदाधर पंडित ने कुछ चावल पकाए और कुछ शाक और मसालेदार सब्जी भी पकाई। शीघ्रता से उन्होंने इमली के पत्तों की चटनी बनाई, इस भोजन की मधुर सुगन्ध बाग कुटीर में फैल गई। इस प्रकार उन्होंने अमनियाँ को श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह को निवेदन किया। तब श्रीगौरांग प्रभु, जो सबके हृदय में उपस्थित हैं, अचानक वहाँ आ गए। उन्होंने कहा, 'तुम दोनों ने जो किया, उसे छिपाने का प्रयास कर रहे हो। मैं इस प्रसाद का हिस्सा प्राप्त करने

का अधिकारी हूँ, ये तुम नहीं जानते। मैं कभी भी तुम दोनों से अलग नहीं हूँ। इस कारण मैं तुम्हें ये बताना चाहता हूँ कि तुम जो कर रहे हो वह थोड़ा अनुचित है।'

यह शब्द सुनकर श्रीगदाधर पंडित ने अत्यन्त प्रसन्नता से प्रसादी भोजन श्रीचैतन्य प्रभु के सम्मुख निवेदन कर दिया। चैतन्य महाप्रभु ने तब कहा, 'इस प्रसाद को तीन बराबर हिस्सों में बाँटो, हम तीनों इकट्ठे बैठेंगे और भोजन ग्रहण करेंगे।' यह बोलकर और शीघ्रता से भोजन को तीन भागों में बाँटकर श्रीगौरहरि प्रभु प्रसाद पाने बैठ गए।

उनके दाईं ओर श्रीनित्यानन्द थे। उनके बाँई ओर श्रीगदाधर पंडित थे। उनके वैभव का स्मरण करते हुए, मेरा हृदय यह अनुभव करता है कि वह अधिक देर तक सचेत नहीं रह सके। कोमलता से मुस्कुराते हुए और शाक व इमली की चटनी की प्रशंसा करते हुए श्रीगौरचन्द्र प्रभु ने प्रसाद पाया। प्रसन्न हृदय से श्रीनित्यानन्द प्रभु ने भी प्रसाद पाया। कोमलता से मुस्कराते हुए उन्होंने श्रीगदाधर पंडित को निहारा। अत्यधिक उल्लास से श्रीगदाधर पंडित ने प्रसाद पाया। मैं इस उत्सव के रूप में प्रकटित आनन्दमय लीला के अंत का वर्णन नहीं कर सकता।

अपना मुख प्रक्षालन करने के बाद तीनों प्रभु पुनः बैठ गए। इन सब लीलाओं का ध्यान करते हुए, मुझे प्रतीत होता कि हृदय विदीर्ण हो रहा है। हे नरोत्तम देखो, देखो, यहाँ इस निर्जन स्थान पर श्रीगदाधर पंडित का प्राचीन जीर्ण-शीर्ण आसन है। इस स्थान पर श्रीगौरहरि प्रभु, जो कि श्रीगदाधर पंडित के प्राण हैं, बैठ जाते थे। जैसे ही वे श्रीमद्भागवत के पदों का आनन्द लेते, प्रभु के नेत्रों से अश्रु बहने लगते जो ग्रन्थ को भिगो देते। उस स्थान को देखो जहाँ प्रभु लीलाओं का आनन्द लेते थे, वह स्थान तुम्हारे नेत्रों के सामने है। श्रीगौरहरि प्रभु और श्रीगदाधर पंडित की इस बाग कुटीर में हुई सम्पूर्ण लीलाओं का वर्णन करने की मुझे में सामर्थ्य नहीं है।'

श्रीमन्महाप्रभु का गोपीनाथ मन्दिर में अन्तर्ध्यान

हे नरोत्तम श्रीगौरहरि प्रभु ने कोमलता से श्रीगदाधर पंडित से इस स्थान पर क्या कहा? मैं नहीं जानता। उनके नेत्रों से अश्रुओं की धारा बह निकली। उन्हें देखकर पाषाण हृदय व्यक्ति का हृदय भी पिघल जाता। संन्यासियों के शिरोमणि श्रीचैतन्य महाप्रभु के चाल-चलन को समझने की सामर्थ्य किस में है? अचानक पृथ्वी गहन अंधकार में ढँक गई और महाप्रभु ने श्रीगोपीनाथ जी के गर्भ गृह में प्रवेश किया और अदर्शित होकर, पुनः बाहर नहीं आये। प्रभु की इस संगोपन लीला के समय जो कुछ हुआ, लाखों मुखों से भी उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

श्रीगदाधर पंडित को गौर प्रभु ने यह आदेश दिया। 'श्रीनिवास नाम का एक ब्राह्मण अत्यधिक पीड़ा सहन कर रहा है। मार्ग में चलते हुए उसने मेरे अन्तर्धान होने के बारे में श्रवण किया। तब उसने अपने प्राण त्यागने का निर्णय किया। उस समय मैंने उसे शान्ति प्रदान की। वह तुम्हारे पास आएगा। तुम्हारी करुणा उसकी सुरक्षा करेगी। तुम सब जानते हो। इससे अधिक मैं और क्या कहूँ? मेरी इच्छा से वह कुछ दिवस तुम्हारे साथ ही रहेगा।'

यह शब्द कहकर गौर प्रभु ने पुनः श्रीगदाधर पंडित को शांत किया। कुछ दिवस बाद श्रीनिवास आचार्य इस स्थान पर आए। श्रीनिवास प्रेम भक्ति के अवतार के समान थे! उनके नेत्रों से सदा अश्रुओं की धारा बहती रहती थी। वे किशोर अवस्था में थे। उनका तन कितना अद्‌भुत सुन्दर था।

हे नरोत्तम, इस स्थान पर श्रीनिवास श्रीगदाधर पंडित के चरणकमलों में आदर सहित प्रणाम करने के लिए भूमि पर प्रणिपात हो गए थे। अपनी भुजाऐं फैलाकर श्रीगदाधर पंडित ने उनका आलिंगन कर लिया। उनके नेत्रों के अश्रुओं ने श्रीनिवास को भिगो दिया। जैसे माता और पिता अपने पुत्र से प्रेम करते हैं, श्रीगदाधर पंडित ने श्रीनिवास से प्रेम किया। मेरे हृदय में क्षमता नहीं कि जो करुणा गदाधर पंडित ने श्रीनिवास पर बरसाई, उसे समझ सकूँ। विदा लेकर श्रीनिवास श्रीवृन्दावन को प्रस्थान कर गए। दुःख से भरे, श्रीगदाधर पंडित इसी स्थान पर रह गए।

दिवस प्रति दिवस उनका कोमल तन और अधिक क्षीण होता गया। दिवस रात उनके नेत्रों से अश्रुओं की वर्षा होती रहती थी। उनकी लम्बी गहरी साँसें अग्नि की लपटों के समान थीं। तब अचानक वे इस संसार से अन्तर्धान हो गए। उस समय भक्तों की स्थिति का वर्णन मैं नहीं कर सकता। केवल प्रभु की इच्छा से ही वे किसी प्रकार जीवित थे।

पूर्व में उन्होंने मुझे एक कथा बताई। तब पीड़ा सहने के समय मैंने तुम्हें देखा। यद्यपि मैंने अनुभव किया कि हृदय अग्नि की लपटों में जल रहा है परन्तु जब मैंने तुम्हें देखा तो प्रभु की इच्छा से मैं प्रसन्न हो गया।

नरोत्तम को उपदेश आज्ञा

हे नरोत्तम, सदैव पुण्यात्मा के समान और शान्तिपूर्वक रहना। प्रभु के प्रिय शिष्य श्रीनिवास से यह सब जो मैंने कहा वह पुनः कहना। तुम तत्काल नीलाचल का त्याग करो और गौड़-देश को प्रस्थान करो। लोगों को भक्तिमय सेवाओं की भेंट देते हुए इस प्रकार अनुकूलित भक्तों को आध्यात्मिक जीवन में सफल बनाओ। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने तुम्हें अपनी करुणा प्रदान की है। अब तुम लोगों के दुर्भाग्य का नाश करो।

तुम उन्हें संकीर्तन के परम आनन्द के सागर में डुबकी लगवाओ और तुम्हें गौर प्रभु के हृदय की सर्वोच्च परम आनन्द की कामना के बारे में उन्हें बताना चाहिए।

अतिप्रेम से इस प्रकार कहते हुए गोस्वामी जी ने श्रीनरोत्तम दास को आलिंगन में ले लिया, उन्हें श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह के प्रति सम्मान व्यक्त करवाया और उन्हें विदा किया।

श्रीकाशीमिश्र-श्रीगोपाल गुरु

श्रीनरोत्तम दास आगे काशी मिश्र के निवास पर चले गए। वहाँ उन्होंने श्रीगोपाल-गुरु से भेंट की। अति स्नेह और कोमलता से उनसे ये शब्द कहे, 'केवल भगवान् की इच्छा से ही जैसे-कैसे मैं जीवित हूँ। इस पवित्र स्थान को निहारते हुए, मैं शीघ्र इस जीवन से विदा ले लूँगा।'

हे नरोत्तम इस अति निर्जन स्थान को देखो, चैतन्य महाप्रभु यहाँ अकेले बैठ जाते व आसन आरम्भ करते थे। इस स्थान पर श्रीचैतन्य महाप्रभु विश्राम करते थे। श्रीगोविन्द उनके चरणकमलों का अंग-मर्दन करते। श्रीकृष्णचैतन्य की लीलाओं को समझने का पराक्रम किसमें है? उन्होंने प्रेम भक्ति भाव की उल्लसित लीलाऐं प्रकट कीं जो कि ब्रह्मा जी और देवतागण भी प्राप्त नहीं कर सकते।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की शैय्या और आसन को देख, श्रीनरोत्तम दास भूमि पर लोट गए। वे बारम्बार रोने लगे। उनका हृदय प्रेम भक्ति के आवेश से उत्तेजित हो गया, श्रीगोपाल-गुरु ने श्रीनरोत्तम का आालिंगन किया और वे भी उच्चस्वर में रोने लगे।

कुछ क्षणों के बाद श्रीगोपाल-गुरु शांत हो गए। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को सान्त्वना दी और उन्हें भी शांत किया।

श्रीगोपाल-गुरु ने श्रीनरोत्तम दास को उन स्थानों के दर्शन करवाए जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु परम आनन्द और प्रेम भक्ति के भाव सागर में डूब गए थे। श्रीगोपाल-गुरु ने श्रीवक्रेश्वर पंडित की तेजस्वी गतिविधियों के बारे में बताया। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को श्रीराधाकान्त के श्रीविग्रह के सम्मुख सम्मान व्यक्त कराया।

गुण्डिचा मन्दिर

भक्तों को प्रणाम करके, श्रीजगन्नाथ विप्र, श्रीनरोत्तम दास गुण्डिचा मन्दिर के दर्शन करने गए। श्रीजगन्नाथ विप्र ने श्रीनरोत्तम दास से कहा, 'इस मार्ग पर नीलाचल के चन्द्रमा भगवान् जगन्नाथ अपनी शोभायात्रा में जाते हैं। इस स्थान पर श्रीचैतन्य महाप्रभु रथयात्रा के रथ के आगे नृत्य करते थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु

का संकीर्तन सम्पूर्ण विश्व में विख्यात हुआ। यहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने रथयात्रा के रथ को अपने शीश से खींचा। भगवान् ब्रह्मा और देवतागणों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं को प्रशंसा करते हुए यहाँ पर देखा।'

यहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने राजा प्रतापरुद्र को करुणा प्रदान की। इस कार्य ने भगवान् के अन्तरंग पार्षदों के हृदय में परम आनन्द भर दिया। यहाँ अपने अन्तरंग पार्षदों के विजय-लक्ष्मी उत्सव को देखते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कुछ शब्द कहे। उल्लसित हृदय से श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके अन्तरंग पार्षदों ने इस बगीचे में महाप्रसाद पाया।

देखो! वहाँ आकर्षक गुण्डिचा मन्दिर है, जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अनेक लीलाओं का आनन्द लिया। यदि मेरे सहस्रों मुख होते तो भी मैं श्रीचैतन्य महाप्रभु को गुण्डिचा मन्दिर का मार्जन करने में जो आनन्द प्राप्त होता था, उसका वर्णन नहीं कर सकता। भक्तों के संग श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ इन्द्रद्युम्न-सरोवर में स्नान करते थे।

इस प्रकार ज्ञानी और निपुण **श्रीजगन्नाथ दास विप्र** ने श्रीनरोत्तम दास को श्रीचैतन्य महाप्रभु की अनेक लीला स्थलियों के दर्शन करवाए। श्रीनरोत्तम दास को अपने साथ लेकर श्रीजगन्नाथ विप्र, श्रीगोपीनाथ आचार्य के निवास पर गए। श्रीगोपीनाथ आचार्य को उन्होंने श्रीनरोत्तम दास की गतिविधियों का वर्णन दिया। श्रीगोपीनाथ आचार्य और अन्य भक्तों ने श्रीनरोत्तम दास पर करुणा बरसाई। मैं इन सब गतिविधियों का विस्तार से वर्णन नहीं कर सकता।

श्रीगोपीनाथ आचार्य ने सब भक्तों से कहा, 'मैं श्रीनिवास आचार्य को देखने योग्य नहीं होऊँगा। इसलिए तुम कृपया ये सब सूचना उन्हें दे दो। यह वर्णन श्रवण कर श्रीहृदय चैतन्य के शिष्य श्रीश्यामानन्द, आनन्द मग्न हो गए। उन्हें तत्क्षण यहाँ ले आऐं तब मैं उन्हें देख पाऊँगा।'

जैसे ही श्रीगोपीनाथ आचार्य ने ये शब्द कहे, उनके नेत्रों से अश्रु धार बह निकली। मुझमें सामर्थ्य नहीं कि मैं बता सकूँ कि कितनी शीघ्रता से उन सब भक्तों से विदा ली।

श्रीश्यामानन्द प्रभु

तत्पश्चात् श्रीनरोत्तम दास ने नीलाचल से प्रस्थान किया। वे श्रीश्यामानन्द प्रभु के दर्शन करने को उत्सुक थे। श्रीश्यामानन्द प्रभु प्रसन्नतापूर्वक ओड़िशा में आध्यात्मिक गतिविधियों में मग्न थे। अपने शिष्यों के संग संकीर्तन के अमृत का पान किया। उनकी मूर्खतापूर्ण निन्दक गतिविधियों से उनकी रक्षा करते हुए, उन्होंने उन्हें पवित्र प्रेम भक्ति भाव का उपहार दिया, ऐसा उपहार देवताओं को भी सुलभ नहीं है।

लोगों के मुख से यह सुनकर कि श्रीनरोत्तम दास ठाकुर आ चुके हैं, श्रीश्यामानन्द प्रभु अपने अनुचरों के दल का नेतृत्व करते हुए, प्रसन्नतापूर्वक उनसे भेंट करने गए। उनकी भेंट कितनी अद्‌भुत थी! सौभाग्यशाली लोगों ने देखा। श्रीश्यामानन्द प्रभु ने अनुभव किया कि मानों उनके प्राण वापिस लौट आए हों।

श्रीश्यामानन्द प्रभु, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को अपने निवास पर ले गए। नरसिंह पुर के लोग अति प्रसन्न हो गए। मैं इस समय दोनों भक्तों की आध्यात्मिक गतिविधियों का विस्तार से वर्णन नहीं करूँगा। एक दूसरे के प्रति उनमें जो परस्पर स्नेह था वह सर्वविदित है।

एक निर्जन स्थान पर बैठे हुए और अनेक विषयों पर चर्चा करते हुए श्रीनरोत्तम दास और श्रीश्यामानन्द ने दिवस रात व्यतीत किए। श्रीश्यामानन्द प्रभु को जगन्नाथ क्षेत्र के बारे में समाचार बता कर श्रीनरोत्तम दास रो पड़े, उनके नेत्रों से अश्रु धारा बह निकली। श्रीनरोत्तम दास ने उदास होकर विदा ली और गौड़-देश की यात्रा अनवरत रखी।

तत्क्षण श्रीश्यामानन्द प्रभु नीलाचल के लिए प्रस्थान कर गए। इसी समय श्रीनरोत्तम दास ठाकुर का बंगाल में आगमन हुआ। श्रीखण्ड के दर्शन कर श्रीनरोत्तम दास रो पड़े और उनके नेत्रों से अश्रु बह निकले। तब उन्होंने श्रीनरहरि सरकार के निवास में प्रवेश किया। 'नरोत्तम आ चुके हैं' यह शब्द सुनकर श्रीनरहरि सरकार ने क्या अनुभव किया, इसका वर्णन करने के लिए शब्दों की सामर्थ्य बहुत कम पड़ जाएगी।

श्रीनरहरि ने अपने पार्षदों से कहा, 'मैंने अपने नेत्रों से श्रीनरोत्तम दास के पिता जी को गौड़-देश से आते-जाते देखा है। वे कृष्णानन्द राय नाम के राजा थे। प्रभु की इच्छा से नरोत्तम का जन्म उनके घर हुआ था। प्रभु, नरोत्तम के माध्यम से बहुत कुछ करने की इच्छा रखते थे। मैं कब उनके दर्शन करुँगा? उन्हें मेरे पास लाओ।'

उसी क्षण श्रीनरोत्तम दास, श्रीनरहरि सरकार के समक्ष उपस्थित हुए। श्रीनरोत्तम ने आभार व्यक्त किया। उनके नेत्रों से प्रचुर मात्रा में अश्रु बह निकले।

श्रीनरोत्तम को निहारते हुए और स्नेहवश आलिंगन कर श्रीनरहरि ठाकुर ने उन्हें अपने अश्रुओं में भिगो दिया। श्रीनरहरि ने उनसे अनेकों प्रश्न पूछ डाले और धीरे-धीरे उन्होंने सब कुछ बता दिया। प्रभु के शेष पार्षद श्रीजगन्नाथ-क्षेत्र में हैं, यह समाचार सुनकर श्रीनरहरि ठाकुर उदास हो गए। वे अपने हृदय को शांत न रख सके।

कुछ क्षण पश्चात् श्रीनरहरि पुनः शांत हो गए और बोले, 'तुम शीघ्र नीलाचल लौट जाओ। मैंने स्वयं तुम्हें अपने नेत्रों से देखा है। तुम प्रभु की इच्छा

को पूर्ण करोगे। तुम दीर्घायु होओ और आध्यात्मिक सेवाओं की महिमा का प्रचार करो।'

रघुनन्दन-आश्रय

यह कहकर श्रीनरहरि सरकार ठाकुर ने श्रीनरोत्तम दास को श्रीरघुनन्दन को सौंप दिया, जो उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु के मन्दिर के प्रांगण में ले गए। श्रीगौरचन्द्र प्रभु के श्रीविग्रह को निहारते हुए, जो कि विश्व को आकर्षित कर रहे थे, उल्लास से भर श्रीनरोत्तम दास ने उन्हें प्रांगण में प्रणाम किया।

तब श्रीनरोत्तम दास ने प्रभु के सब भक्तों से भेंट की और तत्पश्चात श्रीरघुनन्दन ने उन्हें याजिग्राम भेजा। उनका हृदय उद्वेलित हो गया, श्रीनरोत्तम दास याजिग्राम में श्रीनिवास आचार्य के निवास पर गए। कौन इतनी सामर्थ्य रखता है कि इस घटना का वर्णन कर सके कि श्रीनिवास आचार्य ने क्या अनुभव किया, जब उन्होंने श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को अपने शिष्यों के साथ अपने निवास के बाहर खड़े देखा।

इससे पहले कि श्रीनरोत्तम दास को उन्हें प्रणाम करने का अवसर मिलता, श्रीनिवास आए और उन्हें आलिंगन कर लिया। तब उन्होंने श्रीनरोत्तम दास का परिचय वहाँ सब भक्तों से करवाया। बाद में निर्जन स्थान पर उनके साथ बैठकर श्रीनिवास आचार्य ने उनसे अनेक प्रश्न पूछे। दुःख से भरे श्रीनरोत्तम ने प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दिया।

श्रीनिवास आचार्य की इच्छा थी कि वे उन्हें नीलांचल, नवद्वीप और अन्य स्थानों के बारे में भी बतायें। उनकी चर्चा का कोई अंत नहीं था। जब उन्होंने सब श्रवण कर लिया तब श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास को देखा। वे शांतिपूर्वक न रह सके। कौन जानता है कि उन दोनों के हृदय में क्या था? कुछ क्षणों के बाद उन दोनों ने रोना बन्द कर दिया और वे पुनः शांत हो गए।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास से कहा, 'खेतुरी जाओ। विलम्ब न करो। मैं क्या कहूँ? तुम वहाँ तत्काल प्रचार करना आरम्भ कर दो। तुमसे यही अपेक्षित है। तुम्हें श्रीविग्रह की सेवा का प्रबन्ध करना चाहिए। मैं शीघ्र वहाँ अपने शिष्यों के साथ आऊँगा। अगर मुझे विलम्ब हो जाए तो चिंता मत करना।'

यह कहकर प्रेमोन्मादित हृदय के साथ श्रीनिवास अपने अनुचरों के पास लौट गए और तत्क्षण श्रीनरोत्तम दास को विदा किया।

जब उन्होंने कंटक-नगर में प्रवेश किया तो श्रीनरोत्तम दास अपने नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं पर नियंत्रण न रख सके। यह सुनकर कि श्रीनरोत्तम दास का आगमन हुआ है, श्रीगदाधर दास के दुःखी हृदय को अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव हुआ।

श्रीगदाधर दास से मिलन

श्रीगदाधर दास के सम्मुख जाकर श्रीनरोत्तम दास ने भूमि पर गिरकर उनको प्रणाम किया। श्रीनरोत्तम दास को देखकर श्रीगदाधर दास ने उन्हें उठाया और अपने नेत्रों के अश्रुओं से उनके तन को भिगोकर उन्हें आलिंगन किया। तब उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को अपने निकट बैठाया और सब कुछ पूछा। भावविभोर हो नरोत्तम दास ने जो वे बता सकते थे, वह सब वर्णन किया।

यह दुःख भरा समाचार श्रवण कर श्रीगदाधर दास को ऐसा अनुभव हुआ कि उनका हृदय टुकड़ों-टुकड़ों में फट गया हो। उन्होंने एक गहरी सांस ली जैसे अग्नि की एक ज्वाला हो। ग्रन्थ विस्तार के भय से वह सब वर्णित नहीं करूँगा जो श्रीगदाधर दास ने श्रीनरोत्तम से कहा।

खेतुरी प्रस्थान

श्रीगौरचन्द्र के श्रीविग्रह के रक्तवर्ण के चरणकमलों में स्वयं को समर्पित कर नरोत्तम दास ने तत्क्षण खेतुरी के लिए प्रस्थान किया। श्रीगौरचन्द्र के श्रीविग्रह को निहारते हुए, जो कि श्रीगदाधर दास के प्राण थे, श्रीनरोत्तम दास शांत न रह सके। जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण किया था, उस स्थान के दर्शन कर श्रीनरोत्तम दास पुनः स्वयं पर नियंत्रण न रख पाए। वास्तव में वे अचेत होकर भूमि को अपने अश्रुओं से भिगोते हुए गिर गए। मैं वर्णन नहीं कर सकता कि वे कितनी व्याकुलता पूर्वक रोए। उन्हें सान्त्वना नहीं दी जा सकती थी। उनका हृदय दुःख से परिपूर्ण हो चुका था।

अलग-अलग स्थानों पर श्रीनरोत्तम दास ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्तरंग पार्षदों से भेंट की। उन्हें विविध शब्दों के माध्यम से शांत कर उन्होंने उनसे विदा ली और राढ़-देश के लिए प्रस्थान कर गए। राढ़-देश के मध्य में एकचक्रा नाम का गांव है, जहाँ श्रीनित्यानन्द राम प्रभु प्रकट हुए। जैसे ही श्रीनरोत्तम दास ने एकचक्रा में प्रवेश किया, श्रीनित्यानन्द प्रभु एक वृद्ध ब्राह्मण के रूप में उनके सम्मुख प्रकट हुए। तब उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को उन सब स्थानों के दर्शन करवाए जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपने पार्षदों के साथ लीलाओं का आनन्द लिया था।

ब्राह्मण रूप में श्रीनित्यानन्द

श्रीनित्यानन्द प्रभु अधिक समय तक श्रीनरोत्तम दास से छल नहीं कर सकते थे अतः उन्होंने अपने वास्तविक रूप को नरोत्तम दास के सम्मुख प्रकट कर दिया। इन लीलाओं का वर्णन करने की सामर्थ्य कौन रखता है? श्रीनित्यानन्द प्रभु के दर्शन कर श्रीनरोत्तम दास के नेत्रों से अविरल अश्रुपात होने लगा और वे अचेत हो गए।

श्रीनित्यानन्द प्रभु की इच्छा से श्रीनरोत्तम दास कुछ समय बाद शांत हो गए। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने तब श्रीनरोत्तम दास को किसी अन्य को इन घटनाओं के बारे में बताने के लिए मना किया। स्वयं आप को श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर स्नेहपूर्ण हृदय से श्रीनरोत्तम दास ने एकचक्रा की परिक्रमा की। अंत में एकचक्रा के सभी निवासियों को प्रणाम कर श्रीनरोत्तम दास का हृदय श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा में डूब गया और वे वहाँ से प्रस्थान कर गए।

खेतुरी

स्थानीय निवासियों से खेतुरी की ओर जाने वाले मार्ग की दिशा पूछ कर श्रीनरोत्तम दास शीघ्रता से पद्मावती नदी के तट पर गए। उन्होंने नदी पार की और खेतुरी में प्रवेश किया। स्थानीय लोग उनसे भेंट करने आए। मैं क्या कहूँ? वे सभी लोग सौभाग्यशाली थे और श्रीनरोत्तम दास को निहारते हुए सबने ऐसा अनुभव किया मानो उनके हृदय को शीतल परम आनन्द की प्राप्ति हुई हो।

क्या सोचा लोगों ने

आनन्दपूर्ण हृदय से एक व्यक्ति ने दूसरे से कहा, 'उनके त्याग की कोई समानता नहीं की जा सकती।'

दूसरे व्यक्ति ने कहा, 'मेरे हृदय में यह चिंता है कि श्रीनरोत्तम ये सोचेंगे, 'मैं इस राज्य का अधिकारी हूँ, मैं यहाँ क्यों न वास करूँ?''

मगर एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'एक पवित्र वैष्णव के लिए, सभी स्थान समान हैं। इस भौतिक संसार में उतराते हुए पवित्र वैष्णवों ने नास्तिकों और निन्दकों को मुक्ति प्रदान की है।'

किसी ने कहा, 'इस स्थान पर अनेकों निन्दक निवास करते हैं। श्रीनरोत्तम दास को कभी इस राज्य में वास करने का अवसर प्राप्त नहीं होगा।'

इस प्रकार बोलते हुए लोग संदेह से भर उठे। उन्हें चिन्ता हो गई कि श्रीनरोत्तम दास उनको इस भौतिकवादिता की चकाचौंध के अन्धकार में छोड़कर पवित्र स्थानों की तीर्थ यात्रा पर चले जाएंगे।

इस प्रकार सोचते हुए लोग रो पड़े और बारम्बार अश्रु बहाने लगे। मानो वे अपलक अपने नेत्रों से श्रीनरोत्तम दास को निहार रहे हों।

उसी समय आकाशवाणी हुई, 'श्रीनरोत्तम दास प्रसन्नतापूर्वक सदैव यहाँ वास करेंगे। प्रभु की इच्छा से वे निन्दकों को मुक्ति प्रदान करने और उन्हें पवित्र आध्यात्मिक सेवाओं की भेंट देने आए हैं।'

इसे सुनकर हर कोई आश्चर्य से भर उठा। बार-बार वे श्रीनरोत्तम दास के चरणकमलों में प्रणाम करने लगे। आनन्दित हृदय से वे श्रीनरोत्तम दास के चारों ओर एकत्र हो गए। गांव में उनका प्रवेश कितना अद्भुत और श्रेष्ठ था।

श्रीनरोत्तम को अपने साथ लेकर सब लोग एक सुन्दर निर्जन स्थान पर गए। वहाँ नरोत्तम दास ठाकुर ने अपना घर बनाया। खेतुरी एक विशाल और सुन्दर गांव था। इसके अनेक पड़ोसी ग्राम विविध नामों से थे। इसमें अद्भुत आवास थे। उस क्षेत्र की राजधानी गोपालपुर थी। उस गांव में अनेक धनी व्यक्ति रहते थे। वहाँ सभी लोग झूठी भौतिक शान के सागर में डूबे हुए थे। वे नहीं सोचते थे, 'उनके भविष्य का मंगल कैसे होगा?'

मैं वर्णन नहीं कर सकता कि नरोत्तम दास को उन्हें देखकर उनके प्रति कैसी दया का अनुभव हुआ। राजा सन्तोष राय और अन्यों ने उत्सुकतावश श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के आगमन के बारे में बातें कीं।

श्रीनरोत्तम दास को विदा करने के बाद श्रीनिवास और याजिग्राम में उनके अनुचर स्वयं को शांत नहीं रख सके। श्रीखण्ड में प्रत्येक ने सुना, 'अब नरोत्तम दास प्रस्थान कर चुके हैं।' हर कोई श्रीनरोत्तम दास के आकर्षक व्यवहार और गतिविधियों के बारे में सोचने लगा।

श्रीरघुनन्दन तब याजिग्राम में आए। तत्काल उन्होंने श्रीनिवास के विवाह का प्रबन्ध किया। याजिग्राम में श्रीगोपाल चक्रवर्ती रहते थे। वे श्रीनिवास को विवाह में अपनी पुत्री देने के लिए सन्तुष्ट हो गए थे।

विवाह-उपक्रम

एक निजी स्थान पर श्रीरघुनन्दन ने अति मधुरता से श्रीगोपाल से कहा, 'तुम्हारी पुत्री श्रीनिवास आचार्य के लिये उपयुक्त है।'

यह शब्द सुनकर श्रीगोपाल चक्रवर्ती प्रसन्न हो गए। परिजनों को भावी विवाह के बारे में सूचित किया जा चुका था। उन सब ने कहा, 'इसी क्षण कन्या को उन्हें दे दो।'

वैशाख मास की अमावस के तीन दिवस बाद, शुभ समय पर श्रीगोपाल चक्रवर्ती ने अपनी **कन्या का विवाह श्रीनिवास आचार्य** से कर दिया। पूर्व में हर कोई उस कन्या को द्रोपदी के नाम से पुकारता था परन्तु विवाह के दिवस पर उनका नाम ईश्वरी रखा गया। वे कितनी मधुर और आकर्षक थीं! वे स्वर्णिम मूर्ति के समान थीं। वे आध्यात्मिक सेवा के अवतार के समान थीं। उनके गुणों की कोई सीमा नहीं थी। मुझ में सामर्थ्य नहीं कि मैं उनके श्रीनिवास से विवाह के समय उनकी प्रभा और महिमा का वर्णन कर सकूँ, और उस समय श्रीनिवास ने ही उन्हें दीक्षा मन्त्र प्रदान किया।

इस संदर्भ में मैं वर्णन करूँगा कि ब्राह्मण श्रेष्ठ श्रीगोपाल तत्काल श्रीनिवास आचार्य के शिष्य बन गए। श्रीगोपाल के दो पुत्र श्रीश्याम दास और श्रीरामचन्द्र जिन्हें कुछ लोग श्यामानन्द और रामानन्द पुकारते थे, उन्होंने भी श्रीनिवास आचार्य से दीक्षा ली। उनका चरित्र और गतिविधियां अद्भुत थीं। यह हर कोई जानता था। इस कारण मैंने संक्षेप में उनका वर्णन किया है।

अपनी पुत्री को विदा करके श्रीगोपाल चक्रवर्ती ने सभी अतिथियों का सम्मान किया। गांव के सभी पुरुषों और स्त्रियों ने कहा, 'ब्राह्मण गोपाल अति सौभाग्यशाली हैं!' इस प्रकार श्रीनिवास आचार्य का विवाह हुआ। उस समय प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में अति उल्लास भर उठा था। मैं वर्णन नहीं कर सकता कि कैसे श्रीनरहरि सरकार को वात्सल्य प्रेम की अनुभूति हुई जब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य के विवाह के बारे में समाचार प्राप्त किया।

यह समाचार प्राप्त करके श्रीगदाधर दास और अन्य भक्तों ने परस्पर वार्ता के दौरान श्रीनिवास आचार्य की प्रशंसा की। श्रीनिवास आचार्य प्रायः अपने शिष्यों को गोस्वामी गणों के ग्रन्थ पढ़ाते थे। श्रीनिवास आचार्य आध्यात्मिक ज्ञान के अगाध सागर थे। उन्हें बोलते हुए श्रवण कर प्रत्येक व्यक्ति अपने हृदय में आश्चर्य की अनुभूति करता था।

द्विज हरिदास के दो सुपुत्रों को दीक्षा

द्विज हरिदास, श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय अन्तरंग शिष्य थे। उनके दो पुत्र श्रीदास और गोकुलानन्द ने निश्चय किया कि जब श्रीगौरचन्द्र प्रभु ने हमारा त्याग किया तो हमारे पिता वृन्दावन चले गए थे। उस समय उन्होंने हमें आदेश दिया कि हम श्रीनिवास आचार्य के शिष्य बन जाएं। कुछ दिवसों के बाद श्रीनिवास आचार्य ब्रज से यहाँ आए। हमारी जिम्मेदारी में विलम्ब क्यों हो? आओ हम तत्काल श्रीनिवास आचार्य के दर्शन करने चलें।

यह बोलते हुए दोनों पुत्रों ने याजिग्राम से प्रस्थान किया और आनन्दपूर्ण हृदय से श्रीनिवास आचार्य के दर्शन करने गए। अपने पिता के आदेश का लक्ष्य अब उनके नेत्रों के सामने था। वे श्रीश्रीराधा और श्रीकृष्ण के प्रेमामृत के सागर में डूब गए।

श्रीनिवास आचार्य द्वारा उनके बारे में पूछने पर दोनों भाइयों ने अपनी पहचान व्यक्त कर दी। बारम्बार उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को प्रणाम किया। श्रीनिवास आचार्य को अपना परिचय देकर दोनों बालक अति सम्मान और आध्यात्मिक भावों में भरे, अपने नेत्रों से बहते अश्रुओं में ही तैर गए।

श्रीदास और श्रीगोकुलानन्द ने निवेदन किया, 'कृपया हमें दीक्षा प्रदान कीजिए। हे करुणानिधान, हम पर करुणा बरसाइये।'

श्रीनिवास आचार्य ने कहा, 'अभी दीक्षा के लिए तुम प्रतीक्षा करो।'

तब उन्होंने उन्हें गोस्वामी गणों के ग्रन्थों के पठन में व्यस्त कर दिया और दोनों बालकों ने सावधानी पूर्वक उनका पठन किया। मैं उनकी सभी अद्‌भुत गतिविधियों का वर्णन नहीं कर सकता।

दोनों बालकों के हृदय में श्रीनिवास आचार्य के प्रति अगाध सम्मान था। वे सदैव श्रीनिवास आचार्य के शिष्यों के साथ रहते।

एक दिवस याजिग्राम में श्रीनिवास आचार्य एक सरोवर के पास गए जो उनके निवास के पश्चिम में था। अपने पार्षदों के साथ वे वहाँ बैठ गए। उस समय उनकी आभा सूर्य के समान थीं। करुणा भरे नेत्रों से उन्होंने मार्ग की ओर निहारा। तब उन्होंने एक धनी व्यक्ति को पालकी में सवार देखा। वैभवपूर्ण वस्त्रों से सुसज्जित वह व्यक्ति एक विवाह से अपने घर लौट रहा था। वह व्यक्ति कामदेव के समान सुन्दर था। वह अनेक आभूषणों से शोभित था। उसका रंग-रूप ताजे नवनीत की शुभ्रता को परास्त कर रहा था। उनकी आकृति स्वर्ण केतकी और चम्पक के पुष्पों के गर्व को पराजित कर रही थी। उनके शीश पर सुन्दर केश चमक रहे थे। उनका मस्तक तेजस्वी था। उनके नेत्र और भृकुटि हृदय को आनन्द प्रदान कर रही थी। उनके कर्ण नासिका और कपोल उत्कृष्ट और सुलक्षणों से युक्त थे।

उनका मुख मनोहर चन्द्रमा के समान था। उनके होंठ लाल थे। उनकी ग्रीवा शंख के समान अथवा सिंह की गर्दन के समान थी। उनका वक्षःस्थल चौड़ा था। उनका उदर और नाभि आकर्षक थे। उनकी त्रिभंग कटि अत्यन्त शोभायमान हो रही थी। उनकी भुजाऐं उनके घुटनों तक आ रही थीं। उनकी उंगलियां मनोहारी थीं। उनकी कमर क्षीण थी। उनके घुटने और चरण मनोहारी थे। उन्होंने नवीन, बहुत सुन्दर और अद्‌भुत वेशभूषा धारण कर रखी थी।

उन्हें देखकर श्रीनिवास आचार्य अचम्भित हो गए, 'क्या ये एक गन्धर्व पुत्र हैं अथवा अश्विनी कुमार हैं? उनकी युवावस्था और सौन्दर्य कितना अद्‌भुत है। मैं अपने हृदय में ये सोचता हूँ कि ये अवश्य ही कोई देवता हैं। यदि यह भगवान् कृष्ण की आराधना करते हैं तो यह अवश्य ही अपने सौन्दर्य का सही उपयोग करेंगे।'

श्रीरामचन्द्र कविराज को दीक्षा

इस प्रकार सोचते हुए श्रीनिवास आचार्य ने अपने पार्षद से पूछा, 'इस व्यक्ति का नाम क्या है? इसकी जाति क्या है? इसका निवास कहाँ है?'

प्रणाम करके किसी ने बताया, 'वे एक महान पंडित हैं। उनका नाम है श्रीरामचन्द्र कविराज। वे कवियों के राजा के रूप में विख्यात हैं। वे दिग्-विजयी

पंडित हैं और एक चिकित्सक भी हैं। वे सुविख्यात हैं। उनका जन्म चिकित्सकों के परिवार में हुआ है और उनका निवास कुमार-नगर में है।'

यह सब श्रवण करने के बाद कृपालु श्रीनिवास आचार्य सौम्यता से मुस्कुराए और अपने निवास पर वापिस आ गए। श्रीनिवास आचार्य के प्रश्न सुनकर श्रीरामचन्द्र ने पालकी में यात्रा जारी रखी। इस प्रकार उन्होंने प्रथम बार श्रीनिवास आचार्य के दर्शन किए। अपने हृदय में बार-बार विचार करते हुए श्रीरामचन्द्र ने स्वयं को श्रीनिवास आचार्य को समर्पित कर दिया। उन्होंने सोचा, 'पुनः कितने पलों के बाद मैं इनके दर्शन करूँगा?'

गम्भीर और विचारवान श्रीरामचन्द्र घर वापिस लौटते समय मौन रहे। वह दिवस उन्होंने अति दुःख में व्यतीत किया। वह रात्रि उन्होंने ब्राह्मण के निवास पर व्यतीत की। अगली प्रातः वे श्रीनिवास आचार्य के पास गए। उनके सम्मुख खड़े होकर श्रीरामचन्द्र रो पड़े। एक उखाड़े हुए वृक्ष के समान वे भूमि पर गिर गए। वे बार-बार उन्हें प्रणाम करने लगे। वे किंचित् भी शांत न रह सके।

अवरुद्ध और भावपूर्ण स्वर से श्रीरामचन्द्र ने तब श्रीनिवास आचार्य से बात की। उन्हें बोलते हुए श्रवण कर कौन शांत रह सकता है?

उन्होंने अपना मस्तक श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में रख दिया। वे भूमि पर जा गिरे और वहीं स्थित रहे, उनका तन रज से भर गया।

श्रीरामचन्द्र के हाथ पकड़कर श्रीनिवास आचार्य ने आनन्द से उन्हें ऊपर उठाया और आलिंगन किया। श्रीरामचन्द्र के मस्तक का अपने हाथ से स्पर्श कर श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें आशीर्वाद दिया। उनके नेत्रों में अश्रु भर आए, कोमलता से श्रीनिवास ने कहा, 'इसी प्रकार श्रीनरोत्तम से मेरी भेंट श्रीवृन्दावन में हुई थी। कौन सदैव श्रीनरोत्तम दास की महिमा का श्रवण करते हुए रोए बगैर रह सकता है? श्रीनरोत्तम एक नेत्र हैं और आप दूसरे। आप दोनों ही मेरे नेत्र हो। आप दोनों मेरी भुजाएं हो।'

जब श्रीरामचन्द्र ने श्रीनरोत्तम दास का नाम सुना तो उनके हृदय में उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम जाग उठा। मुस्कुराते हुए सौम्यता से श्रीनिवास आचार्य ने कहा, 'तुम्हारे हृदय की कामना शीघ्र पूर्ण होगी।'

यह श्रवण करते हुए, श्रीरामचन्द्र ने अपने विचार श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख प्रकट नहीं किए। श्रीनिवास आचार्य उन विचारों को समझ गए जो श्रीरामचन्द्र के हृदय में भरे थे। अति विस्तार से श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास के विषय में बात की।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरामचन्द्र कविराज पर अपार करुणा बरसाई। तब उन्होंने श्रीरामचन्द्र को गोस्वामी गणों के ग्रन्थों का मंगलमय अध्ययन आरम्भ करवाया। श्रीरामचन्द्र की अद्भुत विद्वत्ता को देखकर श्रीनिवास आचार्य ने एक

शुभ समय पर आनन्दपूर्ण हृदय से उन्हें श्रीराधा-कृष्ण मंत्र जप की दीक्षा प्रदान की।

अब श्रीनिवास आचार्य का शिष्य बनने के बाद श्रीरामचन्द्र विशुद्ध भक्ति के अमृत सागर में तैर गए। दिवस प्रतिदिवस उनके अद्भुत भक्ति भाव में वृद्धि होती गई। अपने ग्रन्थ में कविराज कर्णपूर ने यह कथा अति मधुरता से बताई है। जो कोई भी श्रीनिवास आचार्य और श्रीरामचन्द्र की यह कथा श्रवण करेगा, जो कि उल्लसित प्रेम से भरपूर है, वह भक्ति का अनमोल भूषण प्राप्त करेगा।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का ध्यान करते हुए श्रीनरहरि दास इस भक्ति रत्नाकर का लेखन करते हैं।

नवम प्रवाह

राजा वीरहम्वीर का अनुताप

श्रीशचीनन्दन गौरचन्द्र की जय जयकार हो। पद्मावती के पुत्र श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो। नाभादेवी के पुत्र श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो।

रत्नावती के पुत्र श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो। श्रीनिवास ठाकुर और श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय अन्य पार्षदों की जय जयकार हो।

मैं एक अज्ञानी व्यक्ति हूँ और वैष्णव प्रभु जनों से निवदेन करता हूँ कि मेरे लक्ष्य को परिपूर्ण करें। सभी पाठकों की जय जयकार हो जिनके गुणों की कोई सीमा नहीं।

वन विष्णुपुर के राजा श्रीवीर हम्वीर, श्रीनिवास आचार्य के दर्शन के प्रति उत्सुक हो गए। वे सदैव अचम्भित रहते थे कि उनके आध्यात्मिक गुरु विष्णुपुर कब वापिस लौटेंगे। वे स्वयं को इस विश्व में बिना किसी की देख-रेख वाला अर्थात् अनाथ मानते थे। श्रीनिवास आचार्य के बिना वे धीरे-धीरे गहन अन्धकार में डूब रहे थे। वे पूर्व में की गईं अपनी उन पापी गतिविधियों का पछतावा करते थे, जिनके कारण उनसे श्रीवृन्दावन के गोस्वामी गणों का अपमान हुआ था। उन अपराधों के कारण उन्होंने अनुभव किया कि वे कभी गोस्वामी गणों का अनुग्रह प्राप्त नहीं कर पाएंगे।

गोस्वामी गणों के प्रति अपने अपराधों का स्मरण करते हुए राजा मौन हो गए और स्वयं की निराशा को शांत करने का प्रयास करने लगे। राजा को इस मन:स्थिति में देखकर उनके दरबारी और मित्र उन्हें यह कहकर सांत्वना देने का प्रयास करने लगे कि श्रीनिवास आचार्य केवल कुछ दिवसों के लिए गए हैं और शीघ्र लौट आएंगे। वे राजा को ऐसा सोचने से रोकना चाहते थे क्योंकि वे जानते

थे कि श्रीनिवास आचार्य का उनके प्रति अगाध प्रेम है। वे जानते थे कि यदि श्रीनिवास आचार्य ने उन पर अनुग्रह किया तो राजा को गोस्वामी गणों की भी कृपा प्राप्त हो जाएगी। उन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि उनसे श्रीनिवास आचार्य के वृन्दावन के साथियों के प्रति जो असुविधा हुई है उसके प्रति पछतावा नहीं करना चाहिए।

श्रीजीव गोस्वामी का पत्र आया है

जिस समय दरबारी, राजा से इस प्रकार चर्चा कर रहे थे, ब्रज के दो व्यक्ति श्रीजीव गोस्वामी की ओर से दो पत्र लेकर आए। जब राजा तत्काल उनके चरणों में जा गिरे तो सन्देशवाहक उनके इस सविनय व्यवहार से स्तब्ध रह गए। कुछ समय बाद उन्होंने राजा को बताया कि वे राजा के विनम्र व्यवहार को प्राप्त करके अति प्रसन्न हैं, जिसके बारे में उन्होंने ब्रज में बहुत सुना था। तब उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी के दोनों पत्र उन्हें प्रदान किए, एक श्रीनिवास आचार्य के लिए था और एक स्वयं उनके लिए।

राजा ने सम्मान पूर्वक उन पत्रों को अपने नेत्रों और मस्तक से स्पर्श किया और स्वयं को अति सौभाग्यशाली मानते हुए पत्र खोलकर अश्रु विगलित नेत्रों से उन्हें पढ़ा।

श्रीजीव गोस्वामी के मृदु शब्द किसी के भी हृदय को भा जाऐंगे। पत्र को पढ़ कर राजा ने कहा कि श्रीनिवास आचार्य के साथी निश्चित ही दयालु हैं क्योंकि उन्होंने उन जैसे अयोग्य व्यक्ति को आशीष दिया है। राजा कृतज्ञतावश रुदन करने लगे और तत्पश्चात उन्होंने दोनों सन्देशवाहकों के प्रति अति शिष्ट और स्नेहमय व्यवहार प्रदर्शित किया।

क्योंकि उस समय श्रीनिवास आचार्य याजिग्राम में थे, राजा ने शीघ्रतापूर्वक पत्र लिखा और श्रीजीव गोस्वामी के पत्र के साथ संलग्न कर दिया। तब उन्होंने अपने दरबार से दो व्यक्तियों को श्रीनिवास आचार्य को पत्र देने भेज दिया।

श्रीनिवास आचार्य ने पत्र प्राप्त किए और श्रीजीव गोस्वामी के पत्र को मस्तक से लगाया। वे श्री जीव के पत्र से अति द्रवित हो गए और अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख पाये। जब उन्होंने स्वयं को शांत कर लिया तो सन्देशवाहकों ने श्रीनिवास आचार्य को राजा द्वारा प्रदत्त पत्र दिया। राजा के पत्र से श्रीनिवास आचार्य को स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि वे अधीरतावश उनसे पुनः भेंट करना चाहते थे। यद्यपि अपने उत्तर में श्रीनिवास आचार्य ने राजा को सूचित किया कि उनके आने में अभी कुछ विलम्ब है।

उन्होंने राजा को अनेक बातें लिखीं और सन्देशवाहक पत्र सहित वापिस विष्णुपुर लौट गए। राजा पत्र प्राप्त कर अत्यधिक प्रसन्न हो गए, जैसी कि

कल्पना की जा सकती है। याजिग्राम में श्रीनिवास आचार्य ने शिष्यों को पढ़ाया कि भगवान् श्रीकृष्ण को प्राप्त करने का सर्वश्रेष्ठ साधन भक्ति है।

आचार्य निरंतर अधीर रहते थे क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु के बहुत से पार्षद इस विश्व से प्रस्थान कर चुके थे और जो अभी जीवित थे वे दीर्घकाल तक जीवित नहीं रहेंगे।

अपनी अधीरता को हृदय में सम्हाले हुए श्रीनिवास आचार्य ने निडरतापूर्वक भक्ति के तत्त्वज्ञान का प्रचार किया और अनेक छात्रों को इस ओर आकर्षित किया। एक बार नीलाचल से दो ब्राह्मण, श्रीनिवास आचार्य से शिक्षा ग्रहण करने आए। वे सम्मानपूर्वक आचार्य के सम्मुख झुके और प्रति उत्तर में उन्होंने उन्हें आलिंगन में ले लिया।

श्रीनिवास आचार्य ने जगन्नाथ पुरी की स्थिति के बारे में पूछा और यह जानकर कि नीलाचल को दयनीय स्थिति में डालकर श्रीचैतन्य महाप्रभु के अधिकांश अनुचर पृथ्वी से प्रस्थान कर चुके हैं। उन्हें ये भी ज्ञात हुआ कि श्रीश्यामानन्द प्रभु नीलाचल गए थे परन्तु उन्हें महाप्रभु के कुछ ही पार्षद शेष दिखे। श्यामानन्द प्रभु इस शोक में बहुत विलाप करते हुए रोने लगे कि पत्थर और काष्ठ भी पिघल जाऐं। इसके बाद श्रीश्यामानन्द प्रभु श्रीवृन्दावन चले गए थे।

श्रीनिवास आचार्य भी रोए थे, जब उन्होंने यह समाचार सुना परन्तु गोस्वामी गणों के ग्रन्थों को पढ़ाते रहे, एक दिवस श्रीनवद्वीप से एक वैष्णव श्रीनिवास आचार्य से भेंट करने आए। श्रीनिवास आचार्य को उनसे ज्ञात हुआ कि श्रीशुक्लाम्बर और श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्य पार्षद कुछ समय पूर्व ही धरा से प्रस्थान कर गए हैं। उसी समय एक अन्य सन्देशवाहक यह समाचार लेकर श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख आया कि उसी दिवस ही श्रीगदाधर दास ने भी अपने अन्तर्धान होने की लीला की है। आचार्य इस समाचार से स्वयं को सम्हाल नहीं पाए और अचेत होकर भूमि पर जा गिरे।

करुण क्रन्दन

जब वे सचेत हुए तो श्रीनिवास इतने उच्चस्वर में रोए कि पशु और पक्षी भी उनके साथ रोने लगे। अंततः उन्होंने अपने भावों पर नियंत्रण किया और अपने शिष्यों से कहा कि वे श्रीवृन्दावन जाएँगे। उन्होंने अपने छात्रों को आश्वस्त किया कि उनकी अनुपस्थिति में श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी उनका मार्गदर्शन करेंगे ताकि वे उन हस्तलिपियों का वास्तविक अर्थ समझ सकें। इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से श्रीनिवास आचार्य ने अपने शिष्यों को अति विशिष्ट आशीष दिया।

एक दिवस श्रीनिवास आचार्य अकेले बैठे थे तो उन्होंने विचार किया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के अधिकांश पार्षद उन्हें अकेला छोड़कर अन्तर्धान हो चुके हैं। जब वे गहनता से इस स्थिति पर विचार कर रहे थे कि एक सन्देशवाहक वहाँ उन्हें ये सूचित करने हेतु आया कि श्रीनरहरि सरकार ठाकुर भी अन्तर्धान हो चुके हैं। इन शब्दों ने श्रीनिवास आचार्य पर विद्युत सा प्रहार किया। वे रोते हुए भूमि पर जा गिरे। उन्होंने सम्पूर्ण रात्रि अत्यंत दु:ख में व्यतीत की, यह संकल्प लेकर कि प्रात: वे भी संसार का त्याग कर देंगे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से श्रीगदाधर दास और श्रीनरहरि सरकार ठाकुर, श्रीनिवास आचार्य के स्वप्न में प्रकट हुए और उन्हें शांत किया। उन्होंने उन्हें यह आश्वासन देकर प्राण त्यागने से रोका कि वे सदैव उनके साथ रहेंगे। उनके स्वप्न में दोनों वैष्णव संतों ने उनका आलिंगन किया परन्तु जब वे जागे तो वे निराशा अनुभव करने लगे क्योंकि वे उन्हें अब और नहीं देख सकते थे। प्रात: उन्होंने गुप्त रूप से श्रीरामचन्द्र कविराज से बातचीत की और श्रीवृन्दावन के लिए निकल पड़े।

श्रीवृन्दावन प्रस्थान

श्रीनिवास आचार्य समय से पहले शीघ्रता से श्रीवृन्दावन पहुँच गए और सर्वप्रथम विश्राम घाट पर यमुना जी में स्नान किया। मथुरा के एक ब्राह्मण ने उन्हें देखा और अचम्भित हो गया कि कौन उन्हें बंगाल से इतनी शीघ्र मथुरा ले आया। वह श्रीनिवास आचार्य के पास गया और आदर सहित झुककर उनसे ब्रज आने का कारण पूछने लगा। जब श्रीनिवास आचार्य ने ब्रज के निवासियों का कुशलक्षेम पूछा तो ब्राह्मण ने गहरी साँस ली और उन्हें बताया कि यद्यपि वे माघ मास में शीघ्र यहाँ आ गए हैं, फिर भी यह अत्यधिक विलम्ब है। अगर श्रीनिवास आचार्य दस दिवस पूर्व आते तो शायद भक्तों के दर्शन कर सकते थे क्योंकि माघ मास में कृष्ण एकादशी के दिवस द्विज हरिदास संसार से प्रस्थान कर गए थे।

श्रीनिवास विलाप करने लगे कि वे द्विज हरिदास के दर्शन नहीं कर सके और ब्राह्मण अपनी तरफ से श्रेष्ठतम प्रयास करने पर भी उन्हें शांत न कर सके। तत्पश्चात श्रीनिवास आचार्य मथुरा से श्रीवृन्दावन चले गए।

वृन्दावन में श्रीनिवास आचार्य ने सभी गोस्वामी गणों से भेंट की और उनके चरणकमलों में झुककर प्रणाम किया। वे बसन्त पंचमी के दिवस वहाँ पहुँचे।

श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीभूगर्भ गोस्वामी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी और श्रीजीव गोस्वामी और अन्य गोस्वामी गण भी उस समय श्रीगोविन्द जी मन्दिर में थे जब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को आते देखा, सब ने हृदय से उनका

स्वागत किया और सभी ने एक के बाद एक उनका आलिंगन किया। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य से बंगाल के भक्तों की कुशलक्षेम पूछी और जब उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनेकों पार्षदों के संसार से प्रस्थान का समाचार सुनाया तो सभी विषाद से भर गए। वे विलाप करने लगे परन्तु वे समझ सकते थे कि श्रीनिवास आचार्य अपने दु:ख के कारण वृन्दावन आए हैं। इस कारण वे उन्हें सांत्वना देने लगे और तब सबने श्रीगोविन्द की राज भोग आरती में उपस्थिति दी।

श्रीश्रीराधा-गोविन्द के दर्शन मात्र से ही श्रीनिवास आचार्य अति प्रसन्न हो गए। तत्पश्चात श्रीनिवास आचार्य और अन्य गोस्वामीगणों ने मिलकर महाप्रसाद का आदर किया। तब गोस्वामी गण अपने-अपने निवास पर लौट आए और श्रीनिवास आचार्य श्रीजीव गोस्वामी के साथ चले गए।

श्रीश्यामानन्द का वृन्दावन प्रस्थान

श्रीश्यामानन्द प्रभु भी उस समय जगन्नाथ पुरी से श्रीवृन्दावन चले गए थे। सबसे पहले वे गए और श्री जीव गोस्वामी से भेंट की ताकि वे उनके चरणकमलों में प्रणाम कर सकें। श्रीजीव गोस्वामी ने स्नेहवश श्यामानन्द प्रभु का आलिंगन कर लिया और उन्हें बताया कि श्रीनिवास आचार्य उनके साथ थे। तब श्रीनिवास आचार्य आए और श्रीश्यामानन्द प्रभु के चरणकमलों में झुके। उनके हाथ पकड़ते हुए वे दोनों बैठ गए। तत्पश्चात कुछ समय तक उन्होंने चर्चा की। बीच-बीच में कोई अप्रिय समाचार सुनकर वे उदास हो जाते।

कुछ समय बाद श्रीश्यामानन्द प्रभु और श्रीनिवास आचार्य ने स्वयं के भावों पर नियंत्रण किया। श्रीनिवास आचार्य तब अकेले यमुना जी में स्नान करने चले गए। स्नान करने के बाद उन्होंने श्रीजीव गोस्वामी को प्रणाम किया और श्रीगोपाल भट्ट से भेंट करने चले गए और उनके चरणों में जा झुके।

तत्पश्चात श्रीनिवास आचार्य ने एक बार पुन: श्रीजीव गोस्वामी के मार्गदर्शन में पठन आरम्भ किया और अपने छात्र के पवित्र अभिप्राय को जानकर श्रीजीव गोस्वामी ने अति प्रसन्नता का अनुभव किया। श्रीजीव गोस्वामी से श्रीनिवास आचार्य ने श्रीगोपाल चम्पू और साथ ही अन्य ग्रन्थों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। वे श्रीजीव गोस्वामी के मार्गदर्शन में यह पढ़कर अतिप्रसन्न हो गए।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीवृन्दावन में वास करने का निश्चय कर लिया था परन्तु बंगाल में उनके शिष्य उनकी अनुपस्थिति में अकेले हो गए थे। एक दिवस श्रीखण्ड में श्री रघुनन्दन ने श्रीरामचन्द्र कविराज को बताया कि यह स्थान निर्जन हो गया है तो तत्क्षण उन्हें श्रीवृन्दावन जाना चाहिए। उन्होंने श्रीरामचन्द्र कविराज को उपयुक्त निर्देश दिए। श्रीरामचन्द्र कविराज सर्वप्रथम याजिग्राम गए। श्रीनिवास आचार्य के अनुचरों ने श्रीरामचन्द्र कविराज को

बताया कि उनके आचार्य की अनुपस्थिति में उनके लिए जीवित रहना असंभव हो गया है। उन्होंने उन्हें शीघ्रता से श्रीवृन्दावन जाने और श्रीनिवास आचार्य को साथ लाने का निवेदन किया। श्रीनिवास आचार्य के शिष्यों से अनुमति लेकर श्रीरामचन्द्र कविराज अपने निवास पर लौट आए।

रामचन्द्र कविराज का वृन्दावन-गमन

तत्पश्चात श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के बारे में चिंतन आरम्भ किया। उन्हें विश्वास था कि यदि वे केवल श्रीनरोत्तम दास के साथ रहेंगे तो उनके कष्ट मिट जाएंगे।

श्रीरामचन्द्र कविराज के भ्राता श्रीगोविन्द अत्यधिक ज्ञान, क्षमता वाले और अपनी आध्यात्मिक सेवाओं के प्रति अत्यधिक उत्साह वाले थे। जब वे एक शांत स्थान पर मिलकर बैठे थे तब श्रीरामचन्द्र कविराज ने उन्हें बताया कि अगली प्रातः वे श्रीवृन्दावन के लिए प्रस्थान करेंगे। उन्होंने श्रीगोविन्द को एक पवित्र स्थान तेलिया बुधारी गांव, जो कि गंगा और पद्मावती नदी के मध्य स्थित है, वहाँ जाने का सुझाव दिया। यह एक विशाल और अति जनसंख्या वाला और सुशील लोगों से युक्त गांव था। श्रीरामचन्द्र ने सुझाव दिया कि श्रीगोविन्द को वहाँ जाना चाहिए और वास करना चाहिए क्योंकि उनके नाना जोकि एक विख्यात व्यक्ति थे, प्रायः उस पावन स्थान की यात्रा को जाते थे। उन्होंने श्री गोविन्द को बताया कि उस स्थान पर उनकी उपस्थिति अनेक लोगों को आनन्द प्रदान करेगी और श्रीगोविन्द तत्काल उनका सुझाव मान गए।

इसके पश्चात् श्रीरामचन्द्र कविराज ने विविध आध्यात्मिक सत्य श्रीगोविन्द को बता दिए और अगली प्रातः उन्होंने अपने भ्राता को छोड़ा और श्रीवृन्दावन के लिए चल दिए। वैशाख के अंत तक श्रीनिवास आचार्य श्रीवृन्दावन जा चुके थे और श्रीरामचन्द्र वहाँ पौष मास के दौरान गए।

दो-चार दिवस के बाद श्रीगोविन्द कुमार-नगर त्याग कर तेलिया चले गए, जहाँ गांव वालों ने प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत किया। गांव के भद्रपुरुष उनसे भेंट करने आए और उन्होंने उनके रहने के लिए एक सुन्दर स्थान का चयन किया। वे श्रीगोविन्द के उत्तम गुणों के कारण प्रभावित हो गए और वे उनके संग में स्नेह और दयालुता प्राप्त कर अति प्रसन्न हो गए।

श्रीगोविन्द उस स्थान पर सन्तुष्ट थे, वे कभी श्रीनिवास आचार्य की कृपा को नहीं भूलते थे। वे अचम्भित होते थे कि कब वह दिवस आएगा जब वे श्रीआचार्य के चरणकमलों के सेवक बनेंगे और श्रीनिवास आचार्य उन्हें दीक्षा मन्त्र प्रदान करेंगे, और कब वे उन्हें अपने पार्षद के रूप में सम्मिलित करेंगे।

श्रीरामचन्द्र के भाई गोविन्द

देवी भगवती के उपासक के रूप में गोविन्द कुमार-नगर में वास करते हुए गीतों और कविताओं से देवी की सेवा करते थे जो कि उनके अनेक साथियों जो कि शाक्त ही थे, के द्वारा रचित थे, और इस कार्य में उनका सुख रहता था। कवि ने, देवी भगवती के प्रति अपनी इस आसक्ति का कारण समझाया। उनके नाना एक शाक्त थे जो कि सदैव देवी भगवती को अपने संग रखते थे। उनके नाना का नाम श्रीदामोदर कविराज था और श्रीदामोदर कविराज की पुत्री का नाम था सुनन्दा। गोविन्द सुनन्दा के पुत्र थे।

श्रीगोविन्द कविराज अपनी माता के गर्भ में बहुत काल तक रहे और सुनन्दा प्रसव के दौरान अति पीड़ा में थी। उनकी सेविका ने शीघ्रता से श्रीदामोदर कविराज को समस्या के बारे में सूचित किया जो उस समय देवी भगवती की सेवा में मगन थे। वे सेविका से कुछ बोले नहीं परन्तु अपने हाथ और नेत्रों के हावभाव से बताया कि वह माँ दुर्गा के शस्त्र ले लें और सुनन्दा को दिखाएं क्योंकि वह उसकी शिशु की पीड़ा रहित प्रसव में सहायता करेंगे।

यद्यपि सेविका, श्रीदामोदर कविराज के इशारे भलीभाँति नहीं समझ सकी। उसने अस्त्र को जल में धोया और वह जल सुनन्दा को पीने को दिया। तत्पश्चात सुनन्दा ने शीघ्रता से और पीड़ा रहित एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। वह बालक दिवस प्रतिदिवस बढ़ते चन्द्रमा के समान धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। गांव में हर कोई जानता था कि उसका जन्म भगवती देवी की कृपा से हुआ है।

एक युवा बालक के रूप में गोविन्द ने अपने पिता को त्याग दिया और कोई भौतिक शिक्षा प्राप्त नहीं की। उनके नाना ने गोविन्द के सम्पूर्ण बाल्यकाल में उन्हें सिद्धान्तों और देवी भगवती की आराधना के लिए प्रयुक्त संस्कारों के अनुसार ढाल कर उनकी देखभाल की। अन्य लोगों ने भी गोविन्द को देवी भगवती की उपासना निरन्तर करते रहने का सुझाव दिया।

गोविन्द का पश्चाताप

जब श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीनिवास आचार्य से दीक्षा ग्रहण की, श्रीगोविन्द ने स्वयं को आश्वस्त किया कि क्योंकि वे बाल्यकाल से निष्ठापूर्वक देवी भगवती की उपासना कर रहे थे, वे निश्चित ही उन्हें मुक्ति प्रदान करेंगी। तथापि जब वे ऐसा सोच रहे थे, देवी की आकाशवाणी ने उन्हें सूचित किया कि यदि उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण की उपासना नहीं की तो उन्हें कभी मुक्ति प्राप्त नहीं होगी। यह सुनकर वे अप्रसन्न हो गए और श्रीगोविन्द ने श्रीनिवास आचार्य का शिष्य होने और भगवान् कृष्ण के चरणकमलों की आराधना करने का निश्चय किया। इस प्रयोजन के हेतु मात्र यह जानने के लिये कि श्रीआचार्य श्रीवृन्दावन

जा चुके हैं वे याजिग्राम गए। गोविन्द अपने दुर्भाग्य पर विलाप करने लगे परन्तु वे उन वैष्णवजनों की दयालुता के प्रति कृतज्ञ थे जिन्होंने उनके पिता श्रीचिरंजीव सेन के बारे में कुछ बताया था।

श्रीचिरंजीव सेन, श्रीचैतन्यचन्द्र के शिष्य थे और गोविन्द विलाप करने लगे कि वे अपने समर्पित पिता के पथ का अनुसरण नहीं कर सकेंगे। वे अपने आप को विश्व का सबसे अयोग्य व्यक्ति मानते थे और सदैव अपने दुर्भाग्य पर विलाप करते रहते। गोविन्द एक दिवस श्रीनिवास आचार्य से भेंट की अभिलाषा करने लगे ताकि उनके दुष्ट मस्तिष्क में बदलाव ला सके। उन्हें स्मरण था कि कैसे अभी तक उनके अग्रज भ्राता का जीवन, श्रीनिवास आचार्य के अनुग्रह से परिवर्तित हो गया था। वे विलाप करने लगे कि यहाँ उनके भ्राता तक ने भी आचार्य की कृपा प्राप्त कर ली है, किन्तु वे स्वयं नहीं कर सके। वे स्वयं पर क्रोध करते हुए रोने लगे और अपने तन को अश्रुओं से भिगो दिया। उस समय उन्हें सूचित करते हुए आकाशवाणी हुई कि कुछ ही दिवसों में उनकी कामनाऐं पूर्ण हो जाएंगी।

उसी दिवस से श्रीराधा-कृष्ण के प्रति श्रीगोविन्द की भक्ति तेजी से बढ़ने लगी। श्रीरामचन्द्र कविराज अपने भ्राता के मनोभाव में हुए परिवर्तन को देखकर प्रसन्न थे।

जब गोविन्द ने तेलिया बुधरी को प्रस्थान किया तो सर्वप्रथम उन्होंने पश्चिम छोर पर निवास किया, जो कि श्रीपश्चिम पाड़ा के नाम से जाना जाता है और तब बाद में वे बुधरी में स्थाई रूप से बस गए। जीवन के हर क्षेत्र में श्रीगोविन्द अपने भाई पर आश्रित रहना पसन्द करते थे।

जब श्रीरामचन्द्र कविराज ने शीघ्रता में श्रीवृन्दावन की यात्रा की, तो जिन लोगों ने उन्हें देखा उन्होंने विचार किया कि उन्होंने ऐसे व्यक्ति के कभी दर्शन नहीं किए। उन्होंने सोचा कि निश्चित ही वे बंगाल के राजा के पुत्र होंगे। कुछ लोगों ने सोचा कि वे कोई जीव नहीं बल्कि देवता हैं। जब वे श्रीवृन्दावन आये, किसी ने जीव गोस्वामी को सूचित किया कि स्वर्ण जैसी कान्ति से युक्त एक सुन्दर व्यक्ति बंगाल से आया है। उन्होंने श्री जीव गोस्वामी को बताया कि वे उस व्यक्ति की झलक से ही आकर्षित हो गये थे, जो कि बिना किसी उद्देश्य के रोते हुए श्रीवृन्दावन के सौन्दर्य का आनन्द लेते हुए विचरण कर रहा था।

श्रीवृन्दावन पहुंचे श्रीरामचन्द्र कविराज

श्रीजीव गोस्वामी ने श्रीनिवास आचार्य से पूछा कि क्या वे जानते हैं कि वह व्यक्ति कौन है तो श्रीनिवास ने कहा निश्चित ही वे श्रीरामचन्द्र कविराज होंगे। श्रीनिवास आचार्य ने पूर्व में ही श्रीजीव गोस्वामी को श्रीरामचन्द्र के बारे में बता दिया था, तो श्रीजीव ने अपने अनुचरों को आदेश दिया कि उन्हें उनके निवास

पर ले आऐं। जब रामचन्द्र आए तो वे श्रीजीव और श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में झुके और दोनों ने ही प्रेम से उन्हें आलिंगन कर लिया। उन्होंने श्रीरामचन्द्र से उन स्थानों के बारे में पूछा जिन स्थानों की उन्होंने यात्रा की और श्रीरामचन्द्र ने सर्वप्रथम यह निवेदन किया कि श्रीखण्ड के श्रीरघुनन्दन ने उन्हें क्या बताया। उन्होंने यह भी बताया कि उन्होंने अन्य वैष्णव जनों से क्या श्रवण किया और उन्होंने उनकी शिक्षा की उन्नति के बारे में और उनके गया, काशी, अयोध्या और प्रयाग की लम्बी यात्रा के परिणाम के बारे में बताया।

श्रीनिवास वापिस गौड़ देश जायें

इस विवरण से श्रीजीव गोस्वामी श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके प्रिय पार्षदों के तिरोभाव के बाद पवित्र स्थानों की दशा समझ सकते थे। श्रीरामचन्द्र कविराज ने उन्हें सूचित किया के बंगाल के निवासी चाहते हैं कि श्रीनिवास वापिस आ जाऐं। श्रीजीव गोस्वामी और श्रीनिवास आचार्य दोनों ने निवेदन को गम्भीरता से लिया।

तत्पश्चात् वे श्रीरामचन्द्र कविराज को अपने साथ लेकर श्रीराधा-दामोदर के मन्दिर गए। श्रीराधा-दामोदर के श्रीविग्रह को ध्यान से देखते हुए श्रीरामचन्द्र कविराज रोते हुए भूमि पर जा गिरे। श्रीरूप की समाधि पर जाते हुए उन्हें गहन उत्तमोत्तम भावों की अनुभूति हुई। जब वे श्रीरूप के नाम को उच्चस्वर में पुकारते हुए रोए, श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें अपनी गोद में उठा लिया और उन्हें शांत किया।

श्रीरामचन्द्र कविराज श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदनमोहन, श्रीराधादामोदर और श्रीराधारमण के मन्दिर गए और जहाँ भी वे जाते, कठिनता से अपने भावों पर नियंत्रण रख पाते। वे श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीकाशीश्वर पंडित और श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी की समाधि पर गए, यद्यपि इसने उनमें दु:ख भर दिया। श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी, श्रीभूगर्भ गोस्वामी और अन्य वैष्णव जन श्रीरामचन्द्र कविराज से भेंट करने और आशीष देने आए।

श्रीराधाकुण्ड में

तत्पश्चात श्रीरामचन्द्र कविराज अरिष्टग्राम और साथ ही राधा-कुण्ड व श्याम-कुण्ड भी गए। इन कुण्डों में स्नान करने के बाद उन्होंने श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी से भेंट की और उनके चरणकमलों में प्रणाम किया। श्रीरघुनाथ दास ने स्नेहवश श्रीरामचन्द्र कविराज का आलिंगन किया बाद में उनकी पद लेखन की योग्यता से प्रभावित हो हुए। श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीकृष्णदास कविराज और आस-पास निवास करने वाले अन्य वैष्णव जनों से भी भेंट की। वे गोवर्धन पर्वत पर गऐ और प्रसन्न मन से द्वादश वनों में विचरण किया।

श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और श्रीवृन्दावन में अन्य वैष्णवों ने कवि के रूप में उनकी योग्यता के कारण श्रीरामचन्द्र कविराज की प्रशंसा की और इसी कारण उन्होंने उन्हें कविराज की उपाधि प्रदान की। श्रीरामचन्द्र कविराज ने अपने आध्यात्मिक गुरु श्रीनिवास आचार्य का श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी की विविध सेवाओं में सहयोग किया। श्रीजीव गोस्वामी, गुरु और शिष्य के परस्पर प्रेममय सम्बन्ध को देखकर आनन्दित हो गए।

श्रीरामचन्द्र कविराज से बंगाल में अपने शिष्यों का समाचार पाकर श्रीनिवास आचार्य ने घर वापिस लौटने का निश्चय किया और शीघ्रता से उन्होंने श्रीवृन्दावन में सबसे विदा ली।

वापिस जाने की घोषणा

वैशाख मास की पूर्णिमा वाले मंगल दिवस पर श्रीराधारमण जी की सिंहासन-यात्रा का उत्सव था। इस अवसर पर श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के आवास पर एक विशाल उत्सव मनाया गया और श्रीनिवास आचार्य ने उत्सव का अत्यधिक आनन्द लिया, उस समय श्रीजीव ने घोषणा की कि श्रीनिवास आचार्य बंगाल वापिस लौटेंगे।

पूर्णिमा के अगले दिवस पर श्री जीव गोस्वामी ने एक बार पुनः श्रीश्यामानन्द प्रभु को श्रीनिवास आचार्य को सौंप दिया। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को कुछ ग्रन्थ भी दिए जो उनके द्वारा संशोधित किये गये थे। श्रीवृन्दावन के गोस्वामी गण श्रीनिवास को विदा करने के लिए श्रीगोविन्ददेव के मन्दिर में एकत्र हो गए। आचार्य ने उनके चरणकमलों में प्रणाम किया और श्रीगोविन्द के चन्द्रमा समान मुख का दर्शन करने गए। श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने भी गोस्वामीगणों के चरणकमलों में प्रणाम किया।

श्रीनिवास का पुनरागमन

जब श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीश्यामानन्द प्रभु के साथ प्रस्थान किया, श्रीजीव गोस्वामी अधिक दूर तक उनके साथ चले। जब श्रीनिवास आचार्य ने दृढ़ होकर कहा कि वे रुक जाएँ, जीव गोस्वामी वापिस अपने निवास आ गए। आचार्य शीघ्रता से मथुरा के मार्ग से आगे बढ़े और कुछ दिवस बाद वे वन विष्णुपुर पहुँच गए। उनके आगमन का समाचार सुनकर राजा शीघ्रता से उनसे भेंट करने आए। वे श्रीनिवास आचार्य प्रभु के चरणों में दण्डवत् लेट गए, जिन्होंने तब अपने चरण उनके मस्तक पर रख दिए, उन्हें भूमि से ऊपर उठाकर उन्होंने उन्हें आलिंगन में ले लिया।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीश्यामानन्द प्रभु का परिचय राजा से करवाया और राजा नेत्रों में अश्रु लिए उनके चरणों में झुक गये।

राजा ने श्रीनिवास आचार्य के अनुग्रह से उनसे भेंट करने पर अपने सौभाग्य को सराहा। श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने प्रसन्नता से राजा वीर हम्वीर को आलिंगन प्रदान किया। जो कोई भी राजा के साथ था वह भी श्रीनिवास आचार्य और उनके दो अनुचरों को देखकर समान रूप से प्रसन्न था। जब राजा उन्हें अपने महल में ले गए, वहाँ के निवासी अति प्रसन्न हुए।

तत्पश्चात् श्रीनिवास आचार्य और उनके दो मित्रों ने वन विष्णुपुर में संकीर्तन किया। श्रीश्यामानन्द प्रभु दस दिवस वन विष्णुपुर में रहे और फिर उत्कल के लिए निकल पड़े।

जब राजा ने श्रीश्यामानन्द की यात्रा के बारे में सुना तो वे अपने आप से विचार करने लगे कि एक विशुद्ध भक्त को समझना सच में असंभव है जिसका एकमात्र हित विभिन्न स्थानों को कलियुग के प्रभाव से मुक्ति दिलवाने में है। वे निराश थे कि श्रीश्यामानन्द प्रभु वन विष्णुपुर में नहीं रहेंगे और उन्हें भय था कि अब वे उन्हें पुनः कभी नहीं देख पाऐंगे। राजा ने श्रीश्यामानन्द प्रभु को अनेक उपहार दिए और श्रनिवास आचार्य को अत्यधिक प्रसन्न कर दिया।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीश्यामानन्द प्रभु के तन को अपने अश्रुओं में भिगोते हुए आलिंगन कर लिया। श्रीश्यामानन्द प्रभु ने श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में झुक कर प्रणाम किया और अपनी यात्रा आरम्भ की। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीश्यामानन्द प्रभु का हाथ पकड़ा और साथ चलते रहे जब तक श्रीश्यामानन्द प्रभु ने उन्हें आगे चलने से रोका नहीं। श्रीनिवास आचार्य घर वापिस आ गए और श्रीश्यामानन्द प्रभु ने श्रीरामचन्द्र कविराज और वन विष्णुपुर के निवासियों से विदा ली, जो उनके प्रस्थान करने पर बुरी तरह रोने लगे थे।

श्रीश्यामानन्द प्रभु का उत्कल प्रस्थान

कुछ दिवस बाद श्रीश्यामानन्द प्रभु और अनेक अनुचर उत्कल पहुँच गए। ओड़िशा के लोग दौड़े चले आए जब उन्होंने श्रीश्यामानन्द प्रभु के आगमन के बारे में श्रवण किया। श्रीरसिकानन्द और अन्य भक्तगण प्रसन्न होकर उनसे मिलने आए।

राजा को दीक्षा

श्रीश्यामानन्द प्रभु नरसिंहपुर में रुके और तत्काल अपने पहुँचने के बारे में बताते हुए वन विष्णुपुर में पत्र भेजा। श्रीनिवास आचार्य पत्र प्राप्त कर अति संतुष्ट हो गए। श्रीनिवास आचार्य विष्णुपुर में दो मास तक रहे और अनेक लोगों की सभी कामनाऐं पूर्ण कीं। वे यह जानकर अति प्रसन्न थे कि राजा में वैष्णव साहित्य पढ़ने और समझने की अच्छी क्षमता है। उन्होंने राजा को राधा-कृष्ण मंत्र जपने की दीक्षा प्रदान कर दी। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें

काम-गायत्री के अर्थ के बारे में पढ़ाया और यह भी पढ़ाया कि भगवान् श्रीहरि के पावन नामों की व्याख्या कैसे करनी है। उन्होंने अपने प्रिय शिष्य रामचन्द्र कविराज को राजा को पढ़ाने के लिए नियुक्त कर दिया और राजा को बताया कि कैसे श्रीजीव गोस्वामी, रामचन्द्र कविराज की विद्वत्तापूर्ण क्षमताओं से सन्तुष्ट हो चुके हैं और कैसे श्रीजीव गोस्वामी ने उन्हें चैतन्य दास कहा।

रानी एवं राजकुमार

राजा ने प्रसन्नता के अश्रु बहाए और श्रीनिवास आचार्य के चरणों में गिर गया। विनम्रता से अपनी सेवाऐं अपने आध्यात्मिक गुरु को निवेदित कर, उनके अनुग्रह से उनकी सभी कामनाऐं पूर्ण हो गईं।

राजा **वीर हम्वीर की रानी** भी श्रीनिवास आचार्य का अनुग्रह प्राप्त करना चाहती थी, उसकी प्रार्थनाओं से सन्तुष्ट होकर श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें भी दीक्षा प्रदान की। राजा वीर हम्वीर के योग्य पुत्र **श्रीधर हम्वीर** भी श्रीनिवास आचार्य के शिष्य हुए।

राजा वीर हम्वीर ने भगवान् कालाचाँद के श्रीविग्रह की स्थापना और उनकी सेवा व्यवस्था के प्रबन्ध की कामना व्यक्त की। श्रीनिवास आचार्य ने विग्रह का प्रथम अभिषेक किया। हर कोई भगवान् कालाचाँद के सुन्दर श्रीविग्रह के दर्शन कर प्रसन्न था। लोगों ने राजा के इतने सुन्दर श्रीविग्रह प्राप्त करने के सौभाग्य की सराहना की।

श्रीनिवास आचार्य ने राजा को भगवान् कालाचाँद के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। राजा ने पूरे मन से स्वयं को श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। एक दिवस राजा ने स्वप्न में कुछ गीत रचे और गाए जो उनकी पत्नी ने सुन लिए। जब राजा जागे तो रानी ने एक बार पुनः गीत गाने का निवेदन किया। जब राजा ने विनम्रता से गीत गाया तो रानी प्रसन्नता से अश्रु बहाने लगीं। तब वह निःसंकोच राजा के चरणों में जा गिरीं और उन दोनों को भगवान् के उल्लसित प्रेम के भक्ति भाव की अनुभूति हुई।

राजा हरिनारायण

श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षद, राजा और उनके अनुचरों की निष्कपटता से अति प्रसन्न हो गए। शिखर के राजा हरि नारायण श्रीनिवास आचार्य के शिष्य बनना चाहते थे। क्योंकि वे भगवान् श्रीरामचन्द्र की उपासना को मुख्य मानते थे। वे श्रीराम मन्त्र जप करने की दीक्षा चाहते थे। श्रीनिवास आचार्य राजा की निष्कपटता देखकर प्रसन्न थे और उनकी कामनाओं को पूर्ण करने के लिए उत्सुक थे।

त्रिमल्ल भट्ट के पुत्र रंगक्षेत्र में थे और श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें राजा हरि नारायण के नगर में शीघ्रता से आने का आदेश देते हुए पत्र भेजा। जब वे पंचकूट पहुँचे तो उन्होंने श्रीनिवास आचार्य से सब कुछ सीख लिया, त्रिमल्ल भट्ट के पुत्र ने स्नेहवश हरि नारायण को श्रीराम मन्त्र की दीक्षा दी। ऐसा करने के बाद उन्होंने हरि नारायण को श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। श्रीनिवास आचार्य ने तब उन्हें आध्यात्मिक उपसंहार के बारे में बताया और वे यह जानकर प्रसन्न थे कि हरि नारायण एक मधुर स्वभाव के व्यक्ति हैं।

एक दिवस जब श्रीनिवास आचार्य अपने अनुचरों के साथ कृष्ण भावनामृत की चर्चा कर रहे थे, याजिग्राम से एक व्यक्ति पत्र लेकर आया। श्रीनिवास आचार्य के पत्र से ज्ञात हुआ कि श्रीखण्ड के लोग उत्सुकता से उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं और उन्हें यथाशीघ्र वहाँ जाना चाहिए। तथापि जब वन विष्णुपुर के लोगों ने पत्र के विषय के बारे में श्रवण किया, वे व्याकुल हो उठे। राजा वीर हम्वीर की अधीरता देख श्रीनिवास आचार्य ने उनसे कहा, उन्हें श्रीखण्ड और याजिग्राम के मार्ग से खेतड़ी चले जाना चाहिए और कुछ समय बाद वे वापिस विष्णुपुर आ जाऐंगे।

राजा, श्रीनिवास आचार्य के साथ जाना चाहते थे परन्तु श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें शांत किया और उन्हें धैर्य रखने का निवेदन किया क्योंकि शीघ्र ही उन्हें श्रीनरोत्तम दास ठाकुर का सान्निध्य प्राप्त होगा। श्रीनिवास आचार्य ने राजा को आश्वस्त किया कि जब वे याजिग्राम मे आएंगे तो वे तत्काल श्रीनरोत्तम दास को सीधा विष्णुपुर जाने के लिए पत्र लिखेंगे। राजा और उनके अनुचर इस प्रस्ताव से चिंता मुक्त हो गए और इस तथ्य को स्वीकार कर लिया कि श्रीनिवास आचार्य अगली प्रातः प्रस्थान करेंगे।

याजिग्राम प्रस्थान

प्रातःकाल श्रीनिवास आचार्य और उनके अनुचर याजिग्राम के लिए निकल पड़े। बहुत से लोग उन्हें विदा करने आए। राजा ने उन्हें अनेक उपहार दिए। वे कुछ दूर तक श्रीनिवास आचार्य के साथ चले फिर विष्णुपुर वापिस लौट आए। जब राजा और उनके लोग अचम्भित थे उस समय उन्होंने आचार्य को पुनः देखा, श्रीनिवास आचार्य और उनके अनुचरों ने याजिग्राम की यात्रा जारी रखी। उनके आगमन पर याजिग्राम के निवासी अपने सब कष्ट भूल गए।

याजिग्राम से श्रीनिवास आचार्य शीघ्रता से श्रीखण्ड की ओर बढ़े, जहाँ उन्होंने श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में प्रवेश किया और अश्रुपूर्ण नेत्रों से भगवान् गौरचन्द्र के श्रीविग्रह के दर्शन किए, अपना नियंत्रण खोते हुए श्रीरघुनन्दन ने अपनी भुजाऐं फैला दीं और दीर्घकाल तक श्रीनिवास आचार्य को आलिंगन

किए रखा। श्रीनिवास आचार्य ने भूमि पर उनके चरणों में झुकने का प्रयास किया परन्तु वे ऐसा नहीं कर सके क्योंकि श्रीरघुनन्दन ने उन्हें अपने आलिंगन से नहीं छोड़ा। जब श्रीरघुनन्दन ने ब्रज के निवासियों की कुशलक्षेम के बारे में पूछा, तो श्रीनिवास आचार्य ने दुःख के साथ बताया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्तर्धान होने के कारण दिवस प्रतिदिवस प्रभु के अन्तरंग पार्षद संसार से प्रस्थान करते जा रहे हैं। प्रभु की इच्छा से कुछ ही भक्त एवं पार्षद शेष बचे हैं।

श्रीरघुनन्दन इस हृदयविदारक समाचार को सहन न कर पाए और अचेत होकर भूमि पर जा गिरे। अपने विलाप में उन्होंने अनुभव किया कि मानो पृथ्वी अगाध अन्धकार में डूब रही हो। उन्होंने अनुभव किया कि श्रीनरहरि ठाकुर और उनके अन्तरंग पार्षदों ने उन्हें त्याग दिया है ताकि उन्हें संसार के दुःखों को अकेले सहन करना पड़े।

श्रीनरहरि सरकार ठाकुर के अन्तर्धान होने पर श्रीनिवास आचार्य अत्यंत दुःख से रो पड़े। कोई भी उन दोनों को शांत नहीं करा पाया। इसके विपरीत उन्हें देखकर अन्य लोग भी रो पड़े और इस प्रकार श्रीखण्ड का वातावरण विलाप से भर गया। श्रीखण्ड में पशु, पक्षी और अन्य जीव भी उनके साथ रोने लगे। कुछ समय बाद श्रीरघुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य को याजिग्राम लौट जाने और फिर कंटकनगर जाने का सुझाव दिया।

श्रीनिवास काटोया में

याजिग्राम की यात्रा करने के बाद श्रीनिवास आचार्य कंटकनगर गए जिस स्थान से प्रभु गौरचन्द्र ने संन्यासी के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया था। श्रीनिवास आचार्य श्रीगौरांग प्रभु के श्रीविग्रह के दर्शन करते हुए अश्रु बहाकर रोने लगे। उस दिन के बाद में वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तों से मिले।

श्रीगदाधर दास के विद्वान् शिष्य श्रीयदुनन्दन चक्रवर्ती अपने गुरु के अन्तर्धान होने के कारण अति दयनीय मनोभाव की स्थिति में थे। उनका दुःख श्रीनिवास आचार्य के साथ श्रीगदाधर दास की महिमा की चर्चा करते हुए और अधिक बढ़ गया। यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुग्रह से दीर्घकाल के बाद वे अपने आप को शांत करने सक्षम हुए।

भक्तों ने श्रीनिवास आचार्य से श्रीवृन्दावन के समाचार के बारे में पूछा। श्रीयदुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य का कंटकनगर आकर उनकी विरह भाव की पीड़ा को शांत करने कि लिए धन्यवाद किया। तब श्रीयदुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य को श्रीगदाधर दास की गद्दी दिखाई। जो कि कार्तिक मास में जन्माष्टमी पर संसार से अन्तर्धान हो गए थे, उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को वे प्रबन्ध भी दिखाए जो उन्होंने श्रीगदाधर दास के तिरोभाव उत्सव के लिए किए थे।

उन्होंने हर किसी को निमन्त्रण पत्र भेजे थे और श्रीयदुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य को याजिग्राम से कंटकनगर आने और दस दिवस उत्सव मनाने का निवेदन किया। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें आश्वस्त किया कि वे उत्सव में आएंगे और वे याजिग्राम के लिए प्रस्थान कर गए। याजिग्राम से उन्होंने राजा वीर हम्वीर को पत्र लिखा और तब वे श्रीखण्ड गए जहाँ उन्होंने श्रीरघुनन्दन से भेंट की और उत्सव के बारे में बताया।

श्रीगदाधर दास का अन्तर्धान

श्रीरघुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि उन्हें पहले से ही कार्तिक मास में श्रीगदाधर दास के अन्तर्धान होने के बारे में पता है। श्रीगदाधर दास के अन्तर्धान होने पर श्रीनरहरि दास ठाकुर दुर्बल हो गए थे और किसी से एक शब्द तक नहीं बोले थे। वे निरन्तर अश्रु बहाते रहे और अचानक वैशाख मास में श्रीकृष्ण एकादशी के दिवस अपने प्राण त्याग दिए। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को श्रीनरहरि दास ठाकुर के तिरोभाव उत्सव के वह प्रबन्ध दिखाए जो उन्होंने किए थे और उन्होंने उन्हें ये भी सूचित किया कि उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीचैतन्य महाप्रभु के सभी पार्षदों को निमंत्रण भेज दिया है। श्रीनित्यानन्द प्रभु के पुत्र ने पहले ही वहाँ आने के लिए स्वीकृति दे दी है। वे प्रातः याजिग्राम के लिए चलना प्रारम्भ करेंगे और फिर अपने सभी पार्षदों के साथ कंटकनगर जाएंगे, जहाँ वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुचरों से भेंट करेंगे। उत्सव के बाद वे याजिग्राम में कुछ दिवस व्यतीत कर श्रीखण्ड लौट आऐंगे।

इस कार्यक्रम का वर्णन सुनकर वे प्रसन्नतापूर्वक याजिग्राम लौट आए और श्रीरामचन्द्र कविराज और अन्यों से भेंट की। उन्होंने श्रीरामचन्द्र कविराज को वह सब बता दिया जो उन्हें ज्ञात था। उन्होंने एक स्थान का चयन किया जहाँ अतिथि गण विश्राम कर सकें और स्वयं को उत्सव के लिए सामग्री एकत्र करने में व्यस्त कर लिया। याजिग्राम के निवासी, श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के स्थाई आगमन पर प्रसन्न थे।

अगले दिवस श्रीनिवास आचार्य ने कंटकनगर के लिए प्रस्थान किया। प्रातःकाल श्रीरघुनन्दन और उनके अनुचर श्रीखण्ड से याजिग्राम आ गए। कुछ समय श्रीनिवास आचार्य के निवास पर व्यतीत कर वे कंटकनगर चले गए।

काटोया में स्वागत

वहाँ कंटकनगर के निवासी आने वाले सभी भक्तों का अगवानी करने आए। मैं उन सब भक्तों की विस्तृत सूची देने और उनके निवास के बारे में सूचना देने में असमर्थ हूँ परन्तु मैं कुछ के बारे में बताता हूँ जैसे श्रीपति, श्रीनिधि, श्रीविद्यानन्द, श्रीवाणीनाथ बासु, श्रीरामदास, श्रीकविचन्द्र, श्रीपुरुषोत्तम

श्रीसंजय, श्रीचन्द्रशेखर, श्रीमाधव आचार्य, कीर्तनिया शष्टिधर, श्रीकमलकान्त, ब्राह्मण वाणीनाथ, श्रीविष्णुदास, श्रीनन्दन पंडित, श्रीपुरन्दर, श्रीचैतन्य दास कर्णपूर, श्रीजानकीनाथ, श्रीगोपाल आचार्य, श्रीगोपाल दास, श्रीमुरारी चैतन्य दास, श्रीरघुनाथ वैद्य, उपाध्याय नारायण, श्रीबलराम दास, श्रीदास सनातन, श्रीकृष्ण दास, श्रीनकरी मनोहर, श्रीहरिहरानन्द, श्रीमाधव महिधर, श्रीरामचन्द्र कविराज, श्रीवसन्त ललवानी, श्रीकनु ठाकुर, श्रीगोकुल, श्रीराम सेन, श्रीदामोदर, श्रीजनादास, श्रीनर्तक गोपाल, श्रीपीताम्बर, श्रीकुमुद, श्रीगौरांग दास, श्रीनरसिंह, श्रीचैतन्य दास, श्रीवृन्दावन दास, श्रीवनमाली दास, श्रीभोलानाथ, श्रीविजय, श्रीहृदयानन्द सेन, श्रीलोकनाथ पंडित, श्रीमुरारी पंडित, श्रीकनु पंडित, श्रीहरिदास ब्रह्मचारी, श्रीअनंत दास, श्रीकृष्ण दास, श्रीजर्नादन, श्रीभक्तिरत्न, श्रीनारायण दास, श्रीभागवत आचार्य, श्रीवाणीनाथ ब्रह्मचारी, श्रीचैतन्य वल्लभ दास, श्रीपशुप गोपाल, श्रीगोपाल दास, श्रीहर्ष, श्री लक्ष्मीनाथ पंडित और अनेकों उच्चकोटि के भक्त।

सूर्य के समान तेजवान अनेकों भक्तों के आगमन के कारण गांव के निवासी मंत्रमुग्ध हो गए। यहाँ तक कि उनके चलने के ढंग और विनीत व्यवहार ने लोगों को प्रभावित किया और उनके हृदय को प्रसन्न किया। सभी ने विशेषकर श्रीअद्वैत आचार्य के दो पुत्र श्रीकृष्ण मिश्र और श्रीगोपाल की सुघड़ता पर गौर किया, जिनका सौन्दर्य अवर्णनीय था। वे दोनों ही महान विद्वान् थे जिन्होंने और कुछ नहीं केवल मात्र श्रीकृष्ण चैतन्य की सेवा को ही स्वीकार किया।

श्री वीरभद्र प्रभु

श्रीनित्यानन्द प्रभु के पुत्र श्रीवीरभद्र प्रभु आध्यात्मिक गुणों के सागर थे। श्रीचैतन्य-चरितामृत के अनुसार श्रीनित्यानन्द प्रभु, जिनसे अनेक शाखाएं उत्पन्न हुई हैं, उनके महान उत्तराधिकारी श्रीवीरभद्र गोस्वामी थे। आन्तरिक रूप से वे प्रभु के प्रेमी थे और बाह्य रूप से वे अत्यधिक विनम्र व्यक्ति थे।

उनके प्रयत्नों के कारण ही अनेक लोग श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु के सम्प्रदाय में परिवर्तित हो गए थे। **श्रीवीरभद्र** प्रभु भी कुछ लोगों द्वारा **वीरचन्द्र** नाम से पहचाने जाते थे और वे सभी के लिए प्रसन्नता का मुख्य स्रोत थे। जो भी उनके सम्पर्क में आता वह उनके प्रति आसक्त हो जाता था। वीरचन्द्र को चलते हुए देख कंटकनगर के लोग टिप्पणी करते कि वे प्रेम के देवता मदन के सौन्दर्य को परास्त करते हैं। उनका तन कोमल और स्निग्ध था परन्तु स्वर्णिम प्रकाश के समान दीप्तिमान था।

उनके काले घुंघराले केश रेशमी थे और मस्तक पर तिलक का सौन्दर्य सम्पूर्ण विश्व को आकर्षित कर रहा था। उनकी सुन्दर भौहें ऐसी प्रतीत हो रही थीं जैसे काले भँवरों की पंक्ति। उनके विशाल नयन कमलों के समान लग रहे

थे। सुन्दर कपोल, कान और नाक के साथ उनका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान लग रहा था। जब उनकी सुन्दर दन्तावली को देखा तो कुन्द के पुष्प उनके सौन्दर्य को देखकर लज्जित हो रहे थे। उनका विशाल वक्ष:स्थल, सुन्दर ग्रीवा, और लम्बी भुजाऐं, उनका सुगढ़ उदर और सुन्दर चरण की सुन्दरता अवर्णनीय थी। उन्होंने चमकदार और अलंकृत वस्त्र धारण कर रखे थे।

कंटकनगर के लोगों ने स्वयं को इन अति आकर्षक व्यक्ति श्रीवीरभद्र प्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया था। उसी समय श्रीरघुनन्दन अधीरता पूर्वक महान भक्तों के आगमन के समाचार की प्रतीक्षा कर रहे थे। यदुनन्दन आचार्य ने अंतत: सभी भक्तों के कंटकनगर आने का समाचार प्रसारित कर दिया ताकि श्रीरघुनन्दन और उनके अनुचर वहाँ जाकर उनसे मिल सकें।

जब उन्होंने गंगा जी के तट पर भेंट की तो वैष्णवजनों का अपार जन समुदाय का एक ऐसे प्रेम और भक्ति के सागर के रूप में अनुभव हो रहा था जिसमें बाढ़ आ गई हो। वे सर्वप्रथम उस स्थान पर गए जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने संन्यासी के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया था। जब सब ने वह स्थान देखा तो हर कोई रोने लगा और जैसे ही उनका विलाप उच्चस्वर का हो गया, वे भूमि पर लोटने लगे। शीघ्र ही कंटकनगर के सभी निवासी, यहाँ तक कि पशु, पक्षियों ने भी वातावरण को रुदन के स्वर से भर दिया।

दासगदाधर तिरोभाव महोत्सव

तत्पश्चात् रज रंजित भक्त श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण को गए जहाँ उन्होंने श्रीगौरांग प्रभु के सुन्दर विग्रह के दर्शन किए और इस प्रकार स्वयं को शांत किया।

कुछ समय बाद भक्तजन उन आवासों में चले गए जो उन्हें निवास करने के लिए दिए गए थे। श्रीनिवास आचार्य और उनके अनुचरों ने श्रीगदाधर दास के तिरोभाव के अवसर पर महोत्सव का प्रबन्ध किया था और गांव के निवासी कार्यक्रम का ऐश्वर्य देखकर आकर्षित हो गए थे। दिन-रात भक्तों ने संकीर्तन कर कंटकनगर के वातावरण को उल्लसित प्रेम से भर दिया।

श्रीकृष्ण मिश्र और श्रीगोपाल ने संकीर्तन के मध्य नृत्य किया और वह आँगन, जहाँ जप और नृत्य हो रहा था, दर्शकों से भर गया। देवताओं ने भी इस अद्भुत उत्सव में आने के लिए मानव रूप धारण कर लिया। उच्चकोटि के भक्तों ने इतनी गहनता से जप और नृत्य किया कि उनके तन से पसीना आने लगा और उल्लसित प्रेम में कंपन करने लगे। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो सम्पूर्ण स्थान दिव्य प्रेम के प्रवाह से भर गया हो।

साधारण व्यक्ति जो उत्सव में शामिल हुआ हो, शायद ही समझ पाए कि कैसे भक्तों ने तीन दिवस तक जप और नृत्य जारी रखा। उत्सव के बाद बाहर से आने वाले भक्त कंटकनगर में कुछ दिवस और रहे।

श्रीखण्ड आगमन

तत्पश्चात् श्रीरघुनन्दन और उनके पार्षद कंटकनगर के निवासियों को उदास स्थिति में छोड़ वापिस श्रीखण्ड आ गए। वास्तव में श्रीयदुनन्दन और अन्य भक्त उनके विदा होने के समय बहुत रोये। पधारे हुए सभी भक्त श्रीरघुनन्दन और उनके अनुचरों द्वारा की गई अगवानी से पूर्णतः संतुष्ट थे। विदा होने के समय श्रीरघुनन्दन ने श्रीयदुनन्दन को यथाशीघ्र श्रीखण्ड की यात्रा के लिए प्रोत्साहित किया।

पधारने वाले भक्त श्रीयदुनन्दन को कंटकनगर में पीछे छोड़ सर्वप्रथम याजिग्राम गए। जो दायित्व उन्होंने वहाँ निभाए वे अवर्णनीय हैं। वे सदैव दीन और निर्बलों का ध्यान रखते थे, जिस कारण उन्हें वैष्णव समाज में अति आदर प्राप्त हुआ था। उन्होंने श्रीगौरांग प्रभु पर एक अद्‌भुत ग्रन्थ लिखा, जिसको सस्वर सुन कर काष्ठ और पाषाण भी पिघल सकते थे। वे श्रीगदाधर दास रूपी वृक्ष की मुख्य शाखा थे और वे सदैव स्वयं को प्रभु गौरचन्द्र के श्रीविग्रह की उपासना में मग्न रखते थे।

श्रीकृष्णदास कविराज ने श्रीगदाधर दास को श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु दोनों के भक्ति रूपी वृक्ष की अति सुन्दर शाखा के रूप में वर्णित किया है। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को बंगाल जाने का आदेश दिया, उन्होंने श्रीरामदास और श्रीगदाधर दास को सहायता के लिए भेजा। श्रीगदाधर दास सदैव श्रीनित्यानन्द प्रभु की सेवा में मग्न रहे। निश्चित रूप से श्रीयदुनन्दन के लिए गदाधर दास के संग के बिना समय व्यतीत करना अति कठिन था। जिस अद्‌भुत विधि से श्रीरघुनन्दन ने अपने दीक्षा गुरु का तिरोभाव महोत्सव मनाया, हर कोई उनसे प्रभावित था।

जब भक्त याजिग्राम पहुँचे तो उनका निवासियों द्वारा बहुत उत्साह से स्वागत एवं अभिवादन किया गया। श्रीनिवास आचार्य विभिन्न स्थानों से पधारे इन उच्चकोटि के वैष्णवजनों का अभिवादन कर अति आनन्दित थे। वे उन सबको अपने निवास पर ले गए जहाँ सबने हरिनाम संकीर्तन का महोत्सव आरम्भ किया। भक्तजन वहाँ दो से पाँच दिवस तक रहे और वे सब श्रीनिवास आचार्य की सेवा से अति संतुष्ट हो गए।

तब श्रीरघुनन्दन श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों को श्रीखण्ड ले गए जहाँ गांव के लोगों ने उत्साहपूर्वक उनका स्वागत किया। हर कोई उन महान वैष्णवों को अपने गांव में पाकर अति प्रसन्न था परन्तु अपनी प्रसन्नता में वे विलाप भी

करने लगे कि भक्तजन शीघ्र ही यहाँ से प्रस्थान कर जाएँगे, फिर भी वे आश्वस्त थे कि वे सब इतने समय तक साथ रहेंगे कि श्रीनरहरि सरकार ठाकुर का तिरोभाव महोत्सव स्मरणीय बन जाएगा। उत्सव में केवल दो दिन शेष थे और गांव वासी जानते थे कि सम्पूर्ण श्रीखण्ड हरिनाम संकीर्तन की तरंगों में डूब जाएगा।

गांव के बाहर के लोग भी भारी संख्या में उत्सव के महत्व के साक्षी बनने आ गए। एकादशी की प्रातः श्रीरघुनन्दन ने स्वयं को श्रीचैतन्य महाप्रभु के उपस्थित सभी पार्षदों के सम्मुख समर्पित कर दिया। तत्पश्चात वे श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में गए और उत्साहपूर्वक उसे सजाना शुरु कर दिया। सभी भक्तों ने मंडप की सुन्दर शोभा की प्रशंसा की और हर कोई श्रीनरहरि सरकार ठाकुर के प्राणधन श्रीगौरचन्द्र के सुन्दर श्रीविग्रह के दर्शन कर मंत्रमुग्ध हो गया।

यह निश्चित था कि उस दिवस श्रीनिवास आचार्य श्रीमद्भागवत के पद सुनाएंगे और उनकी व्याख्या करेंगे। श्रीरघुनन्दन इस निर्णय से अति प्रसन्न थे और उन्होंने तत्क्षण सुन्दर आसनों का प्रबन्ध किया और भक्तजनों को निमंत्रित किया।

जब श्रीरघुनन्दन श्रीनिवास आचार्य को स्नेहपूर्वक उनके स्थान पर विराजमान कराने ले गए तो सब भक्तों ने मिलकर उन्हें भागवत का पद गायन आरम्भ करने का निवेदन किया। उन्होंने उन्हें आश्वस्त किया कि वे पद गायन का आनन्द लेंगे ताकि उन्हें बोलने में कोई संकोच न हो।

अद्भुत कोकिल-स्वर

श्रीनिवास आचार्य ने उन महान भक्तों के चरणकमलों में झुककर प्रणाम किया और पवित्र ग्रन्थ को पुष्प, तुलसी दल और चन्दन लेप निवेदन किए। उन्होंने मंगलाचरण से पद गायन आरम्भ किया। उनका स्वर कोकिल के समान मधुर था और सभी श्रोतागण उनके पद गायन से मंत्रमुग्ध हो गए। वे रास नृत्य के पद का वर्णन करते समय रो पड़े और तब उन्होंने अति मृदु भाषा में उसका अर्थ समझाया। श्रोतागण उनके पद गायन से पूर्णतः सन्तुष्ट थे।

श्रीनिवास आचार्य की मधुर आवाज से मंत्रमुग्ध कुछ उच्चकोटि के भक्तों ने यह घोषित कर दिया कि निश्चित ही साक्षात् शुकदेव स्वामी ने उन्हें सशक्त किया है। तब एक अन्य भक्त ने अपने भाव व्यक्त किए कि श्रीनिवास आचार्य को श्रील व्यास देव द्वारा सशक्त होना चाहिए तभी वे पदों को इतनी स्पष्टतापूर्वक समझा सकते हैं। फिर भी एक अन्य भक्त ने अनुभव किया कि श्रीगदाधर पंडित के अनुग्रह ने ही श्रीनिवास आचार्य को मधुर बोलने की सामर्थ्य दी है। अन्य लोगों ने यह कहकर श्रीनिवास पंडित को श्रेय दिया कि यह उनका अनुग्रह

है जिसने श्रीनिवास आचार्य को इतना मधुर जप करने की सामर्थ्य दी। किसी ने अपने भावों को व्यक्त किया। श्रीगौरांग ने स्वयं श्रीनिवास आचार्य के मुख के माध्यम से पदों को समझाया।

समय इतना जल्दी व्यतीत हो गया कि ज्ञान ही न हो सका क्योंकि सभी श्रोता श्रीनिवास आचार्य के सुमधुर पद गायन में पूर्ण रूप से मग्न हो गए थे। यह जानकर कि वह दिवस शीघ्र ही रात्रि में परिवर्तित हो गया श्रीनिवास आचार्य ने श्रीमद्भागवत का पद पठन रोक कर ग्रन्थ को अति विनम्र भाव से प्रणाम किया तथा श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के चरणकमलों में दण्डवत् प्रणाम किया।

श्रीनिवास की कृपा

श्रीनिवास आचार्य से पूर्णतः सन्तुष्ट श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों ने उनके शीश पर हाथ रखा और उन्हें यह कहकर आशीर्वाद दिया कि वे उनके दुःखी हृदय को शांत करने में समर्थ रहे हैं। उन्होंने प्रार्थना की कि श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनिवास आचार्य की सभी मनोकामना पूर्ण करें। उन्हें विश्वास था कि जो कोई भी श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में स्वयं को समर्पित करेगा वह निश्चित ही श्रीकृष्ण चैतन्य का अनुग्रह प्राप्त करेगा।

एक भक्त ने कहा, 'तुम्हारी अनुकम्पा से जीव मात्र को अपने भौतिक दुःखों से छुटकारा मिलेगा।' जैसे ही एक भक्त ने श्रीनिवास आचार्य का आलिंगन किया, दूसरा भक्त श्रीरघुनन्दन को श्रीमद्भागवत गायन के इतने सुन्दर आयोजन के लिए धन्यवाद स्वरूप उनके चरणकमलों का स्पर्श करने के लिए झुक गया।

श्रीरघुनन्दन ने अपने अनुचरों को अविलम्ब श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में एकत्र होने का निर्देश दिया। तब उन्होंने मण्डप को सजाया और संकीर्तन करने के लिए सब प्रबन्ध किए। श्रीरघुनन्दन एक खोल, करताल और अन्य वाद्ययन्त्र ले आए ताकि संकीर्तन अविलम्ब आरम्भ हो सके। तब श्रीरघुनन्दन ने सभी महान भक्तों को आमंत्रित किया।

सन्ध्या आरती

सर्वप्रथम वहाँ सन्ध्या आरती हुई फिर कीर्तन आरम्भ किया गया। सभी भक्त वाद्य यन्त्रों, सुगन्धित चन्दन लेप और सुन्दर पुष्पों की मालाओं के सुव्यवस्थित प्रबन्ध से प्रसन्न थे जो कि अलग-अलग पात्रों में रखी थीं। उन्होंने प्रत्येक भक्त को निवेदित सामग्री स्वीकार करने का विनम्र निवेदन किया।

खोल और करताल को भी चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन की गई। तब श्रीरघुनन्दन और श्रीलोचन दास ने पुष्प माला और चन्दन लेप उठाया और श्रीअद्वैत आचार्य के पुत्र श्रीकृष्ण मिश्र और श्रीगोपाल को निवेदित किया।

सभी भक्तजन इन दो वैष्णवों के सौन्दर्य से मन्त्र मुग्ध हो गए थे। उन्होंने श्रीवीरभद्र के तन को भी चन्दन लेप और पुष्प माला से सुशोभित किया। श्रीवीरभद्र ने श्रीनिवास आचार्य को संकेत कर चन्दन लेप और पुष्प माला उन्हें देने को कहा जो फिर श्रीरघुनन्दन को निवेदित की गईं।

जैसे ही श्रीवीरभद्र श्रीनिवास आचार्य को चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन करने के लिए मुड़े, श्रीरघुनन्दन उनके हाव-भाव से मुग्ध हो गए। महान भक्तों में परस्पर एक दूसरे को चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन करने का यह दृश्य अति सुन्दर था।

मंगल ध्वनि गूँज उठी

जब वे सुशोभित मंडप के नीचे खड़े थे, कुछ प्रमुख भक्तों ने विविध वाद्य यन्त्र बजाने आरम्भ कर दिए। वातावरण में मंगल ध्वनि गूँज उठी और जिस प्रांगण में संकीर्तन होना था उसके चारों ओर सैंकड़ों दीपक जला दिए गए। खोल, करताल, खंजरी और कंज के स्वर ने सजीव और उत्तमोत्तम वातावरण बना दिया। प्रमुख गायकों ने तब अपने भजन का परिचय देकर कीर्तन आरम्भ कर दिया।

मधुर गायन, अद्‌भुत धुन और जिस कला से वाद्ययन्त्रों को बजाया गया उससे उपस्थित सम्पूर्ण जन समुदाय मन्त्र मुग्ध हो गया था। वास्तव में जिसने भी कीर्तन में सहभागिता की उसने ऐसा अनुभव किया मानो उन्होंने अपनी युवा अवस्था प्राप्त कर ली हो। मन्दिर प्रांगण शीघ्र ही जन समुदाय से भर गया। दर्शक और कीर्तन के सहभागी दोनों के ही मुख पर अश्रु बह निकले। देवताओं ने भी वेष बदल लिया और आकर लोगों के साथ घुल मिल कर प्रसन्नता के सागर में तैरते हुए कीर्तन का अति आनन्द लिया।

अपने अस्तित्व को भूलकर उत्कृष्ट भक्तगण पागलों की भाँति कीर्तन में ऐसा गान और नृत्य करने लगे कि जिसने सम्पूर्ण विश्व को मन्त्र मुग्ध कर दिया। मैं श्रीकृष्ण मिश्र और श्रीगोपाल के नृत्य का वर्णन कैसे कर सकता हूँ? जो कोई भी श्रीवीरभद्र के नृत्य को देखता वह अपने सब कष्ट भूल जाता था। भक्तजन पछतावा करने लगे कि भक्तों के इस सुमधुर नृत्य के दर्शन करने के लिए उनके पास मात्र दो ही नेत्र हैं।

दिव्य चक्षु-ब्राह्मण

एक नेत्रहीन व्यक्ति जो कीर्तन सुन रहा था, उसने दूसरे व्यक्ति से नर्तक का नाम पूछा। जब उसने वीरभद्र का नाम सुना तो उसने सोचा कि इस नाम में ही इतनी सामर्थ्य है कि सब बुराई मिट जाए। शब्द वीर का अर्थ है, 'बुराई को नष्ट करना'। भद्र का अर्थ है 'भलाई की रक्षा'। वह अपनी नेत्रहीनता का

विलाप करने लगा और चुपचाप प्रभु से अपने दुर्भाग्य को दोष-रहित करने की विनती करने लगा।

उसके रुदन ने नित्यानन्द-नन्दन (श्रीवीरभद्र प्रभु) का हृदय स्पर्श कर लिया, उन्होंने स्नेहपूर्वक नेत्रहीन व्यक्ति को निहारा। तत्काल नेत्रहीन व्यक्ति की दृष्टि लौट आई और वह आनन्द से परिपूर्ण हो उठा। एक तुमुल जयघोष, ने श्री वीरभद्र प्रभु के गौरव और अनुग्रह को स्वीकार किया।

अद्‌भुत कीर्तन उत्सव

भक्तों ने सम्पूर्ण रात्रि श्रीचैतन्य महाप्रभु के गौरव का स्मरण करते हुए कीर्तन कर रोते हुए व्यतीत की। अपने हाथ ऊपर उठाकर वे उच्चस्वर में श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों श्रीनित्यानन्द राम, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीगदाधर दास पंडित, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीवास पंडित, श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीरामानन्द राय, श्रीमाधव घोष, श्रीबासु घोष, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीमुकुन्द दत्त, श्रीगदाधर दास और श्रीनरहरि सरकार ठाकुर का नाम पुकारने लगे।

भक्तजन पुनः-पुनः श्रीचैतन्य महाप्रभु को अपने सभी पार्षदों के साथ उनके सम्मुख प्रकट होने के लिए प्रार्थना करने लगे। जैसे ही वे निराश हो भूमि पर लोटने लगे उनके तन रज से ढक गये और उनके रुदन के स्वर से वातावरण करुणार्द्र हो उठा। श्रीचैतन्य महाप्रभु ऐसे निष्कपट भक्तजनों के प्रति अपने स्नेह पर नियंत्रण न रख सके, इस कारण उनके सम्मुख प्रकट हो गए।

इस अद्‌भुत रूप में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने भक्तजनों को अनेक प्रकार से शांत किया और उन्हें उत्तमोत्तम प्रेम के सागर में डुबो दिया। अत्यन्त तृप्त होकर भक्तजनों ने एक दूसरे के प्रति झुककर प्रणाम किया, एक-दूसरे का आलिंगन किया और अपने आनन्द के अश्रुओं को साझा किया। रात्रि व्यतीत हुई और प्रातःकाल उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु की मंगला आरती के दर्शन किए।

महान भक्तों के उत्कृष्ट व्यवहार के दर्शन कर गांव के वासियों ने भगवान् श्रीहरि के पावन नाम का उच्चस्वर में उच्चारण आरम्भ कर दिया। तथापि लोगों के भिन्न-भिन्न विचार थे। एक व्यक्ति रात्रि की अल्प अवधि को दोष देते हुए विलाप करने लगा और विधाता को अपने विचारों में दोष देने लगा, ऐसी एकादशी किसी के जीवन में प्रायः कम ही आती है। इस दिवस उन्होंने उच्चकोटि के भक्तों के कीर्तन द्वारा लाई गई प्रेम की फुहार का अनुभव किया।

ऐसा संकीर्तन गौड़ीयों द्वारा ही सम्भव

एक अन्य व्यक्ति ने टिप्पणी की, वैष्णवों में एक महत्त्वपूर्ण गुण होता है कि वे पूरा दिन और पूरी रात उपवास कर सकते हैं। अन्य व्यक्ति ने कहा कि ये केवल मात्र श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों में ही सामर्थ्य है कि वे इस प्रकार

एकादशी का उपवास करें। एक व्यक्ति ने अनुभव किया कि किसी को भी कभी एकादशी में भोजन नहीं करना चाहिए। जो कोई भी एकादशी पर किसी को भोजन का निवेदन करता है वह एक महान अपराधी है। एक अन्य व्यक्ति ने अनुभव किया कि केवल मात्र वही जिसे श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों का अनुग्रह प्राप्त हो गया हो, उपयुक्त रूप से एकादशी व्रत कर सकता है।

अति विनम्रता से एक व्यक्ति ने पूछा कि क्या वह एकादशी करने पर पर्याप्त रूप से श्रद्धा प्राप्त कर सकता है क्योंकि वह एक पापी है। किसी अन्य व्यक्ति ने मंगल दिवस की पवित्रता के प्रति अपनी अज्ञानता प्रदर्शित की। किसी अन्य ने सभी वैष्णवों के चरणकमलों में दण्डवत् प्रणाम का अवसर न प्राप्त होने के अपने दुर्भाग्य के प्रति विलाप किया।

एक व्यक्ति ने उन सब व्यक्तियों को सांत्वना देने का प्रयास किया जो विलाप कर रहे थे और तब सभी व्यक्ति, उच्चकोटि के सभी वैष्णवजनों को प्रणाम करने, मन्दिर के प्रांगण में गए जहाँ अब भी संकीर्तन हो रहा था।

श्रीरघुनंदन की प्रशंसा

भक्तजनों ने श्रीरघुनन्दन के निष्कपट प्रयासों की अति प्रशंसा की। एक व्यक्ति का यह विचार था कि यद्यपि जो कोई भी श्रीरघुनन्दन से स्नेहमय आलिंगन प्राप्त कर ले वह निश्चित ही श्रीकृष्ण चैतन्य का अनुग्रह प्राप्त करेगा। एक अन्य व्यक्ति ने विशेषकर श्रीरघुनन्दन की उनके असहाय, अयोग्य और दुखी व्यक्तियों के प्रति करुणा भाव की अति सराहना की। एक अन्य व्यक्ति ने उनकी विनम्र स्वभाव और शिष्टता की सराहना की। कोई अन्य उनके सौन्दर्य के प्रति आकर्षित था जिसकी तुलना कन्दर्प के सौन्दर्य से की जा सकती है जो कि प्रेम के देवता हैं। अन्य व्यक्ति ने उनकी गायन कला, वाद्य यन्त्र बजाने की निपुणता और नृत्य की सराहना की। किसी अन्य ने उनके द्वारा कीर्तन के लिये सुव्यस्थित प्रबन्धन की सराहना की, जिसका उन सब ने अत्यधिक आनन्द लिया।

जब भक्तजन श्रीरघुनन्दन के श्रेष्ठ गुणों की चर्चा कर रहे थे, वे वहाँ आ पहुँचे। वे अपनी महिमा सुनकर संकुचित हो उठे क्योंकि वे अति विनम्र व्यक्ति थे। श्रीरघुनन्दन की विनम्र मनोदशा देख भक्तजन आनन्दातिरेक के भावों से उल्लसित हो उठे और उन्हें अति स्नेह से आलिंगन प्रदान किया।

श्रीरघुनन्दन ने भक्तजनों से पूछा कि उन्हें द्वादशी–पारण कैसे करना चाहिए। भक्तजनों ने सुझाव दिया कि उन्हें मिलकर श्रीगौरांग का प्रसाद पाकर द्वादशी मनानी चाहिए। श्रीरघुनन्दन सुझाव सुनकर प्रसन्न थे और उन्होंने अविलम्ब अनेक प्रकार की सामग्री एकत्र की और अपने शिष्यों को अनेक प्रकार की भोजन सामग्री बनाने का आदेश दिया।

भक्तजन अपने निवास पर आ गये और प्रात:काल के नित्यकर्म जैसे कि स्नान और अपनी प्रार्थना का जप आदि पूर्ण करने लगे इसी समय अनेक प्रकार के भोजन पकाए गए और पुजारी ने उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु को निवेदन किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु के भोजन पाने के बाद पुजारी ने श्रीविग्रह के कक्ष से प्रसाद उठा लिया। श्रीरघुनन्दन ने भक्तजनों को बुलाया और उन्हें विविध प्रकार के असंख्य व्यंजन दिखाए जो उन्होंने प्रभु को निवेदन किए थे। वे सब श्रीचैतन्य महाप्रभु को निवेदित भोज्य पदार्थों की विविधता देखकर आनन्दित थे।

महाप्रसाद सेवा

आरती के पश्चात्, भक्तों ने अपना स्थान ग्रहण किया, सेवकों ने केले का पत्ता और सुगन्धि जल पीने का पात्र प्रत्येक भक्त के सामने रखा और तब सावधानी पूर्वक प्रत्येक को श्रीचैतन्य महाप्रभु का प्रसाद परोसा। मन्दिर के भीतर समर्पित पुजारी ने स्नेहवश प्रभु के विश्राम कराने की व्यवस्था पूर्ण की। तब उन्होंने पुनः-पुनः प्रभु के सम्मुख झुक कर प्रणाम किया और गर्भ गृह से बाहर आ सभी एकत्रित भक्तजनों को प्रसाद परोसना आरम्भ किया। उन्होंने कच्चा-पक्का दोनों प्रकार का भोजन और फल भक्तजनों को वितरित किए और तत्पश्चात उन्होंने सुगन्धित जल दिया जिससे प्रभु के चरणकमलों को धोया गया था।

भक्तजनों ने श्रीरघुनन्दन से उनके साथ प्रसाद पाने का निवेदन किया परन्तु उन्होंने विनम्रता से यह कहकर मना कर दिया कि वे उन्हें प्रसाद पाते हुए देखने का आनन्द लेना चाहते हैं। उन्होंने उच्चस्वर में श्रीहरि के नाम का उच्चारण किया और प्रसाद पाना आरम्भ किया। श्रीरघुनन्दन ने इस दृश्य को देखकर अति आनन्द लिया।

श्रीनरहरि ठाकुर ने दर्शन दिये

तब श्रीरघुनन्दन ने शीघ्रता से भोग-मन्दिर में प्रसाद का मात्र कुछ अंश ग्रहण किया। वे एक एकान्त कक्ष में गए जहाँ श्रीनरहरि सरकार ठाकुर रहा करते थे, वहाँ ठाकुर जी के आंसन को भूमि पर रखा और विविध भोज्य पदार्थ और सुगन्धित जल का पात्र उनके सम्मुख रखा। उन्होंने एक थाली में पान के पत्ते और श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीविग्रह की प्रसादी पुष्प माला अन्य थाली में रखी और उसे श्रीनरहरि सरकार ठाकुर की गद्दी के सामने रखकर निवेदन किया।

तब वे इन वस्तुओं को श्रीनरहरि सरकार ठाकुर को निवेदन करने की ध्यान की मुद्रा में नीचे बैठ गए। ध्यान से उठने के पश्चात् श्रीरघुनन्दन ने कक्ष के द्वार बन्द कर दिए और कुछ देर बाहर प्रतीक्षा की। तब उन्होंने श्रीनरहरि

सरकार ठाकुर को अपने मुख और हाथों का मार्जन करने के लिए जल लेकर पुन: कक्ष में प्रवेश किया। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने द्वार खोला और श्रीरघुनन्दन ने श्रीनरहरि सरकार ठाकुर के अपनी गद्दी पर बैठे दिव्य शरीर के साक्षात् दर्शन किए। तत्क्षण श्री रघुनन्दन अपने बारे में सब भूल गए परन्तु जब श्रीनरहरि सरकार शीघ्र ही लुप्त हो गए तो वे दु:ख के सागर में डूब गए।

जब भक्तजनों ने प्रसाद पा लिया तो उन्होंने अपने मुख और हाथों का मार्जन किया तब उन्होंने श्रीरघुनन्दन से पार्षदों के साथ अपना स्थान ग्रहण कर प्रसाद पाने का निवेदन किया, यद्यपि श्रीरघुनन्दन ने सर्वप्रथम श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्तजनों को परोसा और जब सबने पा लिया तब उन्होंने अंत में प्रसाद पाया। जिस किसी ने भी उत्सव में प्रसाद पाया, उसने इस बात की सराहना की कि कैसे श्रीरघुनन्दन ने सबके लिए भलीप्रकार से प्रसाद पाने का प्रबन्ध किया है।

जब श्रीरघुनन्दन ने अपने सब कृत्य पूर्ण कर लिए, वे श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में गए तो प्रभु के जागने पर होने वाली आरती में भक्तों से सम्मिलित होने का निवेदन किया। उन्होंने उनसे सायंकाल में श्रीविग्रह के सम्मुख दीप दान करने का भी निवेदन किया। इन दो उत्सवों के बाद भक्तजनों ने संकीर्तन आरम्भ कर दिया और मध्य रात्रि तक करते रहे। वे अर्धरात्रि के पश्चात् सो गए और प्रात: उन्होंने अपने नित्यकर्म स्नान आदि पूर्ण किए।

उस प्रात: जब श्रीरघुनन्दन ने उनसे भेंट की तो श्रीपति और श्रीनिधि ने उन्हें सूचित किया कि वे उस दिवस प्रस्थान करने की योजना बना रहे हैं। श्रीरघुनन्दन ने दो-चार दिवस और रुकने का निवेदन किया। ब्राह्मण वाणीनाथ ने श्रीरघुनन्दन को बताया कि वे अगले दिवस प्रस्थान करेंगे परन्तु श्रीरघुनन्दन ने मुस्कुरा कर सूचित किया कि कुछ प्रश्न हैं जैसे कि उन्हें अगले दिन जाने दिया जाएगा या नहीं। उन्होंने वाणीनाथ और उनके पार्षदों को बताया कि उस दिवस हर घर में पकवान बनाए जाऐंगे और यह कि उनके लिए ये सन्तुष्टि होगी कि वे जाऐं और स्नान करके वापिस आ जाऐं। प्रत्येक ने रघुनन्दन के प्रेममय निवेदन को स्वीकार कर लिया।

प्रभु श्रीगौरचन्द्र के पुजारी, भक्तजनों के लिए प्रसाद और अनेक पात्रों में मिष्ठान ले आए उन्हें वह जल भी प्रदान किया जिससे उन्होंने प्रभु के चरणकमलों का मार्जन किया था। जब प्रत्येक घर में पकाए गए भोजन को भगवान् श्रीकृष्ण को निवेदन किया तो भक्तजनों ने आदर से प्रसाद पाया और अपना समय श्रीकृष्ण के बारे में चर्चा करने में अपना समय व्यतीत किया।

अपने उल्लास में श्रीरघुनन्दन ये नहीं समझ पाए कि कितने दिन-रात बीत रहे हैं। दो या चार दिन बाद भक्तजनों ने वहाँ से प्रस्थान करने का निश्चय

किया। श्रीरघुनन्दन इस बात से अत्यधिक निराश थे और उन्होंने उन्हें अनेक उपहार भेंट किए। उन्होंने श्रीवीरभद्र प्रभु का हाथ पकड़ लिया और उनसे विभिन्न विषयों पर चर्चा करते हुए रो पड़े। मात्र श्रीकृष्ण मिश्र और श्रीगोपाल के मुख का दर्शन कर रघुनन्दन का हृदय व्यथित हो गया। भारी मन से उन्होंने वहाँ पधारे हुए प्रत्येक भक्त से बात की।

प्रात: हर कोई श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में एकत्र हो गया और दर्शन किए। उन्होंने हार्दिक प्रणाम किया और पुजारी से प्रसादी पुष्प माला स्वीकार की।

जब पधारे हुए भक्तों ने श्रीखण्ड से प्रस्थान किया तब गांव के लोग दु:ख और निराशा के अगाध सागर में डूब गए। श्रीरघुनन्दन और अन्य कुछ दूरी तक भक्तजनों के साथ चले। श्रीपति और कुछ अन्य भक्तों ने तब श्रीरघुनन्दन, श्रीनिवास आचार्य और श्रीयदुनन्दन को विविध प्रकार के यत्नों से शांत किया। अंत में श्रीरघुनन्दन और श्रीनिवास अपने निवास पर लौट आए। दोनों ने मिलकर संकीर्तन कर दिवस व्यतीत किया।

याजिग्राम प्रस्थान

अगले दिवस श्रीनिवास आचार्य ने प्रत्येक से विदा ली और याजिग्राम चले गए। श्रीयदुनन्दन कंटकनगर चले गए और अन्य वैष्णव अपने अपने गांव लौट गए। तथापि लोगों ने महोत्सव के बारे में चर्चा करना जारी रखा जो कि श्रीरघुनन्दन के अनुग्रह से आयोजित हुआ था।

इस ग्रन्थ के पाठकों को विशुद्ध मन से श्रवण कराने के लिए नरहरि दास श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का ध्यान करते हुए इस ग्रन्थ भक्ति रत्नाकर को लिखने में आनन्द प्राप्त करते हैं।

दशम प्रवाह

द्विज हरिदास तिरोभाव तिथि पूजा, श्रीनरोत्तम ठाकुर के द्वारा श्रीविग्रह-प्रतिष्ठा

नवद्वीप नाथ श्रीगौरचन्द्र की जय जयकार हो। एकचक्रा के प्रभु श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो। शान्तिपुर के भूषण श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुचरों की जय जयकार हो और इस ग्रन्थ के पाठकों की जय जयकार हो। अब मैं अपना वक्तव्य अनवरत रखूँगा।

जब श्रीनिवास अपने अनुचरों के साथ श्रीखण्ड से याजिग्राम वापिस लौट आये तो एक बार पुनः उन्होंने उन्हें गोस्वामी गणों के ग्रन्थों से पढ़ाना आरम्भ कर दिया। उन्होंने साहसपूर्वक इस शिक्षा का प्रसार कर कि भगवान् की प्रेम-सेवा ही उन्नति का एकमात्र मार्ग है, नास्तिकों को मौन कर दिया था।

श्रीनिवास आचार्य अपने शिष्यों से प्रसन्न थे क्योंकि उन्होंने गोस्वामी गणों के ग्रन्थों में प्रस्तुत तत्त्वज्ञान को शीघ्रता से आत्मसात कर लिया था और छात्र अपने दीक्षा गुरु से शिक्षा ग्रहण कर प्रसन्न थे। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीगोकुलानन्द, श्रीदास और अन्य छात्रों को दीक्षा देने का निर्णय किया।

जब श्रीदास अन्य छात्रों के मध्य बैठे थे तब उन्होंने समझाया कि श्रीनरहरि सरकार ठाकुर और श्रीगदाधर दास के अन्तर्धान होने के कारण कैसे उनका हृदय जल रहा है। और कैसे अपनी अप्रसन्नता की मनोदशा के कारण उन्होंने याजिग्राम से प्रस्थान किया और श्रीवृन्दावन गए, केवल यह जानने के लिए कि माघ मास की कृष्ण एकादशी पर श्रीहरिदास आचार्य भी इस संसार से अन्तर्धान हो गए। इस कारण वे दुःख के सागर में और अधिक डूब गए। श्रीवृन्दावन के गोस्वामी गण भी समान रूप से दुखी थे परन्तु उन्होंने उन्हें गौड़-देश वापिस लौट जाने का निवेदन किया।

श्रीनिवास आचार्य ने दोनों भाइयों श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास को श्रेष्ठतम रूप से श्रीहरिदास आचार्य के तिरोभाव उत्सव को मनाने का सुझाव दिया।

कांचनगढ़िया में उत्सव

उन्होंने उन्हें कांचनगढ़िया जाने का आदेश दिया और जो कुछ भी आवश्यक है उसका प्रबन्ध करने को कहते हुए उन्हें आश्वस्त किया कि वे दो-चार दिवस में वहाँ जाएंगे। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें सुझाव दिया कि किसी बात की चिंता न करें क्योंकि श्रीहरिदास आचार्य की अनुकम्पा से सब सरलता से पूरा हो जाएगा।

श्रीगोकुलानन्द और उनके भ्राता ने तत्काल कांचनगढ़िया के लिए प्रस्थान किया और वहाँ लोगों ने उत्साहपूर्वक उनका अभिवादन किया। दोनों भ्राता धनी व्यक्तियों के पास गए और उनसे आने वाले उत्सव के प्रबंधन में सहायता करने का निवेदन किया। धनी व्यक्तियों ने अनेक उपयोगी वस्तुएं दीं, पधारने वाले अतिथियों के लिए आवास बनवाए और जब सब कुछ सम्पूर्ण हो गया तब दोनों भाइयों को सूचित कर दिया। श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास इन व्यवस्थाओं को देखकर अति प्रसन्न हो गए।

गांव के लोगों ने उत्सव की व्यवस्थाओं के बारे में विविध प्रकार से अनुमान लगाया। तब किसी ने लोगों को समझाया कि श्रीहरिदास आचार्य, श्रीचैतन्य महाप्रभु के महान शिष्य थे। नीलाचल में प्रभु के अन्तर्धान होने के पश्चात् श्रीहरिदास के लिए समय व्यतीत करना असंभव हो गया था। उनका तन और उत्साह धीरे-धीरे संकुचित हो रहा था और अंततः उन्होंने संसार त्यागने का निश्चय किया। यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से उन्होंने स्वयं पर नियंत्रण प्राप्त किया और अपने दो पुत्रों श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास को अपने निकट बुलाया। उन्होंने उन्हें श्रीनिवास आचार्य के उत्कृष्ट चरित्र के बारे में बताया और उनसे दीक्षा लेने का सुझाव दिया। अगली प्रातः श्रीहरिदास आचार्य अकेले श्रीवृन्दावन के लिए निकल पड़े।

उत्सव की तैयारी

श्रीवृन्दावन में श्रीहरिदास आचार्य ने रहने के लिए एक निर्जन स्थान का चयन किया और श्रीनिवास आचार्य उनसे भेंट करने एक बार वहाँ गए थे। उस समय श्रीहरिदास आचार्य ने श्रीनिवास आचार्य से अपने दोनों पुत्रों को दीक्षा मन्त्र देने के लिए बारम्बार निवेदन किया। श्रीनिवास आचार्य तब बंगाल वापिस लौट आए और कुछ समय बाद जब वे दूसरी बार श्रीवृन्दावन जा रहे थे तो उन्हें माघ मास में श्रीहरिदास आचार्य के अन्तर्धान होने के बारे में ज्ञात हुआ।

श्रीनिवास आचार्य बहुत दुखी हुए परन्तु श्रीहरिदास आचार्य ने स्वप्न में उन्हें शांत किया। जब श्रीनिवास आचार्य श्रीवृन्दावन पहुँचे तो सभी उनका स्वागत करने आए। उस समय उन्होंने श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास से भेंट की और उनसे अति स्नेह से बातें की।

उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को कांचनगढ़िया जाने का आदेश दिया और उन्हें आश्वस्त किया कि वे भी कुछ समय बाद वहाँ जाएँगे। उन्होंने भी आश्वस्त किया कि माघ मास की कृष्ण एकादशी पर वे उन्हें दीक्षा देंगे।

व्यक्ति ने कांचनगढ़िया के लोगों से यह कह कर अपनी कथा पूर्ण की कि श्रीहरिदास आचार्य के तिरोभाव उत्सव को मनाने के लिए विस्तृत समारोह का प्रबन्ध किया गया। उन्होंने यह भी बताया कि अनेक महान भक्त उत्सव में

आएंगे और सम्पूर्ण गांव मधुर संकीर्तन के रस में डूब जाएगा। उन्होंने उन्हें यह भी बताया कि यद्यपि वे गांव में अपने सगे सम्बन्धियों से मिलने आए थे, उन्होंने उत्सव के बारे में सुना तो रुकने और उत्सव में भाग लेने का निर्णय किया।

उस समय कुछ हलचल अनुभव की गई और भगवान् श्रीहरि के नाम का उच्चस्वर में श्रवण हुआ। लोग एक-दूसरे से ये पूछते हुए, हलचल वाली दिशा में आगे बढ़ने लगे। एक व्यक्ति ने बताया कि याजिग्राम से श्रीनिवास आचार्य का आगमन हुआ है तो हर किसी ने जाकर उनसे भेंट करने का निर्णय किया। उन्हें ज्ञात हुआ कि श्रीगोकुलानन्द का आवास पहले से ही उस जन समुदाय से भरा हुआ है जो श्रीनिवास आचार्य से भेंट करना चाहते हैं।

भक्तजनों का स्वागत

श्रीदास और श्रीगोकुलानन्द, श्रीनिवास आचार्य का सान्निध्य पाकर अति आनन्दित थे, तब उन्होंने हृदय से श्रीरामचन्द्र कविराज और उनके साथ पधारे भक्तों का स्वागत किया। विविध स्थानों से वैष्णवजन वहाँ आए और सभी आमंत्रित अतिथियों को उनसे सम्बन्धित आवासों में ले जाया गया। श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास उन सबका स्वागत करके प्रसन्न थे और गांव के भक्तजनों ने स्वेच्छा से स्वयं को सम्बन्धित अतिथियों की सेवा में तल्लीन कर लिया। अन्य गांव वाले अतिथियों की सेवा के लिए आवश्यकता का अन्य सभी सामान ले आए।

गांव के लोगों ने ऐसे आकर्षक वैष्णवों का दल पहले कभी नहीं देखा था। वे सब, वैष्णवजनों के श्रेष्ठ उदाहरण श्रीनिवास आचार्य की उपस्थिति से मंत्रमुग्ध थे। वे केवल इस कारण निराश थे कि अतिथि गण अगले दिवस कांचनगढ़िया से प्रस्थान कर जाएंगे।

तब एक व्यक्ति ने उन्हें यह कहकर पुनः आश्वस्त किया कि वे भक्तजनों के तत्काल प्रस्थान की चिंता न करें क्योंकि अगले दिवस माघ मास की कृष्ण एकादशी है और उस दिवस वैष्णव ऐसा व्यवहार करेंगे जो कि नास्तिकों और निन्दकों की तुलना में अवर्णनीय होगा।

वैष्णव भली प्रकार से जानते हैं कि **एकादशी और द्वादशी** किस प्रकार की जाती है। उन्होंने उस दिवस केवल एक बार प्रसाद पाया (एकादशी से एक दिवस पूर्व) और एकादशी पर पूर्ण व्रत किया। यहाँ तक कि उन्होंने **जल भी नहीं ग्रहण** किया। द्वादशी पर भी उन्होंने विविध प्रकार के व्यंजन बनाकर भगवान् श्रीकृष्ण को निवेदन कर **पुनः एक बार ही** प्रसाद पाया। वह निवेदित भोग विविध पात्रों में रखकर श्रीहरिदास आचार्य के चरणकमलों में निवेदन किया।

एक गांव वासी ने इस संभ्रान्त व्यक्ति (जिसने श्रीनिवास आचार्य और श्रीहरिदास आचार्य का वर्णन किया था) से पूछा कि वे एक अयोग्य व्यक्ति होते

हुए, वैष्णव विधि-विधानों को कैसे समझ सकते हैं। उस संभ्रात व्यक्ति को उन विनम्र ग्राम वासियों पर दया आ गई और उन्होंने उन्हें और पांच दिवसों के लिए वहाँ रहने और श्रीगोकुलानन्द के आवास पर होने वाले महोत्सव का आनन्द लेने के लिए प्रोत्साहित किया। वे जानते थे कि वहाँ पधारने वाले भक्तजन वहाँ पांच दिवस तक रहेंगे तो उस व्यक्ति ने उन महान आत्माओं के हरि-नाम-संकीर्तन में भाग लेने का सुझाव दिया।

श्री गोकुलानन्द एवं श्रीदास की दीक्षा

हर किसी ने श्री गोकुलानन्द और श्रीदास के निष्कपट व्यवहार की सराहना की। दशमी पर वे और उनके अनुचर संकीर्तन में मग्न हो गए। वे आनन्दित थे क्योंकि वे शीघ्र ही श्रीनिवास आचार्य से दीक्षा ग्रहण करेंगे। जैसा उन्होंने वचन दिया था, श्रीनिवास आचार्य ने एकादशी पर श्रीराधा-कृष्ण मन्त्र की उन्हें दीक्षा प्रदान की और तब उन्होंने अपने दो नवीन शिष्यों को श्रीश्रीराधा-कृष्ण और श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। जैसे ही दोनों शिष्य प्रसन्नतावश रोने लगे श्रीनिवास आचार्य ने अति स्नेह से आलिंगन कर लिया और जिसने भी उस समारोह को देखा, उसने उस अवसर की महिमा की भगवान् हरि के पावन नाम का उच्चारण कर और वृद्धि कर दी।

द्वादशी पर श्रीदास और श्रीगोकुलानन्द ने अनेक स्वादिष्ट भोजन पकाए और श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें भगवान् कृष्ण को निवेदन किया।

जब कुछ समय व्यतीत हुआ तो श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें हाथ और मुख मार्जन के लिए पान का पत्ता और जल दिया और भोजन को कुछ पात्रों में डाल कर पुनः उन्हें निर्जन स्थान पर श्रीहरिदास आचार्य को निवेदन किया। पुनः जब कुछ समय व्यतीत हुआ तो उन्होंने श्रीहरिदास आचार्य को हाथ मुख मार्जन के लिए जल निवेदन किया।

श्रीदास ने तब श्रीनिवास आचार्य को सूचित किया कि उन्होंने अतिथियों के लिए आसन लगा दिए हैं, अब वे प्रसाद पाने के लिए बैठ सकते हैं। श्रीनिवास आचार्य ने वैष्णवजनों को स्थान ग्रहण करने का निवेदन किया और सेवकों को केले के पत्ते पर उत्कृष्ट प्रसाद परोसने का आदेश दिया। उत्कृष्ट भोजन से वातावरण महक उठा। भगवान् श्रीहरि का पावन नाम जप करते हुए भक्तजनों ने भोजन का आनन्द लिया। हाथ और मुख का मार्जन करने के बाद उन्होंने कुछ पल विश्राम किया।

महाप्रसाद

तत्पश्चात् कांचनगढ़िया के लोग समूह में आए और उत्सुकता से महा-प्रसाद का अंश ग्रहण किया। जब अन्य सब भक्तजन प्रसाद पा चुके तो श्रीनिवास

आचार्य ने महा–प्रसाद का एक अंश लिया और तब श्रीदास और श्रीगोकुलानन्द ने आचार्य द्वारा बचाए गए शेष प्रसाद को ग्रहण किया। प्रसाद पाने के बाद हर कोई संकीर्तन में भाग लेने के लिए प्रांगण में एकत्र हो गए।

कीर्तन प्रारम्भ करने से पूर्व लोगों ने उच्चस्वर में भगवान् श्रीहरि का नाम उच्चारण किया। तत्पश्चात् विविध वाद्य यन्त्रों के संग में उनके गान और नृत्य के उत्साह में महान भक्तों को दिवस और रात व्यतीत होने की सुध न रही। इस प्रकार उन्होंने आनन्द में पांच दिवस व्यतीत किए।

अंततः जब श्रीनिवास आचार्य के प्रस्थान का समय आया तब न केवल दोनों भ्राता बल्कि गांव के सभी लोग विलाप करने लगे। पधारने वाले भक्तजन जिन्होंने उत्सव में सहभागिता की थी, उन्होंने दोनों भ्राता जनों श्रीगोकुलानन्द और श्रीदास के व्यवहार की सराहना की और तब अपने घर लौट आए। तथापि अपने दो नवीन शिष्यों के निवेदन पर श्रीनिवास आचार्य ने चार दिवस और रहने का निर्णय किया। उन्होंने उनकी दीक्षा गुरु के प्रति निष्ठा और समर्पण की अति सराहना की।

श्रीनिवास आचार्य अपने प्रिय पार्षद श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के दर्शन करने को अति उत्सुक थे अतः उन्होंने शीघ्रता से अपने शिष्यों के साथ कांचनगढ़िया से खेतुड़ी को प्रस्थान किया।

श्रीनिवास के कुछ प्रिय शिष्य

मैं अब श्रीनिवास आचार्य के कुछ प्रिय शिष्यों के नामों का उल्लेख करूँगा। श्रीरामचन्द्र कविराज, एक असाधारण गुणों वाले व्यक्ति थे; श्रीदास; श्रीगोकुलानन्द, एक अति दयालु वैष्णव थे; देवलीग्राम के श्रीकृष्ण वल्लभ चक्रवर्ती, श्रीव्यास आचार्य, एक विख्यात भक्त; श्री वल्लभी कान्त कविराज, समर्पण की प्रतिमूर्ति, जो नास्तिकों के हृदय में पीड़ा उत्पन्न करने वाले थे। श्रीनृसिंह कविराज, एक महान कवि; उनके भ्राता, श्रीनारायण; कवि श्रेष्ठ कर्णपूर कविराज; एक उत्तम सज्जन भगवान् कविराज, एक उच्च शिक्षित व्यक्ति जिनके भ्राता रूप निमुवीर भौमाल्य; पंचकूट में सेरागढ़ के श्री गोकुल; कढ़ई के कविन्द्र भक्तातुल; दो महान ब्राह्मण, रामकृष्ण और कुमुद; चक्रवर्ती श्यामदास; श्रीनिवास आचार्य के बहनोई श्रीरामचन्द्र; याजिग्राम के श्रीरूप घटक और कांचनगढ़िया के श्रीगोपाल दास।

इन सब शिष्यों ने श्रीनिवास आचार्य के साथ कांचनगढ़िया से खेतुड़ी की यात्रा की। मार्ग में श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरामचन्द्र कविराज को बताया कि वे बुधरी के मार्ग से खेतुड़ी जाएंगे, जहाँ श्रीरामचन्द्र के अनुज भ्राता रहते थे। श्रीनिवास जानना चाहते थे कि कौन आगे जाकर श्रीरामचन्द्र के भाई को उनके आगमन की सूचना देगा परन्तु श्रीरामचन्द्र ने उन्हें बताया कि उनके आगमन के

समाचार देने की कोई आवश्यकता नहीं हैं क्योंकि हर कोई पहले से यह जानता है।

जब वे ऐसे बात कर रहे थे, बुधरी से एक व्यक्ति ने आकर श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में प्रणाम किया और अपने गांव की कुशलक्षेम का समाचार दिया। उन्होंने बताया कि श्रीगोविन्द (रामचन्द्र के अनुज भ्राता) और अन्य उत्सुकता से उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

जब श्रीनिवास आचार्य दूसरी बार श्रीवृन्दावन गए, श्रीरामचन्द्र कविराज उनके साथ गए। उस समय श्रीगोविन्द तेलिया बुधरी आ गए थे। इस अवधि के दौरान श्रीगोविन्द ने स्वयं को श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में समर्पित कर दिया था और एक दिवस उनसे भेंट करने की अभिलाषा की। श्रीवृन्दावन से श्रीनिवास आचार्य, श्रीरामचन्द्र कविराज के साथ याजिग्राम, कंटकनगर और खण्ड में रुकते हुए वन विष्णुपुर जा चुके थे। कांचनगढ़िया में श्रीनिवास आचार्य और उनके शिष्यों ने एक विशाल संकीर्तन महोत्सव का आनन्द लिया।

उस समय तेलिया बुधरी से एक सन्देशवाहक श्रीनिवास आचार्य से भेंट करने आया और उन्हें प्रणामकर वह यह सूचित करने कि आचार्य उनके गांव के सन्निकट पहुँच गए हैं, शीघ्रता से अपने घर लौट गया।

जब लोगों ने यह सुना कि वे शीघ्र ही तेलिया बुधरी में होंगे, वे श्रीनिवास से भेंट करने के लिए समूहों में एकत्र हो गए। बिना विलम्ब किए श्रीगोविन्द और अन्यों ने श्रीनिवास आचार्य के रहने के लिए सब प्रकार के प्रबन्ध किए। उन्होंने भली प्रकार से कुछ आवासों को व्यवस्थित किया और फिर श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों की अगवानी करने पहुँचे। तेलिया बुधरी के वासी ऐसे उत्कृष्ट वैष्णवों की अगवानी करके प्रसन्न हो रहे थे और वे अपने सम्मानित अतिथियों के लिए अनेक आवश्यक वस्तुऐं ले आए।

गोविन्द को दीक्षा

उस समय श्रीगोविन्द ने अपने अनुज भ्राता श्रीरामचन्द्र कविराज से उन्हें श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में समर्पित करने का निवेदन किया। श्रीरामचन्द्र, श्रीगोविन्द की निष्कपटता से द्रवित हो गए और उन्होंने उनके बारे में श्रीनिवास आचार्य से चर्चा की। श्रीनिवास आचार्य श्रीगोविन्द को अपना शिष्य स्वीकार कर आनन्दित हो गए और उन्होंने उन्हें श्रीराधा-कृष्ण मन्त्र की दीक्षा प्रदान की। इस प्रकार दोनों भाइयों ने स्वयं को श्रीनिवास आचार्य की सेवा में समर्पित कर दिया।

श्रीनिवास आचार्य आश्चर्यचकित थे कि श्रीरामचन्द्र कविराज कब श्रीनरोत्तम दास ठाकुर से भेंट करेंगे। किसी प्रकार से उन्होंने अनुभव किया कि श्रीनरोत्तम दास शीघ्र आएंगे। दीर्घकाल से उनकी भेंट नहीं हुई थी यद्यपि

श्रीनिवास आचार्य पूर्व में श्रीनरोत्तम दास को पत्र लिख चुके थे, उन्हें भय था कि उन्हें उनके तेलिया बुधरी में आगमन के बारे में ज्ञात न हो। तब उन्होंने निर्णय किया कि वे एक व्यक्ति को नरोत्तम दास के पास भेजेंगे, एक ब्राह्मण श्रीनिवास आचार्य से भेंट करने आए।

ब्राह्मण अपने पार्षदों से घिरे श्रीनिवास आचार्य की आकर्षणशीलता से मन्त्र मुग्ध थे। जब वे उनके चरणकमलों में प्रणाम स्वरूप झुके तो श्रीनिवास आचार्य ने उनका नाम और अन्य जानकारी पूछी। ब्राह्मण ने प्रति उत्तर में बताया वह खेतुड़ी के दुर्गा दास हैं और एक ऐसे अयोग्य व्यक्ति हैं जिन्हें श्रीनरोत्तम दास ठाकुर द्वारा भौतिक संसार के साधनों से बचाया गया है।

जब उसने सुना कि श्रीनिवास आचार्य तेलिया बुधरी में है, वह बिना किसी को सूचित किए उनसे भेंट करने चला आया।श्रीनिवास आचार्य ने दुर्गा दास से नरोत्तम दास के बारे में पूछा तो ब्राह्मण ने उन्हें सूचित किया नीलाचल से खेतुड़ी आने के बाद श्रीनरोत्तम दास ने सब प्रकार के नास्तिकों और निन्दकों को परास्त कर साहसपूर्वक भक्ति के सिद्धांत की स्थापना की। श्रीकृष्णचैतन्य, श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य के अनुग्रह स्वरूप वे दुष्ट और नास्तिक वृत्ति के लोगों को शांत करने में समर्थ हुए। श्रीनरोत्तम दास ने श्रीश्रीराधा–कृष्ण के पांच श्रीविग्रहों की स्थापना की और श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीविग्रह की भी खोज की।

सांपों से भरा धान्यागार

ब्राह्मण दुर्गा दास ने श्रीविग्रह की खोज का वर्णन किया है। एक विप्रदास नाम का सौभाग्यशाली व्यक्ति था जो कि छोटे से गांव गोपालपुर में रहता था। अपने आवास के निकट उसका धान्यागार था परन्तु कोई भी वहाँ सांपों के भय से प्रवेश नहीं करता था। सपेरे भी वहाँ आए परन्तु उनके मन्त्र भी सांपों को बाहर नहीं ला सके। आश्चर्य की बात थी कि मन्त्रों ने सांपों की फुंकार को बिगाड़ दिया था।

एक दिवस बहुत सवेरे श्रीनरोत्तम दास ठाकुर वहाँ गए और विप्र दास उनके चरणकमलों में जा गिरे। उन्होंने विनम्रता से पूछा कि श्रीनरोत्तम दास उनके आवास पर क्यों आए हैं और श्रीनरोत्तम दास ने बताया कि उन्हें धान्यागार में आवश्यक कार्य है। विप्रदास ने श्रीनरोत्तम दास को बलपूर्वक धान्यागार में जाने से मना किया क्योंकि वह सांपों से भरा हुआ था। तथापि श्रीनरोत्तम दास ने आश्वस्त किया कि सांप दूर भाग जाएंगे और उन्होंने ताकत लगाकर द्वार खोल दिया। वहाँ उपस्थित सबके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब वास्तव में सांप धान्यागार से चले गए और श्रीनरोत्तम दास गौरसुन्दर प्रभु और उनके सहचरों का श्रीविग्रह उठाकर बाहर ले आए। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर उनका

श्रीविग्रह वापिस अपने निवास पर ले गए। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर के शिष्य श्रीसन्तोष दत्त ने तब एक मन्दिर और श्रीविग्रह के लिए एक वेदी बनाने की पहल की।

दुर्गा दास ने श्रीनिवास आचार्य को यह भी बताया कि श्रीनरोत्तम दास उत्सुकतापूर्वक उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब श्रीनरोत्तम दास को ज्ञात हुआ कि श्रीनिवास आचार्य निकट ही थे, उन्होंने उसी दिवस पद्मावती नदी को पार करने का निर्णय लिया ताकि वे दूसरे दिवस तेलिया बुधरी आ सकें।

इस समाचार ने श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों के हृदय को अत्यधिक आनन्द से भर दिया। उन्होंने दुर्गा दास को आशीष दिया और अपने पार्षदों से श्रीनरोत्तम दास के उत्कृष्ट गुणों के बारे में चर्चा की। ग्राम वासी यह जानकर अति प्रसन्न थे कि अगले दिवस श्रीनरोत्तम दास ठाकुर का आगमन होगा। वास्तव में उन्होंने अगली प्रातः श्रीरामचन्द्र कविराज के निवास पर जाने की उत्सुकता में रात्रि जागते हुए ही व्यतीत की।

श्रीरामचन्द्र कविराज भक्ति गुणों के सागर थे और जब उन्होंने सुना कि श्रीनरोत्तम दास निकट आ चुके हैं तो उनकी भावनाऐं अनियन्त्रित हो गईं, यद्यपि उन्होंने किसी से यह व्यक्त नहीं किया। श्रीरामचन्द्र ने अपने सभी दायित्व अच्छे से पूर्ण किए परन्तु सम्पूर्ण रात्रि श्रीनरोत्तम दास के बारे में सोचते हुए जागते रहे।

श्रीरामचन्द्र को स्वप्न में दर्शन

प्रभु की इच्छा से श्रीरामचन्द्र कविराज कुछ पल के लिए सो गए। उस समय श्रीगौरचन्द्र उनके स्वप्न में प्रकट हुए। श्रीरामचन्द्र कविराज ने चैतन्य महाप्रभु के सौन्दर्य के दर्शन किए, जिनकी स्वर्णिम आभा विद्युत के समान देदीप्यमान थी और जिनका शीश घुंघराले, रेशमी, काले केशों से ढका था। उनके सुन्दर कण्ठ में एक पुष्प माला लटक रही थी और उनके आकर्षक मुख की तुलना केवल शरद् ऋतु के चन्द्रमा से की जा सकती है। उनके विशाल नेत्र करुणा के कोश थे और उनकी लम्बी भुजाऐं उनके घुटनों तक आ रही थीं। गजराज के समान गर्वीली चाल से चलते हुए भगवान्, श्रीरामचन्द्र कविराज के समक्ष आ खड़े हुए।

श्रीरामचन्द्र कविराज, श्री गौरचन्द्र के इस दृश्य से मन्त्र मुग्ध हो गए और तत्काल वे प्रभु के चरणकमलों में सपाट लेट गए। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीरामचन्द्र को अपनी गोद में उठाया और उनके तन को अपने प्रेम अश्रुओं से भिगो दिया। एक करुणामय मुस्कान से श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, 'मेरी इच्छा से तुम अपनी वास्तविक पहचान नहीं जानते परन्तु तुम मुझे उतने ही प्रिय हो जितना कि नरोत्तम।'

प्रभु ने श्रीरामचन्द्र कविराज को आगे बताया कि वे भक्ति के सिद्धांत को मन में बैठा लें और मानव जाति को पापी और सहन करने वाले जीवन से बचाने के लिए श्रीनरोत्तम दास के साथ जुड़ जाऐं। यह कहने के बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु स्वप्न से अन्तर्धान हो गए और चेतन होने के बाद श्रीरामचन्द्र कविराज इतना रोए कि उनके अश्रु कपोलों से लुढ़क गए।

श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने प्रिय भक्त के विलाप को सहन न कर पाए तो वे एक बार पुनः उन्हें सांत्वना देने उनके स्वप्न में प्रकट हुए।

श्रीचैतन्य महाप्रभु उस रात्रि श्रीनिवास आचार्य के स्वप्न में भी प्रकट हुए और उन्हें श्रीरामचन्द्र कविराज के बारे में सब कुछ बता दिया। कोई भी प्रभु के उद्देश्य को नहं समझ सकता क्योंकि वे मात्र अपने भक्तों के प्रेम से बँधे हैं।

अगले दिवस जब श्रीरामचन्द्र कविराज जागे तो उन्होंने अपने नित्यकर्म पूरे किए और प्रार्थना निवेदन की। तथापि इन कार्यों को करते हुए वे केवल श्रीनरोत्तम दास ठाकुर से अपनी भेंट के बारे में ही सोच रहे थे। उस समय एक सन्देशवाहक वहाँ आया और आचार्य को प्रणाम करने के लिए झुका। उसने बताया कि श्रीनरोत्तम दास पद्मावती नदी को पार कर पड़ोस के गाँव में आ गये हैं।

आचार्य और उनके शिष्य शीघ्रता से श्रीनरोत्तम दास से भेंट करने चले गए। श्रीनरोत्तम दास, आचार्य के चरणकमलों में प्रणाम करने झुके। उन्होंने तत्क्षण श्रीनरोत्तम को उठाया और बलपूर्वक दीर्घकाल तक आलिंगन प्रदान किया। आचार्य ने तब श्रीनरोत्तम दास का परिचय श्रीदास आचार्य और अन्य भक्तों से करवाया। यद्यपि श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीनरोत्तम दास को देखा और उनका हृदय भावों से भर उठा, तथापि वे कुछ नहीं बोले।

श्रीनिवास-नरोत्तम भेंट

एकांत स्थान पर शांत बैठे हुए श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास से खेतुड़ी के कुशलक्षेम के बारे में पूछा। श्रीनरोत्तम दास ने विनम्रता से सूचित किया कि वे आदेशानुसार गौड़-देश चले गऐ थे और स्वयं को श्रीविग्रह की आराधना, वैष्णवजनों की सेवा और संकीर्तन करने में मग्न कर लिया था। वहाँ उन्हें श्रीविग्रह का अनुग्रह प्राप्त हुआ और भगवान् के लिए एक मन्दिर बनाया। उन्हें आशा थी कि फाल्गुन माह की पूर्णिमा के दिवस श्रीनिवास आचार्य मन्दिर में श्रीविग्रहों की स्थापना करेंगे। श्रीनिवास आचार्य का तेलिया भुदरी में आगमन श्रीनरोत्तम दास की अपेक्षा के विपरीत बहुत विलम्ब के बाद हुआ था और उन्हें भय हुआ कि उत्सव के प्रबन्ध के लिए विलम्ब हो गया है।

यद्यपि श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास को आश्वस्त किया कि यह विलम्ब प्रभु की इच्छा से ही हुआ था। तब उन्होंने उन्हें अपने विवाह, श्रीवृन्दावन

यात्रा और अन्य घटनाओं के बारे में बताया। दोनों ने चर्चा करते हुए अधिक समय व्यतीत किया और तब श्रीनरोत्तम दास और अन्य विश्राम करने अपने-अपने निवास को लौट गए।

आयोजन की तैयारी

श्रीनिवास आचार्य स्थापना महोत्सव के आयोजन के कार्य के प्रति इतने उत्सुक हो गए थे कि वे उस रात सोये ही नहीं। उन्हें स्वयं पर आश्चर्य हुआ कि क्या श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद खेतुड़ी आयेंगे अथवा क्या प्रभु उनकी कामना पूर्ण करेंगे। उत्सुकता में श्रीनिवास आचार्य फूट-फूट कर रोने लगे। तब अपने शिष्य के स्नेह से द्रवित, श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनिवास आचार्य के स्वप्न में प्रकट हुए।

प्रभु ने श्रीनिवास आचार्य को सांत्वना दी और उन्हें बताया कि वे अधीर न हों। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को सुझाव दिया कि वे हर जगह यह कहकर आमंत्रण पत्र प्रेषित करें कि जो भक्त प्रभु के विरह को सहन कर रहे हैं वे निश्चित ही आयें और उत्सव में सहभागी बनें। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीनिवास आचार्य को यह भी आश्वस्त किया कि प्रभु के अनुग्रह से उनकी कामना पूर्ण होगी और उत्सव अत्यधिक सफल होगा। इस प्रकार बोलने के पश्चात् श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनिवास आचार्य के स्वप्न से अन्तर्धान हो गए।

श्रीनिवास आचार्य स्वप्न में श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्तर्धान होने से अधीर हो उठे परन्तु उन्होंने अपने भावों पर नियंत्रण किया। अगली प्रातः भक्तजन एकत्र हो गए और श्रीनिवास आचार्य हर जगह निमन्त्रण पत्र प्रेषित करने के आनन्द में मग्न हो गए। उन्होंने छन्दों के रूप में आमन्त्रण पत्र लिखे और उन्हें नवद्वीप और अन्य स्थानों पर भेजने के लिए पन्द्रह लोगों का चयन किया। उन्होंने एक आमन्त्रण पत्र श्यामानन्द प्रभु को ओड़िशा में भेजा।

फाल्गुन पूर्णिमा

शीघ्र ही सब को ज्ञात हो गया कि फाल्गुन पूर्णिमा पर खेतुड़ी में महोत्सव होगा। तेलिया बुधरी, बहादुरपुर और अनेक अन्य स्थानों के निवासी महोत्सव की घोषणा से अति प्रसन्न हो गए थे।

श्रीनिवास आचार्य और भक्तजनों ने स्वयं को सम्पूर्ण दिवस रात संकीर्तन में मग्न कर लिया। श्रीगोकुल, श्रीदेवीदास और श्रीनरोत्तम दास के अन्य विख्यात शिष्यों ने वाद्ययन्त्रों की संगति में अतिसुन्दर कीर्तन गान किया। एक दिवस श्रीनिवास आचार्य की पत्नी ने उनसे व्यक्तिगत बात की। उस वार्तालाप के पश्चात् श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरामचन्द्र कविराज को श्रीनरोत्तम दास ठाकुर का दायित्व सौंप दिया।

श्रीनरोत्तम दास इससे अतिप्रसन्न हो गए और श्रीनिवास आचार्य के आदेश पर श्रीरामचन्द्र कविराज के साथ वे खेतुड़ी के लिए प्रस्थान कर गए। शीघ्र वापिस लौटने की कामना लिए हुए श्रीनरोत्तम दास और उनके दल ने पद्मावती नदी को पार किया।

श्रीरामचन्द्र कविराज के अनुज श्रीगोविन्द ने अपने दीक्षा गुरु श्रीनिवास आचार्य को अपनी निष्कपट सेवाओं से तृप्त किया। जब श्रीनिवास आचार्य ने उनसे श्रीकृष्ण चैतन्य की लीलाओं का वर्णन करने को कहा, श्रीगोविन्द ने अनेक गद्य, कविताऐं और संगीत लिख दिए। उनके लेखन को मान्यता देते हुए श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें कविराज की उपाधि प्रदान की। बाद में श्रीनिवास आचार्य ने उन गीतों को गाया जिनकी रचना श्रीगोविन्द कविराज द्वारा की गई थी।

श्रीश्यामदास

श्रीश्यामदास नाम के एक आदरणीय ब्राह्मण तेलिया बुधरी के निकट बहादुरपुर में रहते थे। उनके अनुज भ्राता वंशीदास चक्रवर्ती का स्नेहमय व्यवहार था। अपने बाल्यकाल से ही वे ज्ञान के लिए उत्सुक रहते थे। उनकी श्रीकृष्ण चैतन्य के प्रति अगाध समर्पण भावना थी और वे सदैव श्रीराधा-कृष्ण की लीलाओं से सम्बन्धित ग्रन्थ का पठन करते रहते थे। उन्होंने दीक्षा ग्रहण नहीं की थी यद्यपि ऐसा करने के प्रति वे उत्सुक थे। जब उन्होंने सुना कि श्रीनिवास आचार्य का तेलिया भुदरी में आगमन हुआ है, वे तत्काल उनसे भेंट करने चले गए। उन्होंने पाया कि श्रीनिवास आचार्य श्रीगोविन्द के निवास पर अपने अनुचरों के मध्य बैठे भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं की चर्चा कर रहे थे।

वंशीदास ने श्रीनिवास आचार्य के सम्मुख भूमि पर दण्डवत् लेटकर नमस्कार किया, वे उन्हें दीर्घकाल तक निहारते रहे और फिर नेत्रों में अश्रु भर अपने निवास पर वापिस आ गए। श्रीनिवास आचार्य के पार्षदों ने श्रीवंशी दास की निष्कपटता को देखा और सोचा कि वे वास्तव में आचार्य के प्रिय शिष्य हैं। यद्यपि वे यह नहीं समझ सके कि केवल मात्र वंशी दास को निहार कर ही श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें सशक्त कर दिया था।

एक निर्जन स्थान पर अकेले बैठे वंशी दास व्यग्रता से अचम्भित हो रहे थे कि क्या उन्हें कभी श्रीनिवास आचार्य की अनुकम्पा प्राप्त होगी। वे सोने में असमर्थ, देर रात्रि तक जागते रहे। अंततः वे गहरी निद्रा में सो गए और श्रीनिवास आचार्य को स्वप्न में देखा। वे श्रीनिवास आचार्य के करुणामय सौन्दर्य से मन्त्र मुग्ध हो गए थे, जो खड़े हुए उन पर मुस्कुरा रहे थे।

वंशीदास

वंशी दास ने तत्क्षण श्रीनिवास आचार्य को अपना दीक्षा गुरु स्वीकार कर लिया और उनके चरणों में गिर गए। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें आलिंगन में लिया और उन्हें बताया कि यद्यपि नरोत्तम दास उन्हें महोत्सव के लिए खेतुड़ी ले जाने के लिए आ चुके हैं, वे उनके साथ नहीं गए क्योंकि वे अगली प्रात: वंशी दास को दीक्षा देने की प्रतीक्षा कर रहे थे। दीक्षा के पश्चात् वे सब मिलकर खेतुड़ी जाएंगे।

यह कहने के पश्चात् श्रीनिवास आचार्य ने अपने चरण वंशी दास के मस्तक से स्पर्श कर दिए, इस प्रकार से उन्होंने उन्हें आशीर्वाद दिया। ऐसा करने के पश्चात् वे अन्तर्धान हो गए। अगले दिवस जब वंशी दास जगे तो उन्होंने स्नान किया और श्रीनिवास आचार्य से भेंट करने गए। उन्होंने आचार्य और उनके पार्षदों को अपने निवास पर आने का निवेदन किया। श्रीनिवास आचार्य ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीवंशी दास को श्रीराधा-कृष्ण मंत्र की दीक्षा प्रदान की।

तत्पश्चात् श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षद खेतुड़ी के लिए प्रस्थान कर गए। श्रीनरोत्तम दास उनके आगमन का समाचार प्राप्त कर अति प्रसन्न थे और श्रीरामचन्द्र कविराज और अन्य भक्तजनों के साथ वे उनकी अगवानी करने गए। श्रीसन्तोष दत्त भी गए ताकि वे स्वयं का श्रीनिवास आचार्य से परिचय करवा सकें।

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीनिवास आचार्य पुन: भेंट करके अति प्रसन्न थे। वे श्रीनरोत्तम दास के निवास पर गए और उन्होंने श्रीनिवास आचार्य के पार्षदों के ठहरने की व्यवस्था की और सन्तोष दत्त ने अनेक लोगों को गृह कार्य करने की जिम्मेदारी सौंप दी।

पांच विग्रह

श्रीनिवास आचार्य सर्वप्रथम श्रीचैतन्य महाप्रभु और भगवान् श्रीकृष्ण के पांच श्रीविग्रहों के दर्शन करने गए। वे उनके दर्शन पाकर मन्त्र मुग्ध हो गए। श्रीनरोत्तम दास अधीर हो रहे थे क्योंकि समय कम था और श्रीश्यामानन्द प्रभु का ओड़िशा से आगमन नहीं हुआ था। अंतत: उन्हें श्रीश्यामानन्द प्रभु के आगमन का समाचार प्राप्त हुआ और वे शीघ्रता से श्रीनिवास प्रभु को सूचना देने गए और पाया कि श्रीश्यामानन्द प्रभु वहाँ पहले ही पहुँच गए हैं। वे सब पुन: भेंट कर अति भाव-विभोर हो गए।

ईश्वरी जाह्नवा भी

श्रीमती जाह्नवा देवी जो खरदह में रहती थीं उन्होंने खेतुड़ी के आयोजन में आने का निर्णय किया। उस समय उन्हें श्रीचैतन्य महाप्रभु से एक दिव्य समाचार

प्राप्त हुआ जिसमें उन्होंने उन्हें यथाशीघ्र खेतुड़ी जाने का आदेश दिया क्योंकि श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और अन्य भक्तगण उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

प्रभु ने उन्हें यह भी बताया कि अपने शिष्य श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास की कामना के कारण वे स्वयं और उनके अंतरंग पार्षद उत्सव के दौरान भजन गान, संकीर्तन और नृत्य में प्रकट होंगे।

श्रीमती जाह्नवा देवी अपने प्रभु के प्रकट होने और निर्देश देने के कारण अति विभोर हो उठीं और वे तत्काल खेतुड़ी के लिए प्रस्थान कर गईं।

उल्लास बढ़ गया

खरदह के लोगों ने जाह्नवा-माता की यात्रा के बारे में सुना और उनके दर्शन करने आ गए। उन्होंने योग्य व्यक्तियों को जिम्मेदारी सौंप दी और श्रीमती वसुधा-देवी को कुछ महत्वपूर्ण सूचनाऐं प्रदान कीं। प्रभु के अति महान भक्त गंगा और वीरभद्र को उन्हें शांत करना पड़ा, जब वे अपने अनुचरों के साथ खरदह के लिए प्रस्थान कर गए। उनके अनुचरों में श्रीकृष्णदास श्रीसरखेल, माधव आचार्य, श्रीरघुपति वैद्य उपाध्याय, श्री मीनकेतन रामदास, श्रीमनोहर, श्रीमुरारी चैतन्य, श्रीज्ञानदास, श्रीमहीधर, श्री शंकर, श्री कमलाकर पिप्पलई, श्रीनृसिंह चैतन्य, श्रीजीव पंडित कनाई, श्रीगौरांग, श्रीनकरी, श्रीकृष्णदास, श्रीदामोदर, श्रीपरमेश्वरी, श्रीबलराम, श्रीमुकुन्द, श्रीवृन्दावन दास और अन्य। श्रीमती जाह्नवा-देवी अपने साथ अनेक सेविकाऐं भी ले गईं।

श्रीमती जाह्नवा देवी कुछ दूरी तक चलीं फिर उन्होंने लोगों द्वारा लाई पालकी स्वीकार कर ली। जैसे जैसे वे विभिन्न गांवों से निकलतीं, लोग उनसे भेंट करने आते। हलिशर के नयन वक्र उनके दल में जुड़ गए, ऐसे ही भगवान् आचार्य के अपंग भ्राता श्री रघुनन्दन आचार्य भी जुड़ गए। श्रीनित्यानन्द प्रभु की सेविका वणिका सहित अनेक भक्त जुड़ते चले गए।

जब वे अम्बिका पहुँचीं तो लोग अपार जन समुदाय के रूप में अपने-अपने घरों से निकल कर उनसे भेंट करने पहुँचे। वंशी दास के पुत्र श्रीचैतन्य दास भी श्रीहृदय चैतन्य के साथ दल में जुड़ गये।

जब वे श्रीनवद्वीप पहुँचे तो, यात्रा करने वाले दल का प्रत्येक यात्री पावन स्थान पर जाने की आशा संजोये था यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु की यादों ने उन्हें उदास कर दिया। जैसे ही उन्होंने पावन धाम में प्रवेश किया, कुछ लोग जोर-जोर से रोने लगे और कुछ अन्य अचेत होकर भूमि पर जा गिरे।

श्रीवास पंडित के दो भ्राता श्रीपति और श्रीनिधि ने नवद्वीप में उनका स्वागत किया, जहाँ पहले उन्होंने गंगा जी में स्नान किया और बाद में श्रीवास पंडित के निवास पर गए।

अच्युत और गोपाल

जब श्रीमती जाह्नवा-देवी आश्चर्यचकित हो ही रहीं थीं कि शान्तिपुर से उनसे भेंट करने कोई नहीं आया, श्रीअद्वैत आचार्य के दो पुत्र अच्युतानन्द और गोपाल, वैष्णवजनों के विशाल दल के साथ उनसे भेंट करने आए। उस दल में श्रीकन्नु पंडित, श्रीनारायण दास, श्रीविष्णुदास आचार्य, श्रीकामदेव, श्रीजनार्दन, श्रीवनमाली, श्रीपुरुषोत्तम और अन्य थे। वे सभी जाह्नवा-देवी से भेंट करके अति प्रसन्न थे और वे उनके आतिथ्य से इतनी तृप्त थीं कि उन्होंने और दो-तीन दिवस नवद्वीप में रहने का निर्णय किया।

श्रीपति, श्रीनिधि और कुछ अन्यों ने जाह्नवा-देवी के साथ खेतुड़ी में रहने का निश्चय किया। प्रातः यात्रा दल ने कंटकनगर के लिए यात्रा प्रारम्भ की और मार्ग में अकाइहाट के कृष्णदास दल में जुड़ गए और यदुनन्दन व अन्य भक्तों ने उत्साहपूर्वक उनका स्वागत किया।

इसी समय श्रीखण्ड के रघुनन्दन और उनके पार्षदों की दल से भेंट हुई, क्योंकि वे भी खेतुड़ी जाने वाले मार्ग में थे। उनके दल के असंख्य लोगों में श्रीशिवानन्द, श्रीवाणीनाथ, श्रीवल्लभ, श्रीचैतन्यदास, श्रीहरि आचार्य, श्रीभागवत आचार्य, श्रीनर्तक गोपाल, श्रीजिता मिश्र, श्रीरघु मिश्र श्रीकाशिनाथ मिश्र, श्रीनयन मिश्र, श्रीकाष्ठकाटा जगन्नाथ, श्रीउद्धव, श्रीपुष्प गोपाल, श्रीरघुनाथ, श्रीलक्ष्मीनाथ पंडित समेत अन्य बहुत से लोग थे।

काटोया=कंटकनगर

गांव के निवासियों को वैष्णवजनों से भेंट करने में अति आनन्द आया। जब भक्तजन उस स्थान पर गए जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने संन्यासी जीवन को अपनाया था, तो वे दुखी होकर अश्रु बहाने लगे। यद्यपि प्रभु की इच्छा से वे कुछ देर बाद अपने भावों पर नियंत्रण पा गए।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने अनेक स्वादिष्ट पकवान बनाए और सर्वप्रथम श्रीगौरचन्द्र प्रभु को निवेदित किए और बाद में स्नेहपूर्वक भक्तजनों को परोसा। श्रीयदुनन्दन और उनके अनुचर तब तक भोजन नहीं पाते थे जब तक श्रीमती जाह्नवा देवी प्रसाद न पा ले। भोजन के बाद सभी भक्त गौरांग मन्दिर के प्रांगण में हरिनाम संकीर्तन करने में मग्न हो जाते।

तत्पश्चात् श्री यदुनन्दन और उनके अनुचरों ने खेतुड़ी की यात्रा की तैयारी की। जिस गांव में वे जाते, लोग मार्ग में भक्तजनों को महोत्सव में जाते देखकर अति तृप्त हो जाते थे। वे जिस भी गांव में जाते, महान वैष्णवों की उपस्थिति के कारण वह गांव पवित्र स्थान बन जाता और वहाँ उपस्थित लोग अति सौभाग्यशाली मानते।

राजा संतोषदत्त

उस दिवस उन्होंने तेलिया बुधरी में विश्राम किया और गांव वासियों की प्रसन्नता की कोई सीमा नहीं थी। जब उन्होंने खेतुड़ी के लिए तेलिया बुधरी से प्रस्थान किया तब गांव वासी पद्मावती नदी के तट तक उनके साथ आए। राजा श्रीसंतोष दत्त ने पार ले जाने के लिए एक विशाल नौका की व्यवस्था की।

वैष्णवजनों के आगमन से खेतुड़ी दिव्य प्रसन्नता का केन्द्र बिन्दु बन गया। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने उस दल का नेतृत्व किया जो आदरणीय अतिथियों की अगुवाई करने आया था और गांव के सभी लोग उन महान भक्तों के चरणों में गिर गए। ऐसा भव्य सत्कार देख एक व्यक्ति ने टिप्पणी की कि पूर्व में गांव वाले प्रायः नास्तिक थे परन्तु श्रीनरोत्तम दास के सान्निध्य के कारण वे सब धार्मिक व्यक्ति बन गए हैं।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने प्रत्येक अतिथि के लिए रहने की व्यवस्था की। वैष्णवजन इतने सारे आवास, खाद्य पदार्थों का प्रचुर भण्डार और उत्सव की जिम्मेदारी उठाने वाले बहुत सारे सेवकों को देखकर आश्चर्यचकित थे। खेतुड़ी के लोग महान भक्तों का सान्निध्य पाकर अपना निजी दुख भूल गए और वे सब महोत्सव के आरम्भ होने की प्रतीक्षा करने लगे। वे अपने आप को परम सौभाग्यशाली मानने लगे क्योंकि गाँव को महान उत्कृष्ट भक्तों के चरणकमलों की रज का आशीष मिल गया था। जिस प्रकार से आवासों को सुशोभित किया गया था और श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीविग्रह की वेदी की शोभा थी उससे लोग अति प्रभावित थे यद्यपि प्रभु को अभी उस पर पधराया नहीं गया था।

देवता भी पधारेंगे

अगले दिवस फाल्गुन पूर्णिमा थी और श्री कृष्ण के छः श्रीविग्रहों को वेदी पर पधराया जाना था। कल महान भक्त एकत्र होंगे यहाँ तक कि देवतागण भी महोत्सव को देखने पधारेंगे। हर कोई उत्सुकता से संकीर्तन होने की प्रतीक्षा में था।

किसी ने आदरपूर्वक **राजा सन्तोष दत्त** के सौभाग्य की प्रशंसा की, जिन्होंने उत्सव के प्रबन्धन में हर एक वस्तु की विशेष देख-रेख की और जिन्होंने उस प्रांगण को सीधे खड़े होने वाले सुन्दर तम्बू और सब जगह केले के वृक्ष रोपित कर सजाया जहाँ संकीर्तन होना था। एक अन्य व्यक्ति ने टिप्पणी की कि अपने जीवनकाल में उसने कभी इतने सारे लोगों को पुष्प माला और चंदन लेप बनाते नहीं देखा था। किसी अन्य व्यक्ति ने कहा कि उसने कभी इतने विविध प्रकार के वाद्य यंत्र नही देखे थे और एक स्थान पर इतनी विशाल संख्या में वादक और नर्तक नहीं देखे थे। एक व्यक्ति ने इच्छा की कि ये रात्रि शीघ्रता

से व्यतीत हो जाए ताकि वे अगले दिवस महान भक्तों की गतिविधियों का अवलोकन कर सकें और घर लौटने की चिंता से रहित हो पूरा दिवस उनके साथ व्यतीत कर सकें। तब वे केवल भोजन पाने मात्र के लिए घर जाकर स्वयं को दंडित करेंगे।

उत्सव के लिए उत्साह में वाद्ययन्त्रों के स्वर में वृद्धि हो रही थी जो यह संकेत कर रही थी कि प्रातः होने में अधिक विलम्ब नहीं है। बहुत सवेरे हर कोई सुन्दर श्रीविग्रह के दर्शन करने मन्दिर गया। भक्तजन नए वस्त्र धारण कर और तिलक से सुशोभित हो श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में एकत्र हो गए। वे अपने नियत स्थान पर बैठ गए और श्रीमती जाह्नवा-देवी ने अलग जगह पर अपना स्थान ग्रहण किया।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास सुन्दर शोभित स्थान से अति प्रसन्न थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों ने श्रीनिवास आचार्य को श्रीविग्रह के महा अभिषेक उत्सव को आरम्भ करने की अनुमति प्रदान की। श्रीनिवास आचार्य ने विधि को आरम्भ करने से पूर्व महान भक्तों के सम्मुख प्रणाम किया और तत्पश्चात सावधानी पूर्वक छः श्रीविग्रहों को एक-एक कर नियत वेदियों पर स्थापित किया। प्रभु की इच्छा से श्रीनिवास आचार्य ने श्रीविग्रहों के नाम उच्चारण किए- श्रीगौरांग, श्रीवल्लभी कान्त, श्रीव्रज-मोहन, श्रीकृष्ण, श्रीराधा-रमण और श्रीराधा-कान्त। छः श्रीविग्रहों के सौन्दर्य को देख उत्कृष्ट भक्त जन अश्रु बहाने लगे और देवतागण आकाश से पुष्प वर्षा करने लगे। श्रीहरि का पावन नाम गूँजने लगा और वादकों ने वाद्य यन्त्र बजाने आरम्भ कर दिये। जब श्रीनिवास आचार्य श्रीविग्रहों को नवीन चमकीले वस्त्र धारण करवा रहे थे तब ब्राह्मणों ने वैदिक मन्त्रों तथा भजनों का उच्चारण आरम्भ कर दिया। उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु को चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन की।

छः विग्रह स्थापित

सभी आवश्यक अनुष्ठान पूर्ण करके श्रीनिवास आचार्य ने श्रीविग्रह के सम्मुख दीप-दान की व्यवस्था की। भक्तों ने श्रीहरि का पावन नाम उच्चारण किया और श्रीविग्रह के सम्मुख दण्डवत् प्रणाम किया।

श्रीनरोत्तम दास ने एक पद रचा था जिसके माध्यम से उन्होंने श्रीविग्रह के सम्मुख 1. श्रीगौरांग, 2. श्रीवल्लभी कान्त, 3. श्रीकृष्ण, 4. श्रीव्रज-मोहन, 5. श्रीराधा-रमण और 6. श्रीराधा-कान्त नाम को गाकर प्रणाम किया।

हालांकि प्रांगण में स्थान कम था फिर भी सहस्रों लोग वहाँ दीप-दान देखने के लिए एकत्र हो गए। उस निवेदन के बाद श्रीनिवास आचार्य ने विभिन्न पात्रों में अलग-अलग रख अनेक स्वादिष्ट भोज्य पदार्थ श्रीविग्रहों को निवेदन किए। तब उन्होंने प्रभु को हाथ और मुख मार्जन के लिए जल और ताम्बूल

निवेदन किया। तत्पश्चात उन्होंने श्रीविग्रहों को पुष्प माला और चन्दन लेप निवेदन किया और चँवर के माध्यम से पंखा किया।

जब श्रीनिवास आचार्य ने मन्दिर के पट खोले, प्रभु के तन की सुगन्ध पूरे प्रांगण में फैल गई। हर कोई प्रभु के श्रीअंग की आभा देखकर अभिभूत हो गया। यहाँ तक कि श्रीनिवास आचार्य भी श्रीविग्रहों के सौन्दर्य को निहारते हुए अपने भावों पर नियंत्रण न रख सके और वे प्रणाम करने भूमि पर लेट गए। वे विनम्रता से श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के चरणकमलों में प्रणाम करने झुके और आनन्द के अश्रुओं से उन्हें भिगोकर आलिंगन प्रदान किया। तब वे जाह्नवा-देवी के चरणों के सम्मुख प्रणाम स्वरूप दण्डवत् लेट गए जिन्होंने स्नेहवश उन्हें निवेदित पुष्प-माला और चन्दन लेप एकत्रित भक्तजनों में वितरण करने का आदेश दिया।

श्रीनिवास आचार्य ने प्रत्येक पुष्प-माला एक अलग थाल में रखी और श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रत्येक पार्षद को निवेदित की। तब जाह्नवा-देवी ने श्रीनृसिंह चैतन्य को श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और उनके अनुचरों को पुष्प-माला देने का आदेश दिया। जाह्नवा माता पुष्प-माला और चन्दन लेप का स्पर्श कर इतनी अभिभूत हो गईं कि वे अति भावुक हो गईं।

श्रीमती जाह्नवा ईश्वरी ने श्रीनरोत्तम दास को आध्यात्मिक साहस में भिगोने वाली दृष्टि से एकटक निहारा जो कि साधारण व्यक्ति की तुलना से दूर है।

श्रीअद्वैत आचार्य के पुत्र श्रीअच्युतानन्द ने श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को आशीर्वाद दिया तब भक्तों ने संकीर्तन आरम्भ करने की अपनी स्वीकृति प्रदान की। श्रीनरोत्तम दास के सभी पार्षद गायन, नृत्य और वाद्ययन्त्र वादन में अति निपुण थे। देवीदास जो कि श्रीनरोत्तम दास के बाईं ओर बैठे थे, उन्होंने संगीतमय संगत आरम्भ की और वाद्ययंत्र भी बजने लगे, ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों प्रत्येक वाद्ययंत्र मधुर स्वर लहरी में बोल रहा हो।

संकीर्तन आरम्भ

श्रीनरोत्तम दास ने संकीर्तन आरम्भ किया और श्रीवल्लभ दास और अन्य भक्तों ने प्रत्येक पंक्ति को दोहराया। श्रीगौरांग दास और अन्य भक्तों ने वाद्य यन्त्रों का वादन किया और मधुर स्वरों में गायन किया। श्रीगोकुलानन्द ने गाया और उनकी मधुर वाणी ने सबको प्रभावित किया। दर्शक गण संगीतकारों की मधुर प्रस्तुति से झूम उठे।

संगीतकारों से घिरे श्रीनरोत्तम दास ठाकुर ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानों असंख्य तारों के बीच चन्द्रमा सुशोभित हो। कीर्तन के मध्य श्री नरोत्तम दास ठाकुर और अन्य गायक स्वयं को भगवान् के अनुग्रह में समर्पित कर श्रीचैतन्य महाप्रभु, नित्यानन्द प्रभु और अद्वैत आचार्य के विचारों में मग्न कर लेते थे।

उनकी आकर्षक प्रस्तुति, राग और रागिनी जो उन्होंने गाईं वह जीवंत प्रतीत हो रही थी। उनके भजनों के भावों ने वाद्य यन्त्रों की ताल में, संगीत के स्वरों में और साथ ही वैष्णवजनों के आनन्द में वृद्धि कर दी।

मृदंग पूजन

खण्डवासी श्रीरघुनन्दन ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के निजी मृदंग और करताल को चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन की और तब श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और अन्य गायकों का भाव के प्रवाह में आलिंगन कर लिया। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास और अन्य भक्तों को पुष्प माला पहनाईं और प्रति उत्तर में वे सब प्रणाम स्वरूप झुक गए।

तत्पश्चात् श्रीनरोत्तम दास ने संकीर्तन की शैली में बदलाव किया जो श्रीचैतन्य महाप्रभु के उस मनोभाव का प्रदर्शन कर रहा था जैसे वे श्रीराधिका के भाव में मग्न हो गए हों। कीर्तन के समय गायक भावुक हो गए, जिसने दर्शकों के आनन्दातिरेक में वृद्धि कर दी। श्रीजाह्नवा ईश्वरी ने जब श्रीगौरचन्द्र के आध्यात्मिक गुणों का वर्णन करने वाले भजन को सुना तो रो पड़ीं। श्रीअच्युतानन्द, श्रीपति, श्रीनिधि और अन्य भक्तों ने अपने भावों पर नियंत्रण खो दिया और आनन्दातिरेक में कांपने लगे।

गान प्रारंभ

लोग श्रीनरोत्तम दास के कीर्तन गायन की विविध प्रकार से चर्चा करने लगे। एक व्यक्ति ने श्रीनरोत्तम दास की अत्यधिक प्रशंसा करते हुए कहा कि वे हर भजन का आन्तरिक भाव व्यक्त कर देते हैं। एक अन्य व्यक्ति ने उनकी समस्त कुशल प्रस्तुतियों की प्रशंसा की। किसी ने कहा कि श्रीनरोत्तम दास प्रभु को कीर्तन में आने के लिए रिझाने की आशा से, श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा श्रीस्वरूप दामोदर के निवास पर नियुक्त कीर्तन शैली की नकल करने का प्रयास कर रहे थे। एक अन्य व्यक्ति ने सहमत होते हुए कहा कि निश्चित ही श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने प्रिय पार्षदों के संग कीर्तन का आनन्द ले रहे हैं। एक भक्त ने संकीर्तन में श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों के स्वयं प्रकट दर्शन करने की इच्छा व्यक्त की। दूसरों के विचारों की परवाह किए बगैर हर किसी ने सुमधुर संगीतमय संकीर्तन की यह कहकर प्रशंसा की कि गन्धर्व और किन्नर भी उनके गायन पर लज्जित होंगे।

कीर्तन गायन के दौरान देवताओं ने गायकों पर पुष्प बरसाए। श्रीनारद मुनि और अन्य महान संत, तपस्वी छद्म वेश में कीर्तन में सहभागिता करने आए। यहाँ तक कि पशु, पक्षी, सर्प आदि अन्य जीव भजनों से झूम उठे। जैसे-जैसे

संकीर्तन के प्रवाह में वृद्धि होने लगी, संकीर्तन मण्डप में बैठे दर्शक अपनी वास्तविकता को भूल गए और अश्रुओं में नहा गए।

श्रीगौर सुन्दर प्रकट हो गये

संकीर्तन को श्रवण करते हुए श्रीगौरसुन्दर प्रभु ने स्वयं को इस स्थान पर स्पष्ट रूप से प्रत्यक्ष करने का निर्णय किया। संकीर्तन मण्डप के भीतर श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनित्यानन्द, श्रीअद्वैत आचार्य और प्रभु के पार्षद अचानक मेघ में विद्युत की भांति प्रकट हो गए। अपनी उपस्थिति से ब्रह्माण्ड को मन्त्र मुग्ध करते हुए वे संकीर्तन के आभूषण हो गए। श्रीचैतन्य महाप्रभु की संकीर्तन में सहभागिता की यह लीला भगवान् ब्रह्मा और अन्य देवताओं की समझ से परे थी। भक्तजन, इन दिव्य प्राणियों के सुन्दर वस्त्रों और सुशोभित भावों से मन्त्र मुग्ध हो गए। संकीर्तन के मध्य वे वाद्य यन्त्रों की बढ़ती ताल के साथ भावमय नृत्य करने लगे।

उस संकीर्तन में श्रीचैतन्य महाप्रभु का अवर्णनीय नृत्य ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो सम्पूर्ण विश्व में उल्लसित प्रेम की वर्षा हो रही हो। श्रीनित्यानन्द प्रभु के नृत्य ने विश्व में सिहरन उत्पन्न कर दी जबकि श्रीअद्वैत आचार्य उद्दाम नृत्य कर रहे थे और वे उत्साह में गर्जन कर रहे थे। गदाधर पंडित श्रीनिवास आचार्य के साथ प्रसन्नतापूर्वक नृत्य कर रहे थे। श्रीनिवास पंडित, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीस्वरूप दामोदर गोस्वामी, श्रीगदाधर दास, श्रीरामानन्द राय, श्रीवासुदेव दत्त, श्रीसर्वभौम भट्टाचार्य और श्रीविद्या वाचस्पति के परम आनन्दित नृत्य ने लोगों को उनके दुख और कष्टों से ऊपर उठा दिया।

श्रीअच्युतानन्द नेत्रों से प्रेम अश्रु बहाते हुए नृत्य कर रहे थे जबकि श्रीमुकुन्द दत्त, श्रीनरहरि सरकार ठाकुर, श्रीरघुनन्दन, श्रीगौरीदास पंडित, श्रीपति आचार्य, श्रीनिधि, श्रीगोविन्द, श्रीमाधव घोष और श्रीबासु घोष के नृत्य ने सम्पूर्ण विश्व को मन्त्र मुग्ध कर दिया। सैंकड़ों-सहस्रों असंख्य लोगों ने श्रीमुकुन्द दत्त, श्री आचार्य पुरन्दर, श्रीवासुदेव दत्त, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी, श्रीमान पंडित यदुनन्दन, श्री मुकुन्द दत्त, श्री मधुसूदन, श्रीनाथ, महेश, श्रीधर, शंकर, जगदीश, श्री यदुनन्दन, काशीश्वर, श्री रघुनाथ भट्ट गोस्वामी, रूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी, श्री नकुल ब्रह्मचारी, श्रीधनंजय, श्रीविप्र वाणीनाथ, श्रीशिखि माहिती, श्रीकनाई, श्रीविजय, श्रीसूर्यदास, श्रीनृसिंह, श्रीहृदय चैतन्य, श्रीश्यामानन्द प्रभु, श्रीनिवास आचार्य, श्री नरोत्तम दास ठाकुर और असंख्य अन्य लोगों के साथ संकीर्तन में सहभागिता की।

देवता एवं गन्धर्व भी

यहाँ तक कि देवताओं और गन्धर्वों ने इस महान संकीर्तन में नृत्य किया। श्रीगौरचन्द्र प्रभु अपने भक्तों से प्रेम करते हैं और इस कारण उन्होंने संकीर्तन में उनके सम्मुख प्रत्यक्ष प्रकट होकर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास की कामना पूर्ण की। जब प्रभु ने उन्हें आलिंगन प्रदान किया तो उन्हें कुछ ऐसी गोपनीय बातें बतायीं कि अन्य कोई न सुन सके।

तत्पश्चात् श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षद अचानक अपने भक्तों को अति निराशा के भाव में छोड़कर अन्तर्धान हो गए। उनके करुणामय विलाप ने उस दृश्य के साक्षी सभी भक्तों का हृदय विदीर्ण कर दिया।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन में अचानक प्रकट होने और अन्तर्धान होने पर लोग अपने वास्तविक जीवन के दुखों में अटक गए और अत्यधिक निराशा में दयनीय ढंग से विलाप करने लगे।

अन्तर्धान हो गये

एक व्यक्ति श्रीचैतन्य महाप्रभु के लिए रोने लगा जबकि एक अन्य व्यक्ति श्रीअद्वैत प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु को ढूँढने के लिए चारों तरफ देखने लगा। कोई व्यक्ति श्रीगदाधर पंडित की झलक पाने की प्रतीक्षा करने लगा जबकि कोई अन्य श्रीहरिदास ठाकुर और श्रीवक्रेश्वर पंडित के बारे में पूछने लगा। एक व्यक्ति श्रीनिवास आचार्य और श्रीमुरारी गुप्त को पुकारने लगा जबकि अन्य कोई श्रीमुकुन्द दत्त और श्रीनरहरि सरकार के बारे में पूछने लगा। एक भक्त श्रीगौरीदास पंडित और श्रीगदाधर दास के दर्शन करना चाहता था जबकि अन्य कोई श्रीस्वरूप दामोदर को ढूंढ रहा था।

अंततः हर किसी ने भूमि पर लोटते हुए और उच्चस्वर में रोते हुए भक्तों के पुनः मिलने की आशा त्याग दी क्योंकि वे समझ गए थे कि वे पुनः कभी श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों के दर्शन नहीं कर पाएंगे। इतनी प्रचुर मात्रा में अश्रु बह निकले कि भूमि पर दल-दल हो गया। यहाँ तक कि नास्तिक जो संकीर्तन में केवल आमोद-प्रमोद के लिए आए थे वे भी रोने लगे। अपने हाथ ऊपर उठाकर वे श्रीचैतन्य महाप्रभु से कष्टों और पापों से बचाने की प्रार्थना करने लगे।

जब श्रीपति, श्रीनिवास आचार्य और अन्यों को अपनी बाह्य चेतना का आभास हुआ तब उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि वास्तव में उन्हें प्रभु के सान्निध्य का आनन्द प्राप्त हुआ है। दर्शकों में भी लोग उस दृश्य से स्तंभित थे। श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने उन्हें समझाया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु की एक अन्य लीला के साक्षी बन चुके थे और यह भी बताया कि प्रभु की लीलाऐं सदैव साधारण भौतिकवादी व्यक्तियों की समझ से परे होती हैं।

श्री जाह्नवा के आदेश से होली उत्सव

श्रीमती जाह्नवा देवी ने यह कहकर इसकी पुष्टि की कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने संकीर्तन के दौरान प्रकट होकर अपने प्रिय भक्तों की विशेषकर श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की कामना पूर्ण की है। इस उपस्थिति से श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अनेक नास्तिकों को पाप युक्त जीवन और भविष्य के शाप से मुक्ति प्रदान की है और मानव जाति को उनके दुखों के सागर से बाहर निकाला है।

जाह्नवा-देवी ने तब श्रीनिवास आचार्य को रंग डालने के उत्सव को जो कि होली के नाम से विख्यात है आरम्भ करने का आदेश दिया। श्रीनिवास आचार्य तत्क्षण विभिन्न रंगों के गुलाल लाए, उन्हें विभिन्न पात्रों में भरा और उन्हें इत्र के साथ मिला दिया। जाह्नवा-माता के निवेदन पर श्रीनिवास आचार्य और श्री नरोत्तम दास होली का आयोजन आरम्भ करने की अनुमति लेने के लिए सर्वप्रथम श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के निकट गए। उनसे अनुमति प्राप्त कर श्रीनिवास आचार्य ने सर्वप्रथम अलग पात्रों में पराग के पुष्पों के रंग और अन्य रंगों को पात्रों में डाला और दोनों तरह के रंगों को जाह्नवा-देवी को निवेदन किया।

जाह्नवा-देवी ने वे पात्र उठाए और श्रीचैतन्य महाप्रभु के श्रीविग्रह के चरणों में निवेदन किया। तत्पश्चात सभी भक्तजनों ने उत्साहपूर्वक होली पर्व का आनन्द मनाया। उनमें से कुछ ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के तन पर रंग लगा दिया और उनके उत्कृष्ट सौन्दर्य से अपनी आंखें न हटा सके। उन्होंने श्री वल्लभी कान्त, श्रीव्रज मोहन, श्रीराधा-कृष्ण, श्रीराधा-कान्त और श्रीराधा-रमण को रंग निवेदित किया और श्रीविग्रहों के उत्कृष्ट सौन्दर्य से अभिभूत हो उठे।

भक्त गणों ने एक दूसरे को रंगों में पूर्ण रूप से तब तक लिप्त किए रखा जब तक कि उन सबका तन चमकदार और रंगीन न हो जाए जिससे वैष्णव जन भी अति सुन्दर लग रहे थे। उनके होली खेलते समय कोई श्रीराधा और श्रीकृष्ण के रंग डालने के समय की लीला का गान कर रहा था। श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से रंग डालने का उत्सव एक आनन्ददायक त्यौहार बन गया जिसमें देवतागण भी, भक्तों के साथ मिल गए ताकि वे भी इसका आनन्द ले सकें।

सायंकाल के समय उत्सव समाप्त हो गया और भक्तजनों ने श्रीविग्रह के सम्मुख दीप दान किया और एक बार पुनः संकीर्तन का आयोजन किया। तत्पश्चात् महान वैष्णव जनों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के मन्दिर में आसन ग्रहण किया और श्रीनिवास आचार्य से श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्राकट्य दिवस के उपलक्ष्य में आयोजन आरम्भ करने का निवेदन किया। श्रीनिवास आचार्य उनके सम्मुख प्रणाम स्वरूप झुके और मन्दिर में सहर्ष प्रवेश किया, जहाँ पुजारी ने उत्साहपूर्वक उत्सव के लिये सामग्री एकत्र कर रखी थी।

अलग-अलग थालों में पुजारी ने अनेकों सामान रखे हुए थे और उन्हें श्रीनिवास आचार्य को दिया। श्रीनिवास आचार्य ने सावधानीपूर्वक श्रीगौरांग के वस्त्र उतारे और प्रभु के तन को श्वेत वस्त्र से ढक कर उन्हें एक अन्य वेदी पर पधराया। श्रीकृष्ण के प्राकट्य दिवस को मनाने की कुछ नियत प्रक्रियाऐं है और वही समान प्रक्रियाऐं ही श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्राकट्य के लिए की गईं क्योंकि श्रीगौरांग प्रभु और श्रीकृष्ण दो रूपों में प्रकट हुए एक ही सर्वोच्च शक्ति हैं।

उत्सव के प्रारम्भ करने पर ब्राह्मणों ने वैदिक मन्त्रों का उच्चारण किया और पारम्परिक पठन करने वालों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरित्र का गान किया। विभिन्न प्रान्तों के गायकों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की नदिया लीलाओं का वर्णन करते हुए भजन गाए। वादकों और नर्तकों ने गीतों के साथ नृत्य किया। जिस किसी ने भी इस समारोह को देखा वह निश्चित ही सौभाग्यशाली है।

कुछ लोगों ने कहा फाल्गुन पूर्णिमा इतनी शुभ है कि जो कोई भी इस पावन दिवस को मनाता है उसे निश्चित ही श्रीगौरांग प्रभु का अनुग्रह प्राप्त होता है। कुछ अन्य व्यक्तियों ने आश्चर्य से यह स्वीकार किया कि खेतुड़ी प्रभावशाली ढंग से चन्द्रमा की किरणों से ज्योतिर्मय था। किसी ने कहा कि चन्द्रमा ने स्वयं छद्म रूप से उपस्थित होकर इस विशेष उत्सव का आनन्द लिया। फिर भी कुछ अन्य भक्तों का मानना था कि श्री चैतन्य महाप्रभु के पार्षद चन्द्रमा के समान प्रतिभाशाली थे।

यद्यपि नियत प्रक्रियाएं सम्पूर्ण हो चुकी थीं, महान वैष्णवजनों ने संकीर्तन जारी रखा और इस प्रकार सम्पूर्ण रात्रि व्यतीत की। अंत में उनका कीर्तन समाप्त हुआ और वे श्रीचैतन्य की मंगला आरती में उपस्थित हुए। बाद में भक्तजनों ने अपने आवास पर अपने नित्य-कर्म जैसे कि स्नान और प्रार्थना पठन आदि पूर्ण किए।

मंगला आरति

श्रीमती जाह्नवा-देवी ने भी अपना स्नान और प्रातःकालीन प्रार्थना पूर्ण की। तब पूर्णतः तृप्ति का अनुभव करके उन्होंने उत्साहपूर्वक विविध प्रकार के व्यंजन पकाए और हर सामग्री को श्रीगौरांग को, श्रीवल्लभी कान्त और अन्य श्रीविग्रहों को निवेदित किया। श्रीनिवास आचार्य ने प्रभु के पार्षदों को आरती में उपस्थित होने के लिए आमन्त्रित किया और सभी भक्त श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण में एकत्र हो गए।

हर कोई प्रभु के सौन्दर्य, उनकी आकर्षक मुद्रा, उनके मस्तक पर तिलक, भुजाऐं और वक्षस्थल, और उनके नवीन सुन्दर वस्त्रों से मन्त्र-मुग्ध हो गया। आरती के पश्चात् पुजारी ने श्रीविग्रह से उतारी गई तुलसी माला श्रीचैतन्य

महाप्रभु के प्रत्येक पार्षद को दी। तब पुजारी ने श्रीविग्रहों को विश्राम करवाया और उन्हें चंवर से पंखा किया। जब प्रभु विश्राम कर रहे थे, पुजारी मन्दिर के बाहर आ गए और पट बन्द कर दिए। भक्तजनों ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रति प्रणाम निवेदन किया जबकि श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास ने प्रभु के पार्षदों के सम्मुख प्रणाम निवेदन किया।

श्रीमती जाह्नवा-देवी ने श्रीमाधव को निर्देश दिया कि वे प्रभु के पार्षदों को निमन्त्रित करें कि वे स्थान ग्रहण करके प्रसाद पाएँ। श्रीअच्युत, श्रीपति और अन्य भक्तों ने माधव के विनम्र निवेदन को स्वीकार किया और जाह्नवा-देवी ने स्वयं अपने हाथों से उन्हें महाप्रसाद वितरित किया। हर किसी ने जाह्नवा-देवी द्वारा पकाई सामग्री की सराहना की और उनका अत्यंत प्रसन्नता से आनन्द लिया। हाथ और मुख मार्जन कर भक्तजन अपने अपने कक्ष में विश्राम करने चले गए।

तब जाह्नवा-माता ने सस्नेह वह महाप्रसाद श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्तों को वितरित किया और जब उन्होंने प्रसाद पा लिया तो उन्होंने (जाह्नवा-माता ने) भी प्रसाद का कुछ अंश लिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने खेतुड़ी में अनेक लोगों को प्रसाद दिया।

सन्तोष दत्त द्वारा सेवा

पधारने वाले भक्त अगली प्रातः अपने घर लौटने का निर्णय कर चुके थे। उस सायंकाल श्रीनिवास आचार्य ने भक्तजनों से अपने-अपने निवास पर भोजन बनाने का निवेदन किया और ये भी कहा कि यह सन्तोष दत्त की परोसने की कामना है। हर किसी ने प्रसन्नतापूर्वक विविध व्यंजन पकाए, उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण को निवेदन किया और प्रसाद ग्रहण किया। सन्तोष दत्त एक भाग्यशाली जीव थे क्योंकि हर किसी ने उनसे भोजन ग्रहण किया और उसकी विविध प्रकार से सराहना की।

तत्पश्चात् पधारने वाले भक्तों ने अपने घर वापिस लौटने का निश्चय किया। श्रीमती जाह्नवा-देवी ने कहा कि वे सर्वप्रथम अपने निवास पर जाएँगी और तब श्रीवृन्दावन के लिए यात्रा करेंगी। विदा होने के समय खेतुड़ी में अति दयनीय वातावरण छा गया। जाह्नवा-देवी अपने दुख पर नियंत्रण न कर सकीं और बुरी तरह रोने लगीं। प्रभु के पार्षदों ने वहाँ वल्लभी कान्त, गौरांग और अन्य श्रीविग्रहों के अन्तिम बार दर्शन किए और फिर अपने नेत्रों में अश्रु लिए प्रस्थान किया। खेतुड़ी के विरह कातर लोग विलाप करते हुए कुछ दूर तक उनके साथ चले।

उत्सव विश्राम-विदाई

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीसंतोष दत्त आदि महान वैष्णवजनों को जाते हुए देख श्रीनिवास आचार्य अत्यधिक उदास थे। वैष्णवजन चले गए और वे अपने उमड़ते भावों पर नियंत्रण न कर सके। जैसे ही भक्तजन शीघ्रता से नाव पर विराजमान हुए, पद्मावती के तट पर अपार जन समूह एकत्र हो गया। उन्होंने नदी पार करके वह रात्रि तेलिया बुधरी में व्यतीत की, प्रातः अपनी यात्रा पुनः आरम्भ की।

श्रीनिवास आचार्य, श्रीमती जाह्नवा देवी और अन्य भक्त प्रभु के पार्षदों के साथ पद्मावती नदी के तट तक आए और तब खेतुड़ी वापिस लौट गए। श्रीमती जाह्नवा-देवी ने घोषणा की कि वे श्रीवृन्दावन के लिए प्रस्थान करेंगी और तब जो विलाप कर रहे थे उन्हें शांत किया। श्री संतोष दत्त ने जाह्नवा-देवी को वह सब उपलब्ध करवाया जिसकी उन्हें श्रीवृन्दावन की अपनी यात्रा के लिए आवश्यकता थी। जो भक्त जाह्नवा-देवी के साथ गए, वे थे श्रीकृष्णदास सरखेल, श्रीमाधव आचार्य, श्रीमुरारी चैतन्य, श्रीकृष्णदास विप्रव्रज, श्रीनृसिंह चैतन्य, श्रीबलराम श्रीमहीधर, श्रीकनाई, श्रीनकरि दास, श्रीगौरांग सुन्दर, श्रीपरमेश्वरी दास, श्रीदामोदर दास, श्रीरघुपति वैद्य, उपाध्याय मनोहर, श्रीज्ञानदास, श्रीमुकुन्द दास और अन्य।

श्रीगोविन्द दास और कुछ अन्य भक्तजन भी श्रीनिवास आचार्य के आदेश पर उनके साथ गए। श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीनिवास आचार्य को आश्वस्त किया कि वे खेतुड़ी वापिस आएंगी। यह केवल श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा ही थी कि विदा होने के समय पर भक्तजन अपने भावों पर नियंत्रण कर पाये। वे धैर्यपूर्वक अपने निवासों पर वापिस चले गए पर जैसे ही उन्होंने श्रीगौरांग मन्दिर के प्रांगण को देखा और यह स्मरण किया कि कैसे श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके अंतरंग पार्षद संकीर्तन में सहभागिता करने के लिए वहाँ प्रकट हुए थे, श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम दास को अति प्रसन्नता अनुभव हुई, ताकि वे भक्तों के संग विरह के दुख को भुला सकें। उन्होंने मन्दिर प्रांगण को गौरवान्वित किया और उन्होंने सम्पूर्ण खेतुड़ी गांव को गौरवान्वित किया, जो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों की उपस्थिति के कारण, पधारने वाले भक्तजनों और गांव के समर्पित लोगों की उपस्थिति के कारण अध्यात्म का केन्द्र बन गया था। उन्होंने उत्साहपूर्वक वातावरण को संगीत के आनन्दातिरेक से परिपूर्ण स्वरों के कंपन से भरकर स्वयं को कीर्तन में मग्न कर लिया था।

आगे का कार्यक्रम

तत्पश्चात् एक दिवस श्रीनिवास आचार्य ने विनम्रता से श्रीनरोत्तम दास को सूचित किया कि उन्होंने अगली प्रातः श्रीश्यामानन्द प्रभु के साथ तेलिया भुदरी

जाने का निर्णय लिया है। वे पद्मावती नदी पार करेंगे और श्रीश्यामानन्द प्रभु के साथ याजिग्राम जाएंगे। याजिग्राम से श्रीनिवास आचार्य विष्णुपुर जाएंगे और बाद में याजिग्राम लौट आएंगे। विष्णुपुर से वे नरोत्तम दास को एक पत्र भेजेंगे जिसके उत्तर में वे जाह्नवा-देवी का समाचार भेज सकते हैं।

श्रीनिवास आचार्य ने नरोत्तम दास को जाह्नवा-देवी के साथ श्रीवृन्दावन की यात्रा पर साथ जाने का सुझाव दिया। अगली प्रातः मंगला आरती करने के बाद श्रीनिवास आचार्य ने अपनी यात्रा की तैयारी आरम्भ की। तब उन्होंने पद्मावती नदी को पार किया और तेलिया भुदरी चले गए, जहाँ उन्होंने श्रीरामचन्द्र कविराज से भेंट की। रामचन्द्र वहाँ अप्रसन्न भाव में थे और परन्तु अपनी अप्रसन्नता को कम करने के लिए अपने चित्त को संकीर्तन में मग्न रखते थे। ऐसा करने से उन्होंने अनेकों नास्तिकों को परिवर्तित कर दिया था। वास्तव में उनके सान्निध्य से व्यक्तियों का चरित्र उन्नत हो रहा था और वे श्रीगौरांग के चरणकमलों में समर्पित हो रहे थे।

श्रीनिवास आचार्य के नाम को गौरवान्वित कर इस ग्रन्थ 'भक्ति-रत्नाकर' के दसवें प्रवाह के समाप्त करने का नरहरि दास को अति आनन्द प्राप्त हुआ।

एकादश प्रवाह

ईश्वरी जाह्नवा-देवी की ब्रज यात्रा और वापिस खरदह आना

भक्तवत्सल श्रीगौरचन्द्र प्रभु की जय जयकार हो। असहायों के आश्रय श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो। हर किसी के प्रिय श्री अद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। श्रीगदाधर पंडित, श्रीवास पंडित और श्रीरूप गोस्वामी और श्रीसनातन गोस्वामी की जय जयकार हो। श्रीलोकनाथ गोस्वामी, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज की जय जयकार हो। श्री गौरचन्द्र के सभी पार्षदों और भक्ति-रत्नाकर के पाठकों की जय जयकार हो।

उत्सव की धूम

मैं अब अपना वक्तव्य जारी रखूँगा। बहुत समय पूर्व खेतुड़ी में आयोजित महोत्सव की महिमा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में फैल गयी थी। जिन्होंने भी महोत्सव में सहभागिता की वे अपने-अपने निवास पर वापिस लौट आए। खेतुड़ी के निवासी स्वयं को सौभाग्यशाली मानते थे क्योंकि उन्हें महान भक्तों का संग प्राप्त हुआ था। नित्य प्रति वे श्रीविग्रहों, श्रीगौरांग, श्रीवल्लभी-कान्त और अन्य सुन्दर दर्शनों का आनन्द प्राप्त करते और नियमित तौर पर अपनी आराधना के

लिए प्रसाद लाते। गौरांग मन्दिर के प्रांगण की महिमा मन्दिर में पधारने वाले सभी जनों को श्रीनरोत्तम दास सावधानीपूर्वक समझाते थे। वास्तव में श्रीनरोत्तम दास धूल से भरे रहते थे क्योंकि सैंकड़ों तीर्थ यात्री वहाँ नित्य आते थे।

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर नृत्य करते, वाद्य यन्त्र बजाते और अपने द्वारा रचित भजन गाते थे। यहाँ तक कि वे गन्धर्व जनों में आश्चर्य भर देते थे। मैं किस से उनकी तुलना करुँ?

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती रचित 'श्री स्तवामृत लहरी' में यह कहा गया है: 'श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को प्रणाम। आध्यात्मिक प्रेम के आनन्द से परिपूर्ण वे भूमि पर जा गिरे और उनका तन मार्ग की धूलि से सुशोभित हो गया। उनके दर्शन सबको अत्यन्त शुभ व मंगलकारी लगते थे।'

'श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को प्रणाम। वे स्वरचित सुन्दर भजनों का गायन करते। उनका नृत्य गन्धर्व जनों के गर्व को भी मिटा देता था। उनके क्रिया कलाप सभी को आश्चर्यचकित कर देते थे।'

श्रीरामचन्द्र, श्रीगोकुल और उनके अन्य अनुचरों के संग संकीर्तन करते हुए नरोत्तम दास ने सदैव अनेक रसों को आनन्द लिया। एक रात्रि जब चन्द्रमा अपने पूर्ण आकार में उदय हुआ तब नरोत्तम दास ने संकीर्तन अमृत का आनन्द लेना आरम्भ कर दिया। सर्वप्रथम नरोत्तम दास ने वाद्य यन्त्रों के उत्तमोत्तम संगीत को प्रकट किया। तब वे रास नृत्य के भजन अमृत में डूब गए।

श्रीनरोत्तम द्वारा संकीर्तन

देवता गण और अन्य दिव्य प्राणी श्रीनरोत्तम दास के वाद्य वादन और गायन से मन्त्र मुग्ध हो गए। यहाँ तक कि वे देवता गण जो कि संगीत के विद्वान् थे, वे भी शांत न रह सके। तब अचानक एक दिव्य प्रभा चारों दिशाओं में फैल गई, यह प्रभा मानसून के मेघों के मध्य चमकने वाली विद्युत के समान थी। पल-पल एक विस्मयकारी मधुर सुगन्ध सभी दिशाओं में भर गई। तब लगातार बजने वाली नूपुर की छन-छनाहट और अन्य आभूषणों का स्वर प्रस्तुत हुआ।

यद्यपि अचानक वह स्वर संकीर्तन स्थान पर अधिक देर तक सुनाई नहीं दिया। जब वह स्वर अन्तर्धान हो गया, वहाँ उपस्थित हर कोई अचेत हो गया। श्रीरामचन्द्र और श्रीनरोत्तम दास अपने नेत्रों से निकलने वाले अश्रुओं में मानो तैर गए। श्रीदेवीदास, श्रीगोकुल और अन्य भूमि पर लुढ़क गए। हर कोई जानता था कि भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी प्रिय गोपियां अचानक एक अद्भुत लीला के लिए प्रकट हो गए हैं। तब भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से सब शांत हो गए।

एक एकांत स्थान पर बैठे श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज, जो कि आध्यात्मिक गुणों के धाम हैं, ने भगवान् कृष्ण की लीलाओं के अमृत का

आनन्द लिया। श्रीमती जाह्नवा-देवी के श्रीवृन्दावन के सन्निकट आगमन का विचार करते हुए उनका हृदय आनन्दातिरेक के भावों से भर गया, यद्यपि बाह्य रूप से वे शांत और गंभीर थे। मुझ में इतनी सामर्थ्य नहीं कि मैं श्रीमती जाह्नवा-देवी की श्रीवृन्दावन यात्रा के अन्तर्गत की गई गतिविधियों का विस्तार से वर्णन करूँ। फिर भी मैं कुछ संक्षेप में वर्णन करूँगा जो मैंने पुण्य शाली भक्तों के श्रीमुख से सुना है, कि कैसे लोगों को निष्कपट भक्ति का उपहार देकर उन्होंने इस पृथ्वी को महान स्थान बना दिया था।

जाह्नवा माता कृपा दान

एक दिवस श्रीमती जाह्नवा देवी ने एक विशाल गांव में एक दिवस के लिए रहने की इच्छा व्यक्त की। सभी वैष्णवजन ने श्रीमती जाह्नवा देवी के चरणकमलों में प्रणाम किया। जब स्थानीय लोगों ने उन्हें देखा तो उनको एक साधारण महिला समझा। इस गांव के लोग पूर्णतः नास्तिक थे जिन्हें परिवर्तित कर पाना दुष्कर था। वे वैष्णव जनों को भयानक ताने मारते और उनका मजाक उड़ाते थे।

चण्डीदेवी द्वारा जाह्नवा परिचय

सूर्यास्त के समय कुछ महान वैष्णव जन आए और श्रीमती जाह्नवा देवी के चरणकमलों में प्रणाम किया। ऐसा देखकर निन्दक लोग हंसे और कोई एक कहने लगा, 'मेरे हृदय में, मुझे ये पता है कि यह केवल कोई ब्राह्मण पत्नी हैं।'

दूसरे निन्दक ने कहा, 'यह लोग मूर्ख हैं। इनमें कोई श्रेष्ठ गुण नहीं हैं। ये मात्र एक जीव के सम्मुख झुककर प्रणाम कर रहे हैं परन्तु महान देवताओं के सम्मुख कभी नहीं झुकेंगे।'

एक अन्य निन्दक ने कहा,'मेरी अभीप्सा है कि देवी चण्डी इन पर अनुग्रह करें।' एक अन्य निन्दक ने कहा, 'ये लोग देवी चण्डी के अनुग्रह के बारे में क्या जानते हैं? क्या एक ब्राह्मण और ब्राह्मण पत्नी, देवी चण्डी के समक्ष नहीं झुकेंगे? इन लोगों ने देवी चण्डी के प्रति अपराध किया है।'

इस प्रकार बोलते हुए और पुनः-पुनः हंसते हुए निन्दक लोग देवी चण्डी के मन्दिर चले गए। वे अभिमानी थे और दम्भ युक्त शब्दों से परिपूर्ण थे। उन्होंने देवी चण्डी के सम्मुख पुनः-पुनः झुककर प्रणाम किया और कहा, 'आज रात्रि कृपया इन सभी को मार दीजिए। यदि वे केवल अपने तन, मन और शब्दों से आपके चरणों की आराधना करें तो आप उनकी रक्षा करें और अपने चरणों में आश्रय प्रदान करें।'

यह कहकर निन्दक लोग अपने-अपने निवासों पर वापिस लौट गए। जैसे ही वे सोए, उन्होंने एक स्वप्न देखा। देवी चण्डी, नास्तिकों से अति क्रोधित थीं।

उनके होंठ कम्पित हो रहे थे और नेत्र लाल थे। स्वप्न में देवी चण्डी हाथ में एक तेजधार तलवार लिए नास्तिकों से यह कह रही थी कि, 'हे घृणित निन्दको, तुम्हारे कष्टों का अंत नहीं होगा। आज मैं तुम्हारे शीश काटकर अलग कर दूँगी। अहंकार के मद में चूर तुम स्वयं को ही निगल जाओगे और भस्म कर लोगे।'

साधारण नहीं जाह्नवा देवी

'तुमने वैष्णव जनों का परिहास किया है, जिनकी सबके द्वारा पूजा होनी चाहिए। हे दुष्टो एवं निन्दको, तुमने जिन लोगों को व जिस व्यक्ति को साधारण ब्राह्मण पत्नी समझा, उनकी सत्यता नहीं जानते। मैं उनके सम्मुख अपना शीश झुकाती हूँ। वे सर्व पूज्य हैं। वे श्रीनित्यानन्द प्रभु की पत्नी हैं। उनका मधुर नाम है जाह्नवा देवी। जब उनके नाम का जप किया जाता है, इस विश्व के जन्म और मरण के भय और कष्ट दूर भाग जाते हैं। वे श्रीनित्यानन्द प्रभु की प्रिय पत्नी हैं। वे करुणा की अवतार हैं। अपनी दयालुता से वे भटके हुए जीवों को आध्यात्मिक प्रेम और समर्पित सेवाओं का उपहार प्रदान करती हैं। उनके चरणकमलों में कौन सदैव प्रणाम नहीं करेगा? हर कोई उनकी महिमा का गान करता है। वे भौतिक संसार के त्रिविध कष्टों का हरण करती हैं।'

नित्यानन्द-प्रिया-प्रेम-भक्ति-रत्न-प्रदायिनीम्
श्री-जाह्नवेश्वरीं वन्दे ताप-त्रय-निवारिणीं

'मैं श्रीनित्यानन्द प्रभु की प्रिय पत्नी श्रीमती जाह्नवा देवी की जय जयकार करता हूँ। उन्होंने लोगों को भक्ति सेवाओं का अनमोल रत्न प्रदान किया। इस प्रकार भौतिक विश्व के त्रिविध कष्टों को जीत लिया था।'

'यदि वे आपके प्रति करुणामयी हैं तो आपका कल्याण होगा और आपका दुर्भाग्य कभी नहीं होगा। यदि आप उनका आश्रय ग्रहण करोगे तो वे आपको सुरक्षा प्रदान करेंगी। आपका भाग्य मेरे हाथ में नहीं है। किसी में भी उनके आदेश की अवमानना की सामर्थ्य नहीं है।'

ऐसा कहने के पश्चात् देवी चण्डी अचानक उनके स्वप्न से अन्तर्धान हो गयी। जागने पर सभी निन्दक भय से काँपने लगे। जब सवेरा हुआ तो संतप्त निन्दक लोग स्वयं पर क्रोधित हुए। वे सब जाकर उन महान वैष्णव जनों के चरणों में जा गिरे।

जाह्नवा द्वारा कृपा वर्षण

अपने नेत्रों से गिरने वाले अश्रुओं में भीगकर वे लोग पुनः-पुनः बोले, 'हमने एक अपराध किया है। कृपया हमें सुरक्षा प्रदान कीजिए। हम ईश-निन्दा के पाप-कर्म के परिणामों से मुक्ति प्राप्त करने यहाँ आए हैं।'

'कृपया हमारे दुर्भाग्य को मिटा दीजिए। कृपया हमें आश्रय प्रदान कीजिए। यदि आप हमसे प्रसन्न हैं तो हमें अपना अनुग्रह दीजिए। श्री जाह्नवा देवी भी हमसे प्रसन्न होंगी और हम पर कृपा बरसायेंगी। आप में सामर्थ्य है कि आप हमें उनके चरणकमलों में समर्पण का उपहार दे सकें। हम कैसे उनकी सत्यता को जानने की सामर्थ्य प्राप्त कर सकते हैं? केवल यदि आप हमारे हेतु प्रार्थना करें तो वे हम पर अपनी अनुकम्पा बरसाएंगी।'

'हम में क्या बुद्धिमत्ता है? हम में कोई श्रेष्ठ बुद्धिमत्ता नहीं है। फिर भी हमने दृढ़ता से जाह्नवा देवी के चरणकमलों में समर्पण करने का निर्णय लिया है। हर कोई जानता है कि हम दानव और निन्दक हैं। यदि जाह्नवा देवी हम जैसे दुष्टों को मुक्ति प्रदान कर देंगी तो प्रसिद्धि हर जगह उद्घोषित हो जाएगी।'

ऐसा कहकर निन्दक भूमि पर जा गिरे। वे पुनः-पुनः प्रणाम करने लगे। यह देखकर प्रभु के अंतरंग पार्षदों ने अपनी अनुकम्पा उन पर बरसाई।

जब श्रीमती जाह्नवा देवी ने निन्दकों पर अनुकम्पा बरसाई, उनका हृदय आनन्द से भर गया। उस गांव में दो-चार दिवस और रहने के बाद और निन्दकों के जीवन को सफल बना कर श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपनी यात्रा जारी रखी। पूर्व में निन्दक रहे लोग आध्यात्मिक सेवाओं के अमृत में डूब गए। जो उनके सान्निध्य में आए वे भी समर्पण से भर गए।

अगले दिवस श्रीमती जाह्नवा देवी गांव के निकट नदी के तट पर एक सुन्दर स्थान पर रुकीं। इस गांव के निकट एक स्थान पर अजेय प्रतीत होते दो यवनों ने अपने अनुचरों से कहा, 'इन बंगालियों के पास अनेक बहुमूल्य रत्न होंगे। हम उन्हें लूटेंगे और स्वयं को भव्यता से सुशोभित करेंगे।'

डाकुओं पर जाह्नवा-कृपा

सर्वप्रथम चोरों ने उन यात्रियों की जानकारी पाने के लिए एक भेदिये को भेजा और तब उन्होंने अपने शस्त्र एकत्र किए। भेदिया वापिस आया और बोला, 'नाम-संकीर्तन करने के पश्चात् बंगाली यात्री लेट गए और गहरी निद्रा में सो गए हैं। हम रात्रि के दूसरे पहर में वहाँ जाऐंगे। मैं जानता हूँ तब हमारा प्रयास अवश्य सफल होगा।'

यह सुनकर डरावना परिधान पहने और अपने अनुचरों के साथ चोरों का प्रमुख प्रसन्न मन से बंगाली यात्रियों की खोज में निकला।

चोर तेजी से चल रहे थे। यात्रियों से उनकी दूरी बहुत कम थी। किन्तु वहाँ मार्ग का अचानक अंतहीन विस्तार हो गया। मूर्ख चोरों में यह समझने की सामर्थ्य नहीं थी कि क्या हो रहा है। वे चलते गए और चलते-चलते रात समाप्त हो गई और सवेरा होने लगा।

सवेरा होते देख और अब हृदय में भयभीत चोरों के प्रमुख ने अपने अनुचरों से कहा, 'देखो! उन यात्रियों की खोज करना क्यों असंभव है? एक क्षण के लिए मैंने सोचा कि मैंने बंगालियों को देख लिया है। मैं गलत था। पूरी रात्रि चलने के बाद, मैं परास्त कर दिया गया हूँ। क्षण-क्षण मेरे हृदय में भय व्याप्त होता जा रहा है। इन बंगाली गोस्वामियों का क्रोध हमें ध्वस्त कर देगा। अब मैं जो कह रहा हूँ, सब लोग उसे ध्यान से सुनो। आज से हम अपना लूटपाट का व्यापार त्याग देंगे। हमने अनन्त पाप किए हैं। कोई भी हमें यमराज के कोप से नहीं बचा सकता। आओ बंगाली गोस्वामी गणों के पास चलें। वे निश्चित ही हमें अपनी अनुकम्पा प्रदान करेंगे।'

ऐसा कहकर और अपना कपटवेश त्याग कर, अत्यधिक पश्चाताप से भर चोरों का प्रमुख श्रीमती जाह्नवा देवी के पास गया। उत्कृष्ट भक्तों के केवल दर्शन मात्र से ही चोरों का हृदय पावन हो गया। अति पश्चाताप से भूमि पर गिरकर और रोते हुए उन सबने स्वयं को भक्तों के सम्मुख समर्पित कर दिया।

चोरों के प्रमुख ने कहा, 'इस देश में मैं प्रधान लुटेरे के रूप में बदनाम हूँ। यदि आप मुझे अपनी अनुकम्पा देंगे तो आपकी प्रसिद्धि सम्पूर्ण विश्व में घोषित हो जाएगी।'

ऐसे शब्द कहकर चोर में सामर्थ्य नहीं थी कि वह कुछ और कहे। उसके नेत्रों से अश्रु बह निकले। वह हृदय से प्रेमाभिभूत हो गया। ऐसा देख कर श्रीमती जाह्नवा देवी को दया का अनुभव हुआ। अपने पार्षदों के सान्निध्य में उन्होंने चोरों पर अनुकम्पा बरसाई।

मथुरा-आगमन

चोरों को मुक्ति प्रदान करने का समाचार सर्वत्र फैल गया। इस घटना के बाद वे कहाँ गईं, इसे कहने का सामर्थ्य मुझमें नहीं है। कुछ दिवस पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी ने मथुरा में प्रवेश किया। मथुरा के दर्शन करके वे प्रसन्नता से भर उठीं। मथुरा के ब्राह्मणों का सम्मान कर उन्होंने विश्राम घाट पर यमुना जी में स्नान किया।

यह सुनकर कि जाह्नवा देवी का अप्रत्याशित रूप से मथुरा आगमन हुआ है, मथुरा के वैष्णव जन तत्क्षण उनके पास आने लगे।

जाह्नवा देवी के दर्शन कर वैष्णव जन अपने नेत्रों से बहते अश्रुओं में भीग गए। उनके सान्निध्य में उत्कृष्ट भक्तों के दर्शन कर वैष्णवजनों के हृदय में अति आनन्द भर आया। भक्तजन एक-दूसरे के प्रति परस्पर अपार प्रेम का अनुभव करने लगे। वे अश्रुपूर्ण नेत्रों से एक-दूसरे को निहारने लगे।

उस समय मथुरा के ब्राह्मणों ने अति प्रसन्नता से एक सन्देश वाहक को श्रीमती जाह्नवा देवी के आगमन के समाचार के साथ श्रीवृन्दावन भेजा। तब

वैष्णव जन, भक्त जनों को अद्भुत आवास पर ले गए। मथुरा के उस आवास में यात्री उस दिवस रुके। वाराह भगवान् और श्रीकेशवदेव के श्रीविग्रहों के दर्शन कर, यात्री प्रात:काल श्रीवृन्दावन चले गए। मथुरा के सभी वैष्णवजनों के संग-संग यात्री गण श्रीवृन्दावन पहुँच गए। श्रीवृन्दावन के सौन्दर्य के दर्शन करके पधारने वाले भक्तगण अपने हृदय में अति आनन्दित हो उठे।

श्रीवृन्दावन के सभी गोस्वामी गण यात्रियों से भेंट करने आए। अक्रूर-स्थान पर आकर भक्तजनों ने श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन किए। कुछ दूरी से वे उनके पास गईं। गोस्वामी गणों को दूर से आया देख जाह्नवा देवी ने परमेश्वरी दास से कहा, 'इन भक्तजनों के क्या नाम हैं, जो अब यहाँ आ गए हैं? कृपया उनसे वार्तालाप कीजिए ताकि मैं भी सुन सकूँ।'

श्रीमती जाह्नवा देवी के आदेश पर मृदु वचन से इंगित करते हुए श्रीपरमेश्वरी दास ने कहा, 'यह श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी हैं जो कि प्रभु गौरचन्द्र के प्रति प्रेम से परिपूर्ण हैं। यह श्रीभूगर्भ गोस्वामी और श्रीलोकनाथ गोस्वामी हैं जो आध्यात्मिक गुणों के धाम हैं। यह श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी, श्रीकृष्णदास पंडित और श्रीमधु पंडित हैं। यह श्रीजीव गोस्वामी के नाम से जाने जाते हैं।'

इस प्रकार उन्होंने श्रीमती जाह्नवा देवी को हर भक्त के नाम और गतिविधि की सूचना प्रदान की। यह सब सुनकर श्रीमती जाह्नवा देवी को अत्यधिक आनन्द प्राप्त हुआ। जाह्नवा देवी के निकट पहुँच कर सब गोस्वामी गण आनन्दपूर्वक भूमि पर जा गिरे और प्रणाम किया। श्रीमती जाह्नवा देवी उन्मत्त आध्यात्मिक प्रेम का अवतार हैं। मेरा ज्ञान अल्प है। उनकी गतिविधियां कौन समझ सकता है?

उन्मत्त प्रेम को देख और गोस्वामी गणों की आध्यात्मिक गतिविधियों को देख, कौन यह अनुभव नहीं करेगा कि उसका हृदय प्रेमावेश से उन्मत्त हो गया है? श्रीमती जाह्नवा देवी की गतिविधियां भौतिक विश्व के स्पर्श से दूर हैं। उनकी उपस्थिति में गोस्वामी गण संकोची और गम्भीर थे।

श्रीमती जाह्नवा देवी के भद्र और योग्य अनुचरों में श्रीकृष्णदास सरखेल, माधव आचार्य और श्रीपरमेश्वरी दास मुख्य हैं। इन महान भक्तजनों ने भी गोस्वामी गणों से भेंट की। मैं इस भेंट का वर्णन कैसे कर सकता हूँ? मैं राख के ढेर के समान अयोग्य हूँ। प्रेम के उन्मत्त भाव से भरे ये भक्तजन आपस में वार्तालाप करने लगे। उनके वार्तालाप को सुनकर कोई भी शांत और स्थिर नहीं रह सकता है?

आनन्दित हृदय से श्रीपरमेश्वरी दास ने श्रीनिवास आचार्य के शिष्यों का गोस्वामी गंणों से परिचय करवाया। अत्यंत स्नेह से उन्होंने कहा, 'इस व्यक्ति का नाम गोविन्द है। ये आध्यात्मिक सेवाओं के अमृत से परिपूर्ण है। ये सब

वैष्णवजनों के प्राण हैं। ये श्रीचैतन्य सेन के पुत्र हैं और श्रीखण्ड में रहते हैं। ये श्रीरामचन्द्र कविराज के अनुज भ्राता हैं।'

श्रीवृन्दावन प्रस्थान

यह सुनकर श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य भक्तजनों ने अति स्नेह से गोविन्द का आलिंगन कर लिया। भगवान् कविराज और अन्य अनेक भक्तजनों का भी गोविन्द से परिचय करवाया गया। जो स्नेह भक्तजनों ने गोविन्द के लिए अनुभव किया और जो कृपा उन पर बरसाई, उसका वर्णन कोई नहीं कर सकता। अक्रूर-स्थान जा कर सभी ने श्री गोपीनाथ जी के श्रीविग्रह के दर्शन किए। श्रीजीव गोस्वामी ने विनम्रतापूर्वक जाह्नवा देवी से कहा, 'यह अति निर्जन स्थान अक्रूर-स्थान है। अपार जन समुदाय होने के कारण श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीवृन्दावन में वास नहीं किया। अपितु उन्होंने इस स्थान पर वास किया।'

यह शब्द सुनकर श्रीमती जाह्नवा देवी अपने नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं में भीग गईं। एक गहरी श्वांस छोड़ते हुए उन्होंने उस पावन स्थान को प्रणाम किया। अपने भावों के कारण अस्थिर और श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं में मग्न होकर अन्य भक्तजनों ने भी प्रणाम किया, वे लीलाऐं भौतिक विश्व के स्पर्श से बहुत दूर हैं।

श्रीमती जाह्नवा देवी को आगे बढ़ा कर तब भक्तजनों ने आनन्दपूर्वक श्रीवृन्दावन में प्रवेश किया। जब श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीवृन्दावन के अलौकिक सौन्दर्य को निहारा तो क्या अनुभव किया, मुझमें इसका वर्णन करने की सामर्थ्य नहीं है।

सभी भक्तजनों के सान्निध्य में श्रीमती जाह्नवा देवी आगे उन आवासों में गईं जिनका प्रबन्ध श्रीजीव गोस्वामी ने पूर्व में ही उनके रहने के लिए कर रखा था। पधारने वाले भक्त जन अपने अपने आवासों से कितने प्रसन्न थे मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि इसका वर्णन कर सकूँ। कितने आनन्द से भक्तजनों ने श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ और श्रीमदन मोहन के श्रीविग्रहों की सेवा की इसे कौन समझ सकता है।

आनन्दपूर्वक श्रीविग्रहों की सेवा करते हुए भक्त जन समाधि में मग्न हो गए। श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन करके वे भक्त अपने निवास पर लौट आए। कृष्णदास सरखेल और अन्य यात्रियों ने अत्यधिक आनन्द और प्रेम का अनुभव किया जब उनकी भेंट वृन्दावन के भक्तजनों से हुई। सैंकड़ों-सैंकड़ों ब्रजवासी पुरुष और महिलाएं श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन करने आए। उन्होंने उनके दर्शनों की कितनी दीर्घ प्रतीक्षा की इसका कौन वर्णन कर सकता है।

श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य भक्तों को विदा करने के बाद पधारने वाले भक्तजन उन आवासों में गये जिनका श्रीजीव गोस्वामी ने उनके रहने के लिए प्रबन्ध किया था। श्री जीव गोस्वामी, श्रीमती जाह्नवा देवी के निकट रहे। अति निपुणता से, उन्होंने यथोचित रूप से सब प्रबन्ध कर दिया।

विग्रह दर्शन लालसा

कुछ क्षणों के पश्चात् श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी और अन्य भक्त श्रीमती जाह्नवा देवी से भेंट करने आए। गोस्वामी गणों को देखकर श्रीमती जाह्नवा देवी आनन्दपूर्वक मृदु वचन में बोली, 'मैं श्रीविग्रहों के दर्शन करना चाहूँगी।'

यह सुनकर हर कोई आनन्दित हो उठा। श्रीमती जाह्नवा देवी के सान्निध्य में वे सब श्रीविग्रहों के दर्शन करने गए। उन्होंने श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदन-मोहन, श्रीराधा-विनोद, श्रीराधा-रमण और श्रीराधा-दामोदर के दर्शन किए। भक्त जन प्रेम भक्ति की उन्मत्तता से कैसे भर उठे इसका वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीमती जाह्नवा देवी ने इन श्रीविग्रहों को श्रेष्ठ वस्त्र और आभूषण निवेदित किए, जो कि वे लेकर आई थीं। मुझमें सामर्थ्य नहीं है कि वर्णन करूँ कि उन भक्तजनों ने अति विनम्रता से स्वयं को तुच्छ मान कर कैसा समर्पण अनुभव किया।

तत्पश्चात् सभी भक्तजनों के सान्निध्य में श्रीमती जाह्नवा देवी अपने आवास पर वापिस लौट आयीं, जो कि एक निर्जन स्थान पर था। श्रीमाधव आचार्य और अन्य भक्तजनों ने तब खेतुड़ी के महोत्सव का वर्णन किया। इस वर्णन का श्रवण करते समय श्रीलोकनाथ गोस्वामी और अन्य गोस्वामीगण आनन्दपूर्वक प्रेम भक्ति के अश्रुओं में डूब गए। ग्रन्थ के विस्तार के भय से मैं उस समय भक्तजनों में जो वार्तालाप हुआ, उसका वर्णन नहीं करूँगा।

तब श्रीपरमेश्वरी दास ने हर किसी को गोविन्द दास के अमृतमय काव्य का श्रवण करने को कहा। गोविन्द के अति सुन्दर काव्य का श्रवण करते हुए, भक्तजनों को अपने हृदय में अति आनन्द का अनुभव हुआ। हर किसी ने कहा, 'यह उचित ही है कि वे कविराज कहलाते हैं।'

उन्हें श्री गोविन्द कविराज कहकर सम्बोधित करते हुए, उन सबने उनकी प्रशंसा की। यह सब प्रशंसा सुनकर श्रीमती जाह्नवा देवी अति आनन्दित हो गईं। मैं उस आनन्द का वर्णन कैसे करूँ जो वे श्रीवृन्दावन में सदैव अनुभव करती रहती थीं।

श्रीमती जाह्नवा देवी के आगमन का समाचार सर्वत्र फैल गया यह ऐसा समाचार था जिसने विद्वत् भक्तजनों को अति उत्कृष्ट आनन्द में डुबो दिया। उस

समय श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी, श्रीजाह्नवा देवी के आगमन का समाचार श्रवण कर अति प्रसन्न हो गए। फिर भी उनमें इतनी सामर्थ्य नहीं थी कि वे उनसे भेंट करने स्वयं चलकर श्रीवृन्दावन जा सकें।

श्रील रूप गोस्वामी के विरह के भावों से परिपूर्ण, श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी हृदय से सदैव अस्थिर रहते थे। न चावल और न ही कोई अन्य भोज्य पदार्थ खाने के कारण वे अत्यन्त क्षीण हो चुके थे। वे हृदय में सदा केवल अपनी कठिन आध्यात्मिक सेवाओं के बारे में चिन्तन करते रहते थे। उन्हें देख कौन अपने हृदय में वेदना का अनुभव नहीं करेगा?

श्रीकृष्णदास कविराज और अन्य भक्तजनों ने श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी को प्रणाम किया और उनसे श्रीवृन्दावन की यात्रा आरम्भ करने का निवेदन किया। इसी दौरान गोपाल, गोवर्धन और अन्य भक्त जनों ने नन्दीश्वर, गोवर्धन और अन्य स्थानों से प्रस्थान किया। श्रीवृन्दावन पहुँचकर उन सबने श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन किए। उन्होंने उन्हें श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी की स्थिति के बारे में बताया।

श्रीराधाकुण्ड दर्शन-इच्छा

किसमें सामर्थ्य है कि श्रीमती जाह्नवा देवी के हृदय में क्या विचार है, यह जान सके? श्रील गोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य गोस्वामी गणों से वे बोलीं, 'कल प्रातः मैं श्रीराधाकुण्ड जाऊँगी।'

हर किसी ने उनसे कहा, 'आप श्रीराधा-कुण्ड और अन्य स्थानों के दर्शन कीजिए और तब शीघ्रता से वापिस लौट आइये। तब कुछ विश्राम कर श्रीवृन्दावन के वनों के दर्शन करने जाइये।'

यह शब्द सुनकर श्रीमती जाह्नवा देवी आनन्दमय हृदय से और विद्वान् भक्त जनों से घिरकर, श्रीराधा-कुण्ड को प्रस्थान कर गईं। बहुलावन के मार्ग से जाते हुए वे श्रीराधा-कुण्ड पहुँची। श्रीराधा-कुण्ड के उत्तम सौन्दर्य को निहारते हुए उन्होंने अनुभव किया कि उनका हृदय उल्लसित प्रेम से भर उठा।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपने हृदय में विचार किया, 'मैं व्यक्तिगत रूप से श्रील रघुनाथदास गोस्वामी के स्थान पर जाऊँगी और उनसे भेंट करूँगी।'

दास गोस्वामी मिलन

श्रील रघुनाथदास गोस्वामी एक निर्जन स्थान पर कुटिया में वास करते थे। वे पावन नाम का धीमे से जप करते रहते और अपनी आध्यात्मिक सेवाऐं पूरी करते। श्रीकृष्णदास कविराज अन्यों से आगे जाकर श्रील रघुनाथदास के निकट जाकर खड़े हो गए । अवसर का लाभ उठाकर उन्होंने कहा, 'श्रीमती जाह्नवा देवी यहाँ आयी हैं।'

जब श्रील रघुनाथदास गोस्वामी ने यह शब्द सुने, उनका हृदय अद्‌भुत आध्यात्मिक प्रेम से परिपूरित हो गया। उनके नेत्र अश्रुओं से भर गए और वे जाह्नवा देवी से भेंट करने गए। जैसे ही श्रील रघुनाथदास गोस्वामी निकट पहुँचे, श्रीमती जाह्नवा देवी ने उन्हें सूर्य के समान प्रभावान देखा। यद्यपि वे अति दुर्बल और क्षीण हो गए थे। फिर भी किसमें सामर्थ्य है कि वे श्रीमती जाह्नवा देवी के हृदय के भावों को जानें? उनके नेत्रों से भी अश्रु बह निकले। उनमें सामर्थ्य नहीं थी कि वे उन्हें रोक सकें।

किसी प्रकार अपने धैर्य को संतुलित कर श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रील रघुनाथदास गोस्वामी को प्रणाम किया। श्रीमती जाह्नवा देवी के लिए, जो कि उल्लसित प्रेम से परिपूर्ण थीं, यह क्रिया किसी प्रकार से सम्भव हो सकी थी। जो शब्द श्रील रघुनाथदास गोस्वामी ने श्रीमती जाह्नवा देवी से कहे, उन्हें सुनकर किस व्यक्ति का हृदय टुकड़ों में विभाजित नहीं हो जाएगा?

जब श्रील रघुनाथदास गोस्वामी की भेंट श्रीमाधव आचार्य और अन्य पधारने वाले भक्तजनों से हुई तो हर व्यक्ति अपने हृदय में अद्‌भुत उल्लास का अनुभव करने लगा। कुछ क्षण पश्चात् सब पुनः शांत हो गए।

श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन कर अरिट् ग्राम के ब्रजवासी आनन्दित हो गए। तीन अथवा चार दिवस श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीराधा-कुण्ड में वास किया। अति देखभाल से उन्होंने अनेक भोज्य पदार्थ पकाए। उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण को भोग निवेदन किया और तब आनन्दपूर्ण हृदय से उन्होंने सब ब्रजवासी वैष्णवजनों के लिए प्रसाद का आयोजन किया।

उस प्रसाद आयोजन का आनन्द लेते हुए प्रत्येक भक्त ने अपने भीतर उत्पन्न आध्यात्मिक प्रेम के अति आनन्द का अनुभव किया। कौन इन गतिविधियों को देखकर उदास नहीं होगा?

श्रीमती जाह्नवा देवी की गतिविधियां भौतिक विश्व के स्पर्श से बहुत दूर हैं। कौन उन्हें समझ सकता है? मैं राख के ढेर के समान अयोग्य हूँ। मुझमें उन्हें समझने योग्य बुद्धि नहीं है।

श्रीकृष्ण दर्शन हुए

एक दोपहर श्रीराधा-कुण्ड के तट पर बांसुरी के स्वर को सुन श्रीजाह्नवा देवी शांत न रह सकीं। तब उन्होंने ऐसा श्रेष्ठ आश्चर्य देखा, जो और किसी ने नहीं देखा था। विद्वत् ब्राह्मण बाद में इस सुन्दर आयोजन का विस्तृत वर्णन करेंगे-ऐसा आयोजन जिसने हृदय को मंत्र मुग्ध कर दिया। अभी मैं इसके बारे में अति संक्षेप में वर्णन करूँगा। अचानक बांसुरी का स्वर सुन, अति आनन्द में श्रीमती जाह्नवा देवी चारों दिशाओं में देखने लगीं। तब उन्होंने सुन्दर, श्याम वर्ण

और प्रभावान भगवान् श्रीकृष्ण को उनके ललित त्रिभंग रूप में देखा जिनकी महिमा कामदेव को भी परास्त कर रही थी।

वे धीमे से मुस्काए। उन्होंने बांसुरी बजाई। उनकी उपस्थिति में कौन शांत रह सकता है? वे सम्पूर्ण विश्व को अपने उल्लास से व्यग्र करने वाले हैं। श्रीराधा, ललिता और अन्य गोपियाँ सुन्दर श्याम वर्ण कृष्ण को एक अति बृहत् वृत्ताकार मण्डल में घेरे हुए हैं। उनके अद्भुत शोभा और सौन्दर्य के दर्शन कर श्रीमती जाह्नवा देवी अचानक अचेत हो गईं। मुझमें इस विषय में इसके अतिरिक्त कुछ कहने का सामर्थ्य नहीं है।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रील रघुनाथदास गोस्वामी को अपनी गोवर्धन पर्वत के दर्शन करने की कामना के बारे में सूचित किया। भूमि पर गिरकर, सादर प्रणाम करके विनम्रता के भाव में श्रील रघुनाथदास गोस्वामी ने सहमति प्रदान कर दी। श्रील रघुनाथदास गोस्वामी के विनम्र वचन सुनकर कौन सा व्यक्ति अपने मन में हृदय विदारक भावों का अनुभव नहीं करेगा?

अपनी सेविकाओं और अनुचरों के मध्य श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीराधा-कुण्ड से गोवर्धन गई। गोवर्धन पर्वत, मानस गंगा और अन्य स्थानों को निहारते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी कैसे उल्लास से भर उठीं, उसके बारे में मैं कैसे किसी अन्य वर्णन से उसकी तुलना कर सकता हूँ?

श्रीमाधव आचार्य और कुछ अन्य भक्त उल्लास से आनंदित हो गए। श्रीजीव गोस्वामी और अन्य भक्तों ने उन्हें शांत करने का प्रयास किया। आह! केवल एक मुख से, मुझमें सामर्थ्य नहीं कि मैं वर्णन कर सकूँ कि नन्दग्राम और अन्य पवित्र स्थानों के दर्शन करने पहुँचे भक्तजन कैसे उल्लास और प्रेम से भर उठे थे।

कुछ दिवस पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षद, श्रीवृन्दावन वापिस लौट आए। अत्यन्त प्रसन्नता से वे तीन श्रीविग्रहों श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ और श्रीमदन मोहन को निहारने लगे। श्रीराधागोविन्द और श्रीराधारमण के दर्शन करने के बाद अति प्रसन्न होकर सभी अपने-अपने निवास पर लौट गए। कभी श्रीमती जाह्नवा देवी अति सावधानीपूर्वक चावल, सब्जियां और अन्य स्वादिष्ट भोजन श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह को परोसतीं। किसी अन्य समय आनन्दपूर्वक श्रीमती जाह्नवा देवी अति सावधानीपूर्वक चावल, सब्जियां और अन्य स्वादिष्ट भोजन श्री गोपीनाथ के श्रीविग्रह को परोसतीं। फिर किसी अन्य समय में अल्प अवधि में विविध पकवान तैयार कर श्रीमती जाह्नवा देवी आग्रहपूर्वक श्रीमदन मोहन के श्रीविग्रह को परोसतीं। उन्होंने श्रीराधा-दामोदर, श्रीराधारमण और श्रीराधाविनोद के श्रीविग्रहों को भी भोजन परोसा।

उन्होंने सभी वैष्णवजनों को प्रसाद दिया। किसमें सामर्थ्य है कि उस आनन्द का वर्णन करें जो उन सभी ने अनुभव किया। श्रीमती जाह्नवा देवी

दीर्घकाल से गोस्वामीगणों के ग्रन्थों का श्रवण करना चाहती थीं। श्रीजीव गोस्वामी ने उच्चस्वर में पठन किया और उन्होंने श्रवण किया। श्री बृहद् भागवतामृत और गोस्वामी गणों के अन्य ग्रन्थों का श्रवण कर श्रीमती जाह्नवा देवी आध्यात्मिक प्रेम के भाव में उल्लसित हो गईं। वे शांत नहीं की जा सकती थीं। उनके दुर्लभ और उत्कृष्ट भक्तिमय भावों को देख, कौन व्यक्ति हृदय में सुखदायक परमानन्द का अनुभव नहीं करेगा?

कुछ दिवस पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी अपने पार्षदों के साथ श्रीवृन्दावन से प्रस्थान कर अन्य वनों में गईं। वे द्वादश वन हैं- **मधुवन, तालवन, कुमुदवन, बहुलावन, काम्यवन, खदिरवन, भद्रवन, भाण्डीरवन, श्रीवन, लोहवन, महावन** और **श्रीवृन्दावन।**

उन्होंनें अपनी यात्रा के दौरान जो उल्लसित प्रेम के लक्षण प्रकट किये, उनको जिसने देखा वो सौभाग्यशाली था।

श्रीगोवर्धन दर्शन

अपने हृदय में अति उत्साह से भरी श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीगोवर्धन पर्वत पर गईं। गोवर्धन पर्वत के निकट एक निर्जन स्थान पर दीर्घकाल तक हृदय से ध्यान लगाया। 'कृष्ण-बलराम दोनों भ्राता अपनी-अपनी प्रिय गोपियों के संग थे, उन्होंने यहाँ बसन्त के समय रासमण्डल में लीलाओं का आनन्द लिया।' इस प्रकार सोचते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी शांत नहीं रह सकती थीं। पुनः-पुनः वे उन दो प्रभु के बसंतकालीन और अन्य अनेक लीलाओं के स्थल को निहार रही थीं।

तब अचानक उन्हें बसंतकालीन रास नृत्य के दर्शन हुए। अपनी-अपनी प्रिय गोपियों से घिरे दोनों भ्राताओं ने अनेक लीलाओं का रासमण्डल में आनन्द लिया। अपनी गोपियों के संग रोहिणी नन्दन बलराम ने गुलाल उछालने की फाग-लीला खेली और अन्य कई लीलाओं का आनन्द लिया।

अपनी गोपियों के संग यशोदा नन्दन कृष्ण जो कि अमृत के धाम हैं, ने रासमण्डल का आनन्द लिया। किसमें सामर्थ्य है कि इस फाग लीला और अन्य लीलाओं का वर्णन कर सके? मैं इन लीलाओं के अद्‌भुत वैभव और सौन्दर्य की तुलना में एक शब्द भी नहीं कह सकता। इन लीलाओं को निहारते हुए, जिन्होंने विश्व को मन्त्र मुग्ध कर दिया था वे श्रीमती जाह्नवा देवी अचेत होकर भूमि पर जा गिरीं।

कुछ क्षण पश्चात् वे सचेत हुईं। उन्होंने किसी को नहीं बताया कि उन्होंने क्या देखा। उत्कृष्ट उल्लास से भर, वे उस स्थान से वापिस आ गईं। मुझमें सामर्थ्य नहीं है कि बता सकूँ जो उल्लास श्रीमती जाह्नवा देवी ने राम-घाट पर अनुभव किया। वहाँ उन्होंने अपने पति और जीवन धन के दर्शन किए। उल्लसित

प्रेम से अभिभूत वे उस निर्जन स्थान पर स्वयं को भूल गईं। वे हृदय से श्रीबलराम के रास नृत्य का स्मरण करने लगीं। उनका तन परमानन्द से भर उठा। वे गहरी श्वांस छोड़ने लगीं। तब अचानक उनको भगवान् बलराम के रास नृत्य के दर्शन हुए। अपनी गोपियों के संग अत्यंत निपुण भगवान् बलराम ने रासमण्डल में नृत्य, गान और अन्य लीलाओं का आनन्द लिया। उन लीलाओं के सौन्दर्य को निहारते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी परम आनन्द से भरकर अचेत हो गईं।

मृत-ब्राह्मण पुत्र को जीवित किया

कुछ क्षण बाद सचेत हो उन्होंने चारों दिशाओं में देखा। उन्होंने हृदय में जो उल्लसित प्रेम अनुभव किया, उसका वर्णन किसी अन्य ने नहीं किया। तब अपने पार्षदों के सान्निध्य में उन्होंने राम-घाट से प्रस्थान किया।

यमुना के तट पर एक गांव में प्रवेश करते हुए और वहाँ एक अत्यंत दुखी जीव को देख उन्हें दया आ गई। वहाँ उस गांव में एक विनम्र और विनीत ब्राह्मण निवास करता था। अपनी वृद्धावस्था में उसे एक मात्र अद्भुत पुत्र की प्राप्ति हुई। तब एक बालक के रूप में पौगण्ड आयु में उस पुत्र की मृत्यु हो गई। भूमि पर गिरकर ब्राह्मण रोने लगा। अपने मृत बालक को आलिंगन में भर कर माता भी रोने लगी। माता और पिता के रुदन ने मानो पाषाण और काष्ठ को भी पिघला दिया हो।

दम्पति का रुदन सुन श्रीमती जाह्नवा देवी का हृदय दया से पिघल गया। वे शांत न रह सकीं। वे उस मृत बालक का स्पर्श करना चाहती थीं। माता ने कहा, 'मेरे मृत पुत्र का स्पर्श मत करो।'

श्रीमती जाह्नवा देवी ने उत्तर दिया, 'तुम एक ब्रजवासी हो। तुम्हारे पुत्र को स्पर्श कर मैं पवित्र हो जाऊंगी।'

ऐसे शब्द कहने के बाद श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपना हाथ मृत बालक के मस्तक पर रख दिया। अचानक जीवित होकर बालक चारों दिशाओं में देखने लगा। श्रीमती जाह्नवा देवी के चरणकमलों में झुक कर प्रणाम करके दम्पति ने अपने बालक को उठा लिया। वहाँ हर कोई आनन्दित हो उठा। श्रीमती जाह्नवा देवी के चरणों में गिर कर ब्राह्मण और ब्राह्मणी ने कहा, 'आपकी करुणा दृष्टि से ही हमारे पुत्र के प्राण वापिस आए हैं।'

श्रीमती जाह्नवा देवी ने कहा, 'तुम्हारा दुःख देख कर भगवान् श्रीकृष्ण तुम्हारे पुत्र को वापिस लाए हैं। मैंने इसमें क्या किया?'

स्थान-स्थान पर श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपनी करुणा प्रकट की। तब अपने पार्षदों के संग श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीवृन्दावन में प्रवेश किया। खरदह में प्रभु के आदेश का स्मरण कर उन्होंने शीघ्र ही गौड़-देश लौटने का निश्चय

किया। एक दिवस वे श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह के दर्शन करने गईं। श्रीराधा-गोपीनाथ को निहारते हुए उनके सम्मुख खड़ी रह गईं।

प्रसन्नचित हृदय से उन्होंने कहा, 'अगर राधारानी थोड़ी लम्बी होतीं तो अच्छा होता।' उन्होंने यह विचार किसी को नहीं बताया। तब शयन आरती के दर्शन के बाद वे अपने निवास पर लौट आई।

श्रीराधागोपीनाथ का स्वप्नादेश

उस रात उनके स्वप्न में भगवान् श्रीगोपीनाथ, प्रकट हुए। मृदु वचनों में उन्होंने कहा, 'मेरी प्रिया मेरे बराबर अधिक लम्बी नहीं हैं। हमें निहारते हुए तुमने इस भिन्नता पर गौर किया। शीघ्र गौड़-देश लौट जाओ और मेरी प्रिया के श्रीविग्रह को बनवाओ और यहाँ प्रेषित करो। तुम उस श्रीविग्रह को ऐसे पाओगी जैसे ये मेरे बाँई ओर खड़ी हैं।' तब हंसते हुए श्रीराधारानी ने कहा, 'संकोच मत करो। मेरी भी यही इच्छा है।'

इस प्रकार के कई वचन बोलते हुए वह दिव्य युगल अचानक अन्तर्धान हो गया। श्रीमती जाह्नवा देवी का स्वप्न टूट गया। अति प्रसन्न होकर वे चारों दिशाओं में देखने लगीं। यह देखकर कि रात बीत चुकी है और सवेरा हो गया है, अति दयालुता से और आनन्दपूर्ण हृदय से उन्होंने नयन भास्कर से कहा, 'सदैव भगवान् श्रीगोपीनाथ का ध्यान करते हुए उनकी प्रिया का श्रीविग्रह बनाओ।'

उनके हृदय की कामना को जानकर नयन भास्कर ने उत्तर दिया, 'मैं श्रीविग्रह का निर्माण करूँगा।' उनका हृदय इस कार्य को करने हेतु अब संकल्पित था।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने इस वार्तालाप को गोपनीय रखा। उन्होंने किसी से भी श्रीगोपीनाथ के आदेश की बात प्रकट नहीं की। कोई भी भगवान् गोपीनाथ के चपल तरीकों को नहीं समझ सकता। स्वप्न के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने जाह्नवा देवी को पुष्पों की माला प्रदान की थी।

भविष्य में एक महान भक्त श्रीगोविन्द और श्रीमदन-मोहन के श्रीविग्रहों की अद्‌भुत लीलाओं का विस्तृत वर्णन करेंगी। तब गोस्वामी गणों ने श्रीमती जाह्नवा देवी के वापिस गौड़-देश लौटने का प्रबन्ध किया। 'श्रीमती जाह्नवा देवी शीघ्र बंगाल लौट जाऐंगी' यह समाचार सर्वत्र फैल गया।

विदाई की तैयारी

सभी वैष्णव, जहाँ भी निर्जन स्थान पर उनके निवास थे, वहाँ से आकर श्रीवृन्दावन में एकत्र हो गए। श्रीमती जाह्नवा देवी ने प्रत्येक से विदा ली। निकटस्थ प्रस्थान के बारे में विचार करते हुए वे हृदय से अधीर हो उठीं। जैसे

ही उन्होंने श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ और श्रीमदन-मोहन के श्रीविग्रह को निहारा, उनके नेत्रों से अश्रु बह निकले। श्रीराधा-विनोद, श्रीराधा-दामोदर और श्रीराधा-रमण के दर्शन कर वे भावपूर्वक अशांत हो गईं, इतनी अशांत कि वे रुक नहीं पाईं।

श्रीगोपेश्वर के श्रीविग्रह को निहारते हुए वे हृदय में श्रीवृन्दा-देवी और अन्य उत्कृष्ट भक्तों को स्मरण करने लगीं जिनसे अलग-अलग स्थानों पर भेंट हुई थी। चार भक्तों-श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी, श्री काशीश्वर पंडित, श्री सनातन गोस्वामी और श्री रूप गोस्वामी जो कि विद्वान् श्रेष्ठ थे, की समाधि के दर्शन कर वे रो पड़ीं। दु:ख से उनका हृदय बिखर सा गया। श्रीगौरीदास पंडित की समाधि का दर्शन कर श्रीमती जाह्नवा देवी के नेत्रों से अश्रुओं की बाढ़ सी आ गई, ऐसी बाढ़ जिस पर वे नियंत्रण न कर पाईं।

बड़े गंगादास

तब श्रीमती जाह्नवा देवी ने क्या अद्भुत देखा? उन्होंने पुन:-पुन: बड़े गंगा-दास से क्या शब्द कहे? बड़े गंगा-दास से चर्चा करते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी पुन: शांत हो गईं। यहाँ मैं बड़े गंगा-दास के बारे में कुछ बताऊँगा।

श्रीमती जाह्नवा देवी की माता का नाम भद्रवती था। भद्रवती, श्रीसूर्यदास की पावन और समर्पित पत्नी थी। भद्रवती की आध्यात्मिक गतिविधियों को देखते हुए हर कोई आश्चर्य से भर जाता था। बड़े गंगा-दास, भद्रवती की अग्रज बहन का पुत्र था और वह श्रीगौरीदास पंडित का स्नेही शिष्य था। जब श्रीगौरीदास पंडित विश्व से अन्तर्धान हुए, बड़े गंगा-दास को अपना जीवन अस्थिर प्रतीत होने लगा। एक स्वप्न में श्रीगौरीदास पंडित ने आदेश दिया कि, 'तत्क्षण श्रीवृन्दावन जाओ।'

श्रीवृन्दावन में धीर-समीर पहुँच कर बड़े गंगा दास एक निर्जन स्थान पर रहे। वहाँ उन्होंने आनन्दपूर्वक अपने दीक्षा गुरु की सेवा की। वे गोवर्धन और अन्य पवित्र स्थलों पर गए। तब उन्हें श्रीमती जाह्नवा देवी के अप्रत्याशित आगमन का ज्ञान हुआ।

श्रीवृन्दावन जाते हुए बड़े गंगा दास ने श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन किए। इस प्रकार मैंने संक्षेप में बड़े गंगा दास की कथा का वर्णन किया। जैसे ही श्रीमती जाह्नवा देवी सभी से विदा ले रही थीं, किसी ने उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी प्रिया श्री राधा के श्रीविग्रह भेंट किए। अत्यधिक आनन्दित हृदय से श्रीमती जाह्नवा देवी ने भेंट स्वीकार की। तब उन्होंने बड़े गंगा दास को श्रीविग्रहों की सेवा में नियुक्त कर दिया।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने बड़े गंगा दास पर असीम अनुकम्पा बरसाई। उन्होंने उन्हें बताया, 'तुम मेरे साथ आओगे।'

जब रात्रि समाप्त हुई और सवेरा हुआ, सभी भक्त उदास हो गए। अपने कुछ गुरु भाईयों के सान्निध्य में श्रीगोविन्द कविराज आदर सहित गोस्वामी गणों के पास गए। पुनः-पुनः उन्होंने गोस्वामी गणों के चरणकमलों में प्रणाम किया। उनसे विदा लेते हुए उनके नेत्रों में अश्रुओं की बाढ़ सी आ गई।

श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने गोविन्द का आलिंगन किया। जो शब्द श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी ने उस समय कहे, उसे सुनकर कौन सा व्यक्ति शांत रह सकता है? श्रीलोकनाथ गोस्वामी, गोविन्द के प्रति अति स्नेही थे। विनम्रता से उन्होंने गोविन्द से श्रीनरोत्तम दास को कहने को कहा, 'सावधानीपूर्वक श्रीविग्रहों की सेवा करो। तन मन और वचनों से वैष्णवजनों का सावधानीपूर्वक सत्कार करो। भगवान् विष्णु और वैष्णव जनों की सेवा कर सावधानीपूर्वक पावन दिवसों का पालन करो। श्रीरामचन्द्र और अन्य भक्तों के सान्निध्य में आध्यात्मिक सेवाओं के अमृत का पान करो।'

'ये सब श्रीनिवास को भी बताओ' ऐसा कहने के पश्चात् श्रीलोकनाथ गोस्वामी में एक शब्द भी कहने की सामर्थ्य नहीं थी। श्रीभूगर्भ गोस्वामी ने गोविन्द को श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास से क्या कहने को कहा, इसका वर्णन करने की मुझ में सामर्थ्य नहीं।

श्री जीव गोस्वामी ने स्नेहपूर्वक गोविन्द से कहा, 'इससे अधिक मैं और क्या कहूँ? कृपया सभी से कहना कि मैंने सबको स्नेहमय आलिंगन दिया है।'

श्रीकृष्णदास कविराज, भगवान् कविराज और अन्य भक्तों ने स्नेहवश गोविन्द का आलिंगन किया और उन सबका समय कुछ-कुछ उदासी में व्यतीत हुआ। प्रातःकाल सभी ने श्रीमती जाह्नवा देवी से भेंट की और विरह के समय अपना खेद व्यक्त किया। इस प्रकार श्रीमती जाह्नवा देवी ने अनेक उच्चकोटि भक्त जनों के संग बंगाल की यात्रा आरम्भ की।

जब वे अक्रूर के स्थान पर पहुँचे तो श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीवृन्दावन के भक्तजनों को वापिस घर लौटने का कहते हुए, आगे साथ चलने से मना कर दिया। नेत्रों में अश्रु भरकर श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी और अन्य भक्तों ने विदा ली। श्रीजीव गोस्वामी और उनके कुछ पार्षदों ने श्रीमती जाह्नवा देवी का मथुरा तक साथ छोड़ने से मना कर दिया। वहाँ उन्होंने एक दिवस विश्राम किया।

अंततः श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीजीव गोस्वामी को मथुरा से विदा किया और बंगाल के लिए चल पड़ीं।

खेतुड़ी पहुंची

कुछ दिवस पश्चात् वे गौड़-देश पहुँचीं और सीधा खेतुड़ी गईं। श्रीरामचन्द्र कविराज, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और अन्य भक्त प्रसन्नतापूर्वक उनकी अगवानी करने आए। वे श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षदों के सम्मुख प्रणाम स्वरूप

भूमि पर दण्डवत् लेट गए। श्री संतोष दत्त, श्रीरामचन्द्र कविराज, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और अन्य ऐसे ही भक्त श्रीगोविन्द कविराज के चरणों में प्रणाम करने झुके।

अनेक उच्चकोटि के भक्तों से घिरी श्रीमती जाह्नवा देवी ने खेतुड़ी में प्रवेश किया। यह दल सर्वप्रथम श्री गौरांग के मन्दिर के प्रांगण में गया। श्रीचैतन्य महाप्रभु को देखकर प्रत्येक का हृदय शांत हो गया। तत्पश्चात् प्रत्येक भक्त अपने-अपने नियत आवास पर पहुँच गए जिसका प्रबन्ध श्रीनरोत्तम दास द्वारा किया गया था।

श्री संतोष राय ने प्रत्येक पधारने वाले भक्तों के लिए आवश्यक सामान और उनकी देखभाल के लिए असंख्य सेवकों की व्यवस्था की। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने अतिथियों से शीघ्रता से स्नान करके और अन्य निजी कार्यों को पूर्ण करने का निवेदन किया। संतोष के पास उनके लिए कुछ था।

राजा संतोष की सेवा

श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षदों ने स्नान किया और आनन्दित हो गए। तब सन्तोष ने प्रत्येक भक्त को नवीन वस्त्र प्रदान किए जो कि अभी-अभी धोकर सुखाए गए थे। पधारने वाले सभी भक्तों ने आनन्दपूर्वक नवीन वस्त्र ग्रहण किए तत्पश्चात स्वयं के तन को तिलक से शोभित किया। श्रीमती जाह्नवा देवी ने एक निजी स्थान पर स्नान किया और उनकी सेविका उनके लिए संतोष से नवीन वस्त्र लेकर आईं।

संतोष दत्त अति सौभाग्यशाली अनुभव कर रहे थे क्योंकि श्रीमती जाह्नवा देवी ने उनसे नवीन वस्त्र स्वीकार कर लिए थे। श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज तब उनके साथ श्यामा राय मन्दिर जाने के लिए श्रीमती जाह्नवा देवी के स्थान पर आए। बलु दास ने श्यामा राय की अपनी सेवा पूर्ण की और तब श्रीमती जाह्नवा देवी से भेंट करने गए।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्यामा राय के सौन्दर्य के दीर्घकाल तक दर्शन किए और तब श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज के साथ वापिस निवास पर लौट आईं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के पुजारी विभिन्न प्रकार के महा-प्रसाद उनके लिए लाए और श्रीमती जाह्नवा देवी ने पहले अपने पार्षदों को परोसा और बाद में स्वयं कुछ पाया।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने वे सभी घटनाऐं जो श्रीवृन्दावन में घटित हुईं, उनका वर्णन श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज से किया। उन्होंने उनसे बंगाल के भक्तों के बारे में कुशलक्षेम पूछा। यद्यपि श्रीनरोत्तम दास उनके प्रश्न का

उत्तर नहीं दे सके- वे केवल रो दिए। श्रीरामचन्द्र कविराज ने तब समझाया कि कैसे कम समय में श्रीचैतन्य महाप्रभु के कुछ प्रिय शिष्य इस विश्व से अन्तर्धान हो गए हैं। जो शेष रह गए, उन्होंने स्वयं को एकांत में रमा लिया है।

छः प्रहर संकीर्तन

श्रीमती जाह्नवा देवी ने अधीरतापूर्वक टिप्पणी की कि यदि यह खेतुड़ी की अवस्था है तो निश्चित ही यही सम्पूर्ण बंगाल की भी दशा होगी। क्या प्रभु विश्व को अंधकार में डुबाना चाहते हैं? ऐसा सोचते हुए वे उदासी से रो पड़ीं।

सायंकाल वैष्णव श्रीगौरांग मन्दिर के प्रागंण में सन्ध्या-आरती के लिए एकत्र हो गए। जब संकीर्तन आरम्भ हुआ तो भक्तजनों का दु:ख किसी प्रकार कुछ कम हो गया। उन्होंने रात्रि का 1/6 पहर संकीर्तन करते हुए व्यतीत किया और तब अपने-अपने निवास पर लौट आए।

श्रीरामचन्द्र कविराज पधारने वाले भक्तजनों के लिए महा-प्रसाद लाए और यद्यपि उन्हें भूख नहीं थी फिर भी उन्होंने आनन्दपूर्वक उसे ग्रहण किया। जाह्नवा देवी ने एक गिलास दूध ग्रहण किया। वे सब विशाल यात्रा के कारण परिश्रांत हो गए थे, इस कारण उस रात्रि वे सभी शयन करने चले गए।

श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज अपने निवास पर लौट आए और श्रीगोविन्द कविराज ने अवसर का लाभ उठाया और श्रीवृन्दावन के गोस्वामी गणों का सन्देश जो श्रीनरोत्तम दास के लिए था वह प्रसारित कर दिया।

श्रीनरोत्तम दास ने इसके पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी की श्रीवृन्दावन यात्रा से सम्बन्धित घटनाओं का एक पत्र खरदह और याजिग्राम भेजा।

श्रीमती जाह्नवा देवी तीन अथवा चार दिवस खेतुड़ी में रहीं। श्रीगोविन्द कविराज और उनके कुछ अन्य पार्षद तेलिया भुदरी गए, क्योंकि श्रीमती जाह्नवा देवी की श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज के संग अगली प्रातः वहाँ जाने की योजना थी।

अपने दैनिक नित्यकर्म से निवृत्त हो श्रीमती जाह्नवा देवी, श्री गौरांग मन्दिर के प्रांगण में गईं और श्रीचैतन्य महाप्रभु के संग वल्लभी-कान्त के श्रीविग्रहों के दर्शन किए और प्रणाम किया। प्रभु के पार्षद जो उनके संग आए थे, उन्होंने श्रीविग्रहों से विदा ली। श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज ने निर्देश दिए कि उनकी अनुपस्थिति में कौन श्रीविग्रहों की सेवा करेगा। श्री सन्तोष, श्रीमती जाह्नवा देवी के लिए अनेक भेंट लेकर आए इसके पश्चात् जाह्नवा देवी ने खेतुड़ी और पद्मावती के तट से प्रस्थान किया।

तेलिया बुधरी आगमन

श्रीमती जाह्नवा देवी ने नदी पार की और तेलिया बुधरी से उनकी अगवानी करने आए अपार जन समुदाय से भेंट की। उन्होंने स्नेहवश सबको आशीर्वाद प्रदान किया और अपने निवास पर गईं। वंशीदास और अन्यों ने स्वयं को गृह के कामों में व्यस्त कर लिया। जाह्नना देवी ने मुस्कुराते हुए श्री वंशीदास के भ्राता श्री श्यामादास चक्रवर्ती से कहा कि उनकी एक कामनापूर्ण करनी होगी। श्यामादास ने कोई उत्तर नहीं दिया परन्तु तत्क्षण प्रस्थान किया और अपने निवास पर लौट आए। वे एक साधारण मनुष्य थे और वे श्रीमती जाह्नवा देवी के कथन पर चिंतन करने लगे। वे आश्चर्यचकित थे कि उनमें उनकी कामना पूर्ति करने की क्या योग्यता है। वे इस विकट परिस्थिति का चिंतन करते हुए गहरी निद्रा में सो गए और अपने स्वप्न में उन्हें अपनी पुत्री का विवाह बड़े गंगादास से करने का निर्देश प्राप्त हुआ। अपने स्वप्न में उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकृति प्रदान कर दी और वैष्णव जनों ने इस कारण उनकी बहुत प्रशंसा की। जब वे जागे तो श्रीश्यामादास इतने व्यग्र थे कि यद्यपि यह बहुत सवेरा था, फिर भी वे तत्क्षण श्रीमती जाह्नवा देवी के दर्शन करने गए और उन्हें स्वप्न में जो घटित हुआ था, सब बता दिया।

बड़े गंगादास का विवाह

श्रीमती जाह्नवा माता अति प्रसन्न थीं और उन्होंने तत्क्षण विवाह की जिम्मेदारी ले ली। श्रीजाह्नवा देवी ने गंगादास को बुलाया और बताया कि उन्हें श्रीश्यामदास की पुत्री से विवाह करना चाहिए। उन्होंने बताया कि सभी प्रबन्ध कर लिए गए हैं, उसी दिवस उन्हें बेहिचक विवाह कर लेना चाहिए। गंगादास की विवाह की कोई इच्छा नहीं थी फिर भी वे श्रीमती जाह्नवा देवी के आदेश की अवमाना नहीं कर सकते थे, इस कारण वे अति अशान्त हो गए।

श्रीश्यामदास चक्रवर्ती की पुत्री हेमलता एक मृदु स्वभाव और गौर वर्ण की कन्या थी। बड़े गंगादास जो कि एक महान भक्त थे, देखने में प्रभावान व सुन्दर व्यक्ति थे। उसी दिवस उन्होंने हेमलता से विवाह रचाया। विवाह के पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्री श्यामराय के श्रीविग्रह की परिचर्या गंगादास को सौंप दी परन्तु गंगादास पुनः अधीर हो उठे क्योंकि वे नहीं जानते थे कि श्रीविग्रह के निवेदन के लिए भोग की व्यवस्था कैसे करेंगे। प्रभु श्यामराय तब स्वयं गंगादास के स्वप्न में प्रकट हुए और उन्हें आश्वस्त किया कि जो कुछ भी उनके भक्त उनके लिए व्यवस्था करेंगे, वे उसे स्वीकार कर लेंगे।

एकचक्रा-प्रस्थान

श्रीगंगादास ने श्रीमती जाह्नवा देवी को अपने स्वप्न के बारे में बताया और तब प्रसन्नतापूर्वक प्रभु के लिए भोग राग की व्यवस्था की। इस प्रकार बड़े गंगादास ने स्वयं को श्रीश्यामराय प्रभु की सेवा में समर्पित कर दिया।

विवाह के पश्चात् श्रीमती जाह्नवा देवी, श्रीनरोत्तम दास, श्रीरामचन्द्र कविराज और श्रीगोविन्द कविराज ने तेलिया बुधरी से प्रस्थान किया और राढ़-देश में एकचक्रा की ओर चले गए। जब श्रीमती जाह्नवा देवी ने दूर से एकचक्र को देखा तो वे भाव आवेशित हो गईं। यहाँ तक कि श्रीकृष्णदास सरखेल, श्रीगौरांग सुन्दर, श्रीमाधव आचार्य, श्रीबलराम, श्रीमहीधर, श्रीमुरारी चैतन्य, श्रीनृसिंह, श्री कनाई, श्रीदामोदर, श्रीरघुपति वैद्य, उपाध्याय मनोहर, श्री परमेश्वरी दास, श्री नकरी दास, श्री मुकुन्द और अन्य भक्त अति भावपूर्ण हो रोने लगे। जिस मार्ग से तीर्थ यात्री यात्रा करते वह बरगद के वृक्षों से आच्छादित था और वृक्षों से गुजरने वाली शीतल पवन का झोंका यात्रियों की थकावट दूर कर रहा था। जैसे ही वे इस सुन्दर मार्ग से गुजरे, श्रीमती जाह्नवा देवी और अन्य लोगों ने अचानक अत्यंत प्रसन्नता अनुभव की परन्तु वे समझ न सके कि ऐसा क्यों हुआ।

एकचक्रा आगमन

अत्यंत प्रसन्नचित भाव से श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षदों ने एकचक्रा के मार्ग में एक ब्राह्मण से भेंट की। वे अति वृद्ध थे और एक छड़ी के सहारे चल रहे थे। वे धीमे से यात्रियों के पास गए और इधर-उधर देखते हुए, आश्चर्यचकित होते हुए कि ये यब वैष्णव कहाँ से आए हैं, एक वृक्ष के नीचे प्रतीक्षा करने लगे, यद्यपि उन्होंने उनसे कुछ नहीं पूछा। वैष्णव जनों ने ब्राह्मण को प्रणाम किया और वृक्ष के नीचे अपने स्थान पर बैठने को कहा।

उन्होंने विनम्रता पूर्वक उनसे पूछा कि क्यों एकचक्रा खंडहर प्रतीत होता है, यद्यपि उन्होंने सुन रखा था कि कभी यह एक विशाल नगर था। क्षय का क्या कारण था?

एकचक्रा में पाण्डव

ब्राह्मण ने समझाया कि वास्तव में यह सत्य था कि एकचक्रा दीर्घकाल से एक विख्यात स्थान था। यह असल में कुछ समय के लिए **पांडवों का निवास** स्थान रहा था, और उन्होंने यहाँ अनेक राक्षसों का वध किया था। यहाँ के अनेक मन्दिरों और श्रीविग्रहों के कारण यह स्थान तीर्थ के लिए भी विख्यात स्थान बन गया। पार्वती के संग एकचक्रा शिव का मन्दिर और अन्य श्रीविग्रह जैसे गणेश

जी का मन्दिर आदि वहाँ थे और उनकी आराधना की जाती थी परन्तु कलि के प्रभाव स्वरूप वे सब नदी के भीतर समा गए।

पूर्वकाल में नदी बहुत चौड़ी थी और दोनों छोर पर वृक्ष, पेड़-पौधे और पुष्पित लताओं से पंक्तिबद्ध थे। वहाँ असंख्य मधुमक्खियां, तितलियां और अनेक प्रकार के गायन करने वाले पक्षी और साथ ही अहिंसक पशु भी वन में थे। कोई नहीं जानता था कि वास्तविक रूप से एकचक्रा गांव को किसने स्थापित किया था परन्तु इसकी परिसीमा में हिन्दू समाज के चारों वर्ण शान्तिपूर्वक रहते थे।

पूर्व में गांव में धनवान व्यक्ति निवास करते थे जिन्हें धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान था। वहाँ शास्त्रों के असंख्य ज्ञाता थे जो वहाँ विद्या अर्जन करते और पढ़ाते थे। इन विद्वान् जनों में एक महान ज्योतिषी थे जिन्होंने यह भविष्यवाणी की थी कि एकचक्रा स्वयं भगवान् का निवास होगा क्योंकि भगवान् बलराम यहाँ प्रकट होंगे। ज्योतिषी विलाप करने लगा कि उसका स्वयं का जीवन अत्यन्त अल्प होगा तो वह भगवान् के प्राकट्य के दर्शन नहीं कर पाएगा। अन्य अनेक ज्योतिषियों ने उनके साक्ष्यों की जांच की और उनके निष्कर्ष से सहमत थे।

श्रीनित्यानंद प्रभु के पूर्वज

एकचक्रा में एक पवित्र ब्राह्मण रहते थे जो कि अपनी उपाधि 'ओझा' के कारण विख्यात थे। वे एक धनी व्यक्ति थे एवं वे अपने यजमानों से स्नेह करते थे उनकी पत्नी एक मृदु स्वभाव की महिला थी पुत्रवती होते हुए भी वे दुखी रहती थी उनके अनेक पुत्र हुए लेकिन जीवित नहीं बचे।

अन्त में एक पुत्र का जन्म हुआ और उस अपने एकमात्र पुत्र को पार्वती-शंकर की अनुकम्पा में समर्पित कर दिया। उन्होंने और उनकी पत्नी ने सावधानीपूर्वक अपने पुत्र के भाग्य पर विचार किया और असंतोष से परे उसका नाम हाड़ो (हाड़ाई पंडित) रखा। तथापि गांव के अन्य लोगों ने बालक के अनेक मधुर उपनाम रखे और प्रायः उनके दर्शन करने ओझा के निवास पर जाते थे। दिवस-प्रतिदिवस बालक बड़ा होते-होते एक सुन्दर युवा में परिणत हो गया।

जिस काल में हिन्दू बालक प्रथम बार चावल का आहार पाता है, ब्राह्मण ने उस अन्नप्राशन संस्कार के साथ-साथ बालक के बड़ा होते-होते तक अन्य सामाजिक उत्सवों का आयोजन किया। जब बालक के विवाह का समय हुआ, उनके पिता ने पड़ोस के गांव से एक कन्या को चुना। दुल्हन का नाम पद्मावती था और वह हर प्रकार से दूल्हे के समान थी। विवाह के कुछ दिवस पश्चात् ओझा और उनकी पत्नी ने संसार त्याग दिया। हाड़ो अपने माता पिता की अनुपस्थिति के कारण दुःख से भर उठे और उन्होंने उनके दाह संस्कार पर

अत्यधिक धन खर्च किया। हाड़ो ओझा सभी शास्त्रों में विद्वान् हो गए और फलतः **हाड़ाई पंडित** की उपाधि प्राप्त कर विख्यात हो गए। वे एक धर्मनिष्ठ वैष्णव थे और विष्णु-भक्ति-तत्व के विद्वान् थे। उनकी पत्नी भी एक समर्पित वैष्णवी थीं और श्री विष्णु की निष्कपट आराधना करने के कारण गांववासी उन दम्पति का सम्मान करने उनके पास आते थे।

श्रीनित्यानंद प्रभु का जन्म

हाड़ाई पंडित ने जब यह सुना कि उनकी पत्नी गर्भवती है तो वे अति प्रसन्न हुए। उनकी पत्नी ने एक शुभ दिवस पर एक अति सुन्दर बालक को जन्म दिया। गांव की भक्ति भाव वाली महिलाएं बालक को देखने आईं और उन्हें आशीर्वाद दिया। प्रत्येक महिला ने बालक के बारे में भिन्न विचार रखा। एक महिला ने पूछा कि क्या ये बालक है या स्वर्णिम माखन से निर्मित कोई गुड़िया। एक अन्य महिला ने टिप्पणी की कि उन्होंने कभी ऐसे बालक के दर्शन नहीं किये थे जो चित्त और नेत्र, दोनों को शान्ति प्रदान करें।

हर दिवस अपार जन समुदाय हाड़ाई पंडित के निवास पर एकत्र होता और वे बालक की कुशलक्षेम के लिए दरिद्र जनों में धन वितरण करते एवं अन्य अनेक प्रकार की धर्मार्थ सेवाऐं करते थे। हाड़ाई पंडित का बालक वर्धन करते हुए चन्द्रमा के समान बढ़ने लगा और अपने माता पिता के आनन्द का केन्द्र बना रहा। उनकी माता उन्हें अत्यधिक स्नेह करती थीं और उन्हें कभी अपनी गोद से नीचे ही नहीं उतारती थी।

बालक के नामकरण संस्कार के समय, किसी ने नाम सुझाया राम और किसी अन्य ने सुझाया नित्यानन्द।

वे भूमि पर घुटुरवन चलने लायक बड़े हो गए, लोग अनायास ही उन्हें निताई कह कर पुकारने लगे और उन्हें अपनी गोद में उठाना चाहते थे। लोग उनकी मृदु मुस्कान और छोटे-छोटे दांत जो कि दूध की बूँदों की भांति प्रतीत होते थे, उनके प्रति आकर्षित थे।

नित्यानन्द एकचक्रा के सभी लोगों के जीवन का केन्द्र बन गए थे। वृद्ध ब्राह्मण ने श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षदों से कथा कहना अनवरत रखा। उन्होंने कहा कि एक दिवस वे कुछ कारणों से व्याकुल थे तो वे मात्र निताई के दर्शन करने के लिए हाड़ाई के निवास पर गए। जब उन्होंने निताई को गोद में उठाया तो उनके सब कष्ट तिरोहित हो गए। हाड़ाई पंडित का अपने पुत्र के प्रति असीम स्नेह था और वे कभी उनसे दूर नहीं जाते थे।

एक बार वे एक यजमान के घर गए परन्तु तत्क्षण नित्यानन्द के दर्शन करने घर वापिस लौट आए। उनकी माता हल्दी उनके तन पर पोत देती ताकि उनका रंगरूप चमकदार हो जाए परन्तु हल्दी नित्यानन्द के रंगरूप के सामने

फीकी प्रतीत होती थी। वे उनके मस्तक को शीतल करने के लिए सुगन्धित तेल लगा देती। परन्तु उनका तन शीतलतम था और तेल से अधिक मधुर अंगकान्ति थी। अपने पुत्र को स्नान करवाने के बाद उनकी माता कोमल वस्त्र से उनका मार्जन करती। तब वे उन्हें रेशमी वस्त्र पहनातीं और उन्हें घर में खेलने का सुझाव देतीं। यद्यपि नित्यानन्द प्रसन्नतापूर्वक उनसे पूछते कि वे किस के साथ खेलें क्योंकि उनका कोई मित्र नहीं।

श्रीनित्यानन्द का खेल - लीलाभिनय

उस समय अनेक बालक नित्यानन्द के निवास पर उनके साथ खेलने आ जाते। नित्यानन्द एक अति सरल बालक थे। धीरे-धीरे वे दस वर्ष के हो गए और वे अपने मित्रों के साथ केवल वही खेल खेलते जो भगवान् श्रीकृष्ण अपने मित्रों के साथ खेलते थे। वे एक प्रकार का विशेष खेल का चयन करते और फिर उसे अपने मित्रों को सिखाते थे। उदाहरण के लिए कभी-कभी वे एक लीला-अभिनय को दोहराते जैसे कि भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म। बालक एक जेल का निर्माण करते और जैसे श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था उन सभी घटनाओं का अभिनय करते जैसे कि श्रीकृष्ण का नन्द बाबा के यहाँ रहने के लिए गोकुल जाना। नित्यानन्द अन्य लीलाओं जैसे नन्द के घर श्रीकृष्ण का जन्म, माँ यशोदा का कृष्ण के प्रति स्नेह, पूतना वध, छकड़ा गाड़ी को तोड़ना और तृणावर्त का वध जैसी अनेक लीलाओं का अभिनय किया करते।

कभी-कभी श्रीनित्यानन्द उन लीलाओं का अभिनय करना पसंद करते जहाँ माँ यशोदा ने श्रीकृष्ण को ऊखल से बाँधा था और बाद में यमलार्जुन वृक्षों को श्रीकृष्ण ने जड़ से उखाड़ दिया था। अपनी प्रत्येक लीला के प्रदर्शन के अन्तर्गत नित्यानन्द भिन्न-भिन्न प्रकार के वस्त्रों की पोशाक धारण करते और वैसे खेलते जैसे श्रीकृष्ण गोकुल में खेलते थे। वे अपने मित्रों को अघा और बका का अभिनय करने को कहते और फिर कृष्ण की तरह उपहासपूर्वक उनका वध कर देते। वे एक सर्प आकार की आकृति बनाते और उसे जल में फैंक देते ताकि वे कालिय-दमन लीला को दोहरा सकें। कृष्ण की तरह ही कभी नित्यानन्द चराई मैदान में धेनुकासुर और प्रलम्बासुर का वध कर देते। वे चराई मैदान में खेलते, कभी-कभी अरिष्टासुर जैसे राक्षस का वध करते और कभी गोवर्धन पर्वत उठाकर ब्रज की रक्षा करते।

कभी-कभी बालक गोपियों के वस्त्र हरण की लीला को दोहराते और कभी कंस का वध करने का नाटक करते। यद्यपि जब वे श्रीकृष्ण के ब्रज छोड़कर जाने की लीला का अभिनय करते जहाँ गोपियाँ व्याकुल होकर विलाप करती थीं तो नित्यानन्द भी निराशापूर्वक रोने लगते। उन्होंने श्रीकृष्ण की अनेक मथुरा लीलाओं का भी अभिनय किया।

कभी-कभी नित्यानन्द अपने मित्रों को श्रीरामचन्द्र की लीलाऐं सिखाते थे। अपने अभिनय के लिए वे उन घटनाओं और स्थान की बिलकुल वैसी ही रूप वाली वस्तुऐं एकत्र करते थे जैसे कि वाल्मीकि जी ने अपने ग्रन्थ रामायण में वर्णित की थीं।

श्रीनित्यानन्द ने वामन भगवान् का अभिनय भी किया जो भगवान् विष्णु के अवतार थे जिन्होंने बलि को छला था। उन्होंने नृसिंह का अभिनय भी किया और नाटकीय रूप से हिरण्यकशिपु का वध भी किया। जो भी लीलाऐं भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने भक्तजनों की प्रसन्नता के लिए रचीं, वही पद्मावती के पुत्र श्रीनित्यानन्द द्वारा भी रची गईं जो वे अपने गांव के मित्रों के साथ खेलते।

एकचक्रा गांव के बालक, नित्यानन्द के संग रहना पसन्द करते थे और एक क्षण के लिए भी उनसे दूर नहीं होते थे। एकचक्रा के माता-पिता कभी अपने बालकों को नित्यानन्द का संग करने के लिए मना नहीं करते। बल्कि वे अपने बालकों को आभूषणों से सुशोभित करते और नित्यानन्द के उत्तमोत्तम नाटकों में भाग लेने के लिए प्रेरित भी करते।

यज्ञोपवीत संस्कार के समय नित्यानन्द यद्यपि अपनी किशोर अवस्था में प्रवेश ही कर रहे थे तथापि गांव के लोग उनके असाधारण सौन्दर्य का दर्शन कर मन्त्र मुग्ध होने लगे थे।

विद्वान् बन गये प्रभु

अपने बाल्यकाल में वे शास्त्रों और व्याकरण के विद्वान् बन गए और जब वे बारह वर्ष के थे तभी वे पंद्रह वर्ष के बालक के समान लगते थे। इस कारण हाड़ाई पंडित ने उनके लिए अधीरतापूर्वक कन्या खोजनी आरम्भ कर दी। ब्राह्मण भद्र पुरुष इस विचार से सहमत हो गए और किसी ने एक भले ब्राह्मण परिवार से दुल्हन का चयन करने की जिम्मेदारी ले ली। दुर्भाग्य से उनमें से कोई भविष्य के बारे में नहीं जानता था।

संन्यासी के साथ प्रस्थान

एक दिवस एक यात्री गोस्वामी अतिथि के रूप में श्रीहाड़ाई पंडित के निवास पर आए। हाड़ाई पंडित ने उन्हें भिक्षा दी और श्रीकृष्ण चर्चा करते हुए उन्होंने एक साथ रात्रि व्यतीत की। विदा होने के समय संन्यासी ने हाड़ाई पंडित से नित्यानन्द को उन्हें देने को कहा। हाड़ाई पंडित ये सोचते हुए कि इस निवेदन के पीछे कोई दिव्य योजना होगी उन्हें नित्यानन्द को देकर आभारी हुए।

जब संन्यासी ने नित्यानन्द के साथ प्रस्थान किया, हाड़ाई पंडित एक मृत व्यक्ति की भांति अचेत हो भूमि पर जा गिरे। यहाँ तक कि एकचक्रा के लोगों ने भी जब यह समाचार सुना तो मानों निष्प्राण हो गए। नित्यानन्द के मित्र शोक

विह्वल होकर भूमि पर जा गिरे और सम्पूर्ण गांव दुःख के कारण प्राणरहित हो गया। लोग हाड़ाई पंडित के आवास पर एकत्र हो गए और पंडित और उनकी पत्नी को सचेत करने का प्रयास करने लगे। यद्यपि सचेत होने पर श्रीनित्यानन्द के माता-पिता, नित्यानन्द का नाम पुकार कर रोने लगे। उनके प्रचुर अश्रुओं से तो मानों पाषाण भी पिघल सकते थे।

नित्यानन्द के कनिष्ठ भ्राता भी यह जानने कि लिए कि संन्यासी उन्हें अपने साथ क्यों नहीं ले गए, विलाप करने लगे। और उनका शरीर अकड़कर भूमि पर गिर गया। ईश्वर की इच्छा से उनके प्राण पखेरू उड़ गये। एक ब्राह्मण अधीरतापूर्वक एकत्र जन समुदाय से पूछने लगे कि संन्यासी उन्हें किस दिशा में ले गया है। वे उन्हें पकड़ेंगे और संन्यासी के चरणों में गिर कर निताई को मुक्त करने की प्रार्थना करेंगे। आखिरकार बालक भोजन पकाना और अन्य क्रियाओं को करने के बारे में नहीं जानता है। ब्राह्मण ने कहा कि वे उन्हें अपना बालक निवेदन कर देंगे, जो हर प्रकार की सेवा विधि जानता है और इस प्रकार वे नित्यानन्द को वापिस ले आऐंगे। लोगों ने सभी दिशाओं में संन्यासी को खोजा परन्तु वे कहीं नहीं मिले।

तब एकचक्रा के ज्योतिषी एक एकांत स्थान पर एकत्र हुए। उस ज्योतिषी की भविष्यवाणी की चर्चा करने लगे जिसने भविष्यवाणी की थी कि श्रीबलराम प्रभु एकचक्रा में प्रकट होंगे।

उन्हें अति विलम्ब से अनुभूति हुई कि भविष्यवाणी तभी पूर्ण हो गई थी जब श्रीनित्यानन्द का हाड़ाई पंडित के निवास पर जन्म हुआ था।

'नित्यानन्द के जन्म के समय सभी प्रकार के दुर्भाग्य विलुप्त हो गए थे।' एक व्यक्ति ने कहा। 'यहाँ कोई अकाल नहीं था। लोग प्रसन्न थे, और यहाँ पर्याप्त वर्षा होती थी। अब मैं समझा कि निताई के जन्म पर आकाश से पुष्प वर्षा क्यों हुई' किसी अन्य व्यक्ति ने कहा।

बलराम आवेश

किसी ने कहा,'केवल एक भगवान् ही इतनी दिव्य सुन्दरता धारण कर सकते हैं।' एक भद्र पुरुष ने कहा,'मैंने कभी ऐसे खेल नहीं देखे जो निताई अपने मित्रों के संग खेला करते थे।' 'मैंने एक बार निताई को संन्यासी के रूप में देखा। उन्होंने केसरिया धोती धारण कर रखी थी और एक हाथ में डण्डा और दूसरे हाथ में कमण्डल धारण कर रखा था। सब बालकों ने वैष्णव वस्त्र धारण कर रखे थे और वे आनन्दपूर्वक निताई को बीच में पधरा कर नृत्य कर रहे थे। अब नित्यानन्द ने उस नाटक को वास्तविक बना दिया था।'

'ओह, मैं एक अयोग्य व्यक्ति हूँ।' अन्य ग्रामवासी विलाप करने लगे। 'मैं कैसे जान सकता हूँ कि श्रीरोहिणी-नन्दन और श्रीनित्यानन्द एक ही व्यक्ति हैं।'

'मुझ में प्रभु की लीला इच्छा समझने की सामर्थ्य नहीं है।' एक अन्य व्यक्ति सांत्वना देने लगा। 'संन्यासी का आना, प्रभु के गृह त्यागने का बहाना मात्र था। जैसे कि श्रीबलराम जी पैदल पवित्र स्थलों की यात्रा पर गए, श्रीनित्यानन्द भी तीर्थ यात्रा पर जाऐंगे।'

'परन्तु यह उपयुक्त व्यवहार नहीं था।' किसी अन्य ने आलोचना भी की कि जब श्रीनित्यानन्द के माता-पिता अभी जीवित हैं तो उन्हें नहीं जाना चाहिए था।'

ऐसा कहकर दीन-हीन व्यक्ति उच्चस्वर में श्रीनित्यानन्द का नाम लेकर फूट-फूट कर रोने लगा। एकचक्रा के निवासी प्रायः हाड़ाई पंडित और उनकी पत्नी को सांत्वना देने उनके निवास पर जाते थे। श्रीनित्यानन्द के विदा होने के बाद तीन मास बीत गए और अभी तक हाड़ाई पंडित और उनकी पत्नी ने अन्न का एक दाना तक नहीं पाया था। वे निरंतर रुदन करने के कारण और उच्चस्वर में नित्यानन्द का नाम पुकारने के कारण वास्तव में विक्षिप्त हो चुके थे। गांव वासी ही उन्हें भोजन पवाते थे परन्तु वे जीवन धारणकर अपना कष्ट बढ़ा रहे थे।

विक्षिप्त अवस्था में हाड़ाई, निताई को आकर उनकी गोद में बैठने के लिए पुकारते क्योंकि उन्होंने उन्हें दीर्घकाल से नहीं देखा था। कभी वे निताई को अपने साथ तालाब में स्नान करने के लिए पुकारते। तब वे अपने पुत्र को उनके सम्मुख ऐसे चलने के लिए पुकारते जैसे वे खेत में धान के पकने का निरीक्षण करने के लिए चलते थे। तब वे निताई को उनके संग नवीन वस्त्र और अन्य सामान खरीदने कि लिए पुकारते थे। वे अपने पुत्र को आकर भगवान् विष्णु का प्रसाद पाने के लिए यह कहकर पुकारते कि उनकी माँ प्रतीक्षा कर रही थीं। अथवा वे निताई को पंडित के अन्य अनुचरों के साथ शास्त्रों के वाद-विवाद में प्रतिभागिता करने के लिए कहते थे। कभी-कभी वे अपनी पत्नी को अति अधीरता से पुकारते थे कि वे आऐं और देखें कैसे नित्यानन्द मार्ग पर चलकर आ रहे हैं। वे कल्पना करते थे कि संन्यासी दयालुतापूर्वक उनके पुत्र को लौटाने आ रहे हैं।

खंडहर हो गया एकचक्रा

इस प्रकार श्रीनित्यानन्द के माता-पिता अपने दिवस व्यतीत करते रहे जब तक कि उन्होंने अपने प्राण नहीं त्याग दिए। उनके अन्तर्धान होने पश्चात् श्रीनित्यानन्द के मित्र एकचक्रा से प्रस्थान कर गए और गांव वासी भी बिना किसी को सूचित किए कि वे कहाँ जा रहे हैं, अन्य स्थानों पर चले गए। नदी के साथ-साथ यवनों ने अपने नाम से एक गांव का निर्माण किया और कुछ जनसंख्या वहाँ रहने लगी। समय बीतते-बीतते एकचक्रा खंडहर हो गया।

वृद्ध व्यक्ति ने श्रीमती जाह्नवा देवी और वैष्णव जनों से कहना जारी रखा कि श्रीनित्यानन्द की यादों के कारण वे और कुछ अन्य ही एकचक्रा में शेष रह गए हैं। यद्यपि वे वृद्ध हैं और उचित प्रकार से चल भी नहीं सकते अत: वे कभी भी अपने गृह का त्याग नहीं करेंगे और प्रतिदिवस उन गलियों और खेतों का भ्रमण करेंगे जिन स्थानों पर श्रीनित्यानन्द खेला करते थे। जिस बरगद के वृक्ष की छांव के नीचे श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षद बैठे थे, श्रीनित्यानन्द और उनके सखा वहाँ खाया और खेला करते थे।

फिर भी आशा बनी हुयी है

ब्राह्मण ने कहा, 'विधाता निर्दयी है क्योंकि मैं इतने दीर्घकाल तक केवल श्रीनित्यानन्द की स्मृतियों के सहारे ही जीवित हूँ। मुझे केवल यही आशा है कि एक दिवस मैं उसे पुन: अवश्य देखूँगा परन्तु आह वह कभी वापिस एकचक्रा नहीं लौटे। मैं श्रीनित्यानन्द के दर्शन पाने के लिए ही मात्र एकचक्रा में बार-बार जन्म लेना चाहता हूँ। और हर जीवन की समाप्ति पर मुझे केवल श्रीनित्यानन्द का नाम पुकारने दो।'

वृद्ध ब्राह्मण हिम्मत हार गया और उच्चस्वर में निताई का नाम पुकारते हुए फूट-फूट कर रोने लगा। श्रीमती जाह्नवा देवी और अन्य भक्त भी भाव में बह गए और उनके नेत्रों से मानो अश्रुओं की नदी बह रही हो। श्रीकृष्णदास पंडित बारम्बार उन वृद्ध पुरुष के चरणों में प्रणाम स्वरूप झुक रहे थे।

ब्राह्मण वहाँ एकत्र वैष्णवजनों को एकचक्रा का दर्शन करवाने के लिए सहमत हो गये। वह सर्वप्रथम उन्हें हाड़ाई पंडित के आवास पर ले गये परन्तु वह इसका वर्णन नहीं कर सके क्योंकि उनका कंठ भावों से अवरुद्ध हो गया। बिना कुछ कहे वे सभा को छोड़ फूट-फूट कर रोते हुए, वापिस अपने निवास पर लौट आए।

श्रीमती जाह्नवा देवी ने ब्राह्मण को नहीं रोका और भारी हृदय से वैष्णवजनों ने हाड़ाई पंडित के निवास में प्रवेश किया। यद्यपि यह खण्डहर था परन्तु भक्त जनों को इसके प्रति गहन आकर्षण का अनुभव हुआ। वास्तव में उन्होंने वह रात्रि संकीर्तन करते हुए वहीं व्यतीत करने का निर्णय किया।

दिव्य एकचक्रा धाम

श्रीमती जाह्नवा देवी उस रात सो न सकीं। एकांत स्थान पर बैठकर वे अपने दुर्भाग्य पर विचार करने लगीं कि वे अपने सास और ससुर के दर्शन नहीं कर सकीं। वे अपने पति के निवास की प्रसन्नता का आनन्द न ले सकीं। प्रभु की इच्छा से वे गहरी निद्रा में सो गईं और स्वप्न में उन्होंने एकचक्रा के विशाल नगर की कल्पना की। गांव का सौन्दर्य मन्त्र मुग्ध कर देने वाला था और

स्वर्णिम आवास ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानो स्वयं विश्वकर्मा ने उनका निर्माण किया हो। हाड़ाई पंडित का आवास सेवकों से परिपूर्ण था। उनकी सम्पत्ति और वैभव के मध्य हाड़ाई पंडित और पद्मावती अपने पुत्र नित्यानन्द पर स्नेह की वर्षा कर रहे थे। उन्होंने श्रीनित्यानन्द की दोनों पत्नियों वसुधा और जाह्नवा के प्रति भी अगाध स्नेह प्रदर्शित किया।

श्रीसूर्य दास की पुत्री श्रीमती जाह्नवा देवी सम्पूर्ण विश्व में आदर के योग्य थीं और अभी तक अपने ससुर का स्नेह पाकर अत्यंत प्रसन्न थीं। वे वास्तव में अत्यन्त आनन्दित हो रही थीं परन्तु तभी स्वप्न धूमिल हो गया और वे जाग गईं। उस रात्रि वे पुनः सो गईं और अपने स्वप्न में उन्होंने एकचक्रा में नदी के तट पर पुष्पों का एक उद्यान देखा। उद्यान के वृक्ष पुष्पों से परिपूर्ण थे, भंवरे गुंजन कर रहे थे, पक्षी गा रहे थे और मधुर पवन बह रही थी।

एक वृक्ष के नीचे रत्नों से निर्मित सिंहासन था। भव्य परिधान पहने और आभूषणों से आवृत्त हो अनेक महिलाएं सेविकाओं के रूप में सिंहासन के चारों ओर खड़ी थीं। उन्होंने तालवृन्त और चंवर, थाल में चन्दन लेप, चूर्ण, सुगन्धित जल, और पुष्प मालाएं पकड़ रखी थीं। प्रेम के देवता कन्दर्प के समान दिखने वाले श्री नित्यानन्द, रत्न जड़ित सिंहासन पर विराजमान थे और मधुर मुस्कान के साथ वे चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर लग रहे थे।

श्रीमती वसुधा देवी और जाह्नवा देवी उनके दाईं और बाईं ओर बैठी थीं और दोनों ही सौन्दर्य की देवी रति के समान सुन्दर थीं। वे प्रसन्नतापूर्वक पान चबा रही थीं और पान को श्रीनित्यानन्द के मुख में डाल रही थीं। वे अपने द्वारा चबाए पान के पत्ते को वापिस अपनी पत्नियों को लौटा देते जबकि महिला सेविकाएं लगातार उन्हें चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन कर रही थीं। श्रीनित्यानन्द अपने तन से ही लगा और चन्दन लेप अपनी पत्नियों को लगा रहे थे और प्रेमपूर्वक उन्हें आलिंगन कर रहे थे। वे उन्हें अपनी पुष्प माला देते और अपने निकट पकड़ लेते।

श्रीमती जाह्नवा देवी इतनी प्रसन्नतापूर्वक स्वप्न का आनन्द ले रही थीं कि जब वे अपनी निद्रा से जागीं तो वे अति निराशा अनुभव करने लगीं। वे अपने किसी पार्षद से संक्षेप में स्वप्न के बारे में बोलीं परन्तु वे अपने एकचक्रा को त्यागने के विचार से अपने चित्त को स्थिर न कर सकीं।

अचानक श्रीमती जाह्नवा देवी को एक अज्ञात स्वर सुनाई दिया जो उन्हें अविलम्ब खरदह जाने का निर्देश दे रहा था। उन्होंने तत्क्षण एकचक्रा से प्रस्थान किया परन्तु मार्ग में उनके दल के लोगों ने नशे में मदमस्त एक ब्राह्मण को देखा जो कभी हँस रहा था और कभी मदिरा के नशे में नृत्य कर रहा था।

शराबी ब्राह्मण पर कृपा

श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपने अनुचरों से पूछा कि ब्राह्मण ऐसा व्यवहार क्यों कर रहा है और जब उन्हें ज्ञात हुआ कि वह मदिरा के नशे में है तो उन्हें सहानुभूति अनुभव हुई और अनायास ही उन्होंने यह प्रार्थना करते हुए उसे आशीष दे दिया कि श्रीचैतन्य महाप्रभु आध्यात्मिक बुद्धि का अधिग्रहण करने में और दिव्य प्रेम में उन्मत्त होने में सक्षम करें। जाह्नवा देवी के दल में सम्मिलित वैष्णवों ने उच्चस्वर में भगवान् श्रीहरि का नाम पुकारा और ब्राह्मण को उसके सौभाग्य और ऐसी करुणा प्राप्त करने के लिए बधाई दी।

ब्राह्मण जो कि एक अति समर्पित व्यक्ति बन चुका था, को आशीर्वाद देकर, श्रीमती जाह्नवा देवी और वैष्णवजनों ने मौर्येश्वर के लिए यात्रा आरम्भ की। जहाँ वे भगवान् शिव के मन्दिर में दर्शन करने गए, जिनकी कभी श्रीनित्यानन्द द्वारा आराधना की जाती थी। वे उस स्थान पर जाकर प्रसन्न थे, श्रीनित्यानन्द ने सांपों को वशीभूत किया था। उस लीला के कारण क्षेत्र का नाम कुण्डली-दमन हो गया था। उस स्थान के लोगों ने उन्हें वक्रेश्वर जाने वाले मार्ग के बारे में बताया, जहाँ श्रीनित्यानन्द एक बार तीर्थ यात्रा करते हुए गए थे।

श्रीमती जाह्नवा देवी राढ़-देश गईं, जहाँ से वे कंटकनगर गईं। श्रीयदुनन्दन उनकी अगुवाई करके अति प्रसन्न थे और उन्होंने याजिग्राम में श्रीनिवास आचार्य और उनके अनुचरों को आने के लिए सन्देश भेजा। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और अन्य भक्तजन एक निर्जन स्थान पर बैठे थे, जब उन्हें यह समाचार प्राप्त हुआ।

श्रीरामचन्द्र कविराज ने ग्रन्थ गोपाल विरुदावली, श्रीनिवास आचार्य को प्रदान की, जिन्होंने उसे सम्मानपूर्वक मस्तक से स्पर्श किया। प्रातःकाल श्रीमती जाह्नवा देवी ने वैष्णवजनों को अपने निवास पर निमन्त्रित किया। श्रीनिवास आचार्य और अन्यों ने प्रसन्नतापूर्वक निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और श्रीमती जाह्नवा देवी के साथ याजिग्राम के लिए प्रस्थान कर गए।

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीखण्ड में श्रीनरोत्तम दास, श्रीरामचन्द्र कविराज और अन्यों को आदेश देते हुए सन्देश भेजा कि श्रीमती जाह्नवा देवी के स्वा ात के लिए सब व्यवस्था करें। जिस निष्कपटता से प्रभु के पार्षदों की सेवा की गई, उन्हें अनुभव हुआ कि वे अपने ही निवास पर हैं। प्रभु के प्रत्येक पार्षद को सुन्दर स्थान पर आवास प्राप्त हुआ और श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीनिवास आचार्य के संग वास किया।

श्रीनिवास की पत्नी

श्रीमती जाह्नवा देवी का श्रीनिवास की पत्नी के द्वारा विनम्रतापूर्वक स्वागत किया गया। वे मधुर स्वभाव वाली अति सुन्दर महिला थीं। वे जाह्नवा देवी के चरणकमलों में प्रणाम करने झुकीं, जिन्होंने अति स्नेहिल भाव से उन्हें आलिंगन कर लिया। श्रीनिवास आचार्य की पत्नी उनको मन्दिर ले गईं और उन्हें बैठने के लिए उपयुक्त आसन दिया। उन्होंने सुगन्धित जल से उनके चरण धोए। श्रीमती जाह्नवा देवी उनके व्यवहार से अति आनन्दित हो गईं। उन्होंने मिलकर अनेक प्रकार के व्यंजन पका कर, महा-प्रसाद पाकर और साथ मिल बैठ कर याजिग्राम में अपने दिवस व्यतीत किए।

पधारने वाले भक्तजनों ने अपने सुन्दर निवास पर बैठे हुए भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का चिंतन करते हुए अपना समय व्यतीत किया। उसी समय श्री रघुनन्दन और अन्य उच्चकोटि के भक्तजनों का श्रीखण्ड से आगमन हुआ। उन्होंने बंगाल और ब्रज से सम्बन्धित अनेक घटनाओं की चर्चा की। श्रीरघुनन्दन उनकी यात्रा की सूचना को श्रवण करने चले गए और श्रीपरमेश्वरी ने सब कुछ धैर्य से वर्णन कर दिया। श्रीरघुनन्दन ने श्रीमती जाह्नवा देवी को पहले श्रीखण्ड की यात्रा करने का निवेदन किया और फिर सभी पधारने वाले भक्तों को आमन्त्रित किया।

सायंकाल, भक्तजनों ने नाम-संकीर्तन किया। श्रीमती जाह्नवा देवी के आदेश पर श्रीनिवास आचार्य ने श्रीमद्भागवत में से पठन किया। उनका पठन इतना मधुर था कि कोई भी अपने अश्रुओं पर नियंत्रण नहीं कर सका। पठन के बाद श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि अगली प्रातः उन्हें श्रीखण्ड के लिए प्रस्थान करना चाहिए। वहाँ से वे खरदह के लिए प्रस्थान करेंगी।

श्रीनिवास आचार्य ने जाह्नवा देवी से शीघ्रतापूर्वक खरदह जाकर श्रीराधिका के श्रीविग्रह जिसे श्रीगोपीनाथ जी के लिए श्रीवृन्दावन भेजा जाना था, उसके लिए आवश्यक प्रबन्ध पूर्ण करने की प्रार्थना की। उन्होंने जाह्नवा देवी को आश्वासन दिया कि श्रीगोपीनाथ जी की इच्छा से श्रीविग्रह का निर्माण शीघ्रता से बिना किसी कठिनाई के पूर्ण कर लिया जाएगा।

श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीनरोत्तम दास का आश्वासन सुनकर प्रसन्न हो गईं और उन्होंने उनसे पूछा कि वे कब तक याजिग्राम में रहेंगे और वे वहाँ से कहाँ जाएंगे। श्रीनरोत्तम दास ने उत्तर दिया कि वे केवल चार दिवस रहेंगे और फिर श्रीनवद्वीप जाएंगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के अधिकतर पार्षद पहले ही विश्व से अन्तर्धान हो चुके थे परन्तु उनके प्रिय सेवक ईशान अभी भी नवद्वीप में रह रहे थे। उनके साथ रह रहे भक्त भी मृत्यु की कगार पर थे और श्रीईशान ने

श्रीनरोत्तम दास से कुछ दिवस श्रीनवद्वीप में आने का निवेदन किया। तत्पश्चात वे खेतुड़ी जाऐंगे जहाँ वे विष्णुपुर जाने से पूर्व केवल कुछ दिवस ही व्यतीत करेंगे। विष्णुपुर से वे याजिग्राम वापिस लौटेंगे जहाँ वे दीर्घकाल तक रहेंगे।

उन्होंने अपनी चर्चा में मग्न, रात्रि में अच्छा समय व्यतीत किया। उन्होंने कुछ प्रसाद पाया और रात्रि विश्राम किया।

श्रीखण्ड के लिये चलीं जाह्नवा देवी

प्रात:काल श्रीमती जाह्नवा देवी ने श्रीनिवास आचार्य की पत्नी को सांत्वना दी और श्रीखण्ड के लिए प्रस्थान किया। श्रीरघुनन्दन और वैष्णवजनों का एक दल उनके श्रीखण्ड प्रवेश करते ही उनकी अगवानी करने आया। गांव के एक ब्राह्मण, जिसने नारायण दास के तीनों पुत्रों के दर्शन किए थे, वह अति सौभाग्यशाली था और यह कि श्रीमुकुन्द के पुत्र श्रीरघुनन्दन ठाकुर प्रेम और समर्पण के अवतार थे और सदैव गांव के लोगों को शान्ति प्रदान करते थे। उस ब्राह्मण ने यात्रा में वैष्णवजनों का सान्निध्य प्राप्त किया।

श्रीरघुनन्दन का अति सुन्दर श्रीकनाई नामक पुत्र था जो सदैव श्रीगौरचन्द्र की स्मृतियों में मग्न रहता था। जब कनाई ने प्रभु के पार्षदों को आते देखा तो उसने अपने पिता से उनके नाम पूछे। श्रीरघुनन्दन ने पधारने वाले प्रत्येक भक्त का उनसे परिचय करवाया और ठाकुर कनाई अश्रुपूर्ण नेत्रों से उनके चरणों में प्रणाम करने झुके और प्रत्येक ने उत्तर में उनका आलिंगन किया।

श्रीजाह्नवा देवी और उनके अनुचरों ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीखण्ड में प्रवेश किया और सीधा श्री गौरचन्द्र मन्दिर के प्रांगण में गए, जहाँ उन्होंने श्रीविग्रह के सुन्दर मुख का अवलोकन किया। उन्होंने श्रीमदन गोपाल के सुन्दर श्रीविग्रह के भी दर्शन किए, जिनको श्रीरघुनन्दन ने लड्डू पवाए थे।

कुछ क्षण मन्दिर प्रांगण में विश्राम करने के बाद हर कोई मन्दिर के निकट उपलब्ध करवाए गए आवासों पर चले गए। उन्होंने स्नान किया, कुछ महा-प्रसाद पाया और सायंकाल हरि-नाम-संकीर्तन का आनन्द लिया।

जब भक्तजनों ने खरदह से प्रस्थान किया तो श्रीरघुनन्दन अति उदास हो गए। उन्होंने श्रीपरमेश्वरी दास, श्रीकृष्णदास सरखेल और श्रीमती जाह्नवा देवी के संग खरदह आए अनेकों भक्तजनों को अनेक उपहार दिए। श्रीमती जाह्नवा देवी सर्वप्रथम नदिया गईं, जिसे उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनेकों पार्षदों के अन्तर्धान होने के कारण रिक्त पाया।

श्रीनवद्वीप-दर्शन

श्रीईशान और उनके कुछ मित्र, वे कुछ शेष लोग जो जीवित थे वे श्रीमती जाह्नवा देवी और उनके पार्षदों की अगवानी करने आए। उन सबने श्रीमती

जाह्नवा देवी से भेंट कर कुछ शान्ति का अनुभव किया और कुछ पल के लिए वे अपने सारे कष्ट भूल गए।

यद्यपि जब उन्होंने श्रीवास पंडित के आवास में प्रवेश किया तो वे अपने दुःख पर नियंत्रण न रख पाए।

श्रीमती जाह्नवा देवी सम्पूर्ण रात्रि जागती रहीं और बहुत सवेरे वे कुछ घण्टे सोईं। उस समय श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षद उनके स्वप्न में प्रकट हुए। वे श्रीगौर चन्द्र को उनके सुन्दर वस्त्रों और घुंघराले केशों के साथ देखकर अति प्रसन्न हुईं। श्रीगदाधर पंडित उनके बाँई ओर थे और श्रीनित्यानन्द प्रभु उनके दाँई ओर थे। श्रीअद्वैत आचार्य, श्री वास पंडित और अन्य उनके सामने थे। उन्होंने संकीर्तन आरम्भ किया और श्रीगौरचन्द्र नृत्य करने वालों में प्रथम थे जिनका श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्री अद्वैत आचार्य, श्रीगदाधर पंडित, श्री वास पंडित, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीवक्रेश्वर पंडित और श्रीहरिदास ठाकुर ने अनुसरण किया।

श्रीमती जाह्नवा देवी अपने स्वप्न के दृश्य से मन्त्र मुग्ध हो गईं। श्रीगोविन्द वासु, श्रीमाधव घोष और श्रीमुकुन्द दत्त ने विविध वाद्य यन्त्रों का वादन करते हुए, गाते हुए प्रेमोन्मत्त हो नृत्य किया। वास्तव में सम्पूर्ण नवद्वीप संकीर्तन में डूब गया और देवतागण उत्सव का आनन्द लेने आए। आकाशवासियों ने महान भक्तजनों पर पुष्प वर्षा की और अद्भुत संकीर्तन के दर्शन करते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी के सभी कष्ट विलुप्त हो गए।

तब वह स्वप्न उन्हें अत्यंत आनन्दित करते हुए जैसे आया था उन्हें कष्टों में लौटाकर वैसे ही धुंधला कर गया। प्रभु की इच्छा से श्रीमती जाह्नवा देवी ने अपने भावों पर नियंत्रण किया और किसी से भी अपने स्वप्न के बारे चर्चा नहीं की। उन्होंने श्रीईशान को यह कहकर कि शीघ ही श्रीनिवास आचार्य का आगमन होगा, विविध प्रकार से सांत्वना दी।

अम्बिका की ओर

दो दिवस नदिया में व्यतीत कर श्रीमती जाह्नवा देवी अम्बिका प्रस्थान कर गईं। वे उन स्थानों की यात्रा कर भावपूर्ण होकर रोने लगीं जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रायः जाया करते थे। वे श्रीगौरचन्द्र प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु की इच्छा से वहाँ एक दिवस रुकीं और खरदह एक सन्देश भेजा। जो वैष्णव गंगा के तट के निकट वास करते थे, वे श्रीमती जाह्नवा देवी की अगवानी करने आए और वे सीधा श्रीउद्धारण दत्त के निवास पर गईं जहाँ उन्होंने वास करने का निर्णय किया। श्रीमती जाह्नवा देवी से भेंट करने वहाँ अपार जन-समुदाय एकत्र हो गया। उन्होंने श्रीउद्धारण दत्त उनको स्मरण करते हुए अपना दिवस व्यतीत किया जो कि श्रीनित्यानन्द के प्रिय शिष्य थे।

नाव-यात्रा

श्रीउद्धारण दत्त के आवास से वे एक नाव पर सवार हो कर खरदह गईं। खरदह के वासियों ने अति प्रसन्नता से उनकी अगवानी की और वे अति आनन्दित होकर अपने निवास पर चली गईं। गंगा और वीरचन्द्र स्नेहवश उनके चरणों में जा झुके और अपने बच्चों के लिए उनके नेत्र अश्रुओं से भर उठे। तब श्रीमती जाह्नवा देवी, श्रीमती वसुधा देवी के चरणों में प्रणाम करने झुकीं वहाँ उपस्थित जन समुदाय परिवार के पुनः मिलन के दर्शन कर आनन्दित हो उठा।

श्रीमती वसुधा देवी ने उनकी यात्रा के बारे में पूछा और प्राप्त जानकारी से अत्यन्त सन्तुष्ट हुईं। श्रीमती जाह्नवा देवी ने तब मूर्तिकार नयन को श्री राधिका के श्रीविग्रह का कार्य आरम्भ करने का आदेश दिया।

जो कोई भी सावधानी पूर्वक इस वर्णन का श्रवण करेगा उसे निश्चित ही भक्ति प्राप्त होगी। श्रीनिवास आचार्य की स्मृति में नरहरि दास इस ग्रन्थ भक्ति-रत्नाकर को लिखने का आनन्द प्राप्त करता है।

द्वादश प्रवाह

श्रील निवासाचार्य, श्रील नरोत्तम, श्रील रामचन्द्र कविराज द्वारा श्री नवद्वीप दर्शन

लक्ष्मीप्रिया और विष्णुप्रिया पति श्रीगौरचन्द्र की जय जयकार हो। श्रीमती वसुधा देवी और श्रीमती जाह्नवा देवी के प्राणधन श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो। सीता देवी के पति श्रीअद्वैत आचार्य की जय जयकार हो। श्रीवासु घोष और श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो। श्रीगदाधर दास और श्रीनरहरि सरकार की जय जयकार हो और वैष्णव पंडित और श्रीमुरारी गुप्त की जय जयकार हो।

श्रीजगदीश और श्रीस्वरूप दामोदर की जय जयकार हो। श्रीहरिदास ठाकुर और श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी की जय जयकार हो। महान भक्त श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि, श्रीवासुदेव घोष, श्रीमुकुन्द दत्त और श्रीसंजय की जय जयकार हो।

श्रेष्ठ गुणों के भण्डार श्रीरामानन्द राय और श्रीवासुदेव भट्टाचार्य की जय जयकार हो। श्रीजगन्नाथ मिश्र, विद्या-वाचस्पति और महान विद्वान् श्रीविजय वनमाली की जय जयकार हो।

श्रीकाशी मिश्र, श्रीगोपीनाथ आचार्य और श्रीरघुनन्दन के पिता श्रीमुकुन्द दत्त की जय जयकार हो। श्रीगदाधर पंडित और श्रीधनंजय की जय जयकार हो। श्रीवंशीवदन की जय जयकार हो जो दयालुता से ओत-प्रोत हैं।

श्रीसनातन गोस्वामी और श्रीरूप गोस्वामी की जय जयकार हो। श्रेष्ठ गुणों के सागर श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी की जय जयकार हो। दीनों के मित्र श्रीभूगर्भ गोस्वामी और श्रीलोकनाथ गोस्वामी की जय जयकार हो। श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी और करुणा के सागर श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी की जय जयकार हो।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय भक्त श्रीराघव पंडित की जय जयकार हो और श्रीहृदय चैतन्य ठाकुर की जय जयकार हो। श्रीजीव गोस्वामी और श्रीवृन्दावन दास की जय जयकार हो। श्रीकृष्णदास कविराज और श्रीगोपाल नारायण की जय जयकार हो।

श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के प्रेम अनुग्रह प्राप्त श्रीनिवास आचार्य की जय जयकार हो और महाभक्त श्रीनरोत्तम दास ठाकुर की जय जयकार हो। श्रीचैतन्य महाप्रभु के दिव्य प्रेम को संप्रेषित करने वाले श्रीरामचन्द्र कविराज की जय जयकार हो। वैष्णवजनों के प्राण श्रीश्यामानन्द प्रभु की जय जयकार हो। 'भक्ति-रत्नाकर' ग्रन्थ पढ़ने वाले सभी पाठकों की जय जयकार हो जो कि सभी श्रेष्ठ गुणों से परिपूर्ण हैं। अब मैं अपना आख्यान आरम्भ कर रहा हूँ, कृपया ध्यान से श्रवण करें।

जब श्रीमती जाह्नवा देवी वापिस खरदह लौटीं तब हर कोई विविध कारणों से उत्साहित हो गया था। श्रीनिवास आचार्य ने याजिग्राम से विष्णुपुर एक समाचार भेजा। उन्होंने श्रीगोकुलानन्द और अन्य भक्तजनों को याजिग्राम में रहने और शास्त्रों का पठन करने का आदेश दिया। उन्होंने सभी को आश्वस्त किया कि वे शीघ्र ही नवद्वीप लौटेंगे। उन्होंने अपने अनुचरों को यह भी सूचित किया कि उन्होंने राजा हम्वीर को भी यथाशीघ्र विष्णुपुर से याजिग्राम आने का आदेश देते हुए एक पत्र लिखा है।

अपने अनुचरों को ऐसा निर्देश देकर श्रीनिवास आचार्य ने एक शुभ घड़ी पर याजिग्राम से प्रस्थान किया। श्रीखण्ड आकर वे रघुनन्दन के निवास पर गए और उन्हें सूचित किया कि वे श्रीनवद्वीप जा रहे हैं। श्रीरघुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य के प्रति अति स्नेहमय व्यवहार किया और कुछ कारणों से निजी वार्तालाप करते समय वे रो पड़े।

श्रीनवद्वीप पहुँचे

श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरघुनन्दन के चरणों में प्रणाम करके उनसे विदा ली। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज ने प्रेमोन्मादपूर्ण भाव में श्रीनवद्वीप के लिए यात्रा आरम्भ की। जब दूर से उन्होंने श्रीनवद्वीप के दर्शन किए तो उनके नेत्रों में अश्रु भर आए। उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु से प्रार्थना की कि वे उन्हें असंख्य नेत्र प्रदान करें जिससे वे श्रीनवद्वीप की शोभा का दर्शन

कर सकें। वास्तव में उनका अपने तन से नियंत्रण छूट गया और वे उन्मत्त प्रेम में व्यग्र हो पुनः-पुनः भूमि पर गिरने लगे। उन्होंने आदर सहित श्रीनवद्वीप की भूमि को स्पर्श किया और गंगा और अन्य पवित्र नदियों के यहाँ पर बहने के कारण भारत-वर्ष के सौभाग्य की सराहना की। यहाँ तक कि श्रीमद्भागवत भी भारत-वर्ष के गौरव की सराहना करती है।

सर्वाधिक शोभायमान श्रीनवद्वीप

श्रीविष्णु पुराण में वर्णन है कि श्रीनवद्वीप भारत-वर्ष में स्थित है। इसमें वर्णन है कि यहाँ भारत-वर्ष में नौ द्वीप हैं और यह कि नवद्वीप नौंवा द्वीप है जो कि गंगा नदी के तट पर स्थित है, यह उत्तर से दक्षिण तक सहस्र योजन तक फैला हुआ है।

विष्णु पुराण में श्रीनवद्वीप का वर्णन करते समय सागर संवित शब्द प्रयोग हुआ है। इसका अर्थ है 'सागर के किनारे स्थित' और यह श्रीधर स्वामी द्वारा समझाया गया है। विष्णु पुराण में ही यह वर्णन है कि नवद्वीप या नदिया, भारत-वर्ष में सर्वाधिक शोभायमान द्वीप है।

यही है गोलोक श्रीवृन्दावन

श्रीगौर-गणोद्देश-दीपिका में वर्णन है, 'इस स्थान को अनेक विद्वानों द्वारा श्रीवृन्दावन जो कि बुद्धिमान लोगों द्वारा गोलोक के नाम से जाना जाता है, वह स्थान जो भद्रपुरुषों द्वारा श्वेतद्वीप माना जाता है, और वह स्थान जो संत पुरुषों द्वारा दिव्य स्थान के नाम से जाना जाता है, के समान माना गया है, इसे निश्चित ही श्रीनवद्वीप समझना चाहिए जो कि इस ब्रह्माण्ड में अति अद्भुत और श्रेष्ठ स्थान है।'

श्रीनवद्वीप विश्व में प्रसिद्ध है भगवान् श्रीकृष्ण की नवधा भक्ति-श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म-निवेदन-सभी ने अवतार लिया और यहीं इनका अभ्यास किया गया।

श्रीनवद्वीप की वास्तविक पहचान का वर्णन श्रीप्रह्लाद ने श्रीमद्भागवत के सप्तम स्कन्ध में गायन किया है। उन्होंने बताया है कि यदि इन नौ आध्यात्मिक सेवाओं का निष्कपटता से प्रयोग किया गया तो भक्त को श्रीकृष्ण का पवित्र प्रेम प्राप्त हो सकता है और वह अपनी कामनाएं पूर्ण कर सकता है।

श्रीनवद्वीप नाम का सत्ययुग, द्वापर, त्रेता और यहाँ तक कि कलियुग के प्रारम्भ में कोई उल्लेख नहीं है। जैसे-जैसे कलियुग बढ़ता गया वैसे-वैसे श्रीनवद्वीप का नाम अनुभव में आया। भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से ब्रज में उनकी लीलाओं के लिए वज्रनाभ ने एक गांव को बसाया परन्तु कालान्तर में गांव नष्ट हो गया। कहीं गाँव का नाम अस्त-व्यस्त हो गया। उसी प्रकार

नवद्वीप के अन्तर्भुक्त जितने भी ग्राम हैं। प्रभु भक्त लीला–मत से पुनः व्यक्त हुए। कहीं लुप्त कहीं अस्त व्यस्त अवश्य हुए परन्तु नवद्वीप नाम निरन्तर बना रहा द्वीप नाम का श्रवण करने से सब दुख क्षय हो जाते हैं और गंगा के पूर्व पश्चिम तीर पर ये नौ द्वीप विराजमान हैं।

नौ द्वीप

इसके नौ द्वीप–अन्तरद्वीप, सीमान्तद्वीप, गोद्रुमद्वीप, मध्यद्वीप, कोलद्वीप, ऋतुद्वीप, जह्नुद्वीप, मोदद्रुम द्वीप और रुद्रद्वीप– अद्‌भुत और श्रेष्ठ और शोभायमान हैं। कुछ विशेषज्ञों ने अनुमान लगाया कि श्रीनवद्वीप की सीमा पांच योजन तक फैली है जबकि अन्यों का मानना है यह सोलह कोस तक फैला है। मायापुर श्रीनवद्वीप के मध्य में है जहाँ श्रीजगन्नाथ मिश्र का निवास स्थापित है।

नदिया जनपद के नाम से जाना गया अति सुन्दर श्रीनवद्वीप इतना प्रसिद्ध है कि यहाँ रहने वाले लोगों की गणना करना बिलकुल असंभव सा है। चैतन्य भागवत में वर्णन है कि श्रीनवद्वीप पुरी बिलकुल मधुपुरी के समान दिखती है। विधाता ने भगवान् की लीलाओं के लिए श्रीनवद्वीप को पहले से ही सुसज्जित कर दिया था।

श्रीनवद्वीप में अनेक ब्राह्मण और वैष्णव वास करते थे जो धार्मिक, भद्र, दयालु, खुले विचारों वाले, परिश्रमी और सभी शास्त्रों के ज्ञाता थे। वहाँ अनेकों चिकित्सक, मजदूर, व्यापारी भी श्रीनवद्वीप में वास करते थे। वे सब ईमानदार, धार्मिक, और शिक्षित थे। वे सब देवताओं की तरह प्रतीत होते थे और श्रीनवद्वीप वैकुण्ठ के समान था।

चैतन्य भागवत में एक भजन में वर्णन किया गया है, 'जय श्रीनदिया प्रसन्नता के धाम। नदिया अद्‌भुत स्थान है जहाँ ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यासी सभी मिलकर प्रसन्नतापूर्वक वास करते हैं, जहाँ हर दिवस एक नव उत्सव का आयोजन होता है, जहाँ जिन लोगों ने अष्ट–सिद्धि प्राप्त कर ली है वे विनम्रतापूर्वक मन्दिरों में सेवा करते हैं। नदिया के लोग धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के प्रति चिंतित नहीं है। वे तपस्या पर नियंत्रण कर सकते हैं क्योंकि वे स्वयं में समर्पण के प्रकाश को समेटे हुए, सदैव शांत और प्रेम से परिपूरित रहते हैं।'

नदिया के आवास अत्यधिक सुन्दर हैं और सम्पूर्ण जनपद गंगा से घिरा हुआ है। वे पुष्प जो उदय होते चन्द्रमा का अनुसरण करते हैं, वे नदिया में खिलते हैं। श्रीवृन्दावन के समान श्रीनवद्वीप की सुन्दरता सदैव ताजा रहती हैं, जैसे छः ऋतुऐं समान रूप से उपस्थित रहती हैं। सर्वदा बढ़ने वाली नदिया की शोभा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में फैल गई है और फिर भी इसकी वास्तविक शोभा की तुलना किसी स्थान से नहीं की जा सकती।

देव-क्रीड़ा भूमि श्रीनवद्वीप

नदिया में देवराज इन्द्र और अन्य देवता जैसे भगवान् शिव, भगवान् ब्रह्मा शान्तिपूर्वक ध्यान में मग्न रहते हैं जबकि श्रीघनश्याम विश्वासपात्रों के संग आनन्दपूर्वक क्रीड़ाओं में व्यस्त रहते हैं।

श्रीचैतन्य-चन्द्रामृत में वर्णन है कि मैं चाहता हूँ कि मैं इस स्थान के प्रति आकर्षण अनुभव कर सकूँ जहाँ जीवमात्र का भला करने के लिए सर्वदा-आनन्दित और भव्यतापूर्वक सुन्दर श्रीचैतन्य देव प्रकट हुए थे। वह पावन स्थान श्रीनवद्वीप धाम है जहाँ प्रत्येक घर में समर्पण भाव स्वयं प्रकट हुआ। वह दिव्य स्थान श्रीनवद्वीप धाम है जिसने भगवान् के अवतार के रूप में श्रीचैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति के अवसर का कलियुग के प्राणी मात्र के भले के लिए अपने वास्तविक स्वभाव को प्रत्यक्ष करने के अवसर के रूप में लाभ उठाया।

श्रीमद्भागवत में भी वर्णन है, इस प्रकार मेरे प्रभु आप सम्पूर्ण सृष्टि को एक अन्य ग्रह चाल में संभालते हुए और आसुरी व्यक्तियों को मारते हुए, अनेक अवतारों में पुरुष, पशु, एक महान संत, एक देवता, एक मछली या कछुए के रूप में प्रकट हुए। हे मेरे प्रभु, काल के अनुसार आप धर्म के सिद्धान्तों की रक्षा करते हो। कलियुग में आपने स्वयं को प्रभु की सर्वोच्च शक्ति के रूप में बल नहीं दिया और इस कारण आप त्रियुग के नाम से जाने जाते हो अथवा वह प्रभु जो तीनों युगों में प्रकट हुए।

श्रीनवद्वीप में भगवान् श्रीकृष्ण ने उन सब लीलाओं को प्रकट किया जो वे पूर्व के अवतारों में कर चुके थे। उन्होंने इन दिव्य गतिविधियों को श्रीनवद्वीप में शची के पुत्र के रूप में प्रकट किया। श्रीनवद्वीप की लीलाऐं भगवान् ब्रह्मा और अन्य देवताओं की तुलना से दूर थीं परन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से कुछ व्यक्ति उनका सत्य समझ सकते थे। फिर भी कोई उन लीलाओं की पूर्णता को नहीं समझ सकता था जो श्रीचैतन्य महाप्रभु ने नदिया में कीं। वे सब लीलाऐं जो भगवान् श्रीकृष्ण ने द्वापर में श्रीवृन्दावन में कीं वे सब कलियुग में श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा की गईं।

विद्वान् लोग कहते हैं कि श्रीनवद्वीप एक अनन्त पावन स्थान है जो कि आठ कोस में फैला है। एक कमल पुष्प के समान श्रीनवद्वीप कभी-कभी अपनी अलौकिक शक्तियों की सम्पूर्ण महिमा प्रदर्शित करता है और कभी उन्हें छिपा लेता है। व्यापक दूरी को ध्यान में न रख सभी दिशाओं से तीर्थ यात्री श्रीचैतन्य महाप्रभु से यहाँ नदिया में भेंट करने आते हैं।

दिव्य शक्ति के प्रति आकर्षित होकर वे संकीर्तन में भाग लेने आते। इस प्रकार श्रीचैतन्य महाप्रभु की अपने पार्षदों के संग लीलाओं का केन्द्र नवद्वीप सभी पावन स्थलों में महानतम हो गया।

मायापुर श्रीनवद्वीप में ही है

श्रीनवद्वीप में मायापुर नाम से प्रसिद्ध एक स्थान है जहाँ प्रभुत्व के सर्वोच्च अवतार श्रीगौरचन्द्र प्रकट हुए। मायापुर, श्रीनवद्वीप की योगपीठ है जो कि श्रीवृन्दावन की योगपीठ से बिलकुल भिन्न नहीं है। मायापुर तो ब्रह्मा जी और अन्य देवताओं द्वारा भी पूज्य है और भक्तजन निरंतर इस पावन स्थान की महिमा का गान करते रहते हैं। किसी के भी कष्ट मायापुर के दर्शन मात्र से नष्ट हो जाते हैं। श्रीनिवास आचार्य इस पावन स्थान पर गए थे।

श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने मायापुर में प्रवेश किया और उनका मस्तिष्क उल्लास में लीन हो गया। जैसे ही उन्होंने मायापुर में प्रवेश किया उन्होंने एक वृद्ध ब्राह्मण को अपनी ओर आते हुए देखा। उन्होंने झुक कर ब्राह्मण को प्रणाम किया और श्रीईशान ठाकुर के कुशलक्षेम के बारे में पूछा। ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि वे ईशान के यहाँ से ही आ रहे हैं। श्रीईशान एक उच्च क्षमता वाले व्यक्ति थे और सम्पूर्ण विश्व में अपनी आध्यात्मिक सेवाओं के व्यापक ज्ञान और श्रीशची देवी के प्रति अपनी निष्ठावान सेवा के कारण प्रसिद्ध थे।

सेवक ईशान

चैतन्य भागवत में यह वर्णन है। ईशान ने दीर्घकाल तक शची माता की सेवा की और इस प्रकार सम्पूर्ण चौदह भुवनों में सर्वाधिक सौभाग्यशाली व्यक्ति बन गए।

ब्राह्मण ने बताया कि वह ईशान की निष्कपट सेवाओं के बारे सदैव श्रवण करते थे परन्तु अंततः व्यक्तिगत रूप से उन सेवाओं का साक्षी बनने का अवसर मिला।

वैष्णव वन्दना में यह वर्णन है। हाथ जोड़ कर मैं ईशान की अराधना करता हूँ जिन्हें श्री शची ठकुरानी प्रेम करती हैं।

कोई भी ईशान की गतिविधियों की सत्य भावना को नहीं समझ सकता। ईशान के प्रेम में बँधे श्रीनिमाईचाँद कभी भी उनके बिना कहीं नहीं जाते थे। ईशान शची नन्दन निमाई को अपना प्राण समझते थे। निमाई एक अधीर बालक थे और ईशान उनकी सभी शरारतपूर्ण गतिविधियों की देखभाल करते थे।

ब्राह्मण नदिया के आनन्दमय दिवसों को याद करने लगा, जब लोग उल्लास के सागर में डूबे हुए प्रतीत होते थे। यद्यपि नवद्वीप धीरे-धीरे घोर अंधकार में डूब रहा था।

ब्राह्मण से परिचय

तब ब्राह्मण ने उत्सुकतावश यह जानना चाहा कि क्या तीनों वैष्णव जन श्रीनिमाईचाँद के पार्षद रह चुके हैं या नहीं। श्रीनिवास आचार्य ने स्वयं का और अपने साथियों का परिचय दिया और तत्क्षण वृद्ध ब्राह्मण ने उन्हें आलिंगन कर लिया और रो पड़े। श्रीनिवास आचार्य के नेत्रों में स्नेह से देखते हुए उन्होंने कहा, 'मेरे पुत्र, आज मेरी इच्छा पूर्ण हो गई क्योंकि मुझे तुमसे भेंट करने का अवसर प्राप्त हुआ। जब आज मेरी ईशान से भेंट हुई तो उसने मुझे बताया कि तुम आ रहे हो। ईशान उत्सुकतापूर्वक तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं तो तत्क्षण उनके पास जाओ। मैं कुछ क्षण में तुम्हें मिलता हूँ।'

श्रीनिवास आचार्य उन वृद्ध ब्राह्मण के चरणों में झुके जो धीरे-धीरे अपने आवास की ओर जा रहे थे। तब वे शीघ्रता से ईशान ठाकुर के निवास पर गए। श्रीनिवास आचार्य ने अपने तन को जगन्नाथ मिश्र के निवास के प्रांगण की रज से ढक लिया और अश्रुओं में भिगो दिया। वे ईशान ठाकुर को खोजने लगे और अंतत: उन्हें एक एकान्त स्थान पर पाया।

ईशान मेधा की दीप्ति से चमक रहे थे परन्तु उनके नेत्र बन्द थे और अश्रु झर-झर बहते हुए उनके तन को भिगो रहे थे। उनकी गहरी साँसें अग्नि की भांति गर्म थीं। ईशान बुरी तरह विलाप कर रहे थे और श्रीचैतन्य महाप्रभु का नाम उच्चस्वर में पुकार रहे थे परन्तु जब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को देखा तो उन्होंने अधीरतापूर्वक उनका आलिंगन करने के लिए अपनी भुजाऐं फैला दीं। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज का भी आलिंगन किया परन्तु तीनों भक्त ईशान की अवस्था देख, मात्र रुदन कर रहे थे।

श्रीईशान ठाकुर ने उन्हें शांत किया और उनके कुशलक्षेम के बारे में पूछा। श्रीनिवास आचार्य ने सम्पूर्ण जानकारी देकर उन्हें संतुष्ट किया और फिर अपनी व्यक्तिगत कामना ईशान के संज्ञान में रखी। श्रीनिवास आचार्य श्रीराघव पंडित के साथ ब्रज के मार्ग से नदिया के पावन स्थानों की यात्रा करना चाहते थे। ईशान ने उन्हें बताया कि केवल भगवान् ही ऐसी कामना पूर्ण कर सकते हैं। श्रीनवद्वीप की शोभा गोपनीय थी तो सामान्य व्यक्ति कभी इसे नहीं समझ सकता था। नदिया की महिमा को समझने के लिए जीव को श्रीचैतन्य महाप्रभु का अनुग्रह प्राप्त करना चहिए।

ईशान ने श्रीनवद्वीप की लीलाओं की महिमा को निपुण भक्तों से जाना था और अपने अगाध दु:ख में भी वे उनका स्मरण कर सकते थे। ईशान ठाकुर ने निर्णय लिया कि वे श्रीनिवास आचार्य के संग व्यक्तिगत रूप से नदिया की यात्रा करेंगे। उन्होंने श्रीनरोत्तम दास को आदेश दिया कि वे श्रीनिवास आचार्य

को सूचना दें कि वे उनसे भेंट करेंगे। बाद में जब उनकी भेंट हुई तो उन्होंने घोषणा की कि अगली प्रातः वे सम्पूर्ण नदिया की यात्रा करेंगे।

श्रीनिवास आचार्य प्रसन्नतापूर्वक श्रीईशान के चरणों में जा गिरे जिन्होंने तत्क्षण उन्हें उठाया और मजबूती से पकड़ कर अपने हृदय के निकट आलिंगन कर लिया मानों हृदय की पीड़ा को शान्ति मिल गई हो। तब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य का परिचय श्रीचैतन्य महाप्रभु के अन्य पार्षदों से करवाया जो श्रीनवद्वीप में वास करते थे। श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तमदास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने उस दिवस जगन्नाथ मिश्र के निवास पर विश्राम किया।

अतोपुर-अन्तर्द्वीप

अगली प्रातः श्रीईशान महाशय, श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने व्यापक प्रसन्नता के साथ नदिया की अपनी यात्रा प्रारम्भ की। श्रीचैतन्य महाप्रभु के मन्दिर में प्रणाम कर उन्होंने मायापुर से प्रस्थान किया और अन्तर्द्वीप के लिए यात्रा आरम्भ की। जैसे ही अन्तर्द्वीप नजर आया, श्रीईशान ने इसकी महिमा बतानी आरम्भ कर दी। श्रीईशान ने बताया कि अन्तर्द्वीप को पहले अतोपुर के नाम से जाना जाता था और यह दीर्घकाल के लिए अगाध अन्धकार में डूब गया था। तब उन्होंने उसके वास्तविक नाम अन्तर्द्वीप के उद्‌गम के बारे में बताया।

ब्रह्मा ने की आराधना

द्वापर-युग में श्रीकृष्ण ने ब्रज में लीलाऐं रचाई थीं। एक बार ब्रह्माजी ने भगवान् श्रीकृष्ण के गोप सखाओं और बछड़ों को चुरा लिया परन्तु ब्रह्मा जी के गर्व का नाश करने के लिए श्रीकृष्ण ने प्रत्येक ग्वाल बाल और बछड़े का रूप धारण कर लिया। ब्रह्मा जी इस लीला को समझ नहीं पाए तो वे अत्यधिक बेचैन हो गए। अपराध के भय से उन्होंने विविध प्रकार से श्रीकृष्ण की स्तुति आरम्भ कर दी। श्रीकृष्ण ने ब्रह्मा जी को क्षमा कर दिया क्योंकि वे उनके प्रायश्चित्त से संतुष्ट थे। यद्यपि ब्रह्मा जी स्वयं को क्षमा नहीं कर सकते थे तो उन्होंने निश्चय किया कि उनका अपराध चैतन्य महाप्रभु के अवतार के बिना दूर नहीं किया जा सकता।

कलियुग में प्रकट होकर श्रीकृष्णचैतन्य सम्पूर्ण काल का भला करेंगे और यदि ब्रह्मा जी श्रीनवद्वीप में भगवान् की आराधना करें तो भगवान् निश्चित ही उनकी कामना पूर्ण करेंगे। अतः इस स्थान अतोपुर में ही ब्रह्मा जी ने श्रीकृष्णचैतन्य की आराधना आरम्भ की।

जब प्रभु गौरचन्द्र भक्तों के महान संरक्षक के रूप में प्रकट हुए तो उनके चमकते हुए तन की कांति दसों दिशाओं को प्रकाशित करती हुई प्रतीत हो रही

थी। उनकी स्वर्णिम आभा तरल स्वर्ण और प्रेम के देवता कन्दर्प के घमण्ड को परास्त कर रही थी। वे उनके घुटनों तक पहुँचती अपनी लम्बी भुजाओं के साथ-साथ अपनी वेशभूषा और आभूषणों में सुन्दर लग रहे थे। उनके विशाल नेत्र उनके कानों तक फैले हुए थे और उनकी झलक कोटि चन्द्रमाओं के गर्व को परास्त करती हुई प्रतीत हो रही थी। उनकी अमृतमयी मुस्कान सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मंत्रमुग्ध कर रही थी।

श्रीचैतन्य दर्शन-वार्तालाप ब्रह्मा जी से

ब्रह्मा जी, श्रीचैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति से इतने भाव-विभोर हो उठे कि वे अपना धैर्य खो बैठे और भगवान् की प्रशंसा करते हुए रोने लगे। वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रति आदर भाव प्रकट करने के लिए विनम्रतापूर्वक भूमि पर उनके चरणकमलों में जा झुके। भगवान् ब्रह्मा जी की निष्कपटता देख शचीनन्दन तृप्त हो गए और बोले, 'तुम सदा से मेरे प्रिय हो और मैं सदैव तुमसे प्रसन्न हूँ। अब बताओ मुझे, तुम्हारी क्या कामना है।'

ब्रह्मा जी ने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, 'मेरे प्रिय भगवान् कृपया कलियुग में जब आप नदिया में प्रकट हों और अपने पार्षदों के संग अपनी लीलाएं प्रकट करें, उस समय मुझे निम्न वर्ग में जन्म लेने दीजिए क्योंकि मैं अपने असत्य अभिमान को नष्ट करना चाहता हूँ। लोग मुझे घृणित दृष्टि से देखें ताकि मेरे मान का नाश होगा और मैं विनम्रतापूर्वक आपके चरणों में विश्राम कर सकूँगा। इस अवतार में कृपया मुझे अपनी माया से न ढकें जैसा आपने पूर्व में किया था। मैं निरंतर आपके पार्षदों के संग संलग्न रहना चाहता हूँ और मैं जन्म से मृत्यु तक आपकी आराधना करना चाहता हूँ।'

श्रीचैतन्य महाप्रभु, भगवान् ब्रह्मा की प्रार्थनाओं से सन्तुष्ट हो गए और उनकी विनती स्वीकार कर ली। आनन्दित होकर ब्रह्मा जी ने कहा, 'आप सर्वोच्च व्यक्तित्व हैं और इस कारण कौन आपकी भावनाओं को समझ सकता है? आप के पूर्व के अवतारों में आपने अनेक लीलाऐं रचाईं। आप नदिया में आकर हमसे क्या प्रकट करोगे?'

मैं जानता हूँ आप वहाँ मानव जाति के अन्धकार युक्त भौतिक जीवन से रक्षा करने के लिए प्रकट होंगे परन्तु मैं आपकी लीलाओं का विवरण जानना चाहता हूँ।

'एक भक्त के रूप में मैं भगवान् के प्रति आध्यात्मिक सेवाओं का अभ्यास करूँगा और संकीर्तन रूपी आभूषण की महिमा को उजागर करूँगा।' श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया। 'मैं अत्यधिक उत्कृष्ट माधुर्य-रस को उजागर कर मानव जाति के आकर्षण को ब्रज की महिमा के प्रति आकर्षित करूँगा।'

बोलते–बोलते श्रीईशान, श्रीराधा के प्रेम और समर्पण को, श्रीचैतन्य महाप्रभु की तीन कामनाओं को, जो उन्होंने ब्रह्मा जी के सम्मुख व्यक्त की थीं और बाद में योग्य भक्तों के संग उन्हें उजागर किया था, स्मरण करके धीमे से रो दिए।

श्रीचैतन्य–चरितामृत में श्रीकृष्ण चैतन्य की इन तीन कामनाओं का वर्णन भी किया गया है। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने ब्रह्मा जी से पुनः अपना वचन दोहराया, 'मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि तुम श्रीनवद्वीप में **मेरी लीलाओं का अवलोकन करने के लिए उपस्थित रहोगे।'**

इसके बाद श्रीचैतन्य महाप्रभु अन्तर्धान हो गए और वह स्थान अन्तोपुर के नाम से विख्यात हो गया। ब्रह्मा जी संतुष्ट थे कि उन्हें भगवान् का अनुग्रह प्राप्त हो गया है और वे उत्सुकतावश श्रीचैतन्य महाप्रभु के नवद्वीप में मंगलकारी अवतार की प्रतीक्षा करने लगे।

श्रीईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास श्रीचैतन्य महाप्रभु की अन्तर्द्वीप में लीलाओं को कौन समझ सकता है? केवल अन्तर्द्वीप के दर्शन मात्र से जीव की सभी कामनाऐं पूर्ण हो जाती हैं।'

श्रीईशान ने भक्तजनों को सुवर्ण विहार की ओर निर्देशित किया जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अनेक लीलाएं रचाई थीं। सिमलिया के सौन्दर्य को निहारते हुए ईशान ठाकुर ने अनेक घटनाओं का वर्णन किया जिनके कारण यह सुवर्ण विहार सम्पूर्ण विश्व में विख्यात बन गया था।

श्री शिव द्वारा श्रीचैतन्य चर्चा

एक बार कैलाश पर्वत पर भगवान् महेश्वर नदिया के भक्तजनों की महिमा रूपी अमृत का पान कर रहे थे जो श्रीविष्णुके सभी अवतारों की आराधना में मग्न थे।

भगवान् महेश्वर अपने पंच मुखों से भगवान् श्रीकृष्ण के भक्तजनों की महिमा का गुणगान करते हुए अति उल्लसित हो गए। जप करते हुए भगवान् शिव इतने उत्साहपूर्वक नृत्य करने लगे कि कैलाश पर्वत कांपने लगा। नृत्य करते हुए महेश्वर अपना डमरू बजाने लगे जिसका स्वर आकाश को भेद रहा था और साथ ही सिंह के समान गरज रहे थे। अपने पति की दशा देख पार्वती जी भी स्वयं को असहज अनुभव करने लगीं और यह निर्णय न कर सकीं कि क्या करना चाहिए।

दीर्घकाल के बाद महादेव जी शांत और गंभीर हो गए परन्तु वे अभी भी आनन्दातिरेक में प्रेम के अश्रु बहा रहे थे। अपने व्याघ्र–चर्म पर रजत पर्वत के समान विराजमान वे कलियुग की महिमा का गुणगान कर रहे थे। अपने मुख पर सुन्दर मुस्कान लिए, इधर–उधर देखते हुए उन्होंने पार्वती जी को पुकारा और अपने संग बैठने को कहा।

पार्वती जी ने आनन्दपूर्वक उनका संग किया और कहा, 'मेरे प्रभु, आज आप ने जो अनुग्रह के दर्शन करवाए हैं, मैं कभी नहीं भूलूँगी परन्तु जिन नामों का आप ने भजन में जप किया, मैं उन्हें नहीं समझ पायी। आप ने बारम्बार कलियुग की प्रशंसा की, परन्तु उस तुच्छ युग में ऐसा क्या है?'

भगवान् महेश्वर ने मधुरता से उत्तर दिया, 'इस कलियुग में नदिया में श्रीकृष्ण चैतन्य, श्री शची देवी के गर्भ से उत्पन्न होंगे। वे श्री राधा के रंग-रूप धारण किए होंगे और उनका सौन्दर्य सम्पूर्ण विश्व को परास्त करेगा। वे कन्दर्प के मान का नाश करेंगे और वे नदिया में अद्भुत लीलाएं रचाऐंगे। वे और उनके पार्षद ब्रज के अमृतमय प्रेम को उजागर करेंगे, और विश्व को पतन से बचाने के लिए उनके माध्यम से संकीर्तन के अद्भुत सागर का प्राकट्य होगा। इस अवतार के दौरान कोई भी अतृप्ति अनुभव नहीं करेगा। यहाँ तक कि अपराधियों को भी उनका अनुग्रह प्राप्त होगा। तुम्हें कोई भी ऐसा नहीं मिलेगा जो श्रीचैतन्य महाप्रभु के समान प्रेम का सिन्धु न हो।'

पार्वती जी को दिये दर्शन

तत्पश्चात् पार्वती जी ने नवद्वीप में श्रीगौरचन्द्र की उपासना आरम्भ कर दी और श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने मुख से कोटि चन्द्रमाओं का प्रकाश बिखरते हुए प्रसन्नतापूर्वक उनके सम्मुख प्रकट हो गए। पार्वती जी उनके विशाल नेत्रों, चौड़े वक्ष, तेजस्वी तन, सुन्दर वस्त्र विन्यास और उनकी सुन्दर चाल देखकर आनन्दित हो उठीं। जब पार्वती जी अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख सकीं तो भगवान् विश्वम्भर ने मधुर स्वर में कहा, 'यद्यपि तुमने दीर्घकाल से मेरी उपासना की है, तुम अब भी स्वयं पर नियंत्रण नहीं कर सकती हो? कृपया मुझे बताओ ऐसा क्या है जो तुम चाहती हो।'

पार्वती जी ने करबद्ध होकर आनन्दपूर्वक उत्तर दिया, 'मैं जानती हूँ कि आप अपने अवतार से कलियुग का कल्याण करेंगे। आप सरलता से मनुष्य मात्र को त्रिविध कष्टों से मुक्ति दिला देंगे और मानव जाति की प्रसन्नता का वर्धन करेंगे। मेरे प्रभु क्योंकि आप भगवत् तत्त्व के सर्वोच्च हैं, आप अवश्य जानते होंगे कि मैं क्यों अत्यधिक अधीर हूँ। मैं अपने भक्तजनों के प्रति अशुद्ध अनुमान करने की अपराधिनी हूँ। जब मैंने चित्रकेतु को शाप दिया तो उसे वृत्रासुर के रूप में जन्म लेना था। यद्यपि आपके भक्तों का इतना तेजस्वी चरित्र है कि जब उसे शाप भी दिया गया तो उसने मेरी स्तुति की। मेरे प्रभु, कृपया उसे नदिया में अपनी लीलाओं के अन्तर्गत अपना एक पार्षद बनने का अवसर प्रदान करें और कृपया उसे सदैव नदिया में आपकी लीलाओं का अवलोकन करने की अनुमति प्रदान करें।'

सीमन्तद्वीप या सिमलिया

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, 'आपकी सभी कामनाएं पूर्ण होंगी क्योंकि आप के बिना मैं अपनी गतिविधियाँ नहीं रच सकता।'

इसके पश्चात् श्रीचैतन्य महाप्रभु अन्तर्धान हो गए और **पार्वती जी उन्हें प्रणाम करने भूमि पर लोट गयीं।** पार्वती जी ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की रज को अपने केशों के मध्य लगाया। इस कारण से इस स्थान का नाम **सीमन्तद्वीप** विख्यात हुआ। इसके पश्चात् पार्वती जी अधीरतापूर्वक प्रभु के नदिया में अवतार लेने की प्रतीक्षा करने लगीं।

सीमन्तद्वीप एक पावन स्थान है जो इस भौतिक विश्व के भय को नष्ट कर सकता है और भक्ति के भूषण को धारण करने में सहायता कर सकता है। चैतन्य महाप्रभु के समय तक यहाँ के लोग देवी दुर्गा की पूजा करते थे परन्तु सिमलिया गांव में श्रीगौरचन्द्र और उनके अनेक पार्षदों ने अपनी लीलाओं को प्रदर्शित किया और नगर-संकीर्तन लीला रचाई।

गोद्रुम द्वीप-गादिगाछा

तत्पश्चात् श्रीईशान और पधारने वाले भक्तजनों ने नदिया में अपनी यात्रा अनवरत रखी। श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षदों के बारे में चर्चा करते हुए उन्होंने गादिगाछा गांव में प्रवेश किया। ईशान ने गादिगाछा के इतिहास को यह कहते हुए बताना आरम्भ किया कि यह पूर्व में गौद्रुमद्वीप के नाम से विख्यात था।

श्रीइन्द्र को श्रीचैतन्य दर्शन

एक दिवस इन्द्र ने सुरभि को बताया, 'भगवान् की मायावी क्षमता के कारण मैं स्वयं पर नियंत्रण कर पाने में असमर्थ हूँ और मेरे अभिमान के कारण मैंने अनेक पाप किए हैं। यद्यपि प्रभु ने मुझे क्षमा कर दिया है, परन्तु मैं अब भी अपराधी अनुभव कर रहा हूँ। मैं उपयुक्त रूप से दण्ड भुगतना चाहता हूँ ताकि मैं सदैव अपने प्रभु की यथायोग्य सेवा कर सकूँ।'

सुरभि ने मधुरता से उत्तर दिया, 'मैं तुम्हारे विचारों को समझ सकती हूँ और मैं तुम्हें आश्वस्त करती हूँ कि प्रभु के अवतार के द्वारा तुम्हारी कामनाएँ पूर्ण होंगी। वे कलियुग में प्राणि मात्र की भलाई के लिए निकट भविष्य में स्वयं को प्रकट करेंगे। ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण श्रीगौरांग का रूप धारण करेंगे और नदिया में अपनी उत्तमोत्तम लीलाओं को प्रकट करेंगे। जिन्हें उनका अनुग्रह प्राप्त होगा, केवल वे ही उनके वास्तविक व्यवहार को समझ सकेंगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के रूप में भगवान् मानव जाति को सभी प्रकार के दुःखों से मुक्ति दिलवाएँगे।'

सुरभि और इन्द्र श्रीनवद्वीप के सौन्दर्य के दर्शन मात्र से ही आनन्दित थे। भगवान् के चरणकमलों की आराधना की कामना की पूर्ति करते हुए सुरभि, श्रीचैतन्य महाप्रभु जो कि स्वयं भगवान् थे, उनके दर्शन करने में समर्थ थी। श्रीगौरांग के तेजस्वी सौन्दर्य और मुस्कान के साथ दर्शन करके उसका उल्लास असीमित था।

नवद्वीपचन्द्र ने सुरभि से कहा, 'मैं तुम्हारे भावों को समझ सकता हूँ तो मैं तुम्हें नवद्वीप में मेरी लीलाओं का अवलोकन करने के योग्य बना रहा हूँ ताकि तुम्हारी सभी कामनाएं पूर्ण होंगी।'

भगवान् ने अपनी मंगलकामना सुरभि से कही तब इन्द्र आए और विनम्रतापूर्वक उनके चरणकमलों में प्रणाम करने भूमि पर गिर गए। इन्द्र की दीन दशा देखकर भगवान् विश्वम्भर ने उन्हें आश्वस्त किया, 'चिंता मत करो। तुम्हारी कामनाएं पूर्ण होंगी।'

भगवान् धीरे से मुस्कुराए और इन्द्र को आशीर्वाद दिया, जिसने उत्तर में सुरभि के साथ मिलकर भगवान् की विविध रूपों से स्तुति की। यद्यपि जब श्रीचैतन्य महाप्रभु उनके नेत्रों से अन्तर्धान हुए वे अत्यन्त दुखी थे। उन्होंने एक बार पुनः अपने ध्यान को नवद्वीप के सौन्दर्य की ओर मोड़ा जहाँ आध्यात्मिक प्रेम ने स्वयं को सम्पूर्ण रूप से प्रकट कर लिया था।

पूर्व में वहाँ एक विशाल वट वृक्ष था जिसके नीचे सुरभि विश्राम करती थी। इसीके कारण ही इस स्थान का नाम गोद्रुमद्वीप पड़ा। इसका विख्यात नाम गादिगाछा है। जो कोई भी इस स्थान की यात्रा करेगा वह भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों की सेवा प्राप्त करेगा और उसकी समस्त कामनाएं पूर्ण होंगी।

मध्यद्वीप-माजिता

ईशान ठाकुर और उनके तीन पार्षद माजिता गांव के सौन्दर्य से मंत्रमुग्ध हो गए, जो पूर्व में मध्यद्वीप के नाम से विख्यात था। एक बार सात ऋषि भगवान् की महिमा में मग्न थे और जैसे ही उन्होंने नवद्वीप के सौन्दर्य का अवलोकन किया, उन्होंने यह चर्चा करनी आरम्भ कर दी कि नवद्वीप सभी पावन स्थानों में अत्यधिक पवित्र है। एक ऋषि ने कहा कि नदिया की शोभा असीमित है क्योंकि भगवान् वहाँ अपनी प्रकट और अप्रकट दोनों रूप में लीलाऐं रचाऐंगे। हर कोई भगवान् की प्रकट लीलाओं को देखने में समर्थ होगा और अत्यधिक सौभाग्यशाली भक्त अप्रत्यक्ष लीलाएं भी देख सकेंगे। एक अन्य ऋषि ने कहा कि कलि-युग में प्राणी मात्र के कल्याण के लिए भगवान्, जगन्नाथ मिश्र के घर पैदा होंगे। उनका रंग-रूप स्वर्णिम होगा और वे सम्पूर्ण विश्व को मंत्रमुग्ध कर लेंगे।

सप्तऋषियों को श्रीचैतन्य दर्शन

एक अन्य संत ने कहा कि श्रीकृष्ण की नवद्वीप लीलाएं ब्रह्मा और अन्य देवताओं की तुलना से दूर होंगी। फिर एक अन्य ऋषि ने टिप्पणी की कि क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु सर्वतंत्र-स्वतंत्र हैं, उनकी सभी गतिविधियां उनकी स्वयं की इच्छानुसार होंगी। कलियुग में भगवान् अति अनमोल आध्यात्मिक प्रेम से मानव जाति का कल्याण करेंगे। एक अन्य ऋषि ने टिप्पणी की कि क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु दया के सिंधु होंगे, जीव मात्र के प्रति उनका अनुग्रह असीमित होगा। वे और उनके पार्षद सम्पूर्ण विश्व को अपने संकीर्तन से मंत्रमुग्ध कर देंगे। एक अन्य ऋषि जानते थे कि श्रीगौर हरि प्रभु अपने भक्तजनों के प्राण और आत्मा होंगे और यह कि वे संन्यासी का जीवन जीने के लिए अपना गृह त्याग देंगे। यद्यपि वे पवित्र स्थानों को अपनी उपस्थिति से आशीष देंगे, परन्तु प्रभु भगवान् जगन्नाथ के प्रेम में बँधे अधिकतर नीलाचल में वास करेंगे।

इस प्रकार सातों ऋषि चर्चा करते रहे और प्रभु के चरणकमलों का स्मरण करते रहे। तब मध्याह्न के समय के सूर्य के समान तेज लिए श्रीचैतन्य महाप्रभु इन सप्त ऋषियों के सम्मुख प्रकट हुए। ऋषि, प्रभु के आकर्षक सौन्दर्य को निहारते हुए अपनी पलकें नहीं झपका सके थे। उल्लसित होकर वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में जा गिरे और विविध प्रकार से उनकी स्तुति करने लगे।

प्रभु की परिक्रमा पूरी करके वे उनसे बोले,'मेरे प्रिय प्रभु, हम अपने नेत्रों से आपकी नदिया लीलाओं को देखने की कामना लिए हैं। हम अपने ध्यान में भी नदिया के दर्शन करना चाहते हैं और आपके भक्तजनों की स्तुति गाना चाहते हैं।'

ऋषि जनों ने प्रभु से उनके दर्शन करने के लिए उन्हें सहस्रों नेत्र प्रदान करने की प्रार्थना की। प्रसन्न होकर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें बताया, 'तुम्हारी कामना पूर्ण होगी पर एक बात का स्मरण रखना। मेरी नवद्वीप लीलाएं अति गोपनीय हैं तो आप उन्हें अपने में ही गुप्त रखना।'

यह सुनकर ऋषि बोले, 'हे प्रभु, क्या सूर्य को एक हाथ की हथेली से ढकना संभव है?'

सप्तऋषि घाट

यह सुनकर प्रभु मुस्कुराने लगे। ऋषि जनों पर विविध प्रकार से अनुग्रह कर प्रभु अन्तर्धान हो गए। वे सब उनके अन्तर्धान होने से अति दुखी हो गए और उन्होंने अनुभव किया कि गंगा के तट पर वह स्थान उनके लिए उपयुक्त है तो

उन्होंने वहीं वास करने का निर्णय किया। वह स्थान **सप्त-ऋषि-घाट** के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

यह स्थान मध्य-द्वीप के नाम से भी प्रसिद्ध हो गया क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु यहाँ मध्याह्न के सूर्य के समान प्रकट हुए थे। जो ऋषि जन वहाँ ध्यान में मग्न थे उन्होंने इस स्थान का नाम मध्यद्वीप रखा, ऐसा स्थान जहाँ सभी के पाप नष्ट हो जाते हैं। श्रीगौरांग प्रभु की लीलाओं के कारण, यह स्थान सम्पूर्ण विश्व में विख्यात हो गया।

वामनपोखरा

आगे श्रीईशान प्रसन्नतापूर्वक वामनपोखरा नामक गांव में गए। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य से उस स्थान की महिमा की चर्चा करनी आरम्भ कर दी जहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु ने लीलाऐं रचाईं थीं। कुछ विद्वानों का मानना है कि वामनपोखरा पूर्व में ब्राह्मण-पोखरा के नाम से जाना जाता था। इस स्थान के इतिहास का श्रीईशान इस प्रकार वर्णन करते हैं।

एक बार वहाँ उच्चकोटि के वृद्ध विद्वान् ब्राह्मण पधारे जो कि ध्यान लगाने में निपुण और सभी शास्त्रों के ज्ञाता थे। वे मन में पुष्कर-तीर्थ की यात्रा का विचार संजोये थे, जिसके लिए उनके हृदय में अत्यधिक आदर था, परन्तु वृद्ध अवस्था होने के कारण वे उस स्थान पर नहीं जा सकते थे।

वे यह कहते हुए प्रायश्चित्त करते थे, 'मैं अभागा हूँ मैं श्रीपुष्कर-तीर्थ के दर्शन नहीं कर सकता क्योंकि वह सुदूर पश्चिम देश में स्थित है। मैंने अपनी तरुण अवस्था बिना किसी तथ्यपूर्ण लाभ के व्यर्थ कर दी। मैं अचम्भित होता हूँ कि श्री पुष्कर-तीर्थ कब मुझ पर अनुग्रह करेंगे ताकि मैं वहाँ जा सकूँ।'

इस प्रकार ब्राह्मण एकांत में विलाप करने लगा। ब्राह्मण के अप्रसन्न हृदय को देख दयालुता से भरे श्री पुष्कर तीर्थराज, उनके सम्मुख प्रकट हुए। अचानक एक पवित्र जल से भरा नवीन कुण्ड वहाँ प्रकट हो गया। तब तीर्थराज ने ब्राह्मण को बताया, 'अब और ज्यादा विलाप मत करो। आओ और इस कुण्ड में स्नान करो।'

यहाँ पुष्कर तीर्थ प्रकट हुये

ब्राह्मण अति प्रसन्न हो गया और शीघ्रतापूर्वक स्नान किया। जैसे ही वह कुण्ड से बाहर आया, उसे उत्तमोत्तम ज्ञान का भण्डार प्राप्त हुआ। ब्राह्मण ने भूमि पर लेटकर कर पुष्कर-तीर्थ को प्रणाम किया और आदर से हाथ जोड़कर उसने कहा, 'आपकी बहुत कृपा कि आप इतनी दूर से मेरे लिए यहाँ आए।'

पुष्कर ने उत्तर दिया, 'मैं दूर स्थान से नहीं आया हूँ। इसके विपरीत, मैं पूर्व में इस पावन स्थान की सेवा करने के लिए नदिया में वास करता था, जहाँ पर

सभी पावन स्थल एकत्र होकर श्रद्धा व्यक्त करते हैं। श्रीनवद्वीप-धाम प्रेम और समर्पण का अनंत धाम है और यह श्रीगौरचन्द्र जिन्होंने पूर्व में श्रीवृन्दावन धाम में रास-नृत्य रचाया था, उनकी लीलाओं का यह स्थान है। वे श्रीवृन्दावन में श्रीश्याम सुन्दर और यहाँ श्रीनवद्वीप में श्रीगौर हैं।

श्रीनवद्वीप में भगवान् भक्त की तरह व्यवहार करते हैं। यह कलि-युग श्रीचैतन्य महाप्रभु की प्रकट और अप्रकट लीलाओं के कारण प्रसन्नता की नदी में डूब जाएगा। प्रभु इस कलि-युग में समर्पण के अनमोल भूषण का वितरण करेंगे और संकीर्तन की महिमा प्रकट कर जीव मात्र को अधमता से मुक्ति प्रदान करेंगे। नदिया के सौभाग्यशाली लोग श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के साक्षी बन सकेंगे।'

यह सब सुनकर ब्राह्मण ने यह कहते हुए उच्चस्वर में रोना आरम्भ कर दिया, 'क्या मैं उस समय नदिया में जन्म ले सकूँगा, क्या मैं श्रीगौरचन्द्र प्रभु की लीलाओं का दर्शन करने का सौभाग्यशाली हो सकूँगा?' ब्राह्मण को विविध प्रकार से सांत्वना देकर श्रीपुष्कर अन्तर्धान हो गए।

ब्राह्मण, पुष्कर तीर्थ के अन्तर्धान होने से निरुत्साहित हो गया। उस समय एक रहस्यमय स्वर ब्राह्मण से बोला, 'सदैव श्रीगौरचन्द्र के चरणकमलों का ध्यान करो। शांत हो जाओ क्योंकि तुम्हारी सभी कामनाएं पूर्ण होंगी।'

ब्राह्मण यह सुनकर अति प्रसन्न हो गया और वह सदैव श्रीनवद्वीप के चन्द्रमा के बारे में सोचता रहता। हर कोई यह देखकर अचम्भित था कि कैसे ब्राह्मण, श्रीचैतन्य महाप्रभु को प्रसन्न करने के प्रयास में स्वयं को मग्न रखता था। **ब्राह्मण-पुष्कर** नाम उस अनुग्रह से आया जो पुष्कर ने ब्राह्मण को दिया।

ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को सूचित किया कि यही वह स्थान है जहाँ ब्राह्मण ने श्रीपुष्करराज का अनुग्रह प्राप्त कर श्रीचैतन्य महाप्रभु की आराधना की थी। जो यहाँ वास करते हैं, श्रीचैतन्य महाप्रभु के दर्शन कर सकते हैं। जो इस स्थान की स्तुति करते हैं वे नरक के कष्ट से मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

'हे श्रीनिवास मैंने जो यहाँ अनुभव किया उसके बारे में मैं क्या कह सकता हूँ?' ऐसा कहकर ईशान रोने लगे। तत्पश्चात शीघ्र ही वे वामनपोखरा से प्रस्थान कर गए। **हाटभांगा गांव** की सीमा पर खड़े हो ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया, 'इस हाटभांगा गांव को देखो, जो पूर्व में **उच्चहट्ट** के नाम से जाना जाता था। मैं अब तुम्हें बताऊंगा कि गांव को यह नाम कैसे प्राप्त हुआ।'

इन्द्रादि देवगण

इन्द्र और अन्य देवतागण पूर्व में यहाँ वास करते थे और कभी-कभी आपस में वे इस विषय पर चर्चा करते थे कि कलि-युग कैसे श्रीकृष्ण चैतन्य, श्री नित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य के प्राकट्य से शांत होगा। कुछ ने कहा

श्रीनवद्वीप उन सभी वैष्णव जनों, महान भक्त की लीला स्थली बनेगा जो कि जीव मात्र में निर्धन और घृणित लोगों के प्राण और आत्मा हैं। उनके पार्षद अपने संकीर्तन उत्सव से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मंत्रमुग्ध कर देंगे। नदिया में दिव्य प्रसन्नता की एक नदी बहेगी जो कि प्राणी मात्र के कष्टों का नाश करेगी।

कुछ ने कहा कि केवल सौभाग्यशाली व्यक्ति ही नदिया में प्रभु की लीलाओं के साक्षी बन सकेंगे। सभी देवता, श्रीचैतन्य महाप्रभु के वहाँ प्रकट होने के समय वहीं जन्म लेने की आशाऐं संजोने लगे।

कुछ ने अति विश्वास से कहा कि निश्चित ही उन्हें वहाँ प्रकट होने और श्रीचैतन्य महाप्रभु की उत्तमोत्तम लीलाओं को देखने का अवसर मिलेगा। उन सब ने आशा की कि वे प्रभु की आध्यात्मिक सेवाओं में स्वयं को मग्न कर सकेंगे।

तत्पश्चात् देवताओं ने प्रभु से यथाशीघ्र श्रीनवद्वीप में प्रकट होने की प्रार्थना करते हुए, हाथ हवा में ऊपर कर उच्चस्वर में कीर्तन करना आरम्भ कर दिया। तब उन्होंने कीर्तन को अखण्ड रखते हुए मदमस्त होकर नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

उच्चहट्ट

उच्चस्वर में कीर्तन करने के कारण ही इस स्थान का नाम उच्चहट्ट उत्पन्न हुआ। इस स्थान का दृश्य मानव जाति का कल्याण करता है क्योंकि अपने पार्षदों के साथ शची-कुमार ने इसे अपने दिव्य संकीर्तन और प्रेम से गौरवान्वित किया था।

कोलद्वीप-कुलिया पहाड़पुर

इस प्रकार वर्णन करते हुए ईशान अपने अश्रुओं पर नियंत्रण नहीं कर सके क्योंकि श्रीचैतन्य महाप्रभु बार-बार उन्हें स्मरण हो रहे थे। श्रीईशान श्रीनिवास आचार्य के साथ आगे गए और कुलियापहाड़पुर गांव में प्रवेश कर गए। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि पूर्व में इस स्थान को **कोलद्वीप** के नाम से जाना जाता था। कोलदेव नाम का एक ब्राह्मण भक्त इस स्थान पर आराधना में लीन था। वह ब्राह्मण नेत्रों में अश्रु लिए श्रीकोलदेव के चरित्र का स्तुतिगान करने में मग्न रहता था। वह कोलदेव से मात्र एक बार उसके सम्मुख प्रकट होने की प्रार्थना करता था। उसकी निष्कपट प्रार्थना और अश्रुओं ने अपने भक्तों के कल्याणकर्ता श्रीचैतन्य महाप्रभु को आकर्षित कर दिया, जिन्होंने तब उत्तम सौन्दर्य, सुगठित हाथों के साथ, श्रीमुखपर, नासिका नेत्र के साथ कोलदेव का रूप धारण कर लिया।

भगवान् वाराह देव के सौन्दर्य को देख ब्राह्मण भाव-विभोर हो गया और अत्यधिक आनन्द से उनके चरणकमलों में जा गिरा। भगवान् कोलदेव ने तब स्नेहपूर्वक ब्राह्मण को बताया कि उसकी कामनाएं पूर्ण होंगी और वे नदिया में प्रभु की लीलाओं को देख सकेंगे। ऐसा कहकर प्रभु अन्तर्धान हो गए।

ब्राह्मण अत्यधिक निराश था परन्तु, उसने अपने भावों पर नियंत्रण किया और भगवान् किस रूप में नदिया में अवतार लेंगे, इसका चिन्तन करने लगा। ब्राह्मण ने एक निश्चित अवतार में भगवान् के प्राकट्य को समझने के लिए वैदिक शास्त्रों का सहारा लिया। उसने पाया कि भगवान् कलियुग में नदिया में स्वर्णिम रूप धारण कर एक ब्राह्मण परिवार में प्रकट होंगे।

वे संकीर्तन की महिमा को स्थापित करेंगे और प्रेम और समर्पण के सिद्धान्तों का समाज के सर्वाधिक पतित लोगों में वितरण करेंगे। वे ब्रज में पाये जाने वाले उत्तमोत्तम प्रेम का पान करेंगे और एक शुभ समय पर संन्यासी जीवन स्वीकार करेंगे।

कोलद्वीप की अत्यधिक सौन्दर्यवान भूमि के दर्शन करते हुए ब्राह्मण ने विलाप करना आरम्भ कर दिया, 'शास्त्रों में श्रीनवद्वीप का नाम भगवान् की लीला स्थली के रूप में लिया गया है परन्तु मैं कितना अभागा हूँ कि मैं इसके बारे में कुछ नहीं जानता। मुझे संशय है कि क्या मुझे कभी भगवान् के प्राकट्य के समय वहाँ जन्म लेने के लिए श्रीनवद्वीप का अनुग्रह प्राप्त होगा।'

इसप्रकार सोचते हुए ब्राह्मण निराशा में रोने लगा। तब आकाश में एक वाणी ने चमत्कारिक रूप से घोषणा की, 'तुम समय पर जन्म लोगे और इसलिए तुम्हें अपने शोक का त्याग कर देना चाहिए।'

ब्राह्मण ऐसा सुनकर अति आनन्दित हो गया और वह प्रभु के भविष्य में होने वाले प्राकट्य के चिन्तन में डूब गया। ईशान ने श्रीनिवास को बताया कि उसने आधिकारिक सूत्रों से सुना है कि ब्राह्मण के प्रति कोलदेव के अनुग्रह के कारण यह स्थान **कोलद्वीप** के नाम से जाना जाएगा। इस स्थान का दर्शन सब प्रकार के पापों का नाश करेगा और जीव को पवित्र समर्पण प्रदान कर उसकी समस्त कामनाएं पूर्ण करेगा।

ऋतुद्वीप-रातुपुर

इस प्रकार भक्तजनों ने प्रभु की सभी लीला स्थलियों की यात्रा की। जब वे समुद्रगति गांव के निकट आए तो ईशान ने श्रीनिवास को बताया कि विद्वान् अधिकारी वर्ग इस स्थान को गंगा और सागर से इसके सम्बन्ध के कारण **समुद्रगति** कहते थे। समुद्रगति गांव गंगा के अनुग्रह पर आश्रित होने के कारण यहाँ विकसित हुआ।

एक दिवस समुद्र ने गंगा से कहा कि तुम्हारे समान भाग्यशाली कोई नहीं है। बुद्धिमान और धर्मात्मा लोगों के अनुसार श्री गौरसुन्दर जो कि स्वयं सर्वोच्च हैं, वे नदिया में प्रकट होंगे और गंगा के तट पर अनेक लीलाएं रचाएंगे। अपने संगियों के साथ प्रभु गंगा में क्रीड़ा करेंगे, जैसे भगवान् कृष्ण पूर्व में यमुना जी के जल में क्रीड़ा किया करते थे।

जाह्नवी गंगा ने कहा, 'मैं अपने दुर्भाग्य किसको बताऊं? आनन्द देकर अब अत्यधिक दुःख आने वाला है। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु संन्यासी जीवन स्वीकार कर नदिया को छोड़ देंगे और तुम्हारे तट पर वास करेंगे। जाह्नवी ने कहा- महाप्रभु वहाँ दिवस प्रतिदिवस अपनी उत्तमोत्तम लीलाओं का प्रकाश करेंगे और तुम्हारा आनन्दवर्धन करेंगे। सभी तुम्हारे भाग्य की सराहना करेंगे। उस बात को न कहकर तुम मेरी विडम्बना कर रहे हो।

समुद्र की आशा बँध गयी

समुद्र ने उत्तर दिया, 'आप क्या कह रही हो? मुझे प्रभु को संन्यासी के वेष में देखना होगा, जो कि मेरे लिए इतना कष्टदायक होगा कि मुझे भय है कि मैं उसे कैसे सहन करूँगा। मेरी अधीरता शान्त हो इसलिए मैं आपकी करुणा प्राप्त करने आया हूँ क्योंकि आप मुझे नदिया में श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के और शोभायमान सुन्दरता के दर्शन करवा सकती हो जो उन्होंने वहाँ प्रकट की। मैं प्रभु के प्रिय पार्षदों को उनके सुन्दर घुंघराले केशों को सजाते हुए देखूँगा। आपकी सहायता से मैं चैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों के दर्शन करूँगा।'

इस प्रकार वे दोनों निरंतर प्रभु के प्राकट्य का चिंतन करते रहे और अधीर हो गए। अंततः गंगा और समुद्र को यह ज्ञात हुआ कि प्रभु के प्राकट्य का समय आ चुका है। उनके प्राकट्य का समय चन्द्रग्रहण के कारण और आगामी हरि-नाम-संकीर्तन के कारण अति शुभ था। श्रीनवद्वीप अति उत्साह से भर उठा था और साथ ही श्रीजगन्नाथ मिश्र का निवास भी। वास्तव में सभी लोग अति प्रसन्नता के सागर में तैरने लग गए थे।

सभी भक्तजनों ने प्रभु की आराधना आरम्भ कर दी जबकि देवतागण आकाश से पुष्प वर्षा कर रहे थे। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु प्रकट हुए, तत्क्षण यह समाचार सर्वत्र फैल गया। हर दिवस समुद्र गंगा के साथ आकर प्रभु श्रीगौरचन्द्र की लीलाओं का दर्शन करते। एक दिवस समुद्र ने श्रीगौरचन्द्र को अपने पार्षदों के साथ गंगा के तट पर एक वृक्ष के नीचे देखा। वे एक दिव्य सिंहासन पर विराजमान थे और उनकी सुन्दरता कन्दर्प के गर्व को परास्त कर रही थी। उनके सुन्दर घुंघराले केश सम्पूर्ण विश्व के लोगों को मंत्रमुग्ध कर रहे थे और उनके मुख का सौन्दर्य कोटि चन्द्रमाओं को परास्त कर रहा था।

हो गये श्री चैतन्य दर्शन

प्रभु ऐसे मुस्कुरा रहे थे मानो अमृत बरस रहा हो। उनके नेत्र चौड़े थे जो कानों तक फैले हुए थे। उनकी भुजाएं लम्बी थीं जो उनके घुटनों तक पहुँच रही थीं। उनका वक्षस्थल आश्चर्यजनक ढंग से चौड़ा था। वे अपनी सुगठित नाभि, घुटनों और चरणों से अति सुन्दर प्रतीत हो रहे थे। उन्होंने लाल गोटा युक्त रेशम की सफेद धोती धारण कर रखी थी। उनका तन चन्दन लेप से लिप्त था और विविध प्रकार के सुगन्धित पुष्पों और आभूषणों से सुशोभित था।

प्रभु अपने दोनों ओर खड़े अपने पार्षदों के संग अत्यधिक सुन्दर लग रहे थे। श्री नित्यानन्द उनके दाईं तरफ और श्रीगदाधर पंडित उनके बाईं तरफ खड़े थे। श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीवास पंडित अन्यों के साथ उनके सामने खड़े थे।

प्रभु को निहारते हुए समुद्र अति उल्लसित हो गया। वास्तव में वह प्रभु गौरचन्द्र को यथेष्ट समय तक बिना पलक झपकाए निहारते रहे। समुद्र यह देखकर अचम्भित थे कि कैसे प्रभु के पार्षद विविध प्रकार से उनकी सेवा करते हैं और अपने चित में अनेक कामनाएं सँजोने लगे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु, समुद्र के चित्त को समझ सकते थे और उन्होंने उनकी सारी कामनाएं स्वीकृत कर लीं। उल्लास में व्यग्र हो समुद्र ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का आनन्द लेना जारी रखा। उन्होंने गंगा माता के सौभाग्य की प्रशंसा की, जिनके साथ वे प्रभु की लीलाओं का दर्शन करने नित्य प्रति आते थे।

समुद्रगति नाम समुद्र के गंगा के साथ आने के कारण पड़ा। लोग इस स्थान को समुद्रगति कहते हैं, जिसका दर्शन जीव की विशुद्ध समर्पण की भावना में वृद्धि करता है।

चम्पकहट्ट

समुद्रगति से ईशान चम्पकहट्ट के लिए चल पड़े। उन्होंने श्रीनिवास को बताया कि चम्पकहट्ट नाम धीरे-धीरे **चम्पाहाटि** में परिवर्तित हो गया। इस स्थान पर चम्पक कुंज था जहाँ माली माला और विविध प्रकार के पुष्प आभूषण बनाने के लिए अनेक चम्पक पुष्प एकत्र करते। उन्होंने इस स्थान पर अपने पुष्प आदि के विक्रय के लिए एक पुष्प हाट स्थापित कर दिया और लोग वहाँ से पुष्प खरीदते जो उन्हें अपने श्रीविग्रह की आराधना के लिए आवश्यक थे। इस प्रकार चम्पाहाटि नाम अस्तित्व में आया।

एक ब्राह्मण की कथा

कुछ प्राधिकारी वर्ग का मानना है कि इस स्थान पर यहाँ एक वृद्ध विद्वान् ब्राह्मण वास करता था, जिसके चित्त में श्रीकृष्ण के प्रति अगाध समर्पण था।

एक दिवस उसने असंख्य चम्पक पुष्प एकत्र किये और प्रसन्न चित्त से भगवान् कृष्ण की आराधना आरम्भ कर दी। वे श्याम वर्ण के कृष्ण का चिन्तन करते थे परन्तु, अचानक ब्राह्मण को श्रीविग्रह में गौरसुन्दर के रूप के दर्शन हुए। उनका स्वर्णिम रूप-रंग चम्पक पुष्प के समान था। तभी अचानक ब्राह्मण को अत्यन्त निराशा के भाव में छोड़ श्रीचैतन्य महाप्रभु अन्तर्धान हो गए। भारी मन से वह चम्पक पुष्पों को देखने लगा और तब यह देखने के लिए कि वह किस घटना का साक्षी बना है, वह वैदिक शास्त्रों में उसका वर्णन खोजने लगा।

यथा योग्य अध्ययन के बाद ब्राह्मण को शास्त्रों से यह उल्लेख प्राप्त हुआ कि प्रभु कलियुग में संकीर्तन की महिमा स्थापित करने के लिए अवतार लेकर प्रकट होंगे जो कि सम्पूर्ण विश्व में एक क्रान्ति उत्पन्न करेगा, यद्यपि उसने समझा कि श्रीकृष्ण अत्यधिक दीर्घकाल के बाद नदिया में अवतार लेंगे तो इस कारण वे प्रभु की स्वर्णिम आभायुक्त तन के दर्शन नहीं कर सकेंगे। इस प्रकार चिन्तन करते हुए ब्राह्मण गहरी साँसें भरने लगा और उसका चेहरा और वक्षस्थल उनके नेत्रों से बहते अश्रुओं के कारण सिक्त हो गया।

प्रभु की इच्छा से ब्राह्मण गहरी निद्रा में सो गया और श्रीगौरहरि का स्वप्न देखने लगा जिसका सौन्दर्य उन्हें चम्पक पुष्पों का स्मरण करवाता था। उनका सुन्दर चेहरा और घुंघराले केश, कमल नयन, सुगठित नाक, हाथ और वक्ष स्थल सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मंत्रमुग्ध कर रहे थे। ब्राह्मण के आनन्द की कोई सीमा नहीं थी। अगली प्रातः जागने के बाद ब्राह्मण ने चम्पक पुष्पों का प्रसन्नता से आलिंगन कर लिया और कहा, 'आपने मुझे प्रभु के स्वर्णिम आभा युक्त अवतार के दर्शन करवा दिए।'

ब्राह्मण द्वारा चम्पक पुष्पों को अभिव्यक्त महिमा मण्डित शब्दों के कारण स्थान का नाम चम्पकहट्ट पड़ा। उस समय भगवान् ने ब्राह्मण की उसकी कामना के पूर्ण होने की स्वीकृति प्रदान कर दी ताकि वह आश्वस्त हो जाए कि वह नदिया में उनके दर्शन करेगा।

ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को ब्राह्मण वाणीनाथ के निवास के दर्शन करवाए। वाणीनाथ के बारे में यह संकेत श्रीगौर गणोद्देश दीपिका ग्रन्थ में भी है।

चम्पक गांव से ईशान ने रातुपुर गांव के लिए यात्रा आरम्भ की। जब वे रातुपुर के निकट पहुँचे तो ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि पूर्व में यह एक छोटा गांव था और भगवान् कृष्ण के असंख्य भक्तजनों का धाम था। श्रीगौरांग ने रातुपुर में अनेक लीलाएँ रचाईं।

ऋतुपुर का इतिहास

ईशान ने कहा, हे मेरे प्रिय श्रीनिवास, अब मैं तुम्हें इस गांव के इतिहास के बारे में बताऊंगा। यहाँ सभी छः ऋतुएं–वर्षा, शरद, हेमन्त, शीत अथवा शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म– अपने अवतार रूप में उपस्थित थी। एक दूसरे से परिचय करते हुए वे अति मधुरता से चर्चा आरम्भ करतीं, 'श्रीकृष्णचन्द्र नदिया में प्रकट होंगे।' उनमें से कुछ कहतीं, 'वे यहाँ हमारी प्रसन्नता में वृद्धि करने के लिए अद्भुत लीलाऐं रचाऐंगे।'

किसी ने कहा, 'ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीगौरहरि हमारी प्रसन्नता के लिए स्वयं को उजागर करेंगे।' किसी अन्य ने कहा, 'श्रीनारद जी ने सर्वत्र यह घोषणा की है वे प्रभु के अवतार के साथ कलियुग में प्रकट होंगे।'

किसी ने पूछा, 'वे कब प्रकट होंगे?'

किसी अन्य ने कहा, 'बसन्त शायद वह सौभाग्यशाली ऋतु है।'

बसन्त आनन्दित हो गया और अपने सौभाग्य के प्रति आभार व्यक्त करने लगा। अन्य ऋतुऐं श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्राकट्य के समय के चिन्तन में लगी रहीं। उन्होंने चित्त में अनेक उम्मीदें लिए प्रभु से प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी। इस कारण यह स्थान **ऋतुद्वीप** के नाम से विख्यात हो गया। प्रभु यहाँ सभी छः ऋतुओं का आनन्द लेंगे। जो कोई भी इस स्थान के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त कर लेता है वह नदिया में जन्म लेकर श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के दर्शन करने का अधिकारी बन जाता है।

यह कहकर ईशान ने **ऋतुद्वीप** से प्रस्थान किया और श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज के साथ विद्यानगर के लिए चल पड़े।

जह्नुद्वीप

ईशान ने उन्हें बताया, 'विद्यानगर के सौन्दर्य को देखो। अब मैं तुम्हें बताऊंगा कि इसे यह नाम कैसे प्राप्त हुआ।' एक दिवस देवताओं की राजसभा में बैठे बृहस्पति जी अति अधीर हो उठे। देवता गणों ने उनसे पूछा, 'आप इतने अधीर क्यों हो?'

बृहस्पति ने उल्लसित होकर उन्हें बताया, 'सर्वोच्च प्रभु कलियुग में नदिया में एक ब्राह्मण परिवार में प्रकट होंगे। प्रभु गौरचन्द्र, जगन्नाथ के पुत्र के रूप में अपने अवतार में अनेकों उत्तमोत्तम लीलाओं को उजागर करेंगे। जब वे अपने राम अवतार में प्रकट होंगे तो प्रभु शास्त्रों के द्वारा अपना कौशल दिखाएंगे। जब वे अपने कृष्ण अवतार में प्रकट होंगे तो प्रभु अपने आप को ग्वाल बाल के रूप में प्रदर्शित करेंगे। श्रीगौरचन्द्र के अवतार में वे अपने शिक्षा के कौशल का प्रदर्शन करेंगे।'

बृहस्पति भी होंगे नवद्वीप में

'चैतन्य महाप्रभु मेरी सभी कामनाएं पूर्ण करेंगे। मुझे अवश्य श्रीनवद्वीप जाना चाहिए और प्रभु से स्वयं को शीघ्र ही श्रीनवद्वीप में उजागर होने की प्रार्थना करते हुए उपासना करनी चाहिए।'

अपने अनुचरों को साथ लेकर बृहस्पति इस प्रकार नवद्वीप चले गए, जहाँ प्रभु अपनी शिक्षाओं की लीला रचाएंगे। बृहस्पति, प्रभु गौरचन्द्र की उपासना करने विद्यानगर आ गए। तब प्रभु ने उनसे कहा, 'अति शीघ्र मैं इस स्थान पर अपने पार्षदों के साथ स्वयं को उजागर करूँगा। लोगों को यथा सम्भव शिक्षा में सहभागिता करने के लिए प्रोत्साहित करो।'

बृहस्पति यह आदेश पाकर अति प्रसन्न थे और उन्होंने निष्कपटतापूर्वक शिक्षा का प्रसार करना आरम्भ कर दिया। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने उस स्थान पर अनेकों विद्यार्थियों को पढ़ाना आरम्भ कर दिया। प्रभु की लीलाओं का वर्धन करने के लिए, उन्होंने इस प्रयत्न में स्वयं को मग्न कर लिया, इस कारण यह स्थान **श्रीविद्यानगर** के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस गांव का दर्शन करने से जीव की सभी कामनाएं पूर्ण होती हैं यह जीव की अनभिज्ञता को मिटाता है। प्रभु गौरांग ने उस स्थान को अपने एक भक्त के घर में वास करने की लीलाओं के लिए चुना।

आगे ईशान ठाकुर जननगर के ओर बढ़े। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि जननगर पूर्व में **जह्नुद्वीप** के नाम से जाना जाता था। यह जह्नुद्वीप क्यों कहलाता था? जह्नु मुनि ने एक बार श्रीनवद्वीप के सौन्दर्य को निहारते हुए विचार किया, 'कलियुग, अन्य युगों से अधिक सौभाग्यशाली है क्योंकि कलियुग में श्रीकृष्ण, श्रीचैतन्य महाप्रभु के रूप में प्रकट होंगे। वे कलियुग में अपने पार्षदों के संग नवद्वीप में प्रकट होंगे। वे स्वर्णिम आभा लिए होंगे देखने में सुन्दर होंगे। वे यहाँ अनेकों अद्भुत लीलाएं रचाएंगे। क्या मैं इन लीलाओं को देखने में समर्थ होऊंगा?'

इस प्रकार चिन्तन करते हुए जह्नु मुनि ने श्री गौरचन्द्र की उपासना आरम्भ की। अपने नेत्रों को बन्द रखते हुए उन्होंने प्रभु के प्रति ध्यान लगाना आरम्भ कर दिया। ध्यान में जह्नु मुनि के चित्त में प्रभु प्रकट हुए। मस्तक पर मोर पंख धारण कर त्रिभंग मुद्रा में खड़े श्याम वर्ण धारी प्रभु को निहार कर संत मंत्रमुग्ध हो गए। प्रभु ने अपने एक हाथ में बांसुरी पकड़ रंखी थी और अति मधुरता से उसका वादन कर रहे थे। उनका चन्द्र समान मुख अत्यधिक तेज लिए चमक रहा था। अचानक जह्नु मुनि ने प्रभु को केसरिया वस्त्र धारण कर हाथ में छड़ी और दूसरे हाथ में कमण्डल लिए खड़े देखा।

जह्नु मुनि को दर्शन

जह्नु मुनि और अधिक देर तक अपने नेत्र बन्द नहीं रख सकते थे। जैसे ही उन्होंने अपने नेत्र खोले, उन्होंने प्रभु को अपने सामने देखा। प्रभु के सुन्दर घुंघराले केश, उनके स्वर्णिम आभा वाले तन को शोभित करते आभूषणों ने मुनि को मंत्रमुग्ध कर दिया। वास्तव में प्रभु इतने भव्य रूप में प्रकट हुए कि प्रेम के देवता कन्दर्प भी लज्जित हो जाऐं। गौरहरि प्रभु ने मुनि पर अनुग्रह किया, जिसने तब उनके चरणकमलों पर गिर उन्हें अश्रुओं से भिगो दिया। संत ने प्रभु के मुख के दर्शन करते हुए प्रभु का गौर रूप दर्शन प्राप्तकर लिया।

चैतन्य महाप्रभु ने पुनः-पुनः मुनि को आलिंगन प्रदान किया और उन्हें यह कहकर कि उनकी कामनाएं पूर्ण होंगी, उन्हें आशीष दिया। तब प्रभु अचानक अन्तर्धान हो गए। संत के प्रति शांत होकर अपने सौभाग्य आभार व्यक्त करने लगे। उन्होंने स्वयं से कहा, 'मेरा ध्यान दीर्घकाल बाद सफल हो गया।'

जह्नु मुनि निष्कपटतापूर्वक नदिया की महिमा का गान करना चाहते थे और उन्होंने स्वयं को बिना किसी विराम के नदियाचन्द्र की महिमा गान में मग्न कर लिया। ऐसा करते हुए उनका तन धूल से ढक गया और उनके नेत्र निर्झर अश्रु बहा रहे थे। जह्नु मुनि पूर्व में इस द्वीप पर वास करते थे इस कारण यह जह्नुद्वीप नाम से प्रसिद्ध हो गया।

ईशान ने श्रीनिवास आचार्य से कहा, 'श्री गौरचन्द्र की जह्नुद्वीप में लीलाओं को चिन्तन करते समय मेरा हृदय क्षीण हो गया। लोग कहते हैं कि यहाँ तपोवन नाम से जह्नु मुनि का एक सुन्दर वन स्थित है, जो कि विविध प्रकार के पुष्पों से परिपूर्ण है। इस स्थान के दर्शन सब प्रकार के कष्टों को दूर करेंगे और समर्पण और विश्वास को बढ़ाऐंगे।'

मोद द्रुमद्वीप

जननगर से ईशान **मौगची गांव** की दिशा में आगे बढ़े, जो कि अत्यधिक सुन्दर था जो कि पूर्व में **मोदद्रुमद्वीप** के नाम से प्रसिद्ध था। इस स्थान का इतिहास यह है कि अपने पिता के वचनों को निभाने के लिए कौशल्या नन्दन श्रीराम ने अयोध्या से प्रस्थान किया और वन में वास किया था। अपने राजसी वेष को त्याग कर, प्रभु ने जानकी जी और लक्ष्मण जी के साथ अनेक वनों की यात्रा की। प्रभु के कोमल पैरों से चलने के कारण कठिन मार्ग भी उनके लिए कोमल हो गया।

भगवान् श्रीराम की वन लीलाओं की कथा अति सुन्दर है। जब भगवान् एक वन से दूसरे वन की यात्रा कर रहे थे तो ऋतु सदा अनुकूल रही। जिस स्थान पर प्रभु जाते थे वहाँ वास करने वाले लोग उनके मनमोहक सौन्दर्य के

दर्शन करके व्यग्र हो उठते थे। वे वन और पर्वत जिनकी श्री रामचन्द्र ने यात्रा की, वे पवित्र स्थान के रूप में प्रसिद्ध हो गए।

ईशान जहाँ खड़े थे वहाँ से कुछ दूरी पर उत्तर दिशा में भगवान् श्रीरामचन्द्र एक पर्वतीय गुफा में वास करते थे। आज भी हर दिवस लोग उस पवित्र स्थान के दर्शन करने जाते हैं। इस प्रकार अनेक स्थानों की यात्रा करते हुए भगवान् रामचन्द्र इस स्थान पर आए थे। जिस मार्ग से राजा दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्र गुजर रहे थे वह अत्यन्त सुन्दर दृश्य था। भगवान् श्रीराम आगे बढ़े और श्री जानकी जी मध्य में और अन्त में श्री लक्ष्मण साथ चल रहे थे।

सब लोगों के साथ पशु और पक्षी भी श्रीराम, श्रीजानकी और श्रीलक्ष्मण का सौन्दर्य देखकर मन्त्रमुग्ध हो गए थे। भगवान् श्रीराम, जो कि ब्रह्मा जी और अन्य देवताओं के भी गुरु हैं, इधर-उधर देखते हुए गजराज की चाल से चले जाते थे। श्रीनवद्वीप से कुछ ही दूर भगवान् ने मुस्कुराते हुए इस स्थान को देखा। श्रीरामचन्द्र के प्रसन्न मुख को देखकर जानकी जी ने पूछा, 'आप क्यों मुस्कुरा रहे हो?'

श्रीरामचन्द्र ने उत्तर दिया, 'द्वापर-युग के बाद, कलि-युग के मध्य में श्रीनवद्वीप में अद्भुत लीलाएं घटित होंगी। उस समय मैं श्रीनवद्वीप में अद्भुत लीलाएं रचाऊंगा और ऐसा करने के बाद मैं संन्यासी जीवन स्वीकार कर लूँगा। मैं ऐसे ही यात्रा करूँगा जैसे अब कर रहा हूँ। भविष्य का चिन्तन करते हुए ही मैं मुस्कुरा रहा हूँ।' यह सुनकर जानकी जी ने दोनों हाथ जोड़कर पूछा, 'मेरे प्रभु आप नदिया में क्या करेंगे?'

श्रीराम जानकी संवाद

प्रभु ने कहा, 'मैं एक ब्राह्मण के परिवार में प्रकट होऊंगा और मैं अपने बाल्यकाल में अनेक लीलाएं रचाऊंगा। मेरा रूप-रंग स्वर्णिम होगा और यह सम्पूर्ण विश्व को मन्त्रमुग्ध करेगा। मैं एक महान विद्वान् बनूँगा और मैं सम्पूर्ण विश्व में जाना जाऊंगा। मैं अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् दो बार विवाह करूँगा। मैं गया जाकर पिण्ड-दान करूँगा जैसे मैंने इस अवतार में किया। मैं नवद्वीप में अपने भक्त जनों की समर्पण भावना में वृद्धि करूँगा और संकीर्तन की महिमा का प्रचार करूँगा। मैं त्यागपूर्ण जीवन स्वीकार करूँगा और अपने प्रिय पार्षदों को शांत करूँगा।'

यह सुनने के पश्चात् जानकी जी ने मुस्कुराते हुए कहा, 'जब आपने संन्यास जीवन व्यतीत करने का निर्णय ले लिया है तो आप विवाह क्यों करोगे? मैं यह सोचती हूँ कि यह उचित नहीं है। आप इतने निर्दयी क्यों हो जबकि आप अपनी दयालुता के लिए जाने जाते हो?'

यह सुनकर भगवान् श्रीराम लज्जित हो गए और श्रीजानकी जी को बताया, 'मैं नवद्वीप में क्या करूँगा, यह तुम्हारी अवधारणा से दूर है।'

ऐसा कहते हुए भगवान् श्रीराम जानकी जी और लक्ष्मण जी के साथ यहाँ आए थे। यहाँ एक विशाल वट वृक्ष था। वे उस वृक्ष की छांव तले आकर खड़े हो गए। पुनः जानकी जी ने पूछा, 'किस प्रकार के संकीर्तन का आप नदिया में शुभारम्भ करेंगे?' भगवान् श्रीराम ने अपनी पत्नी से कहा, 'अपने नेत्र बन्द करो।'

श्रीजानकी जी को लीलादर्शन

जानकी जी ने अपने नेत्र बन्द कर लिए और नवद्वीप में अद्भुत लीलाओं का अवलोकन किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु के असंख्य भक्तजन संकीर्तन करने और गायन, नृत्य, और वाद्य यन्त्रों के वादन में मग्न थे। भक्तजनों के मध्य में किशोर अवस्था में सौन्दर्य के सिन्धु के समान श्रीगौरचन्द्र प्रभु खड़े थे। सीता जी, श्रीगौरहरि के विश्व को परास्त करने वाले सौन्दर्य के दर्शन कर उल्लसित भावों से भाव विभोर हो उठीं। तब उन्होंने अपने नेत्र खोल लिए और अपने प्रिय पति को देखा। अति स्नेह से श्रीरामचन्द्र ने उन्हें शांत किया।

लक्ष्मण भी इस दृश्य के साक्षी बने और प्रभु की संकीर्तन लीला का स्मरण करते हुए अत्यधिक भाव विभोर हो गए।

इस स्थान पर तीनों उल्लसित हो गए थे इस कारण इस स्थान को **मोदद्रुमद्वीप** के नाम से जाना गया। जो कोई भी मोदद्रुमद्वीप के दर्शन करता है वह श्रीराम, जानकी जी और लक्ष्मण जी का अनुग्रह प्राप्त करता है।

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास यह **रामवट नामक** स्थान है, जो कि कलियुग के आगमन के कारण विलुप्त हो गया। यहाँ से श्रीरामचन्द्र सीता जी और लक्ष्मण जी के साथ उत्कल गये थे। उत्कल (ओड़िशा) में श्रीरामचन्द्र ने भगवान् शिव के रामेश्वर नाम से श्रीविग्रह की स्थापना की। यह स्थान स्वर्ण-रेखा नदी के तट पर स्थित है। यहाँ से श्रीरामचन्द्र ने एक वन से दूसरे वन की यात्रा आरम्भ की और हर जगह वे अद्भुत लीलाओं में मग्न रहे। श्री गौरसुन्दर ने भी इस मायगाछी गांव में अनेक लीलाएं रचाईं।'

श्रीरामभक्त ब्राह्मण की कथा

'मेरे प्रिय श्रीनिवास यहाँ एक ब्राह्मण निवास करता था जो भगवान् श्रीराम कां उपासक था। जब विश्वम्भर प्रभु का प्राकट्य हुआ तो उस समय वह जगन्नाथ मिश्र के निवास पर उपस्थित था। उस समय देवताओं को उत्सव का आनन्द लेते देख ब्राह्मण यह जानकर अति प्रसन्न हो गया कि स्वयं प्रभु का प्राकट्य हुआ है। वह समझ सकता था कि राजा दशरथ जगन्नाथ मिश्र के रूप

में और रानी कौशल्या माता शची के रूप में प्रकट हुईं। उन्होंने यह बात किसी को नहीं बताई परन्तु वे मौन होकर विश्वम्भर को देखते रहे। तत्पश्चात वे अपने निवास पर लौट आए।

ब्राह्मण को श्रीगौरचन्द्र के दर्शन

वहाँ अपने प्रिय प्रभु श्रीराम का चिन्तन करते हुए, ब्राह्मण ने श्रीजगन्नाथ मिश्र के पुत्र गौरहरि को राजा दशरथ के पुत्र के स्थान पर देखा। तब जैसे ही ब्राह्मण गहरी निद्रा में सो गया, उन्होंने श्रीगौरचन्द्र प्रभु को अपने सम्मुख देखा। वे स्वर्णिम रूप-रंग, चन्द्र समान मुख, अपने गौर वर्ण, लम्बी भुजाएं, चौड़े वक्ष स्थल, विशाल नेत्र, रेशमी घुंघराले केशों, और उनके शीश पर पुष्प शोभित मुकुट के साथ और अपनी सुन्दर ग्रीवा के पास पवित्र यज्ञोपवीत लपेटे तेजस्वी रूप में प्रकट हुए। वे एक भव्य सिंहासन पर विराजमान थे, जिसके सामने ब्रह्मा आदि अन्य देवतागण हाथ जोड़े खड़े थे।

जब ब्राह्मण, प्रभु गौरचन्द्र के सौन्दर्य को निहारे जा रहा था तो अचानक वे कौशल्या पुत्र भगवान् राम बन गए, जो कि मुस्कुराते हुए मुख, और अपने हाथ में तीर लिए, अपनी भव्य वेश-भूषा में अति सुन्दर लग रहे थे। सीता-देवी उनके साथ बैठी थीं और लक्ष्मण जी ने श्रीराम के शीश के ऊपर एक छत्र लगा रखा था। भगवान् श्रीरामचन्द्र के सम्मुख हनुमान जी हाथ जोड़े खड़े थे।

ब्राह्मण तत्क्षण भगवान् श्रीरामचन्द्र के चरणकमलों में जा गिरा, जिन्होंने तब अपने भक्त वत्सल होने के विरुद के कारण उन पर अपनी करुणा बरसाई। तब भगवान् अन्तर्धान हो गए और ब्राह्मण जाग गया। यद्यपि ब्राह्मण अति दुःखी हो गया कि भगवान् पुनः उसके सम्मुख प्रकट हुए और उस समय उन्होंने किसी को भी उस स्वप्न के बारे में बताने के लिए मना कर दिया।

ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि उस ब्राह्मण ने कुछ विशेष मूल्यांकन वाली बात बताकर उन पर अपार करुणा बरसाई। ईशान ने बताया कि जो कोई भी एक बार इस स्थान के दर्शन कर ले जहाँ ब्राह्मण वास करता था, वह सब प्रकार के भौतिक कष्टों से मुक्ति पा लेगा।

तब ईशान ने मायगाछी से प्रस्थान किया और **वैकुण्ठपुर** की ओर बढ़े। श्री ईशान ने श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम दास ठाकुर से कहा, 'वैकुण्ठपुर के दर्शन करो और इसका इतिहास श्रवण करो।'

एक दिवस श्रीनारद मुनि, वैकुण्ठ से कैलाश पर भगवान् शिव के पास आए। भगवान् शिव अपने अनुचरों से घिरे बैठे थे और अपने पंच मुखों से श्रीकृष्ण-कथा की चर्चा कर रहे थे। भगवान् महेश के दर्शन करके नारद जी उल्लसित हो गए और उनके चरणों में जा गिरे। भगवान् शिव ने नारद जी को

उठाया और यह पूछते हुए कि वे कहाँ से आ रहे हैं, उन्हें अति स्नेह से आलिंगन कर लिया।

श्रीनारायण द्वारा श्रीनवद्वीप चर्चा

नारद जी ने अति प्रसन्नता से उत्तर दिया, 'मैं भगवान् नारायण के पास गया था, जिन्हें मैंने उनके अनुचरों के साथ श्रीनवद्वीप की महिमा की चर्चा करने में मग्न पाया। श्रीनवद्वीप, भारत-वर्ष में अति सुन्दर स्थान है। भगवान् नारायण और उनके पार्षद वहाँ जाना चाहते हैं। यह जानकर अतिशीघ्रता से मैं यह जानने के लिए यहाँ आ गया कि श्रीनवद्वीप में क्या होगा।'

नारद मुनि के वचन सुन आनन्दातिरेक और प्रेम में मग्न हो भगवान् महेश्वर मुस्कुरा दिए। नारद मुनि को निहारते हुए उन्होंने अपना शीश झुकाया और उच्चस्वर में गर्जना करने लगे। वास्तव में भगवान् शिव ने उल्लसित प्रेम में रुदन आरम्भ कर दिया और नारद मुनि के सम्पूर्ण शरीर को अपने आंसुओं से भिगो दिया।

भगवान् महेश्वर को उल्लसित भाव में छोड़ कर नारद मुनि ने प्रस्थान किया और श्रीनवद्वीप चले गए, जहाँ उन्होंने चिन्तन आरम्भ कर दिया, 'यह श्रीनवद्वीप धाम सभी पावन स्थलों में सर्वश्रेष्ठ है, सर्वोच्च प्रभु का अनन्त धाम है। मैं भगवान् नारायण के धाम श्रीवैकुण्ठ से आया हूँ। क्या मैं उन्हें इस स्थान पर देख सकता हूँ?'

जैसे ही उन्होंने यह सोचा, श्रीनारद मुनि ने वैकुण्ठ के भगवान् को अपने पार्षदों के साथ देखा। नारद मुनि इतने उल्लसित हो गए कि वे अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न रख सके। श्री नवद्वीप-धाम की विविध प्रकार से प्रार्थना करने के पश्चात् नारद मुनि आगे श्री कृष्ण से भेंट करने द्वारका चले गए। रुक्मिणी नाथ श्रीकृष्ण, नारद जी को देखकर अति प्रसन्न हो गए और उनसे पूछा कि वे कहाँ से आ रहे हैं।

द्वारकाधीश बने श्रीचैतन्य

नारद मुनि ने बताया कि कैसे वे अभी श्रीनवद्वीप से आए हैं और इससे अधिक और कुछ नहीं कहा। श्रीकृष्ण अपने भक्त के विचार भली भांति समझ सकते हैं तो उन्होंने गौरचन्द्र प्रभु का रूप धारण कर लिया। नदियाचन्द्र को निहारते हुए नारद मुनि ने रोना आरम्भ कर दिया। तत्क्षण प्रभु अपने श्याम कृष्ण रूप में लौट आए। नारद मुनि ने श्रीगौर कृष्ण की इस अमूल्य छवि को अपने विचारों में सँजो लिया। तब नारद मुनि से पूर्णतः संतुष्ट हो प्रभु ने उन्हें कैलाश पर लौट कर भगवान् शिव को श्रीनवद्वीप आने के लिए कहने का सुझाव दिया क्योंकि भगवान् के प्राकट्य का समय निकट था।

भगवान् श्रीकृष्ण से इस प्रकार निर्देश पाने के पश्चात् नारद मुनि ने उनसे विदा ली और प्रस्थान किया। वे गौर कृष्ण की महिमा गाते हुए और अपनी वीणा बजाते हुए शीघ्रता से कैलाश पर आ गए। भगवान् शिव के चरणों में झुककर प्रणाम करते हुए नारद मुनि ने उन्हें वह सब कुछ वर्णन कर दिया जो उन्हें ज्ञात था और इसने महादेव जी को अति भावुक बना दिया। उन्होंने नारद मुनि को अपनी गोद में उठा लिया और आनन्द में नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

इस प्रकार नारद मुनि ने नदिया के समाचार को सर्वत्र प्रसारित कर दिया और पुनः इस स्थान पर लौट आए। वे अपने मन में विचार करने लगे क्या वे इस स्थान पर द्वारका की लीलाओं के साक्षी हो सकेंगे। उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो द्वारका की समृद्धि सारी नदिया में उपस्थित थी। तब उन्होंने गौरसुन्दर को एक भव्य सिंहासन पर विराजमान देखा, उनका सौन्दर्य प्रेम के देवता कन्दर्प को मन्त्रमुग्ध करने वाला था। नारद मुनि, भगवान् के सौन्दर्य को निहार कर भाव-विभोर हो उठे।

चैतन्य महाप्रभु ने मधुरता से नारद को कहा, 'तुम यहाँ शीघ्र ही मेरी 'प्रकट-लीला' के साक्षी बनोगे। मैं पतितों और अनुकूलित जीवों की मुक्ति के लिए अद्‌भुत लीलाओं का प्रदर्शन कर तुम्हारी कामनाएं पूर्ण करूँगा।'

यह कहकर प्रभु, नारद मुनि को व्यग्र भाव में छोड़ अन्तर्धान हो गए। वे कुछ समय इस नारायण-पीठ पर रहे और फिर अपनी यात्रा जारी रखी। नारद मुनि ने इस स्थान पर भगवान् नारायण के दर्शन किए थे, यह स्थान **नारायण-पीठ** के नाम से प्रसिद्ध हो गया। यहाँ श्री वैकुण्ठ ने स्वयं अपनी भव्यता प्रकट की थी तो यह **वैकुण्ठपुर** के नाम से जाना गया। इस स्थान का राजा अत्यधिक धर्मनिष्ठ व्यक्ति था जिसने यहाँ भगवान् नारायण की आराधना आरम्भ की। यह गांव कुछ समय निर्जन रहा फिर पुनः अलंकृत हो गया।

एक और ब्राह्मण

एक वृद्ध विद्वान् ब्राह्मण पूर्व में यहाँ वास करता था, जो कि लक्ष्मी-नारायण का उपासक था। उनके प्रभु लक्ष्मी-नारायण की सेवा के शुद्ध भाव तुलना से परे थे। कभी-कभी वे श्रीवल्लभ मिश्र के निवास पर जाते और अन्तरंग भाव में उन पर अपार करुणा बरसाते थे। ब्राह्मण, श्रीवल्लभ मिश्र पर अनुग्रह बरसाते उस कारण वे सज्जन उन्हें अपना आध्यात्मिक गुरु मानते थे। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु और लक्ष्मी देवी का विवाह हुआ तब ब्राह्मण यहाँ उपस्थित थे। वास्तव में उन्होंने प्रभु और उनकी धर्म पत्नी को लक्ष्मी-नारायण के नाम से सम्बोधित किया। जब उन्होंने आनन्दातिरेक में नृत्य किया तो उनके नेत्रों से अश्रु गिरने लगे।

प्रभु की इच्छा से, ब्राह्मण ने किसी तरह अपने उल्लसित भावों पर नियंत्रण किया। वे उस रात वहीं रहे और अगली प्रातः अपनी कुटिया पर वापिस लौट आए। अपनी छोटी सी कुटिया में प्रवेश करके ब्राह्मण, लक्ष्मी-विश्वम्भर को स्मरण करते हुए रोने लगा। उन्होंने स्वयं से विचार किया, 'नारायण शची देवी के पुत्र के रूप में प्रकट हुए हैं और वल्लभ मिश्र की बेटी लक्ष्मी, देवी लक्ष्मी हैं। इस प्रकार लक्ष्मी-नारायण ने स्वयं को इस विश्व में प्रकट किया है। क्या मेरे जैसा पामर और अयोग्य व्यक्ति कभी प्रभु गौरचन्द्र का अनुग्रह प्राप्त कर पाएगा।'

ब्राह्मण को दर्शन

जब ब्राह्मण इस प्रकार चिन्तन कर रहा था, तब अचानक उसे अपनी कुटिया में वैकुण्ठ के प्रभु के दर्शन हुए। तब उन्होंने प्रभु गौरचन्द्र को लक्ष्मी के साथ एक भव्य सिंहासन पर विराजमान हुए देखा। उसने उन दोनों के सौन्दर्य के दर्शन किए जिसकी कोई तुलना नहीं थी। तब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने चतुर्भुज नारायण का रूप धारण कर लिया और इसने ब्राह्मण को व्यग्र कर दिया।

ब्राह्मण, भक्तों के प्रिय, प्रभु के चरणकमलों में जा गिरा, जिन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, 'तुम जन्म जन्म से मेरे अतिप्रिय सेवक हो और तुम मेरी करुणा के सर्वाधिक योग्य प्राप्तकर्ता हो।'

ऐसा कहते हुए प्रभु ने अपने चरणकमल ब्राह्मण के मस्तक पर पधरा दिए और अन्तर्धान हो गए। उस समय से ब्राह्मण श्री नवद्वीप की अमृतमयी लीलाओं के सागर में तैरने लगे। श्री ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को उस ओर इंगित किया जहाँ वास्तव में ब्राह्मण की कुटिया थी।

मातापुर

चैतन्य महाप्रभु ने अपने पार्षदों के साथ वैकुण्ठपुर में अनेक लीलाएं रचाई थीं, जिस कारण यह स्थान तीर्थ स्थल बन गया। श्री ईशान ने इस स्थान के प्रति प्रणाम व्यक्त किया और तब **मातापुर** के लिए चल पड़े। श्री ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि यह मातापुर गांव पूर्व में **श्रीमहातपुर** के नाम से जाना जाता था। श्रीकृष्ण की इच्छानुसार पांडवों को वन में रहना था जहाँ अनेकों लीलाऐं हुई। पांचों पाण्डव भ्राता गणों ने वन-वन यात्रा की और जिन स्थानों पर वे नहीं गए, वे उनके द्वारा बहिष्कृत माने गए।

एकचक्रा में पाण्डव

पुराणों के अनुसार पाण्डवों ने वन में वास करते हुए विविध स्थानों पर अनेक राक्षसों का वध किया। इस प्रकार यात्रा करते हुए पाण्डवों ने गौड़-देश

में प्रवेश किया और राढ़ देश के एकचक्रा गांव में आ गए। एक पाण्डव भ्राता भीम, एकचक्रा के एक राक्षस का वध करके प्रसिद्ध हो गए थे। द्रौपदी के साथ पांचों पाण्डव सदैव लोगों की भलाई की गतिविधियों में मग्न रहते।

एकचक्रा के लोग भगवान् कृष्ण के भक्त थे। इस स्थान के सौन्दर्य को निहार कर पांचों पाण्डवों के अग्रज महाराज युधिष्ठिर ने यह चिन्तन आरम्भ कर दिया कि उन्होंने अनेक देशों और गांव की यात्रा की है परन्तु एकचक्रा जैसा सुन्दर स्थान कहीं नहीं देखा।

वे यह जान गए कि यह निश्चित ही भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाओं का स्थान है परन्तु वे वास्तव में उसके बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। उस रात्रि भगवान् श्रीकृष्ण की इच्छा से युधिष्ठिर गहरी निद्रा में सो गए और भगवान् बलराम का स्वप्न देखने लगे, जो उनके सम्मुख प्रकट हुए और मधुरता से बोले, 'यहाँ से कुछ ही दूरी पर श्री नवद्वीप नाम का एक गांव है, जो कि प्रसिद्ध नदी सुरधुनि (गंगा) से घिरा हुआ है। कलियुग के प्रथम भाग में कृष्ण वहाँ छद्म रूप में प्रकट होंगे। उनकी इच्छा के अनुसार श्रीकृष्ण के पार्षद गण विविध स्थानों पर पैदा होंगे और उनकी इच्छा से मैं बलराम यहाँ एकचक्रा में प्रकट होऊंगा।'

अति आश्चर्यचकित होकर राजा ने यह सोचना आरम्भ कर दिया कि एकचक्रा अति सुन्दर दृश्य धारण कर श्वेतद्वीप के समान प्रकट हुआ। उसी क्षण महाराज युधिष्ठिर जाग गए। तब उन्होंने अपने भ्राता गणों से स्वप्न के बारे में बताया। एकचक्रा से पाण्डव नवद्वीप गए और उसी स्थान पर रुक गए। महाराज युधिष्ठिर ने चिन्तन किया कि जो कुछ भी उन्होंने स्वप्न में देखा वह इस स्थान पर उपस्थित था। इस प्रकार चिन्तन करते हुए वे विकल हो उठे।

उस रात्रि श्रीकृष्ण की इच्छा से युधिष्ठिर गहरी निद्रा में सो गए और स्वप्न में श्रीकृष्ण और श्रीबलराम को देखा। श्रीकृष्ण ने मधुरता से महाराज युधिष्ठिर से कहा, 'यह नदिया मेरा जन्म स्थान है। मैं अपने पार्षदों के साथ विश्व को संकीर्तन के रस से उन्मत्त करने के लिए यहाँ प्रकट होऊंगा। मैं नदी के किनारे अपनी लीलाएं रचाऊंगा। तुम सब को अपने साथ लेकर मैं ब्रज के प्रेम के उत्तमोत्तम अमृत रस का पान करने में सहायता करूँगा।'

राजा के विचार को समझते हुए श्रीकृष्ण ने गौरचन्द्र का अवतार धारण कर लिया। महाराज युधिष्ठिर ने जैसे ही श्रीनित्यानन्द प्रभु के साथ के अनुपम रूप श्रीचैतन्य महाप्रभु को देखा तो वे पूर्ण रूप से अपने आप को भूल गए। उनके नेत्रों से अत्यधिक अश्रु बहाते हुए वे दोनों प्रभु के चरणकमलों में गिर गए, दोनों ने राजा का आलिंगन किया और उन्हें शांत किया। तत्पश्चात् दोनों प्रभु अन्तर्धान हो गए।

प्रात: राजा ने अपने भ्राता गणों से वर्णित कर दिया और कुछ देर तक उस स्थान पर रहे। राजा युधिष्ठिर विश्व के सभी व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ थे, इस कारण यह स्थान **महातपुर** के नाम से विख्यात हो गया। द्रौपदी के साथ पांचों भ्राता गण यहाँ पंच वट वृक्ष की छाया के नीचे रहे और उस श्रेष्ठ केन्द्र से वे प्रसन्नतापूर्वक श्रीनवद्वीप के सौन्दर्य को निहारते रहे। यह पाण्डवों के उस वर्ष की बात है जब उन्हें अज्ञात वास करना था।

तत्पश्चात् श्रीनवद्वीपेन्द्र के आदेश पर पाण्डवों ने मौद्र-देश के लिए प्रस्थान किया। उत्कल में पाण्डवों ने कुछ दिवस जगन्नाथ पुरी के निकट वास किया। वहाँ एक सुन्दर वन में श्रीमाधव का एक श्रीविग्रह था जो कि राक्षसों द्वारा छिपाया गया था। भीम ने अपनी लाठी से उस राक्षस का वध किया और श्रीविग्रह को वापिस प्राप्त किया। तब पाण्डवों ने श्रीमाधव की आराधना आरम्भ की। आज भी इस श्रीविग्रह की उपासना होती है।

महातपुर में श्रीगौरचन्द्र प्रभु ने अपने अनुचरों के साथ में अनेक लीलाओं को रचकर आनन्द लिया। जो कोई भी यदि एक बार इन लीलाओं के दर्शन कर लेता है वह सरलता से प्रभु की आध्यात्मिक सेवाओं को प्राप्त कर लेता है। जो कोई भी महातपुर की महिमा में लीन रहता है वह सरलता से अन्यों को भौतिक संसार के कष्टों से मुक्ति दिलवा देता है।

रुद्रद्वीप

गौरांग प्रभु की महातपुर में लीलाओं का स्मरण करते हुए ईशान **रुद्रपुर** के लिए चल पड़े जो कि पूर्व में रुद्रद्वीप के नाम से जाना जाता था। गंगा के पूर्वी छोर पर स्थित एक **रदुपुर** नाम से गांव है जो **रुद्रपुर** के नाम से भी जाना जाता है। श्री ईशान ठाकुर ने श्रीनिवास आचार्य को बताया रदुपुर पूर्व में रुद्र पुर के नाम से विख्यात एक विकसित स्थान था परन्तु अब वह केवल एक नाम था। रुद्रपुर नाम एक विशेष घटना के कारण पड़ा।

श्री रुद्र द्वारा उद्घोषणा

श्री रुद्र यह जानकर अति प्रसन्न हो गए कि गौरचन्द्र प्रभु नदिया में प्रकट होंगे। अपने अनुचरों के साथ उन्होंने उन्मत्त होकर चैतन्य महाप्रभु के गुणों और लीलाओं का गान आरम्भ कर दिया। वास्तव में विविध वाद्य यन्त्रों के वादन के साथ उन्मत्त होकर नृत्य करना आरम्भ कर दिया। भगवान् शिव के नृत्य से भूमि कम्पन करने लगी।

श्रीरुद्र के नृत्य को देखते हुए, देवताओं ने उन पर पुष्प वर्षा आरम्भ कर दी। रुद्रदेव ने सभी को यह बताना आरम्भ कर दिया कि कैसे लोग अपने कष्टों से बच पाऐंगे। श्रीरुद्र ने प्रभु के प्राकट्य के विषय में गान किया, 'अब प्रभु को

निश्चित ही नदिया में प्रकट होना चाहिए और मैं अपने चित्त और हृदय को उनकी अद्भुत लीलाओं का साक्षी बन कर शांत करूँगा।'

यह सुनकर आकाश में देवतागण भी अति उत्साह से नृत्य करने लगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु की महिमा का जाप करते हुए रुद्र को अपने अस्तित्व की विस्मृति हो गई और इसने भगवान् को और अधिक अधीर बना दिया। अन्यों से अदृश्य होकर वे रुद्र के सम्मुख प्रकट हुए और उन्हें यह कहकर शांत किया कि वे यथाशीघ्र अपने पार्षदों के संग नदिया में प्रकट होंगे।

इस समाचार से शांत होकर रुद्र ने विविध प्रकार से प्रभु की महिमा का गान जारी रखा। तब श्रीगौरसुन्दर ने श्रीरुद्र का आलिंगन कर लिया और अन्तर्धान हो गए। ईशान ने तब विस्तार से बताया कि कैसे श्रीरुद्र अपने अनुचरों के साथ इस स्थान पर आए और प्रभु गौरचन्द्र की महिमा के गान में मग्न हो गए। इस कारण से यह स्थान **रुद्रद्वीप** के नाम से विख्यात हो गया। यदि किसी ने एक बार भी इस स्थान के दर्शन किए हों तो श्रीरुद्र जीव को प्रभु के चरण-कमलों की भक्ति प्राप्त करने में मदद करते हैं।

रुद्रद्वीप की महिमा का वर्णन करने के बाद श्रीईशान प्रसन्नतापूर्वक **वेलपोखरा** गांव के लिए चल पड़े जो कि पूर्व में **विल्व** के नाम से जाना जाता था। ईशान ने अपने सहयोगियों को इस स्थान के इतिहास के बारे में बताया। पंचवक्त्र शिव के एक श्रीविग्रह की यहाँ आराधना होती थी और वे उन भक्तों की मनोकामना पूर्ण करते थे जो भगवान् कृष्ण के निपुण भक्त होते थे। एक बार कुछ तपस्वी ब्राह्मणों ने अपनी कामनाओं को पूर्ण करने के लिए भगवान् शिव की आराधना आरम्भ कर दी। उन्होंने निरंतर पन्द्रह दिवस तक बिल्व-पत्रों के द्वारा आराधना की, इससे महादेव जी अति प्रसन्न हो गए। उन्होंने ब्राह्मणों से कहा, 'कहो आप क्या चाहते हो।'

ब्राह्मणों ने कहा, 'हम अत्यधिक गुण सम्पन्न गतिविधियों को करने की सामर्थ्य प्राप्त करना चाहते हैं।'

आश्चर्यचकित होकर भगवान् शिव ने उत्तर दिया, 'भगवान् कृष्ण की आराधना करना सभी कार्यों में अति गुण सम्पन्न कार्य है।'

ब्राह्मणों ने कहा, 'हम जानते हैं कि श्रीकृष्ण की सेवा करना सभी कार्यों में महानतम है परन्तु किसी के लिए यह उच्चकोटि प्राप्त करना कैसे सम्भव है? हे मेरे प्रभु, कृपया हमें वह सामर्थ्य प्रदान कीजिए।'

पंचवक्त्र शिव ने उन्हें बताया, 'चिंता मत करो। तुम भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा करने की योग्यता प्राप्त कर सकते हो। कुछ ही दिवसों में प्रभु नदिया में एक ब्राह्मण परिवार में प्रकट होकर स्वयं को उजागर करेंगे। तुम भी उस समय वहाँ जन्म लेना स्वीकार करोगे और तुम उनसे शिक्षा ग्रहण कर उन्हें अत्यधिक आनन्द प्रदान करोगे। इस प्रकार तुम प्रभु और उनके पार्षदों की सेवा करोगे।'

पंचवक्त्र महादेव के वचन सुनकर ब्राह्मण अति आनन्दित हो गया और उनके चरणों में जा गिरा। तत्पश्चात् वे भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों के ध्यान में मग्न रहे। तब प्रभु की इच्छा से भगवान् पंचवक्त्र उस स्थान से अन्तर्धान हो गए। ब्राह्मणों ने बिल्व पत्रों के द्वारा पन्द्रह दिवस वहाँ उपासना की थी, इस कारण वह स्थान विल्व-पक्ष के नाम से जाना गया।

भरद्वाज टीला

इस स्थान पर भगवान् विश्वम्भर ने अपने अनुचरों के साथ अनेक आनन्द-प्रदायक लीलाएें रचाई थीं। इन सबका वर्णन करते हुए ईशान ठाकुर एक पवित्र स्थान-**भारईडांगा** के लिए चल पड़े। श्रीईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि यह स्थान पूर्व में भरद्वाज-टीला के नाम से प्रसिद्ध था। महर्षि भरद्वाज तीर्थ यात्रा करते हुए एक बार चक्रदह आए जो कि गंगा के निकट स्थित है। चक्रदह नाम बाद में चकदह हो गया और उस स्थान से वे श्रीनवद्वीप की ओर गए। तब उन्होंने वन के भीतर एकान्त स्थान पर रहने का निर्णय किया ताकि वे बिना विक्षेप के श्रीगौरचन्द्र प्रभु की आराधना कर सकें। भरद्वाज से प्रसन्न होकर गौरहरि प्रभु उनके सम्मुख प्रकट हुए और महर्षि ने उल्लसित होकर उनका चयनित प्रार्थनाओं से अभिनंदन किया। अति तृप्त होकर प्रभु ने महर्षि भरद्वाज से अपनी इच्छाओं की पूर्णता करने को कहा।

भरद्वाज जी ने तब उत्तर दिया, 'हे मेरे प्रभु कृपया मुझे नदिया में अपनी लीलाओं के दर्शन का समर्थ बना कर मुझपर अनुग्रह कीजिए।'

प्रभु ने निवेदन स्वीकार कर लिया और तब अन्तर्धान हो गए। भरद्वाज ऋषि ने श्रीनवद्वीप के प्रति प्रणाम किया और अपनी तीर्थ यात्रा जारी रखी। इस स्थान पर महर्षि भरद्वाज ने पूर्व में वास किया था, इस कारण इस स्थान का नाम भरद्वाज टीला पड़ा। श्रीगौरांग प्रभु ने इस स्थान पर अनेक अद्‌भुत लीलाएें रचाईं।

सुवर्ण विहार का इतिहास

श्रीईशान, श्रीनिवास आचार्य, नरोत्तम दास और रामचन्द्र कविराज के साथ आगे सुवर्ण विहार गांव के लिए चले गए।

ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया, 'इस गांव को देखो। यह **सुवर्ण-विहार** कहलाता है। अब सुनो, मैं इस गांव के पूर्व इतिहास का वर्णन करता हूँ।'

इस देश का राजा बहुत सौभाग्यशाली व्यक्ति था, जिसमें भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति अगाध समर्पण था। एक दिवस नारद मुनि का एक शिष्य राजा के दरबार में आया। राजा ने अति सत्कार के साथ उसके चरणों में झुककर और

तत्पश्चात एक सुन्दर सिंहासन निवेदन कर उसका स्वागत किया। तब राजा ने नारद मुनि के शिष्य से प्रभु के अवतारों की संख्या पूछी।

राजा से प्रसन्न होकर नारद जी के शिष्य ने कहा, 'प्रभु कलियुग में गौर वर्ण में अवतार लेंगे और वे श्रीनवद्वीप में अनेकों अद्भुत लीलाऐं रचाऐंगे। वे अपने अद्भुत संकीर्तन से सम्पूर्ण विश्व को प्रेमोन्मत्त कर देंगे। वे संकीर्तन में अपने नृत्य से अपने अनुचरों को अत्यधिक प्रसन्नता प्रदान करेंगे जैसे भगवान् श्रीकृष्ण वृन्दावन में रास नृत्य करते थे। विधाता ने श्रीनवद्वीप का निर्माण केवल इसलिए किया है। भगवान् अपनी उत्तमोत्तम लीलाओं का आनन्द ले सकें, श्रीनवद्वीप की वास्तविक महिमा साधारण व्यक्ति की समझ से बहुत दूर है। केवल वह व्यक्ति श्रीनवद्वीप की वास्तविक कीर्ति की प्रशंसा करने के लिए उपयुक्त है जिसने प्रभु के पार्षदों का अनुग्रह प्राप्त कर लिया है।'

इस प्रकार नारद मुनि के शिष्य ने विविध प्रकार से राजा पर अनुग्रह किया और विदा ली। तब राजा सोचने लगा, 'इस मानव रूप पर धिक्कार है और धिक्कार है मेरे इस प्रकार के जीवन पर जिसमें निरंतर भौतिक सुखों एवं लौकिक आनन्द में मग्न रहने के कारण मैं आध्यात्मिक प्रगति करने में असफल रहा हूँ। दीर्घकाल के बाद मुझे सच्चे संत का अनुग्रह प्राप्त हुआ है और अब मैं समझ गया हूँ कि नदिया सर्वोच्च प्रभु की लीलाओं का स्थान बनेगा।' इस प्रकार स्वयं को परख कर राजा, प्रभु से अपने विरह के भाव में भावविभोर हो गया। वह श्रीनवद्वीप का स्मरण करते हुए रोने लगा और बारम्बार उस स्थान के प्रति प्रणाम करने लगा।

उसने श्रीनवद्वीप धाम से प्रार्थना की, 'कृपया मुझ पर करुणा कीजिए, जिससे मैं प्रभु के प्राकट्य के समय यहाँ नवद्वीप में जन्म ले सकूँ।'

तत्क्षण राजा को एक आकाशवाणी सुनाई दी, 'तुम्हारी मनोकामना पूर्ण होगी।'

राजा को हुये दर्शन

यद्यपि राजा यह सुनकर अति प्रसन्न हो गया था परन्तु वह धैर्य न रख सका। अपने भक्तजनों के शुभ-चिन्तक विश्वम्भर भगवान् ने राजा के स्वप्न में अपनी संकीर्तन लीला उजागर की। श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने भक्तजनों के मध्य नृत्य करते दिख रहे थे, जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा असंख्य तारों से घिरा हो। अगले क्षण प्रभु श्याम कृष्ण के रूप में प्रकट हो गए। तब पुनः प्रभु अपने गौर वर्ण रूप में प्रकट हो गए। राजा प्रभु उनके स्वर्णिम आभा वाले सुन्दर शरीर के साथ भक्त जनों के मध्य नृत्य करते हुए संकीर्तन करते देख उलझ गया। इससे पूर्व कि राजा किसी निष्कर्ष पर पहुँचता, स्वप्न टूट गया।

जब राजा जागा तो उसने प्रभु के स्वर्णिम रंग-रूप वाले रूप की लीलाओं का ध्यान लगाना आरम्भ कर दिया। इस कारण से इस स्थान का नाम सुवर्ण-विग्रह प्रसिद्ध हो गया। कुछ लोगों ने कहा कि उन्होंने अपने जीवन में कभी इतने सुन्दर स्थान के दर्शन नहीं किए। जो कोई भी एक बार इस स्थान के दर्शन कर ले वह निकट भविष्य में श्रीगौरांग प्रभु की लीलाओं में प्रवेश प्राप्त कर लेगा।

नवद्वीप स्थित मायापुर में मिश्र-गृह

इस स्थान से श्रीईशान मायापुर में **जगन्नाथ मिश्र** के निवास पर गए। मायापुर अति सुन्दर स्थान है जो इसके दर्शन करने वाले सभी को शान्ति प्रदान करता है। मायापुर की वास्तविक महिमा समझना किसी के वश की बात नहीं। यहाँ तक कि ब्रह्मा जी और अन्य देवतागण भी इस स्थान की प्रशंसा करने में असफल हैं। ईशान, श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज के साथ मायापुर के गांव में श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास पर आए। श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास में प्रवेश करते हुए ईशान उस स्थान पर प्रभु की लीलाओं का स्मरण करते हुए अति भावुक हो उठे।

लीला स्मरण

वे तीनों आवास के एक कोने में खड़े होकर उसके सौन्दर्य की प्रशंसा करने लगे। ईशान ने श्रीनिवास आचार्य को बताया, हर कोई श्रीजगन्नाथ मिश्र और शची देवी की आध्यात्मिक सेवाओं की अति सराहना करता। जोकि भगवान् विष्णु के अपने श्रीविग्रह की आराधना करते थे।

श्रीनीलाम्बर चक्रवर्ती ने अपनी पुत्री शचीदेवी का श्रीजगन्नाथ मिश्र से विवाह करवाकर सौंप दिया। जिन्हें पुरन्दर भी कहा जाता था, श्री पुरन्दर मिश्र ऐसी योग्य पत्नी पाकर अति प्रसन्न थे और विवाह के पश्चात् वे गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में समृद्ध हो गए थे। उन्होंने स्वयं को प्रभु की सेवाओं में समर्पित कर दिया, कर्त्तव्यनिष्ठा से अपनी घर-गृहस्थी के सारे कर्त्तव्य जैसे अतिथियों का सत्कार पूर्ण करते। दम्पति को एक के बाद एक आठ बेटियां हुईं, परन्तु दुर्भाग्य से पैदा होते ही उनकी मृत्यु हो जाती।

विश्वरूप-जन्म

अति दुःखी होकर शची देवी ने श्रीहरि के चरणकमलों का आश्रय लिया। श्रीमिश्र ने भी एक पुत्र प्राप्ति की कामना की और उसके लिए कुछ धार्मिक संकल्प पूरे किये। जैसे कोई निर्धन व्यक्ति धन पाकर प्रसन्न हो जाता है, श्री पुरन्दर भी अत्यधिक प्रसन्न हो गए जब अंततः उन्हें एक सुन्दर पुत्र की प्राप्ति हुई। उन्होंने अपने पुत्र को विश्वरूप नाम प्रदान किया। कुछ समय बाद विश्वरूप,

वेदों, न्याय शास्त्र और अन्य ग्रन्थों के विद्वान् बन गए। विश्वरूप स्वभाव से बहुत शांत और गंभीर, दयालु, प्रतिभाशाली एवं निपुण व्यक्ति थे। उन्होंने कभी भौतिक लाभ के बारे में चिन्तन नहीं किया। इसके विपरीत वे स्वयं को श्रीहरि के ध्यान में लीन कर लेते और भागवत-गीता के पठन में समय व्यतीत करना पसन्द करते थे।

श्रीअद्वैत-द्वारा आह्वान

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास, कौन समझ सकता है कि विश्वरूप के मस्तिष्क में क्या छिपा है? श्रीअद्वैत आचार्य यह जानकर कि भगवान् शीघ्र ही श्रीनवद्वीप में प्रकट होंगे, अपने चित्त में अति प्रसन्न हो गए। प्रभु की उत्पत्ति की तीव्रता में वृद्धि करने के लिए वे गंगा जल, तुलसी दल, चन्दन लेप और पुष्प निवेदन कर उल्लास में गर्जन करते हुए उनकी आराधना करने लगे। श्रीअद्वैत आचार्य की गर्जना से आकर्षित होकर प्रभु, शची माता के गर्भ में प्रकट हो गए।'

जब सर्वोच्च प्रभु अपनी माता के गर्भ में बढ़ रहे थे, शची देवी और श्रीजगन्नाथ मिश्र अति प्रसन्न हो गए थे। एक दिवस श्रीअद्वैत आचार्य अचानक ही श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास पर आ गए और वहाँ उन्होंने शची देवी के गर्भ की चन्दन लेप और इत्र से उपासना आरम्भ कर दी। ऐसा करने के बाद उन्होंने शची देवी की परिक्रमा की और घर वापिस लौट आए।

श्रीशची देवी और श्रीजगन्नाथ मिश्र, श्रीअद्वैत आचार्य के व्यवहार से अति व्यग्र हो उठे। यहाँ तक कि भगवान् ब्रह्मा जी और अन्य देवताओं ने भी आकर शची देवी और उनके गर्भ में प्रभु की उपासना की। प्रभु अपनी माता के गर्भ में प्रसव के लक्षणों के बिना तेरह मास तक रहे। यह प्रभु की एक अन्य उत्तमोत्तम लीला थी।

श्रीविश्वम्भर-जन्म

तब चौदहवें मास की समाप्ति पर, फाल्गुन पूर्णिमा के शुभ अवसर पर संवत् 1542 में, चन्द्र ग्रहण के अवसर पर श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास पर प्रभु प्रकट हुए। नवजात शिशु के सौन्दर्य को देख, वहाँ उपस्थित हर कोई आनन्द से भावविभोर हो उठा। श्रीजगन्नाथ मिश्र, श्रीगौरचन्द्र को पुत्र रूप में प्राप्त कर अत्यधिक उल्लसित हो गए। प्रभु के नेत्रों की तुलना खिलते हुए कमलों से की जा सकती थी। उनका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर था, उनका रूप-रंग स्वर्णिम था और आभूषणों से सुशोभित करने पर उनके तन की चमक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के अन्धकार को नष्ट कर सकती थी।

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास, चन्द्र ग्रहण के छल में प्रभु ने लोगों को अपना नाम जपने के लिए बाध्य कर दिया। लोग आनन्द मग्न होकर प्रभु का नाम जपते-जपते जगह-जगह झुण्ड बनाकर एकत्र हो गए। वे जिन्होंने कभी कृष्ण नाम का उच्चारण नहीं किया था, उन्होंने भी भगवान् श्रीकृष्ण का पावन नाम जपना और गंगा स्नान आरम्भ कर दिया। हिन्दुओं के अलावा मुसलमानों ने भी भगवान् का पावन नाम जपा। इस प्रकार शची-पुत्र ने गिरे हुए कुछ चुनिंदा जीवों को नरक की यातना से मुक्ति दिलवा दी।'

श्रीचैतन्य महाप्रभु जो कि संकीर्तन के महान प्रेमी हैं, वे जब पधारे तब सम्पूर्ण विश्व में संकीर्तन चल रहा था। पवित्र लोगों को अपने दर्शन देकर और अधिक अधीर बनाते हुए प्रभु के प्राकट्य का समाचार शीघ्रता से फैल गया। इस प्रकार छद्म वेश में देवताओं के संग लोगों का अपार जन समूह शीघ्रता से श्रीजगन्नाथ मिश्र के निवास पर आ गए, जहाँ प्रसन्नता के सागर ने सीमाऐं पार कर दीं।

यहाँ एक सुन्दर गीत है, 'लोगों ने नदिया में जय! जय!! घोष किया जब श्रीगौरचन्द्र प्रभु, शची माता के गर्भ से प्रकट हुए। फाल्गुन पूर्णिमा पर ब्राह्मण चूड़ामणि ने शुभ अवसर पर जन्म लिया।'

निराशा के अन्धकार का शमन करते हुए नदिया का चन्द्रमा उदय हुआ। द्वापर में श्रीकृष्ण के रूप में भगवान् ने राक्षसों का वध किया था। कलियुग में माँ के गर्भ में ही प्रभु गौरचन्द्र ने पीड़ित लोगों को मुक्ति प्रदान कर दी थी। वासुदेव घोष ने यह गीत श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमल प्राप्त करने की आशा में गाया था।

फाल्गुन पूर्णिमा (धुलहड़ी)

फाल्गुन पूर्णिमा में एक शुभ घड़ी में शची देवी ने अपने पुत्र को जन्म दिया और उसके मुख को देखा। उन्होंने बहुत कुछ विचार किया परन्तु वे प्रभु के तन का स्पर्श न कर सकी, जो कि उनके लिए स्वर्णिम नवनीत के समान थे। उन्होंने अपने पति श्रीजगन्नाथ मिश्र को अपने पुत्र के जन्म के बारे में बताया और तब सावधानी -पूर्वक शिशु को अपनी गोद में उठा लिया।

महान ब्राह्मण जगन्नाथ मिश्र इतने प्रसन्न हो गए मानो वे प्रसन्नता के सागर में तैर गए हों। वे अपने पुत्र के चन्द्रमा समान मुख के दर्शन कर उल्लसित हो गए। उन्होंने अपने नवजात शिशु के कल्याण के लिए की जाने वाली विधियों को निभाने के लिए अपने प्रिय मित्रों सहित सभी को बुलाया। वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने बालक के माता-पिता के सौभाग्य की सराहना की। हर कोई, यहाँ तक कि पशु, पक्षी और वृक्ष भी अति प्रसन्न हो गए। नरहरि कहते हैं कि

गौरचन्द्र प्रभु ने अज्ञानता के अन्धकार का शमन किया है। जो कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त था।

नरहरि के विविध रागों में रचित गीत मुख्यतः श्रीगौरचन्द्र के जन्म, नदिया के लोगों की प्रसन्नता, श्रीगौरहरि प्रभु की सुन्दरता और शची-माता और श्रीजगन्नाथ मिश्र के महान सौभाग्य से सम्बन्धित हैं।

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास, प्रभु के प्राकट्य के बारे में मैं और अधिक क्या कहूँ?'

प्रभु के प्राकट्य के पश्चात् श्रीनीलाम्बर चक्रवर्ती सावधानीपूर्वक दिवस गिनने लगे। प्रभु के जन्म के आठवें दिवस एक उत्सव का आयोजन किया गया और आस-पड़ोस के बालकों को मिठाई दी गई। देवताओं ने भी आकाश से प्रभु की इन बाल्यकालिक लीलाओं का आनन्द लिया।

जब विश्वम्भर खड़े हुए और प्रथम बार भूमि पर चले तो महिलाओं ने अनेक रीतियों का आयोजन किया। एक दिवस विश्वम्भर ने रुदन के बहाने महिलाओं को 'हरिबोल' जप करने के लिए बाध्य कर दिया।

महाप्रभु की बाल लीलायें

इस प्रकार की उनकी अनेकों अद्भुत लीलाएं थीं और शीघ्र ही विश्वम्भर चार मास के हो गए। एक दिवस विश्वम्भर की माता बालक को कक्ष में अकेला छोड़ कहीं चली गई। बालक ने पूरे कक्ष को अस्तव्यस्त कर दिया परन्तु जब वे लौटीं तो पाया कि बालक शांतिपूर्वक अपनी शैय्या पर लेटा हुआ था तो वे अचम्भित हुईं कि किसने इतना विध्वंस मचा दिया।

जब बालक छः मास का हुआ तो उन्होंने अन्नप्राशन उत्सव का आयोजन किया। यद्यपि बालक को निमाई और विश्वम्भर नाम प्रदान किए गए किन्तु बाद में वे अनेक नामों से पुकारे जाने लगे। नदिया के लोग अन्नप्राशन उत्सव का आनन्द लेते हुए अति प्रसन्न हुए।

निमाई की माता उन्हें शयन करवाते समय गीत गाती थीं। कौन उन सब कार्यों का वर्णन कर सकता है जो शची देवी अपने पुत्र को प्रसन्न करने के लिए करती थीं? धीरे-धीरे प्रभु ने अपने निवास के आंगन में रेंग कर चलना आरम्भ कर किया, जिसका सौन्दर्य अवर्णनीय है।

इस दृष्टि से वासुदेव घोष ने एक सुन्दर गीत गाया। 'अपने घर के आंगन में रेंगते हुए गौरचन्द्र के सौन्दर्य का वर्णन एकमात्र मुख से नहीं किया जा सकता। जब उनके मुख से उनके लाल होंठों से लार टपकती तो वे अत्यंत सुन्दर लगते। उनके हाथों में बाजूबन्द सुशोभित थे और उनके चरण कंगूरेदार कंगनों से शोभित थे और उनके कण्ठ में बाघ के नख से बना कण्ठा लटक रहा था। उनके शीश पर स्वर्ण की अति सुन्दर माला थी।'

सर्प की कुण्डली

निमाई की माता उन्हें अपनी गोद में उठातीं और उंगली से इंगित कर उन्हें उनके नाक, आँख, मुख और इस प्रकार अन्य नामों को बोलने को कहतीं। अपनी माता को सुनते हुए बालक अति उत्साहित हो जाता और अपनी उंगली से सब ओर इंगित करता। एक दिवस आंगन में रेंगते हुए बालक ने एक सांप की कुण्डली पर बैठकर उसे अत्यधिक आनन्द प्रदान किया। हर कोई भयभीत हो गया और भय के कारण रोने लगा परन्तु वास्तव में यह अनन्तदेव का अनुग्रह था।

उस समय श्रीविश्वरूप ने विश्वम्भर को अपनी गोद में बैठाया और उनके तन से धूलि को साफ किया। प्रभु ने बाल्य अवस्था में अपने घर के आंगन में रेंगते हुए अनेकों लीलाऐं प्रदर्शित कीं। जब उन्होंने प्रथम बार चलना आरम्भ किया तो और अधिक लीलाऐं रचाई।

उनके सुन्दर चरणों के स्पर्श ने विश्व के कष्टों को धूल में मिला दिया। उनके तन की आभा सभी के चित्त को आकर्षित कर सकती थी।

नरहरि द्वारा एक भजन :- शची ठाकुरानी ने श्री गौरचन्द्र की उंगली पकड़ कर उनको चलना सिखाया। जब गौरचन्द्र अकेले चलने का प्रयास करते तो कभी-कभी वे गिर जाते। माता शची तत्क्षण अपने पुत्र को अपनी गोद में उठा लेती और उनके गाल चूम लेती। अपनी माता के गोद में पकड़े होने पर गौरचन्द्र अपने चरणों को हिलाते और उन्हें हिलाने पर उनके चरणों में बन्धे घुंघरू मधुर स्वर में बजते थे। कभी-कभी वे अपने माता के वक्ष स्थल से दुग्ध पान करते। इस आयु में प्रभु के सौन्दर्य का वर्णन कर नरहरि भावविभोर हो उठते हैं।

नित्य श्रीगौरहरि के दर्शन

नदिया की महिलाएं नित्य प्रातः श्रीगौरहरि के दर्शन करने आतीं। वे अपने बालक को अपने आवास पर अकेला छोड़ शची-माता के घर आकर बालक का दर्शन करने के लिए स्वयं पर नियन्त्रण न कर पातीं। वे किसी तरह रात्रि अपने निवास पर व्यतीत करतीं और प्रातः वे उनके लिए अपने साथ अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थ लेकर निमाई के निवास की ओर दौड़ पड़ती थीं। वे सदैव निमाई को अपनी गोद में पाने के लिए अधीर रहतीं।

यह विशेष स्थान निमाई के नृत्य के कारण गौरवान्वित हो गया। जिसके दौरान महिलाऐं हाथों से तालियां बजातीं।

नरहरि के द्वारा यहाँ एक भजन प्रस्तुत है :- नवद्वीप की महिलाएं निमाई को यह वचन देकर उन्हें नृत्य करने के लिए कहतीं कि यदि वे ऐसा करेंगे तो वे

उन्हें सुन्दर मिष्ठान देंगी, वे नृत्य करते और सब निमाई के साथ ताली बजाते। प्रभु अपनी माता के मुख को देखते और मृदुता से मुस्कुरा देते। वह मुस्कान मानो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपनी पहचान की विस्मृति करवा देती। नृत्य करते समय प्रभु के चरणकमलों में बँधे नूपुर मधुरता से बज उठते। उनकी माता अपने पुत्र के चन्द्रमा समान मुख को प्रसन्नचित्त हृदय से निहारती रहतीं।

अपने पुत्र को वक्ष स्थल से लगाकर शची माता उन्हें कहीं न जाकर अपने ही निवास पर रहने का निवेदन करतीं। अन्य बालक उनके पास आकर खेलते परन्तु वे उनके साथ कहीं खेलने नहीं जाते। वे (माता) उन्हें सुझाव देतीं कि सबको बता दें कि उनके पिता ने उन्हें कहीं भी जाने से मना किया है।

शची माता स्वयं से कहतीं कि उनकी अधीरता केवल नरहरि ही समझ सकते हैं-कैसे वे सदैव अपने अधीर पुत्र के लिए अधीर रहतीं जब वे आवास से बाहर होते।

ईशान ने श्रीनिवास को बताया, 'इस स्थान पर विश्वम्भर ने अपने सम्पूर्ण तन पर धूल पोत ली थी। यह देखकर माता ने उन्हें नाटकीय भाव में डांट लगाई। एक दिवस निमाई ने अपनी माता द्वारा प्रदत्त मिष्ठान की बजाय कुछ मिट्टी खा ली। एक दिवस इस कक्ष में शची माता ने अपने पुत्र को पुराणों में से कुछ कथाएं सुनाकर उनके शयन में सहायता की।

विश्वम्भर कथा का एक एक शब्द बहुत तन्मय होकर श्रवण करते तो माता प्रसन्न होकर उन्हें कथाएं श्रवण करवाती रहतीं थीं।'

शची माता ने एक बार कहा, 'मेरे प्रिय पुत्र विश्वम्भर, कृष्ण मात्र राजा कंस का वध करने के लिए मथुरा गए थे। उन्होंने कंस के साथ कुश्ती लड़ी और तब उन्हें उनके सिंहासन से गिरा कर चित्त करके उनका वध कर दिया।'

ईशान ने जारी रखा, 'इस कथा को श्रवण करते समय विश्वम्भर अति क्रोधित होकर चिल्लाने लगे, 'मैं कंस के शेष अनुचरों का वध करूँगा।' अन्य दिवस सोते समय विश्वम्भर, शिव जी, ब्रह्मा जी और अन्य देवताओं को बोलते, 'हे शिव और ब्रह्मा, अब और चिन्ता मत करो। मैं शीघ्र ही मानव जाति को मुक्ति प्रदान करूँगा और उन्हें अपने संकीर्तन से मदोन्मत्त कर दूँगा।' नींद में विश्वम्भर को बोलते देख उनकी माता अत्यधिक भयभीत हो जाती।'

देवगण पधारे दर्शनों हेतु

मेरे प्रिय श्रीनिवास, विश्वम्भर ने अपने बाल्यकाल में अनेकों अद्भुत लीलाऐं रचाई। एक दिवस इस कक्ष में शची माता अपने पुत्र के साथ कुछ पल के लिए विश्राम कर रही थीं। अचानक देवताओं का एक समूह प्रकट हुआ। शची माता उन देवताओं के दर्शन कर भयभीत हो गईं– किसी-किसी के चार अथवा पाँच मुख थे।

एक दिवस इस कक्ष में जगन्नाथ अपनी शैय्या पर लेटे हुए थे और शची माता अपने पुत्र विश्वम्भर को कभी-कभी उनके पास भेज देती। किसी दिवस माता-पिता नूपुर की ध्वनि सुनते और अत्यधिक अचम्भित हो जाते। प्रातःकाल माता-पिता अपने निवास पर निकट भविष्य में घटित आपदा को रोकने के लिए शीघ्रता से कुछ पावन टोटके निभाते थे। यहाँ सभी बालक विश्वम्भर को मध्य में पधराकर सुन्दर नृत्य रचाते।

वासुदेव और नरहरि के कुछ भजनों में प्रभु के नृत्य का आनन्दायक विवरण है :- अनेकों बालकों से घिरे एक स्वर्णिम गुड़िया के समान विश्वम्भर अपने आवास के आंगन में नृत्य करते। उनके चरणों में बँधे नूपुर के छन-छन का स्वर, निमाई के माता-पिता के कानों को और अन्य जो भी वहाँ उपस्थित होते, उन्हें सुख प्रदान करता था। कभी-कभी अति आनन्द में विश्वम्भर अपनी माता के पीछे छिप जाते। कभी वे अपनी माता के साड़ी के पल्लू को पकड़, खंजन पक्षी की तरह नृत्य करते। कभी बालक अपने मित्रों के साथ ताली बजाते हुए 'हरिबोल' बोलते हुए नृत्य करते। उस समय बालकों के सौन्दर्य की तुलना निपुण कवियों के सामर्थ्य से भी अवर्णनीय होती। कभी शची माता अपने पुत्र का कृष्ण के समान श्रृंगार करती और जब निमाई नृत्य करते तो वहाँ उपस्थित हर किसी को अपनी वास्तविक पहचान की विस्मृति हो जाती।

ईशान ने बोलना जारी रखा, 'यहाँ इस स्थान पर शची के पुत्र अपनी माता की साड़ी का पल्लू पकड़ कर खेला करते थे। जब बालक बाहर जाता तो हर प्रकार के गन्दे स्थान पर खेलता। इस स्थान पर खड़े होकर शची माता अपने पुत्र को इस स्थान पर खेलने के लिए मना करते हुए पुकारती। उत्तर में अपनी माता को बालक जो भी कहता वह मात्र उनका आश्चर्य वर्धन कर देता। निमाई गंगा में पत्थर फैंकने का खेल खेलते जबकि उनकी माता बारम्बार उच्चस्वर में उन्हें पुकार लगातीं। जब निमाई क्रोधित हो जाते तो वे कक्ष में चारों ओर वस्तुएं फैला देते।'

तन पर मिट्टी

'शची देवी तब बालक को अपनी गोद में उठा लेतीं और विविध प्रकार से शांत करने का प्रयास करतीं। यद्यपि निमाई उनकी बात नहीं सुनते थे। उनकी गोद से नीचे उतरने के पश्चात् वे दूर भाग जाते। शची माता हाथ में छड़ी लेकर उनका पीछा करतीं। जो कोई भी यह देखता यही कहता कि शची माता का व्यवहार बिलकुल माता यशोदा के समान था।'

'बाहर बैठे हुए विश्वम्भर कभी चिकनी मिट्टी अपने सम्पूर्ण तन पर पोत लेते और उनकी माता उन्हें ऐसा न करने का कहकर और तत्क्षण नदी पर जाकर स्नान करने के लिए कहते हुए फटकार लगाती। इस पर निमाई क्रोधित हो जाते

और वे अपनी माता को भयभीत करने के लिए पत्थर दिखाते। तब जब उनकी माता बस अचेत होने वाली होती, निमाई शीघ्रता से उनके लिए नारियल लेकर आते।'

'एक दिवस निमाई एक पिल्ला ले आए और उसे कक्ष में एक ऊनी आसन पर बैठा दिया। किसी छल से माता शची ने उसे मुक्त कर दिया और इस बात ने निमाई को इतना क्रोधित कर दिया कि वे बुरी तरह विलाप करते हुए उनसे अपशब्द बोलने लगे। तब शची माता ने अपने पुत्र को शांत करने के लिए श्रेष्ठतम प्रयत्न किए।'

बाल चापल्य

'इस स्थान पर एक दिवस माता शची ने थाल भर कर अमनिया लिया और षष्ठी माता की आराधना करने एक वट वृक्ष के नीचे गई। विश्वम्भर ने अपनी माता की परवाह किए बिना थाल से सभी फल और मिष्ठान खा लिए। शची माता ने तब अपने पुत्र के कार्य के कारण हुई आत्मग्लानि से प्रायश्चित्त स्वरूप एक वृद्ध महिला के चरण स्पर्श किए। वे अपने पुत्र के कल्याण के लिए सबसे प्रार्थना करने लगीं क्योंकि उनके पुत्र ने सर्वाधिक अपवित्र कार्य किया था। तब सब महिलाओं ने विश्वम्भर को अपनी गोद में उठा लिया और एक-एक कर के सबने उन्हें अनेक बातें सिखाई।'

दो चोरों पर कृपा

'हे श्रीनिवास अब मेरी बात सुनो क्योंकि अब मैं बताऊंगा कि कैसे प्रभु ने दो चोरों पर अनुग्रह किया। दो चोरों ने विश्वम्भर के तन से आभूषण चोरी करने का निर्णय किया। उन्होंने बालक को ठगा और अपने साथ ले गए। उन्होंने क्या गलती कर दी! उन्होंने विचार किया कि उन्होंने निमाई जैसे बालक से छल किया जो कि सम्पूर्ण विश्व को मन्त्रमुग्ध कर सकता है। वे नदिया में चलते रहे परन्तु कहीं से भी भागने का स्थान न खोज सके। अंततः उन्होंने बालक को मार्ग में छोड़ दिया और निराशा में भाग गए।'

'निमाई जो कि एक अधीर बालक था, उनकी गतिविधियां किसी की समझ से दूर थीं। कभी वे दूसरे बालकों को चिन्ता में घेरकर रुला देते। कभी वे आस पड़ोस के घरों में दुग्ध और दही के मिट्टी से बने पात्रों को तोड़ देते। नदिया की सभी महिलाएं शची माता से ऐसे शिकायत करतीं जैसे ब्रज की वृद्ध गोपियां माता यशोदा से करती थीं।'

'मेरे प्रिय श्रीनिवास, नदिया के इस नगर में कोई भी अतिथि जगन्नाथ मिश्र के निवास से खाली हाथ नहीं लौटता था। चाहे वे ब्राह्मण हों अथवा

संन्यासी या कोई भी हो, मिश्र परिवार द्वारा अतिथियों का अत्यधिक सत्कार किया जाता था।'

तैर्थिक विप्र पर कृपा

एक दिवस एक ब्राह्मण जो कि प्रभु का अत्यधिक उच्चकोटि का भक्त था, वह जगन्नाथ मिश्र के निवास पर आया।

वे एक महान विद्वान् थे और वे भगवान् गोपाल की षोडशाक्षर मन्त्र जप द्वारा उपासना करते थे। उनकी गर्दन में श्री बाल गोपाल के विग्रह शालिग्राम शिला आभूषण रूप में विद्यमान थे। और वे निरंतर प्रभु के पावन नामों का जप करते रहते थे। श्री मिश्र ने अति प्रसन्नता से उनका स्वागत किया और उन्हें वास करने के लिए एक श्रेष्ठ कक्ष निवेदित किया। जब ब्राह्मण ने निमाई को देखा तो वे बालक से अपने नेत्र न हटा सके। वास्तव में उन्होंने सोचा कि उन्होंने ऐसा अद्भुत बालक पहले कभी नहीं देखा है। निमाई ब्राह्मण को देखकर मुस्कुराए और फिर अन्य बालकों के साथ खेलने बाहर चले गए।

ब्राह्मण, मिश्र जी के उनकी सेवा करने के निष्कपट प्रयासों से अति प्रसन्न थे। श्रीजगन्नाथ मिश्र ने ब्राह्मण को जरूरी खाद्य सामग्री प्रदान की ताकि वे स्वयं पका सकें। सायंकाल जब ब्राह्मण ने भोजन पका लिया तो उसने ध्यान में भगवान् श्रीकृष्ण को अमनिया निवेदन किया। जब ब्राह्मण, श्रीकृष्ण का ध्यान कर रहे थे तब विश्वम्भर जो कि स्वयं भगवान् कृष्ण थे, वहाँ प्रकट हुए और प्रसन्नतापूर्वक मुठ्ठी भर भोजन उठा लिया जो निवेदन किया गया था। जब ब्राह्मण ने नेत्र खोले और यह सब देखा तो वह निराशा में रोने लगा। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि क्या घटित हुआ है, तो श्रीजगन्नाथ मिश्र अति क्रोधित हो गए कि वे अपने पुत्र पर प्रहार करने वाले थे परन्तु ब्राह्मण ने उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें शांत करने का प्रयास करने लगा।

विश्वरूप के निवेदन करने पर ब्राह्मण ने पुनः पकाया और एक बार पुनः विश्वम्भर आए और प्रसाद पा गए। वास्तव में भक्त-वत्सल भगवान् तीन बार आए और ब्राह्मण द्वारा निवेदित भोग पा गए। इस प्रकार निमाई ने ब्राह्मण पर इतने विस्तार से अनुग्रह किया कि वह इसकी कल्पना नहीं कर सकते थे।

तब मध्य रात्रि का समय था और हर कोई गहरी निद्रा में सो रहा था, विश्वम्भर ब्राह्मण के सम्मुख स्वप्न में प्रकट हुए और उससे बात की। ब्राह्मण, विश्वम्भर को अष्ट-भुज अवतार में देख कर आश्चर्यचकित था। चार हाथों में उन्होंने शंख, गदा, चक्र और कमल उठा रखा था। दो हाथों से वे समर्पित नैवेद्य को स्वीकार कर रहे थे और अपने अन्य दो हाथों से वे अपनी बांसुरी बजा रहे थे। प्रभु का सौन्दर्य ऐसा था कि तीनों लोकों को मदोन्मत्त कर दे। ब्राह्मण ने

यमुना नदी, उसका तट और श्रीवृन्दावन का दर्शन किया, जहाँ गाय, गोप और गोपी विचरण करते थे।

नदिया में ही रहने लगे

ब्राह्मण उल्लास में भाव विभोर हो उठे और प्रभु के चरणकमलों को अपने अश्रुओं से भिगोते हुए भूमि पर लोट गए। शचीनन्दन जो कि करुणा और दया के सागर हैं, उन्होंने ब्राह्मण को उनकी नदिया लीलाओं के बारे में सूचित किया और उन्हें आलिंगन कर लिया। तब प्रभु ने ब्राह्मण को, जो भी उन्होंने देखा वह किसी को भी बताने के लिए मना कर दिया।

तत्पश्चात् ब्राह्मण ने नदिया में एकान्त वास किया ताकि वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के बाल्यकाल की लीलाओं का आनन्द लेते रहें।

अमावस्या के दिवस जगदीश और हिरण्य गोवर्धन ने विष्णु भगवान् को निवेदन करने के लिए अनेकों प्रकार के व्यंजन तैयार किए। तब ब्राह्मण जगदीश और हिरण्य गोवर्धन ने सुना कि विश्वम्भर उनके चावल को खाना चाहते हैं।

हिरण्य-गोवर्धन

ईशान ने कहा, 'उस आवास की ओर देखो जहाँ जगदीश और हिरण्य गोवर्धन पूर्व में वास करते थे। वे दोनों श्रीजगन्नाथ मिश्र के अच्छे मित्र थे। मैं उनके निमाई की बाल्यकाल की लीलाओं के बारे में अधिक क्या कहूँ? वह जो वस्तु पाना चाहते थे उसे प्राप्त न कर पाने पर अति आकुल हो जाते।'

'यहाँ आकाश की ओर देखते हुए निमाई अपनी माता से चन्द्रमा के लिए पूछते। उड़ते हुए पक्षियों को देख वे अपनी माता से विकलता से उन्हें बुलाने को कहते और जब वे नहीं आते तो वे रोने लग जाते थे। सभी कन्याएं निमाई के बारे में शची देवी से शिकायत करतीं। सभी सदाचारी ब्राह्मण निमाई के पिता से उनकी शिकायत करते थे।'

एक दिवस शची देवी ने निमाई को शीघ्रता से विश्वरूप को बुलाने का आदेश दिया। उस समय विश्वरूप, अद्वैत आचार्य के निवास पर थे। निमाई वहाँ गए और अपने अग्रज भ्राता से बोले, 'घर चलिए, माता आपको भोजन पाने के लिए पुकार रही है।' अपने भ्राता के वस्त्र का पल्लू पकड़ कर निमाई अपने निवास पर लौट आए।

ईशान ने कहा, 'मैंने तत्क्षण उनके लिए दो आसनों का प्रबन्ध किया और दोनों भ्राता खाने के लिए नीचे बैठ गए। हे श्रीनिवास, मैं उस घटना के बारे में और वर्णन नहीं कर पाऊँगा क्योंकि मेरा कण्ठ भर आया है।'

शची माता सदैव निमाई को यह समझाने का प्रयास करतीं कि जो भी उन्होंने किया है वह सही नहीं है। नदिया के श्री मुरारी गुप्त एक संत पुरुष थे और हर कोई उन्हें अपना पूज्य मानता था।

बाल चपल चेष्टाएं

शची माता ने अपने पुत्र को बताया, 'तुम श्री मुरारी के चावल के थाल को तब तक स्पर्श नहीं करोगे जब तक वे प्रसाद न पा लें। मेरे प्रिय पुत्र, तुम्हारे कृत्य के लिए हर कोई तुम्हारी आलोचना करता है। वे एक विद्वान् पुरुष हैं और इस कारण ही उन्होंने तुम पर क्रोध नहीं किया। कृपया यह दोबारा मत करना।'

एक शुभ अवसर पर वर्णमाला के अक्षर लिखकर श्रीमिश्र ने अपने पुत्र की शिक्षा आरम्भ करने के लिए उनके हाथ में खड़िया रख दिया। सर्वप्रथम उन्होंने बंगला वर्णमाला लिखी और अपने पुत्र को भी अक्षरों को लिखने को कहा। निमाई पालथी मारकर बैठ जाते और भली प्रकार अक्षरों को लिखते। अपनी लिखाई समाप्त करने के बाद निमाई अति मधुरता से वर्णमाला के अक्षरों का उच्चारण करते, जो कि उनके पिता को आनन्दित कर देता।

अपनी शैशव अवस्था में प्रभु स्वयं को अपने अध्ययन में मग्न कर लेते और यदि उनके पास लिखने के लिए कुछ न होता तो वे अति अधीर हो जाते। धीरे-धीरे वे लेखन में पारंगत हो गए और यह देखकर हर कोई प्रसन्न हो जाता। श्री जगन्नाथ मिश्र ने विश्वम्भर के शिक्षण में अति आनन्द लिया। वे निमाई के सामने एक ग्रन्थ खोल देते, जो उसे प्रसन्नता से पढ़ते और अति आनन्द में उसी में मग्न हो जाते।

ईशान ने कहना निरन्तर रखा, 'इस स्थान पर खड़े होकर विश्वंम्भर ने अपनी माता को एकादशी पालन करने को कहा। शची देवी ने अपने पुत्र के इस निर्देश को अति प्रसन्नता से स्वीकार कर लिया और तत्पश्चात अति निष्ठा से एकादशी का पालन किया।'

बलदेव के अंश अवतार श्रीविश्वरूप

जगन्नाथ मिश्र ने यह निश्चय किया कि अब समय है विश्वम्भर के विवाह की व्यवस्था की जाए। यद्यपि विश्वरूप की भौतिक जीवन की तुच्छता के सत्य को जानकर भौतिक जीवन के आनन्द को प्राप्त करने की कोई चाह नहीं थी। जब उन्हें अपने पिता की चेष्टा का ज्ञान हुआ तो उन्होंने श्री शंकरारण्य नाम प्राप्त कर गृह त्याग दिया और विरक्त जीवन अपना लिया। तब वे तीर्थ यात्रा पर चले गए। **बलदेव के अंश अवतार विश्वरूप** सोलह वर्ष के सुन्दर बालक थे, जब उन्होंने गृह त्याग किया।

ईशान ने कहा, 'यहाँ अपने अग्रज भ्राता से विरह के कारण विश्वम्भर फूट-फूट कर रोए थे। शची देवी और श्रीजगन्नाथ मिश्र भी व्याकुल होकर ऐसे रोए कि वहाँ उपस्थित हर कोई व्यथित अनुभव करने लगा। वे बारम्बार विश्वरूप का नाम उच्च स्वर में पुकार कर रो पड़ते थे।'

'इस प्रकार जगन्नाथ मिश्र के निवास पर हृदय विदारक दृश्य बन गया। हर कोई शची माता को सांत्वना देने का प्रयास करने लगा और प्रभु की इच्छा से किसी प्रकार से वे उनके दुःख को नियंत्रित कर पाए।'

'एक दिवस विश्वम्भर ने अपने माता-पिता को बताया कि वास्तव में यह अच्छा है कि विश्वरूप ने विरक्त जीवन अपना लिया है क्योंकि ऐसा करने से वह अपने माता और पिता के परिवार को सब तरह के कष्टों से मुक्ति दिलवा देंगे। इस प्रकार निमाई ने यह कहकर अपने माता-पिता को सांत्वना दी। वे उनका ध्यान रखेंगे, निमाई के इस आश्वासन ने उनके माता पिता को अति प्रसन्न कर दिया।'

संस्कार का समय

'हे श्रीनिवास! कुछ समय बाद निमाई के माता पिता का दुःख कम हो गया। तब शची देवी ने अपने पति मिश्र पुरन्दर से कहा कि विश्वम्भर के चूड़ाकरण संस्कार का समय आ गया है। वैदिक साहित्य के निर्देश के अनुसार उन्होंने एक शुभ समय पर उत्सव रचाने की व्यवस्था की।'

नरहरि ने इस संदर्भ में एक सुन्दर भजन लिखा :- क्या शुभ समय है! सभी लोग शची माता के सुन्दर आवास की ओर पधार रहे हैं। निमाई के चूड़ाकरण उत्सव ने सबके हृदय में प्रसन्नता भर दी। एक मंगल समय पर निमाई को सुन्दर आभूषणों से सुशोभित किया गया। माता पिता ने विश्वम्भर को एक रत्नजड़ित आसन पर विराजमान किया ताकि वैदिक विधियाँ आरम्भ हो सकें। तब वह व्यक्ति आया जो निमाई का कर्ण छेदन करेगा। महिलाओं ने जय जयकार करना आरम्भ कर दिया और पुरुषों ने भगवान् के पावन नामों को जपना आरम्भ कर दिया। ब्रह्माण्ड आनन्द से भर गया। ब्राह्मणों ने वैदिक मन्त्र पढ़ने आरम्भ कर दिए। अनुभवी वेदपाठियों ने अपना व्याख्यान आरम्भ किया, नर्तकों ने नृत्य और वादकों ने वाद्य यन्त्र बजाने आरम्भ कर दिए। क्या सुन्दर दृश्य है! जो व्यक्ति प्रभु के कर्ण छेदन करने आया था वह यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि पहले से प्रभु के कान में छेद हैं, यद्यपि उसने यह किसी को नहीं बताया।'

यज्ञोपवीत संस्कार

ईशान ने कहा, 'देखो, इस स्थान पर निमाई अपने मित्रों के साथ क्रीड़ा करते थे और महिलाएं पास खड़े होकर आनन्द लेती थीं। एक दिवस श्री मिश्र ने अपने पुत्र को यज्ञ-सूत्र-धारण करवाने का निश्चय किया। उन्होंने अपने पड़ोसियों की सहायता से एक मंगल समय का चयन किया।'

'एक बार पुनः जगन्नाथ मिश्र का आवास आनन्द से भर उठा। नदिया में हर किसी को इस उत्सव का ज्ञान हो गया। सभी पड़ोसी विविध प्रकार के उपहार और व्यंजन लेकर पधारे। अति प्रसन्न होकर जगन्नाथ मिश्र ने वैदिक रीतियों का पालन कर अपने पुत्र को यज्ञोपवीत धारण करवाया। निमाई रक्तिम लाल लंगोट धारण कर, अपने हाथ में दिव्य दण्ड पकड़े हुए थे और उनकी गर्दन में एक थैला लटका था, वे अति सुन्दर दिख रहे थे।'

'समारोह के पूर्ण होने पर जब निमाई ने भिक्षा मांगना आरम्भ किया तो देवता गण भी छद्म वेश में सामान्य लोगों के साथ घुल मिल गए और प्रभु गौरचन्द्र को भिक्षा देकर अति आनन्द का अनुभव किया। ब्राह्मण अनवरत वेदों का पाठ करने लगे कवियों ने उत्सव की महिमा को अपने गीतों से गौरवान्वित किया।'

'मेरे प्रिय श्रीनिवास, विश्वम्भर शिक्षा में लीन होने को उत्सुक हो उठे। अपने पुत्र के विचारों को जानकर पुरन्दर ने उन्हें उठाया और उन्हें गंगादास पंडित के चरणों में समर्पित कर दिया। पंडित जी ने निमाई को व्याकरण पढ़ाना आरम्भ कर दिया जिसे निमाई ने कुछ ही समय में पूर्ण कर लिया।'

'एक दिवस इस स्थान पर गौरचन्द्र प्रभु ने अपने मुख में पान का बीड़ा डाला। तब उसे चबाते हुए वे अचानक अचेत हो गए। उनके माता पिता शीघ्रता से आए और अति देखरेख करके उन्हें सचेत किया। तब निमाई ने विश्वरूप के संन्यास जीवन के सम्बन्ध में अनेक बातें बताईं।'

मिश्र जी का देह त्याग

'एक दिवस इस कक्ष में जगन्नाथ मिश्र ने एक स्वप्न देखा जिसमें उन्होंने विश्वम्भर को एक संन्यासी के वेश में देखा। जब वे अगली प्रातः जागे तो जगन्नाथ मिश्र बेसुध हो गए और उन्होंने तत्क्षण भगवान् से प्रार्थना आरम्भ कर दी। वे अपने पत्नी शची देवी से बोले कि कदाचित् वे अपने पुत्र विश्वम्भर को भी खो देंगे। शची देवी अपने पति को यह कह कर कि वे अधीर न हों क्योंकि निमाई उन्हें कभी नहीं छोड़ेंगे, उन्हें सांत्वना देने लगीं। उनके मत के अनुसार निमाई, जिसको शिक्षा के अलावा अन्य किसी वस्तु का आकर्षण नहीं है और जिसे अपने माता पिता से अत्यधिक प्रेम है, वे कभी उन्हें नहीं छोड़ेंगे। यद्यपि ये

सभी शब्द असत्य थे क्योंकि श्रीजगन्नाथ मिश्र स्वयं को इस विचार से मुक्त नहीं कर पा रहे थे कि निमाई अधिक समय तक निवास पर रहेंगे।

'अपने पुत्र के भविष्य की चिंता करते हुए श्री मिश्र अचानक बहुत अस्वस्थ हो गए और कुछ दिवस में मृत्यु को प्राप्त हो गए। शची माता और उनके पुत्र को जो दु:ख अनुभव हुआ उसे किसी प्रकार से वर्णन नहीं किया जा सकता। वे भूमि पर गिर कर उच्चस्वर में रो रहे थे। सभी पड़ोसी आ गए और वे भी उद्वेग सहित विलाप करने लगे। प्रभु की इच्छा से पड़ोसियों ने किसी प्रकार शची माता और उनके पुत्र को शांत किया। विश्वम्भर ने भी अनेक प्रकार से अपनी माता को शांत किया। अपने पति को खोने के पश्चात् शची माता अपने पुत्र के प्रति इतनी आसक्त हो गईं कि एक क्षण के लिए भी उन्हें अकेला नहीं छोड़तीं थीं। कौन समझ सकता है कि प्रभु के शांतचित्त हृदय में क्या चल रहा था।'

'एक दिवस निमाई ने अपनी माता से, यह कहकर कि वे गंगा पर स्नान करने जाना चाहते हैं, कुछ पुष्प मालाओं की मांग की। जब उनकी माता को माला देने में कुछ विलम्ब हुआ तो निमाई इतने क्रोधित हो गए कि उन्होंने घर की सभी मूल्यवान वस्तुएं तोड़ डालीं। तब वे आंगन में लेट गए और गहरी निद्रा में सो गए। दीर्घकाल बाद अपने पुत्र को जागा देखकर शची माता आईं और अपने पुत्र के तन से धूल साफ कर दी। तब उन्होंने पुष्प माला दी और निमाई प्रसन्नतापूर्वक गंगा स्नान करने चले गए।'

स्वर्ण का टुकड़ा?

'एक दिवस शची माता ने अपने पुत्र को बताया कि चावल का एक दाना भी खाने के लिए नहीं है। जब उन्होंने माता को ऐसा कहते हुए सुना वे बाहर चले गए और जब वापिस आए तो उन्होंने माता को एक स्वर्ण का टुकड़ा दिया। शची माता स्वर्ण को पाकर आश्चर्यचकित हो गईं क्योंकि वे यह नहीं समझ पाईं कि उनके पुत्र को यह कैसे प्राप्त हुआ।

लक्ष्मी प्रिया मिलन

इसी समय शची माता अपने पुत्र के विवाह के बारे में विचार करने लगीं। निमाई अब युवा हो चुके थे। निमाईचन्द्र के विकसित होते सौन्दर्य को देखकर हर कोई मन्त्रमुग्ध हो जाता था। अपनी माता को प्रसन्न करने के लिए प्रभु ने विवाह करने का निर्णय किया। ऐसा चिन्तन करते हुए जब प्रभु गंगा की ओर जा रहे थे तो उनकी भेंट लक्ष्मी देवी से हुई जो बाद में उनकी पत्नी हुईं।'

इस भजन में नरहरि उस घटना का वर्णन करते हैं :- वल्लभ की पुत्री, मृदु स्वभाव वाली लक्ष्मी अपनी अन्तरंग सखियों से घिरी हुई स्नान करने गंगा

पर जा रही थी। इधर-उधर देखते हुए अचानक उन्होंने कुछ दूरी पर गौरांग प्रभु को खड़े देखा।

विश्वम्भर के अद्भुत सौन्दर्य को निहारते हुए लक्ष्मी उल्लसित भाव से आनन्दित हो उठी। जब प्रभु ने लक्ष्मी को निहारा तो उन्होंने उनके सुन्दर स्वर्णिम वर्ण और उत्कृष्ट सौन्दर्य को देखा और तत्क्षण अपने विचारों में धारण कर लिया। उन दोनों ने एक-दूसरे के मुख को निहारा और नरहरि के अलावा वे दोनों उन भावों को न समझ सकें, जिसे इस सन्दर्भ में लिखने में अति आनन्द की अनुभूति हुई।

विवाह-चर्चा

एक दिवस श्रीवनमाली आचार्य, शची माता से भेंट करने आए और उन्होंने निमाई के विवाह के सम्बन्ध में चर्चा की। उनके इस प्रस्ताव से निमाई का वल्लभ आचार्य की पुत्री लक्ष्मी से विवाह सुनिश्चित हो गया। निमाई ने अपनी माता को उनके विवाह की चर्चा करते सुन लिया था परन्तु उन्होंने व्यस्त होने का नाटक किया कि जैसे उन्होंने कुछ सुना ही नहीं। शची देवी ने तब विवाहोत्सव के लिए जो भी आवश्यक था, उसका प्रबन्ध किया और उन्होंने मंगल मुहूर्त्त निश्चित कर दिया।

श्रीनवद्वीप के निवासियों को निमाई के विवाह का ज्ञान हुआ तो वे अति आनन्दित हुए। लोग कैसे जान सकते थे कि प्रभु की इच्छा से यह सब पहले से निर्धारित था? तथापि वे अति प्रसन्न थे और शीघ्रता से शची माता के निवास पर आकर विवाह के विवरण के बारे में पूछने लगे। वे मिश्र जी के निवास पर अनेक उपहार, पुष्प और मालाऐं लेकर आए। अनेकों गायक, नर्तक और वादक विवाह उत्सव में सहभागिता करने शची माता के निवास पर आए। अनेक निर्धन लोग भी, अच्छे भोजन की चाह में वहाँ एकत्र हो गए।

श्रीनवद्वीप की नवविवाहित कन्याओं ने स्वयं से आपस में चर्चा करनी आरम्भ कर दी। किसी ने कहा, 'श्रीवल्लभ आचार्य और उनकी पत्नी ने अपने पूर्व जन्म में अनेक पुण्य कर्म किए होंगे, जिसके परिणाम स्वरूप इस जन्म में उन्हें ऐसा दामाद मिला है।'

विवाह की तैयारी

किसी अन्य ने कहा, 'लक्ष्मी देवी अति सौभाग्यशालिनी कन्या है क्योंकि उसे ऐसा पति प्राप्त होने वाला है जो मदन के समान सुन्दर है।'

एक महिला ने कहा, 'वनमाली के लिए इस विवाह का प्रबन्ध करना अच्छा है। कृपया उठ जाओ और तैयार हो जाओ ताकि हम शची माता के निवास पर जाएँ क्योंकि आज अधिवास उत्सव आरम्भ होने वाला है।'

नदिया की सभी कन्याओं ने अपने सर्वाधिक सुन्दर परिधान और आभूषण धारण किए और शची माता के निवास पर एकत्र होना आरम्भ कर दिया।

वे श्रीगौरचन्द्र को दूल्हे के वेष में देखने के लिए उत्सुक हो गईं। वे निमाई के लिए अनेक पुष्प मालाएं लेकर आईं। जब वे निमाई के निवास पर पहुंची वे सर्वप्रथम शची माता के चरणों में प्रणाम करने झुकीं, जिन्होंने अति सत्कार से उनका स्वागत किया।

शची माता के निवास का आंगन नदिया की सौन्दर्यवान् कन्याओं और महिलाओं से भर गया। वास्तव में वे आस पास के क्षेत्र को प्रकाशित करती प्रतीत हो रही थीं। ब्राह्मणों ने वेद मन्त्रों का पठन आरम्भ किया। सभी महिलाओं ने गौरचन्द्र को पुष्प माला निवेदन की, जो तब और अधिक सुन्दर लग रहे थे। महिलाओं ने निमाई को चन्दन लेप और इत्र भी लगाया। अधिवास उत्सव के पूर्ण होने के पश्चात् श्रीवल्लभ आचार्य अपने निवास पर लौट आए। शची माता ने भी कुछ लोक रीतियाँ निभाईं जो कि केवल महिलाओं द्वारा की जाती थीं। गायकों ने गाना आरम्भ कर दिया, नर्तकों ने नृत्य करना आरम्भ कर दिया और वादकों ने वाद्य यन्त्रों का वादन आरम्भ कर दिया।

श्रीवल्लभ आचार्य के निवास पर लक्ष्मी देवी का अधिवास उत्सव हुआ। माता ने अपनी पुत्री को भव्य रूप में वेश धारण करवाया और मूल्यवान आभूषणों से सुशोभित किया। उन्होंने अपने निवास के आंगन में स्वयं द्वारा रखे रत्नजड़ित सिंहासन पर विराजमान होने में अपनी पुत्री की सहायता की। उस स्थान की सभी महिलाऐं और यहाँ तक कि देवतागण भी छद्म वेष में श्रीवल्लभ आचार्य के निवास पर लक्ष्मी देवी के सौन्दर्य को निहारने और उत्सव में सहभागिता करने के लिए एकत्र होने लगे।

शंख की ध्वनि, घण्टी और वाद्य यन्त्रों के स्वर ने उस स्थान के वातावरण को परम आनन्द से भर दिया। जब अधिवास की रात्रि पूर्ण हुई तो निमाई के आवास पर महिलाओं ने विवाह के प्रबन्ध आरम्भ कर दिए। ब्राह्मणों ने विवाह की विविध रीतियों को निभाने में निमाई की सहायता की। शची माता के निवास पर अपार जन समूह था और उत्सव का स्वर सम्पूर्ण वातावरण में विद्यमान था। महिलाएं विधि के रूप में निकटवर्ती तालाब से पात्रों में जल भरने गईं। यह कितना सुन्दर दृश्य था! असंख्य महिलाओं ने पंक्तिबद्ध होकर अपनी कमर पर सुन्दर चित्रंण वाले पात्रों को रखा हुआ था। उनके चलते समय उनके नूपुर मधुर ध्वनि निकाल रहे थे।

दूल्हे राजा निमाई

उस जल से महिलाओं ने निमाई को स्नान करवाया। तब उनके घुंघराले केशों पर तेल लगाने के लिए उन्होंने स्नेह वश उनके शीश को थपथपाया।

कुछ महिलाओं ने निमाई के तन पर हल्दी का लेप लगाया और उनके स्वर्णिम तन पर लगने के कारण वह अपना पीला रंग छोड़ता हुआ सा प्रतीत हो रहा था। किसी ने निमाई के तन पर इत्र लगा दिया परन्तु उस इत्र की सुगन्ध भी प्रभु के उत्तमोत्तम तन के प्राकृतिक इत्र के कारण लुप्त होती प्रतीत हो रही थी।

तत्पश्चात् विश्वम्भर के मित्रों ने उन्हें वर के लिए उपयुक्त वेश धारण करवाया। उन्होंने श्रीगौरचन्द्र के तन पर चन्दन लेप और इत्र भी लगाया। उन्होंने उनके मस्तक पर चन्दन लेप के बिन्दु लगाए। उन्होंने उनके सुन्दर घुंघराले केशों को पुष्पों और मालाओं से शोभित किया और उनके सम्पूर्ण अंगों को भूषणों से ढक दिया। अंत में उन्होंने उनके कण्ठ में सुन्दर पुष्प माला और सुन्दर पतली कमर में एक स्वर्ण माला पधराई। अंत में उन्होंने उन्हें एक लाल रेशमी धोती धारण करने को दी।

निमाई की वेशभूषा पूर्ण करके उन्होंने उनके हाथ में एक दर्पण रख दिया जो कि हिन्दू विवाह की एक सार्वजनिक प्रथा है। सामान्य मनुष्य के अलावा देवता गण भी उनसे अपने नेत्र न हटा सके।

वधू के आवास पर जाना आरम्भ करते समय शची माता ने अन्य महिलाओं की सहायता से अनेक रीतियाँ निभाई। अंत में अपनी माता के चरणों में झुककर प्रणाम करने के बाद निमाई, वधू के आवास की ओर चल पड़े।

आ गयी बारात

श्रीवल्लभ आचार्य के आवास पर बारात के आगमन पर आनन्द भरा जयघोष गुंजायमान हो गया। अति आनन्दित होकर श्रीवल्लभ आचार्य ने हिन्दू विवाह की सभी रस्में पूर्ण कीं। विश्वम्भर प्रसन्नतापूर्वक एक काष्ठ के आसन पर खड़े हो गए। उस समय उनकी सुन्दरता हर किसी को मदोन्मत्त कर रही थी और उनके रंग रूप की आभा ब्रह्माण्ड की सभी दिशाओं को प्रकाशित कर रही थी। उनका चन्द्र समान सुन्दर मुख, मुस्कुराते समय ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों अमृत बरसा रहा हो। जब निमाई किसी को देखते तो वह अपने भावों पर नियंत्रण नहीं कर पाता था। उनके कुण्डल वाले सुन्दर कान और सुन्दर घुंघराले केश ऐसे प्रतीत हो रहे थे मानों जीव मात्र उन्हें देखकर अपना अस्तित्व भुला देगा। उनका चन्दन चर्चित मस्तक प्रेम के देवता मदन की सुन्दरता को भी लज्जित कर रहा था।

वधू की माता और अन्य महिलाएं निमाई को आसन से उठाने आईं और आनन्द दायक ध्वनि करने लगीं। उन्होंने हाथों में सात दीपक पकड़ कर सात बार उनको परिक्रमा करवाई। तब महिलाएं वर को एक कक्ष में ले गईं। वल्लभ आचार्य अपनी पुत्री का हाथ निमाई के हाथ में सौंपने के लिए पुत्री को लेकर

आए, और उन्होंने अपनी पुत्री को काष्ठ के भव्य आसन पर विराजमान होने में सहायता की।

वधू लक्ष्मीप्रिया

वधू रेशम की बहुमूल्य साड़ी और मूल्यवान आभूषण धारण करके अति सुन्दर लग रही थी। जैसे ही श्रीवल्लभ आचार्य ने अपनी पुत्री का हाथ शची देवी के पुत्र के हाथ में सौंपा, ब्राह्मणों ने वेद मन्त्रों का पठन आरम्भ कर दिया और महिलाओं ने सम्पूर्ण समारोह में आनन्दयुक्त कोलाहल आरम्भ कर दिया। वहाँ वाद्य यन्त्रों, शंख और घण्टियों का अति मधुर स्वर व्याप्त था। यहाँ तक कि देवता गण भी स्वयं को आकाश में छिपाकर, वर वधू पर पुष्प वर्षा करने की अपनी कामना पर नियंत्रण न रख सके।

विवाह उत्सव के पूर्ण होने पर श्रीगौरचन्द्र अपनी वधू के साथ उस कक्ष में गए जहाँ महिलाएं प्रथा के अनुसार वर के साथ हास-परिहास करेंगी। कुछ महिलाओं ने उन्हें पान के पत्ते दिए और उन्हें लक्ष्मी के मुख में देने को कहा। कुछ महिलाओं ने पान के पत्ते सीधा उनके मुख में डाल दिए। कुछ ने गौरांग के सुन्दर घुंघराले केशों को स्पर्श करने की आशा में केशों को अस्त-व्यस्त कर दिया। किसी ने लक्ष्मी को श्रीगौरचन्द्र की गोद में पधरा दिया और अति आनन्द में उन्हें देखने लगे।

विवाह के एक दिवस पश्चात् प्रातःकाल श्रीवल्लभ आचार्य के आवास पर हर कोई नव-दम्पति को देखकर प्रसन्न हो गया। हर कोई ऐसा जमाई प्राप्त करने पर वल्लभ आचार्य की पत्नी के सौभाग्य की प्रशंसा करने लगा। वल्लभ ने आनन्दित होकर प्रत्येक अतिथि को प्रसन्न करने का अत्यधिक प्रयास किया।

कुछ समय बाद गौरहरि अपनी वधू के साथ, अपने आंवास की ओर चल दिए। अन्तर्गृह में उन्होंने अपनी पत्नी लक्ष्मी से अनेकों मृदु वचन कहे। प्रत्येक व्यक्ति ने नव विवाहित वर और वधू की विदाई के दर्शन किए और वे सब उनकी अद्वितीय सुन्दरता को निहार कर मन्त्रमुग्ध हो गये। जब उनके (वधू) के विदा होने का समय आया तब लक्ष्मी देवी अपने माता-पिता और मित्रों की उपस्थिति में रोने लगी।

आ गयी घर पर वधू

जब विश्वम्भर अपनी पत्नी के साथ घर वापिस लौटे तो शची माता ने अपनी पुत्र-वधू को गोद में उठा लिया और उन्हें आशीर्वाद दिया। उस समय उन्होंने बारम्बार अपनी पुत्र-वधू के गालों पर चुम्बन किया। कोई भी निमाई और लक्ष्मी के सौन्दर्य से अपने नेत्र न हटा सका। अत्यधिक मन्त्रमुग्ध करने वाले व्यक्तित्व के स्वामी श्रीगौरहरि ने मधुरता से सब से बात की।

ईशान ने श्रीनिवास को बताया कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से इन लीलाओं का पूर्ण तृप्ति से आनन्द लिया है। उन्होंने कहा, 'इस कक्ष में श्रीविश्वम्भर लक्ष्मी के साथ वास करते थे। लक्ष्मी जो कि अपनी निष्कपट कर्तव्य परायणता से सभी को आनन्दित करने का प्रयास कर रही थीं, उनकी मधुर प्रवृति का साक्षी बन, हर कोई आनन्दित हो उठा। तत्पश्चात श्रीगौरचन्द्र ने स्वयं को नदिया के बालकों को पढ़ाने में लीन कर लिया। निमाई हर किसी के प्रति आदर भाव दिखाने में बिलकुल नहीं हिचकिचाते थे।'

वात व्याधि

एक दिवस प्रभु ईश्वर पुरी के सम्मुख प्रणाम स्वरूप झुके और उन्हें भिक्षा के लिये कक्ष पर निमन्त्रित किया। वात रोग का दिखावा करते हुए निमाई ने अनेकों उत्तमोत्तम प्रेम और समर्पण के भाव प्रदर्शित किये, जिन्हें लोग नहीं जानते थे। उनके सहभागी उनकी चिकित्सा करने का प्रयास कर रहे थे। अंततः स्वयं की इच्छा से प्रभु ने अपने भावों पर नियंत्रण किया। जब वे स्वस्थ हो गए तो सब आनन्दित हुए और उन्हें वात रोग हुआ था ऐसा सोचने लगे।

एक दिवस भगवान् विष्णु के मन्दिर के इस द्वार के सामने निमाई ने आकाश में पूर्ण चन्द्रमा को देख बांसुरी वादन करना आरम्भ कर दिया। केवल उनकी माता ही इस बांसुरी का स्वर सुन सकती थीं और कोई नहीं।

लक्ष्मीप्रिया अन्तर्धान

अपनी माता के चरणों में झुककर प्रणाम करने के पश्चात् निमाई अपने अनुचरों के साथ पूर्व बंगाल के लिए चल पड़े। लक्ष्मी प्रायः यहाँ अकेले, मात्र अपने पति की स्मृतियों के सहारे बैठ जातीं। एक दिवस गंगा के तट पर लक्ष्मी को एक सांप ने काट लिया और उनकी मृत्यु हो गई। जब शची देवी को यह समाचार प्राप्त हुआ तो वे उच्चस्वर में विलाप करने लगीं। पड़ोसी जनों ने अपने हृदय और आत्मा से उन्हें शांत करने का प्रयास किया। उस समय शची माता अधीरतापूर्वक अपने पुत्र का चिन्तन करने लगीं। सर्वज्ञ प्रभु उनका दुःख जानते थे। इस कारण शीघ्रता से वे अपने निवास पर लौट आए, अविचलित होकर उन्होंने विविध प्रकार से अपनी माता को सांत्वना दी। तब वे पुनर्विवाह के बारे में सोचने लगीं परन्तु वे कोई उपयुक्त कन्या नहीं खोज सकीं।

तब एक दिवस जब शची देवी गंगा पर स्नान करने गईं तो उनकी भेंट श्रीसनातन गोस्वामी की विष्णुप्रिया नाम की पुत्री से हुई। वह शची माता को अत्यधिक पसन्द आईं और उन्होंने निर्णय किया कि वे इन्हें उत्कृष्ट वधू बनायेंगी। तब शची माता के आदेश पर काशीनाथ पंडित ने विवाह के प्रबन्धन की जिम्मेदारी उठाई।

विष्णुप्रिया से विवाह

नदिया के सभी निवासियों ने शीघ्र ही विवाह प्रबन्धन के बारे में सुना और अत्यंत प्रसन्न हुए। बुद्धिमन्त खान और मुकुन्द संजय ने विवाह के आवश्यक प्रबन्ध की जिम्मेदारी ली। वे विवाह उत्सव के लिए दृढ़ संकल्पित थे। प्रभु अपने अनुचरों के प्रयत्नों को देखकर मुस्कुरा दिए। बुद्धिमन्त खान और अन्यों ने उत्साहपूर्ण भाव में स्वयं को विवाह के प्रबन्ध में व्यस्त कर लिया। उन्होंने इस स्थान पर एक विशाल तंबू खड़ा कर दिया, वट वृक्ष लगाए और जल से भरे कलश चारों ओर रख दिए। उन्होंने अनेक लोगों को गृह सज्जा करने, पुष्प माला और चन्दन लेप बनाने के लिए नियुक्त कर दिया। उन्होंने अनेकों गायकों, नर्तकों और वादकों को भी उत्सव में प्रदर्शन करने के लिए नियुक्त कर दिया।

अधिवास उत्सव से एक दिवस पूर्व, नदिया के सभी निवासियों को उत्सव के लिए निमन्त्रित किया गया। इस प्रकार उत्सव के दिवस एक अपार जन समूह एकत्र हो गया। शची माता ने सभी महिलाओं को मंगल कार्यों में संलग्न कर दिया। वे सब स्वयं को सुन्दर वेश और बहुमूल्य आभूषणों से सुशोभित करके शची माता के निवास पर आईं।

अधिवास उत्सव की पूर्व सन्ध्या पर कन्याओं और विवाहित महिलाओं के मनोभाव का नरहरि ने छः भजनों में अति सुन्दरता से वर्णन किया है। वे स्वयं सुन्दर वेष धारण कर और बहुमूल्य आभूषण धारण कर एवं श्रेष्ठ प्रसाधन सामग्री से सुशोभित होकर शची माता के निवास पर आईं। वे अपने साथ गौरचन्द्र के लिए सुन्दरता से बन्धे हुए पुष्प माला आभूषण लाईं। हर कोई अपने द्वारा लाई भेंट सीधा निमाई के हाथ में सौंपने के सपने संजोए था। उनमें से हर कोई निमाई के प्रति अत्यधिक आकर्षित था। सभी नवविवाहिता कन्याओं ने शची माता के निवास पर विवाह के लिए जाने से पूर्व अपने बड़ों से आज्ञा ली।'

प्रातः कन्याऐं और महिलाऐं श्रीमिश्र के निवास के लिए निकल पड़ीं, उनके नूपुर मधुरता से छनक रहे थे। हर किसी ने श्रीगौरहरि के लिए विविध प्रकार के सुगन्धित पुष्पों, पुष्प मालाओं और आभूषणों का पात्र ले रखा था। कन्याओं और महिलाओं ने स्वयं को भी विविध प्रकार के पुष्पों से सजा रखा था, जिससे ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों वे अपने तन पर आभूषणों के भार के कारण धीमे चल रही हैं।

नदी से जल आनयन

जब कन्याएँ और महिलाएँ शची माता के निवास पर पहुँचीं तो उनके (शची माता) द्वारा उनका अति सत्कार हुआ। शची देवी ने निमाई के लिए जल लाने के लिए महिलाओं को नदी पर भेजा। वे सभी प्रसन्नतापूर्वक पंक्तिबद्ध

होकर चली गईं। किसी ने अपने हाथ में श्रीविग्रह के लिए अमनिया वस्तुओं का थाल पकड़ रखा था। किसी ने अपने हाथ में पुष्पित कमलों का थाल पकड़ रखा था। किसी ने अपने शीश पर रेशम से ढका थाल पकड़ रखा था।

जब वे यथेष्ट जल ले आईं तो कन्याऐं और महिलाऐं, शची माता के निवास पर लौट आईं और तब उन्होंने (शची माता) उन्हें अन्य रीतियों-रस्मों में मग्न कर दिया जैसे कि तेल के साथ हल्दी का लेप बनाना और पुष्प सज्जा प्रबन्धन इत्यादि। तृप्त होकर शची माता ने अनेक प्रकार के अमनिया लेकर गंगाजी जाकर उनकी उपासना करने का निर्णय लिया। शची माता ने देवी गंगा को पुष्प निवेदन किया व चन्दन लेप और इत्र से उपासना की। आगे शची देवी ने षष्ठी देवी की विविध प्रकार के निवेदन से उपासना की। इस प्रकार श्रीगौरचन्द्र का अनुग्रह प्राप्त कर शची माता स्वयं को सौभाग्यशाली मानने लगीं।

शची माता तब अन्य रीतियों का निर्वाह करने के लिए अपने निवास पर लौट आईं। उन्होंने अपने पुत्र को काष्ठ के एक भव्य आसन पर विराजमान किया और महिलाओं ने उन्हें धारण करने के लिए पुष्प मालाएं दीं। उसी समय श्रीसनातन मिश्र अपने जमाई के लिए अनेक उपहार लेकर निमाई के निवास पर आए। वे श्रीगौरचन्द्र के उत्कृष्ट सौन्दर्य के दर्शन करके मन्त्रमुग्ध हो गए।

तब श्रीसनातन मिश्र अपनी पुत्री के अधिवास उत्सव के लिए अपने निवास पर लौट आए। ब्राह्मण गण वधू की माता के कक्ष से अधिवास उत्सव के लिए अनेक उपहार लेकर आए। अनेक अतिथि उत्सव के लिए एकत्र हो गए और एक निपुण भद्रपुरुष के रूप में श्रीसनातन मिश्र ने सभी को चन्दन लेप और पुष्प माला प्रदान कर हार्दिक स्वागत किया। हर कोई अपना एक आसन लेकर एक घेरे में बैठ गया।

दूसरा विवाह समारोह

तब श्रीसनातन मिश्र की पत्नी और अन्य महिलाएं विष्णुप्रिया देवी को कक्ष से लाईं और अतिथियों के मध्य एक सिंहासन पर बैठने में उनकी सहायता की। हर कोई विष्णुप्रिया के सौन्दर्य से मन्त्रमुग्ध था, जिन्होंने अति सुन्दर वेशभूषा और बहुमूल्य आभूषण धारण कर रखे थे। हर किसी ने उन्हें हृदय की गहराइयों से आशीर्वाद दिया। महिलाओं ने कोलाहल (हुलू रव) का स्वर निकाला और ब्राह्मणजनों ने वैदिक मन्त्र उच्चारण आरम्भ कर दिया।

अधिवास समारोह के दिवस के बाद निमाई के निवास और सम्पूर्ण नदिया में अत्यधिक मनोरंजन था। वास्तव में निमाई का विवाह चर्चा का विषय बन गया और हर कोई निमाई के निवास पर गया। यहाँ तक कि पार्वती देवी के साथ कैलाश से भगवान् शिव विवाहोत्सव का दर्शन करने आए। अपने पार्षदों के साथ स्वयं अनन्त वहाँ आए और एक गुप्त स्थान पर छिपकर उत्सव के दर्शनों

का आनन्द लेने लगे। वैकुण्ठ-वासी भी चैतन्य महाप्रभु के विवाह के दर्शन करने के उत्सुक थे। भगवान् विष्णु भी अपनी पत्नी के साथ वहाँ आए। राजा इन्द्र अपनी पत्नी शची के साथ इस सुन्दर विवाह को देखने आए। सभी देवताओं की पत्नियों ने नदिया की महिलाओं के साथ घुल मिलकर उत्सव में सहभागिता करने का निर्णय लिया। किन्नरों और गन्धर्व जनों ने शची माता द्वारा नियुक्त नर्तकों और वादकों के साथ गान और नृत्य करने की आशा संजोई।

लालाकी आई है बारात

आगे महिलाओं ने निमाई को सनातन मिश्र के निवास पर जाने के लिए तैयार करने हेतु सजाना आरम्भ कर दिया। उन्होंने श्रीगौरचन्द्र के सुन्दर केशों में तेल डाला। रीति के अनुसार निमाई ने स्नान किया और एक सिंहासन पर विराजमान हो गए। उस समय वे विशेष रूप से सुन्दर दिखाई दे रहे थे। कोई भी निमाई के मुख से दृष्टि नहीं हटा सकता था। तत्पश्चात् निमाई के मित्रों ने दूल्हे के लिए उपयुक्त वेश उन्हें धारण कराया। तब निमाई ने झुककर माता को प्रणाम किया और अनेक सहभागियों के साथ श्रीसनातन मिश्र के निवास की ओर चल दिए। मार्ग कोलाहल करते लोगों और वाद्य यन्त्रों की ध्वनि से भरा हुआ था।

निमाई के साथ आए मित्रों ने प्रसन्नतापूर्वक नृत्य किया। उस समय नदिया की महिलाओं ने विवाह उत्सव में जाने से पूर्व स्वयं को बड़ी देखभाल से शृंगारित किया। उन्होंने विशेष रूप से अपने केशों को पुष्पों से सुशोभित किया। उन्होंने अपने मस्तक पर केसर बिन्दु लगाए और कानों में पुष्प कुण्डल धारण किए। उन्होंने अपने सर्वाधिक बहुमूल्य आभूषण और परिधान धारण किए और अपने कण्ठ में अति सुन्दर पुष्प माला धारण कर स्वयं को शृंगारित किया।

श्रीसनातन मिश्र परम हर्षित

जब निमाई का दल उनके निवास के निकट पहुँचा तो श्रीसनातन मिश्र अपने जमाई का अभिवादन करने आए। हर कोई वर को निहार कर पूर्ण रूप से मन्त्रमुग्ध हो गया। श्रीसनातन मिश्र के निवास के बाहर मार्ग पर पंक्तिबद्ध हो अनेक ब्राह्मणजनों के साथ-साथ अपार जन समूह एकत्र हो गया। यहाँ तक कि नेत्रहीन और पंगु लोग भी वर का स्वागत करने पहुँच गये। वहाँ वादकों द्वारा बजाए जा रहे वाद्ययन्त्रों का कर्णप्रिय आनन्दप्रदायक स्वर गूँज रहा था। उस क्षेत्र के आवासों के बाहर सैंकड़ों दीपक जगमगा रहे थे।

पूर्ण रूप से तृप्त श्रीसनातन मिश्र अपने जमाई को अपने आवास के भीतर ले गए और उन्हें एक सुन्दर आसन पर बैठाया। महिलाओं ने आनन्दित जन समूह के मध्य श्रीगौरहरि पर पुष्प वर्षा की।

विष्णुप्रिया की माता को अपने जमाई को निहारते हुए जो मानसिक सन्तुष्टि हो रही थी उसका वर्णन एक सुन्दर भजन में नरहरि ने किया है। वे अन्य महिलाओं के साथ निमाई को आशीर्वाद देने और दूब (घास) निवेदन करने आईं। तब उन्होंने अन्य महिलाओं के साथ सात बार प्रभु की परिक्रमा लगाई और उन्होंने अपने हाथों में सात दीपक पकड़ रखे थे। तत्पश्चात वे (विष्णुप्रिया की माता) उन्हें (जमाई को) उस कक्ष में ले गईं जो आयोजन के लिए सजाया गया था।

श्रीसनातन मिश्र की पत्नी ने अनेक लोकरीतियों का निर्वाह किया। उन्होंने अपनी पुत्री को अति भव्य शैली में वस्त्र धारण करवाये और शृंगार करवाने का आनन्द लिया। श्रीसनातन मिश्र ने तब अपने मित्रों को वधू को उस पण्डाल में लाने का आदेश दिया जो उत्सव के लिए प्रस्तुत किया गया था। वे विष्णुप्रिया को लाए और उन्हें एक सिंहासन पर विराजमान कर दिया। विष्णुप्रिया ने एक पुष्पमाला पहना कर स्वयं को प्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया। मधुरता से मुस्कुराते हुए प्रभु ने माला उठाई और विष्णुप्रिया के कण्ठ में डाल दी।

पुष्पमाला के आदान-प्रदान से प्रभु और विष्णुप्रिया परस्पर एक दूसरे के विचार भली प्रकार समझ सकते थे। इस प्रकार प्रभु ने विष्णुप्रिया के संग अपना जीवन प्रारम्भ किया।

पाणिग्रहण

श्रीसनातन मिश्र ने अपना स्थान ग्रहण किया और तत्पश्चात् अपनी पुत्री का हाथ श्रीगौरचन्द्र के हाथ में सौंप दिया। दहेज के रूप में श्रीसनातन मिश्र ने निमाई को गाय, धन, भूमि, शैय्या, सेवक और सेविकाऐं दी। तत्पश्चात् अग्नि के समक्ष विवाह विधि सम्पन्न हुई। श्रीसनातन मिश्र ने अपनी पुत्री को यज्ञ के समय विश्वम्भर के बाईं ओर विराजमान किया। हर कोई नव विवाहित दम्पति के सौन्दर्य को निहार कर मंत्रमुग्ध हो गया था।

देवता गण और उनकी पत्नियों ने अति उत्साह से श्रीगौरचन्द्र के विवाह उत्सव की चर्चा की। निश्चित ही नदिया के निवासी अति सौभाग्यशाली थे क्योंकि वे अपने नेत्रों से इस मांगलिक उत्सव के साक्षी बने थे। वे ब्राह्मण जिनकी अति सुन्दर कन्याऐं थी, वे खेद करने लगे क्योंकि वे श्रीगौरचन्द्र के जैसा जमाई नहीं खोज पाए। हर किसी ने कहा कि ऐसा सुन्दर जमाई प्राप्त होने के कारण श्रीसनातन मिश्र अति सौभाग्यशाली व्यक्ति थे।

तत्पश्चात् महिलाऐं नव-दम्पति को एक कक्ष में ले गईं, जहाँ उन्होंने वर को हास-परिहास में छेड़ा। उनमें से कुछ ने श्रीगौरचन्द्र को पान के पत्ते निवेदन किए और निवेदन किया कि वे उन्हें विष्णुप्रिया को दें। अपने असाधारण

सौन्दर्य से, जो कि प्रेम के देवता मदन को भी लज्जित कर दे, श्रीगौरचन्द्र ने उस कक्ष में सभी महिलाओं को प्रमत्त कर दिया।

विदाई

प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक वह रात्रि विष्णुप्रिया के साथ उस कक्ष में व्यतीत की। प्रातःकाल श्रीगौरहरि ने अति आदर से अपनी वधू के साथ अपने निवास पर लौट जाने की आज्ञा मांगी। इस कारण सनातन मिश्र को अपनी पुत्री को विदा करना पड़ा। अपनी पुत्री को विविध प्रकार से सांत्वना देकर अपने भावों पर सावधानी से नियंत्रण रखते हुए, उन्होंने पुनः अपनी पुत्री का हाथ गौरहरि के हाथ में सौंप दिया। विदा होने के समय गौरहरि सभी सम्माननीय व्यक्तियों के चरणों में प्रणाम करने झुके। उस समय ब्राह्मणों ने वैदिक मन्त्रों का उच्चारण किया और महिलाओं ने आनन्द सूचक ध्वनि निकाली।

श्रीगौरचन्द्र प्रभु अपनी वधू के साथ प्रसन्नतापूर्वक अपने आवास पर लौट आए और देवताओं ने उनके मस्तक पर पुष्पवर्षा की।

किसी ने शची-माता को उनके सन्निकट आगमन की सूचना दी और जब उन्होंने वाद्य यन्त्रों का स्वर सुना तो वे शीघ्रता से उनका स्वागत करने चली गईं। उनके आगमन पर श्रीनिमाई और विष्णुप्रिया अपनी पालकी से नीचे उतर आए। शची माता ने प्रसन्नता से दम्पति को आलिंगन किया और अपने पुत्र और वधू के कपोलों को चूम लिया। वे उन्हें आवास के भीतर ले गईं और सिंहासन पर विराजमान किया। हर कोई इस सुन्दर दृश्य को देखकर सम्मोहित हो गया।

शची माता ने तब गायकों, वादकों, नर्तकों और पाठियों को वस्त्र, आभूषण और धन वितरण किया जो कि अति संतुष्ट हो गए और प्रभु तथा उनकी पत्नी की महिमा का गान करते हुए प्रस्थान कर गए। शची-माता ने सभी महिलाओं को विदा किया।

विवाह एवं अन्य लीला स्थलियाँ

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास, मैं अब स्मरण कर सकता हूँ कि कैसे हमने विश्वम्भर के विवाह में आनन्द लिया। यह वह स्थान है जहाँ शची-माता अपने पुत्र गौरहरि और पुत्रवधु विष्णुप्रिया के साथ बैठी थीं। शची-माता ने विष्णुप्रिया को कैसे प्रेम किया, इसका वर्णन एक मुख से नहीं हो सकता। विष्णुप्रिया स्वयं को सदैव निष्कपटतापूर्वक श्री विष्णु और शची-माता की सेवा में मग्न रखती। शची माता अपनी पुत्रवधू से अत्यधिक संतुष्ट हो गई थीं। वे दोनों मिलकर अपने दिन प्रसन्नतापूर्वक व्यतीत करते थे।'

विश्वम्भर जो अब एक सुन्दर अत्यधिक ओजपूर्ण युवक थे, वे आनन्दपूर्वक अपना समय अपनी पत्नी के साथ व्यतीत करते थे। वे सदैव उत्तमोत्तम माला

और चन्दन लेप धारण कर और अति महीन वस्त्र और आभूषणों के साथ अति सुन्दर दिखते थे। अपने विवाह के पश्चात् श्रीशचीनन्दन पुनः एक बार अपने छात्रों को पढ़ाने में मग्न हो गए। सामान्यतः लोगों में पाप कर्म करने की प्रकृति को देखते हुए उन्होंने गया जाने का निर्णय लिया।

अपनी माता के चरणों में झुककर प्रणाम करने के पश्चात् उन्हें सांत्वना देकर प्रभु ने गया के लिए प्रस्थान किया। श्रीगौरहरि ने गया में धार्मिक अनुष्ठान किए और ईश्वर पुरी के निवास पर रहकर उन पर अनुग्रह किया। कुछ दिवस बाद वे श्रीनवद्वीप वापिस लौट आए और हर कोई उन्हें देख कर आनन्दित हो गया।

शची माता ने अपने पुत्र के मंगल के लिए स्वाभाविक रूप से कुछ मंगलकारी लोकविधियाँ पूर्ण कीं और वे पुनः-पुनः उस मार्ग की ओर देखने लगीं जहाँ से उनके पुत्र को आना था।

वे गुजरने वाले यात्रियों से पूछती कि क्या निमाई शीघ्र आएगा या नहीं। तब प्रभु आए और अपने गृह में प्रवेश कर गए।

मेरे प्रिय श्रीनिवास, यह वह स्थान है जहाँ विश्वम्भर ने अपनी माता के चरणों में झुक कर प्रणाम किया था। उन्हें देखकर शची माता को जो प्रसन्नता हुई, मैं उसका वर्णन कैसे कर सकता हूँ और कैसे वे अपने नेत्रों में अश्रु लिए बारम्बार अपने पुत्र के मुख को निहार रही थीं। विष्णुप्रिया देवी भी अपने पति को देखकर प्रसन्न हो गईं और अपने भावों पर नियंत्रण न रख सकीं।

विष्णुप्रिया के माता-पिता भी यह जानकर कि गौरचन्द्र अपने गृह वापिस लौट आए हैं, अति प्रसन्न हुए क्योंकि वे उनके भी प्राण धन थे। अनेक लोग निमाई के निवास पर उनसे भेंट करने आए और प्रभु ने अनुकरणीय व्यवहार किया। निमाई ने अपने चार अथवा पांच मित्रों के संग गया यात्रा की गुप्त रूप से चर्चा की। जैसे ही निमाई ने भगवान् विष्णु का नाम उच्चारण किया, गहरी श्वाँस भरते हुए उनमें सात्विक विकार प्रदर्शित होने लगे। वे कृष्ण नाम का उच्चारण करने लगे। अश्रु-कम्प-पुलक सात्विक विकार प्रकट होने लगे दीर्घकाल के बाद प्रभु ने स्वयं पर नियंत्रण किया और अपने मित्रों को अपने गृह वापिस लौट जाने को कहा और अगले दिवस शुक्लाम्बर को आने को कहा। इस प्रकार सभी ने प्रसन्नतापूर्वक प्रभु से विदा ली।

अनेक देशों से अनेक वैष्णव श्रीगौरचन्द्र से भेंट करने आए। वास्तव में प्रभु के निवास पर सदैव अपार जन समूह रहता था। नदिया के लोगों ने आपस में परस्पर काना-फूँसी आरम्भ कर दी कि निमाई पंडित आजकल एक महान पंडित बन गए हैं। प्रभु के सात्विक विकार में इतनी वृद्धि हो गई कि प्रायः वे न सोते और न ही कुछ खाते थे। यहाँ तक कि रात्रि में जब उनकी शयन की इच्छा

होती वे आनन्दातिरेक के भावों में सम्पूर्ण रात्रि भगवान् कृष्ण के स्मरण में व्यतीत करते थे। कभी वे उल्लास में रोते हुए भूमि पर लुढ़क जाते और इस कारण उनका स्वर्णिम तन, रज में लिप्त हो जाता।

महाप्रभु का भक्ति विलास

कभी भगवान कपिल के भाव में निमाई अपनी माता को अनेक बातें सिखाते थे। उन्होंने अपनी माता को, जो कि आध्यात्मिक प्रेम की प्रतिमूर्ति थीं, आध्यात्मिक प्रेम वितरित किया

एक दिन इस स्थान पर अपने छात्रों के संग बैठे हुए श्रीविश्वम्भर विशेष सौन्दर्य के साथ प्रकट हुए। उनके छात्र चाहते थे कि निमाई पूर्वोक्त रूप से वैसे शिक्षा दें जैसे निमाई पूर्व में देते थे परन्तु निमाई का पढ़ाने का तरीका एकदम बदल चुका था। छात्रों ने सोचा कि गया से लौटने के बाद निमाई विचलित दिखाई पड़ते थे। असल में निमाई अब छात्रों में मात्र कृष्ण भावनामृत के प्रति जागृति लाना चाहते थे। वास्तव में यह प्रभु की इच्छा से ही हुआ कि सभी छात्र आध्यात्मिक सेवाओं के प्रति अनुरक्त हो गए और अपनी लौकिक शिक्षा के प्रति अनासक्त हो गए।

जब निमाई भावातिरेक में रोते तो छात्र भी उनके साथ रोना आरम्भ कर देते। जब निमाई कीर्तन में नृत्य करते थे, उनके अनुचर उन्हें घेर लेते और गोपाल और गोविन्द का पावन नाम जपते हुए गान और नृत्य आरम्भ कर देते थे। इस प्रकार सभी छात्रों ने प्रभु के पावन नाम का जप करते हुए आध्यात्मिक प्रेम के सागर में तैरना आरम्भ कर दिया। विश्वम्भर के कीर्तन से आकर्षित होकर अनेकों भक्त और सामान्य जन कीर्तन में सहभागिता करने दौड़े चले आते। यहाँ तक कि प्रभु की आध्यात्मिक सेवाओं के सिद्धान्तों से पूर्ण रूप से अनभिज्ञ जनों ने भी जब कीर्तन का स्वर सुना तो वे शीघ्रता से निमाई के निकट आ गए शीघ्र ही नृत्य और जप में मग्न हो गए।

जब भी कोई निमाई के निवास पर आता वह व्यक्ति यह देखकर कि वहाँ क्या हो रहा है, तत्क्षण प्रभु के सौन्दर्य और उनके व उनके अनुचरों द्वारा किए जा रहे कीर्तन के प्रति आकर्षित हो जाता। कभी-कभी जब वे कृष्ण के प्रेम में अत्यधिक भावातिरेक से भर जाते तो भक्तजन विश्वम्भर को शांत करने का प्रयास करते।

ईशान ने श्रीनिवास से यह कहकर कि प्रभु कभी-कभी अपने सर्वोच्च प्रभुत्व के अवतार की वास्तविकता को उजागर कर देते हैं, बोलना जारी रखा। अपने भक्त जनों के शुभ चिन्तक विश्वम्भर कभी भी यह देखकर अपने क्रोध को नहीं दबाते थे कि कैसे नास्तिक लोग उनके भक्तजनों को कष्ट देते हैं।

कभी प्रभु भावातिरेक में हंसते, रोते, चिल्लाते और क्रोध में कहते, 'मैं वह हूँ!' यह सुनकर दुष्ट लोग उनके संग रहने का साहस न कर पाते और तत्क्षण दूर भाग जाते।

सात्विक विकार

इस भाव में कभी प्रभु नीचे लेट जाते कभी गतिहीन रहते। उन्हें इस स्थिति में देखकर किसी ने इस विषय की सूचना उनकी माता को यह कहकर दी कि उनके पुत्र पर उनके तन के भीतर की वायु के किसी विकार ने पुनः आघात किया है। वह व्यक्ति शची माता को उन्हें देखने उनके पास ले गया। जब इन सब के कारण शची माता व्यग्र हो उठीं तो प्रभु के निकटस्थ शिष्य ने उन्हें शांत किया, यह कहकर कि उनका पुत्र कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है।

ईशान ने बोलना जारी रखा, 'कभी-कभी सन्ध्या समय अनेक भक्त जनों के साथ मुकुन्द दत्त शास्त्रों से पद गायन करते जो विश्वम्भर को आध्यात्मिक प्रेम में भावातिरेक से परिपूर्ण कर देतीं। कभी-कभी प्रभु अपने भक्तजनों से घिरे सम्पूर्ण रात्रि कीर्तन में मग्न होकर व्यतीत करते। कीर्तन के दौरान विश्वम्भर कभी नास्तिकों और ईश-निन्दकों की निद्रा लूटते हुए भावातिरेक में गर्जना करते। नास्तिक जन अति क्रोधित हो उठते और भक्तजनों को भयानक नतीजे भुगतने की चेतावनी देते। वे सोचते कि नदिया में निमाई द्वारा संकीर्तन करने से यह सम्पूर्ण देश को बिगाड़ देगा। जब ये दुष्ट लोग राजा से शिकायत करते तो वह उन्हें आश्वस्त करते कि वे कीर्तन रुकवाने के लिए अपने सैनिक भेजेंगे।'

श्रीनिवास, वे लोग अति भयभीत हो गए, क्योंकि वे जानते थे कि मुस्लिम राजा कुछ भी घृणास्पद कार्य करने में सक्षम था। अत्यंत अधीरता में उन्होंने सब कुछ श्रीविश्वम्भर को बता दिया। सर्वोच्च प्रभु होने के कारण विश्वम्भर पहले से ही इस स्थिति के बारे में जानते थे। तब उन्होंने क्रोध में गर्जना की, यह कहकर कि अपने भक्तों की रक्षा करने वे भूमि पर एक अवतार के रूप में प्रकट हुए हैं। भक्तजन विश्वम्भर की वास्तविक स्थिति नहीं जानते थे, इस कारण प्रभु ने उनके मध्य स्वयं को उजागर करने का विचार किया।

सुन्दर वेष धारण किए प्रभु ने अपने भक्त जनों के साथ संकीर्तन करते हुए नदिया की गलियों में विचरण आरम्भ किया। नदिया के सभी स्थानों की यात्रा करते हुए श्रीविश्वम्भर ने अपने आकर्षक रूप से सभी को प्रमत्त कर दिया। इस प्रकार हर कोई चैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन आन्दोलन के प्रति आकर्षित हो गया।

देखो श्रीनिवास! इस मार्ग से होकर प्रभु संकीर्तन करते हुए सम्पूर्ण नदिया के भ्रमण हेतु गए। नदिया की गलियों में अपनी यात्रा के दौरान प्रभु, श्रीवास

पंडित के आवास पर रुके और उनके प्रति दयालु होकर उन्होंने उन्हें अपने चतुर्भुज रूप के दर्शन करवाए।

देखो! यह वह स्थान है जहाँ एक दिन विश्वम्भर बैठे थे। उन्होंने श्रीकृष्ण का नाम जपते हुए भावातिरेक में रोना आरम्भ कर दिया। एक दिन उन्होंने स्वयं को अपने भक्तजनों के मध्य वाराह-अवतार में प्रकट करके अति आनन्द लिया। यहाँ से प्रभु, श्रीमुरारी गुप्त के निवास पर गए और उनके समक्ष भगवान् वाराह के रूप में प्रगट होकर उन पर अनुग्रह किया। एक दिन यहाँ बैठकर प्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु का सान्निध्य प्राप्त करने के लिए अधीर हो गए। हे श्रीनिवास, श्रीनित्यानन्द हलधर, श्रीहाड़ाई पंडित और पद्मावती के पुत्र थे।

शची-पुत्र निरंतर स्वयं को कीर्तन में मग्न रखते। कभी-कभी वे अपने सहयोगियों के साथ नगर के भ्रमण पर जाते। मुकुन्द दत्त ब्रज में श्रीकृष्ण की लीलाओं का अति मृदु स्वर में गान करते थे। चैतन्य महाप्रभु उनकी लीलाओं की महिमा का श्रवण करना अत्यधिक पसन्द करते थे। विश्वम्भर की कामना के अनुसार श्रीगदाधर पंडित उन्हें पुष्पों से शोभित करते। प्रभु के पार्षद उनके चन्द्रमा समान मुख के सौन्दर्य से अपने नेत्र नहीं हटा पाते थे। जब अद्वैत आचार्य गौरांग प्रभु की आरती करते तो वे अपने भावों पर नियंत्रण नहीं रख पाते।

एक श्रेष्ठ भजन में नरहरि ने श्रीचैतन्य महाप्रभु की आरती का सुन्दर वर्णन किया है। श्रीअद्वैत आचार्य, उनके दाँई ओर श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके बाँई ओर श्रीहरिदास ठाकुर खड़े होते और वे श्रीचैतन्य महाप्रभु की आरती करते। श्रीवास पंडित, प्रभु को चंवर से पंखा करते और शुक्लाम्बर चन्दन लेप तैयार करते। श्रीमाधव घोष, श्रीवासु घोष, श्रीपुरुषोत्तम, श्रीविजय और श्रीमुकुन्द मधुरता से प्रभु की महिमा का गान करते। वे विविध वाद्ययन्त्रों का वादन करते जैसे कि मृदंग, खोल, करताल, वीणा, **विषाण**, बाँसुरी और घण्टी। वक्रेश्वर पंडित अति सुन्दरता से नृत्य करते। श्रीगदाधर, श्रीधर, श्रीगौरीदास, श्रीहरिदास और अन्य सभी भावातिरेक में संकीर्तन करते। यहाँ तक कि देवता भी नृत्य और कीर्तन करने मानव रूप में आते।

अति सुन्दर आरती का अवलोकन करते हुए हर कोई आनन्दित हो गया। भक्तजनों ने प्रभु के लिए प्रसन्नतापूर्वक विविध प्रकार के व्यंजन बनाए और प्रभु को निवेदन किए। जब प्रभु ने प्रसाद पा लिया तब सभी भक्तजनों ने उत्सुकतापूर्वक उनकी प्रसादी ग्रहण की। देर रात्रि में वे सब अपने अपने गृह वापिस लौटे और दिवस को विश्राम दिया।

श्रीगदाधर पंडित, प्रभु के लिए कोमल शैय्या बनाते। श्रीविश्वम्भर अति तृप्त होकर श्रीगदाधर पंडित द्वारा बनाई, पुष्प और चन्दन लेप से शोभित शैय्या पर लेट गए। श्रीविश्वम्भर शैय्या पर लेट जाते और श्रीगदाधर पंडित निकट ही

नीचे लेट जाते। तब दोनों ही चर्चा में मग्न हो जाते। कौन समझ सकता है कि श्रीगदाधर पंडित और गौरांग के चित्त में क्या चल रहा था।

प्रातःकाल श्रीगदाधर पंडित विविध प्रकार से प्रभु की सेवा करते। प्रभु, गदाधर पंडित को निर्देश देते कि वे अपनी सभी माला एक-एक भक्त में वितरित कर दें। भक्तजन गंगा में स्नान करते और प्रभु की आराधना करते और जब वे विश्वम्भर के दर्शन करने आते, गदाधर पंडित उन्हें पुष्प माला प्रदान करते। हर दिन श्रीगदाधर पंडित प्रभु के तन पर चन्दन लेप लगाते और उन्हें पुष्प माला से शोभित करते।

महामन्त्र-जप आदेश

ईशान ने कहा, 'मेरे प्रिय श्रीनिवास, श्रीविश्वम्भर प्रातःकाल इस स्थान पर अपने पार्षदों के संग बैठ जाते और नवद्वीप के लोग उनके दर्शन करने आते और उनके चरणकमलों में प्रणाम करते थे। विश्वम्भर कहते, 'कृष्ण तुम्हें आशीष दें। आप निरंतर प्रभु के भक्त बनो।' तब वे लोगों को महा मन्त्र जपने के लिए कहते।

सभा प्रति करि प्रभु करुणा अशेष।
हरिनाम महामंत्र करे उपदेश।।
हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे

पुनः वे लोगों को कहते, 'मेरे प्यारे भ्राताजनो, स्वयं को नियमित रूप से प्रभु के पावन नाम के जप में मग्न कर लो। ऐसा करने से निश्चित ही तुम अनुभव करोगे कि तुम्हारी कामनाऐं पूर्ण होंगी और श्रीकृष्ण के लिए तुम्हारा प्रेम फलित होगा।

अपने दांतों के मध्य तिनका दबाते हुए प्रभु लोगों से कहते, 'तुम लोगों को अविराम भगवान् श्रीकृष्ण का नाम जपना चाहिए।' इस प्रकार प्रभु का निर्देश पाकर लोगों ने आनन्दपूर्वक अपने गृह में हरे कृष्ण महामन्त्र का जप आरम्भ कर दिया। वास्तव में श्रीनवद्वीप के हर आवास से संकीर्तन के स्वर गूँजने लगे।

मेरे प्रिय श्रीनिवास, एक सायं श्रीचैतन्य महाप्रभु ने सम्पूर्ण नगर में एक विशाल संकीर्तन करने का निश्चय किया। इस स्थान पर श्रीगौरांग प्रभु ने लोगों को एकत्र होने का आदेश दिया और हर कोई उत्साहपूर्वक वहाँ आ गया। कितना अपार जन समूह था यहाँ!

अद्भुत संकीर्तन शोभा

प्रभु ने जप आरम्भ किया और व्यक्तिगत रूप से नृत्य करने लगे। वे भली प्रकार से वेष धारण किए हुए और शोभित हो हर किसी के चित्त को आकर्षित

कर रहे थे। उनके साथ दाँई ओर श्रीनित्यानन्द और बाँई ओर श्रीगदाधर पंडित नृत्य कर रहे थे। उनके चारों ओर श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीवास पंडित, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्रीनरहरि, श्रीगदाधर पंडित, श्रीदामोदर पंडित, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीमुकुन्द दत्त, श्रीविष्णु घोष, श्रीगोविन्द और अन्य असंख्य लोग थे। यह कितना सुन्दर दृश्य था!

तब चैतन्य महाप्रभु ने अपने पार्षदों को दलों में बांट दिया। श्रीअद्वैत आचार्य प्रथम दल के अधिनायक थे और हर कोई उनके उच्चस्वर में जप को सुनकर आकर्षित हो उठा। श्रीवास पंडित ने दूसरे दल का अधिनायक बनना स्वीकार किया और जप प्रारम्भ किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु तीसरे दल के अधिनायक बने और संकीर्तन में गान और नृत्य आरम्भ किया। उनकी माता और पत्नी इस सुन्दर प्रसंग का अवलोकन करने गृह से बाहर आ गईं। सम्पूर्ण नगर में विचरण करने के पश्चात् प्रभु अपने गृह वापिस लौट आए और सम्पूर्ण रात्रि अपने पार्षदों के साथ श्रीकृष्ण-कथा की चर्चा में व्यतीत की।

श्रीनवद्वीप-दर्शन

तत्पश्चात् एक दिवस श्रीगौरचन्द्र प्रभु ने अपने पार्षदों के संग नदिया के सभी वैष्णवजनों के आवास पर जाने का निर्णय किया। प्रभु अपने भक्तजनों पर अपनी अति कृपा निरन्तर बरसाते रहते थे। एक बार एक वनमाली नाम का बुद्धिमान परन्तु दीन ब्राह्मण अपने पुत्र के साथ प्रभु के दर्शन करने आया।

विश्वम्भर को देखकर वनमाली को लगा कि वे पीत वेष धारण कर, अपने हाथ में बांसुरी पकड़े और शीश पर मोर पंख मुकुट धारण किए साक्षात् श्रीश्यामसुन्दर प्रकट हुए हों। वह ब्राह्मण कितना सौभाग्यशाली था!

एक बार जब विश्वम्भर अपने छात्रों को पढ़ा रहे थे, तो उनमें से एक छात्र ने भगवान् के प्रति इतनी अभद्रता से वचन बोले कि प्रभु ने तत्क्षण स्वयं को पवित्र करने के लिए वस्त्रों सहित गंगा में डुबकी लगायी। तत्पश्चात् उन्होंने कभी उस ईशनिन्दक छात्र का मुख तक नहीं देखा।

जुलाहे का घर

उस बुनकर का आवास देखो, जिससे विश्वम्भर बिना मूल्य चुकाए वस्त्र लेते थे। दूध वाले का आवास देखो, जहाँ प्रभु दही खाते और दूध पीते। यह इत्र बेचने वाले का आवास है जहाँ श्रीगौरचन्द्र इत्र बेचने वाले से श्रेष्ठ इत्र मांगते थे। यह पुष्प वाले का आवास है, जहाँ से निमाई सुन्दर पुष्प माला धारण करते जो उन्हें और अधिक सुन्दर बना देती। देखो! यह ज्योतिषी का आवास है। एक बार विश्वम्भर यहाँ आए थे और ज्योतिषी से पूछा था कि क्या वे बता सकते हैं कि विश्वम्भर पूर्व जन्म में क्या थे। यह सुनकर ज्योतिषी ने कुछ मन्त्र जपने

आरम्भ किए, जिससे वह निमाई को वासुदेव के पुत्र के रूप में देखा पुनः उसने उन्हें चतुर्भुज भगवान् विष्णु के रूप में हाथों में गदा, चक्र, शंख और कमल पुष्प पकड़े देखा तब पुनः नेत्र बन्द करने पर ज्योतिषी ने विश्वम्भर को हाथ में बांसुरी पकड़े श्रीकृष्ण के रूप में देखा। फिर ज्योतिषी ने श्रीचैतन्य महाप्रभु के तन में भगवान् राम, भगवान् वाराह, भगवान् नृसिंह और भगवान् विष्णु के अन्य अवतारों को देखा।

ज्योतिषी पर कृपा

इन सबके दर्शन करते हुए ज्योतिषी व्यग्र सा हो गया। विश्वम्भर ने उनसे पूछा, 'मुझे बताओ, आप ने क्या देखा?' ज्योतिषी ने उत्तर दिया, 'मैं आपको बाद में बताऊंगा। अब आप जाओ, जहाँ आप जाना चाहते हो।' विश्वम्भर मात्र मुस्कुराए और श्रीधर के आवास की ओर चल दिए, जिसके साथ वे प्रायः हास-परिहास करते थे।

श्रीनवद्वीप की यात्रा समाप्त करने के पश्चात् विश्वम्भर अपने निवास पर वापिस लौट आए। इस प्रकार प्रभु ने अपनी इच्छानुसार अनेक लीलाऐं रचाईं। देखो! यह वह मार्ग है जिस पर विश्वम्भर प्रायः चला करते थे। एक दिवस यहाँ चलते हुए वे श्रीवास के पास आए और उनसे वार्तालाप किया।

हे श्रीनिवास, यहाँ गंगा जी के तट पर विश्वम्भर अपने छात्रों के साथ बैठ जाते और अपने ग्रन्थों की पढ़ाई की चर्चा करते। तब उनके एक छात्र ने सूचना दी कि एक विश्व विजेता विद्वान्, जिसे देवी सरस्वती का अनुग्रह प्राप्त था, नदिया आए थे। उन्हें अपनी योग्यताओं पर अत्यधिक गर्व था और वे अपने समान एक भी व्यक्ति को नहीं खोज पाए थे। उसके पास अनेकों हाथी, घोड़े, और अनुचर थे। श्रीनवद्वीप के सभी विद्वानों को अपने ज्ञान के स्तर पर संदेह होने लगा था। यह सब सुनकर विश्वम्भर मात्र मुस्कुरा दिए और बोले कि गर्व महानतम व्यक्तियों का भी नाश कर देता है।

केशव काश्मीरी पर कृपा

तत्पश्चात् शीघ्र ही विश्व विजेता विद्वान् वहाँ गंगा के तट पर आ गया और अपने छात्रों से घिरे मनोहारी छटा वाले विश्वम्भर के प्रति आकर्षित होकर वह उनसे भेंट करने आया। तब श्रीविश्वम्भर ने उन्हें अपनी प्रतिभा दिखाने के लिए गंगा की महिमा वर्णन करने को कहा।

अति विश्वास से भरे विश्व विजेता विद्वान् ने अनेक पदों की त्वरित रचना कर उन्हें सुनाया। तब विश्वम्भर ने पूछा कि वे उनके अच्छे गुणों और दोषों को इंगित करें। विद्वान् द्वारा चुनौती देने पर निमाई ने अनेक दोष समझाए। इस पर विश्व विजेता विद्वान् लज्जित हो गया और मौन रहा। तथापि विश्वम्भर ने

कृपालु हो अपमान न कर उनसे आदर सहित व्यवहार किया। उस रात्रि देवी सरस्वती ने विद्वान् के समक्ष निमाई की वास्तविक पहचान को उजागर किया। अगली प्रात: विश्व विजेता विद्वान् आया और प्रभु के चरणकमलों में स्वयं को समर्पित कर दिया। वह विद्वान् केशव काश्मीरी, श्रीचैतन्य महाप्रभु के अनुग्रह से परिवर्तित हो गया। प्रभु के प्रति समर्पित होकर उन्होंने अपनी दीनता दिखाते हुए अपना नाम **लघु केशव** रख लिया।

निमाई की विजय का समाचार शीघ्र ही सम्पूर्ण नवद्वीप में फैल गया। अगले दिन निमाई की बीस संन्यासियों से भेंट हुई। उन्होंने उन्हें (संन्यासियों को) अपने निवास पर निमन्त्रित किया और उन्हें वैभवपूर्ण तरीके से भोजन पवाया ताकि लोग अचम्भित हो जाऐं।

श्रीनवद्वीप की यात्रा जारी रखने के पश्चात् ईशान रुक गए और बोले, 'इस स्थान को देखो। यह वह स्थान है जहाँ कुछ ब्राह्मणजनों ने निमाई को श्रीलक्ष्मी देवी की मृत्यु के बारे में सूचना दी थी, जब वे पूर्व बंगाल से वापिस लौट रहे थे। ब्राह्मणजनों ने इस दुर्घटना की सूचना इसलिए दी थी कि वे समझते थे कि निमाई अपने निवास पर पहुंच कर यह समाचार प्राप्त कर अत्यधिक दुखी होंगे।'

एक दिन इस स्थान पर आपने एक छात्र को मस्तक पर तिलक धारण करने से मना करने के कारण पीटा था। यहाँ इस स्थान पर निमाई ने अपने मित्रों के संग अनेक लीलाएं रचाई थीं। हे श्रीनिवास, इस समय उन बातों का स्मरण करना मेरे लिए अति कष्टदायक है।

देखो! यहाँ श्रीसनातन मिश्र का निवास है, जो कि राजा के दरबार के विद्वान् थे और जो उच्च ब्राह्मण जाति से सम्बन्ध रखते थे। विष्णुप्रिया उनकी पुत्री थीं। श्रीसनातन ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी पुत्री का विवाह विश्वम्भर से किया था। यहाँ पर श्रीकाशीनाथ पंडित का निवास है, जिन्होंने उनके विवाह के प्रस्ताव की जिम्मेदारी ली थी।

गया गमन

ईशान ने चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के विभिन्न स्थानों को इंगित करना जारी रखा। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को बताया कि कैसे प्रभु गया गए थे, जहाँ उन्हें भगवान् विष्णु के चरणकमलों के दर्शन हुए। वह गया ही था जहाँ प्रभु की भेंट श्रीईश्वर पुरी से हुई और उन पर करुणा बरसाई। नवद्वीप के भक्तजनों ने तत्क्षण जान लिया कि जब निमाई गया से वापिस लौटे तो वे एक परिवर्तित व्यक्तित्व थे। उनकी विद्वत्ता का गर्व जा चुका था और उसके स्थान पर उनके हृदय में कृष्ण भावनामृत के प्रति गहन गम्भीरता का भाव आ गया था।

श्रीवास पंडित ने श्रीरामा, श्रीगोपीनाथ और श्रीगदाधर पंडित को बताया कि गया से लौटने के पश्चात् निमाई पूर्ण रूप से परिवर्तित व्यक्ति हो गए हैं। उनके भीतर गर्व का कोई भी चिह्न नहीं है।

जब निमाई लोगों से अपनी गया यात्रा की चर्चा करते और बताते कि उन्हें भगवान् विष्णु के चरणकमलों के दर्शन हो चुके हैं, उनके नेत्रों से नदी की धार के समान अश्रु बहते। कभी-कभी वे कृष्ण नाम का उच्चारण करते हुए अचेत हो भूमि पर गिर जाते।

उनके आध्यात्मिक प्रेम के लक्षण कितने अद्‌भुत थे। हर कोई निमाई में आए इन परिर्वतनों के बारे में श्रवण कर आनन्दित था।

एक दिन श्रीवास पंडित और कुछ अन्य गंगा नदी के तट पर और फिर श्रीशुक्लाम्बर के निवास पर गए। निमाई कभी गया से लौटते समय श्रीशुक्लाम्बर के निवास पर आते थे और वे उस समय भी वहाँ आए। वहाँ अनेक भक्तजनों को पाकर, निमाई उनकी कृष्ण भावनामृत की चर्चा सुनकर रोने लगे। कुछ भक्तजन जिन्होंने निमाई के आगमन पर स्वयं को छिपा लिया था, वे भी प्रभु की भावातिरेक अवस्था देखकर रोने लगे।

निमाई ने पूछा, 'कक्ष के भीतर कौन रो रहा है?'

श्रीशुक्लाम्बर ने उत्तर दिया, 'आपका गदाधर।'

तत्पश्चात वहाँ पर भावातिरेक समर्पण का जो दृश्य लोकविदित हुआ उसने शुक्लाम्बर को प्रसन्नता के सागर में विलीन कर दिया।

यह वही वृक्ष है

श्रीईशान ने कहा, 'इस वृक्ष की ओर देखो, जिसके नीचे श्रीरत्नगर्भ आचार्य भागवत में से श्लोकों का उच्चारण करते थे। निमाई ने उनकी आध्यात्मिक सेवा की महिमा गान श्रवण कर तत्क्षण भावातिरेक लक्षण प्रकट कर दिए और तब वे भूमि पर अचेत हो गए। श्रीरत्नगर्भ आचार्य कितने सौभाग्यशाली थे! सचेत होने पर निमाई ने अति स्नेहवश श्रीरत्नगर्भ आचार्य को आलिंगन प्रदान किया।'

मेरे प्रिय श्रीनिवास, धीरे-धीरे नदिया के सभी लोगों को निमाई के परिवर्तित चरित्र का पता चल गया। वास्तव में निमाई पंडित ने अति दीन भाव से वैष्णव जनों की सेवा आरम्भ कर दी। ऐसा करने पर प्रभु ने सभी को यह सिखाया कि भक्त की सेवा करना ही श्रीकृष्ण को प्राप्त करने का श्रेष्ठ साधन है। कौन प्रभु के वास्तविक प्रयोजन को समझ सकता है जब वे पुनः-पुनः भक्तजनों को उन्हें आशीष देने का निवेदन करते? वास्तव में निमाई कभी-कभी वैष्णवजनों की पुष्प टोकरी और वस्त्र की ढुलाई करते। वास्तव में विश्वम्भर, वैष्णवजनों की चरण रज लेते और उसे अपने मस्तक पर धारण करते।

श्रीअद्वैत प्रभु द्वारा निमाई पूजन

एक दिवस निमाई, श्रीगदाधर पंडित के संग अद्वैत आचार्य के निवास पर गए। भावातिरेक से श्रीअद्वैत आचार्य ने निमाई की उपासना के लिए अनेकों सामग्री तैयार कर ली।

तब उन्होंने अत्यन्त सुगन्धित पुष्प उनके चरणकमलों में रख, उनकी आराधना की। उनकी आराधना के पश्चात् श्रीअद्वैत आचार्य ने अनेक प्रार्थनाओं से निमाई को गौरवान्वित करना आरम्भ कर दिया। यह सब देखते हुए श्रीगदाधर पंडित ने मुस्कुराते हुए श्रीअद्वैत आचार्य को बताया कि वे अपने से अधिक छोटे की इसप्रकार आराधना कर स्वयं को तुच्छ न करें। श्रीअद्वैत आचार्य ने श्रीगदाधर पंडित को यह बताते हुए उत्तर दिया कि तुम शीघ्र ही इस बालक की वास्तविक पहचान जान जाओगे। आश्चर्यचकित होकर श्रीगदाधर पंडित ने यह समझना आरम्भ कर दिया कि निमाई स्वयं भगवान् हैं।

जब निमाई ने अपने पार्षदों के संग कीर्तन करना अनवरत रखा, सम्पूर्ण नदिया में लोग अपार जन समूह के रूप में गलियों में उनके दर्शन करने आ जाते। यहाँ तक कि प्रभु के पावन नाम का जप सुनकर नेत्रहीन व्यक्ति भी दौड़े चले आते और वे प्रभु की आकर्षक सुन्दरता देखने के लिए उन्हें नेत्र न प्रदान करने के लिए विधाता की आलोचना करते। अन्य लोग नदिया में एक जन्म देने के लिए विधाता को धन्यवाद देते। ताकि वे प्रभु की अद्भुत लीलाओं का दर्शन कर सकें, जो कोई पंगु था वह उसे ऐसा बनाने के लिए विधाता का धन्यवाद करता कि वह इस कारण कहीं न जा सके और प्रभु की संकीर्तन लीलाओं को देखने में क्षति न हो।

एक दिन भावातिरेक में श्रीविश्वम्भर, श्रीवास पंडित के निवास की ओर दौड़े। श्रीवास पंडित ने द्वार बन्द कर रखा था क्योंकि वे भगवान् नृसिंह की आराधना में मगन थे और विक्षुब्ध नहीं होना चाहते थे। श्रीविश्वम्भर ने उच्चस्वर में गर्जना करते हुए, बलपूर्वक द्वार पर ठोकर मारनी आरम्भ कर दी और इसने श्रीवास पंडित का ध्यान भंग कर दिया। निवास से बाहर आकर श्रीवास पंडित ने क्रोधित होकर इधर-उधर देखा। तब भीतर वापिस आकर उन्होंने वेदी पर विश्वम्भर भगवान् विष्णु के समान चतुर्भुज रूप में दर्शन किए। श्रीवास पंडित अति भयभीत हो गए तो इस कारण वे प्रणाम करते हुए प्रभु की वन्दना करने लगे।

नारायणी पर कृपा

श्रीवास की चार वर्ष की नारायणी नाम की भतीजी थी। प्रभु की इच्छा से उसने कृष्ण! कृष्ण!! पुकारते हुए अश्रु बहाना आरम्भ कर दिए। चैतन्य महाप्रभु ने तब विविध प्रकार से नारायणी पर अनुकम्पा बरसाई।

एक दिवस विश्वम्भर, भगवान् वाराह के भाव में मग्न हो गए और उसी अवस्था में उच्चस्वर में गर्जना करते हुए श्रीमुरारी गुप्त के निवास पर चले गए।

श्रीमुरारी गुप्त के निवास पर पहुँचकर, विश्वम्भर तीव्रता से गृह के भीतर चले गए और मन्दिर कक्ष में प्रवेश करके भगवान् वाराह का रूप धारण कर लिया। अपने सामने जल का पात्र देखकर प्रभु ने उसे अपने गजदंत से उठाया और कहा, 'मुरारी तुम मेरी वास्तविक स्थिति नहीं जानते हो!' मुरारी गुप्त मौन रहे।

जब प्रभु ने मुरारी गुप्त को बोलने का आदेश दिया तो उन्होंने लड़खड़ाते स्वर में प्रार्थना करनी आरम्भ की दी। अपने भक्त से अति प्रसन्न होकर प्रभु ने उन पर अपनी अतिशय करुणा बरसाई। इस प्रकार विश्वम्भर अपने भक्तजनों के निवास पर जाते और अपनी पहचान उजागर करते।

मुझे क्यों विलम्ब हुआ

एक दिवस जब श्रीवास और श्रीमुरारी, प्रभु की महिमा की चर्चा कर रहे थे तो उन्होंने विलाप करना आरम्भ कर दिया, 'मैं अपने प्रभु की पहचान करने में कैसे इतने विलम्ब से सफल हो पाया? मेरे हृदय में यह सोचकर पीड़ा होती है कि कैसे उन्होंने एक बार मेरी पुष्प टोकरी और वस्त्रों की ढुलाई की थी। उस समय मैंने उन्हें यह कहकर आशीर्वाद दिया था, 'तुम्हें श्रीकृष्ण के चरणों की सेवा प्राप्त हो।' स्वयं भगवान् को श्रीकृष्ण की आराधना का सुझाव देने वाला मैं कितना अयोग्य और मूर्ख हूँ! इस प्रकार विलाप करते हुए श्रीमुरारी गुप्त और श्रीवास पंडित ने अविरल अश्रु बहाए।

श्री नित्यानन्द प्रभु आगमन

एक दिवस श्रीनिमाई ने श्रीवास पंडित और अन्य भक्तजनों को सूचित किया कि शीघ्र ही श्रीनित्यानन्द का नवद्वीप में आगमन होगा। इसके बाद शीघ्र ही श्रीनित्यानन्द प्रभु श्रीनवद्वीप आ गए परन्तु स्वयं को गोपनीय रखा। श्रीनिमाई के अलावा अन्य कोई भी श्रीनित्यानन्द की उपस्थिति से अनभिज्ञ था। तब श्रीनिमाई ने कुछ भक्तजनों को संग लिया और श्रीनन्दन आचार्य के निवास पर गए, जहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु छिपे हुए थे। वहाँ उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु को ध्यान में बैठे पाया। जो भक्त निमाई के साथ आए थे, वे श्रीनित्यानन्द प्रभु के आकर्षक सौन्दर्य को देखकर मन्त्रमुग्ध हो गए।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने ऊपर देखा और श्रीचैतन्य महाप्रभु को मदन से भी अधिक सुन्दर रूप में दिव्य पुष्प माला व भव्य वेशभूषा धारण किए हुए, अपने सामने खड़े देखा। स्वर्ण की चमक भी प्रभु के उत्तमोत्तम तन की आभा के सामने फीकी प्रतीत हो रही थी। प्रभु की सुन्दर दन्तावलि, मोतियों की पंक्ति के गर्व को परास्त कर रही थी। उनके सुन्दर केश सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को उन्मत्त कर रहे थे।

उनके नेत्र खिले हुए लाल कमल पुष्प के समान दिख रहे थे और उनके चौड़े वक्ष के आस पास पवित्र यज्ञोपवीत सुशोभित हो रहा था। उनकी सुन्दर भुजाऐं उनके घुटनों तक आ रही थीं और उनका सुन्दर मस्तक तिलक से शोभित था। उनका सम्पूर्ण तन बिना आभूषणों के भी शोभायमान था। विश्वम्भर की तेजस्वी सुन्दरता को निहारते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु पूर्ण रूप से मन्त्रमुग्ध हो गए थे।

श्रीनित्यानन्द प्रभु को आन्तरिक ध्यान से उन्मुक्त करने के लिए विश्वम्भर ने श्रीवास पंडित से श्रीमद्भागवत (10.21.5) में से एक श्लोक को पढ़ने का निवेदन किया। '**बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयो कर्णिकारं...** अपने शीश पर एक मोर पंख मुकुट, कानों पर नील कर्णिक पुष्प, स्वर्ण के समान पीत वस्त्र, और वैजयन्ती माला धारण किए हुए भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीवृन्दावन के वन को अपने पदचिह्नों से सुन्दर बनाते हुए प्रवेश करते हुए महान नर्तक के एक उत्तमोत्तम रूप का प्रदर्शन किया। उन्होंने बांसुरी के छिद्रों को अपने होठों के अमृत से भर दिया और गोप बालकों ने उनकी महिमा का गान किया।'

'यह श्लोक सुनकर श्रीनित्यानन्द प्रभु भावातिरेक से भर उठे। हे श्रीनिवास, श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा का सम्पूर्ण ब्रह्माड में उत्सव मनाया जाता है।'

व्यास पूजा

श्रीनित्यानन्द प्रभु को विश्वम्भर की गोद में देखकर श्रीगदाधर पंडित मुस्कुरा दिए। तब विश्वम्भर ने श्रीनित्यानन्द प्रभु को बताया, 'कल पूर्णिमा का दिवस है, जब श्री व्यासदेव की आराधना होती है। आप कहाँ पर व्यास पूजा उत्सव मनाओगे?' श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उत्तर दिया, 'श्रीवास के निवास पर।' श्रीवास ठाकुर व्याकुल हो गए। विश्वम्भर के साथ अपने निवास की ओर जाते हुए श्रीवास पंडित ने उन व्यवस्थाओं का वर्णन किया जिनका वे प्रबन्ध करेंगे।

हे श्रीनिवास, उस समय श्रीवास के निवास पर श्रीविश्वम्भर और श्रीनित्यानन्द प्रभु असंख्य भक्त जनों के साथ उन्मत्त होकर नृत्य करते हुए संकीर्तन कर रहे थे। श्रीनित्यानन्द प्रभु की वास्तविक पहचान प्रकट करने के प्रयोजन से श्रीगौरहरि ने व्यक्तिगत रूप से उनकी बलराम के रूप में आराधना

की। तब अचानक श्रीगौरहरि बलराम आवेश में वेदी पर चढ़ गए और वारुणी, वारुणी कहना आरम्भ कर दिया। कोई शीघ्रता से गंगा से जल ले आया और विश्वम्भर को दिया, जिन्होंने उसे ऐसे पी लिया जैसे मदिरा हो।

श्रीबलराम आवेश

तब श्रीगौरहरि के आदेश पर श्रीनित्यानन्द जिन्होंने प्रभु को षड्‌भुज रूप में देखा था, उन्होंने उन्हें हल और मूसल (दण्ड) दिया। आगे श्रीविश्वम्भर ने नाद, नाद कहना आरम्भ कर दिया तो श्रीअद्वैत प्रभु ने ऐसे उत्तर दिया मानों उन्हें पुकारा गया हो।

भावातिरेक में प्रेम से अभिभूत हो तब श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपना दण्ड और कमण्डलु तोड़ दिया। गौरचन्द्र प्रभु को श्रीनित्यानन्द प्रभु को शांत करना पड़ा। उन्होंने दण्ड और कमण्डलु उठाया और गंगा में फैंक दिया। इस कृत्य के पीछे के गहन अर्थ को कौन समझ सकता है गौरहरि और श्रीनित्यानन्द प्रभु गंगा जी में स्नान करने चले गए।

व्यास पूजा करते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु ने विधि के अनुसार पुष्प और चन्दन लेप निवेदित किए। तत्पश्चात इसी स्थान पर ही शची माता ने चैतन्य महाप्रभु को नित्यानन्द प्रभु और अपने पार्षदों के साथ श्रील व्यासदेव के प्रसाद का आनन्द लेते हुए देखा था। पूर्व में इस स्थान पर कुन्द वृक्ष था और भक्तजन आराधना करने के लिए इससे पुष्प लेते थे। एक दिवस श्रीगौरहरि ने श्रीवास पंडित को बताया कि अद्वैत आचार्य का उनकी आराधना के लिए अनेकों सामग्री लेकर, शीघ्र ही यहाँ आगमन होगा।

अद्वैत आचार्य, श्रीगौरहरि को सर्वोच्च प्रभु के अपने वास्तविक अवतार को प्रकट करता हुआ देख अधीर हो उठे। उन्हें तृप्त करने के लिए विश्वम्भर विष्णु मन्दिर में प्रवेश कर गए और श्रीविग्रह की वेदी पर बैठ गए। सभी भक्तजन उनके चन्द्र समान मुख को निहारते हुए, प्रभु के चारों ओर एक वृत्ताकार घेरे में खड़े हो गए। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उनके शीश पर एक छत्र लगा रखा था और श्रीगदाधर पंडित ने उन्हें पान के पत्ते निवेदन किए। हर कोई विविध प्रकार से प्रभु की सेवा में मग्न था।

वेदी पर पूजन

जब यह सब हो रहा था, श्रीअद्वैत आचार्य वहाँ आए और श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में प्रणाम करने भूमि पर जा गिरे। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानों श्रीअद्वैत आचार्य प्रभु के आकर्षक सौन्दर्य का रसपान कर रहे हों, जो कि कोटि सूर्य के समान चमकदार लग रहे थे। श्रीचैतन्य महाप्रभु आभूषणों से शोभित और हाथ में बाँसुरी पकड़े भगवान् कृष्ण की मुद्रा में खड़े हो गए।

भगवान् ब्रह्मा और अन्य देवतागण और संतजन उनकी महिमा का गान करते हुए प्रभु के समक्ष खड़े हो गए। प्रभु का यह उत्कृष्ट रूप देखकर श्रीअद्वैत आचार्य आनन्दातिरेक के भावों से अभिभूत हो गए।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने पुनः-पुनः श्रीअद्वैत आचार्य को बताया, 'मैंने मात्र तुम्हारा वचन निभाने के लिए स्वयं को प्रभु के अवतार के रूप में प्रकट किया है।' इस प्रकार विश्वम्भर ने श्रीअद्वैत आचार्य और साथ ही सभी भक्तजनों को सन्तुष्ट किया। श्रीअद्वैत आचार्य, प्रभु के सम्मुख हाथ जोड़े खड़े रहे। तब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें आदेश दिया, 'अपनी पत्नी के संग मेरी आराधना करो।' इस प्रकार श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर श्रीअद्वैत आचार्य और उनकी पत्नी ने उनकी आराधना की। अत्यधिक आनन्दित होकर श्रीअद्वैत आचार्य ने सुगन्धित जल से चैतन्य महाप्रभु के चरणकमल धोए और तब तुलसी पत्र निवेदन किए और चन्दन लेप लगाया। वास्तव में प्रभु की सेवा करते हुए श्रीअद्वैत आचार्य ने षोड़श उपचार की वस्तुएं निवेदित कीं और फिर नेत्रों में अश्रु लिए उनके चरणकमलों में जा गिरे।

'श्रीअद्वैत आचार्य की इच्छा को समझकर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने तब अपने चरणकमल उनके शीश पर रख दिये और यह देखकर भक्तजन अति प्रसन्न हो गए। तब भक्तजन प्रभु के सम्मुख प्रणाम करने लगे। श्रीगौरांग प्रभु के आदेशानुसार श्रीअद्वैत आचार्य ने नृत्य और भगवान् के पावन नामों का कीर्तन आरम्भ कर दिया। श्रीनित्यानन्द प्रभु के मुख की ओर निहारते हुए और श्रीअद्वैत आचार्य की गतिविधियों को देखते हुए सभी ने आनन्द में अश्रुपात किया। प्रत्येक भक्त ने प्रभु को पुष्प माला निवेदन की तब आग्रह किया कि अद्वैत आचार्य उनसे कुछ अनुरोध करें। इसलिए श्रीअद्वैत आचार्य ने प्रार्थना की, 'मेरी सभी कामनाएं पूर्ण हो गई हैं। अब कृपया पतित और अनुकूलित जीवों पर अनुकम्पा बरसाईये।' सभी भक्तजन अद्वैत आचार्य का अनुरोध सुन अति प्रसन्न थे। चैतन्य महाप्रभु और अद्वैत आचार्य के अन्तरंग सम्बन्धों में जो आनन्द था उसे कौन समझ सकता है?

तब श्रीगौरचन्द्र श्रीनित्यानन्द प्रभु को श्रीवास पंडित के आवास पर छोड़कर, अपने निवास पर वापिस लौट आए। सभी भक्तजन भी अपने निवास पर लौट गए। हे श्रीनिवास, प्रभु की इच्छा से विविध स्थानों से असंख्य भक्तजन नदिया आए। श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि, जिनकी श्रीविश्वम्भर उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे, वे अनेक अनुचरों के साथ पूर्व बंगाल से पधारे।

श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि

बाहर से श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि ने राजकुमार का वेश पहन रखा था परन्तु केवल श्रीमुकुन्द दत्त ही समझ सकते थे कि वास्तव में वे किस प्रकार के वैष्णव हैं।

एक दिवस श्रीमुकुन्द दत्त और श्रीगदाधर पंडित, श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि के दर्शन करने आए। यद्यपि उनके बाह्य रूप को देखते हुए श्रीगदाधर पंडित ने उन्हें भूलवश दैहिक आनन्द लेने वाला भौतिकवादी भक्त समझ लिया। श्रीगदाधर पंडित के विचार जान कर श्रीमुकुन्द दत्त ने श्रीमद्भागवत में से कृष्ण द्वारा पूतना पर करुणा का वर्णन करने वाले पद का उच्चारण किया। **'अहो बकीयं स्तनकालकूटं...'**

'जैसे ही उन्होंने यह पद श्रवण किया श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि ने आग्रह किया कि श्रीमुकुन्द दत्त कृष्ण द्वारा पूतना वध के सम्पूर्ण पद का उच्चारण करें। तब भावपूर्वक सुनते हुए श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि हुंकार भरने लगे। अश्रु-कम्प-पुलक सात्विक विकार प्रकट हो गये। वे धड़ाम से भूमिपर आ गिरे। भूमि पर लुढ़कते हुए उनका सुन्दर तन धूल से लिप्त हो गया और अंततः वे अचेत हो गए।'

गदाधर पण्डित की दशा खराब ?

श्रीगदाधर पंडित, श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि की हालत देखकर आश्चर्यचकित हो गए और वे ग्लानि में रोने लगे। उन्होंने श्रीमुकुन्द दत्त को बताया, 'मैं कितना पापी हूँ। यह आपकी ही अनुकम्पा थी कि मैं अपनी गलती को समझ पाया। मैं श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि से दीक्षा ग्रहण कर ही उनके प्रति किए अपराध से बच सकता हूँ। श्रीगौरहरि ने प्रसन्नतापूर्वक इसकी सहमति दे दी और उन्होंने श्रीगदाधर पंडित को श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि से बिना किसी हिचकिचाहट के दीक्षा लेने का आदेश दिया। गुरु पुण्डरीक विद्यानिधि और उनके शिष्य श्रीगदाधर पंडित की महिमा के बारे में क्या कहा जा सकता है? वे दोनों ही श्रीकृष्णचैतन्य के अति अन्तरंग पार्षद है।'

श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरित्र को समझना संभव नहीं था। जब भी वे श्रीवास पंडित के निवास पर रहते तो एक बालक के समान व्यवहार करते थे। श्रीवास पंडित की पत्नी श्रीमती मालिनी देवी उनके साथ बिलकुल अपने पुत्रवत व्यवहार करती थीं। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने कभी अपने हाथ से भोजन नहीं किया- वे मालिनी के हाथों से ही प्रसाद पाने का आनन्द लेते थे। श्रीवास पंडित ने भी श्रीनित्यानन्द प्रभु के लिए अपार प्रेम प्रदर्शित किया। श्रीचैतन्य महाप्रभु,

श्रीवास पंडित के विचारों से परिचित थे, इस कारण उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक श्रीनित्यानन्द की जिम्मेदारी उन्हें सौंप दी।

एक छोटे बालक के भाव में श्रीनित्यानन्द प्रभु सम्पूर्ण नदिया की यात्रा करते और श्रीगंगाधर पंडित और श्रीमुरारी गुप्त के निवास पर जाते।

श्रीनित्यानन्द प्रभु आनन्द से गंगा नदी में तैरने लगे और फिर श्रीवास पंडित के निवास की ओर उनकी माँ के दर्शन करने को भागे। श्रीगौरहरि भी श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीगदाधर पंडित और अन्य पार्षदों के साथ प्राय: श्रीवास पंडित के निवास पर आते थे।

श्री वास आंगन

श्रीईशान ने आगे कहा, 'देखो श्रीनिवास, यह श्रीवास पण्डित के निवास का प्रांगण है जहाँ श्रीनिमाई और उनके पार्षद भावातिरेक में संकीर्तन कर नृत्य किया करते थे। नृत्य इतना ओजपूर्ण होता था कि धरती कम्पन करने लग जाती। नरहरि ने एक भजन में इस दृश्य का सुन्दरता से वर्णन किया है। श्रीवास पंडित के निवास के समक्ष जब भक्तजन अपना मृदंग और करताल बजाते तो श्रीचैतन्य महाप्रभु उन्मत्त होकर नृत्य करते थे। श्रीनित्यानन्द प्रभु का चन्द्रमा समान मुख आवास में प्रकाश भर देता था जब वे अपने स्वर्णिम रूप रंग, मजबूत हाथ और पतली कमर के साथ सिंह के समान प्रकट हो एक मदमस्त व्यक्ति की भांति नृत्य करते थे। उनके सुन्दर विशाल नेत्र वर्षा की फुहार के समान अश्रुपात कर भूमि को भिगो देते। गौर और निताई की भावातिरेक दशा को देखकर श्रीअद्वैत आचार्य निरंतर गर्जना करते। श्रीवास पंडित नेत्रों से अश्रु बहाते हुए दोनों प्रभु के चरणकमल पकड़ लेते। मुकुन्द और गदाधर निरंतर रोते हुए एक दूसरे को पकड़ लेते और अभिराम ठाकुर, 'हरिबोल! हरिबोल' पुकारते हुए रोते।'

'हे श्रीनिवास मैं वर्णन नहीं कर सकता कि श्रीवास पंडित के निवास के प्रांगण में कितने लोग एकत्र थे। क्योंकि द्वार बन्द हो चुका था तो असंख्य लोग अत्यधिक पीड़ा में बाहर ही रह गए थे। यद्यपि श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों ने रात्रि का आधा भाग संकीर्तन करते हुए व्यतीत किया, उन्हें किसी भी तरह की थकावट अनुभव नहीं हुई और न ही उनके तन पर कोई स्वेद था। संकीर्तन के भावातिरेक में मग्न होकर वे यह नहीं समझ पाए कि श्रीचैतन्य महाप्रभु की इच्छा से समय शीघ्र व्यतीत हो गया। वास्तव में भक्तजनों के आनन्द के लिए प्रभु ने रात्रि की अवधि को बढ़ा दिया था तो इस कारण वास्तव में यह अद्‌भुत रूप से मानवीय गणना से अचिंतनीय दीर्घ समय था।'

शालिग्राम शिला गोद में

भावातिरेक में कभी-कभी गौरांग प्रभु अपने पार्षदों को उनके पूर्व नाम से पुकारते। मैं और अधिक क्या कहूँ? श्रीनिवास, मैं, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीगदाधर पंडित और अन्य भक्तों द्वारा प्रदर्शित किए गए असामान्य भावों का वर्णन नहीं कर सकता। प्रभु के आदेश पर रात्रि के अन्त में उन्होंने कीर्तन रोक दिया। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने तब शालिग्राम शिला को अपनी गोद में लिया और अपने भक्तजनों से दही, मक्खन और दूध मांगते हुए श्रीविग्रह की वेदी पर बैठ गए। भगवान् और भक्त के मध्य वहाँ कैसा सुन्दर सम्बन्ध था!

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने तब श्रीमुरारी गुप्त को कुछ गीत जोकि स्वयं मुरारी गुप्त द्वारा रचित थे, गाने का आदेश दिया। श्रीमुरारी गुप्त ने रामाष्टक का पठन आरम्भ किया और प्रभु अत्यधिक प्रसन्न होकर तत्क्षण भगवान् रामचन्द्र के भाव में मग्न हो गए। मधुरता से मुस्कुराते हुए प्रभु ने श्रीमुरारी गुप्त के मस्तक पर 'रामदास' लिख दिया।

मुरारी गुप्त का रामाष्टक

मैं भगवान् श्रीरामचन्द्र की आराधना करता हूँ जो कि तीनों लोकों के वासियों द्वारा पूजे जाते हैं; जिनका मुख निर्दोष चन्द्रमा के समान सुन्दर है; जिनके कान सुन्दर कुण्डल से शोभित हैं; जो बृहस्पति और शुक्र से भी अधिक चमकदार हैं; और जिनका मुकुट चमकदार सूर्यकान्त मणि भूषण से सज्जित है जो कि सूर्य की किरणों के समान चमकदार है।

मैं तीनों लोकों के एकमात्र गुरु भगवान् श्रीरामचन्द्र की आराधना करता हूँ, जिनके नेत्र खिलते कमल पुष्प के समान हैं और जिनके होंठ सुन्दर लाल बिम्बा फल के समान हैं। जिनकी नासिका आकर्षक है और जिनकी मुस्कान चन्द्रमा की मन्द किरणों को भी परास्त करने वाली है।

मैं तीनों लोकों के एकमात्र गुरु श्रीरामचन्द्र की आराधना करता हूँ, जिनकी ग्रीवा शंख कवच के समान आकर्षक है, और जिनका रूप रंग नीलकमल के वर्ण के समान है। जिनका प्रभावान मोतियों का कंठहार और वर्ण आकाश के समान है जहाँ श्वेत मेघों के साथ विद्युत चमक रही है।

मैं श्रीरामचन्द्र की प्रशंसा करता हूँ, जिनके साथ चमकदार स्वर्ण आभा वाली सीता जी विराजमान हैं, जिन्होंने अपने उठे हुए हाथ में कमल पुष्प पकड़ रखा है। उनकी पांचों सुन्दर उंगलियों में लगा हुआ कमल पुष्प पांच सौ से अधिक दलों से युक्त है।

मैं तीनों लोकों के एकमात्र गुरु श्रीरामचन्द्र की महिमा का गान करता हूँ, जिनके समक्ष महान धनुर्धर लक्ष्मण खड़े हैं जो पूर्व में शेष के नाम से विख्यात थे, जिनका स्वर्णिम रूप रंग असंख्य आभूषणों से और अधिक बढ़ रहा है, और जो अपने अग्रज भ्राता के सच्चे सेवक थे।

मैं रावण, खर, त्रिशिरा और कबन्ध दैत्यों का वध करने वाले श्रीराघव की अभ्यर्थना करता हूँ। वे दण्डकारण्य के दुष्ट राक्षसों के संहारकर्ता हैं, बाली को मारने वाले हैं, और सुग्रीव के मित्र हैं।

मैं तीनों लोकों के एक मात्र गुरु श्रीराम की आराधना करता हूँ, जिन्होंने हरधनु नाम से विख्यात धनुष को तोड़कर सीता जी का हाथ थामा था। मिथिला से अयोध्या जाते समय श्रीरामचन्द्र ने अपने पिता की प्रसन्नता के लिए परशुराम जी के गर्व का मर्दन किया था।

आज से तुम रामदास

श्रीईशान ने कहा, 'श्रीरघुनन्दन की महिमा को श्रवण कर प्रसन्न हो सर्वोच्च परमात्मा श्रीगौरचन्द्र ने अपने चरण श्रीमुरारी गुप्त के मस्तक पर पधरा दिए और उनके मस्तक पर लिख दिया, यह मेरी कामना है कि अब से आगे तुम रामदास के नाम से जाने जाओगे।'

मुरारी गुप्त प्रसन्नता और कृतज्ञता से अभिभूत हो गए। प्रात:काल श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षद निवास पर वापिस लौट आए। प्रभु की उत्तमोत्तम गतिविधियों के पीछे क्या वास्तविक भावना थी, यह कौन समझ सकता है?

एक दिन श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने पार्षदों के संग गंगा जी के तट पर गए। वहाँ प्रभु के आदेश पर उन्होंने संकीर्तन प्रारम्भ कर दिया। भावातिरेक में गौरांग महाप्रभु ने अपने भक्तजनों के मध्य अति सुन्दर नृत्य किया। कभी वे रोते, कभी वे हंसते और कभी वे गर्जना करते। विविध वाद्य यन्त्रों का वादन होने पर गौरांग प्रभु की वाणी और उनके नूपुर के स्वर के अमृत ने वातावरण को भर दिया। प्रभु का सुन्दर चन्द्र समान मुख, उनके घुटनों तक पहुँचती उनकी भुजाएं, उनके कुन्द पुष्प जैसे सुन्दर श्वेत दांत, उनका चौड़ा वक्ष स्थल और उनके आकर्षक घुंघराले केशों ने लोगों के चित्त को मन्त्रमुग्ध कर दिया।

हे श्रीनिवास, गंगा नदी प्रभु और उनके भक्तजनों के अपने तट पर चलने, और आनन्दपूर्वक संकीर्तन करने पर अति सौभाग्यशाली थीं। एक दिवस प्रभु श्रीवास पंडित के आवास पर आए और अपने पार्षदों के साथ अपना आसन ग्रहण किया। प्रभु एक भी दिवस संकीर्तन के बिना व्यतीत नहीं करते थे। वे प्रभु के पावन नाम के संकीर्तन के अलावा और कुछ नहीं चाहते थे- और कुछ भी उन्हें प्रसन्नता प्रदान नहीं कर सकता था। संकीर्तन करते हुए प्रभु इधर-उधर देखना आरम्भ कर देते परन्तु कोई भी उनके विचारों को नहीं समझ पाता।

आम का वृक्ष

एक दिवस श्रीविश्वम्भर ने इस स्थान पर आम का वृक्ष रोपित किया और चमत्कारिक रूप से वह तत्क्षण बढ़ने लगा और कुछ ही समय में पके हुए फलों से भर गया। प्रभु के पार्षदों ने पके हुए फलों को उठाया और भगवान् श्रीकृष्ण को निवेदित किया। वे आम उत्कृष्ट गुणवत्ता वाले बहुत महीन छिलके वाले, बहुत छोटी गुठली वाले थे और आश्चर्यजनक रूप से बहुत मीठे थे। किसी की भी भूख तृप्त करने के लिए केवल एक आम ही पर्याप्त था। प्रभु ने आम खाए और अपने पार्षदों को दिए। यह वृक्ष वर्षों तक फल देता रहा।

एक दिन जब श्रीविश्वम्भर भावातिरेक में **'गोपी, गोपी'** जप रहे थे, एक अभिमानी ब्राह्मण छात्र आश्चर्यचकित होकर कि वे कृष्ण के स्थान पर गोपी का जप कर रहे हैं, उनकी आलोचना की। आलोचना सुनकर प्रभु क्रोधित हो गए। एक छड़ी उठाकर वे ब्राह्मण छात्र को पीटने के लिए तैयार हो उसके पीछे भागे। ब्राह्मण भागने में कामयाब हो गया और वह छात्रों के दल के पास गया और उनसे अति रोषपूर्वक बात करने लगा। तब प्रभु ने अपना क्रोध छोड़ दिया और वापिस अपने निवास पर आ गए।

श्रीकेशव भारती आगमन

तत्पश्चात् एक दिवस श्रीकेशव भारती, श्रीविश्वम्भर से भेंट करने आए। प्रभु ने अति आदर पूर्वक उनका स्वागत किया और वे मित्रतापूर्वक चर्चा में मग्न हो गए। कोई भी नहीं समझ सका कि उन्होंने क्या चर्चा की। तत्पश्चात् श्रीकेशव भारती कंटकनगर लौट गए।

तब विश्वम्भर, श्रीवास पंडित के निवास पर गए और श्रीगदाधर पंडित व उनसे चर्चा की। तब स्नान करने के बाद विश्वम्भर भगवान् विष्णु के मन्दिर गए परन्तु उपासना में मग्न होने के कारण वे इतनी व्याकुलता पूर्वक रोए कि उनका मुख, वक्ष और वस्त्र अश्रुओं से भीग गए। श्रीगौरहरि ने तब श्रीगदाधर पंडित को भगवान् विष्णु की आराधना पूर्ण करने को कहा।

विष्णुप्रिया पूर्ण निष्कपटता से अपनी सास की सेवा करती रहीं। गृह में विश्वम्भर ने अनेकों अद्भुत लीलाएं रचाईं। श्रीनिवास अब मैं तुम्हें कुछ और स्थानों के दर्शन करवाऊंगा, जहाँ प्रभु ने अपनी उत्तमोत्तम लीलाऐं रचाईं और फिर मैं तुम्हें वापिस प्रभु के आवास में ले आऊँगा।

निमाई का बाल हठ

कुछ दूर चलने के बाद ईशान ने कहा, 'इस कदम्ब वृक्ष के नीचे बालक निमाई नग्न होकर अन्य बालकों के साथ क्रीड़ा करते थे। निमाई कदम्ब वृक्ष

की ओर देखते और जो भी उस समय वहाँ से गुजरता, उससे कदम्ब पुष्प की मांग करते। वे लोग निमाई को यह कहकर शांत करते कि अभी कदम्ब पुष्प का मौसम नहीं है। यह सुनकर निमाई रोना आरम्भ कर देते और उनके अश्रु मोतियों के समान प्रतीत होते। तब प्रभु उन लोगों से ध्यान से वृक्ष को देखने को कहते क्योंकि निश्चित ही वहाँ एक पुष्प होता। कुछ सौभाग्यशाली लोग तब वृक्ष को देखते और पाते कि वहाँ किसी शाखा में एक मात्र पुष्प होता था। वह तब शीघ्रता से वृक्ष पर चढ़ जाता और निमाई के लिए पुष्प को ले आता था। इस प्रकार हर कोई बालक निमाई के कौशल को देखकर अचम्भित हो जाता।'

इस वट वृक्ष के नीचे शची माता ने अपने पुत्र को गोद में लिया और अनेक भोग वस्तुओं के साथ षष्टि देवी की आराधना की। वहाँ एक नीम का वृक्ष था, जिसके पुष्प की सुगन्ध अति मधुर थी। उसकी छाया गुजरने वाले व्यक्तियों के लिए विश्राम का अच्छा साधन थी। कोई भी पक्षी वृक्ष की शाखा पर नहीं बैठता था। निमाई इस वृक्ष के नीचे खेला करते थे। उन्होंने गोविन्द पंडित को इस वृक्ष के काष्ठ से दो श्रीविग्रह का निर्माण करने का आदेश दिया।

मेरी दही ए पी गयो सररररररररर

ब्राह्मण के आवास पर एक दिन विश्वम्भर ने कुछ दूध लिया और बिना किसी भय के पी गए। तब उन्हें दही से भरा मटका छत से लटका दिखा। उन्होंने मटके के नीचे से एक छिद्र किया और छिद्र के नीचे मुख कर सारी दही पी गए। जब निमाई प्रसन्नतापूर्वक दही पी रहे थे तो अचानक ब्राह्मण ने कक्ष में प्रवेश किया और आकर उनका बायां हाथ पकड़ लिया। भयभीत होकर निमाई नीचे झुक गए और ब्राह्मण के पांव पकड़ उन्हें छोड़ देने का निवेदन करने लगे, यह वचन देकर कि वे पुनः कभी ऐसा नहीं करेंगे। कौन समझ सकता है कि ब्राह्मण ने निमाई के दही युक्त मुख पर क्या देखा? ब्राह्मण, निमाई से अपने नेत्र न हटा सका।

तब उन्होंने पुनः-पुनः निमाई से अपने निवास पर आकर प्रतिदिन दही खाने को कहा। इस प्रकार निमाई हर किसी को चिढ़ाते। बाह्य रूप से लोग उनसे क्रुद्ध होते परन्तु आन्तरिक रूप से वे आनन्दित होते थे।

देखो श्रीनिवास, यह वह मार्ग है जिससे दो सौभाग्यशाली चोर बालक निमाई को उनके निवास के पास छोड़कर भागे थे। यहाँ पर निमाई नित्य भोजन करते थे। यह जगदीश और हिरण्य का निवास है, जहाँ निमाई मधुकरी मांगते थे। नदी के तट पर इस स्थान के दर्शन करो, जहाँ पर ब्राह्मणों द्वारा अति आनन्द में निमाई की लीलाओं की चर्चा की जाती थी। यहाँ निमाई अन्य बालकों के साथ क्रीड़ा करते थे। देखो, यह वह स्थान है जहाँ मुरारी गुप्त एक विशेष रूप

से हाथ लहरा कर अपनी पढ़ाई को समझाते थे। श्रीनिमाई हास्य के रूप में उनकी आदत का उपहास करते थे।

श्रीमुरारी गुप्त की थाली में

एक दिन जब श्रीमुरारी गुप्त चावल खा रहे थे, विश्वम्भर उनके निवास पर गए और उनके चावल की थाली में मूत्र त्याग कर दिया। ऐसा करके निमाई ने उन्हें कुछ शिक्षा दी। श्रीनिवास, गंगा जी के तट पर इस सुन्दर श्रीविग्रह के दर्शन करो। कन्याएं नदी में स्नान करने के पश्चात् इसी श्रीविग्रह की आराधना करती थीं। एक दिवस उनकी आराधना के समय अचानक शचीनन्दन वहाँ उपस्थित हुए। वे तब कन्याओं के संग बैठ गए और हास-परिहास आरम्भ कर दिया। एक दिवस उनकी भेंट श्रीवल्लभ आचार्य की पुत्री से हुई और उन्होंने उनके साथ हास्यपूर्ण व्यवहार किया।

यह वह स्थान है जहाँ निमाई अन्य बालकों के संग क्रीड़ा करते और झगड़ा करते थे। निमाई यहाँ गंगा के तट पर गृहस्थ पुरुषों को तंग करते थे। कन्याएं जाती और शची माता से निमाई के नटखट व्यवहार के बारे में शिकायत करती थीं। इस वृक्ष के नीचे विश्वरूप को इस सत्य का बोध हुआ था कि उनके भ्राता निमाई एक साधारण जन नहीं हो सकते। इस स्थान पर ही श्रीअद्वैत आचार्य और प्रभु के अन्य पार्षद, समाज की भौतिक स्थिति को देखते हुए रो पड़े थे।

यहाँ श्रीविश्वरूप ने भगवान् कृष्ण की भक्ति के प्रति आवश्यक सत्य के बारे में समझाया, जिस कारण श्रीअद्वैत आचार्य सिंह के समान गर्जना करने लगे। श्रीअद्वैत आचार्य को विश्वरूप को उठाकर अपनी गोद में बिठा कर नृत्य करने में अति आनन्द हुआ।

इस स्थान को देखो

देखो श्रीनिवास, यहीं पर नदिया के बुद्धिजीवी लोग श्रीविश्वरूप के साथ कृष्ण भावनामृत की चर्चा किया करते थे। जब नग्न अवस्था में निमाई आकर अपने भ्राता को निवास पर चलने के लिए बुलाने आते थे। उस समय वहाँ उपस्थित हर कोई निमाई के रज से ढके अति सुन्दर तन से अपने नेत्र नहीं हटा पाता था।

यह वह स्थान है जहाँ विश्वम्भर ने विश्वरूप से कहा था, हे मेरे भ्राता मेरे साथ चलो और दोपहर का भोजन ग्रहण करो। विश्वरूप के वस्त्र का छोर पकड़ निमाई निवास पर वापिस लौट आते। इस स्थान पर श्रीअद्वैत आचार्य भौतिकवादी समाज में अत्यंत दुख अनुभव करने के कारण अपने भक्तजनों को सांत्वना देते। इस कक्ष में जब भक्तजन कीर्तन करते तो बालक निमाई अपनी क्रीड़ा छोड़ देते और देखने चले आते। जब भक्तजन उनसे पूछते कि वे क्यों

आए हैं, तो विश्वम्भर प्रति उत्तर में उनसे पूछते कि उन्होंने उन्हें क्यों पुकारा? विश्वम्भर अपने मित्रों के पास वापिस लौट जाते और भक्तजनों को व्यग्र अवस्था में छोड़ कुछ देर और क्रीड़ा करते।

श्री निमाई-स्मृति के चिह्न

हे श्रीनिवास, इस स्थान पर निमाई अन्य बालकों के संग पढ़ाई किया करते थे। जब निमाई के अग्रज भ्राता ने गृह त्याग किया और संन्यासी जीवन स्वीकार किया तो उनके पिता श्रीजगन्नाथ मिश्र ने आगे पढ़ाई अनवरत रखने से मना कर दिया। इस बात ने निमाई को अत्यधिक हतोत्साहित कर दिया और परिणामस्वरूप वे अनेकों शरारतपूर्ण गतिविधियों में लग गए। जब कुछ पड़ोसियों ने इसकी शिकायत जगन्नाथ मिश्र से की तो उन्होंने अपने पुत्र को शिक्षा प्राप्त करते रहने की आज्ञा प्रदान कर दी। इसने निमाई को अत्यधिक प्रसन्न कर दिया।

इस कक्ष में श्रीजगन्नाथ मिश्र ने अपने पुत्र का यज्ञोपवीत संस्कार कराया था। यह श्रीगंगादास पंडित का निवास है, जिन्होंने निमाई को व्याकरण पढ़ाया। यहाँ निमाई अपने मित्रों के साथ गंगा में स्नान करते थे। वे भगवान् विष्णु और तुलसी देवी की भी आराधना करते और दोपहर का भोजन भी यहीं करते। निमाई शास्त्र चर्चा के अलावा कोई अन्य गतिविधि पसंन्द नहीं करते थे। इस कारण से वे नदिया के एक महान विद्वान् बने। यहाँ निमाई मुरारी गुप्त के साथ शास्त्र चर्चा किया करते थे।

यहाँ श्रीवल्लभ आचार्य, जिनकी पुत्री निमाई की पहली पत्नी लक्ष्मी देवी थीं, का निवास है। यहाँ गंगा के मार्ग में निमाई ने प्रथम बार लक्ष्मी को देखा था। यहाँ पर श्रीवनमाली आचार्य का निवास है, जिन्होंने निमाई के लक्ष्मी से विवाह के प्रबन्धन की जिम्मेदारी ली थी।

यह वह मार्ग है, जिससे विश्वम्भर अपनी नव विवाहिता पत्नी के साथ अपने निवास पर वापिस लौटते थे।

यहां पाठशाला थी

इस स्थान पर निमाई अपने छात्रों को पढ़ाया करते थे। श्रीमुरारी गुप्त कभी-कभी इस स्थान पर उनके साथ तर्क-वितर्क करते। यहाँ पर श्रीगोपीनाथ आचार्य का निवास है, जहाँ निमाई समय-समय पर जाया करते थे। श्रीईश्वर पुरी ने भी कुछ समय यहाँ वास किया और यहीं पर उन्होंने 'श्रीकृष्ण लीलामृत' ग्रन्थ लिखा था। गदाधर पंडित से अति स्नेह के कारण श्रीईश्वरी पुरी ने उन्हें यहाँ पढ़ाया। श्रीईश्वर पुरी विश्वम्भर के अति प्रिय थे और उन्होंने उन्हें ग्रन्थ का

सम्पादन करने का निवेदन किया। विश्वम्भर का ईश्वर पुरी के प्रति अगाध आदर था और वे प्राय: विविध तरीकों से उन्हें आनन्दित करते रहते थे।

यहाँ श्री मुकुन्द संजय का निवास है जहाँ निमाई पढ़ाई में मग्न रहते थे। एक दिवस श्रीविश्वम्भर के संकेत पर प्रभु के पार्षदों ने गंगा से जल लाकर उनके अभिषेक के लिए प्रबन्ध किया। जब प्रभु को अभिषेक के लिए वेदी पर पधराया गया तब मुकुन्द ने गायन प्रारम्भ कर दिया। जैसे ही भक्तजनों ने प्रभु पर गंगा जल उड़ेलना आरम्भ किया, वैदिक मन्त्रों का जप होने लगा। महिलाओं ने कोलाहल कर उत्सव ध्वनि की और वाद्ययन्त्रों के मधुर कम्पन ने वातावरण बना दिया। गान करते हुए भक्तजन आनन्द में रोने लगे और देवतागण भी प्रभु की महिमा का गान करते हुए उनके साथ घुलमिल गए। यहाँ तक कि स्नान करने के पश्चात् तन की स्वर्णिम आभा वाले प्रभु के आकर्षक मुख के दर्शन कर मदन भी अचेत हो गए।

अभिषेक

हे श्रीनिवास, असंख्य भक्तजन प्रभु के अभिषेक का दर्शन करने आए और श्रीगौरहरि प्रभु विनम्रता से उन सब पर मुस्कुराए। लोगों द्वारा भर कर लाए गए जल के पात्र अनगिनत थे। एक दुखी नाम की सेविका को प्रभु के लिए जल लाने में अति आनन्द आया इस कारण प्रभु ने उसका नाम बदल कर सुखी रख दिया। कुछ भक्तजनों ने तब प्रभु के तन को अति कोमल वस्त्र से पोंछा जबकि कुछ अन्य उनके धारण करने के लिए नवीन वस्त्र लेकर आए। कुछ भक्त प्रभु के तन पर लगाने के लिए चन्दन लेप लेकर आए और कुछ अन्य भक्तों ने उनके चन्द्रमा समान मुख को निहारते हुए उनके तन को भूषणों से शोभित किया। एक अन्य भक्त ने भगवान् विष्णु के सिंहासन को शोभित किया और प्रभु अपने आसन पर चले गए।

श्रीनित्यानन्द ने प्रभु के शीश पर छत्र को धारण कराया और किसी अन्य ने उन्हें चंवर के साथ पंखा किया जबकि अन्य भक्तजनों ने प्रसन्नतापूर्वक पुष्प वर्षा की। कुछ भक्तजन उनकी महिमा का गान करते हुए चरणकमलों में जा गिरे जबकि अन्य उनके लिए विविध प्रकार के भोज्य पदार्थ लेकर आए।

उस समय श्रीगौरहरि प्रभु ने श्रीवास, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीगंगादास पंडित और श्रीहरिदास ठाकुर को अपने पूर्व जन्मों के बारे में बताया, जिसको सुनकर वे सब उनके चरणकमलों में गिरकर रोने लगे। प्रभु ने श्रीधर को आशीर्वाद निवेदन किया, जिसने वट वृक्ष की छाल द्वारा निर्मित कटोरे का व्यापार किया था। वास्तव में प्रभु ने अचानक भगवान् विष्णु के एक नियत अवतार में सभी

भक्तजनों के सम्मुख प्रकट होकर सबको आशीर्वाद दिया जिसकी वे आराधना करने के अभ्यस्त थे।

मुरारी गुप्त जो कि श्रीराम अवतार की आराधना करते थे, वे श्रीरामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण और स्वयं को हनुमान के रूप में देखने में समर्थ थे। आनन्द से भाव विभोर हो उन्होंने प्रभु की महिमा का गान आरम्भ कर दिया। श्रीमुरारी गुप्त से अति सन्तुष्ट हो प्रभु ने उन्हें मुरारी वल्लभ नाम प्रदान किया। मुकुन्द को भी उस समय प्रभु की अनुकम्पा प्राप्त हुई और वे उनके अतिप्रिय पार्षद के रूप में प्रसिद्ध हुए। सात पहर तक प्रभु अपने उल्लसित भाव में रहे। ब्रह्मा और शिव के नेतृत्व में सभी देवतागण अदृश्य होकर वहाँ श्रीचैतन्य महाप्रभु के दर्शन करने आए। जब विश्वम्भर अपने निवास पर अपनी लीलाऐं रचा रहे थे, श्रीवास पंडित की प्रसन्नता का कोई ठिकाना न था।

तत्पश्चात् नित्यानन्द प्रभु को श्रीवास पंडित के निवास पर छोड़कर श्रीविश्वम्भर अपने निवास पर वापिस लौट आए। कौन श्रीनित्यानन्द प्रभु के उत्तमोत्तम चरित्र को समझ सकता है? एक दिवस मालिनी देवी को दुखी पाकर श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उनसे पूछा कि क्या हुआ है? मालिनी ने समझाया कि कैसे एक कौऐ ने उनका घी का पात्र चुरा लिया है। मुस्कुराते हुए नित्यानन्द प्रभु ने कौऐ को पात्र वापिस लौटाने का आदेश दिया और कौए ने तत्क्षण मालिनी को पात्र लौटा दिया। नित्यानन्द प्रभु के इस चमत्कार को देख मालिनी ने अति भावों से उनकी सराहना करनी आरम्भ कर दी। नित्यानन्द प्रभु प्राय: शची देवी के निवास पर भी जाते थे।

जगाई-माधाई

श्रीगौरहरि प्रभु ने श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीहरिदास ठाकुर को सम्पूर्ण नदिया में संकीर्तन करते हुए नाम की भिक्षा करने का निर्देश दिया। प्रभु के आदेश का पालन करते हुए श्रीहरिदास ठाकुर और श्रीनित्यानन्द प्रभु नित्य बाहर जाते और नदिया के प्रत्येक आवास में जाकर लोगों से भगवान् श्रीकृष्ण के नाम का संकीर्तन करने का निवेदन करते।

एक दिवस जब श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीहरिदास ठाकुर दो कुख्यात भ्राता जगाई और श्रीमाधाई के पास से गुजरे, जो कि मार्ग में थे, उन्हें वे भगवान् के नाम का उच्चारण करने का निवेदन करने लगे। यह सुझाव सुनकर दोनों भ्राता क्रोध में गर्जना करने लगे। तथापि श्रीनित्यानन्द प्रभु बिना भय के उन दोनों भ्राता के निकट चले गए और उनसे बार-बार कृष्ण नाम बोलने का आग्रह करने लगे। ऐसा कोई अपराध नहीं था जो इन दुष्टों ने न किया हो। यद्यपि दोनों का जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था परन्तु वे असत् संग के कारण बिगड़ गए थे। नदिया में हर कोई उनसे भय के कारण कांपता था। तब माधाई क्रोधित होकर श्रीनित्यानन्द

प्रभु की ओर भागा और उनके मस्तक पर वार कर दिया, जिस कारण उनके सिर से रक्त बहने लगा।

जब श्रीगौरहरि प्रभु ने सुना कि ये घटित हुआ है, उनके आवेश की कोई सीमा न रही। वे सुदर्शन चक्र को भ्रष्ट भ्राताओं को मारने के लिए पुकारते हुए उस स्थल की ओर भागे। यद्यपि दयालु श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीगौर हरि प्रभु को शांत किया और पापियों को चक्र और नर्क से बचाया। तत्पश्चात् प्रभु ने जगाई और माधाई पर अपनी अनुकम्पा बरसाई और उन्हें आध्यात्मिक समर्पण की अनमोल भेंट प्रदान की, जिसकी कामना आकाश में देवतागण भी करते हैं।

फैल गया समाचार

तीनों लोकों में समाचार फैल गया। चैतन्य महाप्रभु ने दो असुर भ्राताओं को उनके पापयुक्त जीवन से मुक्ति प्रदान की है। नदिया में हर किसी ने शान्ति की सांस ली और परिवर्तित भ्राताओं को देखकर हर कोई आश्चर्यचकित था। जगाई और माधाई अब परिवर्तित व्यक्ति थे। अब हर प्रात: वे गंगा जी में स्नान करते निरंतर प्रभु के पावन नामों का कीर्तन करते रहते। नदिया में हर कोई इन दो अति भद्र भ्राताओं की अति प्रशंसा करता। हे श्रीनिवास, जगाई और माधाई के निवास के दर्शन करो।

नित्यानन्द प्रभु के आदेश पर माधाई ने विनम्रतापूर्वक गंगा के स्नान घाटों पर आने वाले प्रत्येक के चरणों में प्रणाम कर, घाटों की सफाई की। कीर्तनानन्द में बुरी तरह रोते देख हर कोई उनके साथ रो पड़ता था और भगवान् से उनके कुशल मंगल की प्रार्थना करता था। इस कारण यह स्थान माधाई का घाट कहलाता है। यहाँ पर माधाई ने ध्यान का अभ्यास किया था, जिस कारण उन्होंने श्री माधव ब्रह्मचारी की उपाधि प्राप्त की।

श्रीवास पंडित की सास

एक दिवस श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने पार्षदों के साथ श्रीवास पंडित के निवास पर गए, जो उन्हें देखकर आनन्द से भाव विभोर हो गए। तत्पश्चात् संकीर्तन में नृत्य करते हुए प्रभु ने अपने पार्षदों से पूछा, 'मैं सदा की तरह उल्लसित क्यों अनुभव नहीं कर रहा?' यह सुनकर श्रीवास पंडित अधीर हो उठे और इधर-उधर देखने लगे। ऐसा करते हुए उन्होंने देखा कि उनकी सास कक्ष के एक कोने में अपना शीश ढक कर छिपी हुई थी। श्रीवास पंडित ने उन्हें केशों से पकड़ा और कक्ष के बाहर खींच लिया। इसके पश्चात् प्रभु ने कहा, अब मैं शान्ति का अनुभव कर रहा हूँ। और शीघ्र ही संकीर्तन में मग्न हो गए।

एक दिवस जब श्रीचैतन्य महाप्रभु उल्लसित भाव में अचेत अवस्था में लेटे हुए थे, श्रीअद्वैत आचार्य आए और उनके चरणकमलों से रज उठाई और

अपने तन पर लगा ली। जब वे सचेत हुए तो प्रभु ने कहा, 'मैं इतना दुखी क्यों अनुभव कर रहा हूँ?' भक्तजन, प्रभु की अप्रसन्नता का कारण न समझ पाए तो वे प्रश्न सूचक दृष्टि से श्रीअद्वैत आचार्य की ओर देखने लगे। तब जब उन्होंने देखा कि प्रभु ने श्रीअद्वैत आचार्य के चरण पकड़ लिए हैं और उन्हें अपने शीश पर पधरा दिया, भक्तजन समझ गए कि उन्हें क्या परेशान कर रहा था। तब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने भगवान् विष्णु की वेदी पर अपना स्थान ग्रहण किया।

श्रीशुक्लाम्बर के चावल

उस समय श्रीशुक्लाम्बर नदिया के आवासों से भिक्षा माँगकर वहाँ आ गए। अति प्रेम और स्नेह से प्रभु ने श्रीशुक्लाम्बर की पोटली से कुछ चावल निकाले और उन्हें सुदामा कहकर पुकारा। उनकी पोटली कन्धे पर रखकर श्रीशुक्लाम्बर आनन्दातिरेक में नृत्य करने लगे।

हे श्रीनिवास, वहाँ संजय का निवास है, जहाँ प्रभु संकीर्तन करते हुए अपने पार्षदों के साथ नृत्य और गान करते थे।

कभी-कभी गंगा जी की ओर जाते हुए, इस वृक्ष के नीचे प्रभु विश्राम करते थे। प्रायः जब वे गंगा जी पर जाते तो स्नेहवश महिलाएं उनके पास आतीं और प्रभु से बातें करतीं। उसका वर्णन श्रीगदाधर पंडित के एक शिष्य श्रीयदुनन्दन चक्रवर्ती, जिन्होंने प्रभु की प्रार्थना करते हुए अनेक भजन लिखे हैं, उन्होंने अपने एक भजन में किया है।

गंगा के तट पर श्रीविश्वम्भर प्रायः इस स्थान पर नृत्य करते। इसका सुन्दर वर्णन नरहरि के एक भजन में है। गंगा के तट पर श्रीगौरांग प्रभु अपने पार्षदों के संग विचरण करते थे। उनका उत्साही नृत्य जो कि व्यतीत होते दिवसों के साथ और अधिक मनोहर होता जा रहा था, उसने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मदमस्त कर दिया था। उनकी स्वर्णिम आभा वाली, मजबूत कद-काठी आनन्दातिरेक में कम्पित होती। उनकी गज के समान चाल और उनकी लम्बी भुजाएं देवताओं को लज्जित कर रही थीं। उनके सुन्दर कुन्द के समान दांत, उनके मन्द-मन्द मुस्काने पर लोगों को सम्मोहित कर देते थे। सुवर्ण मुख से वे निरंतर, 'हरि-हरि' के जप से हर किसी को अधीर कर रहे थे।

विभिन्न वेशों में नृत्य

एक दिवस विश्वम्भर की श्रीचन्द्रशेखर आचार्य के निवास पर नृत्य करने की इच्छा हुई तो वे अपने पार्षदों के संग वहाँ चले गए। श्रीसदाशिव और श्रीबुद्धिमन्त खान ने अनेक प्रकार के वस्त्र एकत्र कर लिए ताकि प्रभु लक्ष्मी और अन्य शक्तियों का वेश धारण कर नृत्य कर सकें। श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य ने भी विविध वेशों में नृत्य किया। शची माता, विष्णुप्रिया,

श्रीवास पंडित और अन्यों के साथ, अपनी पत्नियों के संग प्रभु के नृत्य का आनन्द लेने के लिए लोग वहाँ एकत्र हो गए। मुकुन्द और अन्यों ने मृदंग और वाद्य यंत्रों का वादन कर कीर्तन का आरम्भ किया। श्रीअद्वैत आचार्य और कुछ अन्यों को कुछ संकोच अनुभव हुआ और प्रभु ने चाहा कि वे स्वयं को भूलकर नृत्य आरम्भ करें।

जैसे ही भक्तजनों ने, 'जय जय' ध्वनि आरम्भ की श्रीशचीनन्दन ने रुक्मिणी की तरह नृत्य करना आरम्भ कर दिया। हालांकि दर्शकों में से अधिकतर प्रभु की चेष्टा को समझ पाने में असमर्थ थे, हर कोई उनकी सुन्दरता से अभिभूत था। हे श्रीवास, प्रभु ने विविध पत्नियों का रूप धारण किया और सुन्दरता से नृत्य किया।

कभी पार्वती-कभी लक्ष्मी

कभी वे पार्वती का अभिनय कर नृत्य करने लगे और कभी वे लक्ष्मी का अभिनय करते। अचानक महा-लक्ष्मी का अभिनय करते हुए प्रभु वेदी पर बैठ गए। तब उनके आदेश पर प्रभु के पार्षदों ने लक्ष्मी और पार्वती की आराधना आरम्भ कर दी। जब श्रीगौरहरि प्रभु आनन्दातिरेक में मग्न ब्रह्माण्ड की जननी का अभिनय कर रहे थे, उन्होंने भक्तजनों को अपने बालकों के रूप में देख, अपने वक्षस्थल से दूध पिलाना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार गौरहरि प्रभु ने अपनी एक अति सुन्दर परन्तु अति गुप्त लीला का प्राकट्य किया था।

हे श्रीनिवास, श्रीगदाधर पंडित, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीश्रीवास पंडित ने इस स्थान पर अति व्यग्र होकर नृत्य किया था। यहाँ तक कि ब्रह्मा जी और अन्य देवतागण भी उस आनन्द का अनुभव नहीं कर सकते थे जो कि चन्द्रशेखर आचार्य के निवास पर प्रभु की लीलाओं में उजागर हुआ था। प्रातः भक्तजन अपनी अपनी पत्नियों के साथ अपने निवास पर लौट गए। शची माता जिन्होंने अपने पुत्र को नृत्य करते देख अति आनन्द का अनुभव किया था, वे भी अपनी पुत्रवधू के संग अपने निवास पर लौट आयीं। और यद्यपि भक्तजनों ने उस स्थान को छोड़ दिया था, परन्तु वह उत्साह जो प्रभु ने निर्मित किया था, आश्चर्यजनक रूप से सात दिवस तक उनके संग रहा।

श्रीचैतन्य महाप्रभु एक बार शांतिपुर पधारे, कुछ दिवस वहाँ रुके और तब सड़क मार्ग से नदिया वापिस आ गए। एक दिवस श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीश्रीवास पंडित के निवास पर गए। उस समय श्रीमुरारी गुप्त आए और श्रीगौरहरि के चरणकमलों में और श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य को झुक कर प्रणाम किया। इस पर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीमुरारी गुप्त को यह कहा, 'तुमने सबसे पहले श्रीनित्यानन्द प्रभु के सामने न झुक कर गलती की है, मैं तुमसे क्या कहूँ, क्योंकि तुम एक

नवदीक्षित हो।' श्रीमुरारी गुप्त ने उत्तर दिया, 'मैं यह कैसे जान सकता हूँ?' प्रभु ने उन्हें आश्वस्त किया, 'अभी तुम गृह जाओ और कल तुम समझ जाओगे।' यह कहकर प्रभु ने मुरारी गुप्त को पदच्युत कर दिया और फिर श्रीवास ठाकुर के निवास पर कीर्तन करना आरम्भ कर दिया।

श्रीनित्यानन्द बलराम के रूप में

उदास मुरारी गुप्त घर चले गए और गहरी निद्रा में सो गए। अपने स्वप्न में उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु को अपने मजबूत सुन्दर हाथ में दण्ड पकड़े बलराम जी के रूप में देखा। उनकी सुन्दरता पूर्णिमा के उज्ज्वल चन्द्रमा के गर्व को परास्त कर रही थी।

वे एक मदमस्त व्यक्ति के समान चल रहे थे और उनके पीछे श्रीकृष्ण के सुन्दर रूप में नील वर्ण और अपने केशों में मोर पंख धारण कर विश्वम्भर चल रहे थे। यह देखकर श्रीमुरारी गुप्त विकल हो गए। विश्वम्भर ने समझाया कि वे श्रीनित्यानन्द के अनुज हैं और ऐसा कहकर दोनों प्रभु अदृश्य हो गए। इस प्रकार श्रीमुरारी गुप्त समझ गए श्रीनित्यानन्द, श्रीचैतन्य महाप्रभु के अग्रज भ्राता हैं। अति उल्लसित होकर वे श्रीवास पंडित के निवास की ओर दौड़े। वहाँ उन्होंने श्रीगौरहरि प्रभु को एक दिव्य सिंहासन पर विराजमान और श्रीनित्यानन्द प्रभु को उनके दाँई ओर खड़े पाया। इस बार मुरारी गुप्त ने सर्वप्रथम श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों में प्रणाम किया और फिर श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणों में प्रणाम किया। श्रीगौरहरि मुस्कुराये और मुरारी से पूछा, 'हे गुप्त, तुम क्या कर रहे हो?' श्रीमुरारी ने उत्तर दिया, 'जो आपने मुझे बताया।' आनन्दमय भाव में तब विश्वम्भर ने अपने द्वारा चबाया पान मुरारी गुप्त को दिया, जिसे उन्होंने खाया और अपने शीश से हाथ पोंछ दिए।

महाप्रभु को हुयी अपच

एक दिवस श्रीमुरारी गुप्त ने अपनी पत्नी से कहा, 'मैं अब दोपहर का भोजन करना चाहूँगा।' भद्र महिला ने चावल पकाए और अपने पति के पास ले आई, जिसने सर्वप्रथम कृष्ण को निवेदन किया और फिर प्रसाद का सत्कार किया। अगली प्रातः श्रीचैतन्य महाप्रभु मुरारी गुप्त के निवास पर आए। मुरारी ने कहा, 'आपकी कितनी कृपा, कि आप यहाँ आए।' प्रभु ने उत्तर दिया, 'मैं अपच का उपचार चाहता हूँ। मुरारी गुप्त ने पूछा, 'आपने कल क्या खाया था?' प्रभु ने उत्तर दिया, 'मेरी तरह तुम भी जानते हो। कल तुमने मुझे प्रचुर मात्रा में चावल निवेदन किए और तुमने मांग की थी कि मैं सब खाऊं, तो मैं मना नहीं कर सका। अब अत्यधिक खाने के परिणाम स्वरूप, मुझे अपच हो गया है। यह प्रचुर मात्रा में जल ग्रहण करने से ठीक हो सकती है।' यह कहकर प्रभु ने मुरारी

गुप्त के पात्र से जल पी लिया। इस प्रकार प्रभु से अनुग्रह प्राप्त कर श्रीमुरारी गुप्त और उनके परिवार के सभी लोग आनन्द में रोने लगे। प्रभु ने प्रेमपूर्वक श्रीमुरारी गुप्त का आलिंगन किया और अपने गृह वापिस लौट आए।

एक दिवस श्रीश्रीवास पंडित के निवास पर श्रीगौरचन्द्र ने शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण कर विष्णु रूप अपने चतुर्भुज अवतार को प्रकट किया। उस समय श्रीमुरारी गुप्त ने गरुड़ का अभिनय किया। प्रभु उनकी पीठ पर चढ़ गए और उनके गृह के प्रांगण में विचरण करने लगे। इस सुन्दर दृश्य को देखने वाले, श्रीचैतन्य महाप्रभु के पार्षद कितने सौभाग्यशाली थे।

हे श्रीनिवास वहाँ मदिरापान करने वालों का अड्डा था। श्रीवास पंडित ने प्रभु को वहाँ जाने से मना कर दिया था परन्तु विपदाग्रस्त लोगों के मित्र होने के कारण वे जानबूझ कर उस मार्ग से निकले। जब मदिरापान करने वाले लोगों ने उन्हें देखा तो वे, 'हरिबोल, हरिबोल!' का उच्चारण करने लगे। निमाई उन पर करुणा बरसाते हुए प्रेम से उनकी ओर देखते।

यहाँ पर महेश्वर विशारद का निवास है, जिनके पुत्र श्रीवासुदेव सार्वभौम थे। प्रभु की इच्छा से सार्वभौम ने नीलाचल में वास किया। श्रीगोपीनाथ आचार्य ने नदिया में प्रभु के संग अनेक लीलाओं का आनन्द लिया। प्रभु के आदेश पर वे नीलाचल गए परन्तु जब वे किसी ऐसे भक्त को वहाँ न पा सके जो श्रीचैतन्य महाप्रभु को जानता हो तो वे अप्रसन्न हो गए। उस समय प्रभु ने नदिया में अपना संकीर्तन अन्दोलन जारी रखा।

काजी पर कृपा

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने नदिया के लोगों को संकीर्तन में लीन होने का आदेश दिया। प्रभु के आदेश का पालन करते हुए नगरवासी संकीर्तन के आनन्दातिरेक में डूब गये। हालांकि निन्दक और नास्तिक लोग अप्रसन्न हो गए और काजी से इसकी शिकायत कर दी। जिसके परिणाम स्वरूप काजी ने हर किसी को संकीर्तन में मग्न होने से मना कर दिया। अति क्रोध के भाव में प्रभु ने काजी को दण्ड देने का निश्चय किया और इस प्रयोजन से उन्होंने सम्पूर्ण नगर में संकीर्तन महोत्सव का आयोजन किया।

प्रभु ने अपने पार्षदों को दलों में विभाजित कर दिया और उन्हें सम्पूर्ण नगर में नृत्य और गान करने का आदेश दिया। श्रीअद्वैत आचार्य एक दल के प्रमुख थे, श्रीहरिदास ठाकुर अन्य दल के प्रमुख थे। श्रीश्रीवास पंडित तीसरे दल के प्रमुख थे और एक अन्य दल का नेतृत्व स्वयं प्रभु कर रहे थे और श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीगदाधर पंडित उनकी सहायता कर रहे थे। श्रीवक्रेश्वर पंडित और अन्यों ने अलग दल बना लिए। कुछ भक्त प्रभु के आसपास रहे और जबकि कुछ अन्य-अन्य क्षेत्रों में फैल गए। असंख्य लोग कीर्तन में जुड़ गए और

आनन्दतिरेक में नृत्य करने लगे। उस सायंकाल नदिया में कितना सुन्दर दृश्य था! यहाँ तक कि नारद मुनि और अन्य देवतागण आकर संतों के छद्‍म वेष में कीर्तन दलों में जुड़ गए।

जब दिवस ढल गया और अन्धकार हो गया तो लोग सैंकड़ों सहस्रों मशाल लेकर संकीर्तन दल में जुड़ गए, जिसे देखकर यह प्रतीत होने लगा मानों रात्रि दिवस में परिवर्तित हो गई हो।

दुर्लभ नगर संकीर्त्तन

प्रभु के संकीर्तन को आनन्दपूर्वक देखती महिलाऐं, बच्चे और वृद्धजनों पर जो चन्द्रमा चमक रहा था, उसकी शीतल किरणों से वातावरण सुहावना हो गया था। सम्पूर्ण नगर, 'हरि, हरि!' के स्वर से कम्पित हो रहे था। यद्यपि नास्तिक और निन्दक लोग इन सब गतिविधियों के मध्य अति कष्टप्रद हो गए थे। नरहरि ने अपने भजन में वर्णन किया है कि श्रीचैतन्य महाप्रभु का नृत्य इतना आकर्षक था कि जो लोग अपने गृह में बैठे थे वे स्वयं पर नियंत्रण खोकर संकीर्तन दल से जुड़ने के लिए गलियों में भागने लगे।

प्रभु के पीछे रामा, सुन्दरानन्द और मुकुन्द गायन की अगुवाई कर रहे थे। श्रीगौरसुन्दर मध्य में नृत्य कर रहे थे और श्रीअद्वैत आचार्य, गाते हुए संकीर्तन करने वाले दल के आगे थे। जैसे ही गौरसुन्दर नृत्य करते, वे इधर-उधर देखते और लोग प्रति उत्तर में 'हरि, हरि!' पुकारते। ध्यान करने और वैदिक मन्त्रोच्चारण का क्या लाभ जब श्रीचैतन्य महाप्रभु का संकीर्तन तत्क्षण हर प्रकार के लोगों को उनकी जाति और धर्म का ध्यान दिए बिना मुक्ति प्रदान कर देता है।

गृहस्वामिनियों ने अपने रूप-रंग और वेष में रुचि खो दी। संन्यासियों ने अपना ध्यान त्याग दिया और अत्यधिक आश्चर्य था कि मुस्लिम लोगों ने भी पावन नाम का गान आरम्भ कर दिया। चैतन्य महाप्रभु ने अचानक अपने मार्ग में परिवर्तन किया और मधाई घाट की दिशा में बढ़ गए। बरकोना-घाट के दर्शन करो, जहाँ प्रभु ने अपने नृत्य और गायन की अद्‍भुत लीलाएं रचाई थीं। गंगा के तट से प्रभु इस मार्ग से आगे गए थे।

वहाँ पर श्रीनवद्वीप में लिंग के रूप में क्षेत्रपाल शिव का मन्दिर है। श्रीविग्रह ने अपने वास्तविक शिव रूप को धारण किया और गौरहरि प्रभु ने उनके साथ उल्लसित होकर नृत्य कर उनकी कामना पूर्ण की। यहाँ पर गणेश जी का मन्दिर है। श्रीचैतन्य महाप्रभु के संन्यास ग्रहण करने पर इस मन्दिर के सुन्दर श्रीविग्रह अन्तर्धान हो गए थे और इस कारण इस क्षेत्र के लोग अति अप्रसन्न हो गए थे।

देखो! यह मार्ग काजी के निवास की ओर जाता है। काजी भय से कांपने लगा था जब उसने सुना कि प्रभु निकट आ रहे हैं। काजी को वश में कर और अपना आशीर्वाद उस पर बरसाने के बाद प्रभु इस मार्ग से वापिस लौट गए। काजी के आत्मसमर्पण के पश्चात् नास्तिक और निन्दक लोग सदैव के लिए शांत हो गए।

श्रीधर खोला बेचा

एक दिवस प्रभु और उनके पार्षद श्रीधर के जीर्ण-शीर्ण आवास पर गए। प्रांगण में प्रवेश करते हुए प्रभु ने एक पुराना टूटा हुआ लोहे का पात्र उठाया जो कि वर्षा के जल से भरा हुआ था और प्रसन्नतापूर्वक उसमें से जल पी गए। अपने भक्त के प्रेम से भावविभोर श्रीधर प्रभु आनन्दातिरेक में अश्रुपात करने लगे। विश्वम्भर ने इस स्थान पर कीर्तन आरम्भ कर दिया और नित्यानन्द प्रभु, अद्वैत आचार्य और अन्य भक्त प्रभु के साथ रोते हुए आ जुड़े।

जन्माष्टमी-नृत्य

एक दिवस श्रीवास पंडित के आवास पर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने घोषणा की, 'कल भगवान् कृष्ण का प्राकट्य दिवस है।' श्रीवास और अन्य, प्रभु के विचार जानकर समझ गये कि अगले दिवस वे गोप के रूप में नृत्य करेंगे। हर कोई शीघ्रता से आने वाले उत्सव की तैयारी करने लगा। अगले दिवस श्रीवास पंडित का गृह, भगवान् कृष्ण के मंगलकारी अभिषेक होने के कारण आनन्द से भर गया। तत्पश्चात् हर किसी ने सम्पूर्ण रात्रि संकीर्तन में मग्न होकर व्यतीत की।

अगली प्रातः श्रीनित्यानन्द प्रभु ने निपुणता से परिधान धारण किए और गौरहरि को गोप के रूप में शोभित किया। रामा, सुन्दरानन्द, गौरीदास और अन्यों ने स्वयं को गोप के रूप में शोभित किया। तब उन सब ने दही और मक्खन से भरे मिट्टी के बने पात्र उठाए, पात्रों के मुख पर रस्सी बांधी और पात्रों को छड़ के दोनों सिरों से बांध दिया। छड़ को अपने कन्धे पर रखकर वे श्रीवास पंडित के गृह के आंगन में प्रवेश कर गए। ग्वाल बाल के भाव में श्रीवास पंडित और अद्वैत आचार्य ने दही और हल्दी को भूमि पर बिखेर दिया। कम समय में ही श्रीवास पंडित का गृह कृष्ण के पिता श्रीनन्द महाराज के गृह में परिवर्तित हो गया।

तत्पश्चात् श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर श्रीराधा के प्राकट्य दिवस के उत्सव का प्रबन्ध पुण्डरीक विद्यानिधि के निवास पर हुआ। मुस्कुराते हुए प्रभु ने पुण्डरीक को बताया, 'कल मैं श्री राधिका का प्राकट्य तुम्हारे निवास पर मनाऊंगा।' यह सुनकर विद्यानिधि अति प्रसन्न हो गए और उत्सव के लिए सब प्रकार का प्रबन्ध करने के लिए अपने निवास की ओर दौड़ पड़े।

श्रीराधाष्टमी महोत्सव

अगली दिवस प्रभु और उनके पार्षद, श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि के निवास पर गए। सर्वप्रथम प्रभु ने श्रीराधा जी का अभिषेक किया। तब उन्होंने स्वयं को ग्वाल बाल के रूप में शोभित किया और अपने अनुचरों को भी ऐसा करने का निर्देश दिया। अपने कन्धे पर दूध, दही और मक्खन से भरे पात्र उठाकर उन सबने ग्वाल बाल के रूप में नृत्य करना आरम्भ कर दिया और पुण्डरीक ने अपने गृह के बाहर प्रांगण में दूध, दही और हल्दी को बिखेर दिया। तत्पश्चात् भक्तजनों ने अपने वाद्य यन्त्र उठाकर नृत्य और संकीर्तन आरम्भ कर दिया। ग्वाल बाल के रूप में प्रभु श्रीकृष्ण के समान अपने हाथ में बांसुरी पकड़ कदम्ब वृक्ष के नीचे खड़े हो गए।

हे श्रीनिवास, यह वह स्थान है जहाँ प्रभु ने ग्वाल बाल के रूप में लीलाऐं रचाईं। जब श्रीगौरहरि को अपनी गऊओं का स्मरण हुआ तो अचानक वे, 'साँवली, साँवली, धवली, धवली' पुकारने लगे, जो कि श्रीकृष्ण की दो प्रिय गायों के नाम थे। तब उन्होंने अपनी छड़ी से गायों को नियंत्रित करने के इशारे किए जिसे रामा, सुन्दरानन्द और श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अति प्रसन्न होकर देखा।

एक दिवस प्रभु बाहर गए और नदिया की गलियों में भिक्षा मांगते हुए निवेदन करते, 'मुझे कुछ दे दो। मुझे कुछ दे दो।' हालांकि यह कभी-कभी लोगों को कठिनाई में डाल देता, कोई भी मना करने के योग्य नहीं था।

पुष्प एवं जल केलि

एक दिवस पुष्प उद्यान को देखकर प्रभु पुष्पों के साथ लीला का आनन्द लेना चाहते थे। उन्होंने कुछ पुष्प उठाए और अपने भक्त जनों के शीश पर फैंकने आरम्भ कर दिए और उत्तर में भक्त जनों ने उनके शीश पर पुष्प फैंके।

एक दिवस श्रीविश्वम्भर और श्रीगदाधर पंडित एक पुष्प उद्यान में बैठे थे और शतरंज खेलने में अति मग्न हो गए। अगले दिवस गंगा के तट पर जल में प्रभु और उनके पार्षद प्रसन्नतापूर्वक एक-दूसरे के ऊपर जल फैंकने लगे।

हे श्रीनिवास एक दिवस गंगा जी के तट पर प्रभु ने अपने पार्षदों के संग वनभोज का आनन्द लिया। श्रीवास पंडित और मुरारी गुप्त ने अनेक प्रकार का समान एकत्र किया और श्रीअद्वैत आचार्य ने सभी को प्रत्येक के सामने चावल से भरा एक पत्तल रख कर एक वृत्ताकार में बैठने का निर्देश दिया। प्रथम चैतन्य महाप्रभु ने भोजन आरम्भ किया और तब प्रत्येक ने भोजन आरम्भ किया।

स्वयं अपने हाथों से श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीगौरचन्द्र प्रभु को मिष्ठान और अन्य व्यंजन खिलाए। उसी समान श्रीअद्वैत आचार्य ने भी श्रीनित्यानन्द प्रभु को खिलाया। तब निताई ने श्रीअद्वैत आचार्य के संग मिष्ठान का आदान-प्रदान का

एक दूसरे को खिलाया। भक्त जनों ने प्रसन्नतापूर्वक इस प्रेमपूर्वक आदान-प्रदान को देखा स्वयं एक-दूसरे को प्रेमपूर्वक मिष्ठान और विविध प्रकार के प्रसाद खिलाए। खाने के पश्चात सभी भक्त जनों ने गंगा का शीतल पावन जल ग्रहण किया।

हे श्रीनिवास, श्रीगौरचन्द्र की इच्छा से सभी छः ऋतुऐं वहाँ नदिया में प्रत्यक्ष थी। वर्षा ऋतु को सुहावना बनाने के लिए प्रभु एक झूले पर चढ़ गए और झूलन-यात्रा रचाने लगे। जब प्रभु गंगा के निकट अपने झूले पर बैठे, श्रीगदाधर पंडित, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और अन्य जनों ने झूलन के गीत गाए। जब प्रभु झूले पर बैठे, प्रभु के सौन्दर्य ने हर किसी का चित्त चोरी कर लिया। कुछ समय बाद भक्त जनों ने प्रभु को अपने झूले से नीचे उतरने में सहायता की और उन्हें एक वृक्ष के नीचे पधराया। प्रभु का निवास वृक्ष के नीचे देख निताई आनन्दतिरेक के भावों से भर उठे और रोना आरम्भ कर दिया। श्रीअद्वैत आचार्य ने उल्लास में गर्जना की जबकि श्रीश्रीवास और अन्यों ने प्रभु को विविध प्रकार के व्यंजन निवेदन किए। श्रीगौरहरि ने सर्वप्रथम अपने भक्त जनों में प्रसाद वितरण किया और फिर स्वयं पाया।

होली

बसन्त के दौरान नदिया में वृक्ष पुष्पों से लद गए और कोयल मधुरता से गाने लगीं, मन्द मन्द पवन बहने पर भँवरे पुष्पों के मध्य संतोषपूर्वक गुंजन करने लगे। गंगा के तट पर निमाई ने अपने पार्षदों के संग होली उत्सव खेला। उन्होंने पुष्पों का पराग एकत्र किया और मुस्कुराते हुए प्रभु के तन को उसमें लिप्त कर दिया। निमाई ने अपने भक्तजनों के तन पर भी लाल गुलाल लगा दिया। श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रीश्रीवास पंडित और अन्यों ने भी एक-दूसरे पर लाल रंग गुलाल डालना आरम्भ कर दिया। इतने सुन्दर दृश्य को देख देवतागण भी इस आनन्द में सहभागिता करने के लिए अधीर हो उठे। अपनी पिचकारियों को रंगीन जल से भरते हुए श्रीनरहरि, श्रीश्रीवास, श्रीमुरारी और अन्यों ने प्रभु के तन पर छिड़कना आरम्भ कर दिया। श्रीवक्रेश्वर और अन्य भक्तों ने गायन आरम्भ कर दिया जबकि संजय और विजय ने मृदंग और करताल वादन आरम्भ कर दिया। नदिया के सभी वासी श्रीचैतन्य महाप्रभु और उनके पार्षदों की सुन्दर होली लीला का दर्शन करने के लिए उस स्थान की ओर दौड़ पड़े।

श्रीगौरसुन्दर, श्रीवास पंडित के आवास का द्वार बन्द कर लेते ताकि वे स्वयं को संकीर्तन में गहरे डुबा सकें। उस समय वहाँ पर गोपाल चापाल नाम का दुष्ट व्यक्ति था, जो कि सदैव श्रीवास पंडित को कुछ नुकसान पहुँचाने के बारे में चिन्तन करता रहता था। एक रात्रि श्रीवास की निन्दा करने की साजिश

करते हुए उसने कुछ मदिरा की बोतलें, सिन्दूर और ऐसी कुछ अन्य वस्तुएं श्रीवास पंडित के द्वार पर रख दीं और गृह वापिस लौट आया। प्रातः जब श्रीवास ने वह वस्तुएं देखी तो उन्होंने वह अन्य भक्तजनों को दिखाई और उस स्थान की सफाई की जहाँ वे रखी हुई थीं। इस अप्रिय घटना के कारण गोपाल चापाल को दो या तीन दिवस में ही कुष्ठ रोग हो गया। श्रीवास जो कि अति दयालु भक्त थे, गोपाल चापाल को कष्ट में देखना सहन नहीं कर सकते थे तो उन्होंने उसके स्वास्थ्य को पहले जैसा करके उन पर अपनी करुणा बरसा दी।

ब्राह्मण ने शाप दिया

एक दिवस जब श्रीचैतन्य महाप्रभु संकीर्तन करने में मग्न थे, एक ब्राह्मण श्रीवास पंडित के निवास पर आया परन्तु उसका प्रवेश न होने दिया गया। प्रभु द्वारा संकीर्तन के दर्शन की उम्मीद पूर्ण न होने पर उसे निराशा हुई और इस कारण उसे हताश होकर अपने निवास पर वापिस लौटना पड़ा। उसके कुछ समय पश्चात् ब्राह्मण की गंगा जी के तट पर विश्वम्भर से भेंट हुई। उसने क्रोध में प्रभु के तन से पवित्र यज्ञोपवीत तोड़ दिया और उन्हें अभिशाप दिया कि वे कभी भौतिक संसार में पारिवारिक सुख का अनुभव नहीं कर सकेंगे। ब्राह्मण का अभिशाप सुनकर श्रीगौरहरि आनन्द मग्न हो गए। स्नान पूर्ण कर अपने निवास पर वापिस लौट आए।

मेरे प्रिय श्रीनिवास, प्रभु और उनके पार्षद इस स्थान पर संकीर्तन करते हुए उल्लसित हो नृत्य करते थे। नदिया के लोग श्रीचैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन के सुमधुर स्वर का श्रवण करने मात्र से अपने सभी कष्ट भूल जाते थे। जब प्रभु नृत्य आरम्भ ही करने वाले होते, उनके पार्षद उन्हें भूषणों, पुष्पों, चन्दन लेप और पुष्प माला से शोभित करते। आनन्दातिरेक में नृत्य करते हुए प्रभु उच्चस्वर में श्रीकृष्ण नाम पुकारते और निरंतर रोते रहते। सभी भक्तजन और दर्शक भी भगवान् श्रीहरि के नाम का उच्चस्वर में जप करते हुए उनके साथ रोने लगते थे।

संकीर्तनावेश

कभी-कभी संकीर्तन करते हुए श्रीगौरहरि अचेत होकर गिर जाते और भक्त जन उनकी चेतना वापिस लाने के लिए उनके कानों में पावन नामों का उच्चस्वर में उच्चारण करते। एक दिवस श्रीवास पंडित के निवास में अद्वैत आचार्य ने गोपी के भाव में नृत्य आरम्भ कर दिया और वे इतने उल्लसित हो गए कि स्वयं को रोक न सके। यद्यपि भक्तजन पुनः-पुनः श्रीअद्वैत आचार्य को रुकने के लिए निवेदन करते, किन्तु वे उनके शब्दों पर कोई ध्यान न देते थे। अद्वैत आचार्य के भावों को जानकर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें एक कक्ष में ले जाकर, द्वार बन्द कर उन्हें बैठाने के पश्चात् शांत किया। उस कक्ष में श्रीगौरहरि

ने श्रीअद्वैत आचार्य के समक्ष अपना सार्वभौमिक अवतार उजागर किया। संयोग से उस समय श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उस कक्ष में प्रवेश किया और उन्होंने और श्रीअद्वैत आचार्य ने विस्मित होकर प्रभु के असाधारण स्वयं प्रकटीकरण को निहारा।

श्रीवास पुत्र की मृत्यु

एक दिवस जब प्रभु और उनके पार्षद उल्लसित भाव में संकीर्तन करने में मग्न थे, श्रीवास ठाकुर का पुत्र जो कि अस्वस्थ था, अचानक उसकी मृत्यु हो गई। श्रीवास ने अपनी पत्नी और परिवार के अन्य सदस्यों को दु:ख व्यक्त करने से मना कर दिया क्योंकि यह श्रीचैतन्य महाप्रभु को बाधित कर सकता था। यद्यपि सर्वोच्च प्रभु श्रीगौरहरि यह समझ सकते थे कि क्या घटित हुआ है और अपनी अचिन्त्य क्षमता से उन्होंने मृत बालक को मनुष्य जीवन के सत्य के बारे में बोलने का निमित्त बनाया। इस प्रकार श्रीवास के परिवार के सभी सदस्य उस कष्ट को भूलने में समर्थ हुए और वे सब प्रभु के चरण कमलों में प्रणाम करने को झुक गये। श्रीगौरहरि ने प्रेमपूर्वक श्रीवास को कहा, 'इसके पश्चात् मैं और नित्यानन्द तुम्हारे दो पुत्र होंगे।' यह स्नेहमय शब्द सुनकर हर किसी ने श्रीचैतन्य महाप्रभु का अभिनन्दन करना आरम्भ कर दिया। कुछ समय पश्चात् श्रीगदाधर पंडित के संग श्रीगौरहरि अपने निवास पर वापिस लौट आए।

एक दिवस श्रीवास पंडित के निवास पर श्रीचैतन्य महाप्रभु ने एक मुस्लिम दर्जी पर अपना अनुग्रह बरसाया। वह दर्जी श्रीवास के निवास के निकट ही रहता था और उनके लिये वस्त्र तैयार किया करता था। प्रभु ने अपने चतुर्भुज नारायण अवतार को दर्जी के समक्ष उजागर किया, जिसने, 'मैंने दर्शन कर लिए! मैंने दर्शन कर लिए!!' चिल्लाते हुए आनन्दातिरेक में नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

एक दिवस प्रभु श्रीशुक्लाम्बर के निवास पर गए और उनसे चावल की मांग की। श्रीशुक्लाम्बर ने प्रसन्नतापूर्वक चावल दे दिए और इसके बाद उन्हें पान निवेदित किया। भोजन के पश्चात प्रभु ने विश्राम किया।

एक बार ग्रन्थकार श्री विजय, जो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्त थे, उन्होंने प्रभु के हाथ में कुछ देखा परन्तु उनके आदेश पर उन्होंने किसी को नहीं बताया। यद्यपि बाद में वे कुछ व्यग्र से हो गए और सात दिवस तक नदिया में लक्ष्यविहीन होकर विचरण करते रहे।

विभिन्न भाव एवं आवेश

एक दिवस श्रीशुक्लाम्बर के निवास पर प्रभु ने अचानक मांग की, 'शहद लाओ। शहद लाओ।' जब चैतन्य महाप्रभु आनन्दतिरेक में हलधर के भाव में

मग्न थे, नित्यानन्द प्रभु उनके लिए पात्र भर कर गंगा जल ले आए। अपनी वृन्दावन लीलाओं का स्मरण करते हुए श्रीचैतन्य महाप्रभु ने नृत्य करना आरम्भ कर दिया और तब उन्होंने श्रीवास से मांग की कि उनकी वंशी ले आएं। यद्यपि श्रीवास ने कहा, 'एक गोपी ने आपकी वंशी चोरी कर ली है।' यह सुनकर प्रभु ने क्रोध में कहा, 'और बोलो, और बोलो।' और इस कारण श्रीवास ने कृष्ण की वृन्दावन लीला का व्याख्यान आरम्भ कर दिया। तत्पश्चात् प्रभु ने हृदय से श्रीवास पंडित का आलिंगन कर लिया।

एक दिवस नृसिंह प्रभु के भाव में मग्न होकर श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने हाथ में दण्ड पकड़ के निन्दकों का वध करने के लिए दौड़े और इस कारण लोग भयभीत होकर भागने लगे। अपनी बाह्य चेतना लौटने पर प्रभु ने श्रीवास पंडित के समक्ष अपना दण्ड गिरा दिया।

प्रभु को सब प्रकार की दयालुता का धाम बताते हुए, जिन्होंने केवल श्रीकृष्ण के प्रेम को आपदाग्रस्त मानव जाति में वितरण करने के लिए एवं जीवों को उनके पापयुक्त, कष्टदायक जीवन से मुक्ति प्रदान करने के लिए अवतार लिया था, नरहरि ने उनका स्मरण करते हुए, उनके लिए कुछ भजन लिखे। पूर्व में अपने अवतार में, जैसे कि श्रीराम के रूप में प्रभु ने राक्षसों का वध किया था इस अवतार में उन्होंने लोगों की नास्तिक भावना को नष्ट किया और उन्हें उच्चकोटि के वैष्णवों में परिवर्तित कर दिया। श्रीचैतन्य महाप्रभु की जय जयकार हो।

संन्यास लीला

हे श्रीनिवास, निमाई स्वयं सर्वोच्च प्रभु हैं और केवल उनके भक्तजन ही उनके विचारों को समझ सकते हैं। उनके कुछ भक्तजनों ने उनके असामान्य व्यवहार के कारण क्षुब्ध होना आरम्भ कर दिया। परस्पर एक-दूसरे से चर्चा करते हुए किसी ने कहा, मुझे लगता है प्रभु के मन में कुछ अनूठा विचार चल रहा है।

किसी अन्य ने कहा, 'उस दिवस से जब से निमाई क्रोधित हुए थे और अपने छात्र को छड़ी से मारना चाहते थे, वे तब से अजीब सा व्यवहार कर रहे थे। मुझे भय है कि वे शीघ्र ही संन्यास ग्रहण करने के बारे में विचार कर रहे हैं। एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'यहाँ तक कि श्रीनित्यानन्द प्रभु भी यही चिन्तन कर रहे हैं।' इस प्रकार बोलते हुए भक्तजन श्रीमुकुन्द दत्त के निवास पर आ गए और उन्हें व्यग्र अवस्था में बैठे पाया। आगे वे श्रीगदाधर पंडित के निवास पर गए और उन्हें भी उसी अवस्था में पाया। वहाँ से वे श्रीवास पंडित के निवास पर गए और उन्हें बुरी तरह रोते हुए पाया।'

श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीवास पंडित के निवास पर आए। उन्हें देखकर भक्तजन अपना कष्ट न छिपा सके। प्रभु ने कुछ देर अपने पार्षदों से वार्तालाप किया परन्तु वे उनके विचारों को शांत करने में असफल रहे। तब उन्होंने मधुरता से उनसे कहा, 'मानव जाति की मुक्ति के लिए मुझे अवश्य ही संन्यास स्वीकारना चाहिए। अधीर मत हो, मैं तुम्हारा त्याग नहीं करुँगा। मैं जन्म-जन्म तुम्हारे संग रहूँगा।' प्रभु के मधुर वचनों ने भक्तजनों को कुछ शांत किया। तब प्रभु ने उनमें से प्रत्येक का आलिंगन किया और अपने निवास पर वापिस लौट आए।'

शचीमाता बेसुध

उसी समय शची माता को अपने पुत्र के निर्णय के बारे में ज्ञात हुआ। अत्यधिक खिन्न होकर वे अचेत हो भूमि पर जा गिरीं। सचेत होने पर उन्होंने अपने पुत्र के विचार को परिवर्तित करने के लिए हर युक्ति अपनायी। यह जानकर कि उनकी माता का जीवन दांव पर है, प्रभु उन्हें एकान्त स्थान पर ले गए और उन्हें समझाया कि कैसे वे उनके पूर्व के सभी अवतारों में उनकी माँ थीं और कैसे इस जीवनकाल में वे उत्तमोत्तम संकीर्तन का आस्वादन करने के लिए सौभाग्यशाली हैं। निमाई ने अपनी माता को बताया, 'मैं दो बार और आप के गर्भ से जन्म लूँगा और संकीर्तन में मग्न होऊँगा। आप सदा सर्वदा से मेरी माँ थीं और जन्म-जन्म मेरी माँ रहोगी और मैं अनन्तकाल तक तुम्हारा पुत्र रहूँगा।' यद्यपि शची माता ने अपने भावों पर नियंत्रण करने का अत्यधिक प्रयास किया परन्तु वे अपने नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं को न रोक सकीं। प्रभु ने विष्णुप्रिया को भी विविध प्रकार से सान्त्वना दी। उन्हें शांत करके प्रभु ने गृह त्याग दिया और संकीर्तन करने चले गए।

कुछ ही समय में सभी भक्तजन कीर्तन में मग्न हो गए ताकि उनके चित्त से व्यथा और अधीरता धुन्धला सके। क्योंकि अब नदिया की सुहावनी ऋतु का अन्त होने वाला था।

नदिया के इस रूपांतरण का नरहरि ने एक भजन में सुन्दर तरीके से वर्णन किया है, 'जब श्रीगौरहरि ने नदिया से प्रस्थान किया, जाह्नवी की लहरों ने नृत्य करना बन्द कर दिया। वृक्ष पर अब बहार नहीं आती, पुष्पों ने अपनी सुगन्ध खो दी है। भंवरों ने पुष्पों पर बैठकर पराग चूसना बन्द कर दिया है। कोयल ने कूकना बन्द कर दिया है व मोरों ने नृत्य करना बन्द कर दिया है। तोतों ने भी रोना आरम्भ कर दिया था और उड़ते नहीं थे। गायों ने चरना बन्द कर दिया और पशुओं ने शिकार करना बन्द कर दिया था। नरहरि ने कहा, 'नदिया वासियों के चित्त से सब प्रकार का आनन्द चला गया।'

संन्यास की सूचना गोपनीय

हे श्रीनिवास, प्रभु ने अपनी इच्छा से ही अपने संन्यास ग्रहण करने की योजना किसी को नहीं बताई। प्रस्थान करने से एक दिवस पूर्व वे संकीर्तन में मग्न हो गए। वे एक दिव्य सिंहासन पर बैठ गए, उनका तन पूर्ण रूप से शोभित था और उनके कण्ठ से एक पुष्प माला लटक रही थी। यहाँ तक कि देवता भी उनकी उत्कृष्ट सुन्दरता और सुन्दर घुँघराले केशों के दर्शन करने के लिए, आकाश से वहाँ खिंचे चले आए। देवतागण और सभी भक्तजन श्री गौरचन्द्र के चरणकमलों में प्रणाम स्वरूप झुके। सभी की ओर मुस्कुराते हुए प्रभु ने अपनी माला अपने सभी पार्षदों में वितरित कर दी। उनका प्रसाद ग्रहण कर भक्तजन, 'हरि! हरि!' बोलने लगे। प्रभु ने सबको समझाया कि यदि वे वास्तव में उन्हें प्रसन्न करना चाहते हैं तो उन्हें सदैव कृष्ण की महिमा का गान करना चाहिए।

जब श्रीगौरहरि भक्तजनों को इस प्रकार निर्देशित कर रहे थे, श्रीधर एक विशाल फल-रस-पात्र के संग उनके निकट आए। प्रभु ने चिन्तन आरम्भ कर दिया, अभी सन्ध्या नहीं हुई है फिर भी कल मैं प्रस्थान करूँगा। मैं अपने भक्तजनों से उपहार को कैसे मना करूँ? तब एक अन्य व्यक्ति प्रभु को दूध का पात्र निवेदन करने लाया। निमाई ने अपनी माता को दूध के साथ पेय बनाने को कहा। अति देखरेख से शची माता ने शाक सब्जी पकाई और सर्वप्रथम उसे श्रीकृष्ण को निवेदित किया फिर अपने पुत्र को पाने को दिया।

उस रात प्रभु की इच्छा से विश्वम्भर के सभी अनुचर और परिवार के सभी सदस्य गहरी निद्रा में सो गए। केवल प्रभु नहीं सोए। प्रातःकाल जब हर कोई गहरी निद्रा में था, निमाई ने अपनी माँ के चरणों की धूल ली और गृह के बाहर निकल गए।

जैसे ही कोई नींद से जागा और पाया कि प्रभु चले गए हैं, तो वहाँ केवल विलाप करते हुए रोने के स्वर के अतिरिक्त एक शब्द भी नहीं सुनाई पड़ा।

शची माता अपनी दहलीज पर बैठी, जिस मार्ग से उनके पुत्र ने प्रस्थान किया था, उस मार्ग की ओर निहारते हुए एक विक्षिप्त सी लगने लगीं। प्रभु के प्रस्थान से अनभिज्ञ, अन्य भक्तजन प्रातःकाल उनसे भेंट करने आए। यद्यपि शची माता की दयनीय अवस्था देखकर वे तत्क्षण समझ गए कि क्या घटना घटित हुई है। 'हे प्रभु आप कितने निर्दयी हो। यह कहकर भक्तजन भूमि पर जा गिरे और निर्झर अश्रुपात करने लगे।'

यहाँ इस स्थान पर अद्वैत आचार्य विविध प्रकार से विलाप करते हुए रोने लगे, 'हे विश्वम्भर! हे प्रभु! हे प्रेम के सिन्धु! हे मानव जाति को मुक्ति देने वाले! हे सभी दिव्य गुणों के स्वामी! हे भक्तजनों के रक्षक! हे भक्तजनों के

प्राण! आप सभी दिशाओं को अन्धकारमय और रिक्त कर हमें क्यों छोड़ गए? हमने क्या अपराध किया था?'

वैष्णवजन की दशा

श्रीवास पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और अन्य भक्तजन भूमि पर गिरकर असहाय होकर रोने लगे। नदिया के वासी इतनी व्याकुलतापूर्वक रोने लगे कि भूमि उनके अश्रुओं से दलदल हो गई। यहाँ तक कि दुष्ट और नास्तिक लोग भी विलाप करने लगे कि वे विश्वम्भर की महानता को नहीं पहचान सके परन्तु कोई भी शान्त नहीं किया जा सका। हर कोई निराशा के अथाह सागर में डूब गया।

हे श्रीनिवास, मैं भी अपने भीतर जलती हुई अग्नि को बाहर नहीं निकाल सकता। विश्वम्भर ने अकेले कन्टकनगर की यात्रा की और श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीगदाधर पंडित, श्रीमुकुन्द दत्त और श्रीचन्द्रशेखर उन्हें वापिस लाने के लिए उनके पीछे दौड़ पड़े। इसी कालावधि में श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रस्थान और संन्यास ग्रहण करने का हृदय विदारक समाचार नदिया के हर गृह में फैल गया।

माघ मास में पूर्णिमा के दिवस पर अति शुभ समय पर, **बीस वर्ष** की अवस्था में प्रभु ने **श्रीकेशव भारती** से संन्यास ग्रहण कर उन पर अपनी अनुकम्पा बरसाई। तत्पश्चात् प्रभु ने कन्टकनगर से प्रस्थान किया। जब श्री चन्द्रशेखर आचार्य नदिया वापिस लौटे, उन्होंने पाया कि भक्तजनों ने प्रभु से विरह के कारण व्यावहारिक रूप से मानों अपने प्राण त्याग दिए हैं।

फिर भी उन्होंने उत्सुकतावश चन्द्रशेखर से प्रभु की गतिविधियों की सम्पूर्ण जानकारी देने का निवेदन किया। ऐसा करने के पश्चात् श्रीचन्द्रशेखर, माता शची से भेंट कर, उनके पुत्र के कुशलक्षेम के बारे में उन्हें बताने लगे। श्रीअद्वैत आचार्य और अन्य भक्तजन कष्ट से और व्यथा से भावविभोर हो गए, जब उन्होंने प्रभु के संन्यास ग्रहण करने के बारे में सुना।

इसी दौरान श्रीचैतन्य महाप्रभु ने राढ़-देश की भूमि को आशीष दिया और जब वे कुलिया ग्राम के निकट पहुंचे, उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु को नदिया वापिस भेज दिया। नदिया आकर श्रीनित्यानन्द प्रभु सर्वप्रथम चैतन्य महाप्रभु के निवास पर गए, जहाँ उन्होंने शची माता को बारह दिवस के उपवास के बाद क्षीण अवस्था में पाया। निताई प्रणाम स्वरूप उनके चरणकमलों में झुके और शची माता व्याकुल होकर रो पड़ी, 'हे मेरे पुत्र, मेरे पास आ जाओ।' और अचेत होकर भूमि पर जा गिरीं। निताई ने प्रत्येक को बताया, 'मैं तुम सबको प्रभु के दर्शन करवाने, अपने साथ ले जाने आया हूँ। मुझे यहाँ भेजकर वे कुलिया चले गए हैं। जिसके पश्चात् वे शान्तिपुर जाएंगे।' हर किसी ने थोड़ी शान्ति का अनुभव किया और यह सुनकर प्रसन्न हो गए, तथा उनमें चेतना और उत्साह वापिस लौट आया।

जब श्रीनित्यानन्द प्रभु ने शची देवी से अपने और अन्य भक्तों के लिए कुछ पकाने का निवेदन किया, तो वे अति द्रवित हो गईं। वे प्रसन्नतापूर्वक रसोई घर में गईं और विविध प्रकार के व्यंजन बनाने आरम्भ कर दिए। शची माता ने सब कुछ सर्वप्रथम भगवान् श्रीकृष्ण को निवेदित किया और तत्पश्चात् निताई को परोसा। निताई के पश्चात् उन्होंने भक्तजनों को परोसा और तब उन्होंने अपने व्रत का पारण किया। विष्णुप्रिया देवी ने भी कुछ भोजन लिया और इसने सभी वैष्णव जनों को अति प्रसन्न कर दिया।

शची को शान्तिपुर में मिले

भक्तजनों ने अति उत्सुकता से तत्क्षण अपनी यात्रा की तैयारी आरम्भ कर दी। निन्दक और नास्तिकों सहित नदिया के सभी वासी गम्भीरता पूर्वक प्रभु के चरणकमलों का आश्रय प्राप्त करने की आशा रखते हुए वैष्णवजनों के साथ यात्रा पर गए। प्रभु के दर्शन को जाते हुए असंख्य भक्तजनों की भीड़ से श्रीनवद्वीप, कुलिया और शान्तिपुर के सभी मार्ग भर गए। श्रीगौरचन्द्र के अति निकट पार्षद शची माता को शान्तिपुर ले आए।

इस दौरान किसी ने सभी को सूचित कर दिया कि प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य के निवास पर पहुँच चुके हैं।''यह सुनकर हर कोई श्रीअद्वैत आचार्य के निवास की ओर दौड़ा।

हे श्रीनिवास, मैं उस दृश्य का वर्णन कैसे करूँ जब शची माता, श्रीअद्वैत आचार्य के निवास पर पहुँचीं? शची माता ने जो भाव अनुभव किए उन्हें कौन समझ सकता है या वर्णन कर सकता है? उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक अपने पुत्र को अपनी गोद में उठाया और तब उनके लिए अनेक व्यंजन पकाए। सभी भक्तजनों ने प्रभु को घेर लिया और संकीर्तन आरम्भ कर दिया। इसके पश्चात् तीनों प्रभु ने पंक्ति में अपना आसन ग्रहण किया।

हे श्रीनिवास, भोजन समाप्त करने के पश्चात्, प्रभु के आदेश पर हर कोई-पुरुष, महिलाएं, बच्चे और वृद्धजनों ने संकीर्तन और नृत्य करना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा मुक्त रूप से भगवान् श्रीकृष्ण का प्रेम और समर्पण हर किसी में वितरण करने के कारण श्रीअद्वैत आचार्य का निवास वैकुण्ठ में परिवर्तित हो गया। इसके पश्चात् प्रभु ने श्रीवास पंडित, श्रीमुरारी गुप्त और अन्य भक्तजनों को मधुर स्वर में सांत्वना दी। उन्होंने अपनी माता को भी शांत किया और उन्हें वापिस श्रीनवद्वीप भेज दिया। हर किसी को सांत्वना देने के बाद श्रीकृष्ण चैतन्य, श्रीनित्यानन्द प्रभु और कुछ अन्य पार्षदों के संग शान्तिपुर से प्रस्थान कर नीलाचल चले गए।

हे श्रीनिवास अनेक स्थानों की यात्रा करने के पश्चात् श्रीचैतन्य महाप्रभु नीलाचल में रह गए और श्रीनित्यानन्द प्रभु को कुछ गोपनीय चर्चा करने के

पश्चात् वापिस बंगाल भेज दिया। श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअभिराम ठाकुर, श्रीगदाधर दास और अन्यों के संग बंगाल चले गए। इस यात्रा के दौरान श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अनेक लोगों को उनके पाप और कष्ट युक्त जीवन से मुक्ति प्रदान की।'

श्रीनित्यानन्द अभिषेक

श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षद सर्वप्रथम पानीहाटी गांव गए। उनके आगमन पर श्रीराघव पंडित और अन्य भक्तों ने अति प्रसन्नता से उनका स्वागत किया। जब श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षदों ने संकीर्तन रचाया तो श्रीराघव पंडित के निवास के अद्भुत वातावरण का वर्णन कौन कर सकता है? श्रीनिताईचाँद ने अति सुन्दरता से नृत्य किया, आनन्द में रोते हुए अपने हाथ ऊपर उठाकर निरंतर श्रीगौरचन्द्र के नाम का उच्चारण किया। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने प्रभु की आध्यात्मिक सेवा का अनमोल रत्न उन्हें प्रदान करते हुए, मुक्त रूप से अपनी करुणा संतप्त आत्माओं पर बरसाई। उस समय श्रीनित्यानन्द प्रभु के अभिषेक का महोत्सव मनाया गया।

श्रीनित्यानन्द प्रभु के कुछ पार्षदों ने उन्हें दिव्य सिंहासन पर पधराया और उन्हें सुगन्धित गंगा जल से स्नान करवाया जबकि अन्य भक्तों ने मधुर स्वर में गायन किया। श्रीनरहरि, श्रीनित्यानन्द प्रभु के लिए नवीन वस्त्र लेकर आए, उनके तन पर चन्दन लेप लगाया और उनके कण्ठ में पुष्प माला पहनाई जबकि राघव पंडित ने उनके शीश पर छत्र धारण कराया।

कदम्ब पुष्प बिना मौसम

नित्यानन्द प्रभु ने श्री राघव को बताया, 'मैं कदम्ब के पुष्पों की माला धारण करना चाहूँगा।' श्रीराघव ने उत्तर दिया, 'परन्तु यह कदम्ब की ऋतु नहीं है।' तब नित्यानन्द प्रभु ने एक वृक्ष की ओर इंगित किया और कहा, 'उस वृक्ष के पास जाओ और निश्चय ही तुम्हें कदम्ब के पुष्प प्राप्त होंगे।' श्रीराघव पंडित उस वृक्ष के निकट गए और आश्चर्यचकित होते हुए, उन्होंने वहाँ कदम्ब वृक्ष को पुष्पित पाया। श्रीराघव पंडित ने प्रसन्नतापूर्वक अनेक कदम्ब पुष्प एकत्र किए, एक माला बनाई और श्रीनित्यानन्द प्रभु के कण्ठ में डाल दी। तब श्रीनित्यानन्द प्रभु ने सभी को सदैव भगवान् श्रीकृष्ण की उपासना करने का सुझाव दिया।

एक दिवस श्रीनित्यानन्द प्रभु ने आभूषण धारण करने की अपनी कामना व्यक्त की और उनके पार्षद प्रसन्नतापूर्वक उनके लिए सुन्दर आभूषण ले आए और उन्हें कोमलता पूर्वक शोभित किया। इस कामना के पीछे प्रयुक्त कारण था कि जब एक बार श्रीनित्यानन्द प्रभु अवधूत के रूप में सम्पूर्ण ब्रज में भ्रमण कर रहे थे, उन्होंने गोवर्धन में एक भक्त पर अनुकम्पा बरसाई। वह भक्त श्रीनित्यानन्द

प्रभु को कुछ भूषणों से शोभित करना चाहता था तब प्रभु ने उसे कहा था, 'अभी नहीं।' इस प्रकार अपने भक्त की कामना पूर्ण करने के लिए श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अब अपने अनुचरों को उनके लिए **स्वर्ण मण्डित गोवर्धन-शिला** का निर्माण करने को कहा, जिसे वे अपने कण्ठ में धारण करेंगे। कौन श्रीनित्यानन्द प्रभु की लीला को समझ सकता है?

कुछ दिवस प्रसन्नतापूर्वक पानीहाटी में व्यतीत करने के पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु ने शची माता से भेंट करने के लिए श्रीनवद्वीप के लिए प्रस्थान किया। अपने अनुचरों के संग सर्वप्रथम वे श्रीगदाधर दास के निवास पर गए। श्रीगदाधर दास पर अपनी अनुकम्पा बरसाने के साथ श्रीनित्यानन्द प्रभु ने उस गांव के दुष्ट काजी का मान मर्दन करके उस पर भी अनुकम्पा बरसाई।

तत्पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु अपने आभूषण वाले वेश में प्रेम के देवता काम से भी अधिक सुन्दर लगते हुए, अपने पार्षदों के संग खरदह पहुँचे। एक अच्छे भजन में नरहरि ने वर्णन किया है कि कैसे श्रीनित्यानन्द प्रभु ने अपने तेजस्वी लक्षणों से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मदमस्त कर दिया था। उनका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान था, उनके तन की आभा ने सूर्य की चमकदार किरणों को मानो एकत्र कर लिया हो, और उनकी भुजाऐं सुन्दरता से उनके घुटनों तक पहुँच रही थीं। वे अपने नेत्रों से आनन्दातिरेक में प्रेमाश्रु बहाते हुए निरंतर पावन नाम, 'गौर, गौर' का जप कर रहे थे।

श्रीपुरन्दर पण्डित

खरदह में श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीपुरंदर पंडित के मन्दिर में वास किया और संकीर्तन में नृत्य और जप करके हर किसी को अनमोल अध्यात्म रूपी आभूषण का वितरण किया। श्रीपुरंदर, श्रीचैतन्य दास और श्रीमुरारी गुप्त, श्रीनित्यानन्द प्रभु को नृत्य करता देख आनन्दातिरेक में व्याकुल हो उठे।

कुछ दिन खरदह में व्यतीत करने के पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु सप्तग्राम में उद्धारण दत्त के निवास पर गए। नित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षदों का सान्निध्य प्राप्त कर श्रीउद्धारण दत्त अति सौभाग्यशाली व्यक्ति बन गए थे। जब सप्तग्राम के वासियों को श्रीनित्यानन्द प्रभु के आगमन के बारे में ज्ञात हुआ, वे उनसे भेंट करने के लिए दौड़ पड़े। श्रीनित्यानन्द प्रभु आनन्दातिरेक में संकीर्तन में मग्न हो गए जिससे उद्धारण दत्त का निवास दिव्य प्रसन्नता से भर गए। हर कोई उच्चस्वर में, 'हरिबोल! हरिबोल!' जप करने लगा। सप्तग्राम के वासियों को नित्यानन्द प्रभु से ऐसी अनुकम्पा प्राप्त हुई कि उनके चरणकमलों में उनका विश्वास दृढ़ हो गया।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने तब श्रीउद्धारण दत्त को सूचित किया कि वे शीघ्र ही श्री अद्वैत आचार्य से भेंट करने शान्तिपुर जाएंगे। वे ही थे जो श्रीकृष्ण चैतन्य

को इस विश्व में लाए थे। उनकी महिमा सबके द्वारा मान्य है। यद्यपि श्रीअद्वैत आचार्य, प्रभु के आंशिक विस्तार थे, वे स्वयं को प्रभु का सदैव दास मानते थे। वे वह व्यक्ति थे जो प्रेम और करुणा से परिपूर्ण थे कि वे श्रीगौरचन्द्र प्रभु को इस विश्व में प्रकट होने के लिए आकर्षित करने में समर्थ थे। सीता देवी के पति श्रीअद्वैत आचार्य, कभी अपने निवास पर अथवा अपने अनुचरों के निवास पर, कभी गंगाजी के तट पर और कभी किसी अन्य स्थान पर सदैव संकीर्तन में मग्न रहते थे।

वे संकीर्तन के अलावा और कुछ नहीं जानते थे और सदैव श्रीगौरचन्द्र की लीलाओं के चिन्तन में मग्न रहते थे।

जब श्रीनित्यानन्द प्रभु सप्तग्राम से शान्तिपुर पधारे और उन्होंने परस्पर एक-दूसरे को देखा, वे दोनों स्वयं के भावों पर नियंत्रण कर पाने में असमर्थ थे और दोनों प्रेम में रो पड़े। श्रीअद्वैत आचार्य के निवास पर चार दिवस व्यतीत करने के बाद श्रीनित्यानन्द प्रभु ने विदा होने की आज्ञा ली और श्रीनवद्वीप के लिए प्रस्थान किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो प्रस्थान करने से पूर्व श्रीअद्वैत आचार्य ने श्रीनित्यानन्द प्रभु से कुछ ऐसा कहा जिससे वे अर्थपूर्ण रूप से मुस्कुरा दिए। नदिया पहुँच कर श्रीनित्यानन्द प्रभु सर्वप्रथम श्रीगौरचन्द्र प्रभु के निवास पर गए।

श्रीनवद्वीप में श्रीनित्यानंद

शची माता अपने पुत्र की स्मृतियों में डूब कर अपने दिवस व्यतीत कर रही थीं। एक रात्रि उन्होंने विश्वम्भर के बारे में एक स्वप्न देखा जिसे उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक मालिनी को बताया। 'निमाई गृह पर आए और अपनी माता को पुकारते हुए यहाँ खड़े हो गए। मैं अपने कक्ष में सो रही थी परन्तु निमाई की आवाज सुनकर मैं बाहर आ गई। निमाई प्रणाम स्वरूप मेरे चरणों में झुके और रो पड़े, 'माँ तुम्हारे कारण मैं नीलाचल में रहने में असमर्थ था, तो मैं यहाँ आ गया।' मैंने तत्क्षण उसे अपनी गोद में उठा लिया परन्तु उसी समय मेरा स्वप्न धुँधला गया। इसके पश्चात् मैं सोने में असमर्थ रही और मैं सम्पूर्ण रात्रि रोती रही' यह कहने के पश्चात् शची माता अचेत हो भूमि पर जा गिरीं। कुछ समय पश्चात् शची माता ने विष्णुप्रिया को अपने पास बुलाया, उन्हें अपनी गोद में बिठाकर वह ये चिन्तन करते हुए फूट-फूटकर रोने लगी, 'निमाई गृह पर क्यों नहीं आए?' यदि वे वापिस आए तो पुनः मैं जाने नहीं दूँगी। मैं पुनः उन्हें देखकर कब कुछ शान्ति का अनुभव करूँगी।

लगभग इसी समय श्रीनित्यानन्द प्रभु, शची माता के निवास पर पधारे और उनके चरणकमलों में प्रणाम किया। शची माता ने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें अपनी गोद में बैठा लिया। उनके आदेश पर निताई ने श्रीनवद्वीप में वास करने का

निर्णय लिया। तब वे श्रीवास ठाकुर के निवास पर गए और उनसे व उनकी पत्नी मालिनी देवी से भेंट की। वहाँ श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षद अति आनन्द में संकीर्तन में मग्न हो गए।

कुछ लुटेरों ने श्रीनित्यानन्द प्रभु द्वारा धारण किए गए आभूषण चोरी करने का निर्णय किया परन्तु घटनाओं में आए अचानक मोड़ के कारण लूटने के स्थान पर उन्होंने प्रभु के चरणों का आश्रय ग्रहण किया।

श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षद गंगा के दूसरे छोर पर अनेक गांवों की यात्रा पर गए और शान्तिपुर से श्रीअद्वैत आचार्य उनके संकीर्तन दल में जुड़ गए। एक दिन श्रीवास ठाकुर के आवास पर श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षदों ने संकीर्तन करना आरम्भ कर दिया। कुछ भक्तजनों ने वाद्य यन्त्रों का वादन किया जबकि कुछ अन्य भक्तजनों ने कीर्तन आरम्भ कर दिया। श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीवास पंडित, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीगंगादास पंडित, श्रीगदाधर दास, श्रीअभिराम ठाकुर, श्रीसारंग, श्रीसुन्दर, श्रीमनोहर और श्रीविद्या वाचस्पति आदि, सभी ने नृत्य करना आरम्भ कर दिया। जो लोग अति सौभाग्यशाली थे, वे श्रीगौरचन्द्र प्रभु को श्रीनित्यानन्द प्रभु और श्रीअद्वैत आचार्य के मध्य नृत्य करते देख सकते थे। यह देखकर देवतागण, 'जय! जय!' का उद्घोष करने लगे।

श्रीनित्यानंद विवाह

श्रीअद्वैत आचार्य और अन्य लोग श्रीनित्यानन्द प्रभु के विवाह की चर्चा करने लगे। बड़गाछि ग्राम के हरिहोदा के सौभाग्यशाली पुत्र कृष्णदास, श्रीनित्यानन्द प्रभु का अति सम्मान करते थे और उनके विवाह का प्रबन्ध करना चाहते थे। उस समय सूर्यदास नाम के ब्राह्मण, जिन्होंने मुस्लिम राजा के दरबार में सेवा कर सरखेल उपाधि प्राप्त की थी, श्रीनवद्वीप में शालिग्राम के निकट वास करते थे। उनके चार अति धार्मिक पुत्र और वसुधा व जाह्नवा नाम की दो पुत्रियां थीं, जो अपनी सुन्दरता और अच्छे स्वभाव के लिए प्रसिद्ध थीं। श्रीसूर्यदास ने विद्वत् ब्राह्मणों से अपनी पुत्रियों के लिए अच्छे वर की खोज के लिए निवेदन किया, परन्तु वे उपयुक्त वर खोजने में असमर्थ रहे।

तब ब्राह्मणजनों ने सूर्यदास को यह कहकर कि श्रीहाड़ाई पंडित एक अच्छे व्यक्ति हैं और एक उच्चकोटि के नवयुवक श्रीनित्यानन्द प्रभु के पिता हैं, से भेंट करने राढ़-देश के एकचक्रा गांव में जाने को प्रेरित किया। एक अवधूत के रूप में श्रीनित्यानन्द ने अनेक पावन स्थानों की यात्रा की और एक विद्वान् के रूप में प्रसिद्ध हुए। अनेक तीर्थ स्थलों की यात्रा करने के पश्चात् वे नदिया पहुँचे, जहाँ उनकी भेंट श्रीगौरचन्द्र से हुई और उन्होंने अपनी भटकन को विश्राम देने का निर्णय लिया। ब्राह्मण ने समझाया कि कैसे श्रीनित्यानन्द, श्रीकृष्ण चैतन्य के

प्रिय पार्षद थे और इस प्रकार उनकी पुत्रियों के लिए वे ही सबसे उपयुक्त पति होंगे। उन्होंने सूर्यदास को यह भी बताया कि यदि श्रीनित्यानन्द प्रभु जैसे जमाई को प्राप्त करने में समर्थ हुए तो वे अपने सौभाग्य के लिए विधाता को धन्यवाद करेंगे।

श्रीसूर्यदास ने सावधानीपूर्वक सुना और बिना एक भी शब्द बोले अपने निवास पर वापिस लौट आए।

स्वप्नादेश

अपने विचारों में सम्भावनाओं से भरे सूर्यदास लेट गए और गहरी निद्रा में सो गए। अपने स्वप्न में उन्होंने स्वयं को, अपनी दो पुत्रियों को श्रीनित्यानन्द प्रभु के संग विवाह में सौंपते देखा। जब विद्वान् ब्राह्मण वैवाहिक मन्त्रोच्चार कर रहे थे, सूर्यदास ने अपनी पुत्रियों को श्रीनित्यानन्द को समर्पित कर दिया और देवतागणों ने आकाश से उनके शीश पर पुष्प वर्षा की। अपने जमाई को देखते हुए अचानक सूर्यदास को श्रीनित्यानन्द के स्थान पर अत्यधिक आकर्षक भगवान् श्रीबलराम के दर्शन हुए। उनका रूप-रंग रजत पर्वत के समान था, उनका मुख चन्द्रमा के समान प्रभावान था और उनका तन चमकीले आभूषणों से सुशोभित था। उन्होंने वसुधा और जाह्नवा की ओर देखा तो उनके स्थान पर स्वर्णिम आभा युक्त वारुणी और रेवती को विराजमान देखा। वे सुन्दर वेशभूषा और आभूषण धारण किए थीं और श्रीबलराम जी के दोनों ओर बैठी थीं। सूर्यदास इस दृश्य को देख भावविभोर हो उठे और रोना आरम्भ कर दिया, अचानक उनका स्वप्न धुन्धला गया।

प्रात:काल सूर्यदास उस ब्राह्मण के आवास पर गए और यह कहकर उसके चरणकमलों में प्रणाम किया। 'मैं आपके प्रस्ताव से सहमत हूँ। कृपया विलम्ब न करें।' प्रसन्नचित्त ब्राह्मण ने अपने साथ चार व्यक्तियों को लिया और श्रीगणेश और माँ दुर्गा के पावन नाम का जप करते हुए नदिया के लिए चल पड़े। जब वे श्रीवास पंडित के आवास पर पहुँचे, उन्होंने श्रीनित्यानन्द को प्रेम देवता के समान सुन्दर, अपने पार्षदों के संग बैठे पाया। स्वयं को अति सौभाग्यशाली अनुभव कर ब्राह्मण के नेत्रों में अश्रु भर आए।

विवाह का प्रस्ताव - ब्राह्मण द्वारा

अति आदर के साथ श्रीवास पंडित ने ब्राह्मण की कुशलक्षेम के बारे में पूछा और उत्तर में ब्राह्मण ने कहा, 'मैं अपने आवास से आपसे कुछ गोपनीय वार्ता करने आया हूँ।' श्रीवास उन्हें एकान्त स्थान पर ले गए और ब्राह्मण ने यह कहकर प्रसन्नतापूर्वक अपने विचार उजागर कर दिए, 'मैंने सुना है कि आप श्रीनित्यानन्द के लिए वधू खोज रहे हैं तो मैं आपको सूर्यदास पंडित की दो

पुत्रियों के बारे में सूचित करना चाहता हूँ। मैंने हर जगह खोज की परन्तु उन दो कन्याओं के लिए कोई भी उपयुक्त वर नहीं खोज पाया। वे देवी लक्ष्मी के समान सुन्दर हैं और अच्छे स्वभाव की हैं। मेरा मानना है कि वे श्रीनित्यानन्द के लिए उपयुक्त वधू रहेंगी।'

कृपया कन्याओं को देखने मेरे निवास पर पधारें। सूर्यदास सरखेल जो एक अच्छे परिवार से सम्बन्ध रखते थे, इस विवाह के लिए तैयार हो गए और अधिक विलम्ब नहीं करना चाहते थे। अब बताओ आपका क्या मत है? श्रीवास पंडित ने उत्तर दिया, 'मुझे इसे देखना होगा। आज मैं कृष्णदास को बड़गाछी भेजूँगा और कल वे तुम्हारे निवास पर जाएंगे, ताकि तुम उन्हें सूर्यदास से मिलवाने ले जाओ।' यह सुनकर ब्राह्मण प्रसन्न होकर शीघ्रता से शालिग्राम के सूर्यदास के निवास पर चले गए।

श्रीवास पंडित ने श्रीअद्वैत आचार्य को विवाह प्रस्ताव के बारे में बताया। श्रीनित्यानन्द प्रभु ने संयोग से यह सुन लिया और वे कोमलता और अर्थपूर्ण रूप से मुस्कुरा दिए। कृष्णदास जो कि राजा हरिहोड़ के बुद्धिमान पुत्र थे, शीघ्रता से बड़गाछी गए और तत्क्षण विवाह के लिए प्रबन्ध करने लग गए। विवाह का समाचार शीघ्र ही फैल गया और हर किसी ने कहा, 'यह विवाह एक अच्छा विवाह होगा।'

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक अपने पार्षदों के संग नवद्वीप से प्रस्थान किया और बड़गाछी के लिए चल पड़े। जैसे ही वे गांव के निकट पहुँचे, बड़गाछी के निवासी शीघ्रता से उनका स्वागत करने पहुँचे। वह ब्राह्मण और गांव के मुख्य नागरिक, श्रीनित्यानन्द प्रभु के आकर्षक लक्षणों को देखकर प्रसन्नता से भर गए।

इसी दौरान शालिग्राम में, जो कि बड़गाछी से अधिक दूरी पर नहीं था, सूर्यदास ने अपने अनुज भ्राता कृष्णदास को बताया, 'मैं पहले बड़गाछी जाऊंगा। आप और ब्राह्मणजन मेरे पीछे ये उपहार लेकर आना। सूर्यदास शीघ्रता से बड़गाछी चले गए और नित्यानन्द प्रभु से भेंट करने पहुँचे। भाव से भरे सूर्यदास के नेत्रों से अश्रु फूट पड़े और वे भूमि पर श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों में जा गिरे। वास्तव में उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभु के चरणकमल अपने दोनों हाथों में पकड़ लिए परन्तु एक भी शब्द न बोल सके। उल्लसित होकर मुस्कुराते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु ने सौभाग्यशाली सूर्यदास को आलिंगन कर लिया।'

अधिवास उत्सव

वहाँ सभी वैष्णव जनों से भेंट करने के पश्चात् सूर्यदास ने श्रीनित्यानन्द के अधिवास की तिथि निश्चित कर दी। कृष्णदास पंडित ब्राह्मणजनों के संग और उत्सव के लिए अनेक पदार्थ लेकर अपने निवास से आए। सायंकाल बड़गाछी

के सभी निवासी आए और एक शुभ समय पर श्रीनित्यानन्द प्रभु, आदरणीय ब्राह्मणजनों और अन्य मुख्य व्यक्तियों के मध्य बैठ गए।

अधिवास उत्सव के समय लोग प्रसन्नतापूर्वक देख रहे थे और मंगलकारी संगीत का स्वर वातावरण में भर गया। उत्सव के पूर्ण होने के पश्चात् अतिथिगण अपने निवासों पर वापिस लौट गए। सूर्यदास भी प्रसन्नतापूर्वक अपने निवास पर लौट गए।

विद्वान् ब्राह्मणों की सहायता से श्रीसूर्यदास ने प्रसन्नता से अपनी पुत्रियों का अधिवास उत्सव रचाया। सूर्यदास ने पूर्व में ही अपनी पुत्रियों की वास्तविक पहचान देख ली थी फिर भी वे पिता के रूप में अपनी पुत्रियों के विवाह के विषय में भावुक हो गए। अधिवास के लिए अनेकों पदार्थ लेकर ब्राह्मणजन बड़गाछी से सूर्यदास के निवास पर आए। अधिवास के समय वसुधा और जाह्नवा आकर्षक वेश धारण कर और सुसज्जित हो अति सुन्दर लग रही थीं। ब्राह्मणों ने वेदों से मन्त्रोचारण आरम्भ किया।

असाधारण सुन्दर वर

अधिवास पूर्ण कर तृप्त ब्राह्मणजन अपने-अपने निवास पर लौट गए। सायंकाल वर श्रीनित्यानन्द ने बड़गाछी से प्रस्थान किया और शालिग्राम के लिए चल पड़े। हर कोई जिसने उन असाधारण वर को देखा वह उनकी सुन्दरता से मन्त्रमुग्ध हो गया।

श्रीनित्यानन्द प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक शालिग्राम गांव में प्रवेश किया और सूर्यदास के निवास पर आ गए। वे लोग जो प्रभु के चरणकमलों को स्पर्श करने के लिए दौड़े थे, अचानक समर्पण की भावना से भर उठे। एक गुप्त स्थान से वसुधा और जाह्नवा ने भावविभोर हो अपने पति की सुन्दरता को निहारा। जब अपार जन समुदाय ने श्रीसूर्यदास के निवास के आसपास एकत्र होना आरम्भ कर दिया, युवतियों ने रस्मों के अनुसार वसुधा और जाह्नवा को सुन्दर परिधान और आभूषणों से सुशोभित करना आरम्भ कर दिया। सूर्यदास ने तब अपनी पुत्रियों को नित्यानन्द प्रभु को निवेदित कर दिया। सभी ब्राह्मण और यहाँ तक कि देवतागण भी वर और वधू की सुन्दरता से मन्त्रमुग्ध हो गए थे।

कृष्णलीला में काकुद्मि

अगले दिवस श्रीसूर्यदास का निवास, वधुओं के पिता द्वारा विनयपूर्वक विविध रस्मों के निभाने के कारण आनन्द और उत्सव से भर गया और श्रीनित्यानन्द प्रभु ने सभी भक्तजनों की कामनाएं तृप्त कीं। इसके पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनकी दोनों पत्नियां बड़गाछी वापिस लौट आए। श्रीवास पंडित की पत्नी और वहाँ की सभी महिलाओं ने नवविवाहितों के सौन्दर्य की सराहना की।

'श्रीगौर-गणोद्देश-दीपिका' में यह वर्णन है कि श्रीसूर्यदास जो कि एक महान व्यक्ति थे और सूर्य के समान प्रतिभाशाली थे, काकुद्‌मि के अवतार थे।

वारुणी एवं रेवती

उनकी पुत्रियां और श्रीनित्यानन्द प्रभु की पत्नियां पूर्व में श्री वारुणी और श्री रेवती थीं। कुछ के अनुसार श्री वसुधा देवी पूर्व में कलावती और श्री जाह्नवा देवी पूर्व में अनंग-मञ्जरी थीं। अनेक विद्वान् संत इस निष्कर्ष का समर्थन करते हैं।

इसके पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक बड़गाछी में वास किया। नरहरि द्वारा लिखित एक अच्छा भजन है जो श्रीनित्यानन्द प्रभु का वर्णन करता है। 'कृष्ण के अग्रज भ्राता और रोहिणी के पुत्र राम, रेवती और वारुणी के पति थे। उन्होंने श्रीगौरचन्द्र के अग्रज भ्राता और पद्मावती के पुत्र श्रीनित्यानन्द के रूप में प्रकट होकर कलि-युग को धन्य कर दिया। उनके उत्तमोत्तम गुणों से जाह्नवा और वसुधा के पति श्रीनित्यानन्द प्रभु ने मानव जाति पर अपनी अनुकम्पा बरसाई। श्रीगौरचन्द्र के प्रति स्नेह में व्यग्र उन्होंने सम्पूर्ण विश्व को अपने दिव्य प्रेम से विशुद्ध कर दिया। श्रीगौरचन्द्र के प्रति पवित्र प्रेम के उल्लास को उजागर कर उन्होंने हर किसी को तृप्त कर दिया। उनका दीप्तिमान स्वर्णिम रूप-रंग सूर्य के समान प्रकाशित था। उनके सुन्दर कानों में आभूषण सुशोभित थे और उनकी लम्बी भुजाऐं उनके घुटनों तक पहुँच रही थीं। उनके नेत्र अश्रुपात करते रहते एवं उनका सुन्दर मुख सदैव, 'गौर! गौर!' का जप करता रहता था। वे अपने अनुचरों के संग सदैव संकीर्तन के अनन्त सागर में तैरते रहते थे। वे असहाय और संतप्त अधम जनों के प्रति अति दयालु थे।'

कुछ दिवस पश्चात् श्रीनित्यानन्द प्रभु और उनके पार्षद नदिया वापिस लौट आए। शची माता और श्रीगौरहरि के सभी महान भक्तजन अपनी पत्नियों के संग श्रीवसुधा और श्रीजाह्नवा को देखकर अति प्रसन्न थे। शची माता के आदेश का पालन करते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु शान्तिपुर और तत्पश्चात् सप्तग्राम गए। भक्त जनों की इच्छानुसार श्रीनित्यानन्द प्रभु आगे खरदह गए, जहाँ वे अपनी पत्नियों के संग एक सुन्दर आवास में रहे। उन्होंने अपने संकीर्तन के द्वारा अनुचरों को अति आनन्द प्रदान कर वहाँ कुछ अद्‌भुत दिवस व्यतीत किए। वे तब शची-माता से भेंट करने नदिया वापिस लौट आए।

नित्यानन्द-भजन

एक अन्य भजन में नरहरि ने श्रीनित्यानन्द प्रभु के जीवन का वर्णन किया है। सुन्दर नित्यानन्द प्रभु राम, पद्मावती के पुत्र थे। बारह वर्ष तक उन्होंने अपने अनुचरों के संग एकचक्रा गांव में वास किया।

जब श्रीगौरहरि का जन्म हुआ, उन्होंने अवधूत के रूप में गृह त्याग दिया। वे सभी पवित्र स्थानों पर गए और बीस वर्ष के पश्चात् प्रसन्नता पूर्वक नदिया आ गए। श्रीगौरसुन्दर के सान्निध्य में पुनः अपना जीवन आरम्भ कर, उन्होंने अपना दण्ड और कमण्डल फैंक दिया। संकीर्तन में मग्न होकर वे श्रीचैतन्य महाप्रभु के संग जगन्नाथ पुरी गए और जाते समय उन्होंने प्रभु का दण्ड तोड़ दिया। श्रीचैतन्य महाप्रभु के आदेश पर वे नीलाचल से बंगाल लौट आए और प्रभु की इच्छानुसार अपने कर्तव्य पूर्ण किए। वसुधा और जाह्नवा के पति और दास नरहरि के आश्रय ने सभी में अपना प्रेम वितरित किया।

अद्वैत-भजन

मेरे प्रिय श्रीनिवास, श्री अद्वैत आचार्य के जीवन का वर्णन नरहरि ने एक अन्य अच्छे भजन में किया है। रत्न समान श्री अद्वैत आचार्य, जो कि नव-देवी के पुत्र हैं, वे श्रेष्ठ गुणों का भण्डार हैं। वे बंगाल के नवग्राम में जन्मे और शान्तिपुर आने तक प्रसन्नतापूर्वक वहाँ रहे। एक तीर्थ यात्रा के बाद जब उनके माता-पिता की मृत्यु हो गई तो उन्होंने शान्तिपुर में वास करने का निर्णय लिया। उन्होंने श्री सीता-देवी से विवाह रचाया और अपने गहन ध्यान से वे श्रीकृष्ण और श्रीहलधर को इस भूमि पर लाए। प्रभु की नदिया लीलाओं को देखते हुए श्रीअद्वैत आचार्य अति सन्तुष्ट हो गए और उनके साथ संकीर्तन में नृत्य किया। अपने निवास पर श्रीअद्वैत आचार्य ने महान संन्यासी श्रीगौरचन्द्र की अति सावधानी से सेवा की। जब प्रभु ने नीलाचल में वास किया तो वे प्रायः शान्तिपुर की यात्रा करने का आनन्द लेते और इस कारण लोगों का उनके प्रति आकर्षण बढ़ गया। दास नरहरि कहता है कि श्रीअद्वैत आचार्य की दीनता ने पूरे विश्व में सराहना अर्जित की।

यह सब वर्णन करने के पश्चात् श्री ईशान महाशय अति भावुक हो गए। कुछ समय बाद उन्होंने स्वयं को शांत किया और वे तीनों श्रीचैतन्य महाप्रभु के निवास के बाग में सोने चले गए। श्रीनिवास के सोते-जागते श्रीचैतन्य महाप्रभु के निवास के आस-पास देखते हुए वह रात्रि तीव्रता से व्यतीत हो गई। श्रीनिवास आचार्य ने चिन्तन किया, 'श्रीचैतन्य महाप्रभु का आवास घास और अन्य सामान्य सामग्री से क्यों निर्मित है? क्यों प्रभु ने अपने भक्त अर्थात् मुझे अपनी नदिया लीलाओं से वंचित करके, दूरस्थ स्थान पर रखा?'

इस प्रकार चिन्तन करते हुए प्रभु की इच्छा से श्रीनिवास आचार्य अंततः गहरी निद्रा में सो गए। अपने स्वप्न में वे श्रीचैतन्य महाप्रभु की सुन्दर लीलाओं के साक्षी बने और श्रीनवद्वीप की वास्तविक स्थिति उनके सम्मुख उजागर हुई।

स्वर्ण नगरी - श्रीनवद्वीप

सर्वप्रथम श्रीनिवास आचार्य ने गंगा के तट के निकट श्रीनवद्वीप की स्वर्ण नगरी को देखा। तब उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के आवास के दर्शन किए, जो कि इन्द्र-लोक में प्राप्त किसी भी वस्तु की तुलना में अत्यधिक सुन्दर था। यह सभी ओर से एक स्वर्ण दीवार से घिरा था और इसके भीतर प्रभु अपनी लीलाएं रचाते थे।

आवास के भीतर एक सुन्दर बाग था, जिसके मध्य बहुमूल्य रत्न जड़ित मन्दिर खड़ा था। मन्दिर के भीतर एक रत्नजड़ित वेदी थी और सिंहासन पर श्रीगौरचन्द्र प्रभु अपनी दोनों पत्नियों श्रीलक्ष्मी और श्रीविष्णुप्रिया के संग विराजमान थे। असंख्य सेविकाएं चंवर के साथ उन्हें पंखा करने में, उन्हें पान निवेदन करने में और उन्हें चन्दन लेप और पुष्प माला निवेदन करने में व्यस्त थीं। श्रीगौरचन्द्र प्रभु इस विन्यास में अत्यधिक मनोहारी दिख रहे थे।

स्वप्न के इस बिन्दु पर श्रीनिवास आचार्य जाग गए परन्तु एक बार पुनः शीघ्र ही गहरी निद्रा में सो गए। तब अपने स्वप्न में उन्होंने श्रीशचीनन्दन को उनके आवास के एक अन्य भाग में एक सुशोभित सिंहासन पर विराजमान देखा। प्रभु का अति मनोहर रूप कोटि काम देवतागणों को भी लज्जित करने वाला था। उनका सुन्दर मुख कोटि चन्द्रमाओं के गर्व का दमन कर रहा था। प्रभु की ओर श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीगदाधर पंडित खड़े थे। उन्हें घेरे हुए श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि, श्रीगंगादास पंडित, श्रीश्रीवास पंडित, श्रीचन्द्रशेखर आचार्य, श्रीमुरारी गुप्त, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीदामोदर पंडित, श्रीसूर्यदास, श्रीगदाधर दास, श्रीनरहरि, श्रीरघुनन्दन, श्रीचिरंजीव सेन, श्रीद्विज हरिदास, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी, श्रीनन्दन आचार्य, श्रीधर, श्रीविजय, श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीकाशीश्वर, श्रीमाधवेन्द्र पुरी, श्रीसार्वभौम भट्टाचार्य, श्रीकेशव भारती, श्रीराजा प्रतापरुद्र, श्रीरामानन्द राय, श्रीवैंकट भट्ट, श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती, श्रीरूप गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथदास गोस्वामी, श्रीजीव गोस्वामी, श्रीलोकनाथ गोस्वामी और श्रीभूगर्भ गोस्वामी खड़े थे।

वैकुण्ठ लीला दर्शन

श्रीचैतन्य महाप्रभु को अपने असंख्य पार्षदों से घिरा देख श्रीनिवास आचार्य अत्यधिक उल्लसित होकर प्रभु और उनके भक्तजनों के चरणकमलों में प्रणाम स्वरूप झुके परन्तु उसी समय स्वप्न टूट गया। श्रीनिवास आचार्य पुनः प्रभु के दर्शन करने के लिए अधीर हो उठे और एक बार पुनः गहरी निद्रा में सो गए। पुनः अपने स्वप्न में उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के निवास के एक अन्य भाग के

दर्शन किए, जहाँ प्रभु एक रत्नजड़ित सिंहासन पर बैठे थे, जबकि अनेक सेवक उनकी प्रतीक्षा में खड़े थे। भगवान् ब्रह्मा और भगवान् शिव के नेतृत्व में देवतागण भी अपनी प्रार्थनाऐं निवेदन करने और प्रभु के चरणकमलों में गिरकर प्रणाम करने के लिए वहाँ उपस्थित थे।

द्वारका-मथुरा लीला

इस दृश्य से भावविभोर हो श्रीनिवास आचार्य आनन्दातिरेक में कांपने लगे। तब प्रभु के निवास के अन्य भाग में उन्होंने उनकी वैकुण्ठ लीलाओं और फिर एक के बाद एक प्रभु की अयोध्या लीलाओं और द्वारका लीलाओं का अवलोकन किया। यह सब लीलाऐं देखना, श्रीनिवास आचार्य को अत्यधिक प्रसन्न कर गया। प्रभु की मथुरा लीलाओं का साक्षी बनने के पश्चात् जो कि प्राय: हास्यपूर्ण होती थीं, श्रीनिवास आचार्य ने श्रीवृन्दावन लीलाऐं देखीं। प्रभु को रास-नृत्य लीला में नृत्य करते देख, श्रीनिवास आचार्य ने स्वयं को श्रीराधा के एक गोपनीय सेवक के रूप में देखा। तब श्रीवृन्दावन के वन में लीला के निरन्तर रहते हुए, स्वप्न धुन्धला गया। श्रीनिवास आचार्य उठे और देखा कि सवेरा हो चुका था।

अपने स्वप्न की स्मृति से अभिभूत और प्रभु की अनंत दयालुता के कारण, श्रीनिवास आचार्य को स्वयं को सम्भालने में काफी समय लग गया। जो कोई भी इस लीला को अति आदर से सावधानीपूर्वक श्रवण करेगा, वह गौरहरि प्रभु की अनुकम्पा प्राप्त कर सकता है। वे जिन्होंने प्रभु की अनुकम्पा प्राप्त कर ली है वे उत्तमोत्तम नगर श्री नवद्वीप को जान सकते हैं और उसका आनन्द ले सकते हैं। श्रीनिवास आचार्य के चरणकमल अपने शीश पर धारण कर मैं नरहरि दास, इस ग्रन्थ, 'श्रीभक्ति रत्नाकर' को लिखने में आनन्द का अनुभव करता हूँ।

त्रयोदश प्रवाह

श्रीनिवास आचार्य का पुनर्विवाह, वीरचन्द्र प्रभु का विवाह एवं श्रीवृन्दावन यात्रा

सभी के आश्रय श्रीकृष्ण चैतन्य की जय जयकार हो! दयालु श्रीनित्यानन्द प्रभु की जय जयकार हो! श्रीअद्वैतचन्द्र की जय जयकार हो, जो कि आध्यात्मिक गुणों के सागर हैं! श्रीवास पंडित और श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो!

श्रीगदाधर दास और श्रीमुरारी गुप्त की जय जयकार हो! श्रीवक्रेश्वर पंडित, श्री मुकुन्द और श्रीनरहरि की जय जयकार हो!

श्रीगौरीदास पंडित और दामोदर पंडित की जय जयकार हो! श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी की जय जयकार हो!

प्रभु के सभी भक्तजनों की जय जयकार हो! हे भक्तजनों, मेरे प्रति दयालु होइये। मैं आपका आश्रय ग्रहण करता हूँ।

इस ग्रन्थ के सभी पाठकों की जय जयकार हो! जो कि आध्यात्मिक गुणों के धाम हैं, हे पाठको, अब जो मैं कहूँगा, ध्यान से श्रवण कीजिए।

ईशान से विदा ली

श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने प्रसन्नतापूर्वक सम्पूर्ण नदिया की यात्रा की। अंततः श्रीईशान ठाकुर के चरणकमलों में सम्मान प्रकट कर उन्होंने प्रस्थान किया। श्रीईशान ठाकुर ने अति उत्साह से उन्हें आलिंगन प्रदान किया और वे आनन्दातिरेक से प्रेम में इतने अधीर हो गए कि अपने अश्रुओं पर नियंत्रण न कर सके। उनके हृदय के इस गहन प्रेम को कौन समझ सकता है? मैं चाहता हूँ कि मैं उनके बारे में कुछ कह सकता। किन्तु आह, मुझ में अधिक कहने की सामर्थ्य नहीं। मैंने उनकी सारी जानकारी को प्रकट कर दिया है कि जो मेरे अधिकार में है। उसमें से आप उनके व्यवहार के बारे में थोड़ा बहुत जान सकते हो।

उस समय प्रभु के अन्तरंग पार्षद हृदय से उदास हो गए। उन्हें अत्यधिक सहानुभूति प्रदान कर प्रभु के पार्षदों ने श्रीनिवास आचार्य को विदा किया। श्रीनिवास आचार्य ने सभी महान भक्तजनों के चरणकमलों के प्रति आदर व्यक्त किया।

पुनः-पुनः श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनवद्वीप धाम के प्रति सम्मान व्यक्त किया। रोते-रोते वे वहाँ से प्रस्थान कर गए।

मार्ग में चलते हुए श्रीनिवास आचार्य अनेक भक्तजनों के निवास पर गए। उस समय उनके हृदय के भीतर अत्यधिक आनन्द का उदय हुआ। श्रीखण्ड

आकर श्रीनिवास आचार्य ने वहाँ श्रीगौरांग के श्रीविग्रह के दर्शन किए। वहाँ उन्होंने श्रीरघुनन्दन से भी भेंट की। अति स्नेहपूर्वक और सभ्य शब्दों में श्री रघुनन्दन ने श्रीनवद्वीप के बारे में समाचार पूछा। श्रीनिवास आचार्य ने नदिया में अपनी यात्रा का वर्णन किया। रोते-रोते उन्होंने वहाँ पर भक्तजनों की स्थिति के बारे में बताया।

श्रीनिवास आचार्य ने कहा। 'नदिया में अनेकों अग्रज भक्तजन इस धरा से प्रस्थान कर चुके हैं। शेष भक्तजन मौन हो गए हैं। ईशान ठाकुर अकेले श्रीगौरांग प्रभु के निवास में वास करते हैं। मैं कैसे उनकी अनन्त महिमा का वर्णन करने की सामर्थ्य प्राप्त करूँ?'

नदिया का विवरण बताते चले

जैसे-जैसे मैं मार्ग पर चल रहा था, मैंने लोगों के मुख से समाचार सुना कि ईशान ठाकुर अब इस धरा से अन्तर्धान हो गए हैं। दिन प्रतिदिन नदिया अंधकार में ढँकता जा रहा था। मैं क्या कह सकता हूँ? आगे क्या होगा? मैं नहीं जानता।

यह शब्द सुनकर श्रीरघुनन्दन आध्यात्मिक प्रेम में सराबोर हो गए। उच्चस्वर में रोते हुए उनके हाथ श्रीनिवास के कण्ठ के आस-पास आ गए। प्रभु की इच्छा से कुछ क्षणों के बाद श्रीरघुनन्दन पुनः शान्त हो गए। कौन जानता है कि श्रीरघुनन्दन की भावनाओं का कैसे वर्णन किया जाए? श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें विविध प्रकार से शान्त किया। तब श्रीनिवास आचार्य ने याजिग्राम के लिए प्रस्थान किया। तीन भक्तजन श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर और श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीरघुनन्दन के प्रति सम्मान व्यक्त किया और तब वे शान्तिपूर्वक याजिग्राम प्रस्थान कर गए।

आनन्दपूर्ण हृदय से श्रीगोकुलानन्द और अन्य भक्तजनों के साथ, वापिस लौटने वाले भक्तजन उनके गृह लौटते समय उनके साथ पैदल गए। आनन्दपूर्ण हृदय से याजिग्राम के लोग, श्रीनिवास आचार्य के गृह पर मिलने आए। और उचित रूप से भक्तजनों का अभिवादन किया।

विह्वलता से बेकल

श्रीनिवास आचार्य के पुण्य और गतिविधियां भी सभी अद्‌भुत थीं। वे सदा सबकी सेवा में तत्पर रहते थे। उनके गृह के बाहर एक अति निर्जन स्थान था, जहाँ वे जाते और भक्तजनों के साथ बैठ जाते। नवद्वीप के समाचार सुनकर हर कोई विह्वल हो गया।

श्रीनिवास आचार्य के शिष्यों ने उनसे अत्यधिक प्रश्न किए। श्रीनरोत्तम दास ने भद्रता से, 'आज वीर हम्वीर पधारेंगे, यह विचार कर उन्होंने अपने हृदय

में निर्णय कर लिया है।' उसी क्षण राजा का एक सन्देशवाहक वहाँ आया और बोला, 'आज राजा पधारेंगे।'

राजा वीर हम्वीर का आगमन

एक शुभ समय पर और आनन्दपूर्ण हृदय से वन विष्णुपुर से राजा वीर हम्वीर पधारे। याजिग्राम के दर्शन कर राजा आनन्दमग्न हो गया। दूर से ही राजा ने याजिग्राम के प्रति सम्मान व्यक्त किया। याजिग्राम के निकट एक सुन्दर स्थान देखकर राजा विश्राम के लिए रुक गये। घोड़े, हाथी, पैदल सैनिक और राजा के घेरे में अन्य, उस स्थान पर रुक गए। केवल कुछ व्यक्तियों को संग ले राजा ने याजिग्राम में प्रवेश किया।

राजा अपने महल से अनेकों भेंट लाये थे। उन्होंने वे आगे अपने आध्यात्मिक गुरु के निवास पर भेज दी। श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का ध्यान करते हुए, राजा धीरे से उनके गृह के निकट पहुँच गये। श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों के दर्शन कर राजा सम्मान प्रकट करने के लिए पुनः-पुनः भूमि पर झुककर प्रणाम करने लगे।

श्रीनरोत्तम दास के दीप्तिमान स्वरूप का दर्शन कर, राजा ने चिन्तन किया, 'ये निश्चित ही श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय होंगे। अब मेरा जन्म सफल हो गया।'

इसप्रकार चिन्तन करते हुए, अत्यन्त प्रसन्नता से राजा ने पुनः-पुनः श्रीनरोत्तम दास के चरणकमलों में सम्मान व्यक्त किया। श्रीनिवास आचार्य ठाकुर और श्रीनरोत्तम दास ठाकुर, दोनों ने दैन्यता से राजा को आलिंगन प्रदान किया। श्रीरामचन्द्र प्रभु के प्रति भी राजा ने सम्मान व्यक्त किया। राजा ने श्रीरामचन्द्र के पार्षदों से कहा, 'कृपया मुझे स्वीकार करें।'

श्रीरामचन्द्र कविराज द्वारा राजा पर कृपा

रामचन्द्र कविराज जो कि धार्मिक गुणों के धाम हैं, ने प्रसन्नतापूर्वक राजा को अपने एक पार्षद के रूप में स्वीकार कर लिया। आध्यात्मिक प्रेम से ओत-प्रोत होकर हर किसी ने उन्हें आलिंगन प्रदान किया। राजा वीर हम्वीर के हृदय के आनन्द को अथवा राजा के समर्पण की भव्यता को मैं कैसे समझ सकता हूँ? राजा के समर्पण को देखकर याजिग्राम के लोगों ने आनन्दपूर्ण हृदय से प्रशंसा की।

अब राजा वीर हम्वीर के पार्षद सभी विशुद्ध अध्यात्म के मार्ग पर चलने के योग्य हो गए थे। राजा और उनके पार्षद अब अनन्त सौभाग्य से पूर्ण थे। आपस में परस्पर चर्चा करते हुए स्थान-स्थान पर लोग उनकी प्रशंसा करते। राजा की गतिविधियां देखकर श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय

अति आनन्दित हो गए। राजा वीर हम्वीर को निहारते हुए श्रीनिवास आचार्य और श्रीरामचन्द्र ने उन्हें अति अनुकम्पा प्रदान करी।

राजा वीर हम्वीर के हृदय में जो प्रश्न उत्पन्न हुए, वे उसने श्रीरामचन्द्र कविराज को बताये। इस प्रकार श्रीरामचन्द्र कविराज और राजा ने आध्यात्मिक विषयों पर चर्चा की। मैं, इस ग्रन्थ का लेखक, उस चर्चा का विस्तार से वर्णन अन्य ग्रन्थ में करूँगा। याजिग्राम में राजा ने अपने आध्यात्मिक गुरु के पार्षदों को निहारते हुए जो आनन्द अनुभव किया, उसका वर्णन करने की सामर्थ्य किस में है? हृदय में राजा ने याजिग्राम में वास करने का निश्चय किया। याजिग्राम में पल-पल राजा अधिक से अधिक उत्सुक होते गए। राजा ने हृदय से विष्णुपुर न लौटने का निर्णय लिया। राजा ने श्रीरामचन्द्र कविराज और श्री श्रीनिवास आचार्य को अपने निर्णय के बारे में सूचित किया।

श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय ने स्नेहवश राजा वीर हम्वीर को सांत्वना दी। अन्य भक्तजनों ने भी राजा को सांत्वना दी। तब उन्होंने उन्हें याजिग्राम के निकट विविध पवित्र स्थानों के दर्शन करने के लिए भेजा। अति विनम्र राजा ने पवित्र स्थानों की यात्रा की। सभी महान भक्तजनों ने उन्हें अनुकम्पा प्रदान की। याजिग्राम लौटते समय राजा ने चिन्तन किया, 'मैं बिना अपने आध्यात्मिक गुरु के विष्णुपुर कैसे लौट जाऊँ?'

राजा के हृदय को जानकर श्रीनिवास आचार्य ने उनसे ये वचन कहे, 'कुछ दिवस के पश्चात् मैं खेतुड़ीग्राम जाऊँगा। वहाँ से मैं विष्णुपुर जाऊँगा।'

तब खरदह से श्रीमती जाह्नवा देवी ईश्वरी ने एक सन्देशवाहक के साथ पत्र भेजा। आनन्दपूर्ण हृदय से खरदह से सन्देशवाहक श्रीनिवास आचार्य के समीप आया।

सन्देशवाहक को देखकर आनन्दपूर्ण हृदय और मधुर वचनों से श्रीनिवास आचार्य ने श्रीमती जाह्नवा देवी के कुशलक्षेम के बारे में पूछा। विनम्र और मृदु वचनों से सन्देशवाहक ने संक्षेप में राजा से कहा, 'खरदह में श्रीमती जाह्नवा देवी के साथ सब कुशल हैं।'

प्रेमप्रदाता ईश्वरी जाह्नवा

पतित जीवों को वे अति दयालु होकर आध्यात्मिकता और प्रेम प्रदान करती हैं। उन्होंने श्रीराधिका के एक श्रीविग्रह को बनाया। श्रीविग्रह के सौन्दर्य को निहारते हुए वे आनन्द से भर उठीं। उन्होंने परमेश्वरी दास और अन्य भक्तजनों को श्रीविग्रह को श्रीवृन्दावन ले जाने की प्रार्थना की। उन्होंने भव्य परिधान, आभूषण और अन्य सामान प्रदान किया। उन्होंने सात सौ मुद्राएें भी दीं। श्रीविग्रह और अन्य सामान को सावधानीपूर्वक एक सुन्दर नौका पर पधराया गया। श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह का ध्यान करते हुए श्रीमती जाह्नवा देवी

ने उनसे कहा,'कृपया शीघ्रता से अपनी प्रियतमा को आपके संग रहने के लिए आकर्षित करें। कौन श्रीमती जाह्नवा देवी के कृत्य को समझ सकता है? एक शुभ समय पर उन्होंने श्रीविग्रह और सामान को यात्रा के लिए रवाना किया। नौका ने शीघ्रता से प्रस्थान किया। मात्र एक दिवस में ही वे नदिया चले गए। आज नौका कंटक-नगर पहुँचेगी। यह पत्र लेकर मैं शीघ्रता से आपके पास आया हूँ।'

यह वचन कहकर सन्देशवाहक ने पत्र श्रीनिवास आचार्य के हाथ में रख दिया। श्रीनिवास आचार्य ने पत्र को स्वीकार किया और अपने शीश से स्पर्श किया। पत्र को पढ़ने मात्र से ही श्रीनिवास आचार्य को हृदय में अति आनन्द का अनुभव हुआ। सभी भक्तजनों के संग वे कंटक-नगर गए। वे श्रीविग्रह को निवेदन करने के लिए अति उत्तम परिधान और अन्य सामग्री लेकर आए।

राजा द्वारा मुद्रा उपहार

राजा वीर हम्वीर ने अपने पास सहस्रों मुद्राऐं छिपा रखी थीं। अब उन्होंने वे मुद्राऐं लीं और श्रीरामचन्द्र कविराज को प्रदान कर दीं। श्रीरामचन्द्र कविराज ने श्रीनिवास आचार्य प्रभु को सूचित किया। मुस्कुराते हुए श्रीनिवास आचार्य, राजा के साथ प्रस्थान कर गए। शीघ्रता से नौका ने कंटक-नगर की यात्रा की। वह केशव भारती घाट पर पहुँच गई।

नौका के घाट पर पहुँचते ही भक्तजन प्रसन्नतापूर्वक वहाँ एकत्र हो गए। वहाँ उपस्थित भक्तजन ज्ञान की हर शाखा में उच्चकोटि के विद्वान् थे। श्रीपरमेश्वर दास, श्रीनृसिंह चैतन्य और श्रीकनाई ठाकुर उनके मुखिया थे। भक्त जनों के हृदय में क्या है, यह जानने की सामर्थ्य किस में है? श्रीनिवास आचार्य से भेंट करके भक्तजनों को अनुभव हुआ कि उनके आनन्द का अतिवर्द्धन हुआ।

जब श्रीनिवास आचार्य ने नवद्वीप का समाचार सुनाया, हर कोई दुःखी हो गया। कोई भी शांत न रह सका। श्री श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्तजन हृदय से अधीर हो उठे। कुछ समय बाद पुनः शांत हो गए। वे सब आध्यात्मिक प्रेम से भर उठे।

श्रीपरमेश्वरी दास और अन्य भक्तजनों के चरणकमलों में प्रणाम करते हुए राजा ने अपना सम्मान व्यक्त किया। राजा का परिचय जानकर भक्तजनों ने उन्हें प्रगाढ़ आलिंगन प्रदान किया और उन पर अति अनुकम्पा बरसाई। सभी भक्त जनों की भव्यता के दर्शन कर राजा वीर हम्वीर आनन्द और आध्यात्मिक प्रेम से विह्वल हो गए। वे शान्त न रह सके। उनके भीतर उत्पन्न होते उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम को देखकर कंटक-नगर के लोगों ने राजा के सौभाग्य की प्रशंसा की। राजा की विनम्रता का श्रवण करके कौन नहीं रो देगा? नृसिंह चैतन्य ने उनसे कहा, 'तुम अत्यन्त सौभाग्यशाली हो।'

किसी ने कहा, 'श्रीनिवास आचार्य के अनुग्रह में अति सामर्थ्य है। राजा ने उस अनुग्रह को अपने जीवन के समान प्रिय समझा।'

राजा को भक्तजनों के प्रति अद्भुत आध्यात्मिक प्रेम प्राप्त हुआ। मैं उसका वर्णन कैसे कर सकता हूँ? सब कुछ होते हुए भी वे जन्म से राजा के रूप में स्थापित हुए। श्री परमेश्वरी ठाकुर आनन्दपूर्वक श्रीनिवास आचार्य को नौका में श्रीविग्रह के निकट ले गए। उन्होंने श्रीनिवास आचार्य से कहा, 'श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीवृन्दावन लौटेंगी। श्री राधिका का श्रीविग्रह श्री गोपीनाथ जी के श्रीविग्रह को दिया जाएगा। आप तत्क्षण नौका में प्रवेश करें।'

श्रीराधा विग्रह श्रीगोपीनाथ जी के लिये

यह वचन कहकर श्रीपरमेश्वरी दास ने श्रीविग्रह को छिपाते हुए पर्दा खींच दिया। श्रीपरमेश्वरी दास और श्री श्रीनिवास आचार्य ने श्री राधिका जी के अति सुन्दर श्रीविग्रह को निहारा। श्रीविग्रह का प्रत्येक अंग सुन्दर था। वह अद्वितीय था। श्रीविग्रह को निहारते हुए श्रीनिवास आचार्य आध्यात्मिक भाव से परिपूर्ण हो गए। अति आनन्दित हृदय से श्री परमेश्वरी दास ने पुनः-पुनः श्रीविग्रह की सारी सामग्री श्रीनिवास आचार्य को दिखाई। उन्होंने कहा, 'ये परिधान, आभूषण और अन्य सामान भगवान् श्रीगोपीनाथ जी और उनकी दो प्रिय भक्तों के लिए हैं। यह उन तीनों के लिए है। मैं परिधान, आभूषण और अन्य भेंट श्रीगोविन्द और श्रीमदन-मोहन को दूँगा।'

अनेक परिधान आभूषण

श्रीपरमेश्वरी दास ने सभी वस्तुऐं एक-एक कर के दिखाईं। उन्हें देखकर श्रीनिवास आचार्य ने अत्यधिक आनन्द का अनुभव किया। श्रीनिवास आचार्य ने अति विनम्रता से परिधान, आभूषण और सहस्रों मुद्राऐं श्रीविग्रह सेवा के लिए प्रदान कर दीं।

श्री परमेश्वरी दास हर किसी को नौका के निकट लाए। अति प्रेम में उन्होंने सभी को सब कुछ दिखाया। श्रीनरोत्तम दास, श्रीरामचन्द्र कविराज, श्रीगोविन्द कविराज, श्री श्रीदास, श्रीगोकुलानन्द और अन्य भक्तों ने प्रसन्नतापूर्वक सब कुछ देखा। भक्तजनों की भव्यता देखकर गंगा के तट पर उपस्थित लोग अति आनन्दित हो गए।

कुछ पल तक गंगा के तट पर रहने के बाद भक्तजन श्रीगौरांग के श्रीविग्रह के दर्शन करने चले गए। अति प्रसन्न हृदय से श्रीयदुनन्दन और अन्य भक्तजनों ने गौरांग प्रभु के मन्दिर के प्रांगण में प्रवेश किया। गौरांग प्रभु के श्रीविग्रह को निहारते हुए हर कोई विह्वल हो उठा। वे अपने अश्रु नहीं रोक सके। उल्लसित

आध्यात्मिक प्रेम का अपार सागर उत्पन्न हुआ और गौरांग प्रभु के मन्दिर के प्रांगण में बहने लगा।

नृसिंह चैतन्य का नृत्य

पावन नामों के संकीर्तन में हर कोई आनन्द से मदमस्त हो गया। उस नाम-संकीर्तन के उच्चस्वर ने आकाश को भेद दिया। नृसिंह चैतन्य ने अद्‌भुत रूप से नृत्य किया। उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण श्रीपरमेश्वरी दास उच्चस्वर में, 'सिंह, सिंह, हे नरोत्तम और श्रीनिवास!' पुकारने लगे।

श्रीकनाई ठाकुर में शान्त रहने की सामर्थ्य नहीं थी। पुनः-पुनः उन्होंने श्रीरामचन्द्र का आलिंगन किया। श्रीदास, श्रीगोकुलानन्द, श्रीगोविन्द और अन्य भक्तजन नाम-कीर्तन में मदमस्त हो गए। प्रभु के प्रिय भक्तजनों के लिए संकीर्तन ही सब कुछ था और प्राण त्याज्य कुछ भी नहीं था। कौन उनके संकीर्तन के प्रति आकर्षित नहीं होगा? दीर्घ काल तक उन सबने नाम-संकीर्तन के अमृत का पान किया। तब वे श्रीगौरांग प्रभु के मन्दिर के प्रांगण में शान्त हो गए।

उस स्थान पर जाकर जहाँ श्रीगौरांग प्रभु ने संन्यास ग्रहण किया था, भक्त जन भूमि पर लोटने लगे और रजमय हो गए। श्रीगौरांग प्रभु के भक्तजनों की गतिविधियों का वर्णन मैं कैसे करूँ? उस दिवस उन्होंने कंटक-नगर में वास किया।

अगली प्रातः जब उन्होंने प्रस्थान किया, सभी भक्तजन हृदय से अति दुःखी थे। नौका से यात्रा करते हुए श्रीपरमेश्वरी दास और अन्य भक्तजनों ने कंटक-नगर से प्रस्थान किया। अपने प्रिय पार्षदों के संग श्री श्रीनिवास आचार्य कंटक-नगर से याजिग्राम चले गए।

राजा विदा हुआ

जब श्रीनिवास आचार्य ने अपने अतुलनीय रूप से स्नेही प्रिय शिष्य राजा वीर हम्वीर से विदा ली तो राजा अति दुखी थे। जब उन्होंने विष्णुपुर की अपनी यात्रा के लिए प्रस्थान किया तो राजा वीर हम्वीर हृदय से शांत न रह सके। अपने आध्यात्मिक गुरु श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों को अपने शीश से स्पर्श करते हुए राजा रो पड़े और धीरे से बोले, 'मैं तत्क्षण वन विष्णुपुर लौट जाऊँगा। जब अगली बार मैं उनकी करुणामयी दृष्टि को देखूँगा, पुनः मुझे मेरे आध्यात्मिक गुरु का सान्निध्य प्राप्त होगा।'

उन्हें आलिंगन करते हुए श्रीनिवास आचार्य ठाकुर ने कहा, 'विलम्ब मत करो। तत्क्षण विष्णुपुर प्रस्थान करो।

यह वचन सुनकर राजा प्रणाम करने हेतु श्रीनरोत्तम दास के चरणकमलों में गिर गये। उनके नेत्रों से अश्रु बह-बहकर श्रीनरोत्तम महाशय के चरणकमलों को भिगोने लगे।

'कृपया मुझपर अनुग्रह करें।' राजा ने रुँधे स्वर में कहा। तीन लोकों में मेरे समान कोई पापी नहीं। मेरे भूतकाल के बुरे कर्मों के कारण, मैं अपने हृदय से अति दुःखी हूँ। मैं अपने हृदय में क्या निर्णय करूँ? मैं क्या करूँ?'

पापों का नहीं, सेवाप्राप्ति का चिन्तन करो

यह वचन सुनकर नरोत्तम ठाकुर महाशय ने कहा, 'तुमने पहले ही अपने पूर्व के अपराधों को परास्त कर दिया है। हृदय से उनके बारे में और अधिक चिन्तन मत करो। अब सावधानीपूर्वक विशुद्ध आध्यात्मिक सेवा का बहुमूल्य रत्न प्राप्त करने का प्रयास करो।'

इस प्रकार अनेक वचनों को बोलते हुए श्रीनरोत्तम दास ने राजा का आलिंगन कर लिया। अब राजा के हृदय में आनन्द भरा था। राजा ने रामचन्द्र और गोविन्द के चरणकमलों में प्रणाम किया। उन्होंने अति विनम्र वचन कहे। वह वचन सुनकर हर किसी का हृदय पिघल गया। तब राजा ने श्रीदास और गोकुलानन्द के चरणकमलों में प्रणाम किया। उनके नेत्रों से अश्रु छलक पड़े। तब राजा ने एक के बाद एक श्रीनिवास आचार्य के सभी अनुचरों के चरण कमलों में प्रणाम किया। राजा ने याजिग्राम के सभी लोगों के प्रति प्रणाम किया। अब राजा ने अति दुःखी हृदय से प्रस्थान किया।

द्रौपदी देवी

इसके पश्चात् राजा की पत्नी ने अति आनन्द में श्रीनिवास आचार्य के निवास में प्रवेश किया। **श्रीनिवास आचार्य की पत्नी का नाम था द्रौपदी-देवी।** वह सर्व-गुण सम्पन्न थीं। वह अद्भुत रूप से मृदु और आकर्षक थीं।

रानी अति सुन्दर परिधान और आभूषण की भेंट लेकर आई। उनकी भव्य सुन्दरता देखकर द्रौपदी-देवी आश्चर्य से भर उठी। रानी ने अपने शीश को द्रौपदी देवी के चरणों से स्पर्श किया। विदा लेते समय रानी भी दुःख से भर उठी।

रानी ने पुनः पुनः याजिग्राम की भूमि के प्रति प्रणाम व्यक्त किया। तब एक पालकी में सवार होकर उन्होंने प्रस्थान किया। राजा ने भी याजिग्राम से प्रस्थान किया। कुछ दूर तक चलने के बाद वे एक भव्य वाहन पर सवार हुए और वन विष्णुपुर के लिए चल पड़े।

अगले दिवस श्रीनरोत्तम दास और श्रीरामचन्द्र कविराज के संग श्रीनिवास आचार्य श्रीखण्ड चले गए। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीरघुनन्दन के प्रति प्रणाम

किया और निवेदन किया, 'मैं कल खेतुड़ी के लिये प्रस्थान करना चाहता हूँ। कृपया अपनी अनुमति प्रदान करें।' श्री रघुनन्दन ने कहा, 'मैं खेतुड़ी जाऊँगा। कुछ दिवस वहाँ रुकने के पश्चात् लौट आऊँगा।'

रघुनन्दन से विदा

ये वचन कहकर श्री रघुनन्दन ने श्रीनिवास आचार्य से विदा ली। याजिग्राम के लोग अब हृदय से अधीर थे। श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास ठाकुर से कहा, 'श्रीरघुनन्दन ठाकुर कभी अपनी अनुमति प्रदान नहीं करेंगे। श्रीचैतन्य महाप्रभु के भक्तजनों की गतिविधियां समझने का सामर्थ्य किस में है। मुझे समझ नहीं आता। मैं प्रगाढ़ अन्धकार में खड़ा हूँ।'

जैसे ही उन्होंने ये वचन कहे, श्रीनिवास आचार्य के नेत्रों से अश्रु बहने लगे। वे विह्वल थे। कुछ क्षणों के पश्चात् वे पुनः शान्त हो गए। सभी भक्तजनों को अपने संग ले श्रीनिवास आचार्य ठाकुर ने तत्क्षण याजिग्राम से प्रस्थान किया और कंचनगढ़िया चले गए। वहाँ सभी भक्तजन दो दिवस तक रुके। दिवस और रात वे संकीर्तन के आनन्द में डूबे रहे। कंचनगढ़िया-ग्राम से प्रस्थान करके वे आगे बुधरी-ग्राम के क्षेत्र के आसपास चले गए। बुधरी-ग्राम के लोग अब हृदय से आनन्दित थे। वे भक्तजनों को एक अत्युत्तम गृह में ले आए। श्रीनिवास आचार्य ठाकुर, श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय, श्रीरामचन्द्र और अन्य सभी भक्तजन सभी आनन्दित थे।

श्रीनिवास आचार्य ठाकुर हृदय से अति आनन्दित थे। दिवस और रात वे संकीर्तन के उल्लास में मग्न रहते। दो दिवस के लिए भक्तजन बुधरी-ग्राम में रहे।

खेतुड़ी आगमन

तब पद्मावती नदी को पार करते हुए वे खेतुड़ी चले गए। खेतुड़ी के लोग हृदय से अति आनन्दित हो गए। वे पद्मावती के तट से आगे बढ़ते हुए पधारे हुए भक्तजनों के संग हो गए। साथ मिलकर उन्होंने खेतुड़ी-ग्राम में प्रवेश किया। श्रीनिवास आचार्य को देखकर हर कोई हृदय ये आनन्दित हो गया। कुछ क्षण मन्दिर प्रांगण में विश्राम करने के पश्चात् हर कोई अपने निवास पर लौट गया। खेतुड़ी के लोग सभी सौभाग्यशाली थे। पधारने वाले भक्तजनों को देखकर दिवस और रात्रि में जो आनन्द उन्होंने अनुभव किया, मुझ में सामर्थ्य नहीं कि उस का वर्णन कर सकूँ।

रात-दिन श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय संकीर्तन की आनन्ददायक लीलाओं का आनन्द लेते। कौन उस समय विशुद्ध आध्यात्मिक सेवाओं के अमृत सागर में नहीं तैर जाता था? कौन श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम

द्वारा प्रदान की गई अनुकम्पा का गान नहीं करेगा? दिन प्रतिदिन श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम की महिमा सर्वविदित होती गई।

एक नास्तिक ब्राह्मण

एक दिवस एक महा निन्दक ने श्री श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम के संकीर्तन को देखा। निन्दक आश्चर्य से भर उठा। पूर्व बंगाल के इस ब्राह्मण के नेत्रों में अश्रु भर गए। वह भूमि पर लोटने लगा और श्री श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम के चरणकमलों के समक्ष गिर गया। यह ब्राह्मण जो कि एक सुखवादी और एक नास्तिक तर्कविद था वह अब समर्पण भाव से भर उठा था। अब उसने श्री श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का आश्रय ग्रहण कर लिया।

श्रीनिवास आचार्य ने उस व्यक्ति को अपना जीवन श्रीनरोत्तम की सेवा में समर्पित करने को कहा। अति आनन्द से वह व्यक्ति आध्यात्मिक सेवाओं में मग्न हो गया। इस प्रकार श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम ने अनेकों आनन्ददायक आध्यात्मिक सेवाओं का आनन्द लिया। उनकी महिमा को समझने की सामर्थ्य किस में है?

तब एक दिवस श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम ने एकान्त स्थान पर एक दुःखद चर्चा की। कुछ दिवस वहाँ रहने के पश्चात् शीघ्रता से उन्होंने प्रस्थान किया। अपने पार्षदों के संग वे शीघ्र याजिग्राम लौट आए। श्रीनिवास आचार्य, श्री रघुनन्दन ठाकुर की ओर गए। उन्होंने अति स्नेहपूर्वक श्रीनिवास का आलिंगन किया। उन्होंने श्रीनिवास के कुशलक्षेम के बारे में पूछा। तब श्रीनिवास का हाथ पकड़ उन्हें एकान्त स्थान पर ले जाते हुए, उन्होंने धीरे से कहा, 'एक भयावह समय आ गया है। भक्तजनों के हृदय में अनेक संशय उत्पन्न होंगे।'

अब आप ही संभालो

भजनामृत में यह कहा गया है, 'जब श्रीकृष्ण चैतन्य और श्रीनित्यानन्द इस विश्व में अवतीर्ण हुए, कलियुग के लोग वैष्णव बन गए। यद्यपि जैसे-जैसे समय व्यतीत होगा दिनोंदिन अधिकांश विकसित, मध्यवर्ती और आरम्भिक भक्तजन अपने हृदय में संशय को उत्पन्न होता पाएंगे।' यह श्रीगौरांग प्रभु को चिंतित नहीं करेगा। वे ऐसे अति महान कार्यों के बारे में जानते हैं जो आप करोगे। आप इस भूमि पर दीर्घकाल तक जीवन यापन करेंगे। आप और आपके पार्षद विशुद्ध भक्ति की मार्ग की रक्षा करेंगे। आपकी सामर्थ्य से, जो लोग भगवान् श्रीकृष्ण से विमुख हो गए हैं वे उत्सुकतापूर्वक पुनः उनके सम्मुख होंगे। वे आप में आश्रय खोजेंगे।'

श्रीरघुनन्दन का तिरोभाव

श्रीनिवास आचार्य को ऐसे अनेक वचनों से शान्ति प्रदान कर श्रीरघुनन्दन, श्री मदन-गोपाल और गौरांग के श्रीविग्रह के समक्ष गए। उन्होंने स्वयं और उनके पुत्र को श्रीगौर और श्रीगोपाल के श्रीविग्रह के समक्ष झुकाया और समर्पित कर दिया। तीन दिवस तक वे संकीर्तन के उल्लास में मस्त रहे। नरहरि के चरणकमलों का ध्यान करते हुए उन्होंने अपने नेत्र गोपाल और गौरांग के श्रीविग्रह पर केन्द्रित कर लिए। उन्हें निहारते हुए और पुनः-पुनः श्रीकृष्णचैतन्य के पावन नाम का जप करते हुए श्रीरघुनन्दन धरा से अन्तर्धान हो गए।

यह घटनाऐं देखकर लोग आश्चर्य से भर गए। यह सब श्रावण मास की **शुक्ल पक्ष एकादशी** के पावन दिवस पर हुआ था। श्री रघुनन्दन की महिमा का गान कौन नहीं करेगा?

दुर्लभ उत्सव हुआ

श्रीरघुनन्दन के पुत्र थे श्रीकानाई ठाकुर। उन्होंने एक महोत्सव का प्रबन्ध किया। प्रबन्ध की कोई सीमा नहीं थी। जब तक श्रीनिवास आचार्य खरदह में थे, उत्सव नहीं मनाया गया। मैं उत्सव का वर्णन नहीं कर सकता। खण्ड से प्रभु के सभी भक्तजन पधारे। मैं श्रीनिवास आचार्य और नरोत्तम ठाकुर का वर्णन कैसे करूँ। वे अति बुद्धिमान थे। वे सावधान और आदरणीय थे। वे संकीर्तन के आनन्द से भरे थे।

श्रीकानाई ठाकुर के पुत्र थे श्रीमदन, जो संकीर्तन में अद्‌भुत नृत्य करते थे। मदन की महिमा का वर्णन करने की सामर्थ्य किस में है? मैंने मात्र कुछ ही शब्दों में संक्षेप में वर्णन किया है। कानाई के दो पुत्र थे- श्रीमदन और वंशी- जो कि दोनों समर्पित थे। यहाँ तक कि अपनी पौगण्ड आयु में भी मदन ने विशुद्ध आध्यात्मिक सेवा-रत्न प्राप्त कर लिया था।

उन्होंने स्वयं को नरहरि प्रभु के चरणकमलों में समर्पित कर दिया था। उन्हें देखकर हर कोई आनन्द से भर उठता था। संकीर्तन में उनके नृत्य का वर्णन कैसे करें? मैं क्या कहूँ? श्री खण्ड में विशुद्ध प्रेम का वैभव स्वयं प्रकट हुआ, वह विशुद्ध प्रेम जो सब कामनाऐं पूर्ण कर दे।

कुछ समय पश्चात् पधारने वाले सभी भक्तजन अपने अपने निवास पर लौट गए और श्रीनिवास आचार्य ने भी आदर सहित विदा ली और प्रस्थान किया। वचन सुनकर विदा होने के समय पर कानाई ने बात की, श्रीनिवास आचार्य उनके नेत्रों से बहते अश्रुओं में तैर गए। श्रीरघुनन्दन की महिमा का स्मरण करते हुए रोते हुए श्रीनिवास आचार्य याजिग्राम लौट गए।

श्रीनिवास आचार्य चार दिवस तक याजिग्राम में रुके और तब शीघ्रता से वे वन विष्णुपुर चले गए। आनन्दित हृदय से राजा और उनके अनुचर श्रीनिवास आचार्य ठाकुर का अभिवादन करने गए। वन विष्णुपुर में श्रीनिवास आचार्य एक अद्‌भुत आवास में रुके। अपने पार्षदों से घिरे श्रीनिवास आचार्य भव्य और गौरवशाली थे। श्रीनिवास आचार्य के दर्शन कर वे दिवस और रात्रि आनन्द से भरे रहे।

एक रात्रि श्रीनिवास आचार्य ने स्वप्न में श्रीगौरचन्द्र के आदेश पर स्वयं को पुनः विवाह करते देखा। मैं संक्षेप में श्रीनिवास आचार्य के अति अद्‌भुत दूसरे विवाह का वर्णन करूँगा। राढ़-देश में गोपालपुर के गांव में ब्राह्मणजनों का एक प्रसिद्ध समुदाय था। उस गांव में रघुनाथ नामक ब्राह्मण का आवास था। कुछ लोग उन्हें रघुनाथ चक्रवर्ती के नाम से पुकारते थे। इन ब्राह्मण की पत्नी का नाम था माधवी, और उनकी पुण्यात्मा पुत्री थी गौरांगप्रिया।

ब्राह्मण को भी स्वप्न

पुत्री के लिए अभी किसी वर का प्रबन्ध नहीं हुआ था। इस कारण ब्राह्मण और ब्राह्मणी हृदय से चिंतित थे। एक प्रातः ब्राह्मणी ने मधुर स्वर में अपने पति से कहा, 'मेरे स्वप्न में एक अति पुण्यात्मा ने मुझसे कहा, 'श्रीनिवास आचार्य तुम्हारी पुत्री के पति होंगे।' मैंने आदरसहित श्रीनिवास आचार्य के यहाँ आगमन के बारे में पूछा। ब्राह्मण ने कहा, 'वे शान्तिपुर से आयेंगे।' मैंने दूसरा प्रश्न पूछने का प्रयास किया परन्तु स्वप्न टूट गया। उस स्वप्न में मैंने जो प्रभा देखी, वह मेरे हृदय में भर गई है।'

ब्राह्मण ने कहा, 'आज प्रातः मैंने भी एक स्वप्न देखा, जिसमें मैंने अपनी पुत्री श्रीनिवास आचार्य को प्रदान कर दी।'

यह वचन सुनकर ब्राह्मणी बोली, 'अब इसमें इतना विलम्ब क्यों? हमें श्रीनिवास आचार्य को स्वीकार कर लेना चाहिए।'

ब्राह्मणी के वचन सुनकर आनन्दपूर्ण हृदय से ब्राह्मण तत्क्षण गए और अपना निवेदन श्रीनिवास आचार्य के समक्ष रख दिया। ब्राह्मण के वचन सुनकर श्रीनिवास आचार्य अवाक् रह गए। सभी को प्रसन्न करने के लिए उन्होंने विवाह के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

'उत्तम! उत्तम!' हर किसी ने पुनः-पुनः कहा। 'यह कन्या योग्य है। यह अद्‌भुत रूप से सुन्दर है।'

राजा और उनके पार्षद आनन्द मग्न थे। श्रीनिवास आचार्य के विवाह पर अति धन व्यय किया गया। कुछ दिवस श्रीनिवास आचार्य विष्णुपुर में रुके। तब सबको सांत्वना देकर श्रीनिवास आचार्य अपने निवास पर लौट आए। आनन्दपूर्ण हृदय से याजिग्राम के लोगों ने श्रीनिवास आचार्य को निहारा।

दोनों पत्नियां परम प्रसन्न

श्रीनिवास आचार्य की दोनों पत्नियों ने एक-दूसरे को निहारा। उनका हृदय निष्कपट आध्यात्मिक प्रेम के आनन्द से भर उठा। जो आध्यात्मिक प्रेम उन दोनों ने अनुभव किया, मुझमें सामर्थ्य नहीं कि उसका वर्णन कर सकूँ। श्रीनिवास आचार्य की सेवा करते हुए वे दोनों आनन्द से भर जाती थीं। श्रीनिवास आचार्य, भगवान् श्रीकृष्ण की सेवा के आध्यात्मिक प्रेम की गतिविधियों में सदैव गौरवान्वित रहते। अपने शिष्यों के सान्निध्य में वे मुक्त रूप से धार्मिक ग्रन्थ रूपी अनमोल रत्नों का वितरण करते।

एक दिवस श्रीनिवास आचार्य ने अपने शिष्यों से कहा, 'अचानक महान उल्लास ने मेरे हृदय में जन्म लिया है। श्री परमेश्वरी दास और अन्य भक्तजन आज यहाँ आयेंगे।'

श्री परमेश्वरी दास

जब उन्होंने यह वचन बोले उसके पश्चात् श्रीनिवास आचार्य ने दूर से श्रीपरमेश्वरी दास को आते देखा। दूर से श्रीनिवास आचार्य और अन्य भक्तजनों ने उनका स्तुति-वचन कहकर आदर किया। भक्तजनों ने श्रीपरमेश्वरी दास और उनके पार्षदों के कुशलक्षेम के बारे में पूछा। भक्तजनों ने उन्हें बैठने के लिए उत्तम स्थान दिए।

श्रीपरमेश्वरी दास ने सौम्यता से कहा, 'मैं यहाँ बिना किसी अवरोध के आया हूँ। मैं तत्क्षण श्रीवृन्दावन जाऊँगा।'

श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह के आदेश का पालन करते हुए, मैं राधिका जी का श्रीविग्रह उनके पास ले जा रहा हूँ। वे उनके बाँई ओर पधराई गई थीं। पूर्व में ठाकुरानी का श्रीविग्रह भगवान् गोपीनाथ जी के दाँई ओर पधराया गया था। वे अद्भुत रूप से सुन्दर हैं। मैंने उन्हें अपने नेत्रों से देखा है।

हे श्रीनिवास, श्रीगोपीनाथ जी को अपनी प्रियतमा के संग सिंहासन पर बैठे निहार कर कोई भी शांत नहीं रह सकता। लोग स्वयं में बातें करते, 'अद्भुत रूप से परिधान धारण कर और सुसज्जित श्री राधिका जी के श्रीविग्रह को देखो! जाह्नवा-देवी द्वारा प्रेषित राधिका जी, भगवान् गोपीनाथ के बाँई ओर आकर खड़ी हैं।' ऐसे वचन बोलते हुए लोगों ने श्रीमती जाह्नवा-देवी की महिमा का गान किया। जाह्नवा-देवी की महिमा को इस प्रकार श्रवण कर कौन अपने हृदय के भीतर शांतिदायक आनन्द का अनुभव नहीं करेगा?

हर कोई पुनः-पुनः श्री राधिका जी को निहारता। भगवान् श्रीगोपीनाथ के मुख को निहारते हुए लोगों ने प्रार्थना निवेदन की। मैं वर्णन नहीं कर सकता कि कैसे लोग आध्यात्मिक प्रेम के भाव से भर उठे थे। अपलक नेत्रों से वे श्री

राधिका जी को निहारते। घूम-घूम कर लोग पुकारते, 'जाह्नवा देवी ने श्री राधिका जी के इस श्रीविग्रह को भेजा है। श्री राधिका जी को निहारते हुए लोगों ने महोत्सव मनाया। इस प्रकार वे सब प्रकार के कष्टों से मुक्त हो गए।'

आज मैं नौका से कंटक-नगर जाऊँगा। मैं आगे खरदह में समाचार भेजूँगा। श्रीमती जाह्नवा-देवी शीघ्र लौट आएंगी। यह मैं तुम्हें बताऊँगा। यह समाचार है।

यह वचन सुनकर श्री आचार्य आनन्दमग्न हो गए। अपने सभी पार्षदों के संग वे कंटक-नगर गए। श्री परमेश्वरी दास और उनके पार्षद नौका पर सवार हो गए। अनेकों वचन कहकर श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें विदा किया। श्रीपरमेश्वरी दास और उनके पार्षद खरदह की ओर बढ़े। वहाँ उन्होंने श्रीमती वसुधा और श्रीमती जाह्नवा देवी के चरणकमलों में झुककर प्रणाम किया। मुझमें सामर्थ्य नहीं कि वर्णन कर सकूँ कि सभी भक्तजनों के बोलने पर श्रीमती जाह्नवा-देवी कैसे आध्यात्मिक प्रेम से भर उठी थी। उनके हृदय के विचारों को जानने की सामर्थ्य किसमें है?

आठपुर में श्रीराधागोपीनाथ

श्रीमती जाह्नवा-देवी ने तब सौम्यता से श्रीपरमेश्वरी दास से कहा, 'तत्क्षण आठपुर-ग्राम को जाओ। वहाँ श्रीराधा-गोपीनाथ जी के विग्रहों की सेवा स्थापित करो।'

उनके आदेश पर श्रीपरमेश्वरी दास ने इसप्रकार श्रीश्रीराधा-गोपीनाथ जी की सेवा स्थापित की। सौभाग्यशाली लोगों ने वहाँ उत्सव का आयोजन होते देखा, जब श्रीमती जाह्नवा-देवी का वहाँ पर आगमन हुआ। जिस गांव में भी वे गईं, मैं उसके सौभाग्य का वर्णन नहीं कर सकता।

श्रीवीरचन्द्र प्रभु विवाह

झामटपुर में, जो कि राजबाला हाट के निकट है, वे एक भक्त सेवक के निवास पर गईं। उस आवास में यदुनन्दन आचार्य वास करते थे। श्रीमती जाह्नवा-देवी के अनुग्रह से वे विशुद्ध समर्पण से भर गए। यदुनन्दन की पत्नी का नाम लक्ष्मी था। मैं क्या कहूँ? वह अपने पति के प्रति अति समर्पित थीं। उनकी पुत्रियों के नाम थे **श्रीमती और नारायणी**, जो अनुपम सौन्दर्ययुक्त थीं।

श्रीमती जाह्नवा-देवी की अभिलाषा से सौभाग्शाली ब्राह्मण ने अपनी दोनों पुत्रियां विवाह में श्रीवीरचन्द्र प्रभु को प्रदान कर दीं। विवाह के समय वहाँ अति आनन्ददायक और महान उत्सव मनाया गया। उस महोत्सव में श्रीयदुनन्दन, श्रीवीरचन्द्र के शिष्य बन गए। श्रीमती जाह्नवा-देवी अति आनन्द में थीं। श्रीमती और नारायणी, दोनों वीरचन्द्र की शिष्या बन गईं। सौभाग्यशाली भक्तजनों

ने श्रीवीरचन्द्र के विवाह को देखा। उस विवाह की शोभा और सौन्दर्य का वर्णन कौन कर सकता है?

श्रीनित्यानन्द प्रभु के पुत्र श्रीवीरचन्द्र अति बलशाली और गौरवशाली थे। उन्होंने सारे विश्व को मन्त्रमुग्ध कर लिया था। उनका तन श्रीचैतन्य महाप्रभु के समान था।

कवि कर्णपूर के श्रीगौर-गणोद्देश-दीपिका में यह कहा गया है। 'वीरचन्द्र, प्रभु क्षीरोदकशायी विष्णु हैं, जो भगवान् संकर्षण से स्वयं प्रकट हुए। वीरचन्द्र का तन चैतन्य महाप्रभु से बिलकुल भी भिन्न न था।'

जब विवाह उत्सव पूर्ण हो गया, श्रीवीरचन्द्र अपने निवास पर लौट गए। अपने **पुत्र की दो पत्नियां** देखकर श्रीमती जाह्नवा देवी अति आनन्दमग्न हो गईं। खरदह-ग्राम में हर कोई आनन्दमग्न हो गया। जो भव्य दहेज श्रीवीरचन्द्र को प्रदान किया गया, मैं उसके बारे में पूर्णरूप से नहीं लिख सकता।

श्रीनित्यानंद की सुपुत्री गंगा देवी

गंगा-देवी, अपने भ्राता के विवाह से अति आनन्दमग्न थीं। गंगा-देवी की महिमा का वर्णन करने की वो सामर्थ्य मुझमें कैसे आए। श्रीवीरचन्द्र के विवाह में होने वाली सभी आनन्ददायक गतिविधियों का वर्णन कौन कर सकता है?

गंगा देवी, गंगा नदी का अवतार थीं, जो कि भगवान् विष्णु के चरणकमलों के स्पर्श से उत्पन्न हुई थीं। **उनके पति थे श्रीमाधव आचार्य**, जो कि विशुद्ध समर्पण भाव से भरे थे।

श्री गौर-गणोद्देश-दीपिका में यह कहा गया है, 'श्रीनित्यानन्द प्रभु की पुत्री गंगा-देवी, गंगा नदी का अवतार थीं, जो कि भगवान् विष्णु के चरणकमलों के स्पर्श से उत्पन्न हुई थी। उनके पति श्रीमाधव आचार्य, महाराज शान्तनु के अवतार थे।'

श्री वैष्णव-वन्दना में यह कहा गया है। 'मैं श्रीमाधव आचार्य के प्रति अपना प्रणाम निवेदन करता हूँ, जो कि आध्यात्मिक प्रेम और आनन्द से परिपूर्ण हैं। भक्ति में उनके विशुद्ध समर्पण भाव से वे गंगा-देवी के प्रिय पति बने।'

जाह्नवा देवी द्वारा श्री गोपीनाथ सेवा

खरदह में जो आनन्द भर उठा, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता। कौन श्रीवीरचन्द्र की महिमा का गान नहीं करेगा? इस प्रकार श्रीमती जाह्नवा-देवी ने अपने पुत्र के विवाह का प्रबन्ध किया। उन्होंने निर्धन और पतित लोगों को आध्यात्मिक सेवाओं में लगाया। अपने पार्षदों के सान्निध्य में वे पुनः श्रीवृन्दावन गईं। वहाँ उन्होंने श्रीराधा-गोपीनाथ जी के श्रीविग्रह के दर्शन किए। मध्य में

भगवान् गोपीनाथ हैं। राधा जी उनके बाँई और दाँई दोनों ओर हैं। उनकी अद्‌भुत शोभा और सौन्दर्य का वर्णन विविध प्रकार से किया गया है।

श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती के ग्रन्थ स्तवामृत-लहरी में यह कहा गया है। 'क्या वे दो आध्यात्मिक प्रेम से पुष्पित रस द्वारा आलिंगन करते हुए गहरे तमाल वृक्ष हैं? क्या वे दो कौन्धने वाली विद्युत के संग वर्षा के गहरे बादल हैं? क्या वे दो अनुराधा नक्षत्रों के संग गहरे काले चन्द्रमा हैं? चौड़े वक्ष वाले भगवान् श्री गोपीनाथ हमारे जीवन का लक्ष्य हैं।'

भगवान् श्रीगोपीनाथ की सुन्दरता का वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ? वे आध्यात्मिक प्रेम का अवतार हैं। वे जाह्नवा-देवी के समर्पण द्वारा पराजित हैं। श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती के ग्रन्थ स्तवामृत-लहरी में यह वर्णन है। 'चौड़े वक्ष वाले श्रीगोपीनाथ, जो दीन और निराश्रित जनों को दर्शन देते हैं, और जो दीनता से अपने भक्तजनों को अपने शेष प्रसाद का अमृत प्रदान करते हैं, प्रसाद जिसे देवता गण भी प्राप्त नहीं कर सकते, वह हमारे जीवन का लक्ष्य है।'

श्रीराधा-गोपीनाथ जी के लिए जाह्नवा-देवी ने विविध भेंट निवेदन की, जो वे गौड़-देश से लाई थीं। श्रीश्रीराधिका-गोपीनाथ ने अन्न, सब्जियाँ और अन्य खाद्य पदार्थ ग्रहण किए, जो श्रीमती जाह्नवा-देवी लाई थीं।

उन्होंने अनेकों प्रार्थनाऐं श्रीश्रीराधा-गोपीनाथ जी के सम्मुख निवेदन कीं। कौन श्रीमती जाह्नवा-देवी के कृत्य को समझ सकता है?

तब श्रीमती जाह्नवा-देवी, श्रीगोविन्द और श्रीमदन-गोपाल के श्रीविग्रह के दर्शन करने गईं। उन श्रीविग्रह को निहारते हुए, जो कि श्रीराधा जी के संग खड़े थे, श्रीमती जाह्नवा-देवी को अनुभव हुआ कि उनके नेत्र परम आनन्द से भर उठे हैं। इस प्रकार ये तीन कृपालु श्रीविग्रह श्रीराधारानी के संग उनके साथ खड़े हैं। ये तीन श्रीविग्रह, गौड़ीय वैष्णवजनों के वास्तविक प्राण है।

श्रीचैतन्य-चरितामृत (अन्त्य 20.142-143) में यह कहा गया है। 'श्रीमदन-मोहन जी के श्रीमती राधारानी के संग वृन्दावन के श्रीविग्रह, श्रीगोविन्ददेव के संग श्रीमती राधारानी और श्रीगोपीनाथ जी के संग श्रीमती राधारानी, गौड़ीय वैष्णवजनों की आत्मा और प्राण है।'

श्रीमती जाह्नवा-देवी ने श्रीवृन्दावन में अनेक आनन्दप्रदायक गतिविधियों का आनन्द लिया। मेरे पास केवल एक मुख है। मैं उन सबका वर्णन नहीं कर सकता। विद्वान् भक्त, उनकी यात्रा का वर्णन विस्तारपूर्वक करेंगे। उनके ब्रज वापिस लौटने का वर्णन पूर्व में ही अनुराग-वल्ली और अन्य ग्रन्थों में किया जा चुका है।

श्रीवीरचन्द्र प्रभु द्वारा श्रीवृन्दावन यात्रा

कुछ समय पश्चात् श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने अपनी माता से श्रीवृन्दावन यात्रा की अनुमति प्राप्त की। एक शुभ समय पर उन्होंने खरदह से प्रस्थान किया। अपने पार्षदों के सान्निध्य में वे सप्तग्राम में पधारे। वे एक धर्मनिष्ठ व्यापारी के निवास पर रुके। दो दिवस तक वे संकीर्तन के आनन्द में अभिभूत रहे। पतित और खिन्न लोगों को उन्होंने आध्यात्मिक सेवा का बहुमूल्य भूषण प्रदान किया। तब वे श्रीअद्वैत आचार्य के पुत्र कृष्ण मिश्र के संग आनन्दपूर्वक शान्तिपुर के लिए चल पड़े। वे कीर्तन के आनन्द से भरे हुए थे।

श्रीवीरचन्द्र ने गुप्त रूप से कृष्ण मिश्र से क्या कहा? मैं नहीं जानता। तब अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र अम्बिका चले गए। श्रीनवद्वीप आकर वे वहाँ दो दिन तक रुके। मुझमें वह सामर्थ्य कहाँ से आए कि उन्होंने जो आनन्द अनुभव किया, उसका वर्णन कर सकूँ? केवल एक मुख से, मुझमें वह सामर्थ्य नहीं है कि उन्होंने नदिया में जो उल्लसित आध्यात्मिक आनन्द अनुभव किया, उसका वर्णन कर सकूँ?

श्रीनवद्वीप से श्रीवीरचन्द्र प्रभु शीघ्रता से खण्ड चले गए। वहाँ वे कानाई ठाकुर से मिले। श्रीकानाई ठाकुर श्रीरघुनन्दन के पुत्र थे। उन्होंने जो उल्लसित प्रेम अनुभव किया, मुझ में सामर्थ्य नहीं है कि वर्णन कर सकूँ। श्रीवीरचन्द्र संकीर्तन के आनन्द से भरे थे। तब वे गुप्त रूप से याजिग्राम चले गए। अति आदर से उन्होंने श्रीनिवास आचार्य के गृह में प्रवेश किया। वहाँ उनकी भेंट श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों से हुई। भगवान् कृष्ण के विषय के अमृत को पान कर श्रीवीरचन्द्र आनन्द से अभिभूत हो गए। श्रीनिवास आचार्य ने गुप्त रूप में उनसे क्या कहा? मैं नहीं जानता।

श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र याजिग्राम से कंटक-नगर चले गए। एक दिवस के लिए उन्होंने कंटक-नगर में वास किया। दिवस और रात्रि वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत हो गए। श्रीनिवास आचार्य से विदा लेने के पश्चात् वीरचन्द्र प्रभु भादुरी-ग्राम और श्री खेतरी-ग्राम की ओर बढ़े। नरोत्तम ठाकुर महाशय ने अत्यन्त आनन्द अनुभव किया जब उनकी भेंट वीरचन्द्र प्रभु से हुई! गौरांग प्रभु के मन्दिर के प्रांगण में संकीर्तन में महान् नृत्य हो रहा था। असंख्य लोग श्रीवीरचन्द्र प्रभु के भादुरी में दर्शन करने आए थे। श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने गुप्त रूप से नरोत्तम ठाकुर महाशय से क्या कहा? अंततः श्रीवीरचन्द्र और उनके पार्षदों ने आनन्दपूर्वक ब्रज की अपनी यात्रा जारी रखी।

यात्रा-समाचार

मार्ग में श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने एक गरीबी से पीड़ित ब्राह्मण को अपनी करुणा प्रदान की। ब्राह्मण विशुद्ध समर्पण का बहुमूल्य रत्न प्राप्त कर अति धनी हो गया। एक ब्राह्मण को अपनी विद्वत्ता का बहुत अभिमान था। श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने उस व्यक्ति को इतना अधिक महत्वपूर्ण नहीं समझा। उन्होंने उस व्यक्ति के अभिमान को मसल दिया। तब श्रीवीरचन्द्र ने उस व्यक्ति को समर्पण से परिपूर्ण भक्त बना दिया।

मार्ग में यात्रा करते हुए श्रीवीरचन्द्र ने अपने पार्षदों के संग अनेकों आनन्द-प्रदायक लीलाओं का आनन्द लिया। कुछ दिवस के पश्चात् उन्होंने मथुरा में प्रवेश किया। प्रभु वीरचन्द्र अतिसुन्दर थे। उन्हें देखकर कोई भी शांत नहीं रह सकता था। उन्हें देखकर लोग परस्पर बातें किया करते थे, 'श्रीनित्यानन्द-बलराम के पुत्र के दर्शन करो!' एक व्यक्ति ने कहा, 'कोई जीव इतनी भव्यता के साथ सुन्दर कैसे हो सकता है?'

एक अन्य व्यक्ति ने उत्तर दिया, 'वह कोई साधारण जीव नहीं हैं।'

किसी अन्य भक्त ने कहा, 'देखो! उसके साथी कितने सुन्दर हैं। उनकी भव्यता को निहारना, मेरे नेत्रों को परम आनन्द प्रदान करता है।'

ऐसे वचन बोलते हुए लोग वीरचन्द्र को निहारते। उनके आगमन का समाचार सर्वत्र फैल गया कि वीरचन्द्र श्रीवृन्दावन में आ चुके हैं, यह सुनकर हर कोई उनके दर्शन को आया।

श्रीजीव गोस्वामी, जो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रति आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण थे, श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए। सब गुणों के धाम श्रीकृष्णदास कविराज भी वहाँ गए। श्रीअनन्त आचार्य, जो कि श्रीगदाधर पंडित के उत्कृष्ट शिष्य थे और गोविन्ददेव जी के श्रीविग्रह के सेवायत पुजारी थे, वे भी वहाँ पहुँचे। उनके शिष्य श्रीहरिदास पंडित गोस्वामी जो कि स्वयं भी गोविन्ददेव जी के श्रीविग्रह के सेवायत पुजारी थे और जिनके गुणों का कोई अंत नहीं था,वे भी उनके दर्शन के लिए पहुँचे।

श्रीहरिदास के विशुद्ध प्रेम के वशीभूत गोविन्द के श्रीविग्रह एक बार स्वयं आए और उनसे कुछ दूध और चावल की भिक्षा मांगी। यह 'साधन-दीपिका' में निम्न शब्दों में वर्णित है: 'सर्वोच्च परमात्मा के आदेशानुसार, करुणा के सागर श्रील रूप गोस्वामी ने, मेरे गुरु, श्रीहरिदास को गोविन्द जी के श्रीविग्रह की सेवा सौंपी। उनकी निष्कपट सेवा से प्रसन्न श्रीगोविन्द जी के श्रीविग्रह स्वयं आए और श्रीहरिदास से दूध और कुछ चावल मांगे।'

श्रीवीरचन्द्र प्रभु के दर्शनों को उमड़े

श्रीकृष्णदास ब्रह्मचारी, जो कि श्रीमदन-गोपाल के श्रीविग्रह की सेवा कर रहे थे और गदाधर पंडित के शिष्य थे, वे भी श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए। श्रीगोपाल दास गोस्वामी जो कि श्रीगदाधर पंडित के शिष्य थे, वे भी श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए। श्रीमधु पंडित भी उनके दर्शन करने गए, जो कि श्रीगोपीनाथ जी के श्रीविग्रह की सेवा कर रहे थे और वे भी श्रीगदाधर पंडित के शिष्य थे, श्रीमधु पंडित के गुरुभाई श्रीभवानन्द, जो कि श्रीगोपीनाथ की सेवा करके अति आनन्दित थे, वे भी श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए। इस प्रकार श्रीहरिदास, भवानन्द एवं कुछ अन्य भक्तों का दल और साथ ही श्रीगोविन्द जी की सेवा में मग्न पुजारी आदि सभी आनन्द मग्न होकर श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए।

श्रीकाशीश्वर गोस्वामी जो कि सर्वत्र प्रसिद्ध थे, अति प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण पंडित के संग गए। श्रीकाशीश्वर गोस्वामी के शिष्य श्रीगोविन्द गोस्वामी और श्रीयादवाचार्य भी श्रीवीरचन्द्र के दर्शन करने गए। अति आनन्द से परिपूर्ण हर कोई भक्त श्रीवीरचन्द्रके दर्शन करने गया।

श्रीवीरचन्द्र प्रभु को अपने साथ लेकर सभी ब्रजवासी आनन्दपूर्वक मन्दिरों में श्रीविग्रहों के दर्शन करने गए। उस समय सर्वोच्च प्रभु के प्रति उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम से कौन अभिभूत नहीं होगा? सभी ब्रजवासी वैष्णवजनों ने प्रभु की महिमा का गान किया। भक्तजनों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र ने श्रीगोविन्द, श्रीगोपीनाथ जी और श्रीमदन-मोहन जी के श्रीविग्रहों के दर्शन किए। श्रीराधा-गोविन्द जी, श्रीराधारमण जी और श्रीराधादामोदर जी के श्रीविग्रह को निहारते हुए भक्त जनों को अनुभव हुआ कि उनका हृदय शांत हो गया है।

ब्रजधाम दर्शन

प्रथम श्रीभूगर्भ गोस्वामी और श्रीजीव गोस्वामी तथा अन्य भक्तजनों से अनुमति लेने के पश्चात् श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने ब्रज की यात्रा आरम्भ की। यादव आचार्य और अन्य भक्तजनों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र मधुवन, तालवन, कुमुदवन और बहुलावन गए। भक्तजनों के संग जब वे राधाकुण्ड जा रहे थे, मार्ग में उनकी भेंट श्रीजीव गोस्वामी और उनके पार्षदों से हुई। अनेक वैष्णवजनों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र प्रभु राधाकुण्ड के तट पर गए और उसके अद्भुत सौन्दर्य का अवलोकन किया। राधाकुण्ड के तमाल वृक्ष, जिसके नीचे गौरचन्द्र प्रभु तब बैठे थे जब वे ब्रज के वनों की यात्रा कर रहे थे, उस वृक्ष के निकट जाकर श्रीवीरचन्द्र प्रभु उल्लसित प्रेम से भर उठे। उन्हें देखते हुए भक्तजन आश्चर्य से परिपूर्ण हो गए।

कुछ क्षणों के पश्चात् श्रीवीरचन्द्र प्रभु पुनः शांत हो गए। राधाकुण्ड और श्याम कुण्ड को निहारते हुए वे आनन्द से भर गए। राधाकुण्ड, श्यामकुण्ड और गोवर्धन पर्वत पर वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत हो गए। उन्होंने संकीर्तन में भावपूर्ण नृत्य किया।

ब्रजवासियों ने उन्हें विविध प्रकार का भोजन निवेदित किया। भक्तजनों के दल में उन्होंने वहाँ पाँच छः दिवस तक वास किया। विदा लेकर श्रीजीव, श्रीभूगर्भ और अन्य भक्तजनों ने श्रीवृन्दावन के लिए प्रस्थान किया। यद्यपि उनमें प्रस्थान करने की सामर्थ्य नहीं थी, किसी प्रकार श्रीवीरचन्द्र ने स्वयं को शांत किया और उस स्थान से प्रस्थान कर गए। वे गोवर्धन पर्वत से धीरे से चले और श्रीकृष्णदास कविराज की कुटिया पर पधारे। वहाँ उन्होंने दो दिवस तक वास किया। और तब श्रीकृष्णदास कविराज के सान्निध्य में वे श्रीवृन्दावन चले गए। श्रीवासुदेव, श्रीउद्धव और कुछ अन्य भक्तजन भी प्रभु वीरचन्द्र के संग गए।

गोवर्धन पर्वत से प्रस्थान करते हुए श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने भगवान् श्रीकृष्ण की अनेक लीला स्थलियों के दर्शन किए। भक्तजनों के सान्निध्य में उन्होंने काम्यवन की यात्रा की। काम्यवन में श्रीवीरचन्द्र ने विमल-कुण्ड और अन्य पवित्र कुण्डों में स्नान किया। तब प्रसन्न हृदय से वे वृषभानु-पुर गए। वासुदेव ने श्रीवीरचन्द्र प्रभु से कहा, 'इस स्थान पर महाराज वृषभानु का निवास था। विविध प्रकार के छल से श्रीकृष्ण प्रायः यहाँ आया करते थे। अन्य किसी के दृष्टि पथ में आए बिना वे श्रीमती राधारानी के सुन्दर रूप के माधुर्य को निहारते थे।'

कैसे जाऊँ बरसाना

एक दिवस श्रीकृष्ण ने दीर्घकाल के लिए चिन्तन किया, 'मैं कैसे वृषभानु महल में प्रवेश कर सकता हूँ?' तब श्रीदामा को वृषभानु की पुत्री श्रीराधा के जन्मोत्सव के निमंत्रण के साथ महाराज नन्द के निवास पर भेजा गया। श्रीदामा ने नन्द के निवास पर सभी को निमंत्रण दिया। वहाँ सबको संग लेकर श्रीदामा वृषभानु जी के महल में वापिस लौट आए। अति आनन्दपूर्वक श्रीकृष्ण ने महल में प्रवेश किया। अपनी गोपी सखियों का इशारा पाकर श्रीमती राधारानी एक निज कक्ष में आ गईं। अन्य लोगों से अनभिज्ञ श्रीकृष्ण और राधारानी की उस निज कक्ष में भेंट हुई। उन्होंने दीर्घकाल तक परस्पर एक-दूसरे को निहारा। मंत्रमुग्ध अवस्था में वे अपने नेत्रों को नहीं हटा सके।

श्रीराधा जन्म भजन

इसका वर्णन करते हुए एक सुन्दर भजन है। 'राधिका के जन्मदिवस पर ब्रज में कोई भी शांत न रह सका। अति आनन्द में डूबे नन्द बाबा, श्रीयशोदा मैया और

अन्य श्रीवृषभानु के निवास पर गए। श्रीवृषभानु ने नन्द जी का अभिवादन किया और कीर्तिदा ने यशोदा मैया का अभिवादन किया। आंगन में गोपों ने एक-दूसरे पर दही, हल्दी और अन्य पदार्थ बरसाए। आनन्द मग्न हो उन्होंने नृत्य किया। वाद्य यन्त्रों द्वारा अति सुन्दर कोलाहल होने लगा, कोलाहल का स्वर इतना उच्च था कि किसी को परस्पर वार्तालाप का एक शब्द भी न सुनाई दे। उस पल दूसरों से अगोचर हो श्रीकृष्ण ने एक निज कक्ष में प्रवेश किया जहाँ उन्होंने राधिका जी के सुन्दर मुख को निहारा। चन्द्र समान मुख वाली राधिका जी ने श्रीकृष्ण के श्याम वर्ण मुख की भव्य सुन्दरता को निहारा। वे अपने नेत्रों को न हटा सकीं। नरहरि दास कहते हैं' एक-दूसरे को निहारते हुए दिव्य युगल ने किस अमृत का पान किया 'मैं बता नहीं सकता।'

भक्तजनों के सान्निध्य में श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने वृषभानु-पुर से प्रस्थान किया और नन्द-ग्राम में प्रवेश किया। श्रीवीरचन्द्र प्रभु के मुख को देखते हुए वासुदेव ने कहा, 'इस स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण के जन्म पर महोत्सव हुआ था।'

श्रीकृष्ण जन्म प्रसंग

इस सम्बन्ध में एक सुन्दर भजन है। 'रानी यशोदा ने नन्द जी से कहा, 'आज कृष्ण का जन्मदिवस है। हमें अपने सभी मित्रों और सम्बन्धियों को निमन्त्रित करना चाहिए। मेरे हृदय में यह कामना उत्पन्न हुई है।' यह वचन सुनकर नन्द-गोप प्रसन्न हो गए। विनम्र वचन बोलते हुए उन्होंने उपनन्द के पुत्र को महाराज वृषभानु के निवास पर भेजा। नन्द जी के वचन सुनकर उपनन्द के पुत्र तत्क्षण वृषभानु के महल के लिए चल दिए और उन्हें निमंत्रण दिया। अपने पार्षदों के सान्निध्य में और अनेक उपहार लेकर वृषभानु, नन्द जी के निवास पर गए।'

स्नेह से परिपूर्ण रानी कीर्ति ने राधा का अभिनंदन किया। जैसे ही आनन्द मग्न हो रानी कीर्ति, यशोदा जी से भेंट करने गई, मार्ग में ही उनकी भेंट यशोदा जी से हो गई। अत्यधिक प्रेम से रानी यशोदा उन्हें महल के भीतर लाईं और उन्हें भव्य आसन प्रदान किया। वृषभानु जी और नन्द जी की भेंट हुई और उन्होंने परस्पर कुशल मंगल पूछकर एक दूसरे का अभिनन्दन किया।

ब्रज के घर घर में महोत्सव की चर्चा हो रही थी। मंगल गीत गाते हुए गोपियों ने स्नेहपूर्वक नन्द जी के भवन में प्रवेश किया। स्वयं को विविध प्रकार के आभूषणों से सुशोभित कर और प्रसन्नचित्त हृदय से दही, दूध, घी और हल्दी के उपहार लेकर गोपजन नन्दजी के महल में गए। वाद्य यन्त्रों का वादन हुआ। नन्द बाबा, उनके परिवार और अतिथि गण, सबने आनन्दित होकर नृत्य किया। उत्सव में आनन्द की लहरें बहने लगीं। इस प्रकार घनश्याम दास, नन्द के निवास पर महोत्सव का गायन करता है।

एक अन्य भजन भी इस उत्सव को वर्णित करता है। अहा! श्रीकृष्ण के जन्मदिवस पर नन्द महल में कितना आनन्द भर गया है! दूर से ही राधारानी को श्रीकृष्ण अपलक निहारने लगे। वे रो पड़े। राधा भी शान्त न रह सकीं। अन्य लोगों से अगोचर हो उन्होंने श्रीकृष्ण के मुख के श्याम वर्ण चन्द्रमा को निहारा। अपने नेत्रों के कोने से राधा जी ने अपनी गोपी सखी को इशारा किया, 'इन सब अग्रज ज़नों की उपस्थिति में कैसे हम अपनी समस्या का समाधान करेंगे? सोचते सोचते आनन्दित राधा मुरझा गईं। उनका दुबला तन स्वेद से भीग गया।'

श्रीराधाकृष्ण मिलन

उस क्षण किसी बहाने से ललिता, राधा को एक निर्जन स्थान पर ले गई। संकेत पाकर कुन्दलता ने श्रीकृष्ण को उस निर्जन स्थान पर भेज दिया जहाँ राधारानी पहले से ही विराजमान थीं। अति आनन्द में दिव्य-युगल का मिलन हुआ। गोपियों के संग रहकर नरहरि दास ने दूर से इस आनन्दपूर्ण दृश्य का भावावलोकन किया।

पावन सरोवर

श्रीकृष्ण के जन्मदिवस के इस मिलन को प्रसन्नतापूर्वक श्रवण करने के पश्चात्, श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने भक्तजनों के संग श्रीकृष्ण की अनेक लीला स्थलियों के दर्शन किए। उन्होंने पावन सरोवर को देखा, जहाँ भगवान् श्रीकृष्ण ने स्नान किया था। तब श्रीवीरचन्द्र खदिरवन और जावट गए। उन्होंने अनेक लीला स्थलियों के दर्शन किए। तब वे राम-घाट चले गए, जहाँ श्रीबलराम ने रास-नृत्य का आनन्द लिया था।

भगवान् बलराम की लीलाओं का गान करते हुए श्रीवीरचन्द्र ने नृत्य किया। तब उन्होंने प्रसन्नचित्त हो भाण्डीर वन में वट वृक्ष के दर्शन किए। उस समय वासुदेव ने कहा, 'यह वही वट वृक्ष नहीं है। **भाण्डीर वन का वास्तविक वट वृक्ष अन्तर्धान हो चुका है।**'

यह वचन सुनने के पश्चात् श्रीवीरचन्द्र निर्जन स्थान पर बैठ गए। अपने हृदय में उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण की भाण्डीरवन की लीलाओं के आनन्द का ध्यान किया। तब श्रीवीरचन्द्र ने अचानक दोनों भ्राता श्रीकृष्ण और श्रीबलराम को देखा। अपने गोप सखाओं के संग अनेक लीलाओं का आनन्द लेने के लिए वे इस स्थान की ओर आगे बढ़े। श्रीभाण्डीरवन की शोभायमान सुन्दरता को निहारते हुए वीरचन्द्र ने अनुभव किया कि उनका हृदय उल्लास से अधीर हो गया है।

श्रीवीरचन्द्र नन्द-घाट, चीर-घाट, भद्रवन, भाण्डीरवन और लोहवन की ओर चले। अपने साथियों के संग वे महावन में श्रीगोकुल को गए। अति आनन्द

में उन्होंने भगवान् श्रीकृष्ण की जन्मभूमि के दर्शन किए। उन्होंने राधिका जी की जन्मभूमि रावल के दर्शन किए। उन्होंने मथुरा में विश्राम-घाट में स्नान किया। वे अक्रूर-तीर्थ पर गए। तब उन्होंने वृन्दावन में श्रीगोविन्ददेव मन्दिर में प्रवेश किया।

गोविन्द मन्दिर में जन्माष्टमी

उस दिवस भाद्रपद कृष्ण जन्माष्टमी दिवस था। श्री गोविन्द की एक आनन्दमय अभिषेक से आराधना की गई। यह देखकर हर किसी के हृदय में आनन्द भर गया। लोगों ने मधुर और विनम्र वचन कहे।

इस सम्बन्ध में एक सुन्दर भजन है। अब मंगल समय पर जन्माष्टमी का अभिषेक किया गया। श्रीगोविन्द जी के श्री विग्रह अपने सिंहासन पर आनन्दमय चन्द्रमा के समान चमक रहे हैं।

उनके आकर्षक अंग सम्पूर्ण विश्व को मंत्रमुग्ध कर रहे थे। उनकी अतुलनीय सुन्दरता अमृत का एक सागर थी। जो कामदेव के गर्व का मर्दन कर रहा है, ऐसे श्रीगोविन्द के मुख को निहारते हुए, कोई भी शांत नहीं रह सकता था। मन्दिर के प्रांगण में हर किसी ने दही, हल्दी और अन्य पदार्थ बरसाए। उन्होंने आकर्षक नृत्य किया। भक्तजनों ने अभिषेक की महिमा वाले अनेकों भजन गाए। अनेक लय ताल का स्वर गूँजने लगा। हर हृदय आनन्द से अभिभूत हो गया। मृदंग और अन्य वाद्य यंत्रों ने, 'द्रमी-द्रमी ता द्रमिकी द्रमीकी ताधिक! घोष करना आरम्भ कर दिया। लोगों से अगोचर होकर देवगणों के अग्रणी अपने परिजनों के संग आए और पुष्प वर्षा की। वहाँ पर 'जय! जय!' का अति कोलाहल पूर्ण स्वर था। 'घनश्याम' का हृदय आनन्द से भर उठा।'

इस सम्बन्ध में एक अन्य भजन है। 'शोभायमान अभिषेक उत्सव के दर्शन करो! एक शुभ समय पर गोकुल के लोगों के अति प्रिय श्रीगोविन्द को सिंहासन पर पधराया गया। वे भव्य और शोभायमान थे। अहा! उनका सुन्दर रूप कितना मधुर था! उन्होंने पवित्र कन्याओं के हृदय को चुरा लिया था।'

एक भक्त ने नवीन सुगन्धित लेप से श्रीगोविन्द का अभिषेक किया और तब अभिषेक उत्सव मनाया गया। उत्सव के दौरान कौन भक्त हृदय से शांत रह सकता था? एक भक्त ने श्रीगोविन्द के ऊपर पीला वस्त्र रख दिया जो कि श्याम वर्ण के मेघ पर फैली विद्युल्लता के समान प्रतीत हो रहा था। श्रीगोविन्द के मस्तक पर, वह मस्तक जो सम्पूर्ण विश्व को मंत्रमुग्ध कर दे, एक भक्त ने गोरोचन और चन्दन का तिलक लगाया। एक भक्त ने श्रीगोविन्द जी के केश बाँधे। श्रीगोविन्द की भव्यता विश्व की शांति को लूट रही थी। एक भक्त ने श्रीगोविन्द के कानों में कुण्डल धारण कराए। कितनी मधुरता से वे इधर-उधर झूल रहे थे! कौन उनके द्वारा मंत्रमुग्ध न होगा? एक भक्त ने श्रीगोविन्द के

कण्ठ में रत्नजड़ित कण्ठहार धारण करवाया। ब्रज की कन्याओं में अब काम की इच्छा दमकने लगी थी। एक भक्त ने श्रीगोविन्द के लाल चरणकमलों में नूपुर धारण करवाए। नूपुर की छन-छनाहट के स्वर, 'झुनु नुनु नुनु!' ने ब्रज की कन्याओं को आनन्द में मंत्रमुग्ध कर दिया।

श्रीगोविन्द को निहारते हुए, कितने कामदेव उल्लसित होकर मूर्छित हो गए? 'घनश्याम दास' ने श्रीगोविन्द की आराधना की।

श्रीमदन-मोहन और श्रीगोपीनाथ के श्रीविग्रह को निहारते हुए प्रभु वीरचन्द्र आनन्द से भर उठे। भाद्रपद शुक्ल अष्टमी पर श्रीराधिका जी का जन्म दिवस होता है। उस दिन श्रीवीरचन्द्र ने श्रीराधिका के शोभायमान अभिषेक के दर्शन किए।

श्रीराधाष्टमी महोत्सव

इस उत्सव को अति सुन्दर भजन में वर्णित किया गया है। अभिषेक दिवस कितना शुभ और शोभायमान था। अपने रत्नजड़ित सिंहासन पर बैठकर श्रीराधिकाजी भव्य और शोभायमान थीं। उनका दमकता रूप नवीन स्वर्ण की छटा को परास्त कर रहा था। उनके मुख का चन्द्रमा कितने चन्द्रमाओं के अहंकार को परास्त कर रहा था! उनकी आकर्षक झलक की भव्यता की कोई तुलना नहीं थी। उनका हर अंग सम्पूर्ण विश्व के हृदय को मंत्रमुग्ध कर रहा था। उनके भव्य सौन्दर्य को कौन नहीं निहारेगा? उन्हें एक बार देखकर कोई भी उनसे अपनी दृष्टि नहीं हटा सकता था। चारों दिशाओं से हर कोई, 'जय! जय!' पुकारने लगा। वाद्य यन्त्रों का स्वर भूमि से लेकर आकाश तक भर गया। कितने लोगों ने नृत्य किया। मैं संख्या नहीं लिख सकता। लोगों ने दूध, दही और हल्दी बरसाई। पल-पल क्षण-क्षण उत्कृष्ट आनन्द उत्पन्न होने लगा। हर किसी व्यक्ति का हृदय आनन्द से अभिभूत हो गया। हर व्यक्ति जो प्रसाद की भिक्षा माँगता, तृप्त हो जाता। विश्व श्रीराधिका जी की महिमा से परिपूर्ण हो गया। इस प्रकार 'नरहरि गाते' हैं।

श्रीराधा-शोभा

इस सम्बन्ध में एक अन्य भजन भी है। 'अब एक शुभ समय पर मंगल अभिषेक उत्सव है। अपने सिंहासन पर बैठी श्रीराधिकाजी भव्य और शोभायमान हैं। देखो! देखो! अपने नेत्र उनके शोभायमान रूप की भव्यता से भर लो। उस रूप में कितनी मधुरता की विश्रान्ति थी। किसी स्वर्णिम कन्या से उनकी तुलना थी? उनका मुख रूपी चन्द्रमा आकाश में चमकने वाले चन्द्रमा को परास्त कर रहा था। कितनी अप्रतिम मधुरता उनकी विनम्र मुस्कान में विद्यमान थी, एक मुस्कान जो सदा सर्वदा अमृत बहाती है। उनकी मंत्रमुग्ध झलक सम्पूर्ण विश्व

को आकर्षित करती है। मृग मछलियां और खंजन पक्षी सभी उनके शोभायमान अधीर नेत्रों की आराधना करते हैं। उनके काले केश उस घनघोर अंधकार के समान हैं जिसने विश्व को भर दिया हो। उनका मुख और केश विद्युत लता के संग श्याम वर्ण मेघ के समान है। उनकी नाक का दमकता आभूषण उनके अधरों को लगभग स्पर्श कर रहा था। उनकी भृकुटियाँ दो कृष्ण सर्पों के समान अथवा श्याम वर्ण की मधुमक्खियों की पंक्ति के समान हैं।' श्रीराधिका जी के केशों की भव्यता देखकर कामदेव भी अभिभूत हो अचेत होकर गिर गए।

श्रीराधिका रानी की भुजाओं की भव्यता स्वर्णिम कमल नाल को परास्त कर रही थीं। उनकी अंगुलियां दमकते चम्पक पुष्प के पल्लवों के समान थीं। उनकी अंगुलियों के रक्तिम नख पुष्पित मल्लिका पुष्प के समान थे। उनका शोभायमान कण्ठ और वक्षस्थल कितने आकर्षक थे! उनका भव्य कटिप्रदेश सिंह की कमर का उपहास कर रहा था। उनके नितम्ब अतुलनीय भव्यता से युक्त थे। उनकी अत्यधिक प्रिय जंघाए केले के उल्टे वृक्षों के समान थीं। रक्तिम सूर्योदय का सूरज जो उनके चरणकमलों में विश्राम पाता था, वह नरहरि दास के हृदय में दमकता है।

श्रीराधिका जी के जन्मदिवस पर उनके अभिषेक को निहारते हुए प्रभु वीरचन्द्र अपने हृदय को शांत न रख सके। श्रीवृन्दावन में कुछ दिवस आनन्दपूर्वक वास करने के बाद श्रीवीरचन्द्र प्रभु और उनके पार्षद वापिस गौड़-देश लौट आए। हर किसी से विदा लेकर श्रीवीरचन्द्र ने प्रस्थान किया। केवल एक ही मुख वाले मुझ में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि सब लीलाओं का वर्णन कर सकूँ।

श्रीवीरचन्द्र प्रभु की वापसी

श्रीवीरचन्द्र के प्रस्थान के समय हर कोई उनके आसपास एकत्र हो गए। जब वे कुछ देर चले तो हर किसी ने रुदन आरम्भ कर दिया। प्रभु वीरचन्द्र अपने नेत्रों से बहते हुए अश्रुओं में भीग गए। पुनः-पुनः उन्होंने हर किसी से विदा ली। अंततः शांत होकर श्रीवीरचन्द्र ने मथुरा से प्रस्थान किया और गौड़-देश लौट गए।

गौड़-देश में श्रीवीरचन्द्र उन सब पवित्र स्थानों के दर्शन करने गए जहाँ वे पूर्व में जा चुके थे। हर किसी के लिये उन्होंने अपनी श्रीवृन्दावन यात्रा का वर्णन किया। वे बिना रुके संकीर्तन के आनन्द में तैरते रहे। खरदह में आकर उन्होंने अपनी माता को प्रणाम किया।

इस प्रकार मैनें संक्षेप में श्रीवीरचन्द्र प्रभु की श्रीवृन्दावन यात्रा और वापिस गौड़-देश की यात्रा का वर्णन किया। बाद में विद्वान् भक्तजन इन लीलाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। यह ग्रन्थ अति बृहद् हो जाएगा, इस आशंका से मैं

श्रीवीरचन्द्र और श्रीमती गंगा-देवी के अमृतमय गुणों और लीलाओं का विस्तार से वर्णन नहीं करूँगा।

जो व्यक्ति इस व्याख्या का विश्वासपूर्वक श्रवण करेंगे वे पुनः-पुनः जन्म-मरण के बन्धन को सरलता से तोड़ देंगे। अपने दांतों में तिनका दबाकर पुनः-पुनः विनती करता हूँ। कृपया आध्यात्मिक सेवाओं के रत्न-आभूषण से परिपूर्ण समुद्र इस ग्रन्थ 'भक्ति-रत्नाकर' में तैर जाओ और आनन्द लो।

श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों के बारे में चिन्तन करते हुए मैं नरहरि दास भक्तिरत्नाकर का लेखन करता हूँ।

चतुर्दश प्रवाह

श्री जीवगोस्वामी द्वारा लिखित पत्र एवं वोराकुलि ग्राम महोत्सव

सभी के आश्रय श्रीकृष्ण चैतन्य की जय जयकार हो! श्रीनित्यानन्द की जय जयकार हो, जो कि रोहिणी के पुत्र श्रीबलराम हैं। कुबेर के पुत्र श्रीअद्वैतचन्द्र की जय जयकार हो! श्रीगदाधर की जय जयकार हो, जिनके लिए श्रीगौरांग प्रभु उनके प्राण है!

श्रीवास और श्रीमुरारी की जय जयकार हो, जो आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण हैं! वक्रेश्वर की जय जयकार हो, जो आध्यात्मिक गुणों के धाम हैं! श्रीहरिदास की जय जयकार हो! श्रीगदाधर दास की जय जयकार हो! श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि और श्रीशुक्लाम्बर की जय जयकार हो!

श्रीनरहरि, श्रीगौरीदास और श्रीधनंजय की जय जयकार हो! श्रीभवानन्द के पुत्र श्रीरामानन्द की जय जयकार हो! श्री विजय वसु, श्रीमाधव और श्रीमुकुन्द की जय जयकार हो! श्रीकाशीश्वर, श्रीयदु और श्रीपरमानन्द की जय जयकार हो! श्रीनन्दन और आचार्यरत्न की जय जयकार हो! श्रीरूप और श्रीसनातन की जय जयकार हो, जो श्रीगौरचन्द्र प्रभु के अतिप्रिय हैं! श्रीरघुनाथ दास, श्रीरघुनाथ भट्ट, श्रीगोपाल भट्ट, श्रीभूगर्भ, श्रीलोकनाथ और करुणामय श्रीजीव गोस्वामी की जय जयकार हो!

श्रीगौरचन्द्र के भक्तजनों की जय जयकार हो! उन सबका स्मरण करते हुए जीव आध्यात्मिक सेवाओं की निधि प्राप्त कर सकता है।

इस ग्रन्थ के सभी पाठकों की जय जयकार हो! वे पाठक धार्मिक गुणों के धाम हैं। हे पाठको, अब जो मैं कहूँगा उसे ध्यान से श्रवण करो। आनन्द मग्न हृदय से श्रीनिवास आचार्य ठाकुर अपने पार्षदों के संग नियमित रूप से आध्यात्मिक साहित्य के अमृत का पान करते थे। प्रभु की करुणा से वे धर्म

ग्रन्थों के महान अध्यापक थे। वे नियमित रूप से उन जीवों के झूठे अभिमान को मिटाते थे जो आध्यात्मिक सेवाओं का विरोध करते थे।

श्रीनिवास आचार्य की विशुद्ध भक्ति का कोई अंत न था। श्रीजीव गोस्वामी उनके प्रति अति सम्माननीय थे। श्रीजीव जो स्नेह श्रीनिवास के लिए अनुभव करते थे, किसमें सामर्थ्य है कि उसका वर्णन कर सके? सौभाग्य से उन्होंने ब्रज से अनेक पत्र श्रीनिवास को प्रेषित किए।

एक दिवस श्रीनिवास आचार्य ने अपने पार्षदों से कहा, 'श्रील जीव गोस्वामी का एक पत्र आएगा। उसमें इतना विलम्ब क्यों हो रहा है?'

आ गया पत्र

उसी क्षण वसन्त राय नाम के एक बुद्धिमान भक्त ने श्री श्रीनिवास आचार्य की सभा में प्रवेश किया जो एक पत्र लिए था, कुछ ही शब्दों में उसने ब्रज का समाचार बता दिया। तब उसने श्रील जीव गोस्वामी का पत्र श्रीनिवास आचार्य को दिया। अति सम्मान से श्रीनिवास आचार्य ने पत्र को स्वीकार किया। पत्र पढ़ते हुए उनके नेत्रों से अश्रु बहते हुए वक्षस्थल तक आ गए।

पत्र-प्रारंभ

श्रीवृन्दावन के अधीश्वर श्रीकृष्ण की जय जयकार हो। श्री श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में प्रणाम, जिनके चरण मुझको सब प्रकार की प्रसन्नता प्रदान करते हैं। वह, जो जीव नाम को धारण करता है, सम्मान सहित प्रणाम निवेदन करता है और आपको निम्न सूचना प्रदान करता है।

मैं सदैव आपके कल्याण की कामना करता हूँ। बहुत दिवस से हमने आपका कोई समाचार श्रवण नहीं किया है। आप हमें महान प्रसन्नता प्रदान करते हैं। वर्तमान में मैं और सभी स्वस्थ हैं। एकमात्र अपवाद श्रीभूगर्भ गोस्वामी हैं, जिन्होंने स्वयं को, तन और आत्मा से श्रीवृन्दावन के अधीश्वर भगवान् कृष्ण के सम्मुख समर्पित कर दिया है। आपके अनुचरों में, कृपया हमें श्रीवृन्दावन दास के बारे में लिखें। क्या वे अभी भी पढ़ रहे हैं या नहीं?

साथ ही व्यास शर्मा कहाँ है और वे कैसे हैं? मैंने श्री वासुदेव कविराज के बारे में भी यही पूछा है। श्रीभक्ति-रसामृत-सिन्धु, श्रीमाधव-महोत्सव, श्रीगोपाल-चम्पू का द्वितीय भाग और श्रीहरिनामामृत-व्याकरण का सम्पादन भी पूर्ण नहीं हुआ था। वे इस वर्ष तैयार नहीं होंगे। यदि प्रभु अनुकम्पा करें तो मैं अंततः उन्हें पूर्ण कर लूँगा। यहाँ हर किसी ने सम्मान सहित आप सभी को वहाँ प्रणाम भेजा है। कृपया पुण्यात्मा राजा को मेरी ओर से भी आशीष दें।

पत्र विश्राम

इस पत्र में उल्लिखित वृन्दावन दास, श्रीनिवास आचार्य के अग्रज पुत्र है। ब्रज में श्रीनिवास के पत्र की चर्चा थी। श्रील जीव गोस्वामी ने प्रसन्नतापूर्वक उनका नाम उल्लिखित किया। व्यास और वासुदेव, श्रीनिवास आचार्य के दो अनुचर थे। पुण्यात्मा राजा का नाम वीर हम्वीर था।

कुछ दिवस पश्चात् श्रीनिवास आचार्य के लिए एक और पत्र आया, श्रीनिवास आचार्य ने भक्तजनों की सभा में उसे उच्चस्वर से पढ़ा।

द्वितीय पत्र प्रारंभ

श्रीवृन्दावन के अधीश्वर श्रीकृष्ण की जय जयकार हो! श्रीनिवास आचार्य का अभिवादन, जिनमें सभी गुण हैं, और जो मेरे प्रिय मित्र हैं, श्रीवृन्दावन से जीव नामक व्यक्ति ने प्रणाम निवेदन किया है, उनका आलिंगन और उनकी कामना यही है कि आपका सब मंगल हो।

यह अभिवादन उस व्यक्ति की ओर से निवेदित है जो श्रीवृन्दावन में वास करता है। मैं आपके बारे में सुनने को अति उत्सुक था। जब मैं आपके बारे में सुनता था अथवा कुछ अमंगल चर्चा सुनता, मैं हृदय से दुखी हो जाता था। अब मैंने आपसे सुन लिया है, मैं शांत अनुभव कर रहा हूँ।

श्रीश्यामदास एक भक्त थे जो कि जीवन के वास्तविक लक्ष्य को जानते थे। वे उनके संग की कामना करते थे। वे विद्वान् और प्रिय थे। उनकी भगवान् के प्रति आध्यात्मिक सेवा की व्याख्या बिलकुल सही निष्कर्ष प्रदान करती थी। जैसी वे सहायता करते थे, ईश-निन्दक चूर-चूर हो जाते थे। अब मैं वैष्णव-तोषणी, दुर्गमसंगमनी और गोपाल-चम्पू का सम्पादन और पुनर्विचार कर रहा हूँ। अब मैं इन ग्रन्थों में संलग्न हूँ। मैं व्यक्तिगत रूप से सावधानीपूर्वक इन ग्रन्थों का संपादन और पुनर्विचार कर रहा हूँ। निश्चित ही ये होना चाहिए।

पूर्व में मैंने तुम्हें 'हरि-नामामृत-व्याकरण' प्रेषित की थी। यदि उस ग्रन्थ और उसकी टीका को पढ़ा जाए तो (संस्कृत व्याकरण की) सभी असम्मति ठीक हो जाऐंगी। अन्य ग्रन्थ अंतिम चरण में हैं। जब मैं सौभाग्यशाली होऊंगा तो आपके बारे में समाचार श्रवण करूँगा। दूर से मैं आपके कुशलक्षेम का चिन्तन करता हूँ। मैं वृन्दावन दास और अन्यों के कुशलक्षेम के बारे में चिन्तन करता हूँ। मैं श्रीगोपाल दास के नेतृत्व में भक्तजनों की कुशलक्षेम के बारे में भी चिन्तन करता हूँ।

पत्र विश्राम

यह पत्र श्रीनिवास आचार्य को लिखा गया। इस पत्र में उल्लिखित श्यामदास आचार्य, श्रीव्यास आचार्य के सुपुत्र हैं। श्रीवृन्दावन दास, श्रीनिवास के पुत्र हैं।

उनके पश्चात् उल्लिखित अन्य उनके भ्राता और बहन हैं। श्रीगोपालदास, राजा वीर हम्वीर के पुत्र हैं। श्रील जीव गोस्वामी ने उनका नाम यहाँ उजागर किया है। वह भक्त सर्वत्र श्रीदधि हम्वीर के नाम से प्रसिद्ध हो गया। पत्र में श्रील जीव गोस्वामी उनके और उनके पार्षदों के कुशलक्षेम का चिन्तन करते हैं।

जब उन्हें श्रील जीव गोस्वामी से यह पत्र प्राप्त हुआ, श्रीनिवास आचार्य ने प्रति उत्तर में पत्र लिखा। जब वे इधर से उधर गए तो वैष्णव जन ही उन पत्रों को ले गए। वे पत्र जो आनन्द लाए, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता।

उस समय श्रीनिवास आचार्य ठाकुर ने याजिग्राम में लीलाओं का आनन्द लिया। उनका हृदय श्रीरामचन्द्र कविराज के दर्शन के प्रति उदास था। श्रीरामचन्द्र, श्रीनरोत्तम और श्रीगोविन्द, ये तीनों ऐसे रहते जैसे वे सदैव श्री-खेतड़ी-ग्राम में संकीर्तन के मद में चूर हों। एक दिवस जब ये तीनों मिलकर बैठे थे, श्रील जीव गोस्वामी का पत्र इन्हें प्राप्त हुआ। उल्लसित प्रेम से अभिभूत हो और अति आदर से पत्र को अपने मस्तक से शीश से लगाकर गोविन्द ने उच्चस्वर में पत्र को पढ़ा।

तृतीय पत्र प्रारंभ

श्रीवृन्दावन में चन्द्रमा के समान चमक रहे श्रीकृष्ण की जय जयकार हो! श्रीरामचन्द्र कविराज, श्रीनरोत्तमदास और श्रीगोविन्द का अभिवादन, जिनकी सभी वैष्णवों द्वारा प्रशंसा होती है और जो मेरे जैसे व्यक्तियों के लिए अत्यधिक प्रसन्नता का भण्डार हैं।

मैं, जो जीव नाम धारण करता हूँ, श्रीवृन्दावन में वास करता हूँ, आपको आलिंगन प्रदान करता हूँ और विनम्रता से यह वचन कहता हूँ। मैं आपको सम्पूर्ण आदर प्रदान करता हूँ और मैं आपके कुशलक्षेम की कामना करता हूँ। मेरे प्रति अति स्नेह के कारण, कृपया मुझे अपने भजनों की एक प्रति भेजिए। तब मैं स्वयं को अति सौभाग्यशाली समझूँगा। और अधिक कहने की मुझे क्या आवश्यकता है? आप तीनों असीम स्नेही हैं। जीव को सर्वदा आध्यात्मिक ध्यान में उत्साहितं रहना चहिए। यह 'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' में 'सेवा-साधक रूपेण' शब्द से आरम्भ होने वाले सर्वप्रथम छन्द में वर्णित है। साधना बाह्य भौतिक शरीर द्वारा की जाती है। सिद्ध आध्यात्मिक सेवाऐं जीव द्वारा वास्तविक आध्यात्मिक रूप की आध्यात्मिक सेवा की कामना से करनी होती है। यह 'भक्ति-रसामृत-सिन्धु' के पद का अर्थ है। देश, काल, परिस्थिति के अनुसार तथा कामना (राग) के अनुसार की गई आध्यात्मिक सेवा अनेक प्रकार की होती हैं।

इसका वर्णन करने के लिए कितने शब्दों का नियोजन किया जा सकता है? आध्यात्मिक सेवा तीन प्रकार की होती है और यह आगम और अन्य शास्त्रों में पाए वर्णन का अनुकरण करती है। महान आचार्यगणों ने साधक को आध्यात्मिक सेवा सिखाई है। हमारे लिए साधक आध्यात्मिक सेवा जीवन के लिए आदि और अन्त है। अधिक कहने की क्या आवश्यकता है? यह पत्र वैशाख मास की चतुर्दशी को लिखा गया था।

पत्र विश्राम

श्रील जीव गोस्वामी के करुणामय पत्र का श्रवण कर हर किसी ने आनन्दमग्न होकर उनकी महिमा का गान किया। हर किसी से विदा लेकर श्रीगोविन्द कविराज ने खेतुड़ी से प्रस्थान किया और बुधरी-ग्राम आ गए। गोविन्द ने उनके रत्न समान भजन एकत्र किए। उस समय ब्रज से एक अन्य पत्र आया। सर्वप्रथम उसे शीश से स्पर्श कर श्रीगोविन्द दास ने उसे पढ़ा।

चतुर्थ पत्र प्रारंभ

श्रीवृन्दावन में चन्द्रमा समान चमकने वाले श्रीकृष्ण की जय जयकार हो! महान भक्त श्रीगोविन्द कविराज का अभिवादन है, जो कि उत्कृष्ट आध्यात्मिक प्रेम के धाम हैं। श्रीजीव गोस्वामी सदैव आप के कुशलक्षेम का चिन्तन करते हैं। हमारी मित्रता अति भव्यता से प्रकाशित है। मैं सदैव यही कामना रखता हूँ कि आपका सर्वत्र मंगल हो।

पूर्व में आपने मुझे भगवान् कृष्ण के वर्णन में लिखे हुए भजन प्रेषित किए थे। उन भजनों का अमृत के समान पान कर मैं अति आनन्दित हो गया। मैं अब भी पूर्णतः तृप्त नहीं हूँ। मैं आपके अति नवीन भजनों को प्राप्त करने की इच्छा रखता हूँ। कृपया कृपालु होकर उन्हें प्रेषित करें।

मुझे 'बृहद्-भागवतामृत' पर श्रीनिवास आचार्य की टीका की श्यामदास द्वारा बनायी प्रति प्राप्त हुई है। यह नवीन टीका सभी संशय दूर करती है। और अधिक कहने की क्या आवश्यकता है? आप जो कि कृपालु, शोभायमान, और मंगलकारी हैं, आपके लिए यह पत्र चैत्रमास की शुक्ल पक्ष के तीसरे दिवस में प्रेषित किया गया।

कृपया नरोत्तम और कविराज को मेरा आशीष देना। श्रीकृष्णदास को अनेक प्रणाम।

पत्र विश्राम

पत्र का अन्तिम अनुच्छेद शब्द 'कविराज'- कविराज रामचन्द्र की ओर संदर्भित करता है। नरोत्तम और रामचन्द्र का प्रायः इसी प्रकार मिलकर वर्णन

किया जाता है। शब्द 'श्रीकृष्णदास' इस पत्र में कृष्णदास कविराज गोस्वामी को संदर्भित करता है।

यह पत्र पढ़ते हुए श्रीगोविन्द दास उल्लसित प्रेम के भाव से भावविभोर हो गए। उन्होंने अपना संग्रह, गीतामृत (भजनों का अमृत) श्रील जीव गोस्वामी को प्रेषित किया। गोविन्द दास के भजनों से किन भजनों की तुलना की जा सकती है? कौन गोविन्द दास के भजनों की सराहना नहीं करेगा तथा कौन उनका गान नहीं करेगा?

श्रीनरहरि ने श्रीगोविन्ददास की महिमा में एक सुन्दर भजन लिखा है। विश्व में प्रसिद्ध श्रीगोविन्द दास की जय जयकार हो, वे अति निपुणता से उल्लसित प्रेम रूपी अनमोल रत्न का वितरण करते हैं। उनकी कोई तुलना नहीं। उनका चरित्र अति मधुर था। वे कवियों के राजा थे। उनकी क़ाव्य रचनाऐं उत्कृष्ट, आकर्षक और अद्‌भुत हैं। मैं क्या कहूँ? उनकी काव्य रचनाऐं उत्कृष्ट काव्य योग्यता लिये हैं। उनकी काव्य रचनाऐं तीखे बाण के समान हैं जो हृदय का भेदन कर दें। रसिकजन उनके भजनों को सुनने के लिए अति अधीर हो जाते हैं। वे श्रीवृन्दावन में भक्तजनों के राजा हैं। वे श्रील जीव गोस्वामी और विश्व के सभी लोगों की प्राण वायु हैं। वे हृदय से अतिप्रसन्न हैं। वे भक्तजनों की प्रशंसा करते हैं। वे उन भजनों को रचते हैं जो अति मधुर और अमृत के समान हैं। श्रील नरोत्तम और श्रील रामचन्द्र उनके संगी हैं। उनका हृदय कैसे आनन्द से भरा हुआ है, मैं वर्णन नहीं कर सकता। उनके भजन सम्पूर्ण विश्व को आनन्द में मदमस्त कर देते हैं। आह! मूर्ख नरहरिदास ने बड़े प्रयत्नों से स्वयं को उनके दर्शन से विरत किया।

श्रीरामचन्द्र का आगमन

इन तीन पत्रों में समाचार श्रवण कर श्रीनिवास आचार्य ठाकुर स्वयं पर नियंत्रण न रख सके। उनका तन आनन्द से भर उठा। श्रीनिवास आचार्य के प्रति आकर्षित रामचन्द्र खेतुड़ी से याजिग्राम चले गए। जब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य को देखा, रामचन्द्र ने अनुभव किया कि उनके भीतर हृदय में आनन्द उत्पन्न हो गया है। वे अभिभूत हो गए। वे कौन थे? अपने उल्लास में वे नहीं जानते थ।

श्रीरामचन्द्र भूमि पर श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में जा गिरे। श्रीनिवास आचार्य ने उन्हें आलिंगन किया और उन पर अपने अश्रुओं की बौछार कर दी। उन्होंने श्रीनरोत्तम के बारे में समाचार पूछा। तब उन्होंने यह आदेश दिया, 'तुम निश्चित ही मेरे निवास में अतिथि होओगे।'

श्रीरामचन्द्र का हृदय आनन्द से भरा था। तब उन्होंने श्रीनिवास आचार्य की पत्नी के चरणों में आदर सहित प्रणाम किया। श्रीनिवास की पत्नी का नाम

द्रौपदी था। वे गौरांग प्रभु की एक महान भक्त थीं। वे श्रीरामचन्द्र के प्रति जो मातृत्व स्नेह अनुभव करती थीं, उसकी कोई तुलना नहीं थी।

श्रीरामचन्द्र को देखकर वहाँ उपस्थित हर कोई हृदय में आनन्द का अनुभव करता था। हर व्यक्ति का उनसे उपयुक्त परिचय करवाया गया। श्रीरामचन्द्र की गतिविधियां अति मधुर थीं। श्रीनिवास आचार्य सदैव उनके लिए प्रेम में परास्त रहते थे। श्रीनिवास आचार्य की श्री रामचन्द्र के साथ मित्रता का वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ? यह मित्रता आध्यात्मिक प्रेम से प्रभामान थी। श्रीरामचन्द्र का संत जैसा व्यवहार कितना अद्भुत था! अन्यों ने पूर्व में ही उनके गुणों का विस्तार से वर्णन कर दिया है। वे सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। मैं केवल संक्षेप में उनका वर्णन करूँगा। अपने हृदय में पहले ही मैंने यह वर्णित कर दिया है। यह ग्रन्थ अति विशाल न हो जाए, इस भय के कारण मैं विस्तार से उनका वर्णन नहीं करूँगा।

श्रीरामचन्द्र क्यों हँसे

एक पूर्णिमा की सन्ध्या समय श्रीरामचन्द्र आनन्द मग्न हृदय से मुस्कुराए। श्रीरामचन्द्र की मुस्कान देखकर द्रौपदी ने श्रीनिवास आचार्य से धीमे से कहा, 'वे क्यों मुस्कुराए? मैं नहीं समझी।'

श्रीनिवास आचार्य ने उत्तर दिया, 'मैं तुम्हें बताता हूँ। कृपया ध्यान से सुनो। गोपियों के संग श्रीराधारानी और श्रीकृष्ण पुष्पों से भरे एक वन कुंज में पुष्प तोड़ रहे थे। राधा जी ने एक अति अद्भुत चमेली के पुष्प को उठाया। उस पुष्प को चन्द्रमा के प्रकाश के सम्मुख पकड़ते हुए, श्रीकृष्ण आश्चर्य से भर उठे। श्रीकृष्ण को आश्चर्य से भरा देख गोपियां मुस्कुराने लगीं। मेरी ओर खड़े श्रीरामचन्द्र भी मुस्कुराए।'

यह वचन श्रवण करने के पश्चात् द्रौपदी का हृदय अति आश्चर्य से भर उठा। इसप्रकार आनन्द प्रदायक लीलाओं को उजागर किया गया। मैं और अधिक क्या कहूँ? श्रीनिवास आचार्य सदैव श्रीरामचन्द्र के संग रहते थे। गोस्वामी गणों के ग्रन्थों के अमृत का पान करते हुए, वे हृदय से अभिभूत हो गए।

श्रीरामचन्द्र कविराज अति विद्वान् थे। कोई भी उनके समान विद्वान् न था। हर दिवस याजिग्राम के आनन्द में वृद्धि होती गई। संकीर्तन में प्रभु को स्मरण करते-करते भक्तजन स्वयं भी आनन्द से अभिभूत हो जाते थे।

कुछ दिवस के पश्चात् अपने प्रिय पार्षदों को संग लेकर श्रीनिवास आचार्य कंचनगढ़िया-ग्राम चले गए। हर कोई संकीर्तन के परम आनन्द में डूब गया। पतित जीवों के पाप तत्क्षण दूर हो गए। कुछ दिवस के लिए हर किसी ने प्रसन्नतापूर्वक वहाँ वास किया। तब वे बुधरी-ग्राम चले गए। खेतड़ी-ग्राम से

एक संदेशवाहक को श्रीनिवास आचार्य के निकटस्थ आगमन के समाचार के साथ भेजा गया। अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्रीनिवास आचार्य ने प्रसन्न भाव में बुधरी-ग्राम में प्रवेश किया।

श्रीनिवास की शोभा

उल्लसित प्रेम से भरे भक्तजनों ने एक-दूसरे का अभिवादन किया। नेत्रों में अश्रु भरकर शोभायमान भक्तजनों ने एक-दूसरे को निहारा। श्रीनिवास आचार्य की शोभा ने हर किसी के हृदय को आनन्द से अभिभूत कर दिया। कौन उनके आकर्षक रूप और गुणों का गान नहीं करेगा?

यहाँ श्रीनिवास आचार्य की महिमा का वर्णन करते हुए नरहरि द्वारा लिखा एक सुन्दर भजन है। (टेक)श्रीनिवास आचार्य की जय जयकार हो जो कि आध्यात्मिक गुणों के रत्नों से समृद्ध है! अब धरा धाम कितनी सौभाग्यशाली हो गया है। श्रीनिवास, श्रीगौरचन्द्र प्रभु के अद्‌भुत आध्यात्मिक प्रेम का साकार रूप हैं।

श्रीनिवास आचार्य के रूप की भव्यता, कुमकुम, स्वर्ण और कमल पुष्प को परास्त कर रही है। उनका मुख चन्द्रमा के समान शोभायमान है। उनके अधरों से अमृत बरस रहा है। उनकी मुस्कान पर मृदुता विश्राम करती है। उनके वचन विनम्र और आकर्षक हैं। उनके वचन नवीन अमृत का अपार प्रवाह बहाते हैं।

चन्दन का तिलक उनके मस्तक का गौरव है। उनकी कोई तुलना नहीं। उनके विशाल कमल समान नेत्र आनन्द से अभिभूत हैं। उनकी विशाल भुजाएं उनके घुटनों तक पहुँच रही हैं। उनकी गर्दन शंख के समान आकर्षक है। उनके जंघा तक एक पुष्प माला विराजमान है।

उनकी छरहरी कमर के चारों ओर एक उत्कृष्ट वस्त्र सुशोभित है। उनकी आकर्षक नाभि के पास त्रिवली शोभायमान है। उनकी शोभायमान जंघा और चरण लोगों को आनन्दित कर रहे हैं। घनश्याम उनके चरणों के नख की आराधना करता है।

इसी सम्बन्ध में एक अन्य भजन भी है। 'श्रीनिवास आचार्य की जय जयकार हो! वे विश्व के लोगों का जीवन हैं। वे एक महान रसिक हैं। वे आध्यात्मिक गुणों के धाम हैं। पतित लोग, जिनका कोई मंगलकारी भविष्य नहीं है, वे उन्हें मंगलकारी भविष्य प्रदान करते हैं। वे निर्धनों के मित्र हैं। वे पुण्य स्वभाव के आभूषणों से शोभित हैं।'

वे आकर्षक आध्यात्मिक प्रेम के आभूषणों से शोभित हैं। उनका तन चम्पक पुष्प के समान शोभायमान है। वे अतुलनीय श्रीगौरचन्द्र प्रभु के प्रिय

व्यक्तिगत पार्षद हैं। उन्हें निहारते हुए कौन सा व्यक्ति स्वयं के हृदय को आध्यात्मिक प्रेम के पाश से बँधा नहीं पाएगा?

वे विश्वविख्यात हैं। वे आध्यात्मिक प्रेम के अमृत की अपार वर्षा करते हैं। वे श्रीनरोत्तम को आनन्दित करते हैं। वे उनके दीक्षा गुरु के अति प्राण हैं।

वे सदैव दिव्य युगल की लीलाओं के अमृत का पान करते हैं। आध्यात्मिक लीलाओं के अमृत का पान करते हुए वे अपनी सुध बुध खो बैठते हैं। इससे अधिक कवि उनके बारे में क्या कह सकता है?

आह! कृपालु श्रीरामचन्द्र कविराज उनकी चरण सेवा करते हैं। और अधिक मैं क्या कहूँ? वे भूमि पर नरहरि दास के निकट रोपित भक्ति का नवीन कल्पतरु हैं।

श्रीनरोत्तम की महिमा इस भूमि पर सभी को आनन्द से मदमस्त कर देती है। कौन श्रीनरोत्तम दास के आध्यात्मिक गुणों और सुन्दर रूप का गान नहीं करेगा?

वैष्णवजन शोभायमान हैं। वे हृदय को आकर्षित करते हैं। वे सूर्य के समान दीप्तिमान दिखते हैं। अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्रीनिवास आचार्य ने बुधरी-ग्राम में वास किया। दिवस और रात्रि वे संकीर्तन के आनन्द में अभिभूत रहते थे। कुछ दिवस के लिए श्रीनिवास आचार्य ने श्री बुधरी-ग्राम में लीलाओं का आनन्द लिया। तब वे आनन्दपूर्वक रोराकुलि-ग्राम चले गए।

श्रीगोविन्द चक्रवर्ती

श्रीगोविन्द चक्रवर्ती उल्लास से अभिभूत हो गए। अपने निवास पर उन्होंने और उनके पार्षदों ने श्रीनिवास आचार्य से भेंट की। श्रीगोविन्द चक्रवर्ती, श्रीनिवास आचार्य के अत्यधिक प्रिय शिष्य थे। वे गायन और वाद्य यन्त्रों के वादन में अति निपुण थे। वे आध्यात्मिक सेवाओं के अवतार के समान थे।

श्रीनिवास आचार्य के शिष्य श्रीगोविन्द चक्रवर्ती ने अपना निवास वोराकुलि-ग्राम में बनाया था। मैं उनकी सम्पूर्ण महिमा का गान कैसे करूँ? वे सर्वत्र विख्यात थे। जब श्रीनिवास आचार्य अपने पार्षदों के संग पधारे तो उनके गृह में आनन्द भर गया। अति विशाल महोत्सव के प्रबन्ध किए गए। सर्वत्र निमन्त्रण प्रेषित किए गए।

श्रीवीरचन्द अपने पार्षदों के संग पधारे। कृष्ण मिश्र भी अपने अनुचरों के संग पधारे। श्रीहृदयानन्द के शिष्य श्रीगोपीरमण अम्बिका से पधारे। रामाई ठाकुर ने बलराम-पुर से विदा ली और आनन्दमग्न हृदय से वे भी पधारे। श्रीरघुनन्दन के पुत्र श्रीकनाई ठाकुर अपने पार्षदों के संग खण्ड से पधारे। श्रीयदुनन्दन ने अपने श्रीविग्रह श्रीगौरचन्द्र को प्रणाम किया और कंटक-नगर से पधारे। श्रीनयनानन्द मिश्र आनन्दमग्न हो अपने पार्षदों के संग पधारे। वे सब

वोराकुलि-ग्राम पधारे। किसमें यह सामर्थ्य है कि उन सबने जो आनन्द अनुभव किया, उसका वर्णन कर सके?

आगे चलते हुए श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय, श्रीरामचन्द्र श्रीदास, श्रीगोकुलानन्द और अन्य हर किसी को निवास में लेकर आए। गोविन्द के निवास पर अद्‌भुत आनन्द भर गया। नृत्य और गायन के अति आनन्द में दिवस व्यतीत हुआ।

प्रातःकाल सब ने स्नान किया और अपने नित्य कर्म पूर्ण किए। तब हर कोई मन्दिर प्रांगण में बैठ गया। हर किसी ने वहाँ पर अद्‌भुत कीर्ति को देखा। श्रीनिवास आचार्य, श्रीविग्रह को वहाँ लेकर आए। श्रीविग्रह को निहारते हुए हर कोई आनन्द से भर उठा।

हर किसी ने श्रीनिवास आचार्य को अभिषेक और अन्य पूजा विधि करने का निवेदन किया। हर किसी के निवेदन पर श्रीनिवास आचार्य ने आनन्दपूर्वक अभिषेक और अन्य विधियाँ पूर्ण कीं। हर किसी ने चिन्तन किया, 'हम श्रीविग्रह का क्या नाम रखें?'

श्रीराधाविनोद नामकरण

उस समय एक अदृश्य स्वर ने मन्दिर के भीतर से कहा, 'राधा-विनोद के नाम पर अभिषेक रचाओ। यह वचन श्रवण कर हर किसी ने अपने हृदय में आनन्द का अनुभव किया। श्रीनिवास आचार्य ने सावधानीपूर्वक सभी विधान पूर्ण किए। उन्होंने श्रीविग्रह को उनके सिंहासन पर पधराया और अद्‌भुत रंगीन परिधान उन्हें पहनाया। श्रीश्रीराधा-विनोद का शोभायमान सौन्दर्य अति अद्‌भुत था। उन्हें निहारते हुए हर व्यक्ति के नेत्र आनन्द से भर उठे।'

तब हर व्यक्ति ने अपने नेत्र श्रीराधिका जी के श्रीविग्रह पर टिका दिए। आपस में बात करते हुए लगभग हर कोई सहमत था, कि 'वे देखने में अति अद्‌भुत हैं।'

हर किसी ने श्रीराधा-विनोद के श्रीविग्रह को निहारा। कोई भी अपने नेत्र उनसे न हटा सका। हर कोई अपलक निहारने लगा। वहाँ असंख्य लोग थे। मैं लिख नहीं सकता कि वहाँ कितने लोग थे। गोविन्द के निवास पर आनन्द का सागर लहराता था, वह सागर जिसका कोई छोर न था। गोविन्द के निवास पर शुभता भर गई थी। चारों दिशाओं से हर कोई, 'जय जय!' का उच्चारण करने लगा। उस दिवस जो उत्सव मनाया गया, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता। उस दिवस क्या हुआ, मैं संक्षेप में उसका वर्णन करूँगा।

उस दिवस प्रातःकाल प्रभु वीरचन्द्र, कृष्ण मिश्र और अन्य भक्तजनों ने स्नान किया और अपने नित्य कर्म पूर्ण किए। तब हर कोई श्री राधा-विनोद

मन्दिर के प्रांगण में एकत्र हो गया। भगवान् राधा-विनोद को निहारते हुए हर कोई आनन्द में तैर गया।

श्रीश्याम दास, श्रीदेवी दास, श्रीगोकुल दास और अनेकों अन्य भक्त पधारे। तब एक अति शोभायमान संकीर्तन आरम्भ हुआ। श्याम दास और देवी दास ने मृदंग वादन किया। उत्सव में अमृत की असीम लहरें उत्पन्न हो गईं। मृदंग के स्वर ने आकाश भेदन कर दिया। आकर्षक स्वर लहरी का श्रवण कर कोई भी शांत न रह सका।

गोकुल और अन्य भक्तों ने विविध रागों में भजन गायन किया। वास्तव में उन्होंने असाधारण और आकर्षक रागों का गायन किया। गायक और वादक विविध मधुर लय और स्वर संगति धुन के अवतार के समान थे। प्रारम्भ से उन्होंने श्रीगौरचन्द्र प्रभु की महिमा का गान किया।

श्री गौरचन्द्र प्रकट हो गये

श्रीगौरचन्द्र प्रभु उनके भजन और मंत्रों से आकर्षित हो गए। अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्रीगौरचन्द्र प्रभु स्वयं वहाँ आए। वे सबके नेत्रों के सम्मुख उपस्थित थे। श्रीनरोत्तम के स्वर ने हर किसी के हृदय को आकर्षित कर लिया। यह सदा नवीन अमृत की अंतहीन बौछार थी। यहाँ तक कि देवताओं के गीत से उस अद्भुत और दुर्लभ संकीर्तन की तुलना कैसे की जा सकती है? हर कोई आनन्द से भर उठा।

आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत श्रीनिवास आचार्य आनन्दातिरेक में झूमने लगे। आनन्द से मद मस्त वीरचन्द्र प्रभु नृत्य करने लगे। श्रीअद्वैत आचार्य के पुत्र श्री कृष्ण मिश्र पर अपने ही नेत्रों से बहने वाले अश्रुओं का मानो छिड़काव हो गया। श्रीरघुनन्दन के पुत्र श्रीकानाई ठाकुर आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में मदमस्त हो गए। मुझ में ऐंसी सामर्थ्य नहीं कि उनकी दशा का वर्णन कर सकूँ। श्रीनयनानन्द मिश्र रज से धूसरित हो कर गहरे वर्ण के हो गए। वे स्थान स्थान पर जाकर नृत्य करने लगे। उनकी आकर्षक मुद्राओं ने हर किसी के हृदय को आकर्षित कर लिया। श्रीरामाई ठाकुर ने अद्भुत आकर्षण के साथ नृत्य किया। वे उच्चस्वर में गर्जना करने लगे। वे इस प्रकार से मुड़े कि चारों दिशाओं में घूम गए।

श्रीगदाधर दास के शिष्य श्री यदुनन्दन की दशा देखकर कौन नहीं रो देगा? अति प्रेम के साथ श्रीगोपीरमण चक्रवर्ती संकीर्तन के आनन्द में सागर में तैर गए। रामचन्द्र और श्रीदाम के नेतृत्व में वैष्णव जन शांत न रह सके। वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत हो गए।

अचानक नृत्य बन्द किया

प्रभु वीरचन्द्र नृत्य में रो रहे थे। अचानक उन्होंने नृत्य करना बन्द कर दिया। वे श्रीनरोत्तम का आलिंगन करके रो पड़े। इसप्रकार वे सब आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत हो गए। किसने किसे आलिंगन किया? यह मुझ में लिखने का सामर्थ्य नहीं है। स्वयं को भुलाकर हर कोई भूमि पर लोटने लगा। कुछ रोने लगे और अन्य भक्तजनों के चरण पकड़ने लगे। किसमें सामर्थ्य है कि वर्णन कर सके कि कैसे भक्तजन प्रेम के उल्लास में भर उठे? देवतागण इन गतिविधियों को देखकर स्वयं को सौभाग्यशाली मानने लगे।

अंततः संकीर्तन रुक गया और हर कोई पुनः शांत हो गया। सभी लोग आनन्दपूर्वक भगवान् के प्रांगण में एकत्र होकर बैठ गए। भक्तजन श्रीराधाकृष्ण की लीलाओं और श्रीचैतन्य की लीलाओं की चर्चा करते हुए स्वयं को भूल गए। वे अति सौभाग्यशाली थे।

भक्तजन शांतिपूर्वक प्रांगण में बैठ गए और चर्चा करने लगे। इस प्रकार प्रांगण आध्यात्मिक प्रेम का महान सागर बन चुका था। श्रीगोविन्द चक्रवर्ती को उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के भाव में भरे हर व्यक्ति को हृदय में अति आनन्द का अनुभव हुआ। गोविन्द, श्रीभावुक चक्रवर्ती के रूप में विख्यात थे (चक्रवर्ती जो कि उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के भाव में भरे हैं)। उनकी भक्तिमय और समर्पण की गतिविधियों को देखकर, कौन उनकी प्रशंसा नहीं करेगा?

कुछ दिवस के लिए भक्तजनों ने वोराकुलि-ग्राम में वास किया। वे संकीर्तन के उल्लास में मदोन्मत्त से हो गए थे। जब हर किसी के प्रस्थान का समय आया, प्रभु वीरचन्द्र, श्रीकृष्ण मिश्र और सभी भक्तजन दुःख से अभिभूत हो गए। हर किसी से विदा लेकर सबने प्रस्थान किया। मेरे पास केवल एक ही मुख है, इस कारण मैं इन सब लीलाओं के बारे में अधिक वर्णन नहीं कर सकता।

भावपूर्ण विदाई

श्री श्रीनिवास आचार्य और श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय पधारने वाले भक्त जनों के साथ प्रस्थान करते हुए उनके पीछे गए। हर किसी के नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी। विविध सामान उठाए द्वारपालों को जाने वाले भक्तजनों के पीछे भेजा गया। श्रीनरोत्तम और श्री श्रीनिवास आचार्य के अन्य प्रिय शिष्यों ने कुछ और दिवस तक रोराकुलि-ग्राम में वास किया।

ग्रन्थ विस्तार के भय से मैं यह वर्णन नहीं करूँगा कि कैसे श्री श्रीनिवास आचार्य अपने विभिन्न अनुचरों के निवास पर पधारे। वोराकुलि-ग्राम और उसके आसपास कैसा आनन्द उत्पन्न हुआ और कैसे वहाँ आध्यात्मिक सेवाएं

प्रबल रूप से विकसित हुई यह अवर्णनीय है। केवल मात्र श्रीनिवास आचार्य की करुणामयी नजर से ही हर कोई संकीर्तन के आनन्द सागर में तैरने लगा।

श्रीगोविन्द के निवास पर श्रीनिवास आचार्य और उनके पार्षदों ने आनन्दमग्न होकर श्रीराधा-विनोद की भव्यता को निहारा। श्रीराधा-विनोद के हृदय की कामना को जानकर श्रीनिवास ने पद्मावती को पार किया और खेतड़ी-ग्राम में प्रवेश किया। अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्रीनिवास आचार्य ने श्रीगौरचन्द्र प्रभु के मन्दिर के प्रांगण में प्रवेश किया। प्रभु के भक्तजनों को देखकर हर कोई आनन्द से अभिभूत हो गया। अनेकों दिवस के लिए भक्तजन संकीर्तन के अमृत में डूबे रहे। यह खेतड़ी-ग्राम के लोगों के लिए अति आनन्ददायक अवसर था।

एक निर्जन स्थान पर श्रीनिवास आचार्य ने श्रीनरोत्तम दास से विदा ली, जो कि उन्हें स्वयं से भी अधिक प्रिय थे। तब वे बुधरी-ग्राम चले गए। श्रीनिवास आचार्य को देखकर विविध स्थानों के लोग परस्पर उनकी महिमा के बारे में चर्चा करते थे।

एक व्यक्ति ने कहा, 'श्रीनिवास आचार्य, श्रीगौरचन्द्र प्रभु के लिए प्रेम का अवतार है। श्रीनिवास के माध्यम से गौरहरि प्रभु अनेक कार्य करेंगे। श्रीनिवास आचार्य ने गोस्वामीगणों के ग्रन्थों के आदर्शों की शिक्षा दी।'

श्रीरघुनाथ आदि नास्तिक

एक अन्य व्यक्ति ने कहा, 'हे मेरे भ्राता जिन्होंने भगवान् कृष्ण से स्वयं को विमुख कर लिया है, वे भौतिकवादी अत्यधिक स्वतंत्र हैं। वे धर्म के नियमों के पार चले गए हैं। भौतिकवादियों में एक व्यक्ति रघुनाथ अत्यधिक प्रतिष्ठित है। वह सामान्यतः लोगों के साथ चालें चलता है और उनको छलता है। इस दुर्व्यवहारी पापी ने स्वयं के तत्वज्ञान स्थापित कर लिए हैं, वे तत्वज्ञान जिन्हें वह पूर्वी बंगाल में पढ़ाता है।'

किसी अन्य ने कहा, 'मैंने कुछ महत् पापियों को संकीर्तन के माध्यम से परिवर्तित हो भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना करते देखा है। ये पापी कीर्तन की बजाय स्वयं की महिमा का गान करते हैं।'

एक व्यक्ति ने कहा, 'राढ़-देश में मलिका नाम का एक दार्शनिक ब्राह्मण है जो दुष्टस्वभाव का है। वह विख्यात है। कोई भी उसके जैसा दुष्ट नहीं है। वह पापी स्वयं को गोपाल कहता है। राक्षस के समान मायावी तत्वज्ञान की चर्चा करते हुए, वह सामान्यतः लोगों को छलता रहता है।'

चैतन्य भागवत (अदि·14·81-87) में यह कहा गया है। 'इस सौभाग्यशाली कार्यक्रम के कारण, आज भी पूर्वी बंगाल के सभी पुरुष और महिलाऐं श्रीचैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन आन्दोलन के अनुयायी हैं। धीरे धीरे कुछ पापी आए और सर्वनाश कर दिया। केवल अपने पेट को भरने के इच्छुक इन पापियों ने दावा

किया, 'मैं भगवान् रामचन्द्र हूँ।' कुछ पापियों ने भगवान् श्रीकृष्ण के पावन नाम का जप करना बन्द कर दिया। इसके बजाय वे, 'नारायण' नाम का जप करने लगे, यह चिन्तन करते हुए कि यह नाम उनको ही उद्धृत करता है। मैं उनके सत्य को देख सकता हूँ। क्यों वे निरर्थक दावे करके लज्जित नहीं हैं, ऐसे प्रमाण जो राख के ढेर के समान थे? राढ़-देश में एक दुष्ट ब्राह्मण दैत्य वास करता था। वह हृदय से दैत्य था परन्तु वह बाह्य रूप से ब्राह्मण होने का मुखौटा धारण किए था। यह पापी यह दावा करता था कि वह स्वयं श्रीकृष्ण है और स्वयं का नाम गोपाल कहता था। हर कोई उसे सियार कहता था।'

एक अन्य व्यक्ति ने कहा, ये लोग सभी के लिए अमंगल लाते हैं। जब वे नीचे पधारेंगे तो भगवान् कल्कि उन पापियों को दण्ड देंगे।' यह वचन बोलने के पश्चात् सभी लोगों ने हृदय में अति आनन्द के साथ श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों में प्रणाम किया। सभी की मनोकामनाऐं पूर्ण कर श्रीनिवास आचार्य अपने पार्षदों के संग अपने निवास पर याजिग्राम वापिस लौट आए।

याजिग्राम में पुनरागमन

याजिग्राम के लोगों के मुख से श्रीनिवास आचार्य ने सुना कि वीरचन्द्र प्रभु अब धर्म एवं सत्य की शिक्षा का प्रसार कर रहे हैं। राढ़-देश के कन्दरा नाम के ग्राम में मंगलकारी और शोभायमान ज्ञानदास का निवास है। उस स्थान पर ही जय गोपाल नाम का कायस्थ निवास करता था। अपनी विद्वत्ता के अभिमान के कारण कायस्थ के हृदय में उत्पात के भाव उत्पन्न हो गए। यद्यपि उसे कोई वास्तविक ज्ञान नहीं था, फिर भी यह व्यक्ति गुरु होने का ढोंग रचने लगा। वह अहंकार से वह प्रश्न पूछता जो उसके स्वयं के गुरु उसे सिखाने का प्रयास करते। प्रभु वीरचन्द्र ने रूप के वास्तविक सत्य का प्रसार किया। फिर भी इस ढोंगी ने श्रीवीरचन्द्र की कृपा को नकार दिया और उस स्थान से चला गया।

यह वचन सुनकर श्रीनिवास आचार्य हृदय से अति प्रसन्न हो गए। उस समय श्रीवीरचन्द्र द्वारा प्रेषित एक पत्र आया। अति आदर से श्रीनिवास आचार्य ने पत्र को स्वीकार किया। उनका हृदय आनन्द से पल्लवित हो गया, उन्होंने पत्र पढ़ा।

श्री वीरचन्द्र प्रभु का पत्र

श्रीगौर-नित्यानन्द की जय जयकार हो! श्रीवीरचन्द्रदेव जो सदैव आपका और आपके साथियों का चिन्तन करते हैं, और जो आपको आध्यात्मिक प्रेम भरा आलिंगन प्रदान करते हैं, वे कहते हैं। हे श्रील श्रीनिवास आचार्य, आपमें श्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा प्रदत्त महान आध्यात्मिक सामर्थ्य है। इस शक्ति के कारण आप श्रील रूप गोस्वामी, जिन्हें भगवान् से अगाध सामर्थ्य प्राप्त हुआ,

उनके ग्रन्थों को समझाने और वितरण करने के योग्य हुए। आपके तुलना रहित आध्यात्मिक सामर्थ्य के कारण ही गौड़-मण्डल के पुण्य भक्तों में गोस्वामीगणों के ग्रन्थों का व्यापक रूप से वितरण हुआ। उस कारण मैंने अपनी गतिविधियों के बारे में सूचित करते हुए ये पत्र तुम्हें प्रेषित किए हैं। जय गोपाल दास मेरी अनुकम्पा को स्वीकार नहीं करेंगे। अब यह सम्पूर्ण विश्व में विदित हो गया है। मेरे अनुचर उनसे बात नहीं करेंगे। मैंने उन्हें मना किया है। इस कारण तुम भी उनसे बात नहीं करोगे।

इस पत्र को कन्दरा से प्रेषित कर प्रभु श्रीवीरचन्द्र खरदह चले गए और वही जानकारी अपने पुत्रों को प्रदान की। क्योंकि श्रीवीरचन्द्र प्रभु आध्यात्मिक गुणों के धाम थे, तो उनके पुत्र भी आध्यात्मिक प्रेम और समर्पण से परिपूर्ण थे। उनके बड़े पुत्र श्रीगोपीजनवल्लभ एक उपदेशक थे। उनके मंझले पुत्र श्री राम-कृष्ण पुण्य आत्मा और उदार चित्त थे। उनके छोटे पुत्र श्रीरामचन्द्र अति शांत थे। सौभाग्यशाली भक्तजन तीनों पुत्रों के गुणों और महिमा का वर्णन करेंगे।

प्रभु वीरचन्द्र की महिमा सुनकर कौन नहीं रो पड़ेगा? भक्तजनों ने पापी जयगोपाल दास को नकार दिया यह समाचार सर्वत्र फैल गया। कौन होगा कि जिसने उसकी चर्चा नहीं की होगी? अपने शिष्यों के सान्निध्य में श्रीनिवास आचार्य याजिग्राम लौट आए। वे सदैव अपना समय या तो संकीर्तन में अथवा शास्त्रों की चर्चा में व्यतीत करते।

इस ग्रन्थ में मैं श्रीनिवास आचार्य के अनुचरों के नाम नहीं लिखूँगा। एक अन्य ग्रन्थ में, मैं उनके अनुचरों का विस्तार से वर्णन करूँगा। जिस ग्रन्थ में श्रीनिवास आचार्य की गतिविधियों का वर्णन किया जायेगा, श्रीनिवास आचार्य की महिमा का श्रवण करते हुए अपने हृदय के भीतर परम शांति का अनुभव कौन नहीं करेगा? कौन श्रीनिवास आचार्य के गुणों और गतिविधियों की महिमा का गान गा-गाकर नहीं करेगा?

पुनः श्री श्रीनिवास चरित सार

यहाँ इस सम्बन्ध में बहुत सुन्दर भजन है। 'श्रीनिवास आचार्य ठाकुर मेरे प्राण हैं। वे अति कृपालु हैं। उनके रूप की भव्यता स्वर्ण को भी परास्त करती है। वे सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हैं। उन्होंने श्रीचैतन्य महाप्रभु के उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के सत्य को प्रकट किया है। वे सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रिय शिष्यों के स्नेही रहे हैं। मैं नहीं जानता कि श्रीनिवास आचार्य की सम्पूर्ण महिमा का वर्णन कैसे करूं। उस समय से जब वे केवल कुछ वर्ष के ही थे, उनका हृदय आध्यात्मिक ज्ञान में निपुण था। वे सदैव श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का ध्यान करते थे।'

एक बार रात्रि के समाप्त होने पर श्रीनिवास ने श्रीनिताई प्रभु का संग प्राप्त किया, जो कि श्रीचैतन्य महाप्रभु के प्रति उल्लसित प्रेम से अभिभूत थे, स्वप्न के बहाने श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीनिवास आचार्य के निकट आए। मुस्कुराते हुए श्रीनित्यानन्द प्रभु ने श्रीनिवास आचार्य के मुख को निहारा और कहा, 'तत्क्षण श्रीवृन्दावन को जाओ। तुम्हारे द्वारा मैं, रूप और सनातन द्वारा लिखे गए अद्भुत ग्रन्थों का वितरण करूँगा।' जब श्रीनित्यानन्द प्रभु ने कहना समाप्त कर लिया, श्रीनिवास ने पुनः-पुनः उनके प्रति प्रणाम किया। तब उनका स्वप्न टूट गया। श्रीनिवास शांत न रह सके। वे अधीर थे। सर्वप्रथम नीलाचल और गौड़-देश की यात्रा करने के पश्चात् वे आध्यात्मिक प्रेम से अभिभूत हो श्रीवृन्दावन चले गए।

उनका हृदय आध्यात्मिक कामनाओं से भरा था, श्रीनिवास आचार्य ने आनन्दमग्न हो यात्रा की। कुछ दिवस के पश्चात् उन्होंने मथुरा में प्रवेश किया। यह श्रवण कर कि श्रीसनातन और श्रीरूप इस विश्व से अन्तर्धान हो गए हैं, श्रीनिवास अचेत हो गए। पुनः सचेत होने पर वे विलाप करने लगे। वे भूमि पर लोट गए। वे प्रलाप करने लगे, 'हा! हा! रूप और सनातन प्रभु ने मेरे साथ छल किया।' मैं उनकी गौरवशाली गतिविधियों को नहीं देख सकता? मैं अपने जीवन की रक्षा क्यों करता रहूँ? इस प्रकार श्रीनिवास आचार्य दु:ख से भर गए।

स्वप्न के बहाने श्रीरूप और श्रीसनातन, श्रीनिवास के निकट आए। आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण होकर उन्होंने श्रीनिवास का आलिंगन कर, अपने अश्रुओं की उन पर बौछार करते हुए, उनसे ये मृदु वचन कहे, 'शीघ्रता से श्रीवृन्दावन जाओ और स्वयं को श्री गोपाल भट्ट के चरणों में समर्पित कर दो। तुम कष्ट का अनुभव नहीं करो। तुम अति प्रसन्न होगे। अब हम दोनों ने तुम्हें हमारे दर्शन की अनुमति प्रदान कर दी है।' यह वचन बोल कर श्रीरूप और श्रीसनातन अचानक अन्तर्धान हो गए।

सूर्योदय के समय श्रीनिवास नींद से जागे और श्रीवृन्दावन में प्रवेश कर गए। श्रीधाम के सौन्दर्य को निहारते हुए उनके नेत्रों से अश्रुधारा बहने लगी। श्रील जीव गोस्वामी ने प्रसन्नतापूर्वक श्रीनिवास का अभिवादन किया और उनका परिचय गोस्वामी गणों से करवाया। श्रीरूप द्वारा स्वप्न में स्नेहपूर्वक दिए आदेश का पालन करते हुए श्रीनिवास, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी के शिष्य बन गए। कौन वर्णन कर सकता है कि कितना अगाध प्रेम श्रील जीव गोस्वामी ने श्रीनिवास के लिए अनुभव किया? उन्होंने श्रीनिवास को शास्त्रों में विद्वान् बनाया। कुछ दिवस पश्चात् श्रीनिवास की प्रसन्नतापूर्वक नरोत्तम से भेंट हुई।

ब्रज दर्शन

श्रीनरोत्तम के संग श्रीनिवास ने प्रसन्नतापूर्वक ब्रज के कई स्थानों की यात्रा की। तब श्रीनिवास ने श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह से आदेश रूप में एक पुष्प माला ग्रहण की। उन्होंने गौरचन्द्र प्रभु के लिए उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के अमृत का पान किया। वे सदैव ऐसे रहते जैसे संकीर्तन के मद में हों। उनकी प्रसिद्धि सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हो गई। नरहरि दास कहते हैं। हे श्रीनिवास! कृपया मुझ निर्धन अभागे को मुक्ति दिलवाइए। कोई भी आप जैसा कृपालु नहीं है।

एक अन्य भजन श्रीनिवास की अभ्यर्थना करता है। (टेक) श्रीनिवास की जय जयकार हो, जो गुणों के धाम हैं। वे निर्धनों और पतितों को मुक्ति देते हैं। वे उन्हें आध्यात्मिक प्रेम का अमृत प्रदान करते हैं। वे उन्हें पावन मृदु नाम प्रदान करते हैं।

उनका शोभायमान रूप, स्वर्ण पर भी मानो ग्रहण लगाता है। उनके रेशमी वस्त्र भव्य हैं। वे उल्लसित प्रेम से पावन नाम का जप करते हैं। वे श्रीमद्-भागवत का उपदेश देते हैं। वे अपने भक्त पार्षदों के संग वास करते हैं। इस विश्व में उन्होंने अपने उत्कृष्ट चरणकमलों का स्वयं प्रकटीकरण किया है।

उनके मुख से सर्वदा पावन नाम श्रीराधे! श्रीकृष्ण! श्रीगोविन्द भव्यता से उच्चारित होता रहता है।

वे दिव्य युगल की उपासना करते हैं। उन्होंने प्रभु के लीला अमृत का पान किया है। अपने हाथ में वे जो कल्प-तरु धारण करते हैं, वह हैं गोस्वामी गणों के ग्रन्थ। हे श्रीनिवास, आपके बिना पतित जीवों का कोई आश्रय नहीं है। कृपया असहाय निर्धन गोविन्द दास को आश्रय प्रदान कीजिए, जिसका कोई स्वामी नहीं है।

एक व्यक्ति जिसके हृदय में यह विचार है कि वह अति शोभायमान और सौभाग्यशाली है तथा जिसने श्रेष्ठ कुल में भी जन्म लिया है, उसमें श्रीनिवास आचार्य के गुणों और गतिविधियों का वर्णन करने की सामर्थ्य नहीं है। जो उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण है, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय के गुणों और गतिविधियों का वर्णन करते हुए उनकी महिमा का गान कौन नहीं करेगा?

यहाँ श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय को गौरवान्वित करते हुए एक सुन्दर भजन है। 'आह! मेरे कृपालु श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के अवतार के समान हैं। उनका रूप शोभायमान और विनम्र है। उनके स्वर्णिम रूप की भव्यता शिरीष के पुष्प को भी परास्त कर रही है।

उनके आरम्भिक बाल्यकाल में श्रीनरोत्तम दास भौतिक साधनों के प्रति आसक्त नहीं थे। श्रीगौरचन्द्र प्रभु की महिमा का श्रवण करते हुए श्रीनरोत्तम सदा रोते रहते थे। दूसरों की दृष्टि से अगोचर होकर श्रीनरोत्तम दास ने अपने राजसी आनन्द का त्याग कर दिया और गुप्त रूप से ब्रज-पुर चले गए। अतिप्रसन्न होकर उन्होंने श्रीवृन्दावन में प्रवेश किया। उन्होंने श्रीलोकनाथ गोस्वामी के प्रति समर्पण कर दिया। श्री लोकनाथ ने अति कृपालु होकर उन्हें स्वीकार कर लिया और उन्हें श्रीराधा-कृष्ण मन्त्र की दीक्षा प्रदान की।

श्रीनरोत्तम दास की आध्यात्मिक गतिविधियों को देखकर श्रीवृन्दावन में हर कोई प्रसन्न हो गया। वे सब उनसे ऐसे प्रेम करते थे जैसे कोई अपने प्राणों से करता है। उनके श्रीनिवास आचार्य के संग मित्रता वाले भाव को कौन समझ सकता है? श्रीनरोत्तम दास और श्रीनिवास आचार्य एक प्राण दो देह के समान थे।

पुनः-पुनः श्रीराधा-विनोद के श्रीविग्रह को निहारते हुए श्रीनरोत्तम दास के नेत्र शांतिदायक आनन्द से भर गए। उन्होंने समर्पित भाव से अपने गुरु श्रीलोकनाथ गोस्वामी की सेवा की। आध्यात्मिक शास्त्रों का पठन करते हुए श्रीनरोत्तम को हृदय में अति आनन्द का अनुभव हुआ। इस प्रकार उन्हें ऐसा अनुभव होने लगा कि उनकी सभी कामनाएं पूर्ण हो गईं।

दीक्षा गुरु की आज्ञा से उन्होंने ब्रज-मण्डल से प्रस्थान किया और गौड़-मण्डल चले गए। अपने दीक्षा गुरु की अनुकम्पा से वे श्रीनवद्वीप और नीलाचल में भक्तजनों के निवास पर गए।

उनके कार्य कलाप कितने आकर्षक और मधुर थे। उन्होंने खेतुड़ी-ग्राम में निवास किया। उन्होंने श्रीगौर, श्रीराधा-रमण, श्रीवल्लभी-कान्त, श्रीराधा-कान्त, श्रीराधा-कृष्ण और श्रीब्रज-मोहन की सेवा की, जो सभी आध्यात्मिक अमृत के धाम थे। इन छः श्रीविग्रहों ने श्रीनरोत्तम के सामने अपनी लीलाओं का आनन्द लिया। इन श्रीविग्रहों की भव्यता और सौन्दर्य को निहार कर कौन अभिभूत नहीं होगा? श्रीनरोत्तम दास अपने प्रिय मित्र श्रीरामचन्द्र के सान्निध्य में अतिप्रसन्न थे। वे उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के प्रवाह में सराबोर थे।

श्रीनरोत्तम की सम्पूर्ण महिमा का वर्णन कौन कर सकता है? संकीर्तन में वे अपार उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम की वर्षा कर देते थे। श्रीगौरचन्द्र प्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत प्रभु और उनके पार्षद, सभी ने नृत्य किया। सौभाग्य-शाली भक्त जनों ने उन्हें अपने नेत्रों से देखा।

भद्र हृदय वाले श्रीनरोत्तम, गौर प्रभु के भक्तजनों के अतिप्रिय थे। अपने वचनों से उन्होंने वैष्णवजनों की महान सेवा की। किसको उन्होंने दान नहीं दिया? उन्होंने दान में विशुद्ध भक्ति की अनमोल चिंतामणि प्रदान की यहाँ तक कि उन्होंने निन्दकों और नास्तिकों को भी ऐसे आनन्दित कर दिया जैसे वे गौर

प्रभु की महिमा के अमृत से मदमस्त हो गए हों। वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत हो गए। उनकी असाधारण गतिविधियां इस भौतिकवादी विश्व के स्पर्श से दूर थीं। उनके समान कौन था? एक के पश्चात् एक देश में उन्होंने ख्याति अर्जित की।

निर्धन नरहरि दास कहता है। वह दिवस कब आएगा, जब मैं श्रीनरोत्तम दास के चरणकमलों को प्राप्त कर सकूँगा? जब अपनी भुजाएं उठाकर और चिल्लाते हुए मैं, 'प्रभु नरोत्तम!' पुकारूँगा। क्या मैं कभी रो-रोकर ब्रजरज में लुंठन कर सकूँगा?'

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर को गौरवान्वित करते हुए एक अन्य भजन है। 'श्रीनरोत्तम की जय जयकार हो! वे बहुत विद्वान् हैं।'

वे शुभता से सुशोभित हैं। वे आदरणीय और गम्भीर हैं। वे गुणों के धाम हैं। वे उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण हैं। वे एक आध्यात्मिक अमृत से भरे गहरे कूप के समान हैं। कोई भी उनकी तुलना में नहीं है। दिवस और रात्रि वे मधुर भजनों के गायन में मस्त रहते हैं। उनका आकर्षक नृत्य हृदय को आकर्षित करता है। उनका कोमल तन आनन्द दायक है। वे सदा प्रसन्नतापूर्वक अपने श्रीविग्रहों की सेवा करते हैं। वे श्रीगौरहरि प्रभु के भक्तजनों को अतिप्रिय हैं। उनकी अनुकम्पा प्रसिद्ध है। वे निर्धनों के मित्र हैं। वे उनकी हर मनोकामना पूर्ण करते हैं। उनकी ख्याति शोभायमान और आकर्षक है। वे विश्व को शोभित करने वाले सुन्दर आभूषण के समान हैं। वे अन्य लोगों में कोई कमी नहीं खोजते। वे गुणों का असीमित सागर हैं। कोई भी उस सागर का छोर नहीं पा सकता। हर पल 'घनश्याम दास' कवियों के राजा श्रीनरोत्तम की महिमा का गान करते हैं।

श्रीनरोत्तम के गुण और गतिविधियां असीमित सागर के समान हैं। राख के ढेर के समान अयोग्य, एक मुख से उनका वर्णन मैं कैसे कर सकता हूँ? श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय के गुणों का श्रवण करते हुए, कौन उल्लसित होकर नहीं रो पड़ेगा? जब कोई व्यक्ति श्रीनरोत्तम के गुणों और गतिविधियों का ध्यान करता है तो सब प्रकार का अमंगल दूर हो जाता है।

श्री श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का चिन्तन करते हुए नरहरि दास भक्तिरत्नाकर का लेखन करते हैं।

पंचदश प्रवाह

श्रीश्यामानन्द प्रभु का उत्कल देश में प्रचार एवं रसिकानन्द प्रभु का चरित्र

श्रीगौरचन्द्र प्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य और श्रीगदाधर पंडित की जय जयकार हो! श्री श्रीवास ठाकुर, श्रीमुरारी गुप्त और श्रीवक्रेश्वर पंडित की जय जयकार हो!

श्रीमुकुन्द दत्त, श्रीगौरी दास पंडित और श्रीगदाधर दास की जय जयकार हो! श्रीपुण्डरीक विद्यानिधि और श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी की जय जयकार हो!

श्रीसूर्यदास, श्रीकृष्णदास और श्रीधनंजय की जय जयकार हो! श्रीनरहरि, श्रीरघुनन्दन और श्रीविजय की जय जयकार हो!

गुणों के धाम श्रीरामानन्द वसु की जय जयकार हो! श्रीजगदीश और आनन्दप्रदायक श्रीशंकर की जय जयकार हो!

श्रीकाशी मिश्र, श्रीकाशीश्वर और श्रीकर्णपूर की जय जयकार हो! श्री श्रीनाथ चक्रवर्ती ठाकुर की जय जयकार हो! श्रीसुन्दरानन्द और श्रीकृष्ण भगवान् की जय जयकार हो! मालिनी के जीवन के प्रभु श्रीअभिराम की जय जयकार हो! श्रीरघुनाथ भट्ट, श्रीसनातन गोस्वामी और श्रीरूप गोस्वामी की जय जयकार हो! भक्ति के महान सम्राट् श्री भूगर्भ और श्रीलोकनाथ की जय जयकार हो! श्रीगोपाल भट्ट और श्रीरघुनाथ दास की जय जयकार हो! श्रीजीव गोस्वामी की जय जयकार हो, जो सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध हैं!

श्रीकृष्णदास कविराज की जय जयकार हो जो कि आध्यात्मिक प्रेम से परिपूर्ण हैं। गौर प्रभु की लीलाओं के व्यास श्री वृन्दावन दास की जय जयकार हो!

श्रीहरिदास ठाकुर की जय जयकार हो, जो सदैव पावन नाम के प्रेम के उल्लास में डूबे से रहते हैं! श्री श्रीनिवास आचार्य की जय जयकार हो, जो अनुकम्पा के सागर हैं। श्रीनरोत्तम की जय जयकार हो! श्रीरामचन्द्र की जय जयकार हो! श्रीश्यामानन्द की जय जयकार हो, जिन्होंने आध्यात्मिक सेवा का अनमोल रत्न प्रदान किया!

उन भक्तजनों की जय जयकार हो, जो इस ग्रन्थ को पढ़ रहे हैं, वे भक्त जो गुणों के धाम हैं। अब जो मैं कहूँगा कृपया श्रवण करें।

श्रीश्यामानन्द-परिचय

श्रीनिवास ने एक दिवस प्रसन्नतापूर्वक अपने पार्षदों के सम्मुख श्रीश्यामानन्द की गतिविधियों का वर्णन किया। उस समय श्रीश्यामानन्द के दो अनुचर एक

पत्र लेकर श्री श्रीनिवास आचार्य के निवास पर पधारे। उन्होंने श्रीश्यामानन्द का पत्र श्रीनिवास आचार्य को प्रदान किया। पत्र को पढ़कर वे हृदय से प्रसन्न हो गए। श्रीनिवास, श्रीश्यामानन्द के अनुचरों के प्रति अति कृपालु थे। तत्क्षण उन्होंने प्रति उत्तर में एक पत्र लिखा और दोनों शिष्यों को उसे देने भेज दिया।

पत्र पढ़ते हुए श्रीश्यामानन्द आनन्द से अभिभूत हो गए। श्रीश्यामानन्द का चरित्र आकर्षक और पवित्र था। इस ग्रन्थ के पूर्व के भाग में मैंने उनके चरित्र और गतिविधियों का वर्णन किया है। अब मैं कुछ बताऊंगा कि कैसे उन्होंने पतितों को पाप जीवन से मुक्ति प्रदान करवाई।

ब्रज से गौड़-मण्डल की यात्रा करते हुए श्रीश्यामानन्द शीघ्रता से **ओडिशा** में **अम्बिका** चले गए। यह देश उनके जन्म का स्थान था। उन्होंने **दण्डेश्वर** और **धारेन्दा** ग्राम में प्रेम-भक्ति का उपदेश दिया। तब वे **रायिनी** चले गए।

मल्ल-भूमि में एक रायिनी नाम का ग्राम था। नजदीक ही **स्वर्ण रेखा** नाम की नदी थी। उत्तर दिशा से बहते हुए स्वर्ण रेखा ने दुष्टतर पतित आत्माओं को मुक्ति प्रदान की।

रायिनी के निकट **वारायित** नाम का गांव था, जो **दोलंग नदी** के तट पर एक सुन्दर स्थान पर स्थित था। दशरथ जी के पुत्र, श्रीराम ने वारायिता में वास किया था। भगवान् शिव ने इस स्थान का नाम **रामेश्वर** रखा। कुछ दिवस के लिए श्रीरामचन्द्र ने माता जानकी जी और लक्ष्मण जी के साथ इन स्थानों के वनों में विचरण करने की लीला का आनन्द लिया।

अच्युत राजा

इस स्थान के राजा का नाम अच्युत था। उन्होंने पूर्ण समर्पण से लोगों की रक्षा की। उनके कृत्य अति पावन थे। अच्युत के पुत्र रायिनी-ग्राम में अति प्रसिद्ध थे। वह पुत्र दो नाम से प्रसिद्ध थे- **श्री रसिकानन्द और श्री मुरारी**। लोग उन्हें रसिक और मुरारी के नाम से जानते थे। मात्र कुछ दिवस के पश्चात् वे सभी शास्त्रों में विद्वान् हो गए। वे पूर्ण निपुणता से अपने माता-पिता की सेवा करते थे। उनकी माता, जो अपने पति के प्रति अति समर्पित थीं, उनका नाम **भवानी** था।

मुरारी की पत्नी का नाम था **इच्छा**। वे अति धार्मिक महिला थीं। कुछ दिवस के लिए उन्होंने घण्टाशिला गांव में अपना आवास बनाया। **घण्टाशिला**, स्वर्णरेखा के निकट था। अपने वन निर्वासन के दौरान पाण्डवों ने इस स्थान पर विश्राम किया था।

आकाशवाणी

एक दिवस जब वे निर्जन स्थान पर बैठे थे, श्रीमुरारी ने चिन्तन किया, 'मुझे किस का शिष्य होना चाहिए?'

उस समय एक आकाशवाणी ने घोषित किया, 'अधीर मत होवो। तुम श्रीश्यामानन्द के शिष्य बनोगे।'

यह वचन सुनकर रसिक मुरारी आनन्द मग्न हो गए। श्रीश्यामानन्द से वे पावन नाम के जप को प्राप्त करेंगे। आध्यात्मिक दीक्षा की कामना में पल-पल वृद्धि होती गई। जब वे यह शब्द सुनते उनके नेत्रों से अपार अश्रु बह जाते। मुरारी अधीर थे। इस प्रकार रात्रि व्यतीत हुई। जैसे-जैसे रात्रि समाप्त हो रही थी, मुरारी नींद में जा रहे थे। एक स्वप्न में मुरारी ने श्रीश्यामानन्द के दर्शन किए। श्रीश्यामानन्द के प्रत्येक उत्कृष्ट अंग में मधुरता थी।

मुस्कुराते हुए श्रीश्यामानन्द ने मुरारी से कहा, 'प्रातःकाल तुम मुझे प्राप्त करोगे।' यह वचन कहने के पश्चात् श्रीश्यामानन्द अचानक अन्तर्धान हो गए। अब रसिकानन्द का हृदय आनन्द से भरा था। जब भोर हुई तो बुद्धिमान श्रीरसिक ने बिना किसी से कुछ कहे सावधानीपूर्वक मार्ग को देखा। कुछ दूरी पर श्रीश्यामानन्द मार्ग में चल रहे थे। श्रीकिशोर दास के नेतृत्व में उनके अनुचर उनके चारों ओर थे।

श्रीश्यामानन्द सूर्य के समान प्रभामान थे। उनका तन शोभायमान था। उनका मुख मुस्कान के साथ शोभायमान था। उनका विशाल वक्ष स्थल आकर्षक था। श्रीकृष्णचैतन्य और श्रीनित्यानन्द के नाम का जप करते हुए, वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत थे। इधर-उधर लड़खड़ाते से वे चल रहे थे।

श्रीश्यामानन्द प्रभु को देखकर आनन्दमग्न रसिक-मुरारी ने प्रसन्नतावश भूमि पर गिरकर उनके चरणकमलों का स्पर्श किया। अपने हृदय में आनन्द के साथ श्रीश्यामानन्द ने रसिक का आलिंगन किया और उनपर अपने अश्रुओं की बौछार कर दी।

अपने हृदय में रसिक जानते थे कि वे सौभाग्यशाली हो गए हैं। उनके गुरु की शोभा उनके नेत्रों के सम्मुख थी।

दीक्षा

श्रीश्यामानन्द, मुरारी के प्रति अति कृपालु थे। प्रसन्न होकर उन्होंने मुरारी को श्रीराधा-कृष्ण मन्त्र के जप की दीक्षा प्रदान की। अति आनन्द मग्न हृदय से उन्होंने रसिकानन्द को अपना शिष्य स्वीकार किया। उन्होंने रसिकानन्द को श्रीचैतन्य और श्रीनित्यानन्द के चरणकमलों में प्रस्तुत किया।

रसिक मुरारी आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत हो गए। उनके नेत्रों से अविरल अश्रु बहते रहे। अपने दीक्षा-गुरु के सान्निध्य में वे रायिनी-ग्राम गए। अब वे संकीर्तन के आनन्द के सागर में तैर गए। केवल एक मुख से मुझ में क्या सामर्थ्य है कि मैं श्री रसिक मुरारी के अपने दीक्षा गुरु के प्रति समर्पण का वर्णन करूँ?

श्रीश्यामानन्द ने सावधानीपूर्वक मुरारी को देखा। रसिक मुरारी की भक्ति को देखते हुए वे आनन्द से भर गए। उन्होंने कुछ दिवस तक उस स्थान पर वास किया। उन्होंने आध्यात्मिक सेवा की महिमा का उपदेश दिया और अनेक शिष्यों को स्वीकार किया। तब चारों दिशाओं से अपने प्रिय पार्षदों से घिरे श्रीश्यामानन्द ने रायिनी-ग्राम से प्रस्थान किया उनकी अनुकम्पा से दामोदर नाम का एक व्यक्ति, जो पूर्व में योग का अभ्यास करता था, वह अब आध्यात्मिक सेवाओं के सागर में तैरने लगा। श्रीश्यामानन्द का शिष्य बनकर दामोदर सदा 'निताई-चैतन्य' के नाम का जप करता और रोता था।

यह देखकर कि दामोदर कैसे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत हो गए हैं, कौन शांत रह सकता है? यह घोषित करते हुए, 'आध्यात्मिक सेवाएें ही सभी आध्यात्मिक मार्गों से श्रेष्ठ हैं।' दामोदर नृत्य करते। श्रीश्यामानन्द ने दामोदर के जीवन को बचाया। वे जहाँ भी जाते लोगों को आध्यात्मिक सेवा का अनमोल रत्न प्रदान करते।

अनेक शिष्य बनाये

कितनी दैन्यता से श्रीश्यामानन्द बलराम-पुर नगर में आध्यात्मिक सेवाओं का उपदेश देते थे यह वर्णन से परे है। किशोर, मुरारी, दामोदर और अपने अन्य अनुचरों के सान्निध्य में श्रीश्यामानन्द ने धारेन्दा गांव में एक वृहत् महोत्सव रचाया। उनको देखकर गांव वासी आनन्द से भर गए। वे अपने सब दुःख और कठिनाइयां भूल गए। उन्होंने स्थान-स्थान पर जिन शिष्यों को दीक्षा दी, उन शिष्यों का नाम श्रवण कर कौन विशुद्ध नहीं होगा?

श्रीराधानन्द, श्रीपुरुषोत्तम, श्रीमनोहर चिंतामणि, श्रीबलभद्र, श्रीजगदीश्वर, श्रीउद्धव, श्रीअक्रूर, श्रीमधुवन, श्रीगोविन्द, श्रीजगन्नाथ, श्रीगदाधर, श्रीआनन्दानन्द, श्रीराधा-मोहन और उनके अन्य शिष्यों के सान्निध्य में श्रीश्यामानन्द सदा संकीर्तन की आनन्द लहरों में तैरते रहते थे।

कवियों द्वारा श्रीश्यामानन्द की अद्‌भुत लीलाओं का वर्णन, श्रवण करने वाले को आनन्द से भर देता है। यहाँ ऐसा ही एक भजन है। 'आनन्ददायक श्री श्यामानन्द की जय जयकार हो! वे सदा गौर प्रभु के प्रेम के उल्लसित अमृत में डूबे रहते हैं। उनका तन दीप्तिमान है। वे सर्वदा-नवीन आनन्द से परिपूर्ण हैं। अत्यन्त आनन्द के कारण उनकी रोमावली सीधी खड़ी हो गई हैं।

वे श्याम वर्ण श्रीकृष्ण और श्रीगौर वर्ण गौर की लीलाओं का वर्णन करते हैं। उनके मुख की मधुरता जीव को श्वास रहित करती है। जब वे श्रीश्यामानन्द के अतुलनीय पार्षदों के गुणों का श्रवण करते हैं, भक्तों को अनुभव होता है कि उनके नेत्रों से निर्झर अश्रु बह निकलते हैं।

उनके वक्ष स्थल तक अविरल अश्रु बह रहे थे। उनके पसीने में मस्तक का तिलक चमक रहा था। उनका नृत्य अद्‌भुत था। उनका कीर्तन अति मधुर था। नृत्य करते हुए उनके कण्ठ में तुलसी माला धीमे-धीमे हिलती हुई अत्यन्त सुशोभित होती थी। उनका अति मधुर गायन आनन्ददायक था। उनकी शोभायमान भुजाओं पर तिलक पसीने के साथ धुलता जा रहा था। उनके चरण शोभायमान संगीत पर नृत्य कर रहे थे। आह! 'घनश्यामदास' उनकी आराधना करता है।

एक दिवस धारेन्दा-ग्राम में अपने अनुचरों के सान्निध्य में श्रीश्यामानन्द संकीर्तन के उल्लास में मदमस्त हो गए थे। मृदंग का स्वर गूँजने लगा। करताल की ध्वनि हृदय को आकर्षित कर रही थी। श्रीकिशोर और अन्य शिष्यों ने अनेक भजन गाए। आरम्भ में श्रीगौरांग प्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु की महिमा में भजन गाए गए। वैष्णवजन उल्लास में मदमस्त हो गए। कोई भी हृदय से शांत न रह सका।

हर किसी के नेत्रों से अविरल अश्रु बह रहे थे। हर कोई भूमि पर लोटने लगा और हर कोई रज में लोट पोट हो गया। श्रीश्यामानन्द ठाकुर संकीर्तन में नृत्य करने लगे। उनकी शोभायमान चाल देखकर देवतागण आनन्द से भर गए। श्रीश्यामानन्द को नृत्य करता देखकर देवतागण और निन्दक भी आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास से अभिभूत हो गए। वे भूमि पर लोट गए और रोने लगे। यह कहते हुए कि, 'हे श्यामानन्द प्रभु, मुझे मुक्ति प्रदान कीजिए।' वे पुनः-पुनः श्रीश्यामानन्द के चरणकमलों में गिर गए।

उन पर करुणाभरी दृष्टि डालते हुए श्रीश्यामानन्द ने उन सबको उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के अमृत में डुबो दिया। सहस्रों-सहस्रों लोग उनके दर्शन करने चले आए। उनके संकीर्तन के आनन्द के समान कुछ नहीं था। श्रीनृसिंह रूप में ये आनन्ददायक लीलाऐं स्वयं प्रकट हुईं।

उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम का झरना श्रीगोपीजनवल्लभ पर गिर गया। वहाँ श्रीरसिक को श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह की सेवा की भेंट प्राप्त हुई। श्रीरसिकानन्द एक उत्तम उपदेशक थे। वे दयालुता से चोरों और निन्दकों को भी मुक्ति प्रदान करते थे। यहाँ तक कि मुस्लिम लोगों को भी उन्होंने आध्यात्मिक सेवाओं का अनमोल रत्न प्रदान किया। अपने अनुचरों के सान्निध्य में उन्होंने गाँव-गाँव में भ्रमण किया।

हाथी वाले को बनाया चेला

एक दुष्कर्मी ने उन पर हमला करने के लिए एक हाथी को भेजा। श्रीरसिकानन्द ने उस व्यक्ति को अपना शिष्य बना लिया। उन्होंने उस व्यक्ति को श्रीकृष्ण सेवा और वैष्णव सेवा में संलग्न कर दिया। वह दुष्ट मुसलमान राजा एक समर्पित शिष्य बन गया। श्रीश्यामानन्द ने कितने ही पतित जीवों को मुक्ति प्रदान की? मैं उनकी गिनती नहीं कर सकता।

श्री रसिकानन्द संकीर्तन के आनन्द में मस्त से रहते थे। कोई भी उनकी सम्पूर्ण महिमा का वर्णन नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में एक सुन्दर भजन है। '(टेक) श्रीरसिक मुरारी, जो आध्यात्मिक अमृत का आनन्द लेने में निपुण हैं, जो कृपालु हैं, जो कलियुग के पापों को टुकड़े-टुकड़े कर देते हैं, जो पवित्र और गुणी हैं और जो सम्पूर्ण विश्व के हृदय को आकर्षित करने वाले हैं, उनकी जय जयकार हो!'

वे शक्तिशाली हैं, उपास्य हैं, सर्वोच्च अद्‌भुत हैं, आध्यात्मिक सेवाओं के एक महान उपदेशक हैं, अन्यों के लिए परम आनन्ददायक हैं, अति बुद्धिमान हैं, आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में तैरने वाले हैं, स्वर्ण के समान भव्य हैं, शोभायमान प्रभामान हैं अपूर्व सुन्दर हैं।

उनका हृदय श्रीश्यामानन्द प्रभु के चरणकमलों के ध्यान में मग्न है। हर क्षण वे संकीर्तन के अमृत का पान करते हैं। वे केवल श्रीगौरचन्द्र के अमृत का पान करते हैं। वे किसी अन्य अमृत का पान नहीं करते। मैं क्या कहूँ? यहाँ तक कि जब वे शयन करते हैं तो वे किसी और का नहीं केवल मात्र श्रीगौरचन्द्र का ध्यान करते हैं।

उनकी अद्‌भुत महिमा तीनों लोकों में भव्यता से प्रकट होती है। वे कवियों में श्रेष्ठ हैं। उनके काव्य की कोई तुलना नहीं। वे उदार और गुणी हैं। पतित 'घनश्याम दास' में कोई सामर्थ्य नहीं कि उनका उपयुक्त रूप से वर्णन कर सके।

श्रीरसिकानन्द के गुणों का कोई अंत नहीं है। श्यामानन्द प्रभु की महिमा को श्रवण करते हुए श्रीरसिकानन्द सदा आनन्द में मग्न रहते थे। श्रीश्यामानन्द की महिमा के प्रति कौन आकर्षित नहीं होगा? इसप्रकार मैंने विविध रूप से उनकी महिमा का गुणगान किया।

श्रीश्यामानन्द की महिमा का वर्णन करता एक सुन्दर भजन है। 'हे मेरे जीवन मित्र! हे श्यामानन्द! हे आनन्द के सागर! सदा श्रीगौर प्रभु की महिमा को श्रवण कर आनन्द में अभिभूत रहने वाले हो, हे भक्त! अपने गृह को बहुत पीछे त्याग कर, तुम आनन्दपूर्वक अम्बिका-पुर गए। वहाँ तुम अपने गुरु के निवास पर गए।'

श्रीहृदय चैतन्य को देखकर श्रीश्यामानन्द रो पड़े, उनके नेत्रों से अविरल अश्रु बह निकले। वे भूमि पर गिरकर लोटने लगे। उन्होंने श्रीहृदय चैतन्य के चरणकमल अपने शीश पर पधरा दिए। उन्होंने पूर्ण रूप से स्वयं को उनके प्रति समर्पित कर दिया। वे आदर सहित श्रीहृदय चैतन्य की ओर खड़े हो गए।

श्रीहृदय चैतन्य द्वारा दीक्षा

श्रीश्यामानन्द की गतिविधियाँ देखकर श्रीहृदय चैतन्य ने उन्हें अपनी ओर रखा और अपना शिष्य बना लिया। अति कृपालुता से उन्होंने उन्हें आध्यात्मिक सेवाओं के तरीके सिखाए। उन्होंने श्री श्यामानन्द को श्रीनिताई-श्रीचैतन्य के सम्मुख पधरा दिया।

कुछ दिवस पश्चात् श्रीहृदय चैतन्य, श्रीश्यामानन्द को ब्रज-पुर भेजने को अधीर हो गए। श्रीनिताई प्रभु और श्रीचैतन्य महाप्रभु ने श्रीश्यामानन्द को अपना आशीर्वाद दिया। वे प्रस्थान करने ही वाले थे कि श्रीहृदय चैतन्य ने आध्यात्मिक निर्देशों की माल पहना दी।

ब्रजधाम यात्रा

मार्ग में चलते हुए श्रीश्यामानन्द अपने नेत्रों से बहते अश्रुओं में तैर गए। वे अपने दीक्षा गुरु की महिमा के चिन्तन में मग्न थे। कुछ दिवस के लिए उन्होंने एकांत में यात्रा की। तब उन्होंने ब्रजभूमि में प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने अनेक पावन स्थानों की यात्रा की। श्रीवृन्दावन को निहारते हुए उन्होंने स्वयं को अति सौभाग्यशाली माना। आनन्द से अभिभूत होकर वे शांत न रह सके। उनके नेत्रों से निर्झर अश्रु बहने लगे। वे भूमि पर लोट गए। उनकी रोमावली खड़ी हो गईं।

वे गोवर्धन पर्वत पर गए। वे श्री राधा-कुण्ड के तट पर खड़े हो गए। वहाँ वे आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत हो गए। उन्हें देखते हुए श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी, जो अनेक गुणों से परिपूर्ण थे, उन्हें अत्यधिक अनुकम्पा अनुभव हुई। श्रीश्यामानन्द श्रील जीव गोस्वामी के निकट गए और उन्हें अपना परिचय दिया। श्रील जीव गोस्वामी अति उदार थे। उन्हें पिता के समान प्रेम का अनुभव हुआ। श्रीहृदय चैतन्य की अनुकम्पा से श्रीश्यामानन्द की समस्त कामनाऐं पूर्ण हो गईं।

श्रीश्यामानन्द द्वादश वनों में गये, गोस्वामीगणों के ग्रन्थों का पठन किया और श्रीविग्रह की आराधना में अति निपुण हो गए। गोस्वामीगणों के आदेश पर वे श्रीगौड़, अम्बिका और ओडिशा गए। जब वे गौर प्रभु की महिमा को श्रवण करते। उन्होंने देवताओं और निन्दकों को भी आनन्द में मदमस्त कर दिया, किस किस को उन्होंने आध्यात्मिक सेवा की भेंट प्रदान नहीं की? अपनी

अनुकम्पा के एक छोटे से खण्ड से उन्होंने पतित जीवों को आनन्द में डुबो दिया। किस-किस को उन्होंने मुक्ति प्रदान नहीं की?

कौन उनकी वास्तविकता जान सकता है? वे सदा संकीर्तन के आनन्द में मस्त रहते थे। उनकी महिमा सम्पूर्ण विश्व में विदित थी। अपने पार्षदों के सान्निध्य में वे आनन्ददायक लीलाओं का आनन्द लेते थे। ओडिशा में उनके आनन्द का कोई अन्त नहीं था। कोई भी व्यक्ति यदि उन्हें एक बार देख ले तो वह शांत नहीं रह सकता था। उनका रूप कितना आकर्षक था! नरहरि दास पूछते हैं, 'श्रीश्यामानन्द कब मेरे नेत्रों के सम्मुख होंगे?

इस सम्बन्ध में एक और भजन है। 'दु:खी कृष्ण दास की सम्पूर्ण महिमा का वर्णन करने की सामर्थ्य किसमें है? उनका हृदय, श्रीहृदय चैतन्य के चरण-कमलों के कमल पुष्प पर भ्रमर करने वाले भँवरे के समान है।'

नूपुर प्राप्ति

श्रीवृन्दावन के वनों के एक कुञ्ज में उन्हें एक नूपुर प्राप्त हुआ। वे श्रीश्यामानन्द के नाम से विख्यात हो गए। कौन उनकी महिमा को समझ सकता है?

ओडिशा में मूर्ख एवं अभक्तों के हृदय में आध्यात्मिक सेवाओं का जरा सा लेश भी न था। उन्होंने उन सबको उल्लसित आध्यात्मिक प्रेम के अमृत में डुबो दिया। उन्होंने सम्पूर्ण देश को सौभाग्यशाली बना दिया। जब अन्य कष्ट झेलते। मेरे श्यामानन्द रसिकानन्द के गुरु थे। क्या वे मुझपर अनुकम्पा करेंगे? क्या वे ऐसी अनुकम्पा की भेंट देंगे कि निर्धन नरहरि का परित्याग नहीं करेंगे?

इस प्रकार मैंने संक्षेप में श्रीश्यामानन्द की कथा बताई है। मैं इसे विस्तार से नहीं बताऊँगा क्योंकि यह ग्रन्थ को अति विशाल कर देगा।

यह श्रवण कर कि श्रीश्यामानन्द ने ओडिशा और अन्य स्थानों को अति सौभाग्यशाली बना दिया है, गौड़-देश में हर कोई आनन्द से भर उठा।

गौड़-देश में श्री श्रीनिवास, श्रीनरोत्तम और उनके प्रिय पार्षद, अन्य लोगों को आध्यात्मिक सेवाओं का अनमोल रत्न प्रदान करने में अति निपुण थे। हर तरफ उन्होंने चैतन्य वृक्ष की शाखाओं और उप-शाखाओं का विस्तार किया। जो कोई भी उनकी गतिविधियों के बारे में चर्चा करता अथवा उन्हें श्रवण करता, वह अपने प्राणों में अत्यन्त आनन्द का अनुभव करता था।

श्रीरामचन्द्र कविराज

श्रीनिवास आचार्य के अति प्रिय शिष्य थे श्री रामचन्द्र कविराज। उनकी महिमा की कोई तुलना नहीं थी। श्रीरामचन्द्र के एक शिष्य थे श्रीहरि रामाचार्य, जिनकी असाधारण गतिविधियां सर्वत्र प्रसिद्ध थीं।

श्रीहरि-रामाचार्य ने मुक्त रूप से श्रीकृष्ण चैतन्य के प्रति उल्लसित प्रेम का वितरण किया। जब पतित जीवों के सब पाप नष्ट हो गए, श्रीहरि-रामाचार्य आनन्द मग्न हो गए। हरि-रामाचार्य सदा संकीर्तन के उल्लसित प्रेम में अभिभूत रहते। कवियों ने अपनी अनेक रचनाओं में उनकी गतिविधियों का वर्णन किया है, वे गतिविधियां जो हृदय को आकर्षित कर लें।

एक ऐसा ही भजन है। 'श्री हरि-रामाचार्य की जय जयकार हो! उनकी अद्भुत गतिविधियां हृदय को आकर्षित करती हैं। उनकी विशुद्ध महिमा सभी असत्य अभिमान और भौतिक आपदाओं को चूर-चूर करती है। उनका रूप आनन्ददायक और आकर्षक है। वे अजेय दैत्यों को परास्त करते हैं जो सर्वोच्च परमात्मा के चरणकमलों के प्रति अनिच्छुक हैं। सम्पूर्ण विश्व उनकी महिमा का गान करता है। वे बुद्धिमान दार्शनिकों के हृदय के सभी अधैर्य को शान्तिपूर्वक दूर करते हैं। उनका हृदय अति दयालु और उदार है। वे हर समय श्रीगौर प्रभु के आध्यात्मिक प्रेमोल्लास के अमृत पान करने के समान मद मस्त से रहते थे। उनकी सामर्थ्य गजराज के सामर्थ्य को भी परास्त करती थी। वे संकीर्तन के अमृत पान को लालायित रहते हैं। वे निपुणता से वैष्णवजनों की सेवा करते हैं। कौन कह सकता है कि उनके आनन्द का अंत कहाँ हुआ? वे श्रीमद्भागवत और अन्य ग्रन्थों की टीका द्वारा तुलना रहित अमृत की बौछार करते हैं। सर्वोच्च परमात्मा श्रीश्रीकृष्ण उनके प्राण हैं। नरहरि दास कैसे उनकी असीमित महिमा का वर्णन कर सकता है?'

श्रीरामकृष्ण-आचार्य

श्रीनरोत्तम दास के एक शिष्य थे श्रीराम-कृष्णाचार्य, जो कि अति विद्वान् और पुण्य आत्मा थे। वे आध्यात्मिक सेवा के मार्ग पर चले। वे दीनजनों, अधर्मी पापियों, के प्रति अति स्नेहशील थे।

उन्होंने निन्दकों के आदर्शों का विनाश कर दिया। वे सर्वत्र प्रसिद्ध थे। वे सदा संकीर्तन के अमृत का पान करते रहते थे। उनकी महिमा का गान कौन नहीं करेगा, महिमा भी ऐसी, जो हृदय को आकर्षित करे?

इस सम्बन्ध में एक सुन्दर भजन है। 'पुण्य आत्मा, विद्वान्, बुद्धिमान, उदार, आनन्दमग्न श्रीराम-कृष्णाचार्य की जय जयकार हो। आध्यात्मिक प्रेम के उल्लास में अभिभूत, वे सदा संकीर्तन के अमृत का पान करने के लिए लालायित रहते थे। वे अति अर्थपूर्ण तरीके से सर्वोच्च परमात्मा की महिमा का उपदेश देते थे। वे रसिकों के हृदय को आनन्द प्रदान करते थे। वे भौतिक कष्टों की अग्नि और अज्ञानता के अंधकार को चूर-चूर कर देते थे। वे उन गुणों से सुशोभित हैं जो ब्राह्मणों के समूह में होते हैं। वे अति विद्वान् हैं। वे मूर्खों के झूठे अभिमान को हटाते हैं।'

वे सदा श्रीमान मोहन राय के श्रीविग्रह की सेवा करते हैं। दिन और रात्रि वे आध्यात्मिक प्रेम के अद्भुत उल्लास में आनन्दित रहते हैं। वे सदा श्रीगौरचन्द्र प्रभु की सेवा के अमृत का पान करते हैं। सर्वोच्च दयालु श्रीनरोत्तम के चरणकमल उनके लिए सब कुछ हैं और कुछ नहीं। वे एक मात्र उन्हें जानते हैं और किसी को नहीं। उनकी सम्पूर्ण महिमा कौन समझ सकता है? उनकी महिमा का गान करते हुए नरहरि स्वयं को सौभाग्यशाली मानते हैं।

श्रीगंगा नारायण चक्रवर्ती

श्रीनरोत्तम दास ने पतित जीवों को विशुद्ध किया। उनके एक शिष्य थे श्रीगंगा-नारायण चक्रवर्ती। वे अति विद्वान् थे। निन्दकों के सिद्धान्तों को चूर-चूर करते हुए उन्होंने आध्यात्मिक सेवाओं के सत्य का उपदेश दिया। दिवस और रात्रि वे संकीर्तन के अमृत का पान करने में मदमस्त से रहते थे। उनकी गतिविधियों का अभिनन्दन करने वाले भजनों के आनन्द में डूबते हुए, कवि उनके लिए गाते थे।

एक ऐसा भजन है। 'श्रीगंगा-नारायण चक्रवर्ती की जय जयकार हो! वे अति पुण्य आत्मा और गम्भीर बुद्धिमान हैं। उनकी मधुरता जीव के शांत धैर्य को भी छीन लेती है। उनके कोमल और शोभायमान रूप की कोई तुलना नहीं हैं। वे सदा संकीर्तन के अमृत का पान करने के लिए प्यासे रहते हैं। वे शोभायमान रूप से नृत्य करते हैं। वे आध्यात्मिक प्रेम से अभिभूत हैं। वे समर्पित भाव से श्रील नरोत्तम के चरणकमलों की आराधना करते हैं। वे विश्व को भव्यता से परिपूर्ण करते हैं। वे 'श्रीचैतन्यचरितामृत' का गहराई से पान करते हैं। वे सदा श्रेष्ठ और हृदय से उदार हैं। श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह का आकर्षक रूप उनके प्राण और सम्पत्ति हैं। वे निर्धन और पतितों के शक्तिशाली और कृपालु मित्र हैं। वे उनके सभी कष्टों को मिटाते हैं। वे नरहरि दास को आनन्दित करते हैं। आह! मुझमें उनकी अद्भुत महिमा का वर्णन करने की कोई सामर्थ्य नहीं है।'

शाखाओं और उप-शाखाओं में श्री श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम से आने वाले भक्तजन कृपालुता से उन सबका नाश करते हैं जो पतित जीवों के लिए अशुभ हैं। कौन जानता है कैसे उन महान भक्तजनों की अमृतमयी महिमा का वर्णन किया जाए? सौभाग्यशाली आत्माओं ने उनकी महिमा का विस्तार से वर्णन किया है।

श्री श्रीनिवास आचार्य के चरणकमलों का चिन्तन करते हुए नरहरि दास इस भक्ति-रत्नाकर का लेखन करता है।

उपसंहार

अब कुछ शब्दों में भक्ति-रत्नाकर की पन्द्रह लहरों में वर्णित लीलाओं का संक्षेप में वर्णन करूँगा।

प्रथम प्रवाह में मैंने मंगलाचरण कहा, उन महान भक्तजनों को विवरण जो श्रील जीव गोस्वामी से पूर्व पधारे, गोस्वामी गणों के ग्रन्थों की सूची और श्रीनिवास आचार्य के जन्म से आरम्भ करते हुए उनकी गतिविधियों का सार प्रस्तुत किया।

द्वितीय प्रवाह में मैंने वर्णन किया है कि कैसे विप्र चैतन्य दास नीलाचल गए और अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति को प्राप्त किया। वहाँ मैंने श्री श्रीनिवास के जन्म का वर्णन भी किया है और उनके पिता और पुत्रों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। मैंने यह भी वर्णन किया है कि श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह श्रीवृन्दावन में स्वयं प्रकट कैसे हुए।

तृतीय प्रवाह में श्रीनिवास नीलाचल गए। यह सुनकर कि श्रीचैतन्य महाप्रभु धरा से अन्तर्धान हो गए हैं, श्रीनिवास को अनुभव हुआ कि वे अत्यधिक दुःख से संप्तत हैं। श्री श्रीनिवास तब नीलाचल चले गए। एक स्वप्न में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उन्हें निर्देश दिए। प्रभु के निज पार्षदों ने उन्हें अनुकम्पा प्रदान की। तब श्रीनिवास गौड़-देश वापिस लौट आए।

चतुर्थ प्रवाह में श्री श्रीनिवास ने गौड़-देश की यात्रा की। वहाँ उन्होंने श्रीमती विष्णुप्रिया से अति अनुग्रह प्राप्त किया। प्रभु के पार्षदों ने भी उनको अपार अनुकम्पा प्रदान की। श्रीनिवास की श्रीवृन्दावन और अन्य स्थानों की यात्रा का वर्णन भी है।

पंचम प्रवाह में श्री राघव के सान्निध्य में श्री श्रीनिवास और श्रीनरोत्तम ने ब्रज में विचरण किया। श्रीश्री गौर-नित्यानन्द की लीलाओं और अन्य विषयों का वर्णन भी वहाँ है।

छठे प्रवाह में श्रीश्यामानन्द के ब्रज गमन का प्रसंग वर्णित है। वे श्री मदन- गोपाल और श्रीगोविन्द के श्रीविग्रह के प्रति अति अनुरक्त हो गए। तब गोस्वामी गणों के ग्रन्थों को अपने संग ले श्री श्रीनिवास ने गौड़-देश के लिए प्रस्थान किया।

सप्तम प्रवाह में विष्णुपुर में ग्रन्थों को चुरा लिया गया। तब श्री श्रीनिवास आचार्य ने राजा वीर हम्वीर को अनुकम्पा प्रदान की। तब श्री श्यामानन्द ओडिशा गए। यहाँ अमृत समान कर्ण प्रिय अनेक वर्णन हैं।

अष्टम प्रवाह में श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय गौड़-देश को गए और तब नीलाचल की यात्रा को गए। नीलाचल से प्रस्थान कर उन्होंने श्री श्रीनिवास

आचार्य से भेंट की। श्रीरामचन्द्र और अन्य, श्रीनिवास आचार्य के शिष्य बन गए।

नवम प्रवाह में श्री श्रीनिवास आचार्य ने गोस्वामीगणों के ग्रन्थों की शिक्षा प्रदान की और श्रीवृन्दावन लौट आए। किसमें सामर्थ्य है कि इन सब शोभायमान महिमा का श्रवण करके शांत रह सके?

दशम प्रवाह में कंचनगढिया गांव के महोत्सव का वर्णन था। मैं उस सब का वर्णन नहीं कर सकता। श्री खेतड़ी-ग्राम में एक महोत्सव था। प्रभु के पार्षदों ने श्रीगौर प्रभु के पावन नाम कीर्तन में नृत्य किया।

एकादश प्रवाह में श्रीमती जाह्नवा ईश्वरी ने ब्रज से प्रस्थान किया और खेतड़ी-ग्राम में आ गईं। तब ईश्वरी एकचक्रा-ग्राम को गईं, एक श्रीविग्रह बनाया और तब खरदह चली गईं।

द्वादश प्रवाह में श्री श्रीनिवास के नेतृत्व में तीन भक्तजनों ने श्रीईशान के संग नदिया की यात्रा की। इस प्रसंग में श्रीनित्यानन्द प्रभु के विवाह की कथा से आरम्भ होकर अनेक आनन्ददायक कथाऐं हैं।

त्रयोदश प्रवाह में श्री श्रीनिवास आचार्य ने दूसरी बार विवाह रचाया। यह गतिविधियाँ निश्चित ही अद्‌भुत थीं। तब श्रीवीरचन्द्र प्रभु ने प्रसन्नतापूर्वक विवाह रचाया। अपने साथियों के संग वे ब्रज गए और गौड़-देश वापिस लौट आए।

चतुर्दश प्रवाह में अपने पार्षदों के सान्निध्य में श्री श्रीनिवास आचार्य ने बोराकुलि-ग्राम में एक महोत्सव मनाया। उस उत्सव में हर कोई संकीर्तन के अमृत में डूब गया। इस उत्सव की अनेक आकर्षक कथाऐं हैं।

पंचदश प्रवाह में श्रीश्यामानन्द ने अपने पार्षदों के संग प्रसन्न चित्त से ओडिशा में लीलाओं का आनन्द लिया।

अति निन्दकों को भी श्रीश्यामानन्द ने आध्यात्मिक सेवा की भेंट प्रदान की। सौभाग्यशाली जीवों ने इन सब व्याख्याओं का आनन्द लिया।

दैन्यवचन

कृपया भक्ति रत्नाकर ग्रन्थ के अति मधुर अमृत का सदा पान करते रहिए। कृपया इसका पान करने से विमुख मत होइए। मैं मूर्ख हूँ। मैंने कौन से अपराध नहीं किए? तथापि मैं इस ग्रन्थ के लेखन के अमृत का पान करूँगा। इस प्रकार मैं विशुद्ध हो जाऊंगा। मैं क्या जानता हूँ, जो मैं इन विषयों के बारे में बोल सकूँ? हे प्रभु मैं बस यही जानता हूँ कि मैं आपका दास हूँ। कृपया दयालु होइये और मेरी कामनाऐं पूर्ण कीजिए।

इस सम्बन्ध में एक भज़न है! 'मेरे हृदय में मेरी यही कामना है कि दिवस और रात्रि मैं श्रीगौरचन्द्र प्रभु की अभ्यर्थना करने में मदमस्त रहूँ। जो श्रीगौरांग

प्रभु की लक्ष्मीप्रिया और विष्णुप्रिया के संग लीलाऐं हैं उनका वर्णन करते हुए मैं आनन्द के सागर में डूब जाऊंगा।'

क्षण-क्षण सहस्रों मुखों से मैं निताईचाँद प्रभु जो कि श्रीमती वसुधा और श्रीमती जाह्नवा के संग हैं, उनकी महिमा का गान करूँगा। अनन्तकाल तक मैं अपना शीश श्रीअद्वैत प्रभु और सीता देवी के सम्मुख झुकाऊंगा। मैं सम्पूर्ण विश्व को उनकी महिमा के सागर में तैरा दूँगा।

श्रीगदाधर! श्रीनरहरि! श्रीस्वरूप!' पुकारते हुए और हाथ से ताली बजाते हुए, मैं नृत्य करूँगा। 'श्री श्रीनिवास! श्रीवनमाली! श्रीगदाधर दास ' पुकारते हुए मैं अपने हृदय को आनन्द में डूबा हुआ अनुभव करूँगा। 'श्रीहरिदास! श्रीवक्रेश्वर! श्रीरामानन्द! श्रीदामोदर! श्रीगौरीदास! श्रीरघुनन्दन! श्रीमुरारी! श्रीमुकुन्द-राम!' पुकारते हुए मैं अविरल रुदन करूँगा। जन्म-जन्म मैं अपने विचार श्रीचैतन्य महाप्रभु के माता और पिता, शची देवी और श्रीजगन्नाथ मिश्र और पद्मावती तथा श्रीहाड़ाई पंडित के चरणकमलों में रखूँगा। उनकी महिमा सारे विश्व में विदित है।

मैं श्री माधव, रत्नावती, मालिनी, माधवी और अति स्नेहमयी दमयन्ती-देवी की सेवा करूँगा और मैं श्रीअच्युतानन्द और कृपालु श्रीवीरचन्द्र की भी सेवा करूँगा।

श्री वल्लभ! श्रीसनातन! श्रीसदाशिव! श्रीसुदर्शन! श्रीनन्दन! श्रीविजय! श्रीकाशीश्वर! श्रीविश्वरूप! पुकारते-पुकारते और घूमते-घूमते और निहारते हुए, मैं निन्दकों के हृदय में भय भर दूंगा।

प्रिय श्रीसनातन! श्रीरूप! हे भट्टद्वय, जो अमृत के दो कूप के समान हैं! श्रीरघुनाथ! सागर समान श्री जीव! के नाम का जप करते हुए, मैं अपने पापयुक्त तन को रज से भूषित कर लूँगा।

ब्रज में अति प्रेम से मैं, 'श्रीसुबुद्धि! श्रीराघव! श्रीभूगर्भ! श्री लोकनाथ!' का जप करूँगा। जब एक व्यक्ति इन नामों का जप करता है, उसके हृदय से पाप दूर हो जाते हैं और उसके रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

श्रीगोविन्द, श्रीमाधव, श्रीहरि, श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारी और श्रीवासु घोष, जिनके लिए गौर प्रभु उनके प्राण हैं, उनके अनुग्रह से मैं सिंह के समान गर्जना करूँगा और अभक्त जनों को घास के तिनके के समान कंपित करूँगा।

मैं नृत्य करते श्वान के समान बन जाऊँगा जिसके मालिक महिमावान श्रीषष्ठिधर, श्रीहरिदास, श्रीद्विजवर, श्रीखोला बेचा श्री श्रीधर ठाकुर, श्रीकंसारि-वल्लभ और श्रीधनंजय हैं। श्रीकविचन्द्र, श्रीविद्यानिधि, श्रीमधु पंडित और अनेक अन्य गौर प्रभु के प्रिय निज पार्षद हैं। नरहरि दास कहता है। 'मैं उनके नामों का एक जड़ित कण्ठहार बनाऊंगा और उस कण्ठहार को अपने गले में धारण करूँगा।'

लेखक परिचय

अपने बारे में कहते हुए, मैं हृदय से लज्जित हूँ। पूर्व में मैं गंगा जी के तट पर वास करता था। यह हर कोई जानता है। मैं श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती का शिष्य हूँ, जो कि सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। मेरे पिता श्रीविप्र जगन्नाथ हैं। मेरे दो विविध नाम क्यों हैं? मैं नहीं जानता। मेरे दो नाम हैं **नरहरि दास और घनश्याम दास**। मैंने गृहस्थ आश्रम छोड़ा और त्यागी बन गया। भूतकाल में मैं दिवस और रात्रि घोर पाप कर्मों में लिप्त रहता था।

हे वैष्णव गोसांई, आप कृपा के सागर हो। वेद इसे आपकी कृपा से ही गाते हैं, किसी का भी मंगल भविष्य नहीं है।

नरहरि दास कहता है: ' हे वैष्णव गोसांई, कृपया मुझ पर कृपा कीजिए। मुझे ऐसी कृपा प्रदान कीजिए मैं सदा आध्यात्मिक सेवा रत्नों से परिपूर्ण सागर (भक्ति रत्नाकर) में डूबा रहूँ।'

इस प्रकार भक्ति रत्नाकर सम्पूर्ण हुआ।

ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद संवत् 2074 चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में राम नवमी (5 अप्रैल, 2017) को श्री अनंत हरिदास द्वारा पूर्ण हुआ।

ग्रन्थ नाम : ब्रज के सन्त : श्रीचैतन्य भक्तगाथा
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 464 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य के पूर्वज, गुरुवर्ग, छः गोस्वामी परिकर–स्वरूप विभिन्न भक्तों के
M001 - Ed4 चमत्कारी जीवन–चरित्र

ग्रन्थ नाम : ब्रज के भजन . भक्तभाव संग्रह
लेखक : श्रीललित लड़ैती जी व अन्य
भाषा : ब्रजभाषा–हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 224 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 125 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज में गाये जाने वाले भजन, रसिया सवैया आदि का सकलन
M002 - Ed6

ग्रन्थ नाम : ब्रज की पाठपूजा
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : संस्कृत–हिन्दी अनुवाद, टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 196 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : अनेकानेक स्तोत्र, नित्यपाठ के अष्टक, आरति, चरणचिह्न युक्त
M003 - Ed1 उपादेय 17 ग्रन्थ एकसाथ

ग्रन्थ नाम : श्रीलघुभागवतामृत
लेखक : श्रीरूप गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत–हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : उपास्य–उपासक एवं अवतार विषयक दुर्लभ समाधान कारक ग्रन्थ
M004 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्य चरितामृत 3 खण्ड एकसाथ
लेखक : श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी
भाषा : बंगला पयार, हिन्दी अनुवाद, टीका
साइज : 23 × 29 सेमी
पृष्ठ : 950 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 1250 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य महाप्रभु का सम्पूर्ण चरित्र सम्प्रदाय का सिद्धान्त व दर्शन
M005 - Ed7 श्रीमद्वैष्णवसिद्धान्तरत्नसंग्रह सहित

ग्रन्थ नाम : ब्रज की तुलसी, रासपंचा.+ गोपीगीत
लेखक : पण्डित बाबा श्रीश्यामारमणदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 176 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : तुलसी, तिलक, संकीर्तन, एकादशी व्रत क्यों – कैसे – और कितनी
M006 - Ed1 एवं अन्य विषयो पर प्रामाणिक प्रस्तुति

ग्रन्थ नाम : ब्रज के परिकर–श्रीगौरगणोद्देश दीपिका
लेखक : श्रील कवि कर्णपूर
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीकृष्ण या श्रीराम लीला के पात्र श्रीचैतन्य लीला में किस नाम–रूप से आविर्भूत हुए–
M007 - Ed1 उन दोनों लीलाओं का चमत्कारी चरित्र

ग्रन्थ नाम : ब्रज की चन्द्रिका–श्रीप्रेमभक्ति चन्द्रिका
लेखक : श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय
भाषा : मूल पयार एवं हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीनरोत्तम प्रार्थना, श्रीनरोत्तम चरित्र श्रीनिवासाचार्य एव श्रीश्यामानन्द प्रभु चरित्र
M008 - Ed3 श्रीचैतन्य चन्द्रामृत, नामापराध, नवधा भक्ति

ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्य चन्द्रोदय
लेखक : श्रील कवि कर्णपूर
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य का आनन्दमय जीवन–चरित्र नाटक शैली में
M009 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज के छह गोस्वामी सप्त देवालय सचित्र
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 112 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 60 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य के अनुयायी छः गोस्वामियों का जीवन परिचय एवं उनके द्वारा श्रीवृन्दावन
M010 - Ed2 में स्थापित सप्त देवालयों का परिचय

ग्रन्थ नाम : ब्रज की दानलीला–दानकेलिकौमुदी
लेखक : श्रीरूपगोस्वामीपाद
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : साथ में उपदेशामृत, मन शिक्षा और नित्य पाठ के लिए
M011 - Ed1 श्रीनारायण कवच व श्रीगजेन्द्र मोक्ष

ग्रन्थ नाम : श्री श्रीचैतन्य भागवत
लेखक : श्रीवृन्दावन दास ठाकुर
भाषा : बंगला पयार, हिन्दी अनुवाद, टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 1008 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 600 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य महाप्रभु का अद्भुत रसमय लीला ग्रन्थ
M012 - Ed3 तीन खण्ड एकसाथ



ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्य प्रेमसागर – सातों खण्ड
लेखक : पं. श्रीरामानन्द शर्मा
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 952 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 700 रुपये
विषय वस्तु : महाप्रभु श्रीचैतन्य की सम्पूर्ण लीला सरल एवं भावपूर्ण शैली में
M013- Ed3



श्रीश्रीचैतन्यचन्द्रामृत

ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्य-चन्द्रामृत
लेखक : श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतिपाद
भाषा : संस्कृत मूल व हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य महाप्रभु की प्रार्थनायुक्त चैतन्य निष्ठा का विलक्षण ग्रन्थ
M019 - Ed1 व्रज की चन्द्रिका में समाहित



ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्यचरितामृत संक्षिप्त
लेखक : श्रीकृष्णदास कविराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 424 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : मूल ग्रन्थ का केवल हिन्दी संक्षिप्त संस्करण। महाप्रभु का जीवन चरित्र
M014 - Ed1 लीला एवं गौड़ीय दर्शन-सिद्धान्त



ग्रन्थ नाम : श्रीनिताई चाँद सचित्र
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 232 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीनित्यानन्द प्रभु का सम्पूर्ण जीवन चरित्र एवं उनके भक्त
M020 - Ed2 परिकरो के चित्र व चमत्कारी चरित्र



ग्रन्थ नाम : श्रीआनन्दवृन्दावनचम्पू
लेखक : श्रील कवि कर्णपूर गोस्वामी
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 456 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 250 रुपये
विषय वस्तु : श्रीकृष्ण लीला एवं व्रजलीलाओं का आनन्ददायक अद्भुत दर्शन
M015 - Ed1



ग्रन्थ नाम : श्रीशिक्षाष्टक + श्रीगौरांगलीला
लेखक : महाप्रभु श्रीचैतन्य
भाषा : संस्कृत मूल एवं हिन्दी
साइज : 12 × 18 सेमी
पृष्ठ : 72 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 50 रुपये
विषय वस्तु : श्रीचैतन्य महाप्रभु के मुख से निःसृत श्रीप्रेमामृतरसायनस्तोत्र, श्रीराधारसमंजरी
M021 - Ed3 श्रीयुगलपरिहारस्तोत्र एवं श्रीजगन्नाथदशक



ग्रन्थ नाम : श्रीगीत गोविन्द
लेखक : आदि कवि श्रीजयदेव जी
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीप्रियाप्रियतम की लीलाओं का वर्णन साथ में श्रीबिल्वमंगल विरचित श्रीकृष्ण
M016 - Ed2 कर्णामृत एवं श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र



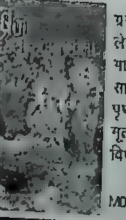
ग्रन्थ नाम : श्रीमद्भागवत महापुराण 1-2 स्कन्ध
लेखक श्रीकृष्णद्वैपायन-वेदव्यास
भाषा : संस्कृत मूल-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 395 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 150 रुपये
विषय वस्तु : श्रीधरस्वामी, श्रीसनातन, श्रीजीव गो. श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती कृत टीकाओं
M022 - Ed1 पर आधारित हिन्दी टीका सहित



ग्रन्थ नाम : व्रज की भक्ति-श्रीनारदभक्तिसूत्र
लेखक : डॉ. सत्यपाल गोयल
भाषा : मूल एवं हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 312 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 200 रुपये
विषय वस्तु : 84 सूत्रों की रागानुगा भक्तिपरक सहज सरल प्रामाणिक व्याख्या
M017 - Ed1



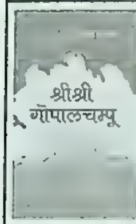
ग्रन्थ नाम : श्रीमद्भागवत महापुराण, दशम-1
लेखक श्रीकृष्णद्वैपायन-वेदव्यास
भाषा : संस्कृत मूल-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 425 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 200 रुपये
विषय वस्तु : श्रीधरस्वामी, श्रीसनातन, श्रीजीव गो. श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती कृत टीकाओं
M023 - Ed1 पर आधारित हिन्दी टीका सहित



ग्रन्थ नाम : व्रज की अष्टयामलीला-श्रीगोविन्दलीलामृत
लेखक : श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी
भाषा : संस्कृत मूल व हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 348 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : वृन्दावनीय अष्टकालीन लीला चिन्तन-मानसी सेवा का प्रामाणिक ग्रन्थ
M018 - Ed2



ग्रन्थ नाम : श्रीमद्भागवत महापुराण, दशम-2
लेखक श्रीकृष्णद्वैपायन-वेदव्यास
भाषा : संस्कृत मूल-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 570 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 200 रुपये
विषय वस्तु : श्रीधरस्वामी, श्रीसनातन, श्रीजीव गो. श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती कृत टीकाओं
M024 - Ed1 पर आधारित हिन्दी टीका सहित



ग्रन्थ नाम	: श्रीगोपाल चम्पू
लेखक	: श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 19 × 25 सेमी
पृष्ठ	: 696 हार्ड बाउण्ड
मूल्य	: 500 रुपये
विषय वस्तु	: भगवान् श्रीकृष्ण की जन्म से लेकर लीला सवरण तक की समस्त लीलाएँ क्रमवार

M025 - Ed4



ग्रन्थ नाम	: श्रीविदग्धमाधवनाटक
लेखक	: श्रीमद् रूपगोस्वामिपाद
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 100 रुपये
विषय वस्तु	: श्रीराधाकृष्ण की दुर्लभ रसमय लीलाओं युक्त श्रीवृन्दावनीय लीलामय नाटक

M026 - Ed4



ग्रन्थ नाम	: श्रीललितमाधव नाटक
लेखक	: श्रीमद् रूपगोस्वामिपाद
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 19 × 25 सेमी
पृष्ठ	: 140 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 100 रुपये
विषय वस्तु	: मथुरा-द्वारका-लीलामय आश्चर्यपूर्ण आनन्दमय नाटक

M027 - Ed2



ग्रन्थ नाम	: भक्त भक्ति भगवन्त गुरु
लेखक	: श्रीश्यामदास
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: अनुपलब्ध
विषय वस्तु	: विभिन्न विषयों पर सिद्ध सन्तों के महत्त्वपूर्ण महावाक्य

M028 - Ed1



ग्रन्थ नाम	: श्रीराधारससुधानिधि
लेखक	: श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतिपाद
भाषा	: संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 328 हार्ड बाउण्ड
मूल्य	: 300 रुपये / छोटा 30 रुपये
विषय वस्तु	: श्रीराधादास्यनिष्ठा का प्रकाशक अद्भुत रसोपासना ग्रन्थ अनेक लीलाओं के साथ

M029 - Ed3



ग्रन्थ नाम	: श्रीमानसी सेवा सचित्र
लेखक	: सिद्ध बाबा श्रीकृष्णदास
भाषा	: संस्कृत-हिन्दी
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 300 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 250 रुपये
विषय वस्तु	: श्रीनवद्वीप लीला तथा श्रीवृन्दावन लीला का मानसिक अष्टयाम लीला चिन्तन

M030 - Ed3



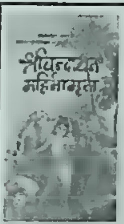
ग्रन्थ नाम	: श्रीचैतन्य-सम्प्रदाय
लेखक	: श्रीराधागोविन्दनाथ
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 52 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 30 रुपये
विषय वस्तु	: माध्व, माध्वगौडीय तथा चैतन्य-सम्प्रदाय का सप्रमाण विवेचन भ्रमनिवारक ग्रन्थ

M031 - Ed1



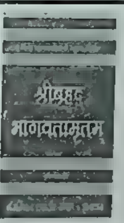
ग्रन्थ नाम	: श्रीभक्तिरसामृतसिन्धुबिन्दु
लेखक	: श्रीविश्वनाथ चक्रवर्तिपाद
भाषा	: संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 128 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 100 रुपये
विषय वस्तु	: भक्तिरसामृतसिन्धु में से कुछ प्रमुख-विषयों का बिन्दु रूप में सहजबोध प्रस्तुतिकरण

M032 - Ed4



ग्रन्थ नाम	: श्रीवृन्दावन महिमामृतम् 17 शतक
लेखक	: श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतिपाद
भाषा	: मूल संस्कृत व हिन्दी अनुवाद
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 422 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 300 रुपये
विषय वस्तु	: श्रीवृन्दावन-निष्ठा एवं महिमा का अद्वितीय ग्रन्थ, श्रीप्रबोधानन्द का चमत्कारी प्रामाणिक जीवन-चरित्र

M033 - Ed7



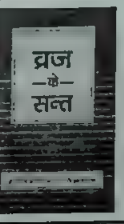
ग्रन्थ नाम	: श्रीबृहद्भागवतामृत
लेखक	: श्रीसनातन गोस्वामिपाद
भाषा	: संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 540 हार्ड बाउण्ड
मूल्य	: 450 रुपये
विषय वस्तु	: विभिन्न साधनों से विभिन्न भगवत्स्वरूपों के लोकों की प्राप्ति विषयक आख्यानात्मक सरस रचना

M034 - Ed4



ग्रन्थ नाम	: महाभावस्वरूपा श्रीराधानाम
लेखक	: श्रीनित्यानन्द जी भट्ट
भाषा	: संस्कृत - हिन्दी
साइज	: 14 × 22 सेमी
पृष्ठ	: 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 100 रुपये
विषय वस्तु	: श्रीमद्भागवत में 'श्रीराधा' नाम के उल्लेख वाले श्लोकों का आस्वादन

M035 - Ed3



ग्रन्थ नाम	: ब्रज के सन्त (छोटा)
लेखक	: डॉ. नित्यानन्द
भाषा	: हिन्दी
साइज	: 12 × 18 सेमी
पृष्ठ	: 72 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य	: 15 रुपये
विषय वस्तु	: ब्रज के अनेक सिद्ध सन्तों की चमत्कारी गाथायें

M036 - Ed3

ग्रन्थ नाम : श्रीकृष्णकर्णामृत–श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र
लेखक : श्रीबिल्वमंगलजी
भाषा : संस्कृत–हिन्दी
साइज : 12 × 18 सेमी
पृष्ठ : 64 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 15 रुपये
विषय वस्तु : लीलाशुक श्रीबिल्वमंगल की चमत्कारी जीवनी सहित लीलारस माधुर्य व्यंजक ग्रन्थ
M037 - Ed3

ग्रन्थ नाम : व्रजलीला के प्रणाम–श्रीकृष्णलीलास्तव जीवतत्व
लेखक : श्रीसनातन गोस्वामी
भाषा : संस्कृत मूल–हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : 108 प्रणामयुक्त दशमचरित और साथ में श्रीराधागोविन्दनाथ विरचित ग्रन्थ– जीवतत्व : मैं कौन हूँ?
M043 - Ed3

ग्रन्थ नाम : श्रीकृष्ण भक्ति
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 15 रुपये
विषय वस्तु : भक्ति का सर्वांगीण अध्ययन स्वरुप लक्षण, प्रकार भेद आदि श्रुति सम्मत विवेचन
M038 - Ed2

ग्रन्थ नाम : नरोत्तम प्रार्थना
लेखक : श्रीनरोत्तम ठाकुर महाशय
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 32 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 30 रुपये
विषय वस्तु : करुण प्रार्थना, वैष्णवों का प्राण
M044 - Ed3

ग्रन्थ नाम : नवधा भक्ति
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 12 × 18 सेमी
पृष्ठ : 40 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 10 रुपये
विषय वस्तु : श्रवण–कीर्तन आदि नौ प्रकार का भक्तियों के विषय में श्रीजीव गोस्वामी की विस्तृत आलोचना का ग्रन्थ
M039 - Ed2

ग्रन्थ नाम : महत् कृपा तत्त्व
लेखक : श्रीगणेशदास चुघ
भाषा : हिन्दी
साइज : 12 × 18 सेमी
पृष्ठ : 36 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 5 रुपये
विषय वस्तु : सन्तजन की कृपा का महत्वपूर्ण विवेचन
M045 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीमुक्ता चरित्र सचित्र
लेखक : श्रीरघुनाथदास गोस्वामी
भाषा : हिन्दी
साइज : 19 × 25 सेमी
पृष्ठ : 104 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 25 रुपये
विषय वस्तु : मोती न मिलने पर भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा मोती की खेती करने का अद्भुत शृंगाररसमय ग्रन्थ
M040 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीतत्त्व सन्दर्भ
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत–हिन्दी अनुवाद–टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 204 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 225 रुपये
विषय वस्तु : परतत्त्वनिर्णायक श्रीमद्भागवत पर प्रतिष्ठित षड्सन्दर्भात्मक श्रीभागवत सन्दर्भ का प्रथम सन्दर्भ
M046 - Ed2

ग्रन्थ नाम : परब्रह्म स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : संस्कृत–हिन्दी अनुवाद–टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 80 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 40 रुपये
विषय वस्तु : परब्रह्म स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण–तत्त्व का प्रतिपादक
M041 - Ed2

ग्रन्थ नाम : श्रीभगवत् सन्दर्भ
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत–हिन्दी अनुवाद–टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 404 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 450 रुपये
विषय वस्तु : भगवान् श्रीनारायण तथा वैकुण्ठ लोक का सपार्षद विस्तृत वर्णन (दूसरा सन्दर्भ)
M047 - Ed2

ग्रन्थ नाम : श्रीरासलीला रहस्य
लेखक : श्रीगणेशदास चुघ
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 196
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज की रासलीला पर रहस्योद्घाटन. ब्रज की पाठ पूजा ग्रन्थ में समाहित.
M042 - Ed3

ग्रन्थ नाम : श्रीपरमात्म सन्दर्भ
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत–हिन्दी अनुवाद–टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 228 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 225 रुपये
विषय वस्तु : परमात्म स्वरुप का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन (तीसरा सन्दर्भ)
M048 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीकृष्ण सन्दर्भ
लेखक : श्रीजीव गोस्वामि पाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 416 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : परब्रह्म स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण का सम्बन्ध तत्त्व रूप मे प्रतिपादन
M049 - Ed1 (चौथा सन्दर्भ)

ग्रन्थ नाम : श्रीभक्ति सन्दर्भ सचित्र
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 616 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 450 रुपये
विषय वस्तु : सम्बन्ध तत्त्व परब्रह्म श्रीकृष्ण की प्राप्ति के परमोपाय भक्ति का
M050 - Ed2 निरूपण (पाँचवाँ सन्दर्भ)

ग्रन्थ नाम : श्रीप्रीति सन्दर्भ
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 572 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 450 रुपये
विषय वस्तु : परब्रह्म श्रीकृष्ण की प्राप्ति के प्रमुख प्रयोजन प्रीति तत्त्व कारण निरूपण
M051 - Ed1 (छठा सन्दर्भ)

ग्रन्थ नाम : श्रीमद्भगवद्गीता
लेखक : श्रीमत्कृष्णद्वैपायन-वेदव्यास
भाषा : मूल, संस्कृत टीका व हिन्दी अनुवाद
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 356 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 200 रुपये
विषय वस्तु : श्रीविश्वनाथचक्रवर्तिकृत संस्कृत टीका व श्रीबलदेवविद्याभूषण की टीका के
M052 - Ed2 तात्पर्यमय हिन्दी अनुवाद सहित

ग्रन्थ नाम : श्रीभक्तिरसामृतसिन्धु
लेखक : श्रीमद् रूपगोस्वामिपाद
भाषा : मूल संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 15 × 23 सेमी
पृष्ठ : 704 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 500 रुपये
विषय वस्तु : भक्ति की रसनिष्पत्ति, सामग्री एवं भक्ति के निखिलरसों का सांग-सोदाहरण
M053 - Ed4 परिचायक अद्वितीय भक्तिकोश

ग्रन्थ नाम : माधुर्य-कादम्बिनी
लेखक : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्तिपाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 244 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 150 रुपये
विषय वस्तु : साधक मे भक्ति की आरम्भिक विभिन्न अवस्थाओ, उतार-चढ़ाव आदि
M054 - Ed4 के विषय मे मनोवैज्ञानिक अध्ययन

ग्रन्थ नाम : साध्य-साधन-निर्णय
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : मानव-जीवन के परम साध्य का श्रीमन्महाप्रभु-रायरामानन्द संवाद
M055 - Ed2 पर आधारित प्रश्नोत्तर रूप मे निरूपण

ग्रन्थ नाम : श्रीहरिभक्ति विलास
लेखक : श्रीसनातन-श्रीगोपालभट्ट गोस्वामि
भाषा : संस्कृत-हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 124 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : वैष्णवों को सविधान ग्रन्थ अनेक शकाओ का शास्त्रीय समाधान
M056 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीब्रह्म संहिता
लेखक : श्रीब्रह्माजी
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 76 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 30 रुपये
विषय वस्तु : सृष्टि के आरम्भ में श्रीब्रह्माजी द्वारा गोलोकस्थ भगवान् श्रीगोविन्द
M057 - Ed2 की विपुल स्तुति

ग्रन्थ नाम : श्रीउज्ज्वलनीलमणि
लेखक : श्रीरूपगोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 432 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 400 रुपये
विषय वस्तु : श्रीराधादि-सिद्ध मधुर रस-परिकरों के स्वरूप-वर्णों के सूक्ष्म विवेचन के साथ श्रीश्रीराधाकृष्ण
M058 - Ed3 की निकुंज लीलाओं का अनुपम वर्णन

ग्रन्थ नाम : प्रेम पत्तनम्
लेखक : श्रीरसिकोत्तस जी / दा. डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी + मूल
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 200
मूल्य : 150 रुपये
विषय वस्तु : प्रेम की अटपटी रीतियो से युक्त अद्भुत प्रामाणिक ग्रंथ
M094 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीचैतन्य चिन्तन सचित्र
लेखक : डॉ. भागवतकृष्ण
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 248 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 200 रुपये
विषय वस्तु : शोधार्थियों हेतु श्रीचैतन्य लीला एवं दार्शनिक सिद्धान्त सम्बन्धी समस्त
M060 - Ed1 सामग्री का सम्पूर्ण अध्ययन

ग्रन्थ नाम : श्रीहंसदूत – श्रीउद्धव सन्देश
लेखक : श्रीपाद रूपगोस्वामी
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : दूत बने हंस एवं उद्धव के माध्यम से श्रीकृष्ण एवं व्रजगोपियों का संदेश
M061 - Ed3

ग्रन्थ नाम : श्रीराधाकृष्णकृपाकटाक्षस्तोत्र
अनुवाद : श्रीश्यामदास
भाषा : मूल व हिन्दी
साइज : 14 × 10 सेमी
पृष्ठ : 64 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 10 रुपये
विषय वस्तु : नित्यपाठ के लिये उपयोगी पॉकेट साइज धार्मिक आयोजनों में वितरण के लिये लागत मूल्य पर उपलब्ध
M067 - Ed4

ग्रन्थ नाम : नामापराध / गुरुदीक्षा / नित्यपाठ : मनशिक्षा / आठ अनर्थ / कार्तिकमास : ईमानदार भक्ति / महामंत्र माला
लेखक : दासाभास डॉ. गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 11 × 14 सेमी
पृष्ठ : 32 / 64 / 48 पृष्ठ
मूल्य : 100 रुपये में अनेक प्रतियाँ
विषय वस्तु : विषयानुसार – वितरण हेतु
M062 - Ed1

ग्रन्थ नाम : सिक्स गोस्वामीज़ SIXGOSWAMIS
अनुवादक : श्रीश्यामसुन्दरदास
भाषा : अंग्रेजी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 100 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 60 रुपये
विषय वस्तु : व्रज के लुप्त तीर्थों को प्रकट करने वाले श्रीचैतन्य सम्प्रदाय के छः गोस्वामियों का चमत्कारी जीवन-चरित्र
M068 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीविलापकुसुमांजलि
लेखक : श्रीपाद रघुनाथदास
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 88 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 30 रुपये
विषय वस्तु : प्रार्थनायुक्त अनुपम ग्रन्थ टीका सहित
M063 - Ed2

ग्रन्थ नाम : माधव महोत्सव
लेखक : श्रीजीव गोस्वामिपाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 196 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीराधाजी का श्रीवृन्दावनेश्वरी पद पर मंगल राज्याभिषेक
M069 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीव्रज दर्शन
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : वृन्दावन के प्राचीन मन्दिरों का प्राचीन ऐतिहासिक एवं अर्वाचीन विवरण परिचय
M064 - Ed2

ग्रन्थ नाम : श्रीवेदान्त-दर्शन सचित्र
लेखक : श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास
भाषा : संस्कृत मूल-हिन्दी अनुवाद-टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 632 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : अनुपलब्ध
विषय वस्तु : ब्रह्मसूत्र का श्रीबलदेव विद्याभूषण रचित श्रीगोविन्द भाष्य, अन्वय, अनुच्छेद सहित
M070 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीव्रजधाम / व्रज चौरासी कोस
लेखक : डॉ. भागवत कृष्ण
भाषा : हिन्दी-सचित्र
साइज : 19 × 25 सेमी
पृष्ठ : 144 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 250 रुपये
विषय वस्तु : श्रीनन्दगाँव, श्रीबरसाना, श्रीगोवर्धन, श्रीराधाकुण्ड, व्रजचौरासी कोस परिक्रमा के स्थानों का महत्वपूर्ण वर्णन
M065 - Ed2

ग्रन्थ नाम : गम्भीरा में श्री विष्णुप्रिया
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 22 × 30 सेमी
पृष्ठ : 314 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 700 रुपये
विषय वस्तु : गौरशून्य शचीमाता के गृह में श्रीविष्णुप्रियाजी का असाधारण विलापयुक्त करुण क्रन्दन
M071 - Ed2

ग्रन्थ नाम : व्रज के स्तोत्र
लेखक : श्रीशिव-नारद संवाद
भाषा : संस्कृत-हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 173 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : श्रीराधा-श्रीगोपाल-श्रीविष्णु एवं श्रीचैतन्य सहस्रनाम एवं अनेक स्तोत्र नित्यपाठ के लिये उपयोगी ग्रन्थ
M066 - Ed3

ग्रन्थ नाम : व्रजविभूति श्रीश्याम स्मृति
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी
साइज : 19 × 25 सेमी
पृष्ठ : 172 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 250 रुपये
विषय वस्तु : श्रीश्यामदासजी की आत्मकथा संस्मरण, चमत्कारमय प्रसंग
M072 - Ed1

ग्रन्थ नाम : वैठ्यो पलोटत राधिका पायन एवं श्रीजगन्नाथवल्लभ नाटक
लेखक : श्रील राय रामानन्द
भाषा : ब्रजभाषा-हिन्दी
साइज : 19 × 25 सेमी
पृष्ठ : 244 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 250 रुपये
विषय वस्तु : श्रीश्यामदासजी के शोधपूर्ण निबन्ध एवं निकुंजलीला का नाटक ग्रन्थ
M073 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज के छह सम्प्रदाय
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : चैतन्य सम्प्रदाय व माध्व सम्प्रदाय का पृथकत्व
M079 - Ed3

ग्रन्थ नाम : श्रीअद्वैत प्रकाश
लेखक : श्रीईशान नागर
भाषा : हिन्दी
साइज : 12 × 18 सेमी
पृष्ठ : 228 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : अनुपलब्ध
विषय वस्तु : महाप्रभु श्रीचैतन्य के निज सेवक श्रीईशान विरचित श्रीअद्वैत प्रभु का दिव्य जीवनवृत्त
M074 - Ed2

ग्रन्थ नाम : ब्रज की वार्ता सचित्र
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे-छोटे विषयों पर सरल वार्ता
M080 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीमद्भागवतीय श्रीकृष्णस्तव
लेखक : श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास
भाषा : संस्कृत हिन्दी अनुवाद, टीका
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 368 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : श्रीमद्भागवत में विभिन्न भक्तों द्वारा की गयी श्रीकृष्ण स्तुतियों का अद्भुत संकलन
M075 - Ed2

ग्रन्थ नाम : ब्रज की चर्चा
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे-छोटे विषयों पर सरल चर्चा
M081 - Ed1

ग्रन्थ नाम : दम्पति विलास
लेखक : श्रीललितलड़ैतीजी
भाषा : ब्रजभाषा-हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 200 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : अनुपलब्ध
विषय वस्तु : ब्रज की रासलीला में गाये जाने वाले पद लीलाओं, अष्टयाम तथा वर्षोत्सव के पदों का संग्रह
M076 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीनिताई-गौर चालीसा
लेखक : डॉ भागवत कृष्ण
भाषा : पद्य एवं हिन्दी अनुवाद
साइज : 14 × 10 सेमी
पृष्ठ : 48
मूल्य : 10 रुपये
विषय वस्तु : चालीसा के माध्यम से संक्षिप्त श्रीनिताईगौर चरित्र, नित्य पाठ के लिए उपयोगी पॉकेट साइज
M082 - Ed1

ग्रन्थ नाम : श्रीकिशोरीकरुणाकटाक्ष
लेखक : श्रीललितलड़ैतीजी
भाषा : ब्रजभाषा-हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 128 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 150 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज की रासलीला में गाये जाने वाले पद लीलाओं, अष्टयाम तथा वर्षोत्सव के पदों का संग्रह
M077 - Ed3

ग्रन्थ नाम : ब्रज की उपासना
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 184
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे-छोटे विषयों पर सरल संकलन गौड़ीय सम्प्रदाय विवेचन
M083 - Ed1

ग्रन्थ नाम : महाप्रभु श्रीगौरांग
लेखक : श्रीश्यामदास
भाषा : हिन्दी-संस्कृत
साइज : 22 × 30 सेमी
पृष्ठ : 186 हार्ड बाउण्ड
मूल्य : 300 रुपये
विषय वस्तु : विभिन्न विद्वान्-मनीषियों के श्रीमहाप्रभु-लीला एवं सिद्धान्त विषयक निबन्ध
M078 - Ed2

ग्रन्थ नाम : ब्रज की प्रेरणा
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 168
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे-छोटे विषयों पर सरल संकलन
M084 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज भक्ति के 64 अंग
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 152
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : भक्ति के 64 अंगों की सरल, रोचक बोधगम्य दासाभासिनी हिन्दी टीका
M085 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज के रज कण–23
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज की भक्ति को समझने के लिए छोटे छोटे किन्तु महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर सरल, रोचक बोधगम्य सामग्री
M089 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज की खिचड़ी–21
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज की भक्ति को समझने के लिए छोटे छोटे किन्तु महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर सरल, रोचक बोधगम्य सामग्री
M086 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज का नीर–24
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे–छोटे बेसिक विषयों पर सरल संकलन
M090 - Ed1

ग्रन्थ नाम : संगीतमाधव–श्रीराधाकृष्णार्चनदीपिका
लेखक : श्रीप्रबोधानंदसरस्वती–श्रीजीवगोस्वामी
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160 सॉफ्ट बाउण्ड
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : गीतगोविन्द की भांति प्रिया–प्रियतम की शृंगार लीलाएँ एवं दूसरे ग्रन्थ में श्रीकृष्ण की पूजा के साथ श्रीराधा की अनिवार्यता
M087 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज की निकुंज–25
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : निकुंजरहस्यस्तव, चौसठ दण्ड लीला, संकल्पकल्पद्रुम, श्रीब्रजविलासस्तव, अष्टयामलीला, भगवद्चरणचिह्न
M091 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज की खीर–22
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 160
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : ब्रज भक्ति से सम्बन्धित छोटे–छोटे बेसिक विषयों पर सरल संकलन
M088 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज के व्रत–उत्सव
लेखक : डॉ भागवत कृष्ण नांगिया
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 176
मूल्य : 125 रुपये
विषय वस्तु : चैत्र नवरात्र से फाल्गुन तक पूरे वर्ष के व्रत पर्वों का संक्षिप्त परिचय
M092 - Ed1

ग्रन्थ नाम : ब्रज की निष्ठा
लेखक : दासाभास डॉ गिरिराज
भाषा : हिन्दी
साइज : 14 × 22 सेमी
पृष्ठ : 168
मूल्य : 100 रुपये
विषय वस्तु : भक्ति क्रम विकास में सहायक छोटे सरल आलेख
M093 - Ed1

ग्रन्थों का
जितना अधिक
प्रचार होगा
उतना ही क्लेश,
दुख, अशांति
से छुटकारा मिलेगा।

•

कलियुग में ग्रन्थ
ही सत्संग का एक
विशुद्ध माध्यम हैं।
अधिक संग करने पर
जहां सन्तों में
दोष-दृष्टि
दीखने लगती हैं
वहां ग्रन्थों की
कृपा-वृष्टि
होने लगती है।

•

मन्दिर बनाना
अच्छी बात है
लेकिन मंदिर
हजार-पांच सौ साल
में खण्डहर
बन जायेगा
ग्रन्थ हजारों साल तक
मानव जीवन का
मार्ग दर्शन
करता रहेगा।
हजारों वर्ष पुराने
'वेद' की उपलब्धता
इस बात का
साक्षात् प्रमाण है।

ग्रन्थ
प्रभु के विग्रह हैं,
इनकी सेवा,
इनका अध्ययन,
इनका पूजन,
साक्षात् प्रभु
सेवा ही है।

•

व्रजविभूति
श्रीश्यामदास जी
ने कहा था-
शरीर है
एक न एक दिन तो
यह जायेगा ही।
मैं रहूँ न रहूँ -
लेकिन प्रयास करके
भगवद्लीला
गुणानुवाद
से भरे ग्रन्थों के
प्रकाशन को
गंभीरता से
चालू रखना

सत्साहित्य
एवं विशेषत:
भक्ति साहित्य
के ये ग्रन्थ
एक ऐसी निधि हैं
कि यदि
आप इनका
अध्ययन करें तो
कल्याण होता ही है
और इन्हें यदि
घर में
विराजमान कर
इनका दर्शन, आरति
करें तब भी
कल्याण होता है
और
संभावना रहती है कि
कभी कोई
इनका अध्ययन कर
जीवन
धन्य करेगा

•

उपहार
तो इससे अच्छा
कोई हो ही
नही सकता।

हमें भी कुछ सेवा बताइये

भगवान् ने जिन्हें सामर्थ्य दी है, साथ ही विशाल हृदय भी दिया है ऐसे अनेक सहृदय, भक्त–सज्जनों एवं श्रीहरिनाम के पाठकों के फोन व पत्र प्रायः हमारे पास आते हैं कि आप हमें भी कोई सेवा बताइये।प्रभु ने व्रजविभूति श्रीश्यामदास जी से वैष्णव–साहित्य की जो सेवा ली है–येन केन प्रकारेण वे भी उसमें सहभागी होना चाहते हैं।

कितनी भी धनराशि

कुछ सज्जन इच्छानुसार धनराशि प्रदान कर इस सेवा कार्य में अपना योगदान देते हैं। उनके द्वारा प्रदत्त राशि से ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं।जिससे भगवद् भक्ति का, ग्रन्थों का प्रचार होता है, प्रसार होता है। श्रीहरिनाम मासिक पत्र का प्रकाशन होता है।

ग्रन्थ–विक्रय राशि का एक–एक पैसा पुनः ग्रन्थ प्रकाशन में ही व्यय होता है।संस्था के अन्य सारे कार्य श्रीश्यामदास जी के परिवारी व परिकर जनों द्वारा किये जाते हैं। संस्था का अन्य कोई वेतन, बिजली, कार्यालय, स्टेशनरी अथवा कुछ भी खर्च नहीं है।खर्च के नाम पर केवल एक मद है–वह है पोस्टेज।

अनुपलब्ध ग्रन्थ प्रकाशन

कुछ ऐसे भी सज्जन हैं, जो अप्राप्त या अनुपलब्ध ग्रन्थों को अपने प्रियजनों की स्मृति में प्रकाशित करवाते हैं और सम्पूर्ण अथवा आंशिक मात्रा में ग्रन्थ–मुद्रण व्यय प्रदान करते हैं और उस राशि के बदले में उतने ही ग्रन्थ ले लेते हैं और इन ग्रन्थों को अपने परिवारीजनों को भेंट करते हैं।

विशेष पैकेज द्वारा दोहरा लाभ

कुछ ऐसे सज्जन भक्त हैं जो विभिन्न पैकेज योजनाओं के अन्तर्गत लगभग आधे मूल्य पर मण्डल द्वारा प्रकाशित सहज उपलब्ध साहित्य के एक या एक से अधिक पैकेज मंगाते हैं और सदैव अपनी टेबिल या दुकान पर रखते हैं। यथासमय साहित्य में रुचि रखने वाले सज्जन–मित्रों को गिफ्ट रूप में अकेले या अन्य गिफ्ट्स के साथ मिलाकर प्रदान करते हैं। इससे उनकी राशि का उन्हीं के द्वारा, अपने ही हाथों से सदुपयोग होता है; मण्डल का सहयोग एवं ग्रन्थों की सेवा होती है तथा जिसे वे ग्रन्थ देते हैं, उसका कल्याण होता है।

कीर्तन–विवाह–जन्मदिन

कुछ सज्जन भक्त ऐसे हैं जो अपने परिवार में होने वाले कीर्तन, पाठ, कथा अथवा सामाजिक–पारिवरिक कार्यक्रम; जन्मदिन, विवाह, मैरिज एनीवर्सरी आदि में देने वाले गिफ्टपैक में ये ग्रन्थ भी भेंट रूप में देते हैं और वैष्णव–साहित्य सेवा करते हैं।

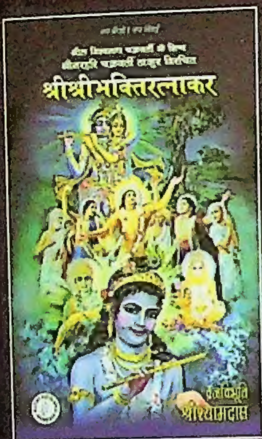
श्रीहरिनाम मासिक पत्रिका

कुछ सज्जन भक्त ऐसे हैं, जो एक निश्चित राशि भेजते हैं, साथ ही अपने मित्रों, बेटियों, परिवारीजनों के पते भेजते हैं उन पतों पर प्रतिमाह हम श्रीहरिनाम पत्रिका भिजवाते हैं।प्रतिमाह अनेकों परिवार स्वतः ही ब्रज से, वृन्दावन से जुड़े रहते हैं और नये–नये विषयों पर रहस्य पूर्ण प्रामाणिक विषय–वस्तु घर बैठे प्राप्त कर आनंदित होते हैं।

जिसको जो अच्छा लगे वही अच्छा है

सेवा कार्य में हम सदैव आपके साथ हैं : हमें याद करिये : हम प्रस्तुत हैं

सम्पर्क : 9837021415 :दोप. 12 से 6 बजे



ISBN : 978-81-941241-0-8

श्रीश्रीभक्तिरत्नाकर
नाम से ही स्पष्ट है कि
सर्वोच्च रत्न भक्ति का आकर है यह ग्रन्थ.
आकर माने स्थान-आश्रय-निवास.
यह एक प्रामाणिक सन्दर्भ ग्रन्थ है.

भक्त चरित्र वाले अन्यान्य ग्रन्थों में भी
अनेक स्थान पर इस ग्रन्थ भक्तिरत्नाकर का
सन्दर्भ दिया जाता है. बड़े ही सौभाग्य का
विषय है कि यह हिन्दी भाषा में
प्रकाशित एकमात्र संस्करण है.

ग्रन्थ में अनेक गौड़ीय गोस्वामियों के चरित्र,
श्रीश्रीनिताई-गौर के चरित्र और उनकी लीलाओं
का आस्वादन भाव-विभोर कर देने वाला है.
वैष्णव भक्त चरित्रों का आस्वादन अत्यन्त
प्रेरणादायक है.

ब्रज चौरासी कोस के एक-एक स्थान का
क्रमवार सजीव वर्णन पाठक को मानो
ब्रज चौरासी कोस यात्रा का
आनन्द प्रदान करता है.

– डॉ भागवत कृष्ण नांगिया





M094
वैष्णव साहित्य प्रचार-प्रसार में संलग्न अव्यावसायिक संस्थान
श्रीहरिनाम संकीर्तन मण्डल, श्रीधाम वृन्दावन